विषय-सूची

❁ भिन्न-भिन्न प्रान्तों से आये हुए सत्याग्रही जत्थे ❁

ग्वालियर के प्रिंसिपल भारतभूषण जी त्यागी के साथ मध्य भारत के ५१ वीरों का जत्था।
जत्थे मे चार प्रोफेसर भी सम्मिलित हैं।

हैदराबाद का सत्याग्रही जत्था श्री ज्ञानेन्द्र जी शर्मा आर्योपदेशक के नेतृत्व मे पनाव रवाना

राजस्थान का सत्याग्रही जत्था श्री अमरचन्द जी ईनाणी एडवोकेट के
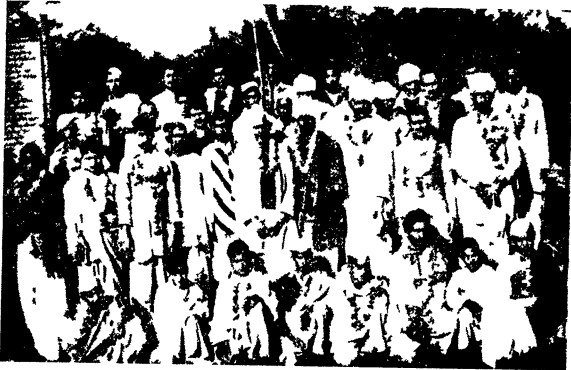
खेरला (ग्ग्ल) के स याग्राह्या का न्था श्री प्र्गीसह नी बधडक भजनोपदेशक के नेतृत्व मे
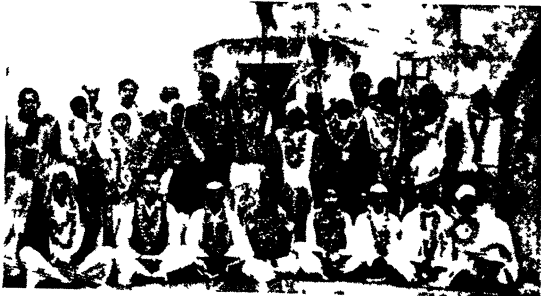
श्री स्वामी शिवानन्द जा के नतृत्व मे बिजनौर जिले का सत्याग्रही जत्था,जो करनाल मे गिरफ्तार

मुजफ्फरनगर का जत्था श्री ब्रह्मानन्द जी के नेतृत्व में

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा दिल्ली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३२ } जनवरी १९५८ पौष-माघ २०१४ वि०, दयानन्दाब्द १३३ { अङ्क ११

वैदिक प्रार्थना

देवो न यः पृथिवीं विश्वधाया उपक्षेति हितमित्रो न राजा ।
पुरः सदः शर्मसदो न वीरा अनवद्या पतिजुष्टेव नारी ॥

(ऋ० १।५।१६।३)

व्याख्यान—हे प्रियबन्धु विद्वानो ! "देव, न" ईश्वर सब जगत् के बाहर और भीतर सूर्य के प्रकाश के समान प्रकाश कर रहा है । "य, पृथिवीम्" जो पृथिव्यादि जगत् को रचके धारण कर रहा है और "विश्वधाया, उपक्षेति" विश्वधारकशक्ति का भी निवास देने और धारण करने वाला है, तथा जो सब जगत् का परम मित्र अर्थात् जैसे "प्रियमित्रो, न, राजा" प्रियमित्रवान् राजा अपनी प्रजा का यथावत् पालन करता है, वैसे ही हम लोगों का पालनकर्त्ता वही एक है और कोई भी नहीं । "पुर सद, शर्मसद, न, वीराँ" जो जन ईश्वर के पुर सद हैं (ईश्वराभिमुख ही है), वे ही शर्मसद अर्थात् सुख मे सदा स्थिर रहते हैं । वा जैसे "न वीरा" पुत्र लोग अपने पिता के घर मे आनन्दपूर्वक निवास करते हैं, वैसे ही जो परमात्मा के भक्त हैं वे सदा सुखी रहते हैं, परन्तु जो अनन्यचित्त होके निराकार सर्वत्र व्याप्त ईश्वर की सत्य श्रद्धा से भक्ति करते हैं । जैसे कि "अनवद्या, पतिजुष्टेव, नारी" अत्यन्तोत्तम गुणयुक्त पति की सेवा में तत्पर पतिव्रता नारी (स्त्री) रात दिन तन, मन, धन और अति प्रेम से अनुकूल ही रहती है, वैसे ही प्रेमप्रीतियुक्त होके आओ भाई लोगो ! ईश्वर की भक्ति करें और अपने सब मिलके परमात्मा से परम सुख लाभ उठावें ।

सत्याग्रह स्थगित

आभार प्रदर्शन

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के माननीय प्रधान श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त की घोषणानुसार हिन्दी सत्याग्रह ने शानदार सफलता के साथ विराम ग्रहण कर लिया है। इस सफलता पर प्रत्येक आर्य नरनारी उचित रीति से गर्व करके अपने को बधाई का पात्र अनुभव कर सकता है।

आर्यसमाज के अब तक के सत्याग्रह परीक्षणों से भीषणतर, संयम, विस्तार और लम्बी अवधि की दृष्टि से देश के अन्यान्य सत्याग्रहों से विशिष्टतर इस संग्राम को अहिंसात्मक रखते हुए इसे सफल बनाने के लिये जिन वीरों और वीरांगनाओं ने अनुपम तप, त्याग और बलिदान किया तथा जेलों से बाहर रहकर अनथक परिश्रम किया मैं उन सबको हृदय से बधाई देता हूँ।

इस संग्राम में हिन्दू जगत् ने हमें जो सहायता दी है वह भुलाई नहीं जा सकती। उसने इस आंदोलन को अपना ही आन्दोलन मानकर प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष रूप में अपनत्व की जो भावना प्रदर्शित की उससे हम आन्दोलन के संचालकों को बड़ा बल मिला। अनेक कांग्रेसजनों, जनसंघ, हिन्दू महासभा, सनातन धर्म सभा, रामराज्य परिषद्, विद्यार्थी हिन्दी रक्षा समिति तथा अन्यान्य ज्ञात अज्ञात संस्थाओं एवं व्यक्तियों का सक्रिय सहयोग हमें बड़ा मूल्यवान सिद्ध हुआ। हम इन सबके हृदय से आभारी हैं। इस संग्राम में जिन सिक्ख एवं मुसलमान भाइयों ने सम्मिलित होकर सत्याग्रह किया और कष्ट सहन किये हैं वे भी हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

देश और विदेश की आर्यसमाजों तथा प्रदेशीय सभाओं के लिये इस संग्राम में एक भीषण परीक्षा का समय उपस्थित हो गया था। मैं यह निःसंकोच कह सकता हूँ कि वे इस परीक्षा में शत प्रतिशत सफल हुये हैं। इस संग्राम की सफलता का श्रेय जहां कार्यकर्ताओं के अनथक परिश्रम, सत्याग्रहियों के तप और बलिदान को प्राप्त है वहां आर्यसमाज की अनुशासन प्रियता और संगठन की दृढ़ता को भी बहुत कुछ प्राप्त है। इस सबसे हमारा कार्य सरल रहा, हाथ दृढ़ रहे और हमारा नेतृत्व निरन्तर प्रभावशाली और सबल बना रहा। विदेश की आर्यसमाजें और प्रदेशीय सभाएं यहां से हजारों मील दूर पर स्थित हैं। वे धन द्वारा ही सहयोग दे सकती थीं। उन्होंने दिल खोलकर सहयोग दिया और अपनी शुभ कामनाओं से हमें प्रोत्साहित रखा। मैं हृदय से प्रदेशीय सभाओं, और आर्यसमाजों के प्रति आभार प्रदर्शित करता हूँ।

इस सत्याग्रह के विस्तार, संयम और समय की अवधि ने सबको अवाक् कर दिया है। यह सत्याग्रह सात मास से अधिक समय तक चला। लगभग २८००० नरनारियों ने सत्याग्रह किया। १२००० बन्दी बनाये गये और १२५ व्यक्ति नजर बन्द किये गये जिनमें अनेक विधान सभाई, भूतपूर्व मन्त्री, सार्वजनिक तथा राजनैतिक जीवन में प्रतिष्ठा प्राप्त तथा सम्भ्रान्त सज्जन हैं। २००० से अधिक महिलाओं तथा बच्चों ने अपने को गिरफ्तारी के लिये पेश किया। श्री हुतात्मा सुमेरसिंह के अतिरिक्त ६ अन्य भाई बहिन वीरगति को प्राप्त हुये। ३१-१२-५७ तक समस्त बन्दी रिहा होकर अपने-अपने घर पहुंच जायेंगे।

आर्यसमाज की शक्ति और नेतृत्व का देशवासियों पर पहिले से ही सिक्का बैठा हुआ था।

इस आन्दोलन की सफलता ने उसमें चार चाद लगा दिये हैं। हिन्दू समाज आर्यसमाज के हाथों अपनी सास्कृतिक निधियों एव मान मर्यादा को सुरक्षित समझता रहा है। पजाब में हिन्दी की रक्षा के लिये उसके इस प्रयास और कुशल नेतृत्व ने एक बार पुन उसे आश्वस्त कर दिया है। निश्चय ही इस सत्याग्रह ने आर्यसमाज के इतिहास में एक और सुनहरा अध्याय जोड़ा है। इस सत्याग्रह की सफलता आर्यसमाज की वह देन है जिस पर वर्तमान ही नहीं आने वाली सन्तान भी कृतज्ञता के साथ आनन्द विभोर हुआ करेगी।

मैं एक बार पुन सबको बधाई देता हूँ। मैं अन्त में अपने सहकर्मियों, मान्य उपदेशकों, शिविराध्यक्षों तथा कार्यालय के कार्यकर्ताओं, डिफेंस कमेटी के सदस्यों मान्य वकीलों तथा अन्यान्य शुभ चिन्तकों एव हितैषियों को धन्यवाद देता हू जिन्होंने मेरे तथा मेरे साथियों के कार्य को सदैव सुगम बनाया।

—नरेन्द्र
कार्यकर्ता प्रधान
सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति,
दिल्ली।

दिनाक
२८ १२ ५७

हिन्दी को राष्ट्रभाषा का स्थान क्यो मिला ?

हमारे सविधान के अनुसार हिन्दी को राष्ट्र एव राज्य भाषा का अधिकार प्राप्त हो चुका है और आशा की जाती है कि अब से ७ वर्ष के पश्चात् भारत का समस्त नहीं तो अधिकाश राजकीय कार्य अंग्रेजी के स्थान में हिन्दी में होने लगेगा। भारत की एकता, सास्कृतिक सद्भावना और आदान प्रदान की प्रक्रिया को अक्षुण्ण बनाये रखने के महान् उद्देश्य की पूर्त्यर्थ ही हिन्दी को उसके अधिकार की पात्रता के कारण यह सम्मानित पद प्रदान किया गया है। भारतवर्ष मे १७६ भाषाए बोली जाती है। इन सब मे हिन्दी का प्रयोग सब से अधिक होता है और यह सुगमता से बोली और समझी जाती है। भारत की ३८ करोड की जन सख्या में ६ करोड ६० लाख व्यक्ति साक्षर हैं और ४० लाख से कम व्यक्ति अग्रेजी भाषा भाषी हैं। जब राज्याश्रय मे पालित अग्रजी की कमान चढी हुई थी तब भी हिन्दी को राष्ट्र भाषा का स्थान प्राप्त था। भारत के स्वतन्त्र होने पर हमने उसे सविधान मे स्थान देकर अपने को स्वतन्त्र राष्ट्रों की पक्ति मे ऊ चा सिर करके खडा होने योग्य बनाया है।

यह ठीक है कि हिन्दी अग्रेजी के समान समृद्ध नहीं है परन्तु राज्याश्रय पाने से यह बहुत समृद्ध हो सकती है। कोई समय आ सकता है जब कि सस्कृत ही राज्य और राष्ट्र की भाषा बन जाय जिसकी समृद्धि की तुलना मे ससार की कोई भी भाषा ठहर नहीं सकती। इस समय विरोध का सब से प्रबल आधार यह बनाया जा रहा है कि लोग ससार की विचारधारा से अलग पड कर उन्नति की दौड मे पीछे रह जायेंगे। हिन्दी के समृद्ध हो जाने से यह आशका निर्मूल सिद्ध हो जायेगी। फिर विदेशों मे भी तो स्कूलों और कालेजों में हिन्दी के पठन पाठन की व्यवस्था होने लगी है। उदाहरण के लिए रूस को ले लीजिये। वहा के पाठ्य क्रम मे विदेश की फ्रेंच, जर्मन और अग्रेजी भाषाओं के साथ २ हिन्दी की पढाई की भी व्यवस्था की गई है। जब विदेश मे हिन्दी अपनाई जाने लगी है तब ससार की विचारधारा से भारतीयों के वचित हो जाने के भय की गु जाइश कहा ?

जो लोग आर्य और द्रविड, उत्तर और दक्षिण क्षेत्रीय और अक्षेत्रीय की कृत्रिम और थोथी आड

मे हिन्दी और संस्कृत के विरुद्ध जहर उगलते है वे देश द्रोह का अपराध करते हैं। हिन्दी और संस्कृत का विदेश मे उनकी आध्यात्मिक, सास्कृतिक साहित्यिक व राजनैतिक श्रेष्ठता के कारण तो सम्मान हो और अपने देश मे तिरस्कार हो यह बडे दुर्भाग्य की बात है। हमारी मानसिक दासता और क्षुद्रता का इससे अधिक खेद जनक परिचय और क्या मिल सकता है? इस प्रकार के विरोधियो की अनर्गल विचारधारा का एक नमूना लीजिये। श्री तारासिंह जी ने अभी हाल मे एक सार्वजनिक भाषण मे कहा है कि मैंने ५ वीं या छठी क्लास में हिन्दी पढी थी परन्तु अब मै उसे भूल जाना चाहता हूँ। मास्टर जी की गुरुमुखी के प्रति प्रेम की बात समझ में आ सकती है परन्तु उस प्रेम का अर्थ हिन्दी से घृणा और चिढ का होना समझ में आने वाली बात नहीं है। हिन्दी लोक भाषाओं के मार्ग मे बाधक नहीं अपितु उनको लोकप्रिय बनाने मे सहायक होगी। जो लोग यह समझते हैं कि लोक भाषाओं से हिन्दी का अहित होगा और वे इसी आधार पर हिन्दी का विरोध करते हैं, उन्हें यह बात हृदयगम कर लेनी चाहिए। लोक भाषाओं को अपने स्थान पर और हिन्दी को अपने स्थान पर उन्नति करने देना चाहिए और इसका मार्ग स्वतन्त्र रहने देना चाहिए। पजाब मे लोक भाषा द्वारा हिन्दी को नीचे गिराये जाने के साम्प्रदायिकता से प्रेरित राजकीय प्रयत्न के फलस्वरूप ही भाषाओं की स्वतन्त्रता की रक्षा और प्रजा के सास्कृतिक ह्रास को रोकने के लिए आर्यसमाज को सत्याग्रह के मार्ग का अवलम्बन करना पडा और निर्ममता को लजाने वाले अत्याचारों को सहन करना पड़ा है। उधर भाषा-जनित कटुता की विभीषिकाओं ने बम्बई प्रान्त के उज्ज्वल भाल पर कालिमा लगाई। इस दुरवस्था के कारण हमारे देश का अपयश और भ्रान्ति का प्रसार हो रहा है। यह बड़ी खेदजनक बात है। अमेरिका के ग्लोब एण्ड मेल में एक समाचार इन शब्दों मे छपा है—

"बम्बई और पजाब आदि प्रदेशों मे जहा दो भाषाए बोली जाती हैं भयकर घटनाए घटित हो रही हैं क्योकि एक भाषायी वर्ग दूसरे भाषायी वर्ग पर छा जाना चाहता है। आज भारतीय सघ में भाषा का प्रश्न सब से अधिक एक दूसरे को पृथक करने वाला बना हुआ है।"

भाषा जनित इस प्रकार के सघर्षों और कटुताओं का अन्त होकर रहेगा ही। हिन्दी के विरोधियों को यदि देश का हित अभीष्ट न हो तो कम से कम उन्हें अपनी सन्तान का तो अहित न होने देना चाहिए। हवा का रुख यह है कि हिन्दी राज्य एव राष्ट्र भाषा के रूप मे फूले फलेगी उसे कोई शक्ति अपदस्थ न कर सकेगी। ग्लोब और मेल ने भी निम्न लिखित रूप मे इस अवश्यम्भावी का समर्थन कियाहै।

"हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने का निर्णय अवश्य होना था। यह निर्णय समझ मे आने योग्य भी है और अब यह निर्णय बदला नहीं जा सकता।"

जो लोग यह समझते हैं कि हम अंग्रेजी की दुहाई देकर विरोध का बवडर खडा करके निर्णय को बदलवा देंगे उन्हे मु ह की खानी पडेगी। उनका पक्ष कितना निर्बल है यह ग्लोब के ही शब्दों में सुनिये। वह लिखता है —

"भाषा आयोग के २० सदस्य थे जिनमें से केवल दो ने रिपोर्ट के साथ अपना विरोध पत्र जोडा है। शेष १८ सदस्य बडे बुद्धिमान और राजनैतिक क्षेत्र मे प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति थे। उन सब ने हिन्दी को शीघ्र से शीघ्र राज्य भाषा बनाने के प्रस्तावों का जोरदार समर्थन किया है।"

अंग्रेजी कूटनीतिज्ञों को एक और भय खा रहा है। अंग्रेजी के राज्य भाषा न रहने से उन्हें आशंका हो रही है कि कामनवेल्थ के सम्बन्धों मे कोई व्यवधान उपस्थित न हो जाय। इसीलिए वे

हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाये जाने के निश्चय को एक बड़ी दुःखजनक घटना बता रहे हैं और विरोध को भड़का रहे हैं। उनका भय भी निर्मूल है।

हिन्दी के साथ २ लोक भाषाएं भी उन्नत हों और अंग्रेजी का सम्बन्ध भी न छूटे इसलिए यह आवश्यक है कि इस प्रकार का पाठ्यक्रम बनाया जाय जिसके अनुसार तीनों भाषाओं की पढाई की सुव्यवस्था हो। क्षेत्रीय भाषा के साथ हिन्दी की पढाई अनिवार्य हो। जहां की क्षेत्रीय भाषा हिन्दी हो वहां कोई दूसरी क्षेत्रीय भाषा की पढाई अनिवार्य न हो। वहां संस्कृत अनिवार्य की जा सकती है। विदेशी भाषाओं में अंग्रेजी की पढाई का एक ऐच्छिक विषय रखा जा सकता है और एक विदेशी भाषा की पढाई अनिवार्य की जा सकती है।

हिन्दी का सब से अधिक विरोध दक्षिण के मद्रास प्रान्त की ओर से हो रहा है। हमारे प्रधान मन्त्री तथा उनके स्वर में स्वर मिलाने वालों ने इस विरोध की उत्तरदायिता हिन्दी सत्याग्रह आन्दोलन पर डालने की व्यर्थ चेष्टा की। इस विरोध के अन्य अनेक कारण हैं। परन्तु मद्रास सरकार के वरिष्ठ अधिकारियों ने यह घोषणा करके कि यद्यपि हमारी भाषा तामिल है तथापि हम अपने को हिन्दी के अनुकूल बना लेंगे, बहुत अच्छा किया। वे लोग अनुकूल बना भी रहे हैं वहां १० में से ८ विद्यार्थी हिन्दी पढ रहे हैं। यह है दक्षिण के विरोध की वास्तविकता।

कांग्रेस इतिहास का दुःखद उपसंहार

लोकसभा में निवारक निरोध अधिनियम (प्रीवेन्टिव डिटेंशन एक्ट) की अवधि ३ वर्ष के लिए और बढ़ाने सम्बन्धी सरकारी प्रस्ताव बहुमत से पास हो गया है। इस सम्बन्ध में ६ और १० दिसम्बर को हुई बहस में बड़ी क्षमता और सजीवता प्रतिलक्षित हुई। इस अधिनियम की अवधि बढाए जाने का विरोध विरोधी दल के सदस्यों के ही नहीं अपितु पुराने कांग्रेसजनों के द्वारा भी हुआ। विरोध दो प्रकार का था—एक सैद्धान्तिक और दूसरा व्यावहारिक जो अधिनियम के प्रचलन से सम्बद्ध था। सैद्धान्तिक विरोध का आधार यह था कि इस प्रकार के अधिनियम और नागरिक स्वतन्त्रता की भावना में संगति नहीं बैठती इससे प्रजा के मौलिक अधिकारों का हनन होता है। तभी तो इस प्रकार के अधिनियम को 'कानून विहीन कानून' और काले कानून' की संज्ञा देकर इसके प्रति घृणा और रोष व्यक्त किया जाता है। इस अधिनियम के द्वारा राज्य के हाथ में अत्याचार और मनमानी करने की असीम शक्ति दे दी जाती है। जिन सदस्यों का इस कानून के प्रति सैद्धान्तिक विरोध न था उनका विरोध इसके भयंकर दुरुपयोग पर केन्द्रित था। उनका अनुभव था कि राज्य द्वारा इसका भयंकर दुरुपयोग होता है। प्रजा पुलिस की दया पर छोड़ दी जाती है और आतंकित राज्य व्याप्त कर दिया जाता है। इस आधार पर उन्होंने इसकी अवधि बढाये जाने का विरोध किया यद्यपि वे इसकी आवश्यकता से इन्कार न करते थे। उनकी मान्यता थी कि यदि इसकी अवधि बढाई जाये तो इसमें इसप्रकार के सुधार कर दिये जायें कि जिससे इसके दुरुपयोग की सम्भावनाएं कम से कम हो जायें। कांग्रेस सदस्य श्री अचिंतराम जी ने पंजाब के हिन्दी आन्दोलन के प्रसङ्ग में हुए इस अधिनियम के दुरुपयोग की चर्चा करते हुए कहा कि पंजाब राज्य सरकार ने इसका बड़ा दुरुपयोग किया है। उन्होंने सुझाव दिया कि किसी व्यक्ति को नजरबन्द करने से पूर्व केन्द्रीय सरकार की अनुमति का प्राप्त होना अनिवार्य होना चाहिए। जिस समय कोई व्यक्ति नजरबन्द किया जाय उसी समय उसे नजरबन्दी के कारण लिखित रूप में दे दिये जायें। ७ दिन के भीतर २ उसकी नजरबन्दी की पुष्टि कर दी जाये तथा ऐडवाइजरी बोर्ड के द्वारा १५ दिन के अन्दर २ नजरबन्दी के कारणों पर विचार समाप्त हो

जाये। इस सुझाव का अभिप्राय यह था कि सरकार पर इस प्रकार का अकुश अवश्य रखा जाये जिससे मनमानी करने की गु जाइश कम रहे नजर बन्द हुए व्यक्ति को कम से कम कष्ट और परेशानी हो और उसके साथ अन्याय न हो। घाना की गवर्नमेंट ने इस प्रकार के कानून के द्वारा अधिकार तो विस्तृत प्राप्त किये है परन्तु वहा की विधान सभा ने उसके हाथ भी बाध दिये है। वहा की गवर्नमेंट अपने अधिनियम का प्रयोग आपत्कालीन स्थिति की घोषणा हो जाने पर ही कर सकती है और आपत्कालीन स्थिति की घोषणा करने का अधिकार वहा की विधानसभा ने अपने हाथ मे रखा है। हमारे अधिनियम का उद्देश्य और लक्ष्य भी यही है परतु हमारी सरकार ने विधान सभा के अधिकार को ही अपने हाथ मे ले लिया। इसीलिए वह उन मामलों मे भी इसका दुरुपयोग करती है जिनके लिए साधारण दण्ड विधान से काम चलाना उचित और पर्याप्त है जबकि आपत्कालीन स्थिति नहीं होती। इसीलिए इस अधिनियम के विरुद्ध विरोध की प्रबल आधी उठी।

इस अधिनियम के दुरुपयोग की चर्चा के प्रसग मे पजाब के हिन्दी आन्दोलन का उल्लेख होना स्वाभाविक था क्योकि पजाब सरकारने आदोलन को कुचलने के एक उपाय के रूप मे थोथे एव अनर्गल कारणों पर आन्दोलन के मुख्य २ कार्यकर्ताओं तथा उसके समर्थकों को जिनमे अनेक प्रतिष्ठित नागरिक,भूतपूर्व राज्य मन्त्री तथा विधान-सभा के सदस्य भी सम्मिलित है जेल की चार दिवारी के भीतर बन्द कर दिया। यही नहीं राज्य के वरिष्ठ अधिकारियो की जिनसे कभी वैयक्तिक वा राजनैतिक शत्रुता रही उनसे भी इस आदोलन की आड में बदला लिया गया और उन्हें भी जेलों की हवा खिलादी गई। पजाबके अनेक जिलों में जहा हिन्दी आन्दोलन का वेग प्रबल रहा आतक का राज्य व्याप्त किया गया।

इस सम्बन्ध मे श्रीयुत आचार्य कृपलानी तथा श्री ठाकुरदास भार्गव के भाषण बडे प्रभावशाली और मार्मिक रहे जिन्हें सदस्यों ने बडे ध्यान से सुना। उन्होंने नजरबन्दी के कुछ कारणों तथा हाई-कोर्ट द्वारा की गई भर्तस्नाओं को पढकर सुनाया। उनको सुनकर सदस्य अवाक् रह गए। सरकार की मूर्खता पर बहुतों को मनोरजन हुआ और बहुतों को दु खी एव लज्जित होना पडा। एक कारण यह था कि श्री ओमप्रकाश लाम्बा ने पुलीस लारी मे आहत हुए सभ्रवाल जी एम० एल० ए० के प्राण बचाने के लिए अपना रक्त दान किया। दूसरा कारण यह बताया कि करनाल के प्रिंसीपल रलाराम ने अपने भाषण मे यह कहा कि हिदू और सिख भाई २ हैं और कुछ सिख गुरुओं ने अपने ग्रन्थो को लिखने मे हिन्दी का प्रयोग किया। एक तीसरा कारण यह था कि श्री कात्याल जी ने ६ ता० को कहीं भाषण दिया जब कि वे ७ ता० को ही जेल मे बद कर दिये गये थे। इस पर एक सस्दय ने पूछा कि क्या डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने ६ ता० को अपने कमरे मे बैठकर श्री कात्याल की आत्मा से भाषण सुना था। श्री कृपलानी जी ने पजाब हाई कोर्ट के निर्णयों के अतिरिक्त इलाहाबाद हाई कोर्ट के एक निर्णय का हवाला दिया जिसमे कहा गया था कि "कारण घडे गये हैं।"

श्रीयुत प० ठाकुरदास जी भार्गव ने अपने भाषण मे कहा "पजाब मे पुलिस ने रोहतक जिले के बहु अकबरपुर ग्राम मे जो अत्याचार किये हैं उन्होंने जलयानवाला बाग के अत्याचारों की स्मृति को ताजा कर दिया है। जब सरकार की ओर से उन्हें टोका गया तो उन्होंने कहा 'दूसरों की पीडा को कौन जानता है ?' उन्होंने कहा पजाब में अत्याचार का दौर दौरा है। चडीगढ़ और दिल्ली के आस पास बूढे पुरुषों और स्त्रियों को बलात् उठा २ कर लारियों मे फेंका गया और आधी

रात के समय ४० मील दूर जाकर छोड़ा गया। पंजाब सरकार को ऐडवाइजरी बोर्ड की सिफारिश पर ६० व्यक्ति मुक्त करने पड़े। प० जी ने माग की कि पंजाब के शासकों की इन लज्जास्पद् कार्य वाहियों की अदालती जाच होनी चाहिए और यह कानून उन मन्त्रियों के विरुद्ध प्रयोग मे लाना चाहिए जो इन नजरबन्दियो के लिए उत्तरदायी हैं किसी और के विरुद्ध नहीं। कुछ जिलों मे लाखो रुपयों के जुर्माने किये गये हैं तथा आतक का राज्य व्याप्त है।"

निश्चय ही ये दोनों महानुभाव और श्री अचितराम जी आर्य जगत् तथा हिन्दी आन्दोलन के समर्थकों के बधाई के पात्र है जिन्होंने पंजाब मे व्याप्त आतक के साम्राज्य की एक हल्की झांकी लोक सभा के सदस्यों को दिखाई।

केन्द्रीय गृह मन्त्री ने श्रीयुत प्रधान मन्त्री के स्वर मे स्वर मिलाते हुए अपने भाषण मे हिन्दी आन्दोलन को विध्वसक आन्दोलनों के समकक्ष बताने की चेष्टा करते हुए उस पर जो अशोभनीय प्रहार किया वह उपर्युक्त दोनों सज्जनों के वास्तविक स्थिति के सूचक भाषणों से विफल हो गया। जिस आन्दोलन ने ७ मास तक चलते हुए घिनौने अत्याचारों और प्रबल उत्तेजनाओं से ऊपर उठते हुए अपने अहिंसात्मक स्वरूप की अभूतपूर्व परम्परा स्थापित की उसे विध्वसक आशकाओं से परिपूर्ण बताना उसके साथ घोर अन्याय नही तो और क्या था? श्रीयुत नेहरू ने तिरुचिर पल्ली मे भाषण देते हुए इस आन्दोलन को कषगम के विध्वसक आन्दोलन के साथ रखकर हिन्दी आन्दोलन के प्रति अपनी अन्याय भावना की बडी खेद जनक अभिव्यक्ति की। सहयोगी नवभारत टाइम्स के शब्दों मे हिन्दी आदोलनकारियो ने कषगम वालो की तरह किसी एसी चीज का अपमान नहीं किया जो राष्ट्र की दृष्टि मे सम्मान योग्य समझी जाती है और नाही जिस प्रकार कषगम वालो ने लोगो को हत्या के लिए उकसाया वैसा कुछ किया। इस आदोलन का रूप शान्तिपूर्ण था और है। आदोलन के सचालकों से प० जी का मतभेद हो सकता है परन्तु इस मतभेद के लिए वे इतने बडे दण्ड के पात्र नही है।

श्री प० नेहरू तथा कांग्रेस शासन के वर्तमान कर्णधारों को एक सामयिक चेतावनी हृदयङ्गम कर लेनी चाहिए और वह यह कि वे भावी सन्तति और इतिहासकार के निष्पक्ष निर्णयो को भी ध्यान मे रखे और कांग्रेस के विशद इतिहास के उपसहार को और अधिक काला और दु:खद न बनने देवें।
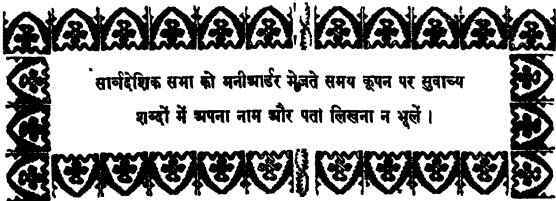
—रघुनाथप्रसाद पाठक

॥ ओ३म् ॥

सत्याग्रह स्थगित

"कांग्रेस अध्यक्ष श्री ढवर भाई और भारत सरकार के गृह मन्त्री श्रीयुत पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त के साथ मेरा जो वार्तालाप हुआ उससे और सरकार द्वारा हमारे सत्याग्रहियों की बिना शर्त आम रिहाई के जारी रहने से मुझ पर यह बात स्पष्ट हो गई है कि इन सब के पीछे सद्भावना काम कर रही है जैसा कि सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति की २२ १२ ५७ की बैठक के प्रस्ताव का अभिप्राय था। इसी भावना के अनुसार आर्यसमाज सद्भावना का प्रत्युत्तर सद्भावना के द्वारा ही देने मे पीछे नहीं रह सकता। अत उस अधिकार के अनुसार जो सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति ने मुझे दिया है मै पजाब के भाषा विषयक आन्दोलन से सम्बद्ध सत्याग्रह को स्थगित करता हूँ। मुझे विश्वास है कि इसके पश्चात् सद्भावना और हृदय परिवर्तन का वातावरण व्याप्त होकर सब बातों का अन्तिम समाधान हो जायगा। मुझे आशा और विश्वास है कि हम सब शान्ति और सदभावना का युग लाने की स्थिति मे हो जायेंगे और सब के सम्मिलित प्रयत्नो से हृदयों की उस एकता का प्रादुर्भाव होगा जो न केवल सीमावर्ती पजाब प्रान्त की अपितु समस्त भारत की शक्ति का स्रोत सिद्ध होगी।

मै आर्य जगत् की ओर से उन सब को धन्यवाद देता हुआ जिन्होंने हमारा साथ दिया या हमें सहयोग और सहायता प्रदान की उनके प्रति कृतज्ञता का प्रकाश करता हूँ मुझे पूर्ण आशा है कि आर्य-समाज को आगे भी उसके समस्त न्यायपूर्ण प्रयत्नों, गतिविधियों और आन्दोलनों मे उनका सद्भाव एव पूर्ण सहयोग प्राप्त रहेगा।

आर्य जगत् से मै अपील करूंगा कि आर्य जन अपनी उच्च और गौरवपूर्ण परम्पराओं का अनुसरण करते हुए दृढ और सगठित रहें। इसके बिना कोई भी सगठन चिरकाल पर्यन्त सच्चे अर्थ मे महान् नहीं रह सकता। हमे शक्तिशाली और दृढ बने रहना है। परन्तु इन सब मे हमे परम पिता परमात्मा के प्रति निष्ठा से उत्पन्न होने वाली विनम्रता का परिचय देते रहना चाहिए। एक मात्र इसी मार्ग का अवलम्बन करने से हम अपनी सस्कृति, परम्परा और धर्म की सर्वश्रेष्ठ विभूतियों को मानव जाति की सेवा मे अर्पित कर सके हैं और आगे भी करते रहेंगे।

॥ ओ३म् शान्ति शान्ति शान्ति ॥

घनश्यामसिंह गुप्त
प्रधान
सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति दिल्ली

दिनाक २७-१२ ५७

हिन्दी सत्याग्रह

भारत के सीमान्त राज्य पजाब की सुरक्षा और स्थिरता दोनों ही की दृष्टि से यह बहुत ही खतरनाक बात है कि वहा जो हिन्दी आदोलन गत सात मास से चल रहा है उसके सम्बन्ध मे न तो सरकार की ओर से और न ही आन्दोलन की सूत्रधार हिन्दी रक्षा समिति की ओर से ऐसा कोई ठोस कदम उठाया गया जिससे कि उसकी शाति एव सन्तोषपूर्ण रूप से समाप्ति होसके। दोना ही अपनी बात पर अड हुए हैं और जबतक वह अडगा कायम रहेगा तबतक कोई समझौता सम्भव नहीं। यह सत्य उन लोगों को भली भाति हृदयगम कर लेना चाहिए जो राज्य मे शाति और स्थिरता के इच्छुक हैं।

पजाब सरकार इस आन्दोलन के प्रसग मे अब तक ८ हजार गिरफ्तारिया कर चुकी है और वह क्रम अब भी जारी है। जो सूचनाए मिल रही है उनसे यह प्रकट है कि सरकार का इस क्रम को समाप्त करने तथा समझौते की कोई बात करने का तब तक कोई इरादा नहीं जब तक आदोलन वापस नहीं ले लिया जाता। इसके अतिरिक्त उसका यह भी आग्रह है कि क्षेत्रीय फार्मूले मे हिंदी सत्याग्रहियो की इच्छानुसार कोई परिवर्तन तबतक नहीं हो सकता जबतक उभय पक्ष उसके लिए सहमत न हो जायें।

उधर आर्यसमाजी नेताओं और हिन्दी रक्षा समिति का यह कथन है कि दमन और दबाव की नीति से वे नहीं झुकेंगे और जब तक सब मागें पूरी नहीं हो जातीं, वे न केवल सत्याग्रह जारी रखेंगे अपितु उसे और भी तेज करेंगे। उन्होंने यहा तक चेतावनी दे दी है कि यदि 'उचित समय के भीतर सब मागें पूरी न हुई, तो जनता से कर मत दो आन्दोलन के लिए अपील की जायगी। आन्दोलन की जो-वर्तमान स्थिति है उसे देखने से यह स्पष्ट है कि उसके स्वत समाप्त होने के कोई लक्षण नहीं हैं। न केवल प्रतिदिन सत्याग्रह के लिए आहुतिया मिल रही हैं, अपितु पजाब का बहुत बड़ा छात्र वर्ग भी उसके साथ सहानुभूतिशील है। स्थिति यह है कि पजाब से बाहर के नगरों आगरा, मेरठ आदि में भी छात्र विशेष सख्या मे सत्याग्रहियों के प्रति पजाब सरकार द्वारा किये जा रहे दमन के विरोध मे हडताल कर रहे हैं। यह स्थिति कुछ अच्छी नहीं है और समय का यह तकाजा है कि इस सम्बन्ध मे स्थिति के और बिगडने से पूर्व ही कोई सक्रिय कदम उठाया जाये।

पजाब के योजना-मन्त्री श्री भार्गव ने प० नेहरू से इस सम्बन्ध मे बातचीत की है और वे प० पन्त और श्री घनश्यामसिह गुप्त से भी विचार विमर्श कर रहे हैं पर यह बात स्मरणीय है कि कोई भी विचार विमर्श अथवा समझौते सम्बन्धी कोई प्रस्ताव तब तक फलदायी नहीं हो सकते जब तक उनमें उभय पक्ष के सच्चे सम्मान और तर्कसगत माग की रक्षा के विचार को सर्वोपरि न रखा जाय। उसके लिए कांग्रेस और सरकार दोनों को ही इस आन्दोलन को साम्प्रदायिक समझना छोडना होगा और एक ऐसा सामान्य आधार तैयार करना होगा जिस पर उभय पक्ष सहमत हो सकें।

समझौते की वार्ता के लिए आदोलन को वापस लिये जाने का सरकारी आग्रह उचित प्रतीत होता है, परन्तु सरकार स्वय यह सोच सकती है कि जिस आन्दोलन को अब तक त्याग और रक्त की बलि से जीवित रखा जा रहा है उसे बिना किसी ठोस आश्वासन के कैसे बन्द किया जा सकता है? आवश्यकता इस बात की है कि सरकारी और कांग्रेस अधिकारी स्वय इस सम्बध में सिख नेताओं से वार्ता करें और अपने प्रभाव का प्रयोग करके समझौते का एक सामान्य आधार तैयार करने में सहायता दें। क्षेत्रीय फार्मूले मे परिवर्तन के लिए उभय पक्षों के स्वय किसी समझौते पर पहुचने का जो सरकारी आग्रह है वह अनुचित है। यह फार्मूला पहले भी उक्त पक्षों की सहमति से स्वीकार नहीं किया गया और उसमे किसी परिवर्तन के लिए सीधी वार्ता आवश्यक नहीं है। इसके साथ ही पजाब की स्थिरता और सुरक्षा के नाम पर हिन्दी रक्षा समिति का भी यह कर्तव्य है कि सब मागों की पूर्ति पर न अडकर कोई मध्य मार्ग निकालने में सहयोग देने की चेष्टा करे। (नवभारत टाइम्स)

हिन्दी रक्षा आन्दोलन पर विवेचनात्मक दृष्टि

[लेखक—श्रीयुत प्रिंसिपल सूरजभानु, जालन्धर]

हिन्दी सत्याग्रह अब ७ वें महीने मे प्रविष्ट हो चुका है। अब तक २० सहस्र से अधिक सत्याग्रही सत्याग्रह कर चुके हैं। राज्य सरकार द्वारा गिरफ्तार न करने की नीति का अवलम्बन करने पर भी इस समय ८ हजार से अधिक सत्याग्रही जेलों मे बन्द हैं। इस बीच मे सत्याग्रह का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया है और अब यह आन्दोलन समूचे भारत के हिन्दुओं का आन्दोलन बन गया है। देश के भिन्न २ भागों से सत्याग्रही जत्थे निरन्तर आ रहे है। समाचार पत्रों मे प्रकाशित समाचार के अनुसार केन्द्रीय गवर्नमेंट ने पजाब सरकार के इस सुझाव को स्वीकार नहीं किया कि पजाब से बाहर के जत्थो को आने से रोका जाय। पजाब के मुख्य मन्त्री सरदार प्रतापसिंह कैरों ने यह घोषणा की है और वे इसी प्रकार की घोषणाए सत्याग्रह के आरम्भ काल से करते आ रहे हैं कि 'हिन्दी रक्षा आन्दोलन मर रहा है और कानून तथा व्यवस्था की स्थिति काबू में है।' यदि वस्तु स्थिति यही है तो इसके लिए उन्हें धन्यवाद दिया जाना चाहिए, परन्तु बात ऐसी नहीं है। पजाब प्रान्त के १८ जिलों में से १२ जिलों मे १४४ धारा लगाई गई और आज भी बहुत से जिलों मे यह धारा लगी हुई है। यदि १४४ धारा लगा देने से स्थिति का काबू में होना समझा जाता है तो निश्चय ही पजाब के मुख्यमन्त्री की भावना बडी उदार और अपने को धोखा देने वाली है। विधान सभा के विरोधी दल के सदस्य जेल में डाल दिये गये हैं। इतना ही नहीं मुख्य मन्त्री महोदय का जिस किसी विधानसभायी से कभी किसी बात पर मतभेद रहा हो—उसे भी जेल की हवा खिला दी गई है। ३० से लेकर १०० तक सत्याग्रही प्रतिदिन जेल जा रहे हैं। जितने छूटते हैं उनसे अधिक जेलों मे पहुँच जाते हैं। क्या इससे मुख्य मन्त्री महोदय के दावे की पुष्टि होती है ? सरदार कैरों की घोषणाए लार्ड विलिंगडन की घोषणाओं का स्मरण करा देती है जिन्होंने सहस्रों काग्रेसजनों को जेलखानों मे डाल कर यह दर्प पूर्ण घोषणा की थी कि 'सब कुछ अच्छा है, काग्रेस मर गई है और भारत मे अग्रेजी शासन अनेक वर्षों के लिए सुरक्षित हो गया है।'

इस समय पजाब की स्थिति बडी दुर्भाग्य पूर्ण है परन्तु इसकी उत्तरदायिता किस पर है ? झगडा हिन्दी रक्षा समिति और सरकार के मध्य में है जो अपनी भाषा नीति में साधारण सा सुधार करके उसे समाप्त कर सकती है। यदि हिन्दी रक्षा समिति की मागें इतनी अनुपयुक्त है कि वे स्वीकार नहीं की जा सकतीं तब तो हिन्दी रक्षा समिति हठधर्मी का आश्रय लेकर पजाब की वर्तमान दुरवस्था की उत्तरदायिता अपने ऊपर ले रही है परन्तु यदि ये मागें अनुपयुक्त नहीं हैं तब यह कहना उपयुक्त होगा कि राज्य सरकार अपनी हठधर्मी (अथवा अपने मित्रों या सहायकों की हठधर्मी के कारण जिनकी सहायता पर उसका जीवन अवलम्बित है) के कारण इस दुरवस्था का अन्त करना नहीं चाहती और इसकी समस्त जिम्मेदारी राज्य सरकार पर आती है। सामान्यत मागें उचित हैं और प्रधान मन्त्री महोदय ने इस बात को स्वीकार किया है। पर यह दूसरी बात है कि राजनैतिक कारणों से वे उन्हें स्वीकार करने में कठिनाई अनुभव कर रहे हों। फिर भी उन्होंने यह कहा है कि आर्यसमाज की ९० प्रतिशत मांगें पहिले ही स्वीकार की जा चुकी हैं। प्रजातन्त्रीय शासन व्यवस्था में किसी भी

भाषायी वा सांस्कृतिक अराजनैतिक वर्ग को यह अधिकार प्राप्त होता है कि वह शान्तिपूर्ण प्रेरणा से उन सरकारी नीतियों को बदलवाने के लिए सघर्ष करे जो उसके हितों पर आघात पहुँचाती हो। सत्याग्रह शान्ति पूर्ण प्रेरणा है। महात्मा गाधी के नेतृत्व में काग्रेस ने राजनैतिक व्यवहार का यह उच्चादर्श हमारे सामने प्रस्तुत किया था। सत्याग्रह का अर्थ है स्वेच्छया कष्ट के उपाय का अवलम्बन करना। अत यह उपाय बेहूदा नहीं अपितु सदैव उच्च होता है। क्या इस सत्याग्रह से निबटने वाली सरकार का लेखा जोखा स्वच्छ और निर्दोष है? फीरोजपुर जेल में जो कुछ हुआ क्या उससे अधिक भ्रष्ट और बीभत्स कोई और घटना हो सकती है और क्या राज्याधिकारियों की जान पूछकर की गई उपेक्षा वा अप्रत्यक्ष प्रेरणा के बिना इस प्रकार का दुष्टता पूर्ण अत्याचार सभव हो सकता था? सच्चाई यह है कि दुर्भाग्य से हममे से ऐसे व्यक्ति भी है जिनकी यह मान्यता है कि केवल वे ही प्रगतिया उच्च और श्रेष्ठ हैं जिनके साथ उनका सम्बन्ध है। अन्य समस्त प्रगतिया नितान्त अनर्गल (बेहूदा) हैं।

आओ हम समिति की मुख्य मागों का विश्लेषण करें। सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के प्रधान श्रीयुत घनश्यामसिह जी गुप्त द्वारा लिखित पजाब की भाषा समस्या और आर्यसमाज' नामक ट्रैक्ट मे इन मागों का अत्यन्त सक्षिप्त रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है —

(१) शिक्षण सस्थाओ मे शिक्षा का माध्यम बच्चों के माता-पिताओं के द्वारा चुना जाना चाहिए।

(२) दोनों भाषाओं में से किसी एक भाषा को दूसरी भाषा के रूप मे पढाए जाने की किसी भी स्तर पर बाध्यता न होनी चाहिए।

(३) जिला स्तर और उसके नीचे सरकारी रिकार्ड दोनों लिपियों मे होने चाहिए।

(४) शासन के समस्त स्तरों पर अग्रेजी का स्थान हिन्दी को दिलाना चाहिए।

(५) समस्त पजाब में एक ही भाषा योजना होनी चाहिए। यत हिन्दी और पजाबी को पजाब की क्षेत्रीय भाषाओं की मान्यता प्रदान की गई है और पडित नेहरू ने एक से अधिक बार इसी स्थिति को सही माना है अत पहली ३ मागों पर जरा भी आपत्ति नहीं हो सकती और यत हिन्दी भारतीय सघ की सरकारी और राष्ट्रीय भाषा स्वीकार की गई है अत शासन के समस्त स्तरों पर अग्रजी का स्थान हिन्दी को मिलना है। इस प्रकार चौथी माग की स्वीकृति में कोई बाधा नहीं हो सकती। पाचवीं माग न्यायानुमोदित एव विधान-सम्मत है। क्योंकि हमारे सविधान का मौलिक सिद्धान्त यह है कि सबको उन्नति का समान अवसर मिलना चाहिए। पेप्सू की वर्तमान व्यवस्था से वहा के निवासियों को समान अवसर प्राप्त नहीं होता क्योंकि वे उचित स्तर पर राष्ट्र भाषा हिन्दी के अध्ययन से वचित होजाते हैं। प्राशासनिक दृष्टि से भी यह व्यवस्था त्रुटिपूर्ण है और येन केन प्रकारेण रद्द हो जानी चाहिए। पुराने पेप्सू का अब अस्तित्व नहीं है, अत पुरानी व्यवस्था को अब कोई स्थान प्राप्त न होना चाहिए। हिन्दी को अब क्षेत्रीय और राष्ट्र भाषा का दुहरा स्थान प्राप्त है अत शिक्षा सस्थाओं मे इसके अध्ययन और प्रशासन मे इसके प्रयोग पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध लगाना समझ में आने वाली बात नहीं है और हिन्दी के प्रति न्याय का अभिप्राय गुरुमुखी के प्रति अन्याय भी कदापि नहीं हो सकता जैसा कि पक्षपात से प्रेरित कुछ व्यक्ति समझ बैठे हैं।

अत हिन्दी रक्षा समिति की कोई भी माग अयुक्तियुक्त और अनुदार नहीं है और इसीलिए उनमें से किसी माग की सहसा उपेक्षा नहीं की

जा सकती। कुशल राजनीतिज्ञता उन मार्गों को पहले ही स्वीकार कर लेती परन्तु उन्हें स्वीकार करने के स्थान में केन्द्रीय और पंजाब राज्य सरकार ने उनके प्रति बड़ा विचित्र और अशिष्ट रुख ग्रहण किया हुआ है। राज्य में हिन्दी को उचित स्थान देने के प्रश्न पर उनकी स्थिति प्रारम्भ से लेकर अब तक न केवल अपमान जनक ही नहीं रही अपितु साम्प्रदायिक दृष्टिकोण से देखने के कारण इस का समाधान भी कठिन हो गया। इस समस्या के समाधान का न्याय और औचित्य के आधार पर प्रयत्न नहीं किया गया और न कभी इस समस्या की मौलिकता पर ही विचार किया गया। मुख्य बात यही सामने रक्खी गई कि क्या हमारे अकाली मित्र तर्क और युक्ति की बात मानने और स्वेच्छया उन अनुचित सुविधाओं का परित्याग करने के लिए उद्यत हो जावेंगे जो उन्होंने स्वर्ण मन्दिर पर मोर्चा लगाकर अमृतसर की गलियों एवं सड़कों पर प्रदर्शन करके और आतंक फैलाकर केन्द्रीय सरकार से प्राप्त की थीं। मोर्चे के बाद दिल्ली में सरकार और अकालियों के मध्य जो समझौता हुआ उसमें निश्चय ही पंजाब में क्षेत्रीय भाषा के रूप में हिन्दी हित विघातिनी कोई गुप्त बात तय हुई प्रतीत होती है। प्रधान मन्त्री की इस अर्थ पूर्ण घोषणा से कि 'आपकी इज्जत मेरी इज्जत है' उस गुप्त समझौते पर प्रामाणिकता की मुहर भी अंकित हो गई थी। वस्तुतः यह गुप्त प्रतिज्ञा पत्र ही भाषा समस्या के शान्तिपूर्ण समाधान में बाधक बन रहा है और इस समझौते के पुरस्कर्ताओं के लिए अब उस दलदल में से निकलना कठिन हो रहा है जिसमें अकालियों के वोटों की सहायता से येनकेन चुनाव जीतने की इच्छा और उत्सुकता के वशीभूत हो वे लोग फंसे हुए थे क्योंकि उससे पूर्व स्थानीय निकायों के चुनावों में कांग्रेस पराजित हो गई थी। स्पष्टतः यह एक सौदा था और अकालियों के बिल का अग्रिम भुगतान करना अनिवार्य था। रीजनल योजना इज्जत के उस कर्ज की अदायगी थी। इस योजना के द्वारा हिन्दी के साथ बड़ा अन्याय हुआ है और उसने राज्य की प्रजा के एक बड़े भाग के सांस्कृतिक अधिकारों पर कुठाराघात किया है। इस मामले में जो हठधर्मिता देख पड़ती है उसका कारण मास्टर तारासिंह और ज्ञानी करतारसिंह के नेतृत्व में अकालियों ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर और सरदार प्रतापसिंह के नेतृत्व में कांग्रेस और पंडित नेहरू और पंत जी के नेतृत्व में केन्द्रीय सरकार इन तीनों दलों का राजनैतिक गठबन्धन ही है। इन सबने हिन्दी रक्षा समिति और आर्यसमाज को अपने आक्रमण का लक्ष्य बनाया और कभी २ इनमें से कुछ ने तो इन्हें पंगु बनाने का भी प्रयत्न किया है। उनके आक्रमण की रीति इस प्रकार रही है —

(१) हिन्दी रक्षा समिति की वास्तविक स्थिति के विषय में झूठा प्रचार करना।

(२) हिन्दी आंदोलन का पलड़ा हल्का करने के लिए प्रांत में साम्प्रदायिक वैमनस्य उत्पन्न करना।

(३) हिन्दी रक्षा समिति के समस्त नेताओं और समर्थकों को गिरफ्तार करना और आवश्यक होने पर उनका अपहरण तक कर डालना।

(४) समिति को लोगों की दृष्टि में गिराने और उन्हें डरा धमकाकर उससे दूर रखने के लिये समिति पर गालियों की बौछार करना।

इसकी प्रमाण स्वयं घटनाएं है और इन आरोपों के प्रमाण में अनेक साक्षियां प्रस्तुत की जा सकती हैं।

समिति की वास्तविक स्थिति के विषय में २ बातों पर जान बूझकर भ्रम फैलाया गया है। अर्थात् (१) हिन्दी रक्षा समिति पंजाबी के मूल्य पर पंजाब में हिन्दी का विकास चाहती है और यह उस क्षेत्रीय भाषा (पंजाबी) के प्रति सरासर अन्याय है। (२) समिति पंजाबी क्षेत्र के समस्त लोगों पर राष्ट्र भाषा हिन्दी को बलात् लादना चाहती है और इस प्रकार वह हिन्दी का अहित कर रही है। वास्तविक स्थिति यह है कि समिति

के नेता किसी भाषा का विकास दूसरी भाषा के मूल्य पर पसन्द नहीं करते। वे केवल यह चाहते है कि हिन्दी और पजाबी दोनों भाषाओं को विकास का समान अवसर प्राप्त हो। वे यह भी चाहते हैं कि इन दोनों क्षेत्रीय भाषाओं के सम्बन्ध मे राज्य सरकार की नीति निष्पक्ष हो। सच्चर फार्मूले के द्वारा पजाबी क्षेत्र मे हिन्दी के मार्ग मे कठिनाई उपस्थित करने की चेष्टा की गई है। हिन्दी रक्षा समिति इसी चेष्टा के विरुद्ध सघर्ष कर रही है। यदि कोई व्यक्ति यह समझता हो कि उस बाधा को हटाने के लिए सघर्ष करने से हिन्दी का अहित होता है तो वह व्यक्ति 'भेडिया आ गया', 'भेडिया आ गया' चिल्लाकर हिन्दी प्रेमियों को डराना चाहता है और यह स्थिति अयुक्त होने से निकृष्टतर है। कांग्रेस के बडे से बड और छोटे से छोटे सभी जनों ने सत्याग्रहियों पर अपशब्दों और धर्माक्यों की बौछार की है। हिन्दी आदोलन को अत्यन्त बेहूदा कहना बडा सरल है परन्तु क्या पजाब के मुख्य मन्त्री के लिए यह कहना शिष्ट है कि हिन्दी के लिए आदोलन करने वाले पागल खाने मे रखने योग्य है और क्या जापान जाते समय ज्ञानी गुरमुखसिह से भारत के प्रधान मन्त्री का उपहास के रूप मे यह कहना कि 'सत्याग्रहिया को मेरा प्यार देना' जले पर नमक छिडकना नहीं है? यह तो शक्ति से मदान्ध लोगों की हृदय हीनता ही कही जा सकती है? आदोलन को कुच लने के लिए हिन्दी रक्षा समिति के लगभग सभी नेता गिरफ्तार किये जाकर जेलो बन्द किये गए (एडवाइजरी बोर्ड ने प्राय प्रत्येक महत्वपूर्ण केसमे नजरबन्दों की मुक्ति का आदेश दिया जिससे स्पष्ट है कि ये नजरबन्दिया अत्यन्त अनुचित और अन्यायपूर्ण थी) कम जिम्मेवार लोगों का तो कहना ही क्या पजाब मन्त्री मण्डल के कुछ मन्त्री भी प्रचार करते फिरते हैं कि हिन्दी आंदोलन गुरुमुखी और सिक्खों के विरुद्ध प्रेरित है जिसके फल-स्वरूप राज्य मे साम्प्रदायिक तनाव के बीज बोये जा रहे है। साम्प्रदायिकता ऊपर से प्रविष्ट हो रही है नीचे से उसका उद्‌भव नहीं हो रहा है। बहुत से राजमन्त्री अपने सार्वजनिक भाषणों मे साम्प्रदायिकता का खण्डन करते परन्तु अपने दैनिक कार्यों से उसका मण्डन करते है। वे निष्पक्ष शासन की तो चर्चा करते है परन्तु अपने अनुचित हस्तक्षेप और आचरण से पक्षपात का परिचय देते हैं।

पजाब युवक कांग्रेस ने आर्यसमाज मन्दिरों पर धरना देने की अत्यन्त घातक योजना बनाई और पजाबी रक्षा दल की कान्फ्रेन्स मे पजाब के सिक्ख मन्त्रियों ने जिनमे पजाब के मुख्य मन्त्री भी सम्मिलित थे बडे उत्तेजनात्मक भाषण दिये। राज्य के व्यय पर आयोजित यात्राओं मे वे अब भी ऐसा करते फिरते हैं। अन्त मे 'साहित्यकारों को जिनमे से कुछ को सरकारी सम्मान और आर्थिक सहायता सहित विविध प्रकार के लाभ प्राप्त हैं लोकसभा एव विधानसभा के सदस्यों को जिनकी महत्वाकाक्षा साधारण सदस्यों से ऊपर उठने की है, एव पजाब के कतिपय कम्यूनिस्ट फिल्म स्टारों को चण्डीगढ का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट करने के लिए (वे अपनी कलात्मक प्रतिभा के कारण राज्य की यूनियन कौंसिल के सदस्य नामजद होने के योग्य हैं) एक घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए तैयार किया गया जिसे हिन्दी सत्याग्रह का खण्डन करने के लिए उनके कृपालु मित्रों ने यह दिखाने के लिए बनाया था कि हिन्दी के वास्तविक प्रेमी हिन्दी आदोलन के विरुद्ध है। परन्तु उनका यह यत्न सफल नहीं हो सकता था। हिन्दी प्रेमियों को सावधान किया गया कि उनके आदोलन से राज्य का विभाजन हो जायगा। विचित्र और अन्याययुक्त फार्मूलों को बनाकर और इस प्रकार विभाजन के बीज बोकर राज्याधिकारी विभाजन की उत्तरदायिता (जिसकी आशका की जा रही है)

हिन्दी प्रेमियो पर डालना चाहते हैं। यह तर्क बड़ा विचित्र है।'

पजाब मे यह भावना व्यापक रूप मे फैली हुई है कि 'मुसाफिर, कैरों, हुक्मसिंह गुट केन्द्रीय सरकार के सामने पजाब की वास्तविक स्थिति प्रस्तुत नहीं करता और केन्द्रीय सरकार की चिन्ता को कम करने के लिए यह गीत गाते फिरते हैं— हिन्दी आदोलन मर चुका है या मर रहा है।'

परन्तु जरा भी सहज बुद्धि रखने वाला व्यक्ति यह देख सकता है कि मृतप्राय आदोलन छ महीने वा उससे अधिक समय तक नहीं चल सकता। इस प्रसग मे यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि उच्च क्षेत्रों की राजनैतिक कुटिलता ने आदोलन को बदनाम करने में कोई कमी नहीं रखी तथापि स्वतन्त्रता प्राप्ति के सघर्ष काल मे कांग्रेस ने जितने सत्याग्रह आंदोलन चलाये उनमे से कोई भी आदोलन हिन्दी सत्याग्रह की तरह देर तक एव शांति से नहीं चला और न वह इतनी कठिनाइयों एव विषमताओं मे से हो कर गुजरा जितनी मे से हमारा आदोलन गुजर रहा है।

कोई भी यह नहीं चाहता कि यह सघर्ष निरतर बना रहे, शाति होनी ही चाहिए। हिन्दी रक्षा समिति ने समझौते की अपनी भावना का उस समय पर्याप्त परिचय देदियाथा जबकि उसने पजाब गवर्नर के सुझाव पर समझौते की बातचीत चलाने के लिए तत्काल अपनी उपसमिति नियुक्त कर दी थी। यदि राज्य सरकार की नीयत साफ और शाति स्थापित करने की होती तो वह अपनी दमन नीति को स्थगित करके बातचीत के लिए शात एव उपयुक्त वातावरण बनने देती। परन्तु उसने इससे उल्टा किया। उसने समिति के नेताओं को भड़काने का जान बूझ कर यत्न किया जिससे समझौते की बात चीत न हो सके। समझौते की बातचीत हुई परन्तु बातचीत के बढते ही उसने समिति के नेताओं को जेल मे बन्द कर दिया। स्वय पजाब सरकार के कुछ प्रतिनिधियों ने बातचीत को असफल बनाने के उद्देश्य से ऐसी स्थिति अपनाई जिसमें सफलता सभव नहीं हो सकती थी। इसके बाद श्री गोपीचद भार्गव के प्रयासों को असफल बनाया गया और मास्टर तारासिंह मैदान मे आ धमके। उन्होंने न केवल दोनों वर्गो के प्रतिनिधियों के साथ समझौता चर्चा चलाने के लिए डाक्टर भार्गव जी को ही आड़े हाथों लिया अपितु गत्यवरोध का अन्त करने के लिए पहल करने पर पजाब के गवर्नर को भी झाड़ पिलाई। यद्यपि राज्य के वातावरण के दूषित होने का दोष समय बे समय आर्य समाज और हिन्दी रक्षा समिति के जिम्मे लगाया जाता है तथापि पजाब राज्य सरकार ने अपने बार २ के आचरण से यह सिद्ध करदिया है कि उसे राज्य की शान्ति की तनिक भी चिन्ता नहीं है। इस बात के लक्षण सुस्पष्ट हैं कि राज्य मे एक ऐसा गुट है जिसे शाति के प्रयत्न नहीं भाते क्योंकि उस गुट के लोग यह सोचते प्रतीत होते हैं कि समझौते से उनके वयक्तिक हितो को आघात पहुचेगा। उनके अविचार पूर्ण एव अशिष्ट वक्तव्यों से सदैव वातावरण खराब होकर समझौते की सम्भावनाए समाप्त होती रही हैं। वे बातचीत के द्वारा समस्या का समाधान नहीं चाहते प्रत्युत यह चाहते हैं कि बिना शर्त के आन्दोलन वापस ले लिया जाय। विचित्र बात यह है कि सरकार की ओर से वा उसकी प्रेरणा से हिंदी रक्षा समिति को अब तक जो अपीलें की गई है उन सबमें समिति के नेताओं को कहा गया है कि वे बिना शर्त के सत्याग्रह बन्द कर दें जिसका अभिप्राय आन्दोलन की निस्सारता दिखाना है। यह कहना ठीक नहीं है कि हिंदी रक्षा समिति शाति नहीं चाहती। वह सम्मानपूर्ण शाति चाहती है और इसके लिए सदैव उद्यत है परन्तु शाति एकपक्षीय नहीं होती। जब तक पंजाब राज्य सरकार हिन्दुओं, आर्यसमाज और हिन्दी रक्षा समिति के प्रति अपने

नजरबन्दी कानून का भयंकर दुरुपयोग

श्रीयुत घनश्यामसिंह गुप्त का वक्तव्य

पजाब मे भाषाओं की स्वतन्त्रता के लिए चल रहे सत्याग्रह के साथ सम्पर्क होने के कारण मेरे पास इस प्रकार की सूचनाए हैं जिनसे पता लगता है कि पजाब की गवर्नमेंट ने अपनी दमन नीति का अनुसरण करते हुए कानून और क़ानूनी कार्यविधि को किस प्रकार हवा मे उडाया है। जहा तक सत्याग्रहियों तथा उनके समर्थकों के साथ पजाब राज्य के व्यवहार का सम्बन्ध है यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि पजाब में कानून का राज्य क्रियात्मक रूप से समाप्त हो गया है। वहा दण्ड विधान का खुल कर दुरुपयोग हुआ है। परन्तु इस समय मेरा उद्देश्य जनता को विशेषत विधान सभाइयों को इस बात का कुछ परिचय देना है कि पजाब राज्य सरकार ने निवारक अधिनियम (प्रीवेन्टिव डिटेन्शन ऐक्ट) की धाराओं का कैसा भयकर दुरुपयोग किया है।

(१) मानव की सेवा अपराध

पजाब व्यापार मण्डल के प्रधान श्रीयुत ओ३म् प्रकाश लाम्बा के अभियोग मे उनकी नजरबन्दी का एक कारण यह बताया गया था कि उन्होंने श्री लालचन्द सभ्रवाल एम० एल० ए० के प्राणों की रक्षा के लिए रक्त दान किया था जिनका बाया हाथ चण्डीगढ में सत्याग्रह करने के बाद पुलिस लारी की दुर्घटना मे बुरी तरह कुचल गया था।

खून का फव्वारा छूट जाने के कारण श्री सभ्रवाल महोदय पटियाला के हस्पताल मे मरणासन्न अवस्था में पडे थे और उनके प्राण बचाने के लिए शरीर में खून चढाने की आवश्यकता थी।

(२) विभिन्न जातियों में सद्भावना बनाए रखने का उपदेश अपराध

डी० ए० वी० हाई स्कूल करनाल के प्रिंसिपल

कठोर व्यवहार का परित्याग नहीं करेगी तब तक पजाब राज्य मे शाति व्याप्त न हो सकेगी। हमारी नौकरशाही पशु बल के द्वारा शाति भले ही स्थापित कर दे आन्दोलन को कुचल सके तो कुचल दे और छत पर खडे होकर यह घोषणा करदे कि सब कुछ ठीक है परन्तु यह शाति श्मशान की शान्ति होगी। अपने पीछे यह जो कटुता छोड जायगी वह राज्य की शाति के मार्ग मे बडी भयकर बाधा बनी रहेगी। अपने सास्कृतिक अधिकारों के सम्बन्ध में हिन्दुओं की जो भावनाए हैं उनकी उग्रता का प्रदर्शन पर्याप्त हो चुका है। हमारे प्रिय प्रधान मन्त्री जी का पजाब में हडतालों से स्वागत हुआ। यद्यपि पजाब सरकार ने इन्हें रोकने में कोई प्रबल उठा न रखा। क्या ये बात आखें खोल देने वाली नहीं हैं? पजाब सरकार अपने आदेश से चण्डीगढ मे स्वागत की व्यवस्था कर सकी परन्तु अन्य स्थानों पर प्रजा की उग्र भावनाओं को शात रखने में बुरी तरह असफल रही। स्थिति के सुधार के लिए आवश्यक है कि अधिक समझदारी से काम लिया जाय। ब्रिटिश नौकरशाही की रीति नीति का अनुसरण करना निश्चय ही पजाब में कांग्रेस के लिए घातक सिद्ध होगा। श्रीयुत प० नेहरू के पक्षपात पूर्ण रवैये से अल्पसंख्यकों के अत्याचार बढ रहे हैं और पजाब के हिन्दुओं की निष्ठा भग होती देख पड रही है। प० जी से यह आशा की जाती है कि वे सबके साथ न्याय करेंगे।

×

श्री मेलाराम के अभियोग मे नजरबन्दी के कतिपय कारण इस प्रकार अङ्कित है —

"१२-८-५७ को हिन्दी रक्षा समिति के तत्वावधान मे आर्यसमाज माडल टाउन करनाल मे रात्रि के ८॥ बजे से १०॥ बजे तक चौधरी पूरनसिह एडवोकेट की अध्यक्षता मे एक सार्वजनिक सभा हुई। उस सभा मे भाषण देतेहुए स्वीकार किया—यद्यपि हम पजाबी बोलते हैं तथापि हमारी लिखाई की भाषा हिंदी है। तुमने यह भी कहा कि हिंदी सिख गुरुओं की भी भाषा थी। अपनी बात को सिद्ध करने के लिए तुमने यह भी कहा कि श्री गोविन्दसिंह द्वारा लिखित 'विचार नाटक' पुस्तक भी हिन्दी मे लिखी गई थी। तुमने यह भी दलील दी कि सिख और हिन्दू एक ही हैं और कुछ अकाली नेता अपनी नेतागिरी को बनाये रखने के लिए सिख और हिंदुओं को पृथक् कर रहे हैं। तुमने दरबार साहब के पवित्र सरोवर में सिगरेटों के (तथाकथित) फेंके जाने तथा किसी धर्म पुस्तक के कुछ पत्रों के फाड़े जाने की निन्दा की। तुमने कहा कि सबको इस प्रकार की शरारत के दुष्कृत्यों की निन्दा करनी चाहिए। तुमने यह भी कहा कि हम कभी भी इस प्रकार के दुष्कृत्य न होने देंगे। तुमने यह भी कहा कि ये कृत्य लज्जाजनक हैं।

(ब) १०-८-५७ को सहारनपुर के श्री सुन्दरसिंह जी के जत्थे का स्वागत करने के लिए ईदगाह करनाल में श्री शातिप्रकाश की अध्यक्षता में एक सभा हुई जिसका आयोजन हिंदी रक्षा समिति ने किया था जो रात के ८॥ बजे से १० बजे तक हुई थी और जिसमे लगभग १२०० व्यक्ति सम्मिलित हुए थे। इस सभा में तुमने एक कविता पढ़ी थी जिसमें तुमने कहा था कि पंजाब राज्य मे हिन्दी को न्यायपूर्वक स्थान दिलाने के लिए तुम अन्त तक लड़ते रहोगे। तुमने एक भाषण भी दिया था जिसमें तुमने सच्चर फार्मूले की आलोचना करते हुए कहा था कि तुम पंजाबी भाषा के विरुद्ध नहीं हो परन्तु पंजाब राज्य मे हिन्दी और पंजाबी को समान स्थान दिलाना चाहते हो।

(म) चौधरी बारूराम वकील एम० एल० ए० की नजर बदी के कुछ कारण इस प्रकार है –

९-८-५७ को श्री धर्मसिंह राठी द्वारा आयोजित सम्भालका के ग्राम सम्मेलन में जो तुम्हारे प्रधानत्व में प्रात ११.४५ से मध्याह्न २-३० तक हुआ था और जिसमे ४००-५०० व्यक्ति सम्मिलित हुए थे तुमने कहा 'अब मैं तुम्हें हिंदीके सम्बधमे कुछ दूगा हमारे लोगों ने रीजनल फार्मूले के समर्थन मे आवाज उठाई क्योंकि उनका ख्याल था कि जालधर डिवीजन के लोग हम लोगों के हितों के विरोधी हैं और इसका हल रीजनल फार्मूला है। इसी कारण से हमने इसका समर्थन किया था। परन्तु रीजनल फार्मूले के वेष मे हम पर एक और चीज आ पड़ी है और हिदी प्रेमियों पर गुरुमुखी बलात् लादी जा रही है। हम गुरुमुखी के विरुद्ध नहीं है क्योंकि यह गुरुओं की वाणी है। हम इसका आदर करते हैं परन्तु संविधान मे यह व्यवस्था की गई है कि पढने और लिखने के मामले मे प्रत्येक व्यक्ति आजाद है और मा, बाप को यह स्वतन्त्रता है कि वे जिस भाषा मे चाहें अपने बच्चों को शिक्षित करें मैं हरियाणा के लोगो को कहूगा कि वे इस आदोलन के लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी के लिए तैयार रहें और पूरी शक्ति के साथ उसमे भाग लें। हिंदी का मामला हमारे इलाके राज्य और देश के लिए जीवन मरण का मामला है। यदि हम स्कूलों में अपनी बागड़ (स्थानीय बोली) भाषा पढ़ाना चाहें तो क्या यह संभव होगा? हमारे बच्चों पर स्कूलों मे जबरदस्ती गुरुमुखी लादे जाने का हम विरोध करते हैं और हम अहिंसा के सिद्धान्तों पर चलते हुए इसका विरोध करेंगे। हमारी सरकार केवल जबानी कही हुई चीजों को स्वीकार करने के लिए उद्यत नहीं है परंतु यदि इस पर दबाव पड़ा तो वह जल्दी ही हमारी बात मान जायगी। अत मैं आप लोगों से अपील

करता हूँ कि आप इस आंदोलन में अधिक से अधिक योग दें।"

सरकारी नीति की आलोचना नजरबन्दी का आधार

(१) पानीपत के श्री रामगोपाल सुपुत्र श्री सुगन चन्द के मामले मे नजरबन्दी का एक आधार यह था —

"१८ ८ ५७ को तुमने किले के मैदान मे हुई एक सार्वजनिक सभा में यह कहा था कि वर्तमान सरकार ब्रिटिश शासन से भी बुरी है। वर्तमान शासन मे बोलने और लिखने की स्वतन्त्रता नहीं है और निवारक अधिनियम को काग्रेस गवर्नमेन्ट सरक्षण प्रदान कर रही है।

(२) जींद (सगरूर) के श्री हरिश्चन्द्र सुपुत्र श्री रामस्वरूप के अभियोग मे नजरबन्दी का आधार इस प्रकार था —

'१५ ८ ५७ को हिन्दी रक्षा समिति के तत्वावधान मे आयोजित सार्वजनिक सभा मे (१२५।१५०) जो मास्टर बदरीप्रसाद की अध्यक्षता में आर्यसमाज जींद मे रात्रि के ८ ४५ से १० १५ बजे तक हुई थी तुमने मच के मत्री के रूप मे कार्य किया था। स्वतत्रता दिवस के अवसर पर जबकि बहुत से कैदी छोड़े जा रहे थे रोहतक में सत्याग्रहियों की गिरफ्तारी पर तुमने सरकार की आलोचना की थी। इस प्रकार तुमने सरकार के प्रति असन्तोष उत्पन्न किया। तुमने आंदोलन को सहायता देने की भी श्रोताओं को प्रेरणा की।

(३) २३-८-५७ को तुमने पुन एक सार्वजनिक सभा में (५००) जो श्री सत्यनारायण वकील की अध्यक्षता में चौ० रामसिह की गिरफ्तारी का विरोध करने के लिए आर्य समाज मन्दिर जींद मे रात्रि के ८॥ से १० बजे तक हुई थी मच मत्री का कार्य किया था। उस सभा में तुमने सरकार की आलोचना करते हुए कहा था कि वह सिखों की कृपाणों से डरती है और 'लड़ाने तथा शासन करने की' नीति पर चल रही है। इस प्रकार तुमने सरकार के प्रति असतोष उत्पन्न किया है।

(४) १८ ६ ५७ को हिंदी रक्षा समिति कैथल मे एक सार्वजनिक सभा (२५०) रात के ८॥ बजे से १० बजे तक की।

इस सभा का प्रधान कोई न था परन्तु कैथल के श्री ब्रजलाल जी ने मच मन्त्री के रूप में कार्य किया। तुमने अपने भाषण मे कहा कि राज्य की विधान सभा के विरोधी दल ने कैरों मन्त्री मण्डल के तथाकथित भ्रष्टाचार का प्रबल विरोध किया था। तुमने हिन्दी रक्षा समिति के पक्ष का समर्थन किया और कहा कि हरयाणा प्रान्त के लगभग सभी विधान सभाइयों ने समिति के दृष्टिकोण का समर्थन किया है। तुमने यह भी कहा कि हिन्दी आंदोलन सफल होकर रहेगा। तुमने श्रोताओं को यह उपदेश दिया कि वे अपनी मांगों को स्वीकार कराने के लिए दृढ और सगठित रहें। तुमने यह भी सुझाया कि कांग्रेस गवर्नमेंट दबाव और एकता के सामने झुकती है। तुमने घोषणा की कि तुम समिति के आदेश का पालन करोगे और जब सत्याग्रह करने के लिए कहा जायगा सत्याग्रह करोगे।

(स) नजरबन्दी के समर्थन के लिए अनर्गल और असत्य आरोप

(१) अम्बाले के श्री डा० लालचन्द (जिनके यहा श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज ठहरते थे) प्रिंसिपल भगवान दास डी ए वी कालेज अम्बाला और श्री एन० डी० ग्रोवर एम० एस० सी० प्रो० डी० ए० वी० कालेज अम्बाला को एक साथ नजरबद किया गया और इन तीनों के विरुद्ध एक आरोप यह लगाया गया कि इन्होंने प्रिंसिपल भगवानदास जी के मकान पर गुप्त सभा करके सत्याग्रह को उग्र करने के निमित्त तेजाब की बोतलों तथा हथगोलों

से सुसज्जित एक स्वय सेवक दल बनाने की योजना बनाई जो पुलिस को तग करने के लिए सत्याग्रहियों का एक २ जत्था लेकर जाये ।

यह गुप्त सभा ८ ७-५७ को हुई बताई गई और ये तीनों महानुभाव एक मास से अधिक समय के बाद गिरफ्तार किये गये । इस आरोप की अनर्गलता स्पष्ट है किसी भी सत्याग्रही ने ऐसा नहीं किया। यद्यपि यह आयोजना ८-७-५७ को हुई बताई गई परन्तु पुलिस ने न तो कोई तलाशी ली और न कोई इस प्रकार की वस्तु ही उनके यहा से बरामद हुई ।

(२) रोहतक के श्री श्यामसुन्दर कत्याल के मामले मे नजरबन्दी का एक कारण यह बताया गया कि उन्होंने ६ ८ ५७ को रोहतक मे कुछ भाषण दिये जब कि सत्य यह है कि वे उस दिन जेल मे बन्द थे।

पंजाब सरकार को हाईकोर्ट की झाड़

(१) लुधियाना के श्री लाजपतराय एम० एल० ए० को मुक्त करते हुए हाईकोर्ट ने कहा "नजरबन्द के विरुद्ध अभियोग लगाने मे नजरबन्द करने वाले अधिकारियों ने अपने मस्तिष्कों को बुद्धिमत्ता पूर्ण ढग से प्रेरित करने का परिचय नहीं दिया है। यत उन्होंने ऐसा नहीं किया है अत यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने ईमानदारी के साथ कानून का परिपालन किया है ।

इस केस मे एक भी ऐसा प्रबल आधार प्राप्त नहीं हो सका जिसे मैं बाहरी बनावट से शून्य कह सकू । इस केस मे में देखता हूँ कि युक्तिया और आधार दोनों ही अनिश्चित हैं और कानून के उद्देश्य के अन्तर्गत नहीं आते"। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इन सब मामलों मे नजरबन्द मुक्त कर दिए गए । इस प्रकार के अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं परन्तु जिस बात का मै विशेष रूप से उल्लेख करना चाहता हूँ वह यह है कि पजाब गवर्नमेन्ट ने निवारक अधिनियम के अन्तर्गत लगभग १५० व्यक्तियों को जेल मे डाला और उनमें से ७० प्रतिशत से अधिक अर्थात् लगभग ८० नजरबद मुक्त कर दिए गए । इससे स्पष्ट है कि पजाब राज्य सरकार ने राज्य की सुरक्षा अथवा सार्वजनिक शान्ति की व्यवस्था के नाम पर अनर्गल आधारो पर लोगो को नजरबद करने के लिए निवारक अधिनियम को सुगम हथियार बनाया । इस कानून के दुरुपयोग का इससे बढ कर और क्या प्रमाण हो सकता है ? अन्य नजरबदों के अभियोग अदालतों मे विचाराधीन है । इस समय तक एक भी अभियोग सच्चा सिद्ध नहीं हो सका है। एडवाइजरी बोर्ड द्वारा विचार किये जाने की व्यवस्था से निर्दोष नजरबद की परेशानी के कम होने मे सहायता नहीं मिलती क्योकि उसकी रिहाई मे २ से लेकर ३ महीने तक लग जाते है । उस समय तक सरकारी उद्देश्य पूरा हो जाता है । लोकसभा मे इस कानून पर जब कभी बहस हुई तो सम्बद्ध मन्त्री ने लोकसभा के सदस्यों को कुछ न कुछ आश्वासन दिए । इन आश्वासनाकी उपर्युक्त उदाहरणोंके साथ तुलना करलीजिए । लोक सभा और राज्य सभा के सदस्यों द्वारा प्रबल विरोध किए जाने पर भी दिसम्बर ५४ मे इस ऐक्ट की अवधि ३ वर्ष के लिए बढा दी गई थी । तत्कालीन गृह मत्री श्रीयुत डा० काटजू को विरोधी दल के सदस्यों की तीव्र आलोचना का सामना करना पडा था । बहस के समय गृह मन्त्री महोदय ने आश्वासन दिया था कि देश के किसी राजनैतिक दल का दमन करने के लिए इस ऐक्ट की धाराओं का प्रयोग न किया जायगा । उन्होंने बलपूर्वक यह कहा था कि इस ऐक्ट के अन्तर्गत राजनैतिक मतभेद को नजरबन्दी का आधार न बनाया जायगा । गृह मन्त्री ने आलोचकों को चुनौती दी थी कि उन्हें इस ऐक्ट के दुरुपयोग का कोई एक भी उदाहरण बताया जाय। सभवत श्री राजगोपालाचार्य ने अपने समय में बिल पेश करते हुए माननीय सदस्यों तथा प्रजा को यह आश्वासन दिया था कि यदि कोई अधि

पंजाब की भाषा समस्या और शासन

(श्री वीरसेन वेदश्रमी)

पजाब मे भाषा स्वातन्त्र्य आदोलन को चलते हुए यह सातवा मास है। जनता मे इसके प्रति पूर्ण उत्साह और उमग है। वह इसको सफल देखना चाहती है। परन्तु इस कार्य मे राजदुराग्रह, अन्याय तथा पक्षपात की भारी चटटान खडी हुई है जिससे सफलता मे विलम्ब होता जा रहा है।

इस आदोलन के प्रति जनता मे कतिपय भ्रातिया हैं और भ्रातियों का प्रचार पजाब सरकार एव काग्रेस के नेता भी कर रहे हैं। उनमे से एक बडी भारी भ्राति यह है कि—'हिन्दी भाषा वाले बलात् हिन्दी को अन्य प्रान्तो पर लादना चाहते हैं।'

परन्तु वास्तविकता यह है कि पजाब की ७० प्रतिशत हिन्दी भाषा भाषी जनता से हिंदी छीनी जा रही है और उस पर गुरुमुखी लिपि मे पजाबी जबरदस्ती लादी जा रही है। इसी जबरदस्ती को मिटाने के लिए यह सत्याग्रह है। यह सत्याग्रह इसलिए नहीं है कि जो पजाब मे हिंदी नहीं पढना चाहते है उन्हें बलपूर्वक या डण्डे के बल से अथवा धूर्त्तता, छल, प्रपच से हिंदी पढाई जावे अपितु जो हिंदी पढना चाहते हैं उन्हें हिंदी पढने दी जावे और जो गुरुमुखी लिपि मे पजाबी पढना चाहते हैं वे भी उसको प्रसन्नता से पढे ।

परन्तु पजाब की साम्प्रदायिक सरकार डके की चोट कह रही है कि तुम्हें गुरुमुखी लिपि मे पजाबी ही पढनी होगी। डडे के जोर से पढनी होगी और साम्प्रदायिक गुण्डागर्दी के बल पर पढनी होगी। यदि नहीं पढोगे तो जेलों मे तुम्हें ठूसा जावेगा। वहा लाठियों के प्रहार तुम्हारे प्राणों के ग्राहक के रूप मे तैयार बैठे हैं, अन्यथा जमुना पार भाग जाओ।

इस प्रकार की मनोवृत्ति शासन की और उसके द्वारा परिपालित साम्प्रदायिकता की है। ऐसी मनोवृत्ति को तो राष्ट्रीय कहा जा रहा है। उस पर केन्द्र तथा काग्रेस की मुहर लगा दी गई है। इस अन्याय, अत्याचार एव साम्प्रदायिकता के विरुद्ध जो सत्याग्रह किया जा रहा है उसे वहा की सरकार काग्रेस तथा काग्रेस के कतिपय नेता अनुचित, अवाछनीय, साम्प्रदायिक तथा देश के लिए अहितकर कह रहे हैं। यह कैसी राष्ट्रीयता? कैसी देश भक्ति? इससे भी बढकर धोखेबाजी तथा असत्य और क्या हो सकता है?

अन्याय और अत्याचार जिस जनता पर हो और यदि वह चीखे तो शासन कहता है कि कानून भग हो गया, अशाति फैल गई। पुलिस डडे ले कर दौडती है, अश्रु गैस छोडती है, डण्डे और ठोकरे मारती है, घसीटती और पीटती है। रक्त

कारी इस कानून मे दिए हुए अधिकारो का दुरुपयोग करेगा तो उसके विरुद्ध कार्यवाही की जायगी। देखना यह है कि शासन अपने मन्त्रियों के दिए हुए पवित्र आश्वासनों का कहा तक सम्मान करता है। मैं सर्व सामान्य जनता और मुख्यतया विधायकोंसे प्रार्थना करता हू कि वे ससार के सबसे बडे प्रजासत्तात्मक देश (भारत) के नागरिकों की वैयक्तिक स्वतन्त्रता के लिए पजाब में इस ऐक्ट का जिस प्रकार प्रचलन हुआ है उसके सम्बन्ध में अदालती जाच कराए ।

रञ्जित कर देती है। वह निरपराधियों पर भी अत्याचार करती है। गाव के गाव नादिरशाही आतक के शिकार हो जाते हैं। पुलिस द्वारा हत्या किए जानेपर भी उसके सम्बन्धियों को कफन भी नहीं डालने दिया जाता और अन्तिम क्रिया भी बिना किसी को सूचना दिये चुपचाप कर डालने को बाध्य किया जाता है। क्या ऐसा कलकित शासन सुशासन कहलाने योग्य है?

स्वतन्त्र भारत के नागरिक होने के नाते और पजाब मे बहुमत हिन्दी भाषा भाषी जनों का होने के नाते पजाब की राज्य भाषा हिन्दी ही होनी चाहिए, इसको कभी भुलाया नहीं जा सकता। तथापि वहा के अल्प सख्यकों की परितुष्टि के लिये हिन्दी और गुरुमुखी दोनों भाषा व लिपियों को समान स्थान देने की माग कितनी उदार, राष्ट्रहित-कारी तथा परस्पर प्रेम वर्धक है यह तो सभी सरलता से समझ सकते हैं।

आज पजाब की हिन्दी प्रेमी जनता से उनकी विश्व की सर्वा ग पूर्ण वैज्ञानिक लिपि एव भाषा को छीन कर उन्हें अविकसित, व्याकरण एव साहित्य से शून्य गुरुमुखी लिपि में पजाबी पढने को बाध्य किया जा रहा है जिससे उनके उच्चारण का व भाषा का स्तर गिरेगा ही नही अपितु उन्हें अन्य भाषाओं के सीखने व उच्चारण करने मे भी दोष उत्पन्न होंगे। जो उनके सम्पूर्ण जीवन मे शिक्षा के क्षेत्र मे पीछे ढकेलने वाला ही होगा। अर्थात् ऐसी भाषा व लिपि को सीखकर उनकी शिक्षा का स्तर सदा के लिये ऐसा गिर जावेगा जिसका उद्धार इस जन्म मे न हो सकेगा। आज जब सब प्रगति पर हैं तब पजाब प्रान्त के लिये ऐसा विपरीत निर्णय ५०० वर्ष पीछे ढकेलने वाला प्रमाणित होगा।

गुरुमुखी लिपि का तात्पर्य यह है कि जो सिखों के गुरुओं द्वारा प्रचलित की गई लिपि। इसमे शब्दों को शुद्ध रूप में नहीं लिखा जा सकता है। और न ही उनको उस माध्यम से शुद्ध बोला भी जा सकता है। आज बात बात मे नेताओं द्वारा यह कह दिया जाता है कि जब आज ससार शिक्षा एव विज्ञान की दौड मे उपग्रहों पर पहुचने को है, उस समय हिन्दी आन्दोलन की बात करना ठीक नहीं है।

ऐसे दूरदर्शी नेताओं से मैं पूछना चाहता हू कि क्या ऐसे समय मे अपनी एक वैज्ञानिक लिपि को छोडकर ऐसी अवैज्ञानिक, असस्कृत लिपि को अपनाना ही नहीं अपितु जनता की मनोभावना के विरुद्ध उन पर बलात् लादना कहा तक न्याय, मनोवैज्ञानिक एव शिक्षा के वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आश्रित है।

राजनीति का प्रत्येक क्षेत्र मे हस्तक्षेप अनिष्ट कारक होता है। जब धार्मिक क्षेत्र मे राजनीति का प्रवेश हो जाता है तो वहा मक्कारी बढ जाती है। जब न्याय के क्षेत्र मे राजनीति का प्रवेश हो जाता है तो न्याय की वहा आशा नहीं। जब शिक्षा मे राजनैतिक हस्तक्षेप हो जाता है तो वहा प्रजा का परिपालन नहीं, अपितु वहा पक्षपात, अन्याय एव अत्याचार प्रारम्भ हो जाते हैं।

आज हमे पजाब की अनैतिक राजनीति का अनुचित हस्तक्षेप प्राय सभी विभागों मे दृष्टिगोचर हो रहा है जो शासन की बुद्धि का सर्वनाश अथवा दिवालियेपन को प्रकट कर रहा है।

आज हिन्दी को प्रेस एव टेलीप्रिंटर पर भी अनुकूल करने के लिए हमारी सरकार अनेक परिवर्तन उसमे कर रही है। परन्तु यदि गुरुमुखी को वैज्ञानिक एव शुद्ध करने के लिए प्रयत्न किये जावें तो वह देवनागरी लिपि ही बन जावेगी। फिर वह गुरुमुखी न रहेगी। परन्तु गुरुमुखी में परिवर्तन करना या उसमें सुधार करना साम्प्रदायिकता को कभी स्वीकार न होगा। वे उसमें रोडा बनकर आगे अड जावेंगे। तब 'पन्थ खतरे में है' का बिगुल

बजने लगेगा और पन्थ पर काल नाचता दृष्टि गोचर होगा।

जिस लिपि एव भाषा की यह स्थिति हो उसे प्रान्त की शिक्षा या शासन की भाषा मान्य करना कहा तक न्याय एव सगत होगा। ऐसी लिपि या भाषा को जो पढना चाहें वे उसे सहर्ष पढें, प्रेम व श्रद्धा से पढें, क्योंकि वह उनके लिये श्रद्धा एव आदर की भाषा तथा लिपि है। परन्तु शासन मे उसको उसी श्रद्धा या साम्प्रदायिक आधार पर स्थान देना पजाब की जनता के शिक्षा की विकास मे महान अनर्थकारी ही प्रमाणित होगा।

आज हमारी राष्ट्रभाषा मे अनेक वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दों का निर्माण हो रहा है, उसका आधार सस्कृत ही है। सस्कृत से ही राष्ट्रभाषा की तथा अन्य भाषाओं की समृद्धि है। जिस लिपि मे सस्कृतजन्य शब्द शुद्ध लिखे ही नहीं जा सकते और न उच्चारित किये जा सकने वह शिक्षा के लिये उपयोगी कैसे हो सकती है उसे बलात् जनता पर लादना राष्ट्रभाषा की शुद्धता के लिये भी महान घातक है।

आज गुरुमुखी लिपि में पजाबी की अनिवार्य पढाई के निर्णय मे यदि कुछ भी परिवर्तन गवर्नमेट ने किया पजाब मे दगे होने प्रारम्भ हो जायेंगे और सिख देश भर मे आन्दोलन प्रारम्भ कर देगे। ऐसी धमकी भरी भाषा का जो स्थान २ पर प्रयोग करके हिंसात्मक कार्यवाही के लिये उत्तेजित किया जा रहा है उसको रोकने के लिये न तो पजाबशासन ने, न केन्द्रिय शासन ने और न काग्रेस के नेताओं ने ही कुछ किया। न ऐसे नेताओं को नजरबन्द ही किया गया और न ऐसी भाषाओं की निन्दा ही की गई। प्रत्युत शान्त और अहिंसक सत्याग्रहियों पर शाति भग करने का आरोप पजाब के शासन ने तथा काग्रेस के कर्णधारों ने किया यह कितने लज्जा की बात है और शासन की साम्प्रदायिक तथा पक्षपात पूर्ण नीति का परिचायक है।

इसप्रकार स्वय पजाब का शासन और काग्रेस के कतिपय कर्णधार नेता अप्रत्यक्ष रूप से साम्प्रदायिक दगे कराने की प्रवृत्ति को एक वर्ग मे प्रोत्साहन देरहे हैं। इतनाही नहीं अपितु पजाबके साप्रदायिक शासन ने तो अब हिन्दी समर्थकों के हथियारों के लायसेन्स भी जब्त करने प्रारम्भ कर दिये हैं। अर्थात् वह एक प्रकार से इनको आत्मरक्षा हीन कर रही है। जिस प्रकार से कि पाकिस्तान मे हिन्दुओं को असहाय कर देने के लिए उनके हथियार छीन लिये गये थे और फिर शासन के गुण्डों ने उनको मारा एव लूटा। यही नीति आज पजाब गवर्नमेन्ट की हिन्दी समर्थकों के प्रति हो रही है।

पजाब गवर्नमेंट के इन दुष्कार्यों का क्या प्रभाव जनता पर तथा अन्य प्रांतों पर पड़ेगा और केन्द्र का पजाब सरकार को प्रोत्साहन तथा काग्रेस के कर्णधारों का पजाब की नीति का पूर्ण समर्थन अन्य प्रातों पर क्या प्रभाव डालेगा यह भी उन्होंने नहीं सोचा है। पजाब हिन्दी रक्षा आदोलन के कारण शासन का अन्याय, पक्षपात और साम्प्रदायिक पाप भारत की जनता के सामने प्रकट होता जा रहा है। उससे बचने के लिए इस आदोलन की निन्दा का अस्त्र जो अङ्गीकार किया है वह और भी उनके पापाचार को प्रकट कर रहा है।

जब हिन्दी के लिए पजाब मे यह आदोलन हिन्दी से ही प्रतिबन्ध हटाने के लिए है तो उसके लिए यह कहना कि इससे दूसरे प्रातों पर हिन्दी प्रचार मे बाधा पड़ेगी, यह एक महान् धोखा है तथा भ्रात धारणा फैलाना है एव जान बूझकर जनता मे असत्य का प्रचार करना है।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा चलाया गया यह भाषा स्वातन्त्र्य आदोलन पजाब के हिन्दू और सिखों के लिए एक महान् वरदान है। परन्तु कुछ सिख नेताओं के स्वार्थ से सिख जनता इस आदोलन के सर्वहितकारी पक्ष को समझने से वचित हो रही है। वे उनका गलत नेतृत्व करन

वाले तथा साम्प्रदायिक मनोवृत्ति के कारण उसका लाभ लेने से वंचित हो रहे है।

जो सिक्ख भाई गुरुमुखी लिपि को भी व्यापक बनाना चाहते हैं और इसका प्रचलन॰ चाहते है उनको तो इस आदोलन में सम्मिलित होकर सफलता के लिए पूरी शक्ति से प्रयत्न करना चाहिए। क्योकि भाषा स्वातन्त्र्य आदोलन के द्वारा समिति ने एकपक्षीय माग प्रस्तुत नहीं की है। इस आदोलन की सफलता से वे सारे पजाबमे गुरुमुखीलिपि मे भी अध्ययन के पात्र हो जाते हैं। उनको यह महति सम्प्राप्ति भाषा स्वातन्त्र्य आदोलनकी माग की सफलता से ही प्राप्त होती है। अत जो साम्प्रदायिक सिक्ख हैं उनको भी भाषा स्वातन्त्र्य समिति के झण्डे के नीचे आ जाना चाहिए। अर्थात् उन्हे जो कुछ मा० तारासिह के नेतृत्व के पीछे चलने से प्राप्त हो रहा है उससे कहीं अधिक इस आदोलन का साथ देने से प्राप्त हो जावेगा।

जो असाम्प्रदायिक सिक्ख है और गुरुमुखी की अनिवार्यता से अपनी जीवनोन्नति एव शैक्षणिक उन्नति मे बाधा अनुभव करते हैं उनका भी इस आदोलन मे भाग लेकर सफल बनाने मे कल्याण है। अर्थात् प्रत्येक का इसमे लाभ है।

ऐसे सर्वहितकारी आदोलन को यदि किसी स्वार्थी राजनैतिक धूर्तताओं के कारण साम्प्रदायिक कह कर बदनाम किये जाने का प्रयत्न किया जावे और शासन का व्यय इस असत्य प्रचार मे किया जावे तो ऐसे व्यक्तियों को शासन के पद एव धन के दुरुपयोग के कारण दण्डनीय घोषित किया जाना चाहिए।

भाषा स्वातन्त्र्य आदोलन की न्यायपूर्ण सर्वहितकारी मार्गों को स्वीकार न करना प्रकट करता है कि पजाब सरकार, केन्द्रीय शासन एवम् कांग्रेस असत्य एवम् दुराग्रह के मार्ग पर अग्रसर है और परिणामस्वरूप पजाब सरकार जिस अनीति एवम् कुमार्ग पर चल रही है उससे पजाब का शासन भारत मे बदनाम हो रहा है और उसके प्रति केन्द्र तथा कांग्रेस का समर्थन होने से जनता मे कांग्रेस की प्रतिष्ठा को धक्का लग रहा है।

आज इस आदोलन को विफल करने के लिए जितनी शक्ति एवम् धन शासन द्वारा प्रत्यक्ष एवम् अप्रत्यक्ष रूप से लगाया जा रहा है इसका यदि सदुपयोग किया जाता तो राष्ट्र निर्माण मे एक आदर्श उपस्थित हो सकता था। हजारों गुप्तचर इस आदोलन के लिए सरकार ने लगा रखे है और हजारों की सख्या मे पुलिस इसके लिए नियुक्त कर रखी है। यदि इतने गुप्तचर शासन मे कार्य करने वाले व्यक्तियों के भ्रष्टाचार का पता लगाने के लिए नियुक्त कर दिए जाते तो पजाब से भ्रष्टाचार का अन्त हो जाता। यदि इतने सिपाहियों को अन्याय, अत्याचार, दुराचार आदि को रोकने के लिए नियत कर दिया जाता तो पजाब मे रामराज्य स्थापित हो जाता।

परन्तु शासन मे भ्रष्टाचार को रोकने के लिए गुप्तचरों का जाल बिछाना उचित न समझा। पुलिस को अन्याय, अत्याचार, दुराचार व कुकर्मों को रोकनेके लिए नियुक्त नहीं किया, अपितु उसने शात अहिंसक सत्याग्रहियो की न्यायोचित मार्गों को कुचलने के लिए गुप्तचर और पुलिस तैनात की और जनता का रुपया बहाया। यह कितने लज्जा की बात है। अत जरा सोचें कि क्या हम राम राज्य की ओर अग्रसर हो रहे है या रावण राज्य की ओर?

आज न्याय विभाग बलात्कार के अभियुक्तों, हत्या के अभियुक्तों तथा ऐसे ही अन्य जघन्य अपराध के अभियुक्तों को जरा से सन्देह का लाभ उठाकर नि सकोच छोड सकता है। इससे ऐसे अपराध नि सकोच करने की प्रवृत्ति जनता मे बढती है। परन्तु उस न्याय विभाग को यह साहस नहीं होता कि वह डके की चोट कह सके कि सत्याग्रही अपनी न्यायोचित मार्गों को मनवाने आए

राष्ट्र-निर्माता दयानन्द

(लेखक —श्री बाबू पूर्णचन्द्र, एडवोकेट आगरा)

दयानन्द, आदर्श राष्ट्र निर्माता थे। उन्होंने राष्ट्र निर्माण की आधार शिला उस समय रक्खी जब भारत मे कोई राष्ट्र निर्माण की चर्चा भी न थी और राष्ट्र निर्माण का एक आवश्यक अग सारे राष्ट्र की एक भाषा को राष्ट्र भाषा होना आवश्यक समझा और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये हिन्दी को राष्ट्र भाषा का स्थान दिया। महर्षि दयानन्द की मातृ भाषा गुजराती थी और वह सस्कृत के धुरन्धर विद्वान् थे फिर भी उन्होंने हिन्दी मे ही अपनी मुख्य मुख्य पुस्तकों का निर्माण किया। ऋषि दयानन्द का अनुमोदन महात्मा गाधी ने किया और उन्होंने अपने प्रचार मे हिन्दी को विशेष स्थान दिया और ऋषि दयानन्द का प्रस्ताव और महात्मा गाधी का अनुमोदन विधान मे सर्व सम्मति से स्वीकार हुआ और हिन्दी को सारे राष्ट्र की भाषा घोषित किया गया। इस घोषणा का अभिप्राय यह समझना चाहिये कि सारे भारत मे हिन्दी को सारे देश की भाषा मानने वाले सब नागरिक होंगे और वे

यह है उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। यह कोई अपराध नहीं है। अपराध तो शासन कर रहा है और उसकी पुलिस कर रही है जो इन निर्दोषा को पकडकर झूठे मुकदमे चला रही है। अत यह शासन एवम् पुलिस दण्डनीय है। परन्तु न्याय विभाग की आखें नहीं। उसमे वाणी नहीं और साहस नही कि वह स्वय निष्पक्ष जाच कर सके और निर्णय दे सके। उसे तो पुलिस के बनाये हुए केसों के अनुसार देखना, सुनना और कहना आता है। वे ही उनकी आखें है और वही उनके कान है। वे ही उनके मस्तिष्क और हृदय है। अत इसे न्याय कैसे कहा जावे ?

जिस राज्य मे अन्याय और पाप होता हो उस का दोष शासन पर होता है और वह पाप का भागी होता है। अत पजाब का शासन और उस के पृष्ठपोषक नेता महान पाप के भागी हैं इसमे सन्देह नहीं

पुलिस के क्रूर कर्म एवम् निन्दनीय कर्मों की प्रेरणा देने वाला शासन अपने से विरोधी विचार धारा के व्यक्तियों के साथ कैसे पेश आता है यह तो बहुअकबरपुर काड, लुधियाना काड तथा आदोलन मे भाग लेने वाले और उससे सहानुभूति रखने वालों के प्रति जो व्यवहार सरकार ने किया है उससे विदित ही है।

ब्रिटिश गवर्नमेंट ने भी ऐसे घृणित एवम् निन्दनीय व्यवहार उसके राज्य को उखाड देने वालो के प्रति भी नहीं किये जो आज पजाब गवर्नमेंट बडे गर्व से काग्रेस व केन्द्र के समर्थन से कर रही है। कोई अत्याचारी शासन कुछ काल तक अपने दमन से टिक सकता है। परन्तु वह जितना ही दमन और विवेकहीन व्यवहार करता जाता है उसके प्रति उतना ही आतरिक विद्रोह की भूमि बनती जाती है और अन्त मे उसका पतन किसी भयकर क्राति को जन्म देकर ही हो जाता है।

आज हिन्दी के आदोलन से पजाब के शासन के प्रति ही केवल नहीं अपितु समस्त काग्रेस के प्रति घृणा की भूमि तैयार होती जा रही है और न मालूम वह मूक क्राति के रूप मे कब इस निरकुश शासन और इसके पृष्ठपोषकों के पापों का अन्त करने का कारण बन जाय।

अपनी क्षेत्रीय भाषाओं के साथ २ हिंदी का प्रचार विस्तार और प्रयोग करेंगे। भारत के कुछ भाग ऐसे है जिनमे राष्ट्रभाषा और क्षेत्रीय भाषा दोनों एक हैं जैसे उत्तर प्रदेश और बिहार। इसी प्रकार पजाब के भी कुछ भाग ऐसे हैं जहा के नागरिक हिन्दी को ही अपनी क्षेत्रीय और राष्ट्रीय भाषा मानते है और प्रयोग मे लाते हैं। वह बोल चाल मे पजाबी का प्रयोग करते है। पजाब में जो आन्दोलन हिन्दी के समर्थन मे चल रहा है उसका स्वागत सबसे पहले राष्ट्र के सचालकों को करना चाहिए था। क्योंकि यह आन्दोलन हर प्रकार से राष्ट्रीय विधान के अनुकूल है। परन्तु राष्ट्र के सचालकों ने भाषा के सम्बन्ध मे विधान के प्रतिकूल गलत नीति को अपनाया है। भाषा के प्रश्न को कर्तव्य की दृष्टि से न देखकर भाषा को अधिकार का आधार मान लिया और भिन्न २ भाषाओं के आधार पर प्रान्तों के निर्माण की विधि को स्वीकार किया और इसी गलत नीति के प्रसग मे पजाब मे गुरुमुखी को प्रमुख स्थान पजाबी क्षेत्र मे देना स्वीकार कर लिया और इस आधार पर सिक्खों से एक प्रकार का समझौता कर लिया। जब इस भूल की ओर पजाब के आर्यसमाजियों और हिन्दुओं ने केन्द्रीय सरकार और पजाब की प्रान्तीय सरकार का ध्यान आकर्षित किया तो इस भूल का सुधार न करके वह अब यह चाहते हैं कि हिन्दी के पोषक अपने आन्दोलन को वापिस लेले और जब उनको अपनी भूल ध्यान में आती है और उसके निराकरण का कोई सरल मार्ग दिखाई नहीं देता तो हमारे प्रधान मन्त्री क्रोध मे आकर क्रोध का प्रदर्शन अपने शब्दों मे करने लगते हैं। जो समझौता सिक्खों से किया गया वह सर्वथा स्वीकृत विधान के प्रतिकूल था परन्तु अब कुछ सिक्ख भाईयों का आग्रह इस बात पर है कि जो समझौता हो गया है उसमे परिवर्तन न किया जाये और इसके ही कारण आन्दोलन के समाधान मे कठिनाई हो रही है। मेरी दृष्टि मे अधिक आवश्यक यह है कि केन्द्रीय सरकार के मन्त्री और विशेषकर प्रधान मन्त्री जी को अपनी भाषा की नीति पर गम्भीरता से विचार करना चाहिये। वह इस बात पर विचार करें कि यदि भाषा को अधिकार का आधार माना गया और इसमे परिवर्तन न हुआ तो देश मे प्रचलित भाषाओं के कारण और भी अधिक फूटफैल जायेगी और राष्ट्र निर्माण के कार्य मे बाधा पडेगी।

राष्ट्र के सचालकों को अपनी भूल सुधार करने में सकोच नहीं होना चाहिये। यदि वह अपनी गलत बात को भी चलाने में आग्रह करते रहेंगे तो उलझन बढती ही जावेगी और देश में शान्ति और एकता के स्थान में अशान्ति और अनेकता का विस्तार होगा। देश पर दैविक आपत्तिया आ रही हैं और अनेक समस्यायें देश के सामने हैं उनका समाधान भी बडा कठिन है। यदि राष्ट्र के सब नागरिक अपने भेदभावों के भुलाकर राष्ट्र निर्माण मे और राष्ट्र के सकटों के निराकरण मे लग जाये तो कार्य सुगमता से सफल हो सकता है। अब तो सबसे अधिक कठिनाई यह है कि कठिनाईयों का निराकरण न हो कर आपस मे मत भेद के कारण कठिनाईया बढ रही हैं और दुख और क्लेश बढते जा रहे हैं। देश का जितना गौरव देश के बाहर बढाने का यत्न किया जा रहा है उतना ही देश का गौरव आन्तरिक दशा के कारण घटता जा रहा है। भाषा स्वातन्त्रता सम्बन्धी आन्दोलन के सम्बन्ध मे सब से अधिक सुगम समझौते का मार्ग यह है कि केन्द्रीय सरकार अपनी भूल को स्वीकार करे और पजाब की सरकार को बाध्य करें कि वह विधान के अनुकूल ही कार्य करेगी अपने प्रान्त में किसी को भी भाषा की स्वतन्त्रता में बाधक न होगी और जो विधान के अनुकूल भाषा के प्रश्न को समाधान करना चाहे उनको विधान के अनुसार पूरी स्वतन्त्रता मिलती रहनी चाहिये। आर्यसमाज का यह आदोलन सत्य के आधार पर है और विधान के अनुकूल है इसमे सफलता होना आवश्यक है। केवल समय और अनुकूल परिस्थिति का प्रश्न है।

हिन्दी रक्षा सत्याग्रह और दक्षिण भारत

[श्री लाला हरदेव सहाय जी]

दक्षिण भारत के लोगों के हिन्दी विरोध का जिकर बार बार आता है। पंजाब के भाषा स्वतन्त्रता आन्दोलन या हिन्दी रक्षा आन्दोलन के विरुद्ध जिम्मेवार लोगो ने भी दक्षिण के हिन्दी विरोध के उदाहरण दिये। पर स्थिति और तथ्यो को दृष्टि मे रखते हुये दक्षिण भारत के सब लोगों को हिन्दी का विरोधी बताना उचित नहीं। राष्ट्र भाषा बनने से वर्षों पहिले दक्षिण की हिन्दी प्रचार सभा जिसका केन्द्रिय कार्यालय मद्रास नगर मे है, के प्रचार से लाखों लोगों ने हिन्दी पढी, परीक्षायें दी। इससे यह सिद्ध होता है कि यदि दक्षिण भारत के लोग हिन्दी के विरोधी होते तो वह राष्ट्र भाषा न बनने पर भी हिन्दी क्यो पढते? आज भी दक्षिण भारत के बम्बई, आन्ध्र, कनार्टक तथा केरल में बड़ी तीव्र गति से हिन्दी का प्रचार बढ रहा है। यह ठीक है कि राष्ट्र भाषा बनने से पहले जिस मद्रास के तामिल भाषी लोग स्वय हिन्दी पढते रहे हैं, आज उनकी एक बड़ी संख्या हिन्दी को शीघ्र राष्ट्र भाषा बनाने की विरोधी है। इसके दो मुख्य कारण हैं। तामिल भाषी लोग अंग्रेजी की कुछ अधिक योग्यता रखते हैं। उन्हें यह खतरा है कि यदि अंग्रेजी का महत्व नहीं रहा तो उन्हें आज देश में जो विशेष स्थान मिला हुआ है वह नहीं रहेगा। द्वितीय भारत की सब भाषायें सस्कृत से निकली हैं, उनकी लिपि भी बहुत कुछ देवनागरी से मिलती है पर मद्रास के लोग यह मानते है कि तामिल संस्कृत से भी प्राचीन है। यदि हिन्दी को महत्व मिला तो सम्भव है तामिल का महत्व कम हो जाय।

अंग्रेजी का दक्षिण भारत की भाषाओं से कोई सम्बन्ध नहीं, वहा की भाषाओं मे ३० से ८० प्रतिशतक संस्कृत के शब्द है। श्री डाक्टर चटर्जी जो आज हिन्दी के सबसे बड़े विरोधी है उन्होंने भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी पुस्तक के पृष्ठ १६१ पर लिखा है, "द्राविड़ भाषी दक्षिण मे भी सबसे अधिक समझी जानेवाली भाषा हिन्दी ही है। खास कर बडे शहरो और तीर्थ स्थानों पर।" हिन्दी दक्षिण भारत के लिये इतनी विदेशी नहीं जितनी अंग्रेजी है। दक्षिण भारत के नाम से राष्ट्र भाषा की उन्नति मे बाधा डालना उचित नहीं। दक्षिण भारत की भाषाओं के विकास के साथ साथ राष्ट्र भाषा को महत्व दिया जाय तो दक्षिण भारत के समझदार लोगों को कोई आपत्ति नहीं होगी और न होनी चाहिये। जब विधान मे राष्ट्र भाषा हिन्दुस्तानी नहीं, हिन्दी और देवनागरी लिपि बनाने का प्रश्न आया तो हिन्दुस्तानी और फारसी लिपि के समर्थक अदूरदर्शी लोगो ने दक्षिण भारत की जनता मे सन्देह उत्पन्न करने की कोशिश की। जब राष्ट्र भाषा के साथ साथ प्रादेशिक भाषा के विकास पर भी ध्यान देने का निश्चय किया गया है तब दक्षिण भारत के लोगों का यह सन्देह दूर हो जाना चाहिये।

श्री राजगोपालाचार्य जी देश के प्रतिष्ठित राजनीतिज्ञ है। उन्होंने हिन्दी का विरोध करके राष्ट्र को लाभ नहीं पहुंचाया। यही श्री राजगोपालाचार्य जब मद्रास के मुख्य मन्त्री थे तब आध्र के तैलगू भाषी लोगो से न्याय करते तो न आन्ध्र मद्रास से अलग होता और न ही भाषा के प्रश्न को लेकर देश में झगड़े चलते। पाकिस्तान का समर्थन करके भी राजाजी ने देश की अखंडता को नुक्सान

पंजाब में हिन्दी

(लेखक—श्री प्रभामित्र विद्या वारिधि)

जातीय सगठन और राष्ट्रीय एकता के लिए देश मे एक राष्ट्रभाषा का होना परमावश्यक है। सम्प्रति स्वतन्त्र भारत मे सविधान के अनुसार देवनागरी लिपि और खडी बोली को राष्ट्रभाषा के रूप मे स्वीकार कर लिया गया है। दक्षिण भारत मे लिपि और बोली दोनो दृष्टि से हिन्दी से अधिक भिन्नता पडती है। सम्भवत इसीलिए वे लोग हिन्दी का विरोध करते हैं और कुछ लोग और अधिक समय तक राष्ट्रभाषा के रूप मे हिन्दी को प्रतिष्ठित नहीं देखना चाहते। परन्तु दक्षिण प्रदेश भी हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप मे अपना रहा है, पजाबी का तो हिन्दी से विशेषकर खडी बोली से एक प्रकार का कौटुम्बिक सम्बन्ध है और यहा के अधिकाश भाग मे हिन्दी भाषा समझी जाती है, परन्तु भाषा स्वतन्त्रता के प्रेमी होते हुए भी भाषा स्वातन्त्र्य की महत्ता से अपरिचित से काग्रेस पार्टी के कतिपय सत्तारूढ शासकों की अदूरदर्शी नीति से पजाब की भाषा समस्या अत्यन्त जटिल हो गई और आज तक पंजाब में हिन्दी प्रचारकों की सेवा, साधना को सकट में डाल दिया गया है। अत पंजाब मे हिन्दी के प्रमुख प्रचारक आर्यसमाज के तत्वावधान मे हिन्दी रक्षा समिति स्थापित हुई।

अभी पत्रों मे दिनकर,नवी न और सेठ गोविद दास जी का वक्तव्य पढकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ जो दशा महाभारत मे द्रोपदी के चीरहरण के समय भीष्म द्रोण आदि मनीषियोकी हुई बताई गईहै युधिष्ठिर आदिभी किंकर्तव्यविमूढ थे,सम्प्रति वही दशा इन साहित्य सेवियों की पजाब मे हो रहे हिन्दी आंदोलन के प्रति है। सुप्रसिद्ध हिन्दी साहित्य के मनीषि दार्शनिक श्री गुलाबराय एम०ए० ने निबन्ध माला नामक एक लघु पुस्तक लिखी है जिसका एक निबन्ध पजाब मे हिन्दी प्रचार के साधन है। उसमे इस प्रश्न पर उनका विचार देखिए "पजाब मे हिन्दी की समस्या बडी जल्द हल हो सकती थी लेकिन एक नई बाधा हिन्दी के रास्ते मे आ खड़ी हुई—यह समस्या है हिंदी पजाबी या नागरी गुरुमुखी का झगड़ा। बहुत से सिख पजाब को पजाबी

पहुंचाया। साधारण नागरिकों की अपेक्षा बडे आदमियो की साधारण भूल और अदूरदर्शिता के कारण राष्ट्र का अधिक नुक्सान होता है।

द्राविड़ कषगम से सम्बन्ध रखने वाले लोग जो भारतीय विधान तथा गाधीजी के चित्रों का अपमान करते है यदि वह हिन्दी का भी विरोध करें तो आश्चर्य नही। यह विरोध हिन्दी नहीं भारतीयता का विरोध है जिसका कोई तथ्य नहीं। जो लोग आज दक्षिण भारत के प्रश्न को लेकर पंजाब के हिन्दी रक्षा आन्दोलन का विरोध तथा दक्षिण भारत के लोगों मे सन्देह उत्पन्न करने हैं वह निराधार है। हिन्दी रक्षा आन्दोलन से पूर्व प्रधान मन्त्री श्री नेहरू जी ने बार बार कहा कि भाषा के मामले में प्रेम और सद्भावना से काम लिया जाय और जबरदस्ती न हो। हिन्दी रक्षा या भाषा स्वातन्त्र्य समिति की मुख्य मांग भी किसी भी भाषा को पढ़ने के लिये बाध्य न करके स्वतंत्रता से जो गुरुमुखी या हिन्दी पढ़ना चाहें पढ़े यही है। यदि कांग्रेसी नेता अपने किये निर्णयों के प्रति इमानदार रहे तो उन्हें हिन्दी रक्षा आन्दोलन की सब मागें स्वीकार कर लेनी चाहिये।

और गुरुमुखी का प्रात बनाने को उत्सुक हैं लेकिन पजाब में आज भी बहुत सख्या ऐसे लोगों की है जिनकी भाषा हिंदी है, वे सिखों के ऐसे प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सकते। इसलिए बीच का एक रास्ता निकालने का प्रस्ताव रखा गया है और वह यह कि अमृतसर, जालन्धर आदि पजाबी प्रधान जिलों में गुरुमुखी और पजाबी शिक्षा का माध्यम हो और कुछ साल के बाद हिन्दी भी स्कूलों में अनिवार्य कर दी जाय।

इसके विपरीत हिसार, करनाल, रोहतक आदि हिन्दी प्रधान जिलों में शिक्षा का माध्यम हिन्दी हो और फिर गुरुमुखी भी अनिवार्य कर दी जाये। इस प्रकार दोनों भाषाए पजाब के लिए अनिवार्य हो जाए गी। लेकिन यह सन्तोषजनक हल नहीं है पजाब के बहुसख्यक हिंदी भाषियों पर यह पजाबी का अत्याचार है। शिक्षा का माध्यम चुनने के लिए हरएक विद्यार्थी को आजादी होनी चाहिए। छोटे बड़े सरकारी नौकरी के लिए दोनों भाषाओं का ज्ञान आवश्यक कर दिया जाय।"

यह विचार एक दार्शनिक और साहित्यिक के हैं। मुख्य बात यह है कि भाषा और साहित्य का नित्य सम्बन्ध है परन्तु जब भाषा को राजनीति का सौत बनाया जा रहा है, मैं पूछता हू कि यदि गुरुमुखी भाषा जिसमें एक ग्रन्थ साहब को छोडकर साहित्य का अभाव है सिख गुरुओं और नरेशों के काल मे भी जिसने प्रातीय भाषा का रूप प्रकट नहीं किया—जिसकी लिपि में उच्चारण सीखकर शुद्ध खडी बोली का उच्चारण बालक अशुद्ध ही करेगा। यदि उसे तुष्टीकरण की नीति से जो पजाब मे रूप दिया गया है, यदि उस नीति को सभी भाषा भाषी लोगों ने सगठित रूप से अपनाया तो राष्ट्रीय एकता छिन्न भिन्न हो जायगी और यादवों की तरह से लोग आपस मे लडकर मिट जायेंगे।

उदाहरण स्वरूप सस्कृत भाषा को लीजिए आज भी वह हिन्दू समाज मे धार्मिक भाषा है। साहित्य भी समृद्ध है और पूर्व काल मे राष्ट्रभाषा भी रह चुकी है। यदि उसके पोषक आज सगठित होकर एक सस्कृत भाषा भाषी प्रात बनाने की माग करें ४॥ करोड़ मुसलमान उर्दू या अरबी की अलग माग करें, इसी प्रकार भारत मे विभिन्न भाषाभाषी सविधान मे स्वीकृत भाषावार प्रातों की माग करे तो विशाल भारत के अङ्गभङ्ग मे जो कसर है वह भी सामने आ जाएगी।

अत राष्ट्रपति के इस विचार को मान लेना राष्ट्रीय एकता केलिए अत्यन्तआवश्यक है कि सभी प्रातीय भाषाओं की लिपि देवनागरी मान लीजिए शिक्षा का माध्यम मातृभाषा रहे, जिस प्रकार सस्कृत के राष्ट्रभाषा काल मे भो विभिन्न मागधी पश्चिमी प्राकृत भाषा आदि बोलिया थीं पर उनकी लिपि देवनागरी ही थी। इस प्रकार बोलियों का भेद रखते हुए भी सस्कृत की लिपि पुन सारे देश की भाषाओं की प्रतिष्ठित की जाय। इस प्रकार न केवल पजाब मे हिंदी विवाद समाप्त होगा, अपितु सारा देश राष्ट्रीय एकता मे आबद्ध होकर भविष्य मे सस्कृत ही राष्ट्रभाषा हो, इस आदर्श तक भी समृद्ध होकर पहुच जाएगा और उत्तर दक्षिण का विवाद भी शात हो जाएगा।

Language Problem of Punjab

[*By Dr. Dhirendra Verma*]

Bombay and the Punjab are the only two bilingual states of the Union which have not been allowed to form bilingual units as the result of states reorganisation because of certain special reasons in each case There is, however, no linguistic problem in Bombay State because no attempt has been made by the state or the Union Government to introduce Marathi in the Gujrati region as a compulsory language in the educational or administrative fields and vice versa.

In the Punjab, however, with the object of dissuading the Sikhs to agitate for a separate Punjabi-speaking state, the Union Government gave certain concessions in the form of special position of Gurmukhi-Punjabi language in both educational and administrative fields in Hindi as well as Punjabi regions. These concessions have been incorporated in what is generally known as the Sachar Formula It was approved on October 2, 1949 by Pandit Nehru and the late Sardar Patel at a conference with the then Punjab Chief Minister Shri Bhimsen Sachar, Dr Gopi Chand Bhargava, Finance Minister. Chaudhri Lahri Singh, Minister for Public Works, and Gyani Kartar Singh, M L A (Punjab) who represented the Sikh viewpoint No one, it appears, was invited at the conference to represent the Hindi viewpoint.

When the Sachar Formula began to be implemented, people belonging to the Hindi region of the Punjab as also the Hindus of the Punjabi region became conscious of its drawbacks both to them and their children. For a year and half they held general conferences, made represen tations and sent delegations to the various authorities to remove what they thought to be a great injustice. When, however there was no result of the constitufional methods adopted by them they resorted to Satyagraha.

The Satyagraha movement was started by the Arya Pratinidhi Sabha, Punjab and Arya pradeshik Sabha on May 30, 1957 and was later on taken up by the Sarvadeshik Sabha, which is an all India organisation of the Arya Samaj. The agitation was in the beginning started solely by the Arya Samaj which may be regarded as the spearhead of the vocal sections of the Hindus of the Punjab Later on it was allowed to take support from the lovers of Hindi. Non-Arya Samajists or those belonging to various political parties, such as Jan Sengh, Hindu Mahasabha and even the Congress.

Two Linguistic Regions

Here are a few facts which may be helpful in understanding the real position. As mentioned at the very start, the Punjab is a bilingual

state and consists of two distinct linguistic regions, viz Punjabi speaking and Hindi-speaking Out of the three administrative divisions of the Punjab, Jallundur and Pepsu are mainly Punjabi speaking areas. According to the census of 1951, the population of these two Punjabi speaking divisions is about 1 crore 6 lakhs, of which 51 lakhs are Sikhs and 53 lakhs are Hindus The Sikhs regard Gurmukhi Punjabi as their reglonal language in all the fields of life of the region But though the Hindus of the Punjabi region, speak Punjabi in their homes as a dialect, they are not willing to abopt it as the language of literature, education, administration or religion Because of the special efforts of Arya Samaj during the last 70 or 80 years, the Hindus of the Punjab changed over from Urdu to Hindi and in future they want to stick to the position, specially now when Hindi has been accepted as the official language of the Indian Union.

The Hindi region of the Punjab consists of Ambala division only It is popularly called Hariana The population of this region is about 52 lakhs of which 45 lakhs are Hindus and 4 lakhs are Sikhs The Hariana region or Ambala division of Punjab is really part of Delhi and Uttar Pradesh. It was in Uttar Pradesh of the then N W. Province up to 1857 but was included after 1857 in Punjab. If like Bengalis, Biharis or Telugus, the Hindi people were more conscious and alert linguistically they would have made a serious attempt to include this region in Uttar Pradesh, or would have seen that it were combined with Delhi and Himachal Pradesh to form another major unilingual Hindi speaking state Thus the total population of the present Punjab State is about 1 crore 58 lakhs, of which 93 lakhs are Hindus (including both Punjabi speaking and Hindi speaking) and 55 lakhs are Sikhs

From the linguistic point of view out of the total population of the Punjab, viz, 1 crore and 58 lakhs, 1 crore 6 lakhs are Punjabi speaking, including 53 lakhs Punjabi-Hindus who, as mentioned above do not want to accept Gurmukhi Punjabi as the official regional language, and about 45 lakhs are Hindi-speaking Hindus It may be pointed out in this connection that the exact figures about the distribution of population in the Punjab, from the point of view of languages spoken are not available The census report of 1951 says 'As a result of the controversy over the language question, the figures for Hindi, Urdu, Punjabi, Pahari and various dialects have been put together at the time of sorting under the head 'Hindi-Punjabi Urdu-Pahari. The rest of the languages have been shown as returned'

The 'Formulae'

A word now about the various formulae, which are three, viz, PEPSU Sadar and Regional. It may be made clear here that none of these formulae has been passed by Parliament or the Punjab Asse-

mbly They were accepted in certain conferences of the representatives of the Government and the representatives of Sikhs The 'Pepsu formula was made for 'Pepsu' when it was a separate state The formula is still in force in the area after its being merged into Punjab to form one of its three divisions. According to it Gur mukhi Punjabi has been made the sole medium of education in the division from the lowest to the highest classes It has also been made the only recognised language of administration up to the district level Hindi being given an optional place after the district level I presume that Hindi has not been made a compulsory second language in 'Pepsu' from 6th to 10th classes as in the remaining Punjabi speaking region of the Punjab, viz Jullundur division

The Sachar Formula is in force in the remaining two divisions of the Punjab, viz Jullundur and Ambala, 'Pepsu' division having been excluded from its operation It recognises that there are two spoken languages in the Punjab, viz, Punjabi and Hindi and further there are two scripts viz Gur mukhi and Devanagari According to this formula Punjabi shall be the regional language in the Punjabi speaking area, and Hindi shall be the regional language in the Hindi-speaking area The areas have been demarcated to be what is termed the Regional Formula, then it goes on to give parity to the two languages both in educational and administrative fields in the region of the other language It says that Hindi and Punjabi shall be the medium of instruction in Hinhi (Hariana division) and Punjadi (Jullundur division) regions respectively in all schools from Class I to X, but the other language, viz Hindi or Punjabi, has to be taught as a compulsory language from Class V to Class X ie for six years, and in the case of girls, however, in middle classes only

In cases where parents may desire that their children should get instruction in Punjabi or Hindi or vice versa, arrangements would be made for it in the primary stage, i. e from Classes I to V provided there are not less than 10 pupils in a class or 40 such pupils in the school to be instructed in it In the secondary stage also, i e, from Class VI to X, the medium for such pupils could be Punjabi or Hindi only if one third of the total number of pupils request for in that particular language As to the field of administration in the two regions English and Urdu will for the present continue as official and court languages in both the regions These will be replaced progressively by Hindi and Punjabi in the respective regions

Coming finally to the Regional Formula, it says that though there would be one legislature and one Governor in the Punjab, the state would be divided into two regions, viz Punjabi and Hindi for more convenient transaction of business with regard to some specified matters For each region there would be a Regional Committee of the

State Assembly, the legislation relating to specified matters being referred to the Regional Committees The formula gives a list of 14 specified subjects which will be handled by the Regional Committees and this includes primary and secondary education Further Punjab would be treated as a bilingual state and so the official language of each region up to the district level would be the respective language of the particular region

The Demands

The parity between Punjabi and Hindi is being resented by the Hindus of Punjab in general and Hindi speaking people of the state in particular They hold that when Hindi is the regional language in the Hindi region, the children of the region should not be forced to learn the language of the other region or vice versa The special place of Hindi in the Punjab region may be due to its being the official language of the Union and not because of its being a regional language

The main demands of the Bhasha Swatantrya Samiti are as follows

1 There should be one language formula in the whole state of new Punjab

2 The medium of instruction in the educational institutions should be left entirely to the choice of parents and

3 There should be no compulsion for the teaching of any of the two languages as a second language at any particular stage

As to the field of administration the demands are that—

1 Hindi should replace English at all levels of administration

2 All Governmental notifications at the district level or below should be bilingual

3. Applications be allowed to be submitted in any language and the reply should also be in the same language, and

4 Office records up to the district level and below should be in both the scripts

It appears that the publication of detailed news of the agitation has been banned, but two or three lines in small type which appear on an unimportant page at the end of a column in the English or Hindi dailies mentioning that 25 50 or 100 Satyagrahis were arrested at Chandigarh or elsewhere shows clearly that even after the imprisonment of more than 5 000 people during the last 4 or 5 months, the agitation has not died out It is therefore, not in the real interest of the country to close one's eyes to facts, but attempt should be made by the educated of a section of our countrymen against the decision of the representatives of the Punjab and the Union Governments

In case the Government representatives have unconsciously done any injustice to the Hindi speaking people of Punjab, the mistake should be rectified as early as possible (Leader, Allahabad)

❀ 10-11-57

* विविध वक्तव्य *

"Acharya Vinoba Bhave Not Against Arya Samaj Satyagraha In Punjab

There is an amount of misunder standing created regarding the Arya Samaj Movement for the liberty of languages in Punjab. Much of the doubt is born of ignorance But there appears to be quite a lot that cannot be classed as such but can only be willful

One such instance is regarding the views alleged to have been ex pressed by Acharya Vinoba Bhave in this matter It is remarkable that the news does noteminate from his office but from the A I C C office and the A I C C Secretary

The A I C C Office and its Secretary surely know that our movement is not for forcing Hindi and ousting Punjabi We have declared times out of number that we are against forcing any language against the wishes of the people anywhere We make no exception to Hindi It will ill serve the cause of Hindi if it is tried to be forced anywhere and more so in the south We want a friendly and voluntary approach to all languages That alone can avoid antogonism and conflict That way lies the progress and advancement not only of Hindi but all the great lan guages of Bharat The surest way to create repulsion is the use of force. In Punjab we are really fighting against compulsion and not against learning either Hindi or Punjabi

And still it is put in the mouth of Acharya Bhaveji —

> "How could people in the south be asked to learn Hindi compulsorily when Hindi speaking people in Punjab are not prepared to learn even Punjabi compulsorily "

And the inference drawn is that according to Acharya Vinoba Bhave the Arya Samaj movement in Punjab is doing harm to the cause of Hindi In the South

I am one of the many thousands who have highest regard for Bhaveji I, therefore, wrote a letter to him on 27th September, 1957 enclosing a cutting of the A I.C C Office News of the 26th September, 1957, in which it was said —

> "Acharya Vinoba Bhave has expressed strong disapproval of present Hindi

agitation in the Punjab and described it as futile'

The relevent part of his reply dated 24th October, 1957 is as follows —

'I do not wish to say anything about the propriety or impropriety of that (i e the Movement)'

In Hindi it reads as follows —

'US KAM KI YOGY AYOGYATA KE VISHAY MEN MAIN PARHNA NAHIN CHAHTA

Even though I had very good reasons to publish Acharya Bhave s letter to me I refrained from doing so as I like I rather to suffer in silence than drag his name in such controversies. I would not have done so even now if the Congress General Secretary had not again today published as news in the name of Acharya Vinoba Bhave

—G S Gupta

Six months of Hindi Satyagraha

Our Movement for liberty of languages in Punjab after completing full six months entered the seventh month a few days ago This fact alone is a complete and convincing answer to those, who were lured in claiming that the movement would fizzle out in a month or so

Over 8500 people including about 1000 ladies some of them with babies in arms have been imprisoned Besides this quite a large number were arrested but instead of lodging them in jail the Punjab Police used to leave them in distant jungles

As to fines, in Rohtak District alone fines agregating to about Rs 1 90,000/ have been imposed In recovering these fines even valuable agricultural cattle have not been spared

Our Satyagraha I can justly claim has been a model of non violent movement No mass movement of such magnitude in a Pradesh like Punjab has been so peaceful for such a length of time in spite of provocations and atrocities

The Government on the other hand has lost all sense of decency and fair play In following their policy of ruthless repression they have thrown to the winds all respect for law and legal procedure It would be no exaggeration to say that the rule of law has ended in Punjab so far as Government dealings with the Satyagrahis and their public supporters are concerned. It is well known that the Satyagrahis are breaking the ban imposed on public gatherings under section 144 Cr P C, but the Government is involving against them all and sundry sections of the I P C including attempt to murder, rioting and robbery etc I would not like to say more regarding the strange ways which the Government is using in starting and conducting such cases But the decisions of the Advisory Board and the High Court releasing more than 80 percent of detenues and in some case after passing severe strictures on the conduct of the Government are a

clear indictment of their policy

The tragedy in Ferozepur Central Jail became the subject of judicial inquiry because it had caused wide spread public resentment and had elicited condemnation from a few top most Congressmen as well The report of this inquiry though submitted to Government in the month of September, has not yet been published But besides Ferozepur there is quite a number of other incidents which have not been the subject of such an inquiry But they are, never the less very grave The incident in Bahu Akbarpur was a cold blooded outrage on the entire village This chain of ruthless and lawless repression has continued without a break The latest that has come to the notice of the public is the incident at Ludhiana, where even lady Satyagrahis were not spared and indiscriminate lathi charge and tear gas were used

I have also received information that the Punjab Government, has demanded securities for good behaviour from young students of amounts going upto Rs 20,000/ because they went on strike on the 9th of November, 1957

Even in jails most of the Satyagrahis are suffering great hardships for want of sufficient clothes in this severe winter Besides this I have received information that the Govt is planning to transfer the Satyagrahis to Yole Camp This camp was intended as a hill resort to station European prisoners of war in a far off and almost isolated place I believe even the barracks are now unfit for human habitation and also so declared by competent Engineers Yole is cold even during the summer season and now a days it must be cold to the freezing point. To transfer Satyagrahi prisoners there in this season will be cruelty of the extreme type

I have received information which is also very serious that arms licenses of non Sikh Hindus even in areas bordering Pakistan are being cancelled in large numbers This is undoubtedly condemnable

In spite of all this terrorism the mass support to our movement is everyday increasing and is evident from voluntary hartals and from unprecedented sacrifice of a most sacred and most popular festival like Dussehra

I am sometimes asked as to how long our Movement is to continue. I can only reflect the determination of our people to continue the struggle till truth triumphs and communal surrender and linguistic fanaticism perish How much time it will take to melt the hearts of our own Government is more than I can say I can only pray to God for it

It is said that our Movemeent is having an adverse effect in the South I have no doubt that the moment the misunderstandings wittingly or unwittingly created about our Movement are removed and it is realized that what the Aryasamaj is fighting for is not the forcing of Hindi and ousting of any

regional language but for replacing it by a voluntary and a friendly approach to all the language , they will all not only appreciate but will also support our Movement.

—G S Gupta

आचार्य विनोबा भावे सत्याग्रह के विरुद्ध नहीं हैं ?

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के प्रधान श्रीयुत घनश्यामसिंह जी गुप्त ने एक प्रेस वक्तव्य देते हुए कहा है कि श्रीयुत आचार्य विनोबा भावे पंजाब के हिन्दी सत्याग्रह के विरुद्ध नहीं है। पूरा वक्तव्य इस प्रकार है —

"पंजाब मे भाषा की स्वतन्त्रता के लिए चल रहे आर्यसमाज के आन्दोलन के सम्बन्ध में बड़ा भ्रम उत्पन्न किया गया है, जिसका अधिकाश भाग अज्ञान जनित है। इस आन्दोलन के सम्बन्ध में ऐसी भ्रान्ति भी व्याप्त हुई देख पड़ती है जिसे अज्ञान जनित न कह कर जान बूझकर उत्पन्न की हुई कह सकते है।

इसप्रकार का एक उदाहरण उन विचारों से सम्बद्ध है जो श्रीयुत आचार्य विनोबा भावे जी द्वारा प्रकट किये गये बतलाये जाते है। यह मार्के की बात है कि उनके विचारों से सम्बद्ध समाचार उनके अपने कार्यालय से नहीं अपितु आल इडिया काग्रेस कमेटी के कार्यालय और उसके मन्त्री की ओर से प्रकाशित और प्रचारित हुए हैं।

आल इंडिया कांग्रेस कमेटी के कार्यालय और उसके मन्त्री को पता है कि हमारा आदोलन हिंदी को बलात् लादने और पंजाबी को बहिष्कृत करने के लिए नहीं चलाया जा रहा है। हमने अनेक बार इस बात की घोषणा की है कि हम कहीं भी किसी भी भाषा को लोगों की इच्छा के विरुद्ध बलात् लादे जाने के विरुद्ध हैं। हम हिन्दी को भी इसका अपवाद नहीं बनाते। यदि हिन्दी को बलात् लादने का कहीं विशेषत दक्षिण मे प्रयत्न किया गया तो इस से हिन्दी का अहित होगा। हम चाहते है कि सभी भाषाओं का अध्ययन सद्भाव से और स्वेच्छया किया जाय। इसी से कटुता और संघर्ष से बचा जा सकता है। इसी उपाय से न केवल हिन्दी की ही अपितु भारत की महान् भाषाओं की उन्नति हो सकती है। बाध्यता से तो ग्लानि ही उत्पन्न होती है। हम पजाब मे बाध्यता के विरुद्ध ही लड़ रहे हैं, हिन्दी या पंजाबी के पठन पाठन के विरुद्ध नहीं।

फिर भी श्री आचार्य विनोबा भावे जी के मुख से यह कहलाया गया —

"दक्षिण के लोगों को अनिवार्य रूप से हिन्दी पढ़ने के लिए कैसे कहा जा सकता है जबकि पंजाब के लोग अनिवार्यत पजाबी पढने के लिए तैयार नहीं हैं।'

इसका अभिप्राय यह लिया गया कि आचार्य भावे के मतानुसार आर्यसमाज का आन्दोलन दक्षिण मे हिंदी का अहित कर रहा है।

मैं उन सहस्रों लोगों मे से हू जिनकी भावे जी के प्रति बडी श्रद्धा है। अत मैंने दि० २७-९-५७ को उन्हे एक पत्र लिखा और उसके साथ आल-इण्डिया काग्रेस कमेटी के कार्यालय द्वारा प्रचारित दि० २६-९-५७ की एक खबर की कतरन नत्थी कर दी जिसमे यह कहा गया था —

"आचार्य विनोबा भावे जी ने वर्तमान हिन्दी रक्षा आन्दोलन पजाब की तीव्र निन्दा की है और उसे व्यर्थ बताया है।"

श्री विनोबा जी के दि० २४-१०-५७ के उत्तर का प्रासगिक भाग इस प्रकार है —

• "उस काम की योग्यता योग्यता के विषय में मैं पड़ना नहीं चाहता।"

यद्यपि मैं आचार्य भावे जी के पत्र को उचित रीति से प्रकाशित कर सकता था परन्तु मैंने ऐसा नहीं किया। मैने इस प्रकार के विवादों में उनके

नाम को घसीटने की अपेक्षा मौन रहना श्रेयस्कर समझा। मैं अब भी ऐसा करता यदि काग्रेस के प्रधान मन्त्री आचाय विनोबा के नाम से पुन वैसा ही समाचार न छपवाते।

घनश्यामसिह गुप्त
प्रधान
सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति

हिन्दी सत्याग्रह की ६ मास की प्रगति

"हमारे सत्याग्रह को चलते हुए ६ मास पूर्ण हो चुके है और वह कुछ दिन हुए सातवें मास मे प्रविष्ट हो गया है। जो व्यक्ति उच्च स्वर मे यह दावा करते नहीं थकते थे कि यह आदोलन एक दो महीने मे मर जायगा उनकी आखें इस तथ्य से खुल जानी चाहिए।

८५०० से अधिक व्यक्ति जिनमे १००० देविया हैं और जिनमे से कुछ देवियों की गोद मे बच्चे भी है जेल मे डाले जा चुके है। इसके अतिरिक्त बहुत वडी सख्या मे सत्याग्रही गिरफ्तार किये गये थे परन्तु पजाब सरकार उन्हें जेलामे रखने के स्थान मे सुदूर जगलों मे छोड देती थी। जहा तक जुर्मानों का सम्बन्ध है अकेले रोहतक जिले मे लगभग १ लाख ६० हजार रुपयों का जुर्माना किया गया है, जिसकी वसूली मे पुलिस ने हल मे चलते हुए बैलों को भी नहीं छोडा। वह उन्हें भी खोलकर ले गई।

मैं उचित रीति से यह दावा कर सकता हू कि हमारा आदोलन अहिंसात्मक आदोलन का नमूना है। पजाब जैसे प्रान्त मे इतनी देर तक इतना विशाल और इतना शातआदोलन अबतक कोई नहीं चला है और वह भी अत्याचारों और उत्तेजनाओं के होते हुए। गवर्नमेन्टकी शिष्टता और औचित्यकी भावना का दिवाला निकल चुका है। निर्मम दमन नीति का अवलम्बन करते हुए उसने विधि विधान को भी उठाकर एक ओर रख दिया है। सत्याग्रहियों और हिन्दी आदोलन के समर्थकों के साथ जहा तक पजाब राज्य सरकार के व्यवहार का सम्बन्ध है यह कहना अतिशयोक्ति पूर्ण न होगा कि पजाब मे कानून का राज्य समाप्त हो गया है। यह बात प्राय सबको ज्ञात है कि सत्याग्रही १४४ धारा का उल्लघन करते है परन्तु पजाब सरकार उन्हें भारतीय दण्ड विधान की समस्त धाराओ मे जिसमे हत्या का प्रयत्न, बलवा और डकैती आदि २ सम्मिलित है, फसाती है। इस प्रकार के अभियोगा को आरम्भ करने और चलाने मे उसने जो विचित्र ढग अपनाये हुए हैं उनके सम्बन्ध मे मै अधिक कहना नही चाहता परन्तु ऐडवाइजरी बोर्ड और हाइ कोर्ट के निर्णयों से जिनके अनुसार ८० से अधिक नजरबन्द वन्दी मुक्त हो चुके है और जिनमें से कुछ मे सरकार को करारी झाड पिलाई गई है, सरकारी नीति का खडन स्पष्ट होता है।

फीरोजपुर जेल काड की अदालती जाच कराई गई क्योंकि इससे जनता बडी क्षुब्ध हो गई थी और चोटी के कुछ काग्रेस जनों ने इसका खडन किया था। इस जाच की रिपोर्ट पजाब सरकार को सितम्बर मास मे ही दे दी थी। परन्तु वह अब तक प्रकाशित नहीं हुई। फीरोजपुर की दुर्घटना के अतिरिक्त अन्य अनेक दुर्घटनाए हुई, परन्तु उनकी अदालती जाच नहीं कराई गई। यद्यपि वे भी कम भयकर न थी। बहुअकबरपुर मे जो कुछ हुआ वह समस्त ग्राम पर निर्मम अत्याचार था। निर्दय और अवैध दमन का चक्र अनवरत गतिसे चल रहा है। अत्याचार की सबसे ताजी घटना जिसका जनता को पता लगा है, लुधियाना मे घटित हुई। जहा देवियों को भी नहीं छोडा गया और लाठी प्रहार एव अश्रु गैस का अन्धा-धुन्ध प्रयोग किया गया। मुझे यह भी सूचना मिली है कि पजाब गवर्नमेन्ट ने छोटे २ विद्यार्थियों से नेक चलनी के मुचलके मागे हैं जिनकी राशि २० हजार

से ऊपर होती है, इसलिए कि उन्होंने दि० ९ ११ ५७ को हड़ताल की।

जेलों में भी अधिकाश सत्याग्रही इस शीत ऋतु मे पर्याप्त वस्त्रों के अभाव मे बड़ा कष्ट उठा रहे हैं। मुझे यह भी सूचना प्राप्त हुई है कि गवर्नमेन्ट सत्याग्रही बन्दियों को योल कैम्प मे परिवर्तित करने की सोच रही है। युरोपियन युद्ध बन्दियों को ठडे, दूर और एकान्त स्थान मे रखने के लिए ही इस कैम्प की व्यवस्था की गई थी। मेरा विश्वास है कि इस कैम्प की बैरकें मनुष्य के रहने योग्य नहीं है। सुयोग्य इञ्जीनियरो की भी यही सम्मति है। योल पहाड़ी स्थान है जो गामयो में भी ठडा रहना है। जाड़े की इस ऋतु मे वह स्थान कितना ठडा होगा इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। इस ऋतु मे सत्याग्रही बन्दियो को योल भेजना बड़ा निर्दयता पूर्ण कार्य होगा।

मुझे यह भी बताया गया है कि पाकिस्तान से लगे हुए क्षेत्रों तक के गैर सिख हिन्दुओं के हथियारों के लाइसेंस रद्द किये जा रहे हैं। यह बात वस्तुत निंदनीय है।

इस प्रकार आतक के व्याप्त कर दिये जाने पर भी हमारे आदोलन को प्रजा से मिलने वाली सहायता मे दिन प्रतिदिन वृद्धि हो रही है।

मुझसे प्राय यह पूछा जाता है कि हमारा आदोलन कब तक चलता रहेगा। मैं तो अपने आदमियों के इस दृढ निश्चय को ही बता सकता हू कि यह आदोलन उस समय तक चलता रहेगा जब तक सत्य की विजय नहीं हो जाती और साम्प्रदायिकता के सामने घुटने टेकने की नीति तथा भाषायी पागलपन का अन्त नहीं हो जाता। हमारी गवर्नमेन्ट के हृदय परिवर्तन में कितना समय लगेगा यह अभी नहीं कहा जा सकता। मैं तो इसके लिए परमात्मा से प्रार्थना ही कर रहा हू।

कहा जाता है कि हमारे आदोलन का दक्षिण में बड़ा विपरीत प्रभाव पड रहा है। निस्सन्देह जिस क्षण हमारे आदोलन के सम्बन्ध मे उत्पन्न किये हुए भ्रम दूर होंगे और जब वहा के लोगों को यह पता लगेगा कि आर्यसमाज हिन्दी को बलात् लादने तथा किसी क्षेत्रीयभाषा को बहिष्कृत करनेके लिए नहीं लड रहा है अपितु भाषा विषयक बाध्यता को हटाने केलिए लड रहा है तो वे न केवल आर्य समाज की प्रशसा ही करेंगे अपितु हमारे आदोलन का समर्थन भी करेंगे।

श्री स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती का वक्तव्य

मुझे दु ख है कि मुझे पजाब सरकार ने ९ नवम्बर को सत्याग्रह करने पर केवल पकड कर छोड दिया और मेरे स्थान पर पहुचा दिया। इस घटना को देखकर मेरा यह विचार बन गया था कि शायद सरकार की नीति मे कोई परिवर्तन आ गया होगा परन्तु ऐसा देखने में नहीं आया क्योंकि प्रधानमत्री जी के पजाब पधारने के पश्चात् तो ऐसा प्रतीत होता है कि पजाब में तानाशाही का राज्य स्थापित कर दिया गया है। अनेकों कार्यकर्ताओं तथा हिन्दी प्रेमियों को तो एक ओर रहा अपितु कई निरापराध व्यक्तियों को भी जमानतें माग कर तग किया जा रहा है। १० नवम्बर को पुलिस की ओर से हमारे आर्यसमाज मन्दिर चण्डीगढ का घेरा डालना और सत्सगमे स्त्री पुरुषों को आने से रोकना तथा औषधियों तक लेने न देना भयकर निर्दयता का प्रमाण है। इस प्रकार के व्यवहार से ऐसा प्रतीत होता है कि पजाब के मुख्य मन्त्री हमारी धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुचाने वाले कुकृत्यों को रोकने में असमर्थ रहे हैं। यह वर्ताव हमारे साथ अगर जानबूझ कर नहीं करवाया जा रहा है तो ६ अगस्त के आर्यसमाज चण्डीगढ के अन्दर किये गये कुकृत्यों के जिम्मेदार पुलिस अफसरों को अब तक दण्ड देना चाहिए था। अगर ऐसा किया जाता तो पुन ऐसा कुकृत्य करनेका साहस न होता। मैं मुख्यमन्त्री सर-

दार प्रताप सिंह कैरों से पूछता हू कि वह इस प्रकार हो रहे हमारी धामक भावनाओ के अपमान का क्या प्रतीकार सोच रहे है ?

—आत्मानन्द सरस्वती
प्रधान—हिन्दी रक्षा समिति, पजाब

हिन्दी आन्दोलन का लक्ष्य पजाब को गृहकलह से बचाना

अम्बाला, ६ दिसम्बर। प्रिंसिपल भगवानदास ने नारायणगढ और डेरा बसी मे भाषण देते हुए अकाली नेताओं और पजाब राज्य सरकार से कई प्रश्न किये। उन्होंने अकालियों से पूछा कि हिन्दी आन्दोलन के सम्बन्ध मे आज वे जो कुछ कर रहे हैं क्या अन्त मे वही उनके केस को न बिगाड देगा। मास्टर तारासिहजी का यह मत है कि पजाब मे गुरुमुखी के प्रयोग और शिक्षण के साथ सिख मत के प्रसार का प्रश्न सम्बद्ध है। यदि पजाब के हिन्दू गुरुमुखी को ब ात् लादने का विरोध कर रहे है तो उनका ऐसा करना युक्तियुक्त है। यदि कांग्रेस शासन को धम निरपेक्षता से कोई प्रेम है तो उसने २३००० व्यक्तियो को गुरुमुखी के नाम पर क्यों पीटा, क्यों अपमानित किया और क्यों जेलों मे डाला क्या इससे अकालियों को हिन्दु विरोधनी प्रगतियों को जारी रखने और भय प्रदर्शन और बल प्रयोग के द्वारा सिख मत का प्रचार करने की अप्रत्यक्ष प्रेरणा नहीं मिलती है ? एक ओर तो मास्टर तारासिंह जी के कथनानुसार यदि सरकार हिन्दुओं पर गुरुमुखी को बलात् नहीं लादेगी तो पन्थ को खतरा उपस्थित हो जायगा और दूसरी ओर वे कहते हैं कि गुरुमुखी पजाब के हिन्दुओं की मातृभाषा है। यदि गुरुमुखी हिन्दुओं की भाषा है तो क्यों नहीं उन्हें समझा बुझा कर उनकी भूल का अनुभव कराने का यश प्राप्त किया जाता है। क्या डण्ड के जोर पर उनसे गुरुमुखी पढवाई जा सकती है ? प्रिंसिपल महोदय ने आगे कहा कि मैं गुरुमुखी का बड़ा प्रेमी था और जब मैं ७वीं क्लास में पढ़ता था तब अपनी इच्छा से मैंने उसे पढा था। अब गुरुमुखी के पठन पाठन के विरुद्ध मेरा हृदय विद्रोह कर रहा है। पजाब सरकार अपनी दमन नीति से न केवल अपनी हिन्दू विरोधिनी साम्प्रदायिक नीति का ही प्रदर्शन कर रही है अपितु गुरुमुखी के लिए घृणा भी उत्पन्न कर रही है। हमारे आन्दोलन का तो एकमात्र उद्देश्य ही पजाब को गृह कलह और विभाजन से बचाना है।

—प्रिंसिपल भगवानदास

सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री ला० रामगोपाल जी की घोषणा

दिल्ली, २८ नवम्बर। पजाब मे चल रहे हिंदी रक्षा आन्दोलन की माग है कि जालन्धर डिवीजन के पजाबी क्षेत्र मे हिन्दी के प्रयोग पर पाबन्दी न रहे और मा बाप को यह अधिकार मिले कि वह अपने बच्चे को हिन्दी के माध्यम से शिक्षा दिलायें अथवा पजाबी के माध्यम से। जब तक यह हमारी उचित मागें सरकार नहीं मान लेती सत्याग्रह बन्द करने का प्रश्न ही नही उठता। ये उद्गार श्री राम गोपाल शाल वाले ने हिन्दी सत्याग्रह मे जाने वाले हिन्दी परिषद् के प्रचार मन्त्री श्री रामकृष्ण गग (वकील) के स्वागतार्थ चादनी चाक (घए ाघर) पर आयोजित एक विराट् सभा मे प्रकट किय।

श्री शालवाले ने कहा कि हिन्दी रक्षा आदोलन की सफलता से ही पजाब का विभाजन रोका जा सकता है। यदि सरकार अकालियो के सामने इसी प्रकार घुटने टेकती रही तो सीमावर्ती पजाब राज्य में देश की सुरक्षा को खतरा पैदा हो सकता है। पिछले दिनों श्री नेहरू ने चण्डीगढ में कहा था कि आर्यसमाज की ९० प्रतिशत मागें मान ली गई हैं और १० प्रतिशत बातचीत से तय हो सकती हैं परन्तु सरकार ने हमारी मागों को मान लेने का साहस नहीं किया, हम यह समझाने के लिये सदैव तैयार हैं परन्तु यदि आन्दोलन लम्बा चला

पंजाब का वातावरण विषैला किस प्रकार बना और उसका उत्तरदायित्व किस पर ?

(लेखक—पंडित शिवचन्द्र, भूतपूर्व उपमन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली)

लगभग साढे चार सौ वर्ष हुए जब बाबर भारत पर चढाई कर पजाब मे लाखों हिन्दुओं का नर सहार करता चला जा रहा था, उस समय गुरु नानक ने आर्य (हिन्दू) धर्म के भक्ति मार्ग का पजाब मे प्रचार कर अपने शिष्य बनाने आरम्भ किये और सिख मत की स्थापना की। 'सिख' शब्द 'शिष्य' का अपभ्रंश है। अन्त मे औरंगजेब के समय मे जब पजाब मे हिन्दुओं पर अधिक अत्याचार होने लगे तो गुरु गोविंदसिंह ने आर्य (हिन्दू) धर्म की रक्षार्थ सिक्खों को क्षात्र धर्म की भी शिक्षा दी। अत सिख मत वास्तव मे विशाल आर्य (हिन्दू) धर्म की शाखा के रूप मे ही रहा। कुछ वर्षो पूर्व तक हिन्दू सिख भाई भाई की तरह रहते भी थे। आपस मे रोटी बेटी का सम्बन्ध था। घर मे एक भाई सिख था तो दूसरा हिन्दू। यह था पजाब मे हिन्दू सिख सम्बन्ध। परन्तु पजाब मे हिन्दुओ और सिखों के बीच वातावरण विषैला किस प्रकार बना और वहा पर हिन्दी रक्षा आदोलन क्यों आरम्भ करना पडा, इसे समझने के लिए उसकी पृष्ठभूमि तथा कारणो को समझ लेना आवश्यक है। तब ही इस विषय मे किन्ही लोगो की भ्रातिया जो अभी तक बनी हुई है, दूर हो सकेगी आर वास्तविक स्थिति का पता भी लग सकेगा।

पृथक् सिख राज्य की माग

समाचार पत्र पढनेवालों को भली प्रकार विदित है कि श्री जिन्ना द्वारा की गई पाकिस्तान की माग के साथ साथ अकालियो के नेता मास्टर तारासिंह

तो आर्यसमाज के एक करोड सदस्य जेल जाने को तैयार है।

कैरों सरकार के अत्याचारों का उल्लेख करते हुए आपने आगे कहा कि सभी धर्मों के श्रद्धापात्र तपस्वी विद्वान् श्री रामचन्द्र देहलवी को जेल के अन्दर हथकडी लगाना, श्री लालचन्द्र सभ्रवाल की टूटी हड्डी केलिए खून देनेवाले व्यक्ति को गिरफ्तार करना और डिफेंस कमेटी के वकीलों को जेल मे डालना ऐसे शर्मनाक काम हैं जो अंग्रेजों ने भी अपने जमाने में नहीं किये थे। ऐसे अत्याचारों से कभी कोई आन्दोलन नहीं दबा करता।

प्रसिद्ध उपन्यासकार वैद्य गुरुदत्त ने कहा कि पिछले दिनों कुछ हिन्दी लेखकों ने एक वक्तव्य निकाल कर हिंदी आदोलन की निन्दा की है परन्तु ऐसे लेखक सरकार की हा में हा मिलाते हैं और जनता की भावनाओं का कभी आदर नहीं करते। इन्होने समय पडने पर हिन्दी की पीठ में छुरा भोंका है।

परिषद् के महामन्त्री श्री रामेश्वर 'अशात' ने श्री गर्ग का स्वागत करते हुए कहा कि वे उनके पश्चात् एक बडा जत्था लेकर सत्याग्रह की आहुति मे कूद पडे गे।

श्री वी० पी० जोशी एडवोकेट ने कहा कि हमे गर्व है कि हमारा एक वकील साथी इस आदोलन मे सत्याग्रह करने जा रहा है।

अन्त मे श्री गर्ग ने जनता का आभार प्रकट करते हुए कहा कि आपका यह सहयोग हमको इसी प्रकार मिलता रहेगा जब तक हमारा आन्दोलन सफल नहीं हो जाता।

ने भी पृथक् सिख राज्य की मांग अंग्रेजों के शासन काल में ही आरम्भ की थी। इसकी पुष्टि मे पाठकों के लिए कुछ थोड से उदाहरण पर्याप्त होंगे—

सन् १९४६मे जब ब्रिटिश पार्लयामेटरी मिशन भारत आया था तो सिखों ने उस मिशन के सम्मुख एक मेमोरेण्डम प्रस्तुत किया जिस के कुछ अश निम्न प्रकार है—

"सिखों को एक स्वतन्त्र राज्य की माग करने का उतना ही अधिकार प्राप्त है जितना मुसलमानो को।"

'मुसलमानो की पाकिस्तान की माग को उस समय तक पूरा नही किया जाना चाहिए जब तक साथ ही साथ सिखों के लिए एक पूण स्वतन्त्र राज्य की माग को पूरा नहीं कर दिया जाता।"

मास्टर तारासिह ने अपने एक वक्तव्य मे जो दि० ४ अप्रैल १९४६ के 'ट्रिब्यून' मे प्रकाशित हुआ, कहा कि "हम एक सिख राज्य चाहते हैं। इस प्रकार का राज्य सिख पथ का होगा।"

दि० १६ अप्रैल १९४६ के 'ट्रिब्यून' मे मास्टर तारासिह का एक वक्तव्य प्रकाशित हुआ जिसमे कहा गया कि "सिख एक क्षण के लिए भी हिंदुओं का राज्य सहन नहीं करेंगे।"

मास्टर तारासिह ने एक अन्य वक्तव्य मे कहा– जो दि० ३० मई १९४६ के 'ट्रिब्यून' मे प्रकाशित हुआ कि "पजाब की सीमाए इस प्रकार बाधी जायें ताकि एक ऐसा राज्य बनाया जा सके जिसे सिख अपना राज्य कह सकें। हम एक पृथक सिख राज्य चाहते है।"

मास्टर तारासिह तथा अन्य सिख नेताओ ने प्रेस तथा प्लेटफार्म द्वारा प्रचार करना आरम्भ किया कि हम हिन्दू नहीं हैं और हमारा धर्म तथा सस्कृति हिन्दुओं के धर्म तथा सस्कृति से बिलकुल भिन्न तथा पृथक् है।

उपर्युक्त सब बातों से स्पष्टतया विदित है कि मास्टर तारासिंह तथा उनके साथियों ने पजाब मे हिंदुओ तथा सिखों के बीच वैमनस्य और विषैले वातावरण का बीजारोपण किस प्रकार किया और सिखों के अन्दर पृथकीकरण तथा साम्प्रदायिकता की भावना को किस प्रकार जन्म दिया।

सिख साम्प्रदायिकता को पटेल ने दबाया

देश को स्वतन्त्र हुए अभी कुछ ही दिन बीते थे कि मा० तारासिहने सिखराज्य बनानेकी माग पुन आरम्भ कर दी और कहा जाता है कि वह देहली आकर अशाति उत्पन्न करना चाहते थे। परन्तु उस समय भारत के सुयोग्य तथा निर्भीक शासक एव लोह-पुरुष सरदार पटेल ने मास्टर तारासिह को मार्ग मे ही अम्बाला स्टेशन पर गिरफ्तार कर लिया और दूषित मनोवृत्ति को कुचल दिया और अपने जीवन मे पुन सिर नहीं उठाने दिया।

सरदार पटेल की मृत्यु के पश्चात् मास्टर तारा सिह ने सिख राज्य बनाने के लिए पुन सिर उठाया और सिख साम्प्रदायिकता का प्रचार खूब जोरों से आरम्भ कर दिया। सरदार पटेल के जीवन काल तक मास्टर तारासिह तथा अकालियों ने गुरुमुखी लिपि को हिदुओ पर जबरदस्ती ठूसने की माग कभी नहीं की थी। परन्तु अब यह लोग गुरुमुखी लिपि को हिन्दुओ पर जबरदस्ती ठूसने की भी माग करने लगे और इस माग को सिख राज्य का एक मुख्य आधार बनाया।

पंजाबी भाषा तथा गुरुमुखी लिपि

पजाबी भाषा तथा गुरुमुखी लिपि दोनों एक दूसरे से भिन्न वस्तुए है। पश्चिमी पजाब के कुछ भागों (समस्त पजाब मे नहीं) पजाबी अवश्य बोली जाती थी। परन्तु वह हिन्दी फारसी तथा गुरुमुखी तीनों लिपियों द्वारा लिखी जाती थी। पजाब के समस्त हिदुओ ने गुरुमुखी लिपि को कभी नहीं अपनाया। गुरुमुखी जिसे लगभग ३०० वर्ष पूर्व गुरु अ गद ने मुगलों के अत्याचारों से सिखों को बचाने के लिये एक साकेतिक (कोड) लिपि के रूप मे प्रचलित किया था अधिकाश में गुरुद्वारों के अन्दर की तथा ग्रामीण सिखों की लिपि रही।

गुरु गोविंदसिंह जी महाराज ने स्वय अपनी बहुत सी वाणी हिंदी भाषा तथा देवनागरी लिपि मे ही लिखी थी। कुछ लोगो मे यह गलत भ्रम फैला हुआ है कि पजाबी भाषा की लिपि गुरुमुखी है। पजाबी भाषा तथा गुरुमुखी लिपि उसी प्रकार दा भिन्न तथा प्रथक वस्तुए है जिस प्रकार पजाबीभाषा तथा फारसी लिपि।

सच्चर फार्मूला तथा गुरुमुखी लिपि

सच्चर फार्मूला का सब से अधिक आपत्ति जनक भाग यह है कि इसके अनुसार हरियाना तथा हिन्दी क्षेत्र के अन्य भागा मे भी पजाबी को गुरुमुखी लिपि मे अध्ययन करना अनिवार्य बना दिया गया। इस फार्मूला बनाने का एक बडा काला इतिहास है। यह बात प्रसिद्ध है कि जिस समय यह फार्मूला घडा गया उस समय भी पजाब की काग्रेस मे फूट थी और वहा दो दल थे। एक भीमसेन सच्चर का और दूसरा श्री डाक्टर गोपी चन्द भार्गव का। मन्त्री मण्डल बनाना वहा की विधान सभा के अकाली सदस्यों की सहायता पर निभर करना था। कहा जाता है कि पजाब विधान सभा की अकाली पार्टी के नेता श्री ज्ञानी करतारसिह ने जो इस समय पजाब काग्रस सरकार के मन्त्री बने हुए है एक फार्मूला तयार किया और श्री भीमसेन सच्चर तथा श्री गोपीचन्द भार्गव दोनो को ही अपनी पार्टी का सहयोग देना प्रथक प्रथक स्वीकार कर दोना ही से उस फार्मूला पर हस्ताक्षर करा लिये। परन्तु अन्त मे श्री भीमसेन सच्चर के साथ अपना अधिक हित समझकर उन्हें अपनी पार्टी का मत दिला दिया।

इस फार्मूला से पूर्व सिक्खो की ओर से गुरुमुखी लिपि की माग, कभी नहीं की गई थी। इसके द्वारा पजाब मे सर्व प्रथम यह माग की गई। इस फार्मूला के सम्बन्ध मे एक विचित्र बात यह है कि इसे न तो पजाब की विधान सभा का और न लोक सभा का ही समर्थन अथवा स्वीकृति कभी प्राप्त हुई।

सीमा कमीशन द्वारा पजाबी सूबा तथा गुरुमुखी लिपि का घोर विरोध

भारत सरकार ने राज्यो की सीमा निर्धारित करने के लिए उच्चकोटि के विद्वान, योग्य तथा अनुभवी राजनीतिज्ञों की एक सीमा कमीशन की नियुक्ति की थी जिसने भाषा के आधार पर साधारणत सब ही राज्यो की तथा विशेषतया पजाब की सीमाओ को निर्धारित करने का घोर विरोध करते हुए भारत सरकार के सन्मुख अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की थी, जिसके कुछ ही निम्न उदाहरण पर्याप्त होगे —

"प्रस्तावित पजाबी भाषाई सूबे मे रहनेवाले और अधिकाश मे पजाबी भाषा बोलने वाले लोग ही पजाबी भाषाई सूबे की माग का जबरदस्त घोर विरोध करते है।"

"पजाबी राज्य जिस प्रकार वर्तमान रूप मे स्थित है उसमे वास्तविक भाषा समस्या कोई नहीं है चूकि पजाबी तथा हिन्दी जिस प्रकार पजाब मे बोली जाती है, एक दूसरे से मिलती जुलती है और राज्य मे सब वर्गों के लोग उन दोना भाषाओं को भली प्रकार समझते है।"

"वर्तमान स्थित पजाब राज्य मे कोई भी पृथक सास्कृतिक प्रदेश नहीं हैं। अकाली दल ने अपने मेमोरेन्डम मे जो अक उद्धत किये है, वे अक स्वय उनकी किसी ऐसी आपत्ति का कि पजाबी भाषा की उन्नति मे किसी प्रकार की बाधा है, खण्डन करते है।"

"मौलिक रूप से पजाबी सूबे की माग साम्प्रदायिक है। नोकरी मे सास्कृतिक तथा भाषाई दलीलों पर बल देना वास्तविक इरादों को छिपाने के लिए है।"

"इस सत्य से इन्कार नही किया जा सकता कि पजाबी भाषा को केवल गुरुमुखी लिपि मे लिखे जाने की माग की उत्पत्ति अभी पिछले कुछ दिनों मे ही हुई हैं।"

"फारसी लिपि जो गुरुमुखी लिपि से बिलकुल भिन्न है, पजाबी भाषा लिखने के काम मे आती रही है। देवनागरी लिपि तो पजाबी भाषा को लिखने के लिए बहुत अधिक अनुकूल है चूकि उसमे स्पष्ट रूपसे गुरुमुखीलिपि केसाथ समानताए है और उसमे पजाबी भाषा की स्वर सम्बन्धी आव श्यकताओं की पूर्ति करने का पूर्ण सामर्थ्य है। इस विषय मे कमीशन ने अपना अन्तिम निर्णय देते हुए रिपोर्ट मे जोरदार शब्दों मे लिखा है कि — पजाबी भाषाई सूबे का दावा गिर जाता है।"

परन्तु भारत सरकार ने अपने ही द्वारा नियुक्त इस सीमा कमीशन की रिपोर्ट को भी अकालियों की साम्प्रदायिकता से किस प्रकार भयभीत होकर ठुकराया यह आगे वर्णित तथ्यों से ज्ञात हो जावेगा, जिनको जानकर विशुद्ध राष्ट्रीय भावना रखने वाला प्रत्येक भारतीय इस देश की सरकार को कदापि राष्ट्रीय सरकार न कहकर निश्चित रूप से साम्प्र दायिक सरकार समझेगा।

सरकार का अकालियों के साथ गठबन्धन

इसी बीच मे एक दूसरे अकाली नेता सरदार हुक्मसिंह ने इम्पीरियल होटल नई दिल्ली मे विदेशी सम्वाददाताओं की एक प्रेस कान्फ्रेन्स बुलाई जिसमे भारतीय सम्वददाताओं को आम न्त्रित नहीं किया गया। कहा जाता है उस समय सरदार हुक्मसिंह ने प० जवाहरलाल नेहरू तथा काग्रेस सरकार के विरुद्ध काफी विष उगला। भयभीत होकर काग्रेस सरकार ने सरदार हुक्मसिंह को लोक सभा का "डिप्टी स्पीकर जैसा उत्तरदायित्व पूर्ण पद दे दिया।

समाचार पत्र पढने वाले जानते हैं कि कुछ वर्ष हुए पडित नेहरू पजाब मे सरहिन्द के समीप गुरुद्वारा फतेहगढ साहब में गए थे और वहा पर उन्होंने सिक्खों की सभा मे जब भाषण देना आरम्भ किया तो मास्टर तारासिंह ने घटना स्थल पर पहुच कर स्वय पडित नेहरू के सम्मुख उपस्थित होकर उन्हें भाषण देने से जबरदस्ती रोका और उन्हें नहीं बोलने दिया। इस प्रकार पडित नेहरू को अपमानित होकर बिना भाषण दिए वहा से

पजाब काग्रेस मे फूट, स्वार्थ तथा अकालियों की साम्प्रदायिकता को बढावा देने से पजाब मे काग्रेस की स्थिति बडी डावाडोल हो गई थी, जिसके कारण काग्रेस सरकार को यह भय हो गया था कि यदि वह अकालियों को अपने साथ नहीं मिलाती तो आगामी निर्वाचनों मे वह पजाब मे सफलता प्राप्त नहीं कर सकती और वहा अपनी सरकार नहीं बना सकती। अत अपने को राष्ट्रीय कहने वाली काग्रेस ने राष्ट्रीय हित तथा राष्ट्रीय भावना को तिलाञ्जलि देकर और साम्प्रदायिक मास्टर तारासिंह तथा अकालियों से भयभीत होकर उनके साथ साम्प्रदायिक आधार पर गठबन्धन किया और तब पजाब के निर्वाचनों मे सफलता प्राप्त की और अपनी सरकार बनाई और दूसरे अकाली नेता ज्ञानी करतारसिंह को वहा पर मन्त्री पद दे दिया गया। पजाब मे इस समय काग्रेस सरकार साम्प्रदायिक अकालियों की दया पर स्थित है। अत पजाब की वर्तमान सरकार को काग्रेस सरकार न कह कर वास्तव मे व्यवहारिकता की दृष्टि से अकाली सरकार ही कहना चाहिए।

क्षेत्रीय फार्मूला और उसका राजनैतिक परिणाम

सन् १९५१ की जन-गणना के अनुसार समस्त पजाब मे हिन्दुओं की जनसख्या ६६ प्रतिशत और सिक्खों की ३४ प्रतिशत है। अपने ही द्वारा नियुक्त सीमा कमीशन द्वारा घोर विरोध करने पर भी भारत सरकार ने साम्प्रदायिक अकालियों से और अधिक भयभीत होकर और दबकर भाषा तथा लिपि के आधार पर पजाब के दो टुकडे कर दिये। एक का नाम "पजाबी क्षेत्र" (जालन्धर डिवीजन) और दूसरे का हिन्दी क्षेत्र (अम्बाला डिवीजन) रख दिया। पूर्व समय के जालन्धर डिवीजन के उन भागों को जिनमे हिन्दू काफी बहुसख्या में थे, वहा से निकाल कर उन्हें अम्बाला डिवीजन में लाकर मिला दिया गया ताकि जालन्धर डिवीजन मे हिन्दू जो बहुसख्या मे थे वे अल्प सख्या में हो जावें और सिख जो वहा अल्प सख्या में थे वे बहु-

वहा सिक्ख जो अल्प सख्या में थे उन्हें बहुसख्या में ५५ प्रतिशत बना दिया गया और हिन्दू जो बहुसख्या मे थे उन्हें अल्प सख्या मे ४५ प्रतिशत बना दिया गया।

जालन्धर डिवीजन को सिक्ख क्षेत्र अथवा गुरुमुखी क्षेत्र नाम न देकर ससारको धोखा देनेके लिए पजाब क्षेत्र नाम रक्खा गया जिससे अन्य लोग यह समझ सकें मानों यह क्षेत्र समस्त पजाबियों की सहमति से बना है। व्यवहार मे तो यह सिक्ख क्षेत्र ही बनाया गया है, जिसके परिणाम स्वरूप साधारण तया सब ही पदो विशेषतया डिप्टीकमिश्नर तथा सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस जैसे उत्तरदायित्व पूर्ण पदों से हिन्दू अफसरो को हटाकर उनके स्थान पर सिक्ख अफसरों को नियुक्त किया जाने लगा। सब ही सरकारी दफ्तरो मे और विशेषतया शिक्षणालयों में बिना किसी कारण हिन्दुओ को हटाकर उनके स्थान पर धडाधड सिक्खों को रक्खा जाने लगा। यह बातें केवल जालन्धर डिवीजन तक ही सीमित नहीं रही किन्तु अम्बाला डिवीजन मे भी कुछ अ शों मे क गई। यह था इस क्षेत्रीय फार्मूला का राज नैतिक परिणाम।

पजाब में जहा तक क्षेत्रीय फार्मूला द्वारा राज नैतिक परिणाम का सम्बन्ध है आर्यसमाज ने इसकी बुराइयों और दुष्परिणामों को अनुभव किया और विरोध मे कोई पग नहीं उठाया, चू कि किन्हीं कारण वश अब तक आर्यसमाज ने सामूहिक रूप से देश की राजनीति मे भाग नहीं लिया, आर्यो ने व्यक्तिगत रूप से अवश्य देश की राजनीति मे सदैव आगे बढकर भाग लिया है और देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए सघर्ष करने और कष्ट झेलनेमे किसी से पीछे नहीं रहे।

क्षेत्रीय फार्मूला का सांस्कृतिक परिणाम

क्षेत्रीय फार्मूला के अनुसार पजाबी क्षेत्र (जालन्धर डिवीजन) मे पजाबी भाषा तथा गुरुमुखी लिपि को शिक्षणालयों में पढ़ने तथा दफ्तरों और कचहरियों में कार्य करने के लिए अनिवार्य बना दिया गया। हिंदी क्षेत्र (अम्बाला डिवीजन) जहा सिक्ख केवल ५ प्रतिशत हैं के शिक्षणालयों मे भी पजाबी भाषा तथा गुरुमुखी लिपि को अनिवार्य बना दिया गया।

किसी भी सस्कृति के निर्माण तथा उत्थान के लिए भाव, भाषा, लिपि साहित्य, सत्सग, सस्कार तथा कर्म आधारभूत आवश्यक अग हुआ करते हैं। सस्कृति के इन महत्वपूर्ण अगों मे भाषा तथा लिपि भी अपने विज्ञान तथा व्याकरण के आधार पर महत्वपूर्ण साधन है। इन्हीं दो साधनों द्वारा भाव साहित्य, सत्सग, सस्कार तथा कर्मों को व्यक्त किया जाता है जो भविष्य मे किसी सस्कृति के उत्थान के कारण बनते है।

पजाब के हिन्दू हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि के द्वारा अपनी प्राचीन श्रेष्ठतम सस्कृति का निर्माण तथा उत्थान करने मे लगे हुए थे। गुरुमुखी लिपि को वहा के हिन्दुओ पर उनकी इच्छा के विरुद्ध जबरदस्ती लादकर उनकी सस्कृति को नष्ट करने की कुचेष्टा की गई। उन्होंने इसे अपनी सास्कृतिक स्वतन्त्रता पर महान् आघात समझा। इस महान आघात से अपनी रक्षा करने के लिए पजाब के हिन्दू सास्कृतिक युद्ध कला मे किसी प्रवीण, अनुभवी और तपेतपाये नेतृत्व की तलाश मे थे।

आर्यसमाज ने नेतृत्व क्यों किया ?

पजाब मे जब हिन्दी पर आघात हुआ तो इस आघात से रक्षा करने के लिए आर्यसमाज ने ही नेतृत्व क्यों किया यह बात भी अभी तक कुछ लोगों की समझ मे नहीं आई है।

मानव आर्य सास्कृति के सबसे महान उद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वती जिनकी स्वय मातृ भाषा गुजराती तथा व्यावहारिक भाषा सस्कृत थी, उन्होंने काग्रेस के जन्म से बहुत पूर्व यह अनुभव कर लिया था कि इस देश की राष्ट्रभाषा संस्कृत बनने से पूर्व यदि कोई हो सकती है तो वह हिन्दी ही हो सकती

है। उन्होंने अपने समस्त ग्रन्थ हिन्दी में लिखे। तदनुसार सन् १८७१ से ही आर्यसमाज ने अन्य रचनात्मक आदोलन के साथ २ हिन्दी प्रचार आन्दोलन भी आरम्भ किया।

आरम्भ से ही पजाब आर्यसमाज की प्रगतियों का विशेष केन्द्र रहा है। वहा आर्यसमाज ने सब से अधिक कालिज, स्कूल, गुरुकुल, कन्या विद्यालय तथा अन्य सस्थायें खोली और उनमें हिन्दी पढाने की विशेष रूप से व्यवस्था की गई। हिंदी पढने मे विशेष रुचि उत्पन्न करने के लिए वहा के आर्यों ने पजाब विश्वविद्यालय द्वारा रत्न भूषण तथा प्रभाकर की परीक्षायें आरम्भ कराई, जिन्हें करोडों लडके तथा लडकियों ने पजाब तथा अन्य प्रान्तों से पास कर हिन्दी मे योग्यता प्राप्त की। हिन्दू तथा विशेष रूप से सिक्ख कन्याओ ने धडाधड हिन्दी पढना परीक्षायें पास करना तथा उसमे पत्र व्यवहार करना आरम्भ कर दिया। आर्यसमाज ने समस्त देश मे और विशेषतया पजाब मे हिन्दी का प्रचार अपना खून और पसीना एक करके किया है।

जब आर्यसमाज ने क्षेत्रीय फार्मूला के अनुसार पजाब मे हिंदी पर आघात होते हुए देखा तो वह हिदी प्रचार के क्षेत्र मे अपने जीवन भर की गाढी कमाई को लुटते देखकर तडप उठा। चूकि आर्यसमाज सन् १९३९ मे निजाम हैदराबाद सरकार और सन १९४५ मे सिंध मुस्लिम लीग सरकार जैसी बलवान शक्तियों द्वारा किये गये धार्मिक तथा सास्कृतिक अन्यायों के विरुद्ध महान् सघर्ष कर विजय प्राप्त कर चुका था, पजाब के हिंदुओं को आर्यसमाज एक अनुभवी सेनानी के रूप मे मिल गया, जिसकी वे तलाश में थे।

आर्यसमाज की साधारण मांगें

आर्यसमाज चाहता है कि जालन्धर डिवीजन के शिक्षणालयों, सरकारी दफ्तरों तथा कचहरियों में जहा हिन्दुओं की सख्या जान बूझकर बहुसख्या से घटकर अल्प सख्या ४५ प्रतिशत कर दी गई है, देवनागरी तथा गुरुमुखी दोनों लिपियों के प्रयोगों की स्वतन्त्रता होनी चाहिए, अर्थात् जालन्धर डिवीजन को द्विभाषी बना दिया जाय।

अम्बाला डिवीजन मे हिंदू ९५ प्रतिशत हैं और सिख केवल ५ प्रतिशत, अत इस क्षेत्र को एक भाषी क्षेत्र बना दिया जावे। यही आर्यसमाज की साधारण सी मांगें है।

आर्यसमाज द्वारा वैधानिक उपाय तथा सत्याग्रह

आर्यसमाज ने कई बार कान्फरेन्स कर पजाब की इस भाषा तथा लिपि की नीति के विरुद्ध प्रस्ताव पास करके पजाब सरकार तथा भारत सरकार के पास भेजे। भारत के प्रधान मन्त्री प० नेहरू, गृहमन्त्री प० पन्त, शिक्षा मन्त्री मोलाना आजाद, पजाब के गवर्नर श्री सी पी० एन० सिह तथा चीफ मिनिस्टर सरदार प्रतापसिह कैरो से कई डेपुटेशन मिले और उनके सम्मुख हिंदी के साथ अन्याय की बात रखकर न्याय प्राप्त करने की इच्छा प्रकट की गई। उपरोक्त सब नेताओ के पास इस विषय पर काफी लम्बा पत्र व्यवहार भी होता रहा।

आर्यसमाज के तपस्वी ८० वर्ष के वयोवृद्ध नेता श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज ने अन्य पाच तपस्वी सन्यासियों के साथ चण्डीगढ मे सद्भावना यात्रा की और वहा बडे प्रेम से पजाब के चीफ मिनिस्टर सरदार प्रतापसिंह कैरों के सम्मुख अपनी मांगें रखीं। आर्यसमाज की ओर से ये सब वैधानिक उपाय असफल रहे तो विवश हो कर अन्त में आर्यसमाज को सत्याग्रह आरम्भ करना पडा।

आर्यों पर अत्याचारो की पराकाष्ठा

पजाब में इस सत्याग्रह को सातवा मास चल रहा है। देश के इतिहास मे इतना लम्बा तथा शात सत्याग्रह आज तक नहीं हुआ। परन्तु दूसरी ओर पजाब सरकार की ओर से इस सत्याग्रह में ऐसे अत्याचार हुए हैं, वैसे अत्याचार तो औरङ्ग-

जेल के बाद कभी अंग्रेजी शासन काल तथा निजाम राज्य मे भी नहीं हुए जब कि फीरोजपुर जेल के अन्दर पढते हुए, सोते हुए, स्नान करते हुए और शौच करते हुए सत्याग्रहियों को दुश्चरित्र दण्डित अपराधी सिख कैदियों द्वारा उन्हें उकसा-कर अकारण ही निर्दयता के साथ पिटवाया गया हो और उनकी हड्डी पसलिया तोड दी गई हों। एक सत्याग्रही मर गया हो और सैकडो बुरी तरह घायल हो गए हों। अपने महान् पाप को छिपाने के लिए प जाब सरकार ने न्यायाधीश माननीय कपूर की रिपोर्ट को भी अभी तक पूर्णतया प्रका शित नहीं किया। बहुअकबरपुर ग्राम तथा चण्डी-गढ आर्यसमाज मन्दिर मे स्त्रियों का अपमान किया गया और "ओ३म्" के झण्डे को फाडा गया लुधियाना मे स्त्रियों तथा बच्चों तक को पुलिस द्वारा लाठी चाज से घायल कर दिया गया। अका-रण ही केवल सन्देह पर सैकडों लोगों तथा विद्या-र्थियों को गिरफ्तार कर उनसे बडी राशियों की जमानतें मागी जा रही है। इस समय आठ सहस्र पुरुष तथा एक सहस्र देविया जिनमे से कइयों की गोद मे नन्हे २ बालक हैं पजाब की जेलों मे सत्या-ग्रहियों के रूप मे बन्दी है।

संघर्ष सरकार के साथ न कि सिक्खों के साथ

आर्यसमाज का यह सघर्ष सरकार के साथ है और न कि सिखो के साथ। क्योंकि जो कुछ गलती की है वह सरकार ने सिखों के साथ एक गलत योजना बनाकर की है और सरकार के द्वारा ही उस गलती को आर्यसमाज ठीक कराना चाहता है। चाहे सरकार उस गलती को स्वय ठीक करे या सिखों के साथ मिलकर करे। यह सोचना समझना सरकार का काम है।

आर्य तथा हिन्दू सिखों को बराबर अपना भाई तथा सिख मत को विशाल आर्य धर्म की एक शाखा ही समझते हैं परन्तु इसके विपरीत मास्टर तारासिह, सरदार हुकमसिंह, ज्ञानी कर्तारसिंह आदि आर्य तथा हिदुओ को सदैव गैर समझकर वैमनस्य का प्रचार करते रहते है और प जाब मे झगडा करने, खून की नदिया बहाने और सन् १९४७ की पुनरावृत्ति करने की धमकिया खुले आम देते रहते है।

अकालियों तथा सरकार का उत्तरदायित्व

उपरोक्त इन सब तथ्यों को जानकर कौन ऐसा निष्पक्ष और विचारशील व्यक्ति होगा जो इस निर्णय पर नहीं पहुँचेगा कि प जाब मे फैले विषैले वातावरण तथा हिन्दी रक्षा आदोलन का पूर्ण उत्तरदायित्व मास्टर तारासिह, उनके साथियों, प जाब सरकार तथा भारत सरकार पर है और न कि लेशमात्र भी आर्यसमाज पर।

यह कसा स्वतन्त्र देश है और इसकी राष्ट्रीय तथा प्रजातन्त्र सरकार है जहा उसके एक प्रमुख प्रदेश मे उसकी राष्ट्रभाषा पर ही पाबन्दी लगा दी गई हो और उस पाबन्दी को हटवाने के लिए सारे प जाब मे अशाति का साम्राज्य हो।

जो भारत सरकार समस्त विश्व को अहिंसा, शाति, न्याय और पञ्चशील का दिन रात पाठ पढाती है, उसी के देश मे हिंसा, अशाति और अन्याय उसी सरकार की ओर से अपने ही देश-वासियों पर व्यवहार मे लाई जाती हो, तो उससे अधिक और क्या कहनी और करनी में अन्तर हो सकता है।

*

Gross Misuse of the Preventive Detention Act in Punjab

(*By G S Gupta*)

1 Having been connected with Satyagrah movement for the liberty of languages in Punjab, I have some information how in following their policy of ruthless repressions the Govt. have thrown to the winds all respects for law & legal procedure It would be no exaggeration to say that the rule of law has practically ended in Punjab so far as the Govt dealings with the Satyagrahis & their public supporters are concerned. There is a wholesale misuse of criminal law But my present purpose is to give some idea to the public in general & to our legislators in particular how grossly the provisions of the Preventive Detention Act have been misused by the Govt-in Punjab

2. Nothing will speak better than citing a few typical instances of the grounds of detention. These are given below—

A. Service of Humanity a Crime

(1) In the case of Shri Om Parkash Lamba, President of the Punjab Beopar Mandal one of the grounds of detention was that he donated blood for transfusion to Shri Lal Chand Sabarwal, M L A who had smashed his left arm while being removed in police van after offering his satyagrah at Chandigarh Shri Sabarwal was in Patiala Hospital on the verge of death on account of profuse bleeding and blood transfusion was needed to save his life

B Preaching Goodwill Between Different Communities Ground For Detention

(1) In the case of Mela Ram, Principal, D A V High School, Karnal a well known educationist of Punjab some of the grounds of detention are as follows.

(a) That on 12 8 57 in public meeting held under the auspices of Hindi Raksha Samiti, in the Arya Samaj Model Town, Karnal, from 8 30 P M to 10 30 P M with Ch Puran Singh Advocate in the chair, asserted that Hindi was their language of writing although they spoke Punjabi. You said that Hindi was the language of the Sikh Gurus even. to prove your assertion you said that the Vichar Natak written by Shri Guru Gobind Singh was in Hindi You also argued that the Sikhs and Hindus were one and the same and that they were being separated now by certain Akali leaders to maintain their leadership You condemned the alleged throwing of cigarettes in the holy Sarowar in Darbar Sahib and also alleged tearing of some leaves of certain religious book. You said that such mischievious acts should be condemned by all. You said that they could never and would never permit

such things to happen That was you said, shamefull

(b) On 10 8 57 public meeting held in Idgah Karnal from 8 30 P M to 10 P M. to accord reception to the Jatha led by S Sunder Singh of Saharanpur, under the auspices of Hindi Raksha Samiti, Karnal, with Shri Shanti Parkash in the chair, and attended by about 1200 persons you recited a poem in which you said that you would fight to the last for securing a rightful place for Hindi in the Punjab State You also delivered a speech in which you criticised Sachar Formula and maintained that you were not against punjabi language but wanted that the Hindi and Punjabi language should getequal status in the Punjab State

(C) In the case of Chaudhury Baru Ram Vakil M L A some of the grounds of detention are —

(1) That on 9 6 1957 in a rural conference (400/500) organised at Smalkha by Chaudhury Dharam Singh Rathi, M L A from 11 45 A M to 2 30, P. M. under your (Chaudhury Baru Ram) presidentship, you gave out, "Now I will let you have some thing about Hindi. Our people had raised a voice in favour of the Regional Formula as they thought that people of Jullundhur Division were against their interest and its solution was the Regional Formula This is why we raised a voice in its favour. But another thing has befallen us under the cloak of Regional Formula and Gurumukhi is being thrusted forcibly on the lovers of Hindi We are not against Gurumukhi as it is the 'Bani' of the Gurus We respect it, but it is laid down in the constitution that everybody was free in the matter of reading and writing, and the parents were at liberty to educate their children in whatever language they liked I will call upon the people of Haryana to be ready for offering maximum sacrifices for this agitation and take part in the same to their utmost. The matter of Hindi is a question of life and death for our Ilaqa, State and the Country. If we aspire that our 'Bangru (Local language) be taught in the schools, is it possible ? We protest against the thrusting of Gurumukhi on our children in schools and we will oppose it by following the principles of 'non violence.' Our Government is not prone to agree to only verbal things but if pressure is put on it, it yields soon. I will, therefore, appeal to you to take maximum part in this agitation"

B Criticism Of Government Policy As Ground For Detention.

(1) In the case of Ram Gopal son of Shri Sugam Chand of Panipat one of the grounds of detention was —

(a) That on 18-8 1957, you addressed a public meeting held at Fort Ground,Panipat and you declared that the present Government was worse than the British rule and there was no freedom of speech and expression and that the Black Law (the Preventive Detention Act) was being patronised by the Congress Government.

(2) In the case of Shri Harish

Chandra son of Shri Ram Sarup of Jind District Sangrur, the ground of detention was —

(a) That on 15 8 195 , in a public meeting (125/150) from 8 45 P M to 10-15 P M convened by the Hindi Rakhsha Samiti Jind in Mandir Arya Samaj Jind, presided over by Master Badri Prasad, you acted as stage secretary You excited the Public by criticising the Government for arresting the Satyagrahis at Rohtak on the occasion of Independence Celebration when so many prisoners were being released at the same time Thus you created dissatisfaction towards the Government You further exhorted the audience to support the agitation

(b) That on 23 8 1957 you again acted as stage secretary of the Hindi Raksha Samiti Jind sponsored public meeting (500/550) in Mandir Arya Samaj Jind from 8 30 P M to 10 p M presided over by Shri Satya Narain Vakil of Jind which was convened to protest the arrest of Ch Ram Singh Advocate of Jind In that meeting you criticised the Government that it was afraid of the 'Kirpans' of the Sikhs and was following a policy of 'divide and rule' Thus you brought about dissatisfaction towards the Government

(2) That on 18 6 1957, a public meeting (250) was convened by the Hindi Raksha Samiti at Kaithal from 8 30 P M to 10 P M None presided but Shri Brijlal of Kaithal acted as stage secretary You, in the course of your speech, observed that the opposition party in the State Assembly had strongly opposed the alleged malpractices of Kairon Ministry You advocated the stand taken by the Hindi Raksha Samiti and gave out that almost all the M L As. of the Haryana Ilaqa had supported the view point of the Samiti You said that the agitation was bound to succeed and exhorted the audience to remain united and firm to force the acceptance of their demands You asserted that the congress Government had the tendency to yield to pressure and unity You declared that you would respond to the call of the Samiti and would offer satyagrah if and when called upon to do so

C Absurd & False Charges To Support Detention

(1) In the case of Dr Lal Chand, (host of Swami Atma Nand President of the Hindi Raksha Samiti who initiated the satyagrah in the Punjab) Shri Bhagwan Das, Principal, D A V Colleg, Ambala, Fellow of the Punjab University and Shri N D Grover, M Sc Professor, D A. V College Ambala, all the three were detained and one of the grounds against all of these detenus was that they held secret meeting at the house of principal Bhagwan Das and decided to intensify the satyagrah by raising suicidal squads armed with acid bottles and small hand grenades who would lead each Jatha of Satyagrah in order to harass the police force The meeting was alleged to have taken place on 8-7 57 and the gentlemen were arrested after over a month The absurdity of the allegation is clear that nothing of the kind was ever done by any Satyagrahi although the alleged plan was on 8-7-57, nor

the police searched or recovered any acid bottle or hand grenade

(ii) In the case of Shri Shyam Sunder Katyal of Rohtak one of the grounds fo detention was that he delivered certain speeches on the 9th August, 1957 at Rohtak while as a matter of fact he was confined in jail on that date

High Court strictures against Punjab Government

(1) In the case of Lajpat Rai, M L A, Ludhiana the High Court while releasing the detenu observed as follows

"That it cannot be assumed as a matter of course that the deta ining authority exercised its minds in an Intelligent manner in regard to the case against the detenu and inasmuch as it did not do so it cannot be said to have acted in law honestly"

The High Court concluded

"In this case I have not been able to discover even one solid reason which I can say is free from extraneous construction. In the circumstances of this case I find that both the reasons and grounds are vague, foreign and extraneous to the purpose of the Act"

4. Needless to say that in all the above cases the detenues were let off Instances could be multiplied But the patent fact that I would like to mention is that out of about 125 persons detained by the Punjab Govt. under the Preventive Detention Act as many as over 70 percent that is to say about 90 detenues have been released This shows how the Act has been made a convenient tool by the Government in power for detaining persons on fantastic grounds in the name of security of the State of the maintenance of public order There can be no better proof of misuse of the provisions of this Act by the officers of the Government in Punjab than that out of those detenues whose cases had been examined by the Advisory Board, Government had to order release of more than 70 percent on the recommendation of the Advisory Board or order by High Court or Supreme Court The cases of other detenues are pending in the courts Up to this time, there is not a single case in which detention has been finally held to be valid The provision regarding review by the Advisory Board hardly helps the innocent detenu from harassment because generally it takes about two to three months to get his release By that time the purpose of the Govt. however malafide it be is served

One has only to compare all these acts with the assurances given by the ministers incharge to the Members of Parliament from time to time on the floor of the House wherever this Act came up for discussion Despite strong ptotests from members of Lok Sabha and the Rajya Sabha the life of this Act was extended for three years in Dec 1954 Dr Katju, the then Home Minister had to meet severe criticism from the opposition and the Act was given new life for three years in teeth of strong opposition. The Home Minister during the debate gave solemn assurance on the floor of the house that the Provisions

हिन्दी सत्याग्रह की दैनिक प्रगति

१६-११-५७ से १५-१२-५७ तक

१६ नवम्बर—आज चण्डीगढ मे १८ महिलाओं ने सत्याग्रह किया।

हिन्दी रक्षा समिति करनाल के सयुक्त मन्त्री वद्य नारायणदत्त जो आज एक जत्था ले जानेवाले थे तथा प्रसिद्ध आर्य श्री गोविन्दराम जी दफा १६८ ११७ मे गिरफ्तार गिए गए। इन दोनो ने पुलीस को गिरफ्तारी के वारन्ट दिखाने के लिए कहा परन्तु पुलीस उन्हें बलात् पकडकर ले गई और हवालात में बन्द कर दिया।

हरिजन नेता वैद्य रामदयाल के नेतृत्व मे ५ सत्याग्रहियों के एक जत्थे ने सत्याग्रह किया। गिरफ्तारी से पूर्व वैद्य जी ने आर्य समाज मन्दिर में आयोजित एक सार्वजनिक सभा मे भाषण दिया।

आज रोहतक मे इन्दौर के १० सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

कल १५ ११ ५७ को श्रीयुत प० रामचन्द्र जी देहलवी तथा उनके ८८ सत्याग्रहियों का अभियोग हिसार के श्री फौजासिह ए० डी० ऐम० की अदालत में पेश हुए जो डिस्ट्रिक्ट जेल में लगी।

इस्तगासे की ओर से कहा गया कि श्री देहलवी जी तथा उनके साथियों ने करनाल रेल्वे स्टेशन पर जलूस निकाल कर और हिन्दी समर्थक नारे लगा कर १४४ धारा को तोडा।

सफाई के वकील श्रीचन्द ऐडवोकेट ने कहा कि पुलीस ने उन्हें जबरदस्ती रेल के डिब्बो से निकाला वे साधारण यात्रियो के रूप मे सत्याग्रह करने जालन्धर जा रहे थे और इसकी उन्होंने पूर्व ही घोषणा कर दी थी। वकील ने यह भी कहा कि जबकि अदालत जेल के भीतर लग रही है और सत्याग्रही जिम्मेवार नागरिक हैं तब हथकडियों का प्रयोग अनावश्यक है।

श्री के० सी० ग्रोवर स्पेशल मजिस्ट्रेट ने ७२ सत्याग्रहियों को दण्ड दिया। श्री धर्मपाल बजाज सीनियर उपप्रधान पजाब व्यापार मडल ने २३-७-५७ को चडीगढ के ३४ सत्याग्रहियों के साथ सत्याग्रह किया था। इनमे से प्रत्येक को १-१ मास का सपरिश्रम कारावास तथा १००) जुर्माने का दण्ड दिया गया। इसी प्रकार का दण्ड ११ अन्य सत्याग्रहियों को मिला जिन्होंने १४ ७-५७ को चडीगढ

---

of the Act will not be used to su press any poltical party in the coun try He emphatically stated that political opinion was never a ground for detention under the Act The Hon'ble Minister challanged the critics to quote a single instance where this Act had been abused Perhaps it was Shri Rajagopala charya wno while piloting the Bill in his time gave assurance to the Hon'ble Members and the public that action would be taken against officers if they misuse their power under the Act It remains to be seen how far the authorities honour the solemn assurances of their Ministers I would request the public in genral & our Legislators (our guardians) in particular to get a judicial enquiry in the working of the Act in Punjab, for the sake of personal liberty of the citizens of this great democratic Country of the world

× × ×

में सत्याग्रह किया था। १६-७-५७ को चंडीगढ़ में जिन आठ साधुओं ने सत्याग्रह किया था उन्हें १-१ मास की सादी सजा दी गई। अन्य २६ सत्याग्रहियों को १-१ मास की सख्त सजा तथा ५०-५०) के जुर्माने का दण्ड हुआ।

श्री जे० ऐन० वर्म्मा अतिरिक्त डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने कपूरथला मे १३८ सत्याग्रहियों को १० दिन से लेकर १ मास तक का सपरिश्रम कारावास का दण्ड दिया।

१७ नवम्बर—अम्बाला के कैन्टोमेन्ट मजिस्ट्रेट ने कलकत्ता के जागृतिपत्र के सम्पादक श्री जगदीश चन्द्र हिमकर तथा २० अन्य हिन्दी सत्याग्रहियों को जो पश्चिमी बगाल के है १ मास के सपरिश्रम कारावास का दण्ड दिया। उन्हे ६ सप्ताह पूर्व चण्डीगढ जाते हुए गिरफ्तार किया गया था।

बम्बई के १८ सत्याग्रहियो को जिनका नेतृत्व श्री धर्मप्रकाश बगा कर रहे थे १४४ धारा तोड़ने पर १ मास के कारावास का दण्ड दिया गया।

रोहतक के १४३ सत्याग्रहियों को भी रोहतक के अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट ने जिन्होंने अम्बाला जेल मे अदालत लगाई थी, अदालत के उठने तक की सजा दी गई। उन्हें रोहतक में ३ मास पूर्व गिरफ्तार किया गया था।

विशेष मजिस्ट्रेट श्री भनोट ने भी ६४ सत्या ग्रहियों को जो १४४ धारा तोड़ने के आरोप में गिरफ्तार किए गए थे १-१ मास के कारावास तथा १०-१०) जुर्माने की सजा सुनाई।

४८ अन्य सत्याग्रहियो को भी जिन्हे गैर कानूनी मजमा करने के आरोप में गिरफ्तार किया गया था ४५ दिन के सपरिश्रम कारावास की सजा दी गई। अन्य तीन को इसी आरोप मे १-१ मास की सजा दी गई।

अमृतसर, जालन्धर, फीरोजपुर और करनाल में आज ७६ हिन्दी सत्याग्रही गिरफ्तार किए गए।

जालंधर और अम्बाला डिवीजन के आर्यसमाजी नेताओं ने आज १ सम्मेलन में सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति से अनुरोध किया कि यदि भाषा समस्या पर कोई समझौता न हो तो दिल्ली मे भी सत्याग्रह आरम्भ किया जाय। इस सम्मेलन मे जालन्धर और अम्बाला डिवीजनों के आर्यसमाजों के प्रधान व मन्त्री उपस्थित थे। इसके अतिरिक्त आर्य प्रतिनिधि सभा व प्रादेशिक सभा की कार्य कारिणियो के सदस्यों तथा श्री स्वामी आत्मानन्द जी, महात्मा आनन्दस्वामी जी, श्री महात्मा आनन्द भिक्षुजी तथा सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के प्रतिनिधियो ने भाग लिया। सम्मेलन का प्रधानत्व सार्व० भाषा स्वातन्त्र्य के कार्यकर्त्ता प्रधान श्री प० नरेन्द्र जी ने किया—सम्मेलन ने आर्य जनों को अपील की कि वे धन समह और जत्थों के लिए नाम लिखाने का आन्दोलन तेज करे। श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी ने सुझाव दिया कि सत्याग्रही अपने परिवार के सदस्यों के साथ जिनमें महिलाए और बच्चे भी शामिल हो सत्याग्रह करें।

आज दिल्ली मे पजाब के भूतपूर्व मन्त्री श्री शेरसिंह जी को पजाव पुलीस ने निवारक अधिनियम के अधीन गिरफ्तार किया।

वे १५० सत्याग्रहियों के एक जत्थे के साथ कल चडीगढ जाने वाले थे। प्रोफेसर साहब ने दीवान हाल मे आयोजित एक विराट सभा में भाषण दिया।

१८ नवम्बर—आज आर्य समाज एव हिन्दी रक्षा समिति पानीपत, करनाल और कैथल के २५ कार्यकर्ताओं को षडयंत्र आदि के अभियोग मे गिरफ्तार किया गया। गिरफ्तार होने वाले व्यक्तियों मे कुछ व्यक्ति अभी कुछ दिन हुए नजरबन्दी से मुक्त हुए थे जिनमे श्री बाबूराम एम० एल० ए० भी सम्मिलित है।

कुल गिरफ्तारिया ६० हुई। १८ लुधियाना, १२ चंडीगढ़ ५ अमृतसर मे।

इनके अतिरिक्त हिसार मे ४ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए जिनका नेतृत्व श्री महावीर प्रसाद कर रहे थे।

१९ नवम्बर—कुल १०० गिरफ्तारिया हुई ।

अम्बाला मे रोहतक के १५ सत्याग्रहियों को चडीगढ जाते समय दफा १४३ मे रोका गया और वे अदालत के उठने तक का दण्ड देकर छोड दिए गए ।

भिवानी मे १२, जिनमे ६ राजस्थान के सत्याग्रही थे, करनाल मे ४५ चडीगढ मे १०, कैथल मे ८, रोहतक मे ५ और हिसार मे ४ गिरफ्तार हुए । करनाल मे गिरफ्तार होने वालों मे २३ रोहतक के, १ राजस्थान का तथा १५ यू० पी० के सत्याग्रही थे जिनका नेतृत्व चौ० बलवीरसिंह ऐडवोकेट ने किया । श्री बलवीरसिंह अभी कुछ दिन हुए नजरबन्दी से मुक्त हुए थे और फरार घोषित होकर उनकी सम्पत्ति जप्त की गई थी।

२० नवम्बर—आज ५२ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए । १९ सत्याग्रहियो ने जिनमे ७ देविया भी थीं वर्षा मे चडीगढ मे सत्याग्रह किया जिनमे से एक की गोद मे १ बच्चा था ।

अमृतसर मे ५ स्थानीय सत्याग्रही गिरफ्तार हुए । यू० पी० के मिर्जापुर जिले का ८ सत्याग्रहियो का जत्था चण्डीगढ जाते हुए जगाधरी स्टेशन पर गिरफ्तार हुआ । इस जत्थे का नेतृत्व श्री देश मित्र कर रहे थे ।

करनाल मे स्वामी दर्शनानन्द जी के नेतृत्व में राजस्थान का ५ सत्याग्रहियों का एक जत्था गिरफ्तार हुआ ।

फाजिलका मे १३ सत्याग्रहियों का एक जत्था रोहतक मे ५ सत्याग्रही (२ गुडगाव के २ सगरूर के और एक रोहतक) गिरफ्तार हुए ।

हिसार मे ६-६ सत्याग्रहियों के २ जत्थे गिरफ्तार हुए जिनमे १ राजस्थान का जत्था था ।

नवम्बर २१—पजाब हाईकोर्ट की डिवीजन बैंच ने प्रताप और वीर अर्जुन जालन्धर के सम्पादक श्री वीरेन्द्र जी की हैबियस कार्पस प्रार्थना पत्र स्वीकार कर लिया जिसमे उनका नजरबदी का आर्डर रद्द करने की प्रार्थना की गई थी ।

अमृतसरमे जम्मूका २१सत्याग्रहियों का जत्था जिसमें १३ देवियां भी थीं जालन्धर मे ६ सत्याग्रही रोहतक मे, १५ सत्याग्रही चण्डीगढ मे, ६ लुधियाना मे, ८ गिरफ्तार हुए ।

करनाल समाज के प्रधान श्री लालचद तथा १ और सज्जन करनाल मे गिरफ्तार हुए ।

१९ ता० को हिन्दी रक्षा समिति भिवानी ने सरदार प्रतापसिह कैरों के आगमन के प्रतिवाद स्वरूप २ जलूस निकाले । पुलिस ने २० व्यक्तियों को गिरफ्तार किया । स्कूल के कुछ लडकों को पीटा ४० गिरफ्तार किए गए । ३ विद्यार्थी अब तक हवालात मे है । मुख्य मन्त्री के आगमन पर नगर मे पूर्ण हडताल रही ।

२२ नवम्बर—आज कुल ७५ गिरफ्तारिया हुईं ।

करनाल मे १९, घरोडा मे १३, (श्री रामसिंह प्रधान जालधर मण्डल कांग्रस कमेटी) चडीगढ मे १२, अमृतसर मे ६, सगरूर मे ४, गुडगाव के ग्राम मे २१ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए ।

करनाल के जत्थे में रोहतक जिले के १६ कांग्रेसजन है जिनका नेतृत्व चौ० छोटूराम आर्य कर रहे थे ।

सगरूर के जत्थे का नेतृत्व श्री सोहनलाल जी कर रहे थे ।

नवम्बर २३—आज अमृतसर मे ५, चण्डीगढ मे १९, तथा जालन्धर मे २१ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

अमृतसर मे गिरफ्तार होने वाले सत्याग्रहियों में २ दिल्ली के और ३ अमृतसर के थे ।

चौधरी बाबूराम एम० एल० ए० हिन्दी रक्षा समिति के कार्यवाहक प्रधान थे । विजयसिंह हिंदी समितिके अन्य ११कार्यकर्त्ताओं केसाथ जो १८-११-५७ को करनाल डिस्ट्रिक्ट कोर्ट मे गिरफ्तार हुए थे जमानत पर रिहा हो गए ।

महेन्द्रगढ के ७ हिन्दी कार्यकर्त्ताओं को एम० आर० भगत मजिस्ट्रेट की अदालत से २-२ मास की सादी सजा हुई ।

१० अन्य सत्याग्रहियों को जिनमें १ सत्याग्रही लखनऊ का मुसलमान था १ १ मास की सादी सजा दी गई।

फर्रुखाबाद के ७ सत्याग्रहियों के जत्थे को १॥ १॥ मास की सख्त कैद का दण्ड दिया गया। करनाल और पानीपत के ६ सत्याग्रहियों को २॥ २॥ मास का कारावास का दण्ड दिया गया।

२४ नवम्बर—कुल गिरफ्तारिया ४४ हुई, रोहतक और कानपुर के १० हिन्दी सत्याग्रहियों से २२-११-५७ को हिसार जेल मे सरदार बलबीर सिंह रधावा ए० डी० एम० ने नेक चलनी के ३००० ३०००) की जमानतें मागी।

चण्डीगढ मे १६, अमृतसर में १४ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए। जालन्धर के मजिस्ट्रेट श्री ईसरदास ने ४४ सत्याग्रहियों का जिनमे १३ महिलाए और बच्चे भी है २-१२-५७ तक रिमाड दिया।

पजाब सरकार इस समय तक हिन्दी आदोलन पर २० लाख रुपया खर्च कर चुकी है।

२५ नवम्बर—श्रीयुत घनश्यामसिंह जी गुप्त ने हिन्दी परिषद् के प्रचार मन्त्री श्री रामकृष्ण गर्ग के स्वागतार्थ आयोजित दिल्ली मे वकील सम्मेलन मे भाषण दिया।

हिन्दी रक्षा समिति के उपाध्यक्ष श्री मदनलाल गुप्त तथा रामा मण्डी के श्री ओ३म् प्रकाश को २ मास की हिरासत के बाद पटियाला जेल से छोड दिया गया। सलाहकार बोर्ड की सलाह पर ही छोड़ा गया है।

२४-११ ५७ को अमृतसर मे जो १४ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए उनमे ४ देविया भी थीं जिनका नेतृत्व श्रीमती मायादेवी कर रही थीं।

संगरूर के अतिरिक्त डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने ३० सत्याग्रहियों को ३-३ मास का सपरिश्रम कारावास का दण्ड दिया। ८ सत्याग्रही आगरे के, ६ मध्य-प्रदेश के, ६ करनाल के ७ लोहारू और ७ इदौर के थे।

आज श्री प० रामचन्द्र देहलवी तथा उनके सत्याग्रहियों का केस पुन. प्रस्तुत हुआ। प० जी ने अपने लिखित बयान मे इल्जामों की इस कहानी को चुनौती दी कि उन्हें प्रतिबन्ध तोडने के अपराध मे गिरफ्तार किया गया था। उन्होंने कहा कि हम सत्याग्रह करने जालन्धर जा रहे थे। सरदार बलदेव सिंह और उनके पुलिस दल ने बिना लिखित आर्डर दिखाए हमे जबरदस्ती रेल से उतार लिया। उन्होंने यह भी कहा कि मैने सत्याग्रह करने की सूचना राष्ट्रपति महोदय तथा प्रधान मन्त्री को भी तार द्वारा दे दी थी।

२६ नवम्बर—आज पजाब मे ४६ सत्याग्रही गिरफ्तार किए गए।

चण्डीगढ मे ८, जींद में १५, अमृतसर मे ५, हिसार मे १० सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

अमृतसर मे गिरफ्तार होने वालो मे ३ सत्याग्रही बिहार के और २ अमृतसर के थे। अमृतसर मे अब तक ८६० गिरफ्तारिया हो चुकी है।

हिसार मे श्री भगवान देव के नेतृत्व मे सत्याग्रह हुआ।

२७ नवम्बर—सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति ने १ दिसम्बर को हिन्दी सत्याग्रह दिवस मनाने की अपील की क्योंकि उस समय सत्याग्रह को ६ मास पूरे होंगे।

सुप्रीम कोर्ट ने श्री धर्मसिंह राठी को नजरबदी से मुक्त किया।

२८ नवम्बर—आज पजाब राज्य सरकार ने यह स्वीकार किया कि २४-११-५७ तक ७५२५ हिंदी सत्याग्रही गिरफ्तार हुए है। इस समय ५०७७ सत्याग्रही पजाब की जेलों मे बन्द है। इनमे २५ नजरबन्द २८७७ दडित २१७५ विचाराधीन है।

आज पजाब के विभिन्न स्थानों पर २७ हिन्दी सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

लुधियाना मे ६, अमृतसर में ६, चण्डीगढ मे ५, करनाल मे ५ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

करनाल के जत्थे ने खडगपुर के श्री महेन्द्र प्रताप के नेतृत्व में सत्याग्रह किया। करनाल के श्री खैराती लाल तथा श्री ब्रह्मप्रसाद जी भी गिरफ्तार हुए।

३० नवम्बर—आज हिंदी रक्षा आंदोलन अपने ७वें महीने में प्रविष्ट हुआ।

कुल गिरफ्तारियां ३३ हुईं।

करनाल में हिंदू दुकानदारों ने पंजाब सरकार की दमन नीति के प्रतिवादस्वरूप हड़ताल रखी। दयालसिंह कालेज करनाल के बहुसंख्यक विद्यार्थी श्रेणियों को छोड़कर बाहर चले गये और जलूस निकाला। जब हिंदी रक्षा समिति और आर्यसमाज को विदित हुआ कि सरदार प्रतापसिंह कैरों नहीं आते हैं तो हड़ताल खोल दी गई।

अमृतसर में ४ व्यक्ति करनाल में ११ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए। करनाल के जत्थे का नेतृत्व श्री अर्जुनदास ने किया।

१ दिसम्बर—जालन्धर में २५ और अमृतसर में २२ सत्याग्रही जिनमें १२ देवियां भी सम्मिलित थीं गिरफ्तार हुए। अमृतसर के जत्थे का नेतृत्व मास्टर भोलाराम जी दिलावारी ने किया। अमृतसर के उस जत्थे में १ पुरुष अमृतसर के, ६ उत्तरप्रदेश के थे और १२ देवियां गुरुदासपुर की थीं।

आज पुलिस ने चौड़ा बाजार लुधियाना में हिन्दी समर्थकों की एक भीड़ पर लाठी प्रहार किया और ४८ हथगोले छोड़े जिसके कारण दर्जनों व्यक्ति आहत हो गए। जब १३ देवियों का जत्था जलूस के साथ चौड़ा बाजार में पहुंचा तो पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार करने का यत्न किया। हजारों नर नारियों ने जो हिन्दी समर्थक नारे लगा रहे थे मांग की कि महिला पुलिस को बुलाकर गिरफ्तारी की जाय। पुलिस की २ महिला आई और सत्याग्रही देवियां पुलिस की लारी में बैठ गयीं। श्री अमरजीतसिंह मजिस्ट्रेट के आते ही स्थिति खराब हो गई।

३ दिसम्बर—आज चण्डीगढ में १३ और करनाल में ८ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

अमृतसर नगर के गुरुदासपुर की जेल में बन्द ३३ सत्याग्रहियों को १-१ मास की सख्त सजा और ५०)-५०) के जुर्माने का दण्ड दिया गया। इसी प्रकार अमृतसर की जेल में ६७ सत्याग्रहियों को दण्ड दिया गया।

धूरी में ३ दिसम्बर को १२ सत्याग्रही गिरफ्तार किए गए। इनका नेतृत्व आर्यसमाज के मन्त्री सेठ अनन्तरामजी कर रहे थे।

करनाल में बिहार के ४ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए जिनका नेतृत्व श्री सीताराम प्रसादजी ने किया इससे पूर्व ८ सत्याग्रहियों का जत्था जिसका नेतृत्व बिहार के शिवानन्द तीर्थ कर रहे थे गिरफ्तार हुआ। अमृतसर में ६ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

४ दिसम्बर—फीरोजपुर के मजिस्ट्रेट श्री सुखदेव प्रसाद ने २२ सत्याग्रहियों को जिनमें पंजाब हाईकोर्ट के जस्टिस खोसला के पिता श्री मुरारीलाल खोसला भी सम्मिलित हैं अदालत के उठने तक का दण्ड दिया। ११७ सत्याग्रहियों को १-१ मास की सादी कैद की सजा दी गई। श्री साहीराम एम० एल० ए० को १ मास के सपरिश्रम कारावास का दण्ड दिया गया।

जालन्धर में ६ देवियां ७ बच्चे और ३ पुरुष सत्याग्रही, चण्डीगढ में २ गिरफ्तार हुए इनमें १ अन्धा सत्याग्रही भी था।

अमृतसर में १८ तथा सिरसा में १६ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए। सिरसा भी सत्याग्रह का केन्द्र बन गया है।

५ दिसम्बर—आज (पी० टी० आई० की रिपोर्ट के अनुसार) ४७ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

अमृतसर ४, रोहतक ६, चण्डीगढ ३, अम्बाला ६, करनाल ५, गुड़गावां ५, लुधियाना १६।

अमृतसर के जत्थे का नेतृत्व श्री महगाराम ने किया रोहतक के सत्याग्रहियों में ३ ग्वालियर के और ३ अलीगढ के थे। लुधियाना में जो जत्था गिरफ्तार हुआ था उसके नेता नागपुर की भाषा स्वातन्त्र्य समिति के प्रधान श्री स्वामी दिव्यानन्द जी हैं।

६ दिसम्बर—श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज ने जगाधरी में प्रेस प्रतिनिधियों को बताया कि गवर्नमेंट के समझौता विरोधी रुख को देखते हुए सत्याग्रह को और उग्र किया जायगा। अब तक

समिति की समस्त मांगें स्वीकृत नहीं होतीं तब तक सत्याग्रह न तो बन्द होगा और न स्थगित।

७ दिसम्बर—करनाल में पीलीभीत (उत्तर प्रदेश) का ६ सत्याग्रहियों का १ जत्था गिरफ्तार हुआ।

८ दिसम्बर—६० सत्याग्रही जिनमे २६ महिलाएं भी सम्मिलित थीं, पजाब के विभिन्न नगरो मे गिरफ्तार हुए।

जालन्धर मे २६ (१६ महिलाओं सहित), अमृतसर मे ११ (३ महिलाओं सहित), लुधियाना मे २० (७ महिलाओ सहित) सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

जालन्धर मे जम्मू, होशियारपुर, दिल्ली, यू० पी० और जालन्धर के सत्याग्रहियो ने सत्याग्रह किया।

६ दिसम्बर—आज पुलिस ने आर्य समाज जालन्धर मे श्री महात्मा आनन्द भिक्षु जी को गिरफ्तार किया। सरदार दलीपसिंह सिटी इन्स्पेक्टर ने आर्यसमाज मन्दिर मे चारों ओर घेरा डालकर अमृतसर मे आपत्तिजनक भाषण देने के अपराध मे दफा १८८ मे गिरफ्तार किया।

पजाब सरकार ने फीरोजपुर जेल काड के सिलसिले मे जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट शेरसिह तथा १० अन्य जेल कर्मचारियों को आरोपपत्रक दे दिया। इन सब को उत्तर के लिए ३ सप्ताह दिए गए हैं।

चण्डीगढ में ७, करनाल मे १६ और अमृतसर में २ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

करनाल में गुरुकुल भैंसवाल के विद्यार्थियो का जत्था गिरफ्तार हुआ।

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के प्रधान श्री घनश्यामसिह जी गुप्त ने आज एक प्रेस वक्तव्य निकालकर पंजाब राज्य में निवारक निरोध के कानून के दुरुपयोग की जुडिशियल जांच करने की मांग की।

१० दिसम्बर। आज हिन्दी समर्थकों ने कांग्रेस अध्यक्ष श्री ढेबर भाई का गाजियाबाद मे काले झण्डो से स्वागत किया। जब कि वे स्थानीय कालेज मे भाषण देकर दिल्ली लौट रहे थे। इसके पूर्व हिन्दी समर्थकों के एक शिष्टमंडल की उनसे बात चीत हुई जिस मे उन्होंने केन्द्रीय गवर्नमेंट के उपेक्षा भाव की शिकायत की। श्री ढेबर महोदय ने उत्तर दिया कि गवर्नमेंट की नीति गलत समझी गई है।

श्रीयुत सेठ गोविन्दास जी ने हिन्दुस्तानी एकाडमी के वार्षिक अधिवेशन के अध्यक्ष पद से कहा कि अहिंदी भाषा भाषी क्षेत्रो मे हिंदी को बलात् लादना न चाहिए।

६ मास मे ६ हजार से अधिक सत्याग्रही गिरफ्तार हुए ११८ समिति के नेताओ को निरोधक नजरबदी कानून के अधीन नजरबद किया गया था। अब ८ हजार सत्याग्रही राज्यकी जेलों मे तथा २८ कार्यकर्ता नजरबद है।

सरकारी नोट मे बताया गया है कि २६ नवम्बर तक ७६६५ व्यक्ति गिरफ्तार किए गए। इन आकडो को सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति प्रामाणिक नहीं मानती।

हिसार की बोर्स्टल जेल मे बद बम्बई के एक मुसलमान सत्याग्रही श्री मोलाबख्श ने प्रतिज्ञा की कि वह रिहा होकर हिन्दी सत्याग्रहियो का एक जत्था लेकर जायेगे जिस मे केवल मुसलमान ही शामिल होगे।

पजाब सरकार ने उन सत्याग्रहियों को नकद मुआवजा देने का निश्चय किया है जो फीरोजपुर जेल मे हुए अत्याचारो के परिणाम स्वरूप अपग या नाकारा हो गए। चण्डीगढ मे ६ संगरूर मे ५ और अमृतसर मे ५ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

११ दिसम्बर। संगरूर के सेशन जज ने ६१ हिन्दी सत्याग्रहियों की अपील स्वीकार करते हुए उन्हें रिहा कर दिया है। रिहा होने वाले सत्याग्रहियों मे मध्य प्रदेश, आगरा तथा अन्य स्थानों के अतिरिक्त २५ सत्याग्रही संगरूर थे।

चण्डीगढ में ६, धुरी में ५, होशियारपुर में ११, अमृतसर मे ५ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

रोहतक के शोरी मार्केट के मुख्य २ व्यापारियों को पुलीस की ओर से आए दिन धमकियां दी जा रही हैं कि यदि उन्होंने हिन्दी आन्दोलन के लिए धन जन की सहायता दी तो उनके विरुद्ध कठोर कार्यवाही की जायगी। मार्केट के चौधरी रामदित्ता मल सेठ उत्तमसिह और ब्रह्मानन्द जी को केवल इसलिए सजा दी गई कि उन्होंने श्री श्यामसुन्दर कात्याल के समर्थन मे एडवाइजरी बोर्ड के समक्ष सत्य गवाही दी थी जिस से पुलीस के झूठ का पर्दा फाश हुआ था तथा कत्याल निर्दोष रिहा कर दिए गए थे।

१२ दिसम्बर। गुरुदासपुर जिला जेल मे बद ७० के लगभग विचाराधीन हिन्दी सत्याग्रहियों ने जिला न्यायाधीश गुरुदासपुर को नोटिस दिया है कि यदि १३ दिसम्बर तक उनके मुकदमों की सुनवाई न हुई तो वे भूख हडताल कर देंगे।

रोहतक के जिलाधीश ने एक प्रेस सम्मेलन मे बताया कि जिला रोहतक मे हिन्दी आन्दोलन के सिलसिले मे अब तक १६७६ गिरफ्तारियां हुई है। १०२५ मुकदमो का फैसला हो चुका है तथा ४०० सत्याग्रही सजा भुगत कर रिहा हो चुके है। ८ हिंदी सत्याग्रही नेताओं को नजरबद किया गया तथा ६६१ सत्याग्रहियों के विरुद्ध धारा १०७-१५१ के अधीन कार्यवाही की गई।

६ दिसम्बर को रोहतक में उत्तर प्रदेश के सुयोग्य प्रचारक श्री वेगराजसिंह के नेतृत्व मे १५ वीरो ने सत्याग्रह किया पुलीस सब को पकडकर थाने मे ले गई और डरा धमका कर उन्हें लौट जाने पर माफी मागने को कहने लगे। उन वीरा ने दृढतापूर्वक मना कर दिया। इस पर सिपाही श्री वेगराज सिंह को पेड से बाधकर कोडों से पीटने लगे। उनके कई और भी साथियों को जिन में उनके साथी भजनोपदेशक श्री रत्नसिंह भी थे इसी प्रकार बुरी तरह पीटा गया। जत्थे के ७ व्यक्तियों को लारी मे डाल कर नरेला के पास जगल मे छोड़ दिया और शेष को जेल मे भेज दिया।

१३ दिसम्बर। अम्बाला मे १२ (चण्डीगढ जाता हुआ देवियों का जत्था) जो शर्वतीदेवी के नेतृत्व मे जा रहा था और जिस मे पजाब हिन्दी रक्षा समिति के सयोजक श्री डा० हरिप्रकाश की पत्नी श्रीमती सुशीलावती अम्बाला हिन्दी समिति के सयोजक श्री वेदप्रकाश की धर्मपत्नी श्रीमती विमला वती और पजाब हिन्दू विद्यार्थी सभा के मन्त्री श्री बीरबल की सम्बन्धिनी श्रीमती धनवती देवी भी है। ये महिलाए सत्याग्रह करते समय ५ बच्चो को लिए हुए थीं। चण्डीगढ मे १२, करनाल मे ४, सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

१४ दिसम्बर। चण्डीगढ मे १०, अमृतसर मे ७, रोहतक ७ महेन्द्रगढ मे २० सत्याग्रही गिरफ्तार हुए।

४४ हिंदी सत्याग्रहियों को १-१ मास का कठोर कारावास और १-१ सौ रुपया जुर्माने का दड दिया गया। अन्य २६ सत्याग्रहियो को ३ ३ मास का सश्रम कारावास का दड और ५० ५० रु० जुर्माने का दड दिया गया।

आज श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी तथा ४ अन्य सत्याग्रही सगरूर जेल से मुक्त हुए।

१५ दिसम्बर। जेलों के उपमन्त्री म० बनारसी-दास के कथनानुसार हिंदी रक्षा आदोलन के सिल-सिले मे पजाब की जेलों मे ४३२२ हिंदी प्रेमी कैदी हैं और २५ नजरबद।

पजाब सरकार ने अपने विभिन्न विभागों को आदेश जारी किए है कि हिंदी और पजाबी मे भी आवेदन पत्र स्वीकार किए जावें तथा उन आवेदन-पत्रों का उत्तर उसी भाषा मे दिया जाय।

Statement issued by Shri G. S. Gupta President Sarvadeshik Bhasha Swatantrya Samiti.

"From the talks that I had with the Congress President, Shri Dhebarji Bhai and the Union Home Minister, Pandit G B Pant, on the 23rd and 24th instant as also from the action of the Government in continuing to effect general release unconditionally of all those arrested in connection with our Satyagraha, it is now apparent to me that their motive is a gesture of goodwill as intended in our resolution of the 22nd instant In terms thereof, the Arya Samaj can not fail to respond to that gesture I, therefore, by the authority vested in me by the Sarvadeshik Bhasha Swatan trya Samiti, suspend the offering of Satyagraha in connection with our language movement in Punjab I have no doubt that all the concomitants of goodwill and change of heart are to follow and all issues will be finally settled I hope and trust that we will all be in a position to usher in that era of peace and goodwill in which the combined efforts of all will produce that unity of heart which will be a source of strength not only to the border State of Punjab but to the whole of India "

"On behalf of the Arya Samaj World I must express not only our thanks but also our gratefulness to all those who have joined us or given us their help, support and cooperation I have every hope that the Arya samaj will, in future, also, continue to receive in full measure their sympathy and support in all its just efforts, activities, and movements "

"To the Arya Samaj world I must appeal to remain solidly united in consonance with our high traditions Without that no organisation can for long, remain truly great We have to remain strong and determined. But in all that we must continue to have humility born of abiding faith in the Almighty In that way alone we had been and in future will remain to be instruments of God in upholding what is best in our tradition culture and religion and in the service of humanity"

'OM SHANTI ! SHANTI !! SHANTI !!!"

(G S Gupta)
President
Sarvadeshik Bhasha Swatantrya Samiti

॥ ओ३म् ॥ कार्यालय
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
श्रद्धानन्द बलिदान भवन,
दिल्ली-६

आर्य पर्वों की सूची

१९५८

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली आर्य समाजों की सूचना के लिये प्रति वर्ष स्वीकृत आर्य पर्वों की सूची प्रकाशित किया करती है। इस वर्ष की सूची निम्न प्रकार है —

क्र० स०	नाम पर्व	सौर तिथि	चन्द्र तिथि	अंग्रेजी दिनांक	दिन
१	मकर सक्रान्ति	१ १० २०१४	माघ कृष्ण ८	१४ १ ५८	सोमवार
२	बसन्त पचमी	१३ १० २० १४	माघ शुक्ल ५	२५ १ ५८	शनिवार
३	सीताष्टमी	३० १० २०१४	फाल्गुण कृष्ण ८	११ २ ५८	मगलवार
४	दयानन्द बोधोत्सव	५ ११ २०१४	„ „ १३	१६ २ ५८	रविवार
५	लेखराम वीर तृतीया	१० ११ २०१४	शुक्ल ३	२१ २-५८	शनिवार
६	बसन्त नवसस्येष्टि(होली)	२२ ११ २०१४	„ शुक्ल १५	५ ३-५८	बुधवार
७	नव सम्वत्सरोत्सव आर्यसमाज स्थापना दि०	८ १२ २०१४	चैत्रशु०१ स० २०१५	२१ ३ ५८	शुक्रवार
८	राम नवमी	१६ १२ २०१४	चैत्र शुक्ल ६	२६ ३ ५८	शनिवार
९	हरि तृतीया (तीज)	१ ५ २०१५	श्रावण शु० ३	१० ८ ५८	शनिवार
१०	श्रावणी उपाकर्म सत्याग्रह बलि० दि०	१३ ५ २०१५	श्रावण शु० १५	२९-८ ५८	शुक्रवार
११	कृष्णाष्टमी	२१ ५ २०१५	भाद्रपद कृष्ण ८	६ ९ ५८	शनिवार
१२	विजय दशमी	५ ७-२०१५	आश्विन शु० १०	२२ १० ५८	बुधवार
१३	ऋषि निर्वाणोत्सव दीपावलि	२६-७-२०१५	कातिक कृ० ३०	१० ११ ५८	सोमवार
१४	श्रद्धानन्द बलिदान दिवस	९ ९ २०१५		२३ १२ ५८	मगलवार

इन पर्वों को उत्साह पूर्वक ससमारोह मना कर इन्हें आर्य समाज के प्रचार और वैदिक धर्म के प्रचार का महान् साधन बनाना चाहिये।

रामगोपाल
सभा मन्त्री

Regd No D ol

आर्य समाज का इतिहास

(प्रथम भाग) सचित्र

इस सभा द्वारा श्रीयुत पण्डित इन्द्र विद्यावाचस्पति कृत आर्य समाज के इतिहास का प्रथम भाग छप कर बिकने लगा है। इतिहास की भूमिका आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान तथा पजाब सरकार के भूतपूर्व शिक्षामन्त्री श्रीयुत डा० गोकुलचन्द जी नारग, एम ए पी एच० डी० ने लिखी है। ग्रन्थ सजिल्द है जिसमे $\frac{१८ \times २२}{८}$ आकार के ३६४ पृष्ठ है। आकार प्रकार कागज व छपाई उत्कृष्ट है। स्थान २ पर ३७ लाइन ब्लाक दिये गये है।

महर्षि की जन्म तिथि, आर्य समाज स्थापना तिथि, महर्षि की मृत्यु कैसे हुई इत्यादि विवादास्पद विषयों पर परिशिष्ट रूप में मूल्यवान सामग्री दी गई है।

प्रारम्भ से सन् १९०० ई० तक के इतिहास में आर्य समाज की स्थापना से पहले की धार्मिक तथा सामाजिक स्थिति, महर्षि दयानन्द का आगमन, आर्य समाज की स्थापना, प्रचार युग, अन्य मतो से सघर्ष, सगठन का विस्तार, सस्था युग का आरम्भ आदि विषयो का समावेश है। शैली बडी रोचक और चित्ताकर्षक है।

सम्पूर्ण इतिहास ३ भाग मे छपेगा। दूसरा भाग प्रेस मे दे दिया गया है और तीसरा भाग तैयार किया जा रहा है।

इस ग्रन्थ की सामग्री के एकत्र करने, बढिया से बढिया रूप मे इसकी ५००० प्रतिया छपाने में तथा चित्रादि के देने मे सभा का बहुत व्यय हुआ है। इस राशि की शीघ्र से शीघ्र प्राप्ति आवश्यक है जिससे कि वह दूसरे भाग की छपाई मे काम आ सके।

सभा ने यह विशाल आयोजन प्रदेशीय सभाओं, आर्य समाजों, आर्य नर नारियों के सहयोग के भरोसे बहुत खटकने वाले अभाव की पूर्त्यर्थ किया है। अत प्रत्येक आर्य समाज और आर्य नर नारी को इस ग्रन्थ को शीघ्र से शीघ्र अपना कर अपने सहयोग का क्रियात्मक परिचय देना चाहिये।

प्रत्येक आर्य प्रतिनिधि सभा, आर्य समाज तथा आर्य सस्था के पुस्तकालय मे अनिवार्य रूप से यह ग्रन्थ रहना चाहिये। यह विषय इच्छा या पसन्द का नहीं है अपितु एक स्थायी रूप से रहने वाले ग्रन्थ के सग्रह करने का है जिससे वर्तमान ही नहीं आने वाली सन्तति को भी लाभ उठाने का अवसर मिल सके।

प्रथमभाग का मूल्य ४) कर दिया गया है। एकप्रतिका डाक व्यय रजिस्ट्री डाकसे १=)अतिरिक्त होता है। कम से कम ५ प्रतिया एक साथ मगाने पर २० प्रतिशत कमीशन दिया जायगा। पुस्तकों का आर्डर भेजते समय डाकखाने और निकटतम रेलवे स्टेशन का नाम स्पष्ट शब्दों में लिखा होना चाहिये।

कृपया आर्डर भेजने में शीघ्रता करें।

प्राप्ति स्थान —

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
श्रद्धानन्द बलिदान भवन, दिल्ली-६

चतरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान
श्री स्वामी अभेदानन्द जी महाराज का

आर्य-जगत को सन्देश

"सत्याग्रह के पश्चात्" हमारे समाजों, सभाओं और सघटनों को अधिक बल मिलेगा, ऐसी हमारी धारणा है। अत अपने महान् आर्य परिवार के सदस्यों और सदस्याओं से निम्नांकित बातों और विचारों को यथाशक्ति व्यावहारिक रूप देने के लिये, हमारा विनम्र निवेदन है—

वर्तमान ससार की परिवर्तित स्थिति मे आर्य समाज को पूर्व की अपेक्षा अधिक उपयोगी बनाने और पारस्परिक सौहार्द्र प्राप्ति करने के लिये सतत् उद्योगी बनाना चाहिये।

सामाजिक सभी कार्यों के सम्पादन के लिये, सभा और समाज के समस्त अधिकारियों और सदस्यों का सम्मिलित उत्तर दायित्व है, ऐसा मानना और इसे ही पूर्ण महत्त्व देना चाहिये।

अपने समाज और सगठन के सम्बन्ध में शिथिलता और सावधानी के साथ इतस्तत वार्तालाप करने के अभ्यास सर्वथा बन्द कर देना चाहिये।

सम्पादक—सभा मन्त्री
[illegible] सम्पादक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक | मूल्य स्वदेश ५) विदेश १० शिलिंग | मई १९५८

विषय सूची

दक्षिण भारत के आर्य प्रचारक

बैठे हुए—श्री स्वामी सदानन्द जी मंगलोर
श्री मोहनप्पा (?)गलाय (प्रधान आर्यसमाज मंगलौर)
खड़े हुए—श्री आर्यमूर्ति जी, श्री स्वामी सेवानन्द जी सरस्वती तथा एक विद्यार्थी

पुरस्कृत वैदिक विद्वान्

श्री डा० सुधीरकुमार जी गुप्त
एम० ए० पी० एच० डी
प्रोफेसर गोरखपुर विश्वविद्यालय

आपको महर्षि दयानन्द की वेद भाष्य शैली की श्रेष्ठता के निबन्ध पर सरकार द्वारा पी एच डी की उच्च उपाधि मिली है।

बगदाद व (ईराक) के आर्य दम्पति

भारत तथा मिश्र दूतावास के रजिस्ट्रार श्री दीपचन्द जी के सुपुत्र श्री रघुवीर जी तथा प्रसिद्ध आर्य श्री मोहेन्द्र जी बगदाद (ईराक) निवासी की सुपुत्री कुमारी लाज के विवाह अवसर पर लिया गया चित्र।

+

आर्यसमाज जलाली (अलीगढ़) के सत्याग्रही जत्थे के सदस्य

श्री पन्नालाल जी, श्री थानसिंह जी, श्री पं० रोशनलाल जी।

आर्यसमाज के मुरार (ग्वालियर) के सदस्य

स्वर्गीय श्री कैलाशनाथ जी शर्मा

मोहरी ट्रेन दुर्घटना में बलिदान हुए।

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा दिल्ली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३३ } मई १९५८ वैसाख २०१५ वि०, दयानन्दाब्द १३४ { अङ्क ३

वैदिक प्रार्थना

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ य० २५ । १८ ॥

व्याख्यान—हे सुख और मोक्ष की इच्छा करने वाले जनो ! उस परमात्मा को ही "हूमहे" हम लोग प्राप्त होने के लिये अत्यन्त स्पर्धा करते हैं कि उसको हम कब मिलेंगे । क्योंकि वह ईशान (सब जगत् का स्वामी) है । और ईशन (उत्पादन) करने की इच्छा करने वाला है । दो प्रकार का जगत् है अर्थात् चर और अचर । इन दोनों प्रकार के जगत् का पालन करने वाला वही है । "धियञ्जिन्वम्" विज्ञानमय, विज्ञानप्रद और तृप्तिकारक ईश्वर से अन्य कोई नहीं है । उसकी "अवसे" अपनी रक्षा के लिये हम स्पर्द्धा (इच्छा) से आह्वान करते हैं । जैसे वह ईश्वर "पूषा" हमारे लिये पोषणप्रद है, वैसे ही "वेदसाम्" धन और विज्ञानों की वृद्धि का "रक्षिता" रक्षक है । तथा "स्वस्तये" निरुपद्रवता के लिये हमारा "पायु" पालक वही है और "अदब्ध" हिंसा रहित है । इसलिये ईश्वर जो निराकार सर्वदा-नन्दप्रद है, हे मनुष्यो उसको मत भूलो। बिना उसके कोई सुख का ठिकाना नहीं है ॥

संसार की योजना में से परमात्मा को नही निकाला जा सकता

रूस के वर्तमान कर्णधार श्रीयुत क्रुश्चेव महोदय ने अभी कुछ दिन हुए यह घोषणा की है कि उनका ईश्वर अथवा अन्य किसी अलौकिक सत्ता मे विश्वास नही है। उनका विश्वास भौतिक विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण मे है।

जो लोग धर्म और परमात्मा विषयक मामलों में बुद्धि का प्रवेश नहीं मानते और जो विज्ञान को धर्म से पृथक मानकर उसे ही इष्टदेव मानते हैं वे भूल करते हैं। इन दोनों दृष्टिकोणों के कारण ही धर्म और विज्ञान निन्दित और तिरस्कृत होकर मानव के कल्याण में बाधक बन रहे हैं।

विज्ञान विहीन धर्म पर जिस समाज की रचना हुई उसे लडखडाते देर न लगी और धर्म विहीन विज्ञान पर जिस समाज का निर्माण हुआ उसका विनाश सन्निकट देख पड़ रहा है।

यदि आज ससार मे मानवता और अच्छाई की कोई प्रगति देख पड़ती है तो उसका मूल स्रोत धर्म और परमात्मा के प्रति आस्था ही है। मानव समाज के आचरण की समस्त योजना धर्म और आस्तिकता पर ही निर्भर रही है। इससे भिन्न यदि कोई क्षेत्र कहीं पर रहा हो वा अब हो उसका पता नहीं। श्री क्रुश्चेव महोदय यदि इससे बाहर किसी क्षेत्र में आचार विज्ञान की कोई योजना बना सकें तो वह मानवेतर ही हो सकता है।

यदि नास्तिकों मे सदाचार और मानवता के शुभ्र दर्शन होते हैं तो इसके मूल मे उनकी धर्म और ईश्वर के प्रति विद्रोह होते हुए भी धर्म और ईश्वर विश्वास में अकुरित और पल्लवित मानव की स्वाभाविक उच्चता ही है। यदि ईश्वर विश्वासियों मे क्रूरता और अमानुषिकता प्रबल देख पडती है तो इसका कारण धर्म वा ईश्वर विश्वास नहीं अपितु धर्म और ईश्वर विश्वास का ढोंग है जिनका स्वार्थसिद्धि के लिए सहारा लिया जाता है। ईश्वर की सत्ता से इन्कार करने वाले उनसे कहीं अच्छे हैं जो धर्म और ईश्वर की दुहाई देते हुए अपने बुरे आचरण से धर्म और ईश्वर को लाछित करते हैं वस्तुत धर्म विश्वास और एक मात्र अनुष्ठानो का नहीं अपितु आचरण का विषय है जिसका प्रभाव समाज पर पडता है यदि नास्तिकजनो के आचरण मे धार्मिकता और सदाचार प्रतिलक्षित हों तो वे आस्तिक ही मान जायगे और परमात्मा का आशीर्वाद उन्हे प्राप्त होगा भले ही वे ईश्वर और धर्म तथा उनकी आवश्यकता से निषेध करते रहें। विश्व की योजना मे धर्म और ईश्वर का सर्वोपरि स्थान है और रहेगा। इस योजना मे से इन्हें निकाल देने से ससार का काम एक क्षण के लिए भी नहीं चल सकता। धर्म और ईश्वर के नाम को कलुषित करने और उसकी सत्ता से इन्कार कर देने से ही तो ससार विनाश के ज्वालामुखी के मुह पर खड़ा कर दिया गया है। यदि उसे कोई शक्ति सर्वनाश से बचा रही है तो वह धर्म ही है और यही शक्ति उसे बचा सकेगी, परन्तु धर्म और ईश्वर का वह स्वरूप मजहबी स्वरूप से भिन्न होना चाहिए। इनका स्वरूप वह होना चाहिए जिसकी सम्पुष्टि वैदिक धर्म से होती है और जिनका महर्षि दयानन्द सरस्वतीने स्वमन्तव्यामन्तव्य मे निम्न प्रकार उल्लेख किया है—

ईश्वर

'जिसके ब्रह्म परमात्मादि नाम हैं जो सच्चिदानन्दादि लक्षण युक्त है, जिसके गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं जो सर्वज्ञ, निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त, सर्व शक्तिमान्, दयालु, न्यायकारी सब सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता, सब जीवों को कर्मानु-

सार सत्य, न्याय से फलदाता आदि लक्षणयुक्त है उसी को परमेश्वर मानता हू।'

धर्म

जो पक्षपात रहित न्यायाचरण, सत्य भाषणादि युक्त ईश्वराज्ञा वेदो से अविरुद्ध है उसको धर्म और जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण मिथ्या भाषणादि ईश्वराज्ञा भग वेद विरुद्ध है उसको अधर्म मानता हूँ।

श्री क्रुश्चेव महोदय का लक्ष्य यह दिखाना प्रतीत होता है कि पू जीपति अमेरिका ईश्वर को मानने वाला है परन्तु साम्यवादी रूस ईश्वर को न मानने वाला है फिर भी आस्तिक अमेरिका ने अणुबमो और उद्जन बमो के निर्माण की पहल करके समाज मे आतक व्याप्त किया और हीरोशिमा तथा नागासाकी पर अणु बम छोडकर नर-सहार का वीभत्स कार्य किया। इसके लिए ईश्वर और धर्म का दोष नहीं, दोष जीवन के भौतिक दृष्टिकोण का है। इस दृष्टि से रूस और अमेरिका एक ही स्तर पर है दोनों को ही इसकी चिन्ता नही कि उस पर मनुष्य और मानवता की बलि चढती है वा वह अपमानित होती है या नहीं ?

—रघुनाथप्रसाद पाठक

देश को पश्चिमी रग में न रगो

देश के आर्थिक और सामाजिक पुनर्निमाण मे जो भावना काम करती देख पडती है, उसके भयावह परिणामों की कल्पना करके देश के अनेक शुभचिन्तको को चिन्ता और व्याकुलता हो रही है। उन्हे यह भय सता रहा है कि पुनर्निर्माण की प्रक्रियाओं से कही देश का आत्मा नष्ट न हो जाय। देश का आर्थिक और सामाजिक उत्थान और कल्याण हो इस विषय में दो मत नहीं हो सकते। इस समय यत्न यह हो रहा है कि भारत को भौतिक और सामाजिक दृष्टि से युरोप और अमेरिका आदि देशों के समान उन्नत और समृद्ध कर दिया जाय। परन्तु ऐसा करने हुए इस सत्य की उपेक्षा की जा रही है कि उन देशों की जीवन भावना हमारे देश को जीवन भावना के अनुकूल नहीं है अत उनके साचो मे देश का ढाला जाना न तो वाञ्छनीय हो सकता है और न उपयोगी। महात्मा गाधी जी ने बहुत पूर्व ही इस सत्य को अनुभव कर लिया था अत वे देश का आथिक और सामाजिक पुनर्निर्माण देशवासियों की जीवन भावना और देश के आदर्शों तथा मर्य्यादाओं के अनुकूल ही करने मे सलग्न रहे। इस देश की जीवन भावना त्यागमय उच्च जीवन की भावना रही है। दूसरे शब्दों में यहा अध्यात्म जीवन का विकास ही लक्ष्य रहा है और भौतिक विकास उसका साधन रहा है साध्य नहीं रहा है।

गत फरवरी मे भारतवर्ष मे १५ वा शाकाहारी विश्व सम्मेलन हुआ था जिसमें देश औरविदेशके अनेक प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। इस सम्मेलन की कार्यवाही अमरीका से निकलनेवाले 'वर्ल्ड फोरम' नामक एक त्रैमासिक पत्र मे प्रकाशित हुई है जिसके सपादक महोदय ने भी सम्मेलन मे भाग लिया था। उन्होंने अपने सम्पादकीय अग्र लेख मे (अ क ४ वाल्यूम ११) सम्मेलन की सफलता, भारत की उन्नता, उसकी वर्तमान समस्याओं तथा भारतीयों की आतिथ्य-भावना आदि के सम्बन्ध मे प्रशसात्मक उद्गार प्रकट करके एक गम्भीर चेतावनी दी है वे लिखते है —

(I dia has its problems, Vast and seemingly in soluble problems But there is no doubt that India has a great contribution to make in world affairs It has a cultural back ground to which the whole

world is indebted In its philosophies and out look on life India has every thing for man's intellectual and spiritual needs If its people can hold these in face of 'Wester nization' it will be truly great

अर्थात् भारत की अपनी बहुत बड़ी समस्याएं हैं जिनका समाधान असभव और कठिन देख पड़ता है परन्तु इसमे सन्देह नहीं कि भारत को संसार की समस्याओं के सन्तोष जनक समाधान में बड़ा योग देना है। भारत की वह भूमि सास्कृतिक है जिसके लिए समस्त विश्व उसका ऋणी है। मनुष्य के बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास के लिए जिन तत्त्वों की आवश्यकता होती है वे सब भारत के दर्शन शास्त्र तथा जीवन के प्रति भावना में विद्यमान् हैं। यदि भारत के निवासी अपनी इन निधिओं को जबकि देश को पाश्चात्यता का रग दिया जा रहा हो सुरक्षित रख सके तो सचमुच भारत महान् बना रहेगा।"

क्या ही अच्छा हो कि हमारे देश के कर्णधार इस चेतावनी पर उचित ध्यान दें और भौतिक उत्थान की अपनो योजनाओं मे भारतीय जीवन-दर्शन को नष्ट न होने दें।

भारत को पाश्चात्यता के रग मे रगने की प्रक्रिया में तीन बातें बहुत हानिकर सिद्ध हो रही हैं। एक तो कृत्रिम साधनों से सन्तति निग्रह का प्रचार दूसरी परिवारों का विघटन और तीसरी मांसादि अभक्ष्य पदार्थों का प्रोत्साहन। ससार बड़ी, सूक्ष्मता से इन तीनों बातों और उनके परिणामों को देख रहा है। जो लोग भारत से सास्कृतिक और आध्यात्मिक प्रेरणा लेते हैं उन्हें बड़ी निराशा हो रही है।

देश की आर्थिक अवस्था के सुधार तथा देश-वासियों के जीवन-स्तर को ऊंचा करने के लिए सतति-निरोध की आवश्यकता पर बल दिया जाता है। भारतीय जीवन दर्शन में भी आपद् धर्म के रूप मे इसके महत्व को अंगीकार किया गया है परन्तु उसका लक्ष्य सास्कृतिक और उपाय ब्रह्मचर्य और संयम का जीवन रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि सयमपूर्ण जीवन की अवस्थाएं उत्पन्न की जाय। एक ओर कृत्रिम उपायों से भ्रष्ट संतान नियमन और दूसरी ओर विलासमय जीवन इन दोनों के भयावह परिणामों की सहज ही कल्पना की जा सकती है।

विवाह, परिवार आदि सामाजिक अवस्थाओं और व्यवस्थाओं मे अपेक्षित सुधार की बात समझ मे आने योग्य है। स्त्री के प्रति आदरभाव उत्पन्न करना, उसको समाज में सम्मानपूर्ण स्थान दिलाना तथा उसको अत्याचारों से मुक्त करना अत्यावश्यक है। परन्तु ऐसा करते हुए पुरुष और स्त्री को एक दूसरे का पूरक बनाए न रखकर प्रतिद्वन्द्वी बना देना, गृहस्थ जीवन को क्लब जीवन में परिवर्तित कर देना, तलाक को प्रोत्साहित करके पारिवारिक जीवन को नष्ट-भ्रष्ट करना तथा उत्तराधिकार के प्रश्न पर भाईयों और बहनों को एक दूसरे का शत्रु बना देना भारतीय आदर्श और परम्परा की अवहेलना करना है जिसके दुष्परिणाम दूरगामी और घातक हो सकते है। इन तथाकथित सुधारों की पृष्ठ भूमि पाश्चात्य वा सेमेटिक दृष्टिकोण से प्रभावित है। जबकि इस दृष्टिकोण ने उन देशों में तबाही वर्पा हुई है तब ये भारत में तबाही वर्पा न करेंगे इसकी क्या गारंटी है? इसे तो हम निकृष्ट एव अन्धानुकरण ही कह सकते हैं।

भारत अपनी शाकाहार की जीवन-पद्धति के लिए जगत् प्रसिद्ध है। इस जीवन-पद्धति से न जाने कितने नर-नारी प्रेरणा ग्रहण करते हैं। भारत में जीवन के अध्यात्म अ ग पर विशेष बल दिया जाता है और निरामिष भोजन दया और अहिंसा की प्रेरणाओं में ओत प्रोत होने के कारण उस अंग को पुष्ट करने वाला अनिवार्य तत्त्व है। विशेषज्ञों

ने स्पष्ट रूप से यह बताया कि पुष्टि, मानवता और स्वास्थ्य-रक्षा इन तीनों दृष्टियो से शाकाहार मासाहार की अपेक्षा श्रेष्ठ और सस्ता है। वर्नार्डशा ने जो जीवन पर्यन्त शाकाहारी रहे ठीक ही कहा था कि 'बीज में निहित प्रचण्ड शक्ति पर तो तनिक विचार करो। इसे जमीन में गाड़ दो तो यह एक महान् वृक्ष के रूप में फूट निकलेगा। भेड़ को गाड़ दो तो तुम्हारे पल्ले कुछ न पड़ेगा।' यह है शाकाहार के आर्थिक पहलू की मासाहार के आर्थिक पहलू पर विजय की एक हल्की झाकी। इस पर भी हमारे राज्याधिकारी भारत में खाद्य समस्या के हल के लिए मासाहार को प्रोत्साहन देने की लज्जा जनक एव घातक चेष्टा करने में सलग्न हैं। जीव दया भारत की विशिष्ट निधि है। क्या मासाहार और जीव पीड़ा को प्रोत्साहित करना इस सास्कृतिक निधि के साथ बलात्कार करना नहीं है? जब विदेश के लोगों ने हमारे राज्याधिकारियों से बदरों के असीम निर्यात पर रोष प्रकट करके उसे रोकने की माग की तो उन्होंने कहा कि इन बदरों को आणविक प्रयोग के लिए नहीं भेजा जा रहा है। यदि कोई इस बात को सिद्ध कर देगा कि उनका प्रयोग आणविक अनुसधानों मे हो रहा है तो उनका निर्यात एक दम रोक दिया जायगा। राज्याधिकारियों की दृष्टि में इसका अर्थ यह है कि अन्य चिकित्सा अनुसधानों मे बदरो को प्रयुक्त होने देने में कोई हर्ज नहीं है। भारतीय जीवन पद्धति इसे क्षम्य नहीं समझ सकती।

हमारे देश वासियों और राज्याधिकारिया को ऐसा कोई पग न उठाना चाहिए जिससे देश के पुनर्निर्माण की प्रक्रिया में उसकी सस्कृति की महत्ता नष्ट हो जाय। राज्याधिकारियों को यह स्मरण करा देना समयोचित है कि महात्मा गाधी की सफलता का रहस्य यह था कि वे भारतीय सस्कृति तथा जीवन दर्शन की विशिष्टताओं को बनाये रखने के लिए सचेष्ट रहते थे। उनके नाम की दुहाई देने वाले देश के वर्तमान कर्णधारों को उनकी भाति सचेष्ट रहना चाहिए अन्यथा जहा वे महात्मा जी के नाम को कलुषित करेंगे वहा देश की आत्मा को भी अपना विद्रोही बना लेंगे।

आर्यकुमार सभा किंग्ज़वे कैम्प दिल्ली

आर्यकुमार सभा किंग्ज़वे दिल्ली कुमारों को आर्य बनाने का स्तुत्य कार्य कर रही है।

इस सभा की स्थापना २५ अप्रैल १९४९ को श्री इकबालराय जी वेदी द्वारा हुई थी। इसके वर्तमान सदस्य १०१ हैं और विजयनगर तथा हडसनलाइन में इसकी २ शाखाए लगती हैं। सभा का एक पुस्तकालय तथा वाचनालय है तथा 'जीवन सन्देश' नामक मासिक पत्रिका निकलती है। प्रारम्भ मे यह हस्तलिखित होती थी अब टाइप होती है। प्रारम्भ से ही कुमारों के यज्ञोपवीत सस्कार पर विशेष ध्यान रखा जाता है। यज्ञोपवीत रहित कोई भी कुमार सभा का अन्तरग सदस्य नहीं बन सकता। नव युवकों के बौद्धिक तथा चारित्रिक विकास के लिए समय२ पर वाद विवाद और महापुरुषों की जयन्तियां धूमधाम से मनाई जाती हैं तथा विद्वानों के भाषण होते रहते हैं। सभा की प्रेरणा पर २३ सदस्य सेंट जान एम्बुलैन्स की प्राथमिक सहायता परीक्षा पास कर चुके हैं। निर्धनों तथा विधवाओं की सहायता भी की जाती है। इस समय तक लगभग १०००) इस सत्कार्य मे खर्च हो चुके है। बाढ पीड़ितों की सहायता तथा हिन्दी आन्दोलन कार्य पर भी १०००) व्यय हुआ। विभिन्न मुहल्लों मे पाक्षिक सत्सग किए जाते हैं, धार्मिक परीक्षाए होती है तथा कथाओं द्वारा प्रचार की शैली को अधिकाधिक लोकप्रिय बनाया जाता है। सभा अपने प्रकाशन कार्य को विस्तृत करने और सुदृढ बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं। कुमारों को समाज के उत्तम सदस्य और श्रेष्ठ नागरिक बनाने के लिए जो भी प्रयत्न सम्भव हो सकता है, यह सभा उसका आश्रय लेने में अग्रसर रहती है। सभा आर्यकमारी सभाओं का भी

स्थापना कर रही है। हर्ष है कि सभा को आर्य नेताओं और विद्वानों का सक्रिय सहयोग प्राप्त है। 'जीवन सन्देश' के सम्पादक श्री बहादुरचन्द जी तथा प्रकाशन विभाग के अध्यक्ष श्री जगदीशचन्द्र विद्यार्थी तथा उनके सहयोगी सर्वात्मना सभा की उन्नति मे सलग्न है। सभा के जन्मदाता और प्राण श्री इकबाल नारायण जी की एक मात्र जीवन साधना यह आर्यकुमार सभा ही है, यदि यह कह दिया जाय तो इसमें अत्युक्ति न होगी। उनकी विचारधारा, चिन्ता और पुरुषार्थ सब कछ अह र्निश सभा पर केन्द्रित रहते है।

हम हृदय से इस सभा की उन्नति और आभ वृद्धि की कामना करते हैं।

बच्चों के नाम रखने के अधिकार को चुनौती

बच्चों के माता पिताओं और अभिभावको का यह अधिकार है कि वे अपने बच्चों का नाम अपनी पसन्द का रखें। बच्चों के मन पर अपने नाम का प्रभाव पड़ता है यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है। जिस व्यक्ति को अपने नाम को अपने गुणों और आचरण से सार्थक करने की प्रेरणा न मिले वह नाम न केवल व्यर्थ ही है अपितु नामधारी के लिए अपमान और सकोच का कारण भी बन जाता है। इसीलिए आग सस्कार मे अच्छे और कर्ण प्रिय नाम रखने का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। नामों के रखने की स्वतन्त्रता का उपभोग उसी सीमा तक विहित है जिस तक वह सभ्यता और नागरिक शिष्टता का अतिक्रमण न करे। जहा वह अतिक्रमण करती है वहा शासन उसे नियन्त्रित करने के लिए समुपस्थित हो जाता है। इस नियन्त्रीकरण के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं। एक ताजा उदाहरण अभी हाल में समाचारपत्रों मे प्रकाशित हुआ है। (देखें टाइम्स आफ इण्डिया दिल्ली १२ ४ ५८) स्पेजिया (इटली) में एक इटैलियन व्यापारी ने अपने पुत्र का नाम चगेजखा रखा। नागरिक प्रशासन ने उसे यह नाम रखने से रोक दिया और कहा कि इटली के नाग रिक विधान क अनुसार यह नाम नहीं रखा जा सकता। यह विधान बच्चों के ऐसे नाम रखना निषिद्ध ठहराता है जो हास्यास्पद रोषोत्पादक वा इटली की राष्ट्रीय वा धामक भावनाओं के विरुद्ध हो। पिता ने इस व्यवस्था के विरुद्ध अपील करने का निश्चय किया है। उसका कथन है कि अपने बच्चे का नाम अपनी पसन्द का रखने का उसे अधिकार है और वह एशिया के विजेता चगेजखा का नाम पसन्द करता है।

हमारे साप्ताहिक सत्सग

इस सत्य को अस्वीकार नही किया जा सकता कि हमारे साप्ताहिक सत्सगों मे वेद को आगे नहीं ले जाया जाता यद्यपि हम गला फाडकर इस नियम की घोषणा करते हैं कि वेद का पढना पढाना और सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म है। इसके विपरीत आजकल के आर्यों का परमधर्म अखबारों का पढना पढाना अथवा या राजनैतिक प्रोग्राम की चर्चा वा आलोचना करना मात्र रह गया है। ईसाइयों के सत्सग मे प्राय बाइबिल की किसी आयत को लेकर उसकी व्याख्या की जाती है। इस व्याख्या मे ही देश और समाज अथवा नैयक्तिक वा पारिवारिक जीवन की समस्याओं पर भी प्रकाश डाला जाता है। प्रत्येक आर्यसमाज मे सामाजिक सत्सगों मे पुरोहित वा स्वाध्यायशील आर्य के द्वारा वेद के मन्त्र वा सूक्त की व्याख्या होनी चाहिए आर उसकी सूचना एक सप्ताह पूर्व दी जानी चाहिए। इसका लाभ यह होगा कि सब सदस्य उस मन्त्र वा सूक्त को पढकर आयें और अपने विचार तथा शकाए उन विद्वानों के समक्ष रख सकेंगे। इस उपाय से सत्सगो की उपस्थिति बढ जायगी। हमे क्षमा किया जाय यदि हम यह कह दें कि आजकल के सत्सगो मे दिखावा अधिक रह गया है। इसका दुष्परिणाम यह हो रहा है कि हमारी वेदी की कोई मर्यादा नहीं रही है और उसके गौरव का ह्रास हो चला है। उपासना

मन्दिरों को पाठशाला आदि से युक्त रखने की ओर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। आर्यसमाज मन्दिर मे प्रतिदिन हवन एव सकीर्तन होने चाहिए चाहे उसमे २ या ३ व्यक्ति ही क्यो न सम्मिलित हों।

रोमन लिपि क्यों नही अपनाई जा सकती ?

लोक सभा के अध्यक्ष श्रीयुत अनन्तशयनम ने अम्बाला के एक भाषण मे इस सुझाव पर बल दिया है कि भारत की समस्त प्रादेशिक भाषाओं की लिपि देवनागरी स्वीकार कर ली जाय। माननीय राष्ट्रपति ने भी कुछ समय पूर्व अपनी इस मान्यता पर बल दिया था। इस सुझाव के क्रियान्वित हो जाने से हिन्दी के राज्य भाषा के रूप मे प्रचलन में बहुत सुगमता हो जायगी।

यह सुझाव अत्यन्त स्वागत योग्य है। इसका एक सुफल यह भी होगा कि देश मे व्याप्त भाषायी विवाद का शीघ्र ही अन्त हो जायगा।

पर राष्ट्र विभाग की उपमन्त्री श्रीमती लक्ष्मी मेनन ने इस सुझाव का विरोध करते हुए देव नागरी लिपि के स्थान मे रोमन लिपि को अपनाने का विचार व्यक्त किया है। स्व० श्री सुभाषचन्द्र बोस ने भी हरिपुरा कांग्रेस के अध्यक्षीय भाषण में रोमन लिपि को स्वीकार कर लेने की वकालत की थी।

कठिनाई यह है कि रोमन लिपि में उन सब उच्चारणों को व्यक्त करने की शक्ति नहीं है जिनके बिना भारतीय भाषाओं का ठीक २ उच्चारण हो ही नहीं सकता। जो व्यक्ति भारतीय भाषाए नहीं जानता वह रोमन अक्षरों में लिखी हुई किसी भी भारतीय भाषा का शुद्ध उच्चारण कदापि नही कर सकता। इतना ही नहीं रोमनाक्षरों मे लिखी जाने वाली युरोपीय भाषाओं का उच्चारण भी उन भाषाओं से अनभिज्ञ पुरुष नहीं कर सकता। एक व्यक्ति जो फ्रेंच भाषा नहीं जानता वह रोमन लिपि जानते हुए भी फ्रेंचभाषा नहीं पढ सकता। इसके विपरीत 'नागरी' अक्षरों मे लिखी हुई ससार की किसी भाषा का उच्चारण नागरी लिपि जानने वाला कर सकता है।

रोमन लिपि के पक्ष मे सबसे बडा हेतु यह दिया जाता है कि इस लिपि को ऐतिहासिक और वैज्ञानिक दोनों प्रकार का महत्त्व प्राप्त है और इस लिपि को अपनाने से हमे वे ही लाभ प्राप्त होंगे जो ससार के अन्य देशों को प्राप्त है। आजकल एशिया मे ब्रह्मा, लका, स्याम, जापान तिब्बत, मगोलिया और मुस्लिम देशों मे रोमन से भिन्न अपनी २ लिपिया हैं। उत्तरी अफ्रीका के कुछ देशों मे अरबी लिपि प्रचलित है। फिलस्तीन के यहूदियो की लिपि हिब्रू है। युरोप के सबसे बडे प्रदेश सोवियत रूस में रोमन से भिन्न अपनी लिपि है। यूनान मे भी भिन्न लिपि है। जर्मनी ने भी पूर्णरूप से रोमन लिपि को नहीं अपनाया है। अत रोमन लिपि को अपनाने से हम भारतीयों को ससार के अन्य देशों के समान लाभ होगा, यह बात ठीक नहीं है। भारत में इस लिपि के व्यवहार से न लोक भाषाओं को लिखने वा सीखने मे सुगमता होगी और न युरोपीय भाषाओं को लिखने या सीखने में। कुछ स्वरों और व्यजनों की ध्वनि कतिपय युरोपीय भाषाओं में प्रयुक्त उन्हीं स्वरों और व्यजनों की ध्वनि से बहुत भिन्न होती है। इस कठिनाई पर विजय पाना असम्भव होगा।

कमाल अतातुर्क ने तुरकी में रोमन लिपि का प्रचार किया था परन्तु यह बात सदिग्ध बनी रही कि तुरकी के उच्चारण रोमन लिपि मे ठीक २ आ गए थे परन्तु रोमन अक्षरों मे लिखी हुई तुरकी को तुरकी भाषा न जानने वाला ठीक २ नहीं पढ सकता था। अब तो वहा पुन तुरकी भाषा का ही बोलबाला है और रोमन लिपि का आकर्षण समाप्त प्राय हो चुका है।

यदि कोई अक्षर ऐसे हैं जो सारे विश्व की वर्ण माला बन सकने की क्षमता रखते हैं तो वे देवनागरी अक्षर ही हैं। ससार की समस्त भाषाओं की जननी सस्कृत है और लिपिया देवनागरी का परिवर्तित रूप लिए हुए है। हमारे देश को आर्य भाषाओं के लिखने के लिए जो लिपिया व्यवहार में आती हैं वे सब नागरी लिपि हैं या उसी का रूपान्तर हैं। बगला, गुजराती, तेलुगु आदि के अक्षर जो देखने में भिन्न जान पड़ते हैं वास्तव में वे एक ही हैं और सबकी बारह खड़िया भी एक ही हैं। हा भिन्न २ प्रांतों में व्यवहृत होने से उनकी रूप रेखा में थोडा भेद पड गया है जो थोड़ा सा यत्न करने से और आपसी सद्भाव से बहुत शीघ्र मिटाया जा सकता है। इस दिशा मे स्व० शारदा चरण मित्र ने उद्योग करना आरभ किया था परन्तु उनकी मृत्यु के कारण यह कार्य रुक सा गया जो फिर से आरभ किया जा सकता है और किया जाना चाहिए।

भारतवर्ष के सब प्रांतों के मुसलमान भाई भी अरबी लिपि का आग्रह नहीं करते। बगाल में बगाली मुसलमान अधिकाश बगला ही बोलते और बगलाक्षरों का ही व्यवहार करते हैं। इसी प्रकार गुजराती मुसलमान गुजराती अक्षरों में ही अपना बहीखाता लिखते और कारोबार करते हैं। यही अवस्था अन्य प्रांतों की है। उत्तर प्रदेश के मुसलमान व्यापारी भी अपना बहीखाता हिन्दी में रखते हैं। अवश्य पिछले कुछ दिनों से उनमें अरबी अक्षरों का प्रचार हो रहा है परन्तु यह अस्थायी है। टिकने वाला नहीं और न टिक सकता है। हम मुसलमानों को विदेशी और बाहर से आया हुआ नहीं मानते। वे भारतीय हैं और उनके पूर्वज भी भारतीय थे। अरब या फारस से सुदूर भूतकाल में कुछ आदमी आए रहे होंगे पर आज तो मुसलमानों की धमनियों में भारतीय रक्त ही बहता है। वे भारतीय हैं और सदैव भारतीय रहेंगे। वे 'अरब' या 'फारसी' न हैं और न हो सकते हैं। जो मुसलमान भाई खिलाफत आदोलन के समय भारत से हिजरत करके काबुल या अन्य देशों में गए थे उनसे पूछो कि उनकी क्या दुर्दशा हुई और जो बेचारे आ सके वे ही मुसीबत और अरब इत्यादि का स्वप्न लेने के विचार की निस्सारता का ठीक २ परिचय दे सकते हैं। इसी प्रकार भारत के ईसाई अ गरेज नहीं हैं और न उन्हें कोई अ गरेज ही मान सकता है। उनकी राष्ट्रीयता भारतीय है और वे स्वय भारतीय हैं। अत वे सुगमता से देवनागरी लिपि को अपना सकते हैं। इन सब बातों को दृष्टि में रखते हुए रोमन लिपि अपनाने का औचित्य सिद्ध नहीं होता।

अवश्य देवनागरी की बारहखडी में अनेक उच्चारणों के चरणों के बढानेकी आवश्यकता बताई है। उदाहरणार्थ कवर्ग में 'क़ाफ, खे, गैन' के उच्चारण बढ़ाए जा सकते हैं। परन्तु परिवर्तन लाभ के लिए होना चाहिए न कि अन्य किसी भावना से। देश और विदेश के भाषा शास्त्रियों और अक्षर विज्ञाताओं ने एक स्वर से देवनागरी भाषा और लिपि की पूर्णता और वैज्ञानिकता को अ गीकार करके इसमें आमूल चूल परिवर्तन के विरुद्ध गभीर चेतावनी दी हुई है। इस चेतावनी को हृदयङ्गम रखना चाहिए। इसी में हमारा और आने वाली सन्तति का हित सन्निहित है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

श्री स्वामी विद्यानन्द विदेह और उनके वेदव्याख्या ग्रन्थ

[आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री]

[२]

श्री विदेह जी की प्रथम मान्यता का निराकरण मैं अपने प्रथम लेखाङ्क में कर चुका हू। अन्य मान्यताओं पर मैं यहा नीचे की पक्तियों मे अपने विचार प्रस्तुत करता हू। उनकी दूसरी मान्यता के अनुसार त्रिविध प्रक्रिया के विषय मे कितनी अस्पष्टता है, यह पाठक स्वय समझ सकते है। वस्तुत त्रिविध प्रक्रिया निश्चितार्थ में बाधा नहीं है। तीनों प्रक्रियाओं से होने वाला अर्थ निश्चितार्थ ही है। क्या अग्नि का ब्रह्माग्नि अर्थ जो उन्होंने ऋग्वेद के प्रथम सूक्त के मत्रों मे माना है वही निश्चित है, विद्वान् और भौतिक अग्नि आदि अर्थ लिए जावें तो वे अनिश्चित हो जावेंगे। क्या एक शब्द से पर्याय द्वारा सुयुक्त और अविरुद्ध रुप में निकलने वाले अन्य अर्थ अनिश्चित होते हैं केवल एक ही अर्थ निश्चित है। शब्द और अर्थ की महिमा को जानने वाला कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं कह सकेगा। यह तो श्री विदेह जी जैसे व्यक्ति ही कह सकते हैं। श्री विदेह जी की अपनी अस्पष्टता के उदाहरण हमें यहा मिलते हैं उनके ही शब्दों में, जो वे स्वय लिखते हैं व्याकरण नहीं व्याकरण वाद, व्युत्पत्ति नहीं व्युत्पत्तिवाद, प्रमाण नहीं प्रमाण वाद, विनियोग नहीं विनियोगवाद।" यह क्या चातुरी है उसे स्वय वे ही बता सकेंगे। उनके वेद भाष्य में ही इनका पूरा पालन नहीं मिलता। वे व्याकरण, निरुक्त, प्रमाण, और विनियोग का खण्डन करना चाहते हैं। कारण यह है कि उनकी स्वयकी इन विज्ञानों में गति नहीं है। फिर एसा न कहा जावे तो क्या किया जावे? श्रीमान् जी से पूछना चाहिए कि क्या व्याकरण ज्ञान के बिना वेदार्थ अपनेआप लग सकता है। व्याकरण भी तो वेद से ही निकला हुआ एक विज्ञान है। आपने भी जिन अर्थों को निकाला है क्या वे व्याकरण के बिना सीधेसमाधि में ही स्फुरित हुये हैं। अन्यभाष्यकारों के भाष्य देखकर इधर उधर से तुक मारने का प्रयत्न किया है। व्याकरण का परिज्ञान न होने से ही यजुर्वेद १।१ मत्र मे आये "गोपतौ" पद की आपन व्याख्या करते हुये "गोष्ठ" अर्थ लिया है। यह गोष्ठ अर्थात् गौशाला अर्थ किस प्रकार निष्पन्न हुआ। जब "गौशाला" शब्द का आप प्रयोग करते है तो फिर "गोपतौ" में "गौपतौ" क्यों नहीं हुआ—इसका क्या कारण है। 'गोशाला' के स्थान में गौशाला, प्रयोग आपका अपना है। अपने प्रथम पुष्प का ६ पृष्ठ स्वय देखिये। आपने ही अपने प्रथम पुष्प यजुर्वेद के भाष्य मे "भस्मान्त शारीरम" का उदाहरण दिया है आप स्वय लिखते हैं कि "आत्मा अपार्थिव (अभौतिक) और अमर है और यह शरीर भस्मान्त है। यदि व्याकरण का परिज्ञान न हो तो भस्मान्त शब्द के अथ में ही अनर्थ हो जावे ऐसा अनर्थ हो जावे कि शायद आपको उसका पता भी न हो। भस्म है अन्त जिसका उसे भस्मात कहा जाता है। परन्तु दूसरा अर्थ कई व्यक्ति यह भी लगा सकते हैं कि भस्म का अन्त है जिसमें वह भस्मान्त है। इस प्रकार अर्थ करने पर सनातनियों की श्राद्ध क्रिया भी निकलने लगेगी। इन दोनों में कौन सा अर्थ प्रशस्त है इस बात को व्याकरण ही बतला सकेगा। आपने यजुर्वेद के व्याख्यान के अवसर पर अपने प्रथम पुष्प पृष्ठ १ पर लिखा है "क्रियते तत्सर्व कर्मकाण्डान्तर्गत एव"। यहा पर नपुंसक और पुलिंग का भेद न जानने से जो त्रुटि है वह इसीलिए कि आपको व्याकरण और सस्कृत भाषा दोनों का परिज्ञान नहीं है। श्री विदेह जी अपने प्रथ प्रथम पुष्प में

सामवेद की व्याख्या करते हुये अपनी संस्कृतभिज्ञता को दिखाने के लिए लिखा है "स शृणोति वह सुनता है"। यहा व्याकरण के न जानने से उचिता नुचित प्रयोग का उन्हें पता नहीं है।

उनकी वाक्य रचनाकी विचित्रता और अस्पष्टताके ज्वलन्त उदाहरण और भी दिये जाते है। वे अपने मन्तव्योंमे व्याकरणवाद, व्युत्पत्तिवाद प्रमाणवाद और विनियोगवाद पर व्याकरण नहीं व्याकरणवाद व्युत्पत्ति नही व्युत्पत्तिवाद, प्रमाण नहीं प्रमाणवाद और विनियोग नहीं विनियोगवाद-ऐसा ब्राकेट के अन्दर देकर अपने मत को स्पष्ट करना चाहते है। परन्तु वहां पर 'यज्ञवाद' तन्त्रवाद, इतिहासवाद, और गाथावाद' आदि शब्दों के साथ अपनी स्पष्टता का सूचक प्रयोग नहीं लगा रह है। यहा भी यदि उनके अनुसार यह अर्थ किया जावे यज्ञ नहीं यज्ञवाद तन्त्र नहीं तन्त्रवाद, इतिहास नहीं इतिहासवाद और गाथा नहीं गाथावाद तो दो बातें सामने खडी होंगी। प्रथम यह कि उनके अनुसार ये सभी मन्तव्य कोटि मे है और इससे वेद मे इतिहास आदि सभी है ऐसा वे मानते हैं। दूसरी बात यह समुपस्थित होगी कि उनके अनुसार यज्ञ भी इतिहास, तन्त्र और गाथा आदि की भाति अमन्तव्य है। परन्तु यज्ञ का वेदमन्त्रों में ही विधान है।

यदि व्युत्पत्ति को न माना जावे तो फिर श्री विदेह जी का प्रथम पुष्प ऋग्वेद व्याख्या के पृष्ठ पर लिखित अध्वर शब्द का अर्थ कैसे ठीक माना जावे। वे लिखते है "ध्वर का अर्थ है कुटिल तिरछा हिंसाशील। अध्वर का अर्थ है अकुटिल, सीधा, अहिंसा शील"। यह अर्थ तो व्युत्पत्तिलभ्य ही अर्थ है। यहा पर ऋग्वेद १।१।४ मन्त्र की व्याख्या में आप अध्वर की व्याख्या कर रहे है। परतु मन्त्र में ही यज्ञ और अध्वर दोनों पद हैं। दोनों यज्ञ वाची हैं। जब तक एक को एक का विशेषण न बनाया जावे अर्थ नहीं बनता। परन्तु ऐसा नियम व्युत्पत्ति शास्त्र का ही है कि दो समानार्थक शब्दों को विशेषण विशेष्य बनाया जावे। व्युत्पत्ति शास्त्र को न मानने और न समझने वाले को इसका पता नही चल सकता।

प्रमाण की बात लीजिए। विदेह जी कहते है कि वेद का भाष्य वेद से ही किया जाना चाहिए। उसके भाष्य की पुष्टि मे अन्य प्रमाण नहीं देना चाहिए क्योंकि इससे वेद की स्वत —प्रमाणता नष्ट होता है। प्रथम पुष्प के आत्मनिवेदन में वे लिखते है "प्रमाणवादी भाष्यकारों ने इस तथ्य को अपनी दृष्टि से ओझल कर दिया कि केवल वेदेतरग्रन्थों के प्रमाणो के आधार पर वेदार्थ करके वे स्वत प्रमाण वेदों को परत प्रमाण बना रहे थे। इत्यादि।

यहा पर विचार करने की आवश्यकता है। वेद से वेद का अर्थ करने मे कोई आपत्ति नहीं। परतु यदि वेद प्रतिपादित विज्ञानों के शास्त्र निरुक्त, आदि विद्याङ्ग और दर्शन विद्याओं आदि का वेदार्थ करने मे सहारा लिया जावे तो क्या वेद परत प्रमाण बन जावेंगे। ये तो विद्याये हैं जिनकी वेदार्थ मे आवश्यकता है। श्री विदेह जी की अपनी परिभाषा प्रत्येक वस्तु की वदतोव्याघात युक्त ही होती है। जब दूसरे प्रमाणों के देने से वेद परत प्रमाण हो जाता है तो फिर उन्होंने स्वय अपने वेदार्थ को ठीक साबित करने के लिए अपनी पुस्तक मे अनेक विद्वानों की सम्मतिया क्यों दी है? क्या बिना इन सम्मतियों के आपका वेद से किया वेदार्थ पुष्टि नही पा सकेगा? साथ ही ऐसा करने से क्या वेद परत प्रमाण नहीं बनेगा? आप अपनी प्रतिज्ञा को अपने भाष्य मे क्यों नहीं निभाते? आप स्वय कहते हैं अपने आत्म निवेदन के २२वें पृष्ठ पर जो कि मैंने अपने प्रथम लेख मे आपकी तीसरी मान्यता में दिखलाया है कि "अपनी उपर्युक्त मान्यतावों के प्रकाश में मैंने १९९३ वि० से ऋग्वेद का हिन्दी अनुवाद प्रारम्भ

किया। अपनी मान्यतावों के अनुरूप करने मे सफल हो गया हू। इससे स्पष्ट है कि आपने वेद से वेदार्थ नहीं किया बल्कि अपनी बनाई हुई मान्यतावों के आधार पर वेदार्थ किया है। आपने पहले कुछ मान्यतायें बना लीं पुन उनके अनुरूप वेदार्थ किया। क्या ऐसा करने से वेद की स्वत प्रमाणता नष्ट नहीं होती ? फिर कहना कुछ और करना कुछ काक्या मतलब ?

आपने अपने आत्म निवेदन पृष्ठ १७ पर लिखा है ' अनन्ता वे वेदा " यह वाक्य आपका नहीं है। फिर भी आपने प्रतीक न देकर इसको प्रमाणरूप में उद्धृत किया है। वस्तुत यह उपनिषद् वाक्य है। आपने अपने प्रथम पुष्प के ऋग्वेद व्याख्यान मे पृ० २ पर भी उसका उद्धरण दिया है। पुन अपने प्रथम पुष्प मे ही यजुर्वेद मन्त्र के व्याख्यान मे पृ० ८ पर गीता का एक श्लोक अपने अर्थ को पुष्ट करने के लिए लिखा है। श्लोक इस प्रकार है नष्टो मोह स्मृतिर्लब्ध्वा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत। स्थितोऽस्मि गतसन्देह करिष्ये वचन तव ॥ भला बताइये क्या वेद की स्वत प्रमाणता इससे नष्ट नहीं होती है ? लोगों को दिखालाया कुछ जावे और किया कुछ जावे। यही नही प्रथम ही पुष्प मे श्री विदेह जी साम मन्त्र की व्याख्या करते हुए पृ० ६ पर निरुक्त २ ६ का प्रमाण देते है। सामवेद के सख्या १३६६ के मन्त्र मे "द्रविण" पद आया है। यह द्रविण क्या है और इसका अर्थ क्या है ? इस पर आप लिखते हैं कि बल इसका अर्थ है। इस अर्थ के प्रमाण मे आप लिखते है द्रविणमिति

२।७ मे क्या वेद के द्रविण शब्द के अर्थ को निरुक्त से दिखलाने पर आपकी प्रतिज्ञा की हानि नही हुई। आपने वेद से द्रविण का बल अर्थ दिखलाया होता तो आपकी प्रतिज्ञा सिद्ध हो सकती थी। यहीं पर वृत्र शब्द के लिए आपने "पाप्मा वै वृत्र" का प्रमाण दिया है यह भी ब्राह्मण वाक्य है। क्या ब्राह्मण द्वारा वेद का अर्थ प्रमाणित करने पर आपकी स्वत प्रमाणता पर आघात नहीं हुआ ? आपने निरुक्त और ब्राह्मण ग्रन्थो से अर्थ लेकर भी उनका प्रमाण नहीं दिया है। कारण यह मालूम पडता है कि उसे अपनी समाधि का फल बतलाना था।

इसी प्रकार कल्प भी एक विज्ञान है। जिस व्यक्ति को उसका परिज्ञान नहीं वह विनियोग का दुरुपयोग करता है और उसे अनुचित भी बताता है। सच्चा विनियोग विज्ञान आवश्यक विज्ञान है और उसे जानना ही चाहिए। कर्मकाण्ड चाहे गृहस्थ हो, चाहे श्रौत हो और चाहे क्रियात्मक निर्देश हो इस पर ही आधारित है। यज्ञ की सारी प्रक्रिया भी इसी पर आधारित है। आप यज्ञ के भी विरोधी भासित होते हैं। आपके लेख से कुछ ऐसा ही प्रतीत होता है कि आप वेदमन्त्रों का यज्ञ प्रक्रिया सम्बन्धी अर्थ भी होता है—यह नही मानते।

श्री विदेह जी वेद से ही वेद का अर्थ करने की प्रतिज्ञा करते हुये भी नही जान पाये कि वेद मे ही यज्ञ का विधान भी है। ऋग्वेद ८।१९।५ मे लिखा है—य समिधा य आहुती यो वेदेन ददाश मर्त्यो अग्नये। अर्थात् जो मनुष्य वेद मन्त्र से समिधा के साथ आहुति के साथ यज्ञ करता है उसे उत्तम फल प्राप्त होते हैं। वे उत्तम फल क्या है इसे पाठक स्वय इसके आगे छठे मन्त्र मे देखें। इसके अतिरिक्त हवन मे प्रसिद्ध वेदमन्त्र ही यज्ञ करने की प्रेरणा देता है—समिधाग्नि दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन्हव्याजुहोतन ॥ इसका अर्थ स्पष्ट है। मन्त्र कहता है—समिधा से अग्नि जलावो। घृत की आहुतियों से प्रज्वलित करो और उसमे हवि डालो। इससे बढकर सुस्पष्ट वर्णन यज्ञ का और हो ही क्या सकता है ? अनेकों मन्त्र इस विषय की पुष्टि मे दिये जा सकते है। श्री विदेह जी को शायद मालूम है या नहीं कि अथर्ववेद १५।६।१४-१५ मन्त्र में आहवनीय, गार्हपत्य,

दक्षिणाग्नि, यज्ञ, यजमान आदि का वर्णन आया है पुन ११।५।५-१२ मे यज्ञाङ्ग, राजसूय, वाजपेय अग्निष्टोम, अश्वमेध, अग्न्याध्येय, दीक्षा तथा अन्य अनेक यज्ञो के नाम आये हैं। इसलिए वेद से ही यज्ञ भी सिद्ध है उसी के विनियोग सम्बन्धी विज्ञान का नाम कल्पविज्ञान है। आप यज्ञ को यदि कल्पित मानते है तो फिर वेद की अवहेलना करते हैं। यज्ञार्थ भी वेदमन्त्रों का एक अर्थ है ही। अनुचित विनियोग विज्ञान विपरीत होने से त्याज्य हैं और यह दोष ऐसे विनियोग के कर्त्ताओं का है।

रही आपकी यह प्रतिज्ञा कि कि प्रत्येक मन्त्र का एक सुनिश्चित अर्थ है यद्यपि गौण वृत्ति से उससे अन्य परिणाम भी निकाले जा सकते है।" इसका भी निराकरण किया जाता है। वस्तुत आप की प्रतिज्ञा व्यर्थ है। वेदमन्त्र का सभी युक्तियुक्त और सृष्टि नियम तथा ज्ञान विज्ञान से अविरुद्ध अर्थ सुनिश्चित ही अर्थ है। अग्नि का ब्रह्म या ब्रह्माग्नि अर्थ ही सुनिश्चित है जैसा कि आप अपने प्रथम पुष्प मे कर रहे है, तथा विद्वान् और भौतिक अग्नि अनिश्चित है यह कौन समझदार व्यक्ति मानेगा। यह तो लौकिक भाषा में भी नहीं होता। वैदिक में तो कहना ही क्या ? एक शब्द के युक्तियुक्त सभी अर्थ सुनिश्चित हैं। परन्तु श्री विदेह जी की सुनिश्चितता भी शायद कुछ अस्पष्ट जैसी अन्य वस्तु ही होगी। उन्होंने अपने प्रथम पुष्प मे "अग्निमीडे" मन्त्र की व्याख्या मे अग्नि का अर्थ "ब्रह्माग्नि" किया है। क्या मन्त्र मन्त्र, सूक्त सूक्त और अध्याय-अध्याय की सगति लगाने की डींग मारने वाले श्री विदेह जी इस सुनिश्चित अर्थ को समूचे वेद मे जहा जहा पर 'अग्नि' शब्द आया है चरितार्थ कर सकेंगे क्या सर्वत्र "अग्नि" शब्द का "ब्रह्माग्नि" अर्थ वे सिद्ध कर सकते है ? कोई भी विद्वान् यह साहस नहीं कर सकता है। यह तो केवल श्री विदेह जी का अपना साहसमात्र है। यह और भी विचित्र बात है कि वे वेद-वेद की सुसम्बद्ध सगति इसी आधार पर लगा सकते हैं। जबकि उनके दो पुष्पों मे भी यह बात देखने को नहीं मिलती। वे स्वय पुष्प प्रथम पृष्ठ १ पर अग्नि शब्द के आग, राजा, सूर्य, जाठर, विद्युत्, प्रकाश, आत्मा, परमात्मा, अग्रणी, राष्ट्रपति, नेता, नायक सेनापति आचार्य, गुरु, विद्वान् ज्ञानी आदि अर्थों का सकेत करते है परन्तु इन्हें गौण अर्थ मानते है। परन्तु पूछना चाहिए कि ये अर्थ सुनिश्चित क्यों नहीं ? आपके पास क्या प्रमाण है कि ये अर्थ सुनिश्चित नहीं। वेदार्थ मे गौण अर्थ मानने से क्या हानि आवेगी इसका श्री भाष्यकर्त्ता जी को पता भी नहीं है। वेद में प्रत्येक अर्थ अभिधेय है क्योंकि उसे ईश्वरीय ज्ञान माना जाता है। वह यौगिक प्रक्रिया से अर्थ देता है। उसके प्रत्येक शब्द यौगिक है गौण अर्थ मानने पर गौणी वृत्ति माननी पडेगी और ऐसी हालत मे लक्षणों से अर्थ करना पड़ेगा। लक्षणा वृत्तिसे अर्थ लेने पर वेद के ईश्वरीय ज्ञान होने और ईश्वर का काव्य होने मे दोष आवेगा। लक्षणा वृत्ति कल्पित है। इससे होने वाला अर्थ कल्पित होता है। जहा पर शब्द अपने मुख्यार्थ को नही बतला पाता वहा पर इस वृत्ति से अर्थ लगाया जाता है। वेद मे मुख्यार्थ का कहीं पर बाध है ही नहीं फिर लक्षणा कैसे लगेगी। संस्कृत का एक वाक्य है "मञ्चा क्रोशन्ति" अर्थात् मचान पुकारते हैं। यहा पर मचानमे पुकारने की ताकत नहीं अत मुख्य अर्थकी बाधा हुई। इस मुख्यार्थबाध के होने पर इससे "मञ्चा" का अर्थ मचान न लेकर मचानस्थ पुरुष लिया गया। तथा अर्थ यह हुआ कि मचानस्थ पुरुष पुकारते है। वेद मे यौगिक शब्द होने से सभी का अर्थ अभिधावृत्ति से लग जाता है। कहीं पर भी मुख्यार्थ का बाध नहीं होता। इसलिए लक्षण करके गौण अर्थ निकालने की आवश्यकता ही नहीं। यदि वैदिक शब्दों का लक्षण से अर्थ निकलने लगे तो फिर वेद की वेदता भी नष्ट हो

आत्मा के कल्याण का मार्ग

[लेखक—श्री स्वामी गंगागिरि जी महाराज, आचार्य गुरुकुल महाविद्यालय रायकोट]

पवित्र कर्मों का करता हुआ मनुष्य आगे बढ़ता जाए। प्राय मनुष्यों का स्वभाव होता है कि वे थोड़े से ही सतुष्ट हो जाते हैं। वेद कहता है कि "भले से अधिक या ऊपर कल्याण को प्राप्त कर"—अर्थात् थोड़े से सन्तुष्ट मत हो, अधिक से अधिक प्राप्त करने का यत्न कर। नारद को सनत्कुमार समझाते हुए कहते हैं कि —"यो वै भूमा तत्सुखम् नाल्पे सुखमस्ति भूमैव सुखं, भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्य इति"। छान्दोग्य-७।२३।१। इसका भाव यह है—जो बड़ा है अर्थात् भूमा ही सबसे बड़ा है, वह सुखकारी है, थोड़े मे सुख नहीं है, भूमा परमात्मा ही सुख का धाम है। इसलिए मनुष्य को नर-तन पाकर उस भूमा को प्राप्त करना चाहिए। इसी से आत्मा का कल्याण होगा। आजकल के लोग थोड़ा सा भद्र=सुख प्राप्त कर सन्तुष्ट हो जाते हैं। इसे सांख्य शास्त्र मे 'तुष्टि' नामक दोष माना गया है, अत मनुष्य को अधिक उन्नत होने का यत्न करना चाहिए। यह वेद का उपदेश है। इस सामान्य उपदेश के साथ एक गम्भीर आशय है वेद ने 'भद्र' का लक्षण इस प्रकार किया है। "सर्वं तद् भद्रं यद् अवन्ति देवाः"—अर्थात 'भद्र'=विद्वानों के पसन्द की क्रिया द्वारा अधिक श्रेय प्राप्त कर। जो भलाई से अधिक श्रेय है उसे प्राप्त कर। वेद के ये शब्द श्रेय और प्रेय मार्ग का उपदेश कर रहे हैं और संकेत से कह रहे हैं कि प्रेय की अपेक्षा श्रेय को प्राप्त कर।

इस श्रेय को प्राप्त करने के लिए=इस दुर्गम घाटी में जाने के लिए, बृहस्पति=परम ज्ञानी भगवान् को आत्मा के उद्धार के लिए अपना अगुआ=नेता बना। यदि भगवान् तक आपकी पहुंच नहीं है तो भगवान् के प्यारे परम ज्ञानी को अपना नेता बना। साधारण जन इस मार्ग पर नहीं चल सकते हैं। कठोपनिषद् में ठीक ही कहा है—नरेणावरेण प्रोक्त एषः सुविज्ञेयो बहुधा चिन्त्यमानः। अनन्यप्रोक्ते गतिरत्र नास्त्यणीयान् ह्यतर्क्यमणुप्रमाणात्। कठ—१-२-८।

यह ऐसा विषय है, जिस पर अनेक प्रकार से विचार किया जाता है। साधारण जन को उपदेश करने से यह सरलता से समझ में नहीं आता है। यह स्वात्म-संवेद्य तत्त्व है। जिसने इसका स्वयं अनुभव नहीं किया, वह कैसे इसमें गति करा सकता है। यह विषय अत्यन्त सूक्ष्म है। साधारण प्रमाणों के द्वारा तो इसकी तर्कणा भी नहीं की जा सकती है। हम दिनरात मनुष्यों को ब्रह्मविद्या पर व्याख्यान देते हुए सुनते है, परन्तु श्रोताओं के पल्ले प्राय कुछ नहीं पड़ता है। इसका प्रधान कारण तो यह है कि स्वय व्याख्याताओं को ही यह पता नहीं होता कि वे क्या बोल रहे है। जहा यह तत्त्व तर्क से परे है, वहा यह भी है कि जब इस तत्त्व का साक्षात्कार हो जाता है, तब ससार का कोई तर्क उससे साधक को हटा नहीं सकता हैं। किसी के हाथ में आमला पड़ा है और वह उसे देख रहा है, उसने उसका स्वाद भी चख लिया है। अब ससार का कोई बड़े से बड़ा तार्किक भी उसके उस ज्ञान को झुठला नहीं सकता। कठोपनिषद् में इस भाव को बड़े ही सुन्दर शब्दों में व्यक्त किया है—"नैषा तर्केण मतिरापनेया।" यह बुद्धि तर्क से

नहीं हटाई जा सकती है। कैसे हटाई जा सके ? सभी प्रमाण प्रत्यक्ष से नीचे हैं। अत आत्मबोध के अभिलाषी को सावधान होकर श्रेय और प्रेय का ज्ञान प्राप्त करके, उन दोनों का भेद समझ कर 'प्रेय की अपेक्षा श्रेय को प्राप्त करना चाहिए। परमात्मा की कृपा से ही यह मार्ग हाथ आता है। इस पृथ्वी के सब पदार्थों में से यही एक पदार्थ वरण करने= चुनने योग्य है। ससार के सारे पदार्थ उत्पाद-विनाशशाली हैं, पैदा होते हैं और नष्ट होते हैं, आते हैं और जाते हैं। एक श्रेय ही ध्रुव है। यम नचिकेता को कहता है, कि –

> जानाम्यहं शेवधिः इति अनित्य,
> नह्यध्रुवैः प्राप्यते हि ध्रुव तत्।
> ततो मया नचिकेतश्चितोऽग्निरनित्यै-
> र्द्रव्यैः प्राप्तवानस्मि नित्यम् ।
>
> कठोपनिषद् १०—३९।

यम नचिकेता को कहता है कि मैंने यह जान लिया है कि धन दौलत सब अनित्य हैं। इन अनित्य पदार्थों से ध्रुव=नित्य=अविनाशी ब्रह्म प्राप्त नहीं हो सकता है। अत हे नचिकेता ! जिस अग्निहोत्र या यज्ञ का मैंने तुझे उपदेश किया है-मैंने इस यज्ञ को निष्काम, कहा है। जिससे मैंने मन, इन्द्रिय और शरीर के द्वारा निष्काम परोपकार रूप=यज्ञाग्नि में धन वैभव आदि को भस्म करके अर्थात् उनका इस रूप मे परित्याग करके उस नित्य ब्रह्म को पाया है। इस प्रकार से संदेह को भस्म कर देनेवाली योगाग्नि का चयन किया हैं। तबइन अनित्य द्रव्यों के त्याग द्वारा नित्य अविनाशी परमात्मा को प्राप्त किया है। इसी भाव को वेद ने स्फुट किया है—भद्रादधिश्रेयः प्रेहि बृहस्पतिः पुर एता ते अस्तु। अथेममस्याः वर आ पृथिव्याः आरे शत्रूं कृणुहि सर्ववीरम्। (अ० ७।८।१)॥

अर्थात्—(भद्रात्) भले से (अधि) अधिक ऊपर (श्रेय) श्रेय=कल्याण को (प्रेहि) प्राप्त कर (बृहस्पति) सबसे बडा स्वामी अर्थात् वेदज्ञाता (ते) तेरा (पुर एता) अगुवा नेता (अस्तु) होवे, (अथ) और (अस्या पृथिव्या) इस पृथ्वी से (इम) इसे ही (आवर) पसन्द कर (सर्ववीर) सब वीरो से युक्त (शत्रु) शत्रु को (आरे कृणुहि दूर कर।

वेद की आज्ञानुसार इस श्रेय मार्ग पर चलना अति कठिन है। यह मार्ग विघ्न, बाधाओं से भर पूर है। पग २ पर शत्रु खड़े हैं। शत्रु भी साधारण नहीं है, वे सभी वीर महावीर है। उन्हें देखकर पथिक को कपकपी आने लगती है। पथिक तथा साधक का कर्तव्य है कि वह इन शत्रुओं को मार कर आगे चले। तभी श्रेय को प्राप्त कर सकता है। काम, क्रोध आदि बलवान् शत्र 'साधक' के मार्ग को रोके खड़े है। ये ऐसे शत्रु हैं जो मित्र का रूप धारण कर पथिक को सन्मार्ग से विदा कर देते हैं। अर्थात सन्त जनो ने कहा है कि—

"मनका मान त्यागो साधो ! मन का मान त्यागो।
काम क्रोध, सगतिदुर्जन की, ताते अहि निशिभागो"

भगवान् को अगुआ बनाने वाले पथिक शीघ्र ही इन शत्रुओं का रूप जान लेते हैं। ये असुर हैं, "रूपाणि प्रति मुञ्चमान" अर्थात् रूपों को बदल बदल कर सामने आते है। अत इन असुरों के चकमे में साधक को नहीं आना चाहिए। वरन् इन का नाश करना चाहिए। किसी साधक ने सावधान करते हुए कहा है कि—

"जाग २ रे बटोही यहा चोरों का डर हैं।"

सचमुच यहा बड़ा भय है, किन्तु कल्याण का मार्ग भी यही है। अत शत्रुओं को मारकर आगे बढना चाहिए। तभी आत्मा का कल्याण होगा॥

युरोप के कुछ दार्शनिकों और विज्ञानवेत्ताओं की विचार धाराएं

[लेखक—श्री ऐच० राय गुप्त]

इस लेख में युरोप के उन दार्शनिकों और विज्ञान वेत्ताओं की विचारधारा पर संक्षेप में प्रकाश डाला जाता है जिन्होंने या तो ईश्वर और जीव की अलग २ स्वतन्त्र और नित्य सत्ता को माना है या जो अद्वैतवाद के समर्थक रहे हैं।

वोट मली—ने भी हैकिल के द्रव्यवाद का खण्डन किया और कहा कि हैकिल का यह द्रव्यवाद अधूरा और पुराना है। आगे चलकर उस विद्वान् ने लिखा है कि विज्ञान हमें 'कैसे' का उत्तर देता है 'क्यों' का उत्तर नहीं देता। विज्ञान यह तो बता सकता है कि कोई घटना किस प्रकार हुई परन्तु वह यह नहीं बता सकता कि क्यों हुई ? क्यों का उत्तर विज्ञान की सीमा से बाहर है। क्यों का उत्तर दर्शन (फिलासफी) ही दे सकता है।

मि० मिल और प्रो० टेट—ने भी हैकिल के सिद्धान्त का खण्डन करते हुए सरलाज के विचारों का समर्थन किया है।

हविसन (Hewison) १८३४-१९१६—यह अमेरिका का एक प्रसिद्ध दार्शनिक था। वह लिखता है कि विकास वाद जीवन आरम्भ और चित्त के बारे में संतोष जनक उत्तर नहीं देता। मेरा अनुभव तो यह है कि इस संसार में बहुत सी शक्तियां और जीवात्माएं मौजूद हैं। ईश्वर उनका अधिपति है। जीवात्मा अमर और नित्य है। उनको ईश्वर ने नहीं बनाया। वह सदा से ईश्वर के साथ २ चले आ रहे हैं। वह काम करने में स्वतन्त्र हैं।

डेकार्टस—१५९६-१६५०—युरोप का यह प्रथम दार्शनिक था जिसने वहां अन्ध विश्वास को समाप्त कर हर बात का दार्शनिक ढग से निश्चय करने की प्रथा डाली। उसने अफलातून के सिद्धान्तों का (ईश्वर जीव सम्बन्धी) समर्थन किया। उसने कहा जीवात्मा शरीर से भिन्न चेतन पदार्थ है। प्रकृति जड़ और ज्ञानशून्य है। जीवात्मा के टुकड़े नहीं हो सकते और न ही वह नापतोल मे आ सकती है।

बेली १६४७-१७०६—इसका भी वही सिद्धान्त था जो डेकार्टस का था। वह विद्वान जीवात्मा को नित्य और अमर सत्ता मानता था।

लेवनीज १६४६-१७१६—इसने भी कहा कि मोनेड अर्थात् जीवात्मा प्राकृतिक नहीं है परन्तु वह ऐसा मानता है कि जीवात्मा को ईश्वर ने उत्पन्न किया है। ईश्वर असीम और पूर्ण है। ईश्वर ही संसार का रचने वाला है। संसार में सुख दुःख दोनों हैं। जीवात्मा अपने कर्मानुसार दुःख सुख पाता है।

स्पीनाजा १६३२-१६६७—इस दार्शनिक का मत था कि ईश्वर या नेचर एक वस्तु है। यह जगत ईश्वर का विकसित रूप है। संसार में केवल एक ही द्रव्य है और वह है ईश्वर और उसके गुण भी अनादि और अनन्त हैं। ईश्वर के दो गुणों से यह संसार उत्पन्न हुआ है—एक चेतना और दूसरा विस्तार। चेतना से जीव उत्पन्न होते हैं और विस्तार से समस्त संसार पैदा होता है। प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि वह बुद्धि और ज्ञान से भलाई बुराई और संसार की समस्त वस्तुओं की जाच करे। चूंकि बिना ईश्वर को जाने कोई उचित जाच नहीं कर सकता इसलिए मनुष्य का

कर्त्तव्य है कि वह ईश्वर को जाने। ईश्वर को जान लेने से ही मनुष्य मात्र के आपसी सम्बन्धों को जाना जा सकता है।

फिक्टे १७६२-१८१४—यह जर्मनी का फिलास्फर था। यह अद्वैतवादी Absolutist था। वह कहता है कि जीवात्मा अर्थात ईगो Ego जगत को केवल बनाता ही नहीं वरन् वह उत्पादक भी है। ईगो के अतिरिक्त किसी और पदार्थ की सत्ता नहीं। ईगो का स्वभाव है कि अपने ज्ञान में अनात्मा को पैदा करके उसे अपने से पृथक् समझे। यह पृथक् समझना ही भ्रम है। वास्तव में कोई वस्तु पृथक् नहीं। परमात्मा को भिन्न समझना भूल है।

हीगल १७७० १८३१—यह जर्मन फिलास्फर था। यह भी अद्वैतवादी था। वह कहता है कि निर्पेक्ष ही हमारे ज्ञान का विषय है। क्रिया और जीवन निर्पेक्ष ही हैं। जीवन बुद्धि का प्रकाश है। जीवन के सारे पदार्थ उसी Absolute के प्रकाश है। जीवात्माए भी निर्पेक्ष ईश्वर के भाति २ के रूप हैं। ससार में केवल एक ईश्वर या निर्पेक्ष की ही सत्ता है।

शैलिङ्ग—यह भी अद्वैतवादी दार्शनिक था। इसका भी वही मत था जो फिक्टे का था। अन्तर केवल इतना है कि यह कहता है कि सत्य पदार्थ न आत्मा है और न अनात्मा वरन एक और वस्तु है जिसका नाम ज्ञान या बुद्धि Intelligence है। यही आत्मा और अनात्मा योनि का विकास है। इसे ही निर्पेक्ष Absolute कहते हैं।

राइस १८५५ १९१६—४ जुलाई सन् १७७६ को अमेरिका स्वतन्त्र हुआ। इसके पश्चात् अमेरिका में कुछ विद्या का जोर बढना आरम्भ हुआ। १९ वीं शताब्दि में वहा दार्शनिक विचारों की लहर उत्पन्न हुई अत यह अमेरिका का एक प्रसिद्ध दार्शनिक माना जाता है। यह निर्पेक्षवादी था किन्तु इसकी विचार धारा दूसरे निर्पेक्षवादियो से कुछ भिन्न थी। उसका कहना है कि विज्ञान हमे जीवन की वास्तविकता का पूर्ण ज्ञान नहीं कराता और न वह असत्य तत्वों का भेद खोलता है। हम ईश्वर को अपनी आत्मा में योग द्वारा उसके गुणों को देखकर अनुभव कर सकते हैं। विज्ञान ईश्वर का विषय नहीं है। आगे चल कर वह लिखता है कि अच्छे कार्य वे हैं जिनसे केवल अपना ही भला न होकर मनुष्य मात्र का भला हो या यों कहिये जिससे दूसरों को हानि न पहुचे।

क्रोस १८६६-१९५२ और जेन्टाइल १८७५-१९४४—ये दोनों इटली के प्रसिद्ध दार्शनिक थे। क्रोस ने जड़वाद का खण्डन किया और यह बतलाया कि चित्त Mind या शक्ति Spirit ही केवल मूल तत्व है इससे ऊपर कोई मूल तत्व नहीं है। जेन्टाइल ने क्रोस के कुछ विचारों का विरोध किया और कहा कि आत्म चेतना ही मूल तत्त्व है। ये दोनों दार्शनिक निर्पेक्षवादी थे।

अगले लेख में उन प्रसिद्ध वैज्ञानिकों, दार्शनिकों एवं विद्वानों की विचार धारा से परिचय कराया जायगा जो परमात्मा और जीव की अलग २ स्वतन्त्र, नित्य और अमर सत्ता में विश्वास रखते हैं।

जावेगी जैसा कि आप कर रहे हैं। परमात्मा के द्वारा दिये ज्ञान के कोई भी शब्द अपने मुख्य अर्थ के बाधक नहीं हो सकते। जो आदमी इन बातों को नहीं जानता वह अपनी कल्पना करके वेदभाष्य करने बैठ जावे—यह उसका दुस्साहसमात्र ही होगा।

श्री विदेह जी की मान्यताओं के विषय में जो तीसरा शीर्षक मैंने दिया है उसका निराकरण इसी मे कर दिया है। अत उसे पुन लिखकर विस्तार करना उचित नहीं मालूम पडता। अगले लेखाङ्क मे वेदार्थ करने की योग्यता और विदेह जी की कुछ अन्य बातों पर विचार किया जा गा।

शासन प्रणाली कौन सी श्रेष्ठ है?

(लेखक—श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी परिव्राजक

प्रश्न है व्यक्ति शासन (एक राजा का शासन) श्रेष्ठ है या गण शासन (अधिकतम जनसख्या वाले वर्ग विशेष का शासन)। यह तो स्पष्ट है संसार में व्यक्ति शासन (एक राजा का शासन) बहुत्र है या प्राय है और गणशासन (अधिकतम जनसख्या वाले वर्ग विशेष का शासन) अत्यन्त न्यून है या दो तीन राष्ट्रों मे भारत अमेरिका आदि में ही है। प्रथम कभी भारत मे कहीं २ गणशासन के चिन्ह मिलते हैं। पर अधिकाश मे सार्वजनिक हित की दृष्टि से जनता को व्यक्ति शासन (एक राजा का शासन) प्रिय रहा यह भी स्पष्ट है, सो क्यों यह बात सिद्ध है यदि व्यक्ति अन्याय से शासन करे जनता की या जनता के अधिकारो की यथावत् रक्षा एव व्यवस्था न करे तो उसे सारी जनता मिलकर शासन से हटा सकती है, गद्दी से उतार सकती है परन्तु गण (अधिकतम जनसख्या वाला वर्ग विशेष) अन्याय से शासन करे अन्य वर्गों या जनों की रक्षा एवं उनके अधिकारों की व्यवस्था न करे तो उसे शासन से हटाना गद्दी से उतारना तो असम्भव सा ही है, वह ऐसा अधिकतम जनसंख्या वर्ग विशेष का शासन गण शासन तो शक्ति का शासन हुआ गुण शासन नहीं किन्तु चाहिए गुणशासन। गुण कभी भी अधिकतम जनसंख्या वाले गण में नहीं मिलता। गुण का स्थान थोड़ा होता है। असदाचरण की ओर चलने वाले अधिक मिलते हैं सदाचारी कम अथवा गण शासन अर्थात् गण राज्य न होकर जनशासन अर्थात् जन राज्य—जानराज्य सार्वजनीन होता है सर्व जनों के हितकर होता है। व्यक्ति शासन में व्यक्ति भी अपने स्वार्थसाधने और विषयपरायणता में जनहित साध नहीं सकता पर उसे सब मिल कर कभी भी हटा सकते है। जैसे कहा है—

'अरक्षितार राजान जह्यात्" (विदुरनीति)

रक्षा न करने वाले राजा को त्याग दे, हटा दे। पर गण को हटाना असम्भव सा है। एक बार सत्तारूढ हो गया तो फिर उतरना किसका और कैसे? अतएव व्यक्तिराज भी दोषयुक्त है और गणराज्य भी दोषयुक्त है। वेद और ऋषि दयानन्द की दृष्टि मे व्यक्ति राज्य और गणराज्य दोनों ठीक नहीं किन्तु हेय है। ऋषि लिखते है कि—

"एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिये किन्तु राजा को सभापति तदधीन सभा सभाधीन राजा राजा और सभा प्रजा के अधीन रहे।" (सत्यार्थप्रकाश षष्ठ समुल्लास)

राजा शब्द आज कल अच्छे अर्थों में नहीं लेते किन्तु यह शब्द अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है जो सब शुभ गुणों से राजमान प्रकाशमान हो वह

राजा कहाता है। जैसे ऋषि दयानन्द ने लिखा है —

"जो सब मे सर्वोत्तम गुण कर्म स्वभाव युक्त महान् पुरुष हो उसको राज सभा का पति रूप मे मान के सब प्रकार की उन्नति करें।"

(सत्यार्थप्रकाश षष्ठ समुल्लास)

ऋषि की यह भी घोषणा है कि—

"प्रजा को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि अपने देश का शासन सभा के अधीन करे एक व्यक्ति के नहीं "

यहा ऋषि के शब्दों मे व्यक्ति राज्य का निषेध और दोनों वचनो "प्रजा के अधीन रहे' और "प्रजा को इस बात का ध्यान रखना चाहिये" इन शब्दों से प्रजा का राज्य हो न कि गणराज्य, किसी अधिकतम सख्या वाले वर्ग का राज्य। वेद मे कहा है कि—

"महते जानराज्याय० " (यजु० ९। ४०)

महान जान राज्य (जनता राज्य) के लिए, इसे लोकभाषा मे पचायत राज्य कहते है।

"पञ्चजना मम होत्र जुषन्ताम्'

(ऋ० १० । ५३ । ५)

"चत्वारो वर्णा निषाद पञ्चम ॥"

(नि० ३ । ८)

चारों वर्ण—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और भील ये पाच जन हैं। इन सब का राज्य पञ्चायत पाचों के आयत अधीन राज्य पञ्चायत राज्य है। आजकल यह ब्राह्मण आदि वर्ण व्यवस्था टूट गई है और धर्म भी भारतवासियों का एक आर्य धर्म नहीं रहा अनेक धर्मावलम्बी जन हो गए अत पाच प्रधान एव प्रसिद्ध धर्मो जिन्हें अन्य शाखा धर्मावलम्बी भी स्वीकार कर लें या समस्त शाखा धर्मों के आयत—अधीन राज्य शासन हो, उनके एक २ प्रतिनिधि उनके द्वारा दिए हुए हों जो वे समान सख्या में मिल कर राजसभा धर्म सभा विद्या सभा का काम करे। निर्णय आदि की समस्त व्यवस्था धर्म व्यवस्था विद्याशिक्षा व्यवस्था पर इनका अधिकार हो अन्य किसी राजनैतिक सख्या का नहीं अपितु कोई भी राजनैतिक सस्था देश में न रहे, इस ऐसे धर्म राज्य मे किसी भी राजनैतिक सस्था को राज्य विरुद्ध घोषित कर उसका विलय कर दिया जावे उसका उदय न होने दिया जाए। क्योकि ये सस्थाए अर्थ लाभ पद लाभ को लेकर खडी हुई हैं। यह है सच्चा जन राज्य, जनता राज्य या पञ्चायत राज्य, इसमे गणराज्य की भाति प्रति पाचवें वष जो देश का अरबों रुपया वोट व्यवस्था मे खर्च होता है नष्ट होता है वह बच जायगा। यह गणराज्य का दोष अर्थ विनाश विषयक आर्थिक दृष्टि का है। दूसरे इस गणराज्य के वोटों से जो परस्पर विद्वेष सघर्ष की आग देश मे लगती है भडकती है वह न जल सकेगी, यह गणराज्य का दोष पारस्परिक प्रेमभाव और शान्ति के भग होने का है। तीसरे गणराज्य का भारी दोष जो अभिमत्त और प्रबल होकर किसी एक वर्ग को दलन करने, दबाने न्याय एव अधिकार से वञ्चित और अन्य किसी वर्ग का पक्ष कर उसे अन्यों की अपेक्षा अधिक अधिकार देने आदि का न हो सकेगा, यह गणराज्य का तीसरा दोष है जो भारत के नूतन गणराज्य मे प्रबल होचुका है। चौथा दोष गणराज्यका है अन्य गण के टुकडे करने की रीति नीति प्रचारित कर उनको पृथक् २ कर फूट डाल उनके अलग अधिकार निश्चित कर कुछ को अपने पक्ष मे अपने वोटों का उल्लू सीधा करने को जनता में फूट डालना आदि जैसे आजकल चलरहा है। गणराज्य के इनदोषों से देशकी रक्षा होनी चाहिये। महात्मा गाधीभी गणराज्यके विरुद्धथे। सुनाजाताहै कि जब स्वराज्य भारत को प्राप्त हो गया तो महात्मा गाधी ने काग्रेस विर्गाठत कर देने तोड़ देने को कहा था, काग्रेस तो भारत पर आरूढ विदेशी राजसत्ता से सघष लेने को बनी थी जब भारत को स्वराज्य प्राप्त

हो गया तो फिर कांग्रेस की आवश्यकता न रही, फिर भी बनी रही तो क्या देश के लोगों से संघर्ष करने को ? अपितु महात्मा गांधी तो फूट की नीति के भी विरुद्ध थे। ब्रिटिश शासन ने हरिजनों को हिन्दुओं से पृथक करना चाहा था इस पर महात्मा गांधी ने आमरण अनशन कर डाला था कि हरिजन हिन्दू हैं हिन्दुओं से अलग नहीं। उस समय हिन्दुओं की भांति हरिजनों को भी मन्दिर प्रवेश का अवसर स्थान २ पर मिला था। हरिद्वार में हमने स्वयं मन्दिरों में हरिजनों को प्रविष्ट होते पूजा करते देखा। इस प्रकार इस जानराज्य जनता राज्य या पञ्चायत राज्य में सनातन आर्यसमाज, सिख, जैन, बौद्ध मुसलमान ईसाई आदि समस्त धर्म सम्प्रदायों की समस्त समान सदस्यता राज सभा धर्मसभा विद्यासभा में होगी तब सब के धर्म सुरक्षित सब की धर्म भाषा सुरक्षित रहेगी किसी की भाषा पर कोई प्रतिबन्ध न हो सकेगा। पाठ्य क्रम में ऐसे विचारों का समावेश होगा जो सब सत्य अर्थात् सर्वतन्त्र सब में एक जैसे पाये जाए तथा किसी भी धर्म की विशिष्ट उन उपयोगी बातों को भी लिया जायगा जो दूसरे धर्म में होते हुए विरोध न हो जहां विरोध का प्रतिपादन न हो ऐसी धर्म शिक्षा सदाचार को स्थान दिया जायगा। जैसा कि ऋषि दयानन्द ने भी लिखा है—

यद्यपि सभी मतों में बहुतेरे विद्वान् हैं यदि सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो २ बातें सब के अनुकूल सब में सत्य हैं उन उनका ग्रहण कर प्रचार एक दूसरे के विरुद्ध का त्याग करें तो जगत् का पूर्ण हित सिद्ध होवे।" (सत्यार्थप्रकाश भूमिका)

अस्तु ! यह तो स्वदेश या स्वराष्ट्र की जानराज्य या पञ्चायत राज्य की पद्धति हुई किन्तु संसार के समस्त देशों या राष्ट्रों का पारस्परिक शासन भी पञ्चायत से हो जावे तो समस्त राष्ट्र परस्पर एकता और प्रेम के सूत्र में आबद्ध होकर सुख शान्ति को प्राप्त कर सकें, उसका प्रकार वेद में बतलाया है कि—

त्वां विशो वृणतां राज्याय त्वामिमाः प्रदिशः पञ्च देवीः।" (अथर्व० ३।४।२६)

राजा या राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए कहा है कि प्रत्येक राष्ट्र में राजा या राष्ट्रपति का निर्वाचन प्रथम अपने राज्य की जनता करे, किन्हीं कुछ गुणवान व्यक्तियों में से विशिष्ट गुणवान को चुने। पुनः उन्हीं कुछ गुणवान् व्यक्तियों के नाम निर्वाचनार्थ पांच प्रदिशाओं अर्थात् निज राष्ट्र की चारों सीमाओं के राष्ट्रों या उनके दूतों और पांचवें अपनी जनता के द्वारा निर्वाचित करे। एवं किसी भी राष्ट्र के राजा राष्ट्रपति या उत्तमाधिकारी के निर्वाचन में उसके सीमावर्ती राष्ट्रों की अनुमति भी हो केवल अपने दो वोट होंगे एक प्रथम से अपनी जनता का दिया हुआ सुरक्षित वोट, दूसरा अन्य राष्ट्रों के साथ में दिया वोट, इस प्रकार प्रत्येक राष्ट्र के दो वोट अपने और एक २ वोट सीमावर्ती अन्य राष्ट्रों के होंगे। सीमावर्ती राष्ट्र परस्पर एक दूसरे के साथ अधिक सम्पर्क रखने से वहां की परिस्थिति से अभिज्ञ और प्रभावित होते हैं उनके सुख दुःख का सहयोग होता है। अतः निर्वाचन में अभीष्ट हैं। ऐसा निर्वाचन संसार भर में होने से संसार के समस्त राष्ट्र एकता और प्रेम के सूत्र में आबद्ध हो जाने से सुख शान्ति का अनुभव करेंगे। अस्तु, इस प्रकार जानराज्य एवं पञ्चायत राज्य का कार्य आर्य समाज को करना है। इस पर और पुनः।

भारतेतर देशों में प्रचार की समस्या

(श्री प० उषर्बुध आर्य, वैदिक प्रचारक)
C/o C R Singh, Maagdenstraat, Paramaribo Suriname. South America)

विदेश प्रचार शब्द का प्रयोग नहीं कर रहा हूँ क्योकि जो सार्वदेशिक है उसके लिए विदेश क्या ? मुझे तो ६ वर्ष की इस यात्रा मे विदेश कहीं लगा ही नही जहा चले जाइए अपने प्रम और सेवा से कुटुम्ब बना डालिए, ऐसा कि जब चलने लगे तो ४ वर्ष के बच्चे और ८० वष के वृद्ध आसू बहाए । कितने ही देश मेरे स्वदेश बने हैं और उनकी स्मृति ही टीस के साथ रह गई है--इतना वात्सल्य, इतना प्रेम सर्वत्र मानव मे है । 'जन बिभ्रती बहुधा विवाचसम् ।'

इस विषय पर बहुत कहा, सुना, लिखा जा चुका है और उस कहे, सुने, लिखे की बहुत छीछालेदर की जा चुकी है । मुझे तो अपने अनुभव क आधार पर दो चार बातें ही कहनी हैं ।

रामकृष्ण मठ के प्रचारकों को देखिए । ससार के कोनेर में उनक केन्द्र है । कादियानी लोगों की मस्जिदें अमेरिका, हालैंड, इगलैंड सब जगह है, अभी जर्मनी मे भी बन गई हैं--हैम्बर्ग मे । ये सब लोग तो आर्गसमाज से बहुत पीछे पैदा हुए किन्तु क्यों ससार भर मे फैल गए ? आयसमाज को क्या हुआ है ? भारत से बाहर आर्गसमाजें हैं--शायद कुल मिलाकर पौने दो सौ । वे सब भारतीयों मे ही हैं, उसे मे भारतेतरों मे प्रचार नहीं मानता । पूर्वी अफ्रीका मे बीस आर्यसमाजें हैं । जब मै वहा गया था तो ताले लगते जा रहे थे । वहा ईसाई मिशन भी है-जगल २ में अफ्रीकी सभी ईसाई हो गए है । स्टेनले और लिविंग्स्टन के बलिदान का यह परिणाम है, वैसे अन्वेषक प्रचारक, खतरा मोल लेने वाल हमारे पास कहा है ? आर्यसमाज के प्रचारक बाहर इन देशो मे गए तो प्राय पैसा कमाने के लिए आज स्थिति यह हो गई है कि विदेशस्थ भारतीय जनता इन प्रचारको से तग आ गई है और 'वापिस जाइए' का नारा लग रहा है। बहुत से प्रचारको का आचरण इतना निकम्मा है, प्रेरणा रहित है कि उनके कारण आर्गसमाज की अप्रतिष्ठा ही होती है ।

रामकृष्ण मिशन और थियॉसॉफिकल सोसायटी के पास वे प्रचारक है जो जिस देश मे जाए वहा की भाषा धारा प्रवाह बोल सकें । यहा मेरा तात्पर्य शब्द भाषा से ही नही अपितु मानस भाषा से है। शब्द भाषा का ज्ञान होते हुए भी मानस भाषा की समस्या (Semantic Difficulty) प्रचारक को असफल कर देगी। स्वा० निखिलानन्द जैसे प्रचारकों ने आल्डस हक्सले और क्रिस्टोफर इशवुड जैसे दार्शनिको को अपने हाथ मे करके रामकृष्ण मिशन का नाम बढाया है । तीन वर्ष इगलैंड और यूरोप मे रहकर मैने देखा कि उन प्रचारको के पास वह है जिसकी माग आज का पश्चिम पूर्व से कर रहा है ।

रोमने सैनिक और राजनैतिक दृष्टि से हेलास (यूनान) को जीता किन्तु रोम के पास दर्शन न था, बुद्धि न थी, विचारशक्ति न थी। परिणामत शरीर हार कर भी हेलास का आत्मा न हारा, उसने रोम के आत्मा को जीत लिया और रोम के लोग हेलास के बुद्धि तत्त्व के पीछे पागल हो गए। आज सारा यूरोप रोमन खण्डहरों मे रोम के टूटे

शरीरों को देख सकता है और यूरोप के सारे साहित्य, कला और परम्परा मे हेलास के अमर और जीवित आत्मा को। यह इतिहास का एक दुर्दान्त सत्य है कि हारने वाला अपना शरीर हार कर, अनग बनकर, सूक्ष्म होकर विजेता के आत्मा का जीत लेता है। रोम ने मध्यपूर्व को जीता, इस रायल मे रोमन सत्ता न होती मध्यपूर्व रोम से न हारा होता तो वहा पैदा हुई ईसाइयत रोम न पहुचती, यूरोप आज भी डायना प्रार जानोस की पूजा कर रहा होता।

चीन भारत पश्चिम से हार गया यह बड सौभाग्य की बात हुई। आज के यूरोप का बोद्धिक जगत् ताओ ते छिङ और भगवद्गीता से कुछ सीखना चाहता है। अभी गत मास मै निकेरी से परामारिबो जा रहा था —वायुयान के पाइलट के साथ बैठे २ उससे चर्चा चल पडी। वह अमेरिकन था। मै सदैव तहबन्द और कुरते के वेश मे रहता हू सो उसने जाना कि भारतीय प्रचारक हू और बतलाना शुरू किया कि "पहले वायुयान चलाते २ थकान आ जाती थी, स्वा० विवेकानन्द का "राजयोग" और भगवद्गीता का अनुवाद पढा कुछ योगासन सीखे प्राणायाम और ध्यान का अभ्यास किया। वायुयान चलाते २ थक जाता हूँ तो दो चार प्राणायाम से स्नायुमण्डल को विश्राम दे लेता हू। चलाते २ चित्त प्रभु मे भी लगाए रहता हूँ। कभी बीमार नहीं पडता और मन को शान्ति है।" कहा उसे यह मिला ?

यूरोप में भारत प्रेमियों के आज कई वर्ग है। एक वे है जो भारत को विश्वराजनीति मे शान्ति का दाता मानते हैं। उनका तात्पर्य भारत की वर्तमान विदेशनीति से नहीं—वह तो अन्य देशों की ही भाति उपयोगिता पर, न कि आदर्श पर, आधारित है। उनका आशय है गान्धी जी से तथा Neutrality और पचशील से। समस्त विश्व की निःसैन्यता के लिए आज बहुत बडा आन्दोलन Pacifism के नाम से यूरोप और अमेरिका मे है जिन देशों में प्रत्येक व्यक्ति को कानून से दो वर्ष सेना मे रहना पडता है, बहुत से भारतभक्त, अहिंसावादी पैसिफिस्ट सेना मे जाने से इनकार करके जेलों मे जा चुके हैं और आज भी जेलों मे सड रहे है।

इनके अतिरिक्त वे भी है जो शाकाहारी आन्दोलन के सदस्य होने के पश्चात् यह जानते है कि भारत मे शाकाहारी बहुत हैं सो भारत के प्रति रुचि लेने लगते है।

कुछ लोग दिल से भारत को प्यार करते है और कुछ दिमाग से। अर्थात् कुछ विश्वविद्यालयादि के छात्रों, अध्यापकों की रुचि भारत के दार्शनिक बौद्धिक तत्त्व मे है जिसमे वे मुख्यत शाकर वेदान्त के भक्त हैं क्योंकि वैसा ही अद्वैतवाद यूरोप के मुख्य २ दार्शनिकों तथा ईसाई सूफियो (Mystics) में भी है प्लतो, प्लोतिनुस्, एकहार्ट, हेगेल, काट बर्कले, सभी तो अद्वैतवादी है। प्रसिद्ध भौतिकवादी Haeckel ने तो "Monism A link Between science and Religion" ग्रन्थ लिखा। सो शाकर वेदान्त इन लोगों को प्रभावित करता है। शायद इसका कारण यह भी है कि आर्यसमाज का त्रैतवाद अभी इन तक पहुचा नहीं है।

दिल वाले वे है जो भक्ति रस चाहते है। गीता पढ २ कर भक्ति के आसू बहाने वाले मैने बहुत से देखे है। उन्हें शान्ति की खोज है। 'योग' शब्द एक फैशन बन गया है। (हॉलीवुड की फिल्म अभिनेत्रिया शारीरिक सौन्दर्य के लिए योगासन सीखना चाहती है!) आत्मदर्शन की पिपासा बढती ही जा रही है।

तो आर्यसमाज के पास प्रचारक नहीं है। प्रचारक ऐसे चाहिए जो जिस देश मे जाए वहा की भाषा बोल सकें—मानसिक भी। लोगों के

हृदय तक पहुँच सकें। केवल अंग्रेजी मे एम० ए० कर लेने से यूरोप की भाषा नहीं आती। आर्य समाज ने अंग्रेजी मे पुस्तकें निकाली हैं पर वे पाश्चात्य मानस तक पहुँच सकें वैसी नहीं है। डॉ० चिरजीविभारद्वाजकाअंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश कुछ थोडा काम का है। मानस तक पहुँचने के लिए प्रचारकों के पास यह योग्यता चाहिए —

अमुक देश की भाषा, सस्कृति, साहित्य दर्शन और इतिहास का पूर्ण ज्ञान हो। युगोस्लाविया मे कवल जन्म की वर्ण व्यवस्था पर शास्त्रार्थ करने से काम न चलेगा। वहा की स्थिति के अनुसार कुछ कहना होगा। आप इगलैड के ग्रामो मे भाषण देते हुए भारत के ग्रामणी को "Elected head of the Village council" कहें किन्तु युगोस्लाविया में Village Commune कहें। अर्थ एक ही है किन्तु दोनो देशो के मानस के अनुसार शब्द भेद से प्रभाव भेद है।

आप अंग्रेजी में मन को Mind कहते हैं क्याकि कोष में वैसा पढा है। जब आप इगलैड में अपने भाषण में mind का उपयोग करते हैं तो आपका आशय उस प्राकृतिक मन से है जो इन्द्रियों और आत्मा के बीच सन्देशवाहक है और जिसे निर्विषय करना ध्यान है। परन्तु आपके अंग्रेज श्रोता नहीं समझते वहा की बौद्धिक भाषा मे mind है सम्पूर्ण चेतना समवाय। आप नीम कह रहे है, श्रोता अदरख समझ रहा है। शब्द वही है। वहा "Mind over matter" का बड़ा व्यापक अर्थ है "चेतन का अचेतन पर अधिकार" क्योंकि उसके पीछे अरिस्टॉटल के सिद्धान्त छिपे हैं। वहा "mind" ग्रीक भाषा के nous का अनुवाद है।

ऐसे ही यदि आप "दिवि मे अन्य पक्षो ऽघोन्यमचीकृषम्" मन्त्र की व्याख्या में मिस्र के साहित्य से "शरीर से निकलती हुई पखों वाली आत्मा" का चित्र भी प्रस्तुत कर सकें तो पाश्चात्य मानस और अधिक अच्छी तरह समझेगा। चीन म यदि आप साख्य के पुरुष प्रकृति पर भाषण देना चाहते हैं तो भाषण का शीर्षक रखिए "यिङ् याङ्" अर्थात् चीनी जो समस्त विश्व को पुरुष प्रकृति, नर नारी का समन्वय बनता है। इसरायल मे भाषण देने के लिए 'कबाला' का ज्ञान न होने पर आप योगशास्त्र की व्याख्या मे असफल हो जाएंगे।

इस प्रकार भारत से बाहर जाने वाले प्रचारको के लिए एक उच्च तुलनात्मक बौद्धिक स्तर की आवश्यकता है। इसके साथ ही चाहिए एक उच्च योगाभ्यासी हृदय, जो भक्तिभाव से परिपूर्ण हो जो पास आकर बैठे व्यक्तियो को शान्ति दे सकें। इगलैंड मे लोग कई बार मेरे कमरे मे आकर घन्टों बैठते, बिना बात किए और रात्रि मे वहीं सो भी जाते "क्योंकि यहा शाति मिलती है।" मैने नकार कभी नहीं किया। प्रभु से यही प्रार्थना करता "और अधिक शाति, भक्ति मुझे दे दो, देवता।' वे लोग केवल विद्वत्ता पाण्डित्य नहीं चाहते आपके पास ध्यान और योगाभ्यास के तत्त्व सीखने आते हैं। मै इगलैंड के बौद्धों की सभाओं मे गया हू—सभा का अर्थ केवल इतना है कि लोग जमा हों और ध्यान में बैठें। वहा बुद्ध की नास्तिकता पर भाषण देने से काम न चलेगा "बौद्ध धर्म का शून्य तत्त्व और उपनिषदों का "नेति" ब्रह्म तत्त्व एक ही है"—इस आशय के मेरे लेखों या व्याख्यानों ने मुझे पाश्चात्य बौद्धों को प्रभावित करने मे काफी सहायता की।

सितम्बर १९५६ से मैं दक्षिण अमेरिका के ब्रिटिश गायना और सुरीनाम देशों मे प्रचार कर रहा हूँ। जब आया था तो ब्रिटिश गायना में २० आर्यसमाजें थीं—अब ४० हैं। कुल मिला कर ब्रिटिश गायना, सुरीनाम, ट्रिनिडाड में ८० आर्य समाजें हैं और कुल मिला कर चार लाख भारतीय।

हा तो, यहा रेड इण्डियनों की तथाकथित जंगली जातियों में जाने का अवसर हुआ। सुन्दर घाटियों मे, नदियों के किनारे लोग बसते है। ईसाई प्रभाव मे वे लोग अपना सब कुछ भूल गए हैं। जब इंगलैण्ड से प्रचारार्थ इधर आने का विचार कर रहा था तो मन मे सोचा कि जब अफ्रीका गया था तो वहा की जातियों के विषय मे कुछ नहीं जानता था अत प्रचार क्षेत्र भारतीयों तक ही सीमित रह गया था। सो आमेरिण्डियन (रेड इण्डियन) जातयो का इतिहासादि खूब पढा। सो जब इन जातियो मे प्रचारार्थ गया तो उन्हीं का भूला इतिहास उन्हें सुना कर इनके हृदय को जीतने मे बहुत सुगमता हुई।

यह सब इस लिए लिखा कि भारत को आज के युग को आवश्यकता का अनुभव हो। मेरा एक सुझाव है आर्य जगत् के सामने और यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वैसे आजकल सुझाव इतने आते हैं और ठोस, रचनात्मक काम इतना कम होता है कि मनुष्य थक जाता है। सुझाव यह है कि—

(१) सार्वदेशिक सभा भारत से बाहर आने वाले प्रचारकों पर कडी दृष्टि रखे और अयोग्यो को न आने दे।

(२) जो लोग प्रवासी भारतीयों मे हिन्दी भाषा में प्रचार के लिए जाए वे कम से कम ६ मास का प्रशिक्षण वहा के भारतीयों तथा अन्यों के इतिहास, वर्तमान परिस्थिति आदि के विषय पर लें। बुलाने वाली सस्था उन्हें मासिक दक्षिणा दे तथा अन्य जो धन समह हो वह सम्बन्धित प्रचारक की सम्मति से उसी देश मे किसी रचनात्मक प्रचार मे लगाया जाए।

(३) जो लोग एशिया, अफ्रीका, यूरोप, अमेरिका के अन्य देशों मे प्रचार के लिए जाए वे जाने से पूर्व कम से कम दो वर्ष का प्रशिक्षण सम्बन्धित देश की भाषा, इतिहास, दर्शन और सस्कृति पर लें।

(४) उक्त कार्यों की सिद्धि के लिए एक विशाल Missionaries Training College भाषाओं का विशाल तुलनात्मक साहित्य उपलब्ध हो और ट्रेनिंग दी जाए। इस कालेज से प्रशिक्षण दे कर विद्वान् युवक युवतियो को "ईसाई-बौद्धों के तुल्य सच्ची मिशनरी स्पिरिट" तथा प्रचार साधनों से सज्जित कर भारतेतर देशों मे प्रचार के लिए भेजा जाए। इसी केन्द्र से अमुक देशों के लिए उपयोगी साहित्य भी प्रकाशित हो।

(५) व्यय के लिए पृथक एक व्यापारिक ट्रस्ट बनाया जाए जिसकी आय से उक्त कार्य सम्पादित हो। प्रवासी भारतीयों को भी छात्रवृत्ति देकर यहा उनके स्थानीय प्रचारक तैयार किए जाए।

मै भारत आने पर उक्त कार्य सम्पादन करना चाहता हूँ। महर्षि दयानन्द ने भारत में आर्य समाज को गति दी। अब "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का स्वप्न कौन पूरा करेगा?—इस कार्य के लिए प्रारम्भ मे दस लाख रुपये की आवश्यकता होगी, क्या है कोई भामाशाह? क्या सार्वदेशिक सभा इस काम को अपने हाथ मे ले सकेगी?

मैं स्वय कई भाषाओं तथा विभिन्न देशों को सस्कृति, दर्शन, साहित्य की तुलनात्मक शिक्षा दे सकता हू। क्या कोई सेवा लेगा? नहीं, तो शायद मैं अपना शेष जीवन इसी प्रकार देश विदेश में भटकता हुआ बिता दू।

श्री प० उपबुध जी के सुझाव विचारणीय हैं। जिन आर्य प्रचारकों ने विदेशस्थ भारतीयों मे जागृति उत्पन्न की, उनके धर्म्म और आचार की रक्षा की, उन्हें विधर्मी होने से बचाया, मातृभूमि भारत के प्रति उनकी श्रद्धा को जगाया और आर्य समाज का मार्ग प्रशस्त और क्षेत्र विस्तृत किया उनके काम का सहसा ही भुलाया नहीं जा सकता। हो सकता है कुछ प्रचारक पैसा बटोरने वहा गए हों परन्तु सब पर ही यह बात चरितार्थ नहीं हो सकती। ताजे उदाहरण के लिए श्री प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय तथा श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज के नाम प्रस्तुत किए जा सकते हैं। वे धन सग्रहार्थ वहा नहीं गए। उन्होने अपने काम से तथा उच्च आचार से इतिहास बना लिया है। —सम्पादक

"सच्चर और पेप्सू फार्मूला" का अब कोई वैधानिक महत्व शेष नही रहा

माननीय राष्ट्रपति महोदय ने "रीजनल फार्मूला" से धारा ६ तथा १० को हटा दिया है

श्रीयुत प० नरेन्द्र जी कार्यकर्त्ता प्रधान सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति

पजाब हिन्दी सत्याग्रह की पूर्ण सफलता

हिन्दी रक्षा आन्दोलन जिन मौलिक तत्वों के आधार पर चलाया जा रहा था उसमे पजाब की भाषायी समस्या भी एक महत्व पूर्ण विषय था, जो एक दीर्घ काल से टलता हुआ चला आ रहा था। पजाब मे कांग्रेस दल के सत्तारूढ होने के पश्चात् राज्य को सुन्ढ बनाने के उद्देश्य से श्रीमान् गोपीचन्द्र जी भार्गव एव श्रीमान् भीमसेन जी सच्चर ने १ १० १६४६ को अकालियों से गठ जोड कर एक योजना निर्माण की जो "सच्चर फार्मूला" के नाम से प्रसिद्ध हुयी। भारत सरकार की सम्मति से चार व्यक्तियो के हस्ताक्षर वाले इस गुप्त "दस्तावेज" को पजाब प्रान्त के लिए लागू कर दिया गया। यहा एक बात यह स्मरण रहे कि इस योजना की स्वीकृति इन्डिया एक्ट १६३५, के अनुसार प्रान्तीय विधान सभा की स्वीकृति के आधीन थी।

इस योजना के सम्बन्ध में न केवल आर्य समाज अपितु पजाब की हिन्दू जनता ने भी इसका घोर विरोध किया। इस निमित्त सार्वजनिक सभाए की गई प्रस्ताव पास किए जाकर इस ओर पजाब सरकार का ध्यान आकर्षित करवाया गया कि इस प्रकार का फार्मूला हिन्दू जनता को स्वीकार नहीं होगा। किन्तु स्थानिक सरकार अकालियों के प्रभाव में आ चुकी थी और कांग्रेस भी राज्य को विनाश से बचाने के लिए अपने उच्च सिद्धान्तों का हनन करते हुए साप्रदायिक मनोवृति के आगे झुक गई। "रीजनल फार्मूला" का प्रारूप ३ ४ ५६ को लोकसभा के सम्मुख रख दिया गया। भारतीय सविधान की धारा ३७१ के अन्तर्गत राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए इसे भेजा गया। इस अवस्था को आन्दोलन के लिए उपयुक्त अवसर मानकर आर्य समाज ने भाषायी समस्या से सबन्धित आन्दोलन को हिन्दी रक्षा समिति की ओर से प्रारम्भ कर दिया। रीजिनल फार्मूला के प्रथम आदोलन को प्रारम्भ करना बिलकुल असामयिक था। आदोलन जिस तीव्र गति और अनुशासन पूर्वक सगठित रूप से चलाया गया वह भारतवर्ष के इतिहास मे अपनी अद्वितीयता स्थापित किए हुए है। स्वय महात्मा गाधी जी के नेतृत्व मे चले हुए जगल सत्याग्रह व वयक्तिक सत्याग्रह आदि भी इतने दीर्घकाल तक शायद ही चले हो सरकार और चाटुकार दलों के विरोध एव साम्प्रदायिक भावों को उभारने वाली शक्तियों के दुष्प्रयत्नों के उपरान्त भी जिस शातिमय और व्यवस्थिता पूर्वक एक नेता के पूर्ण अनुशासन मे सत्याग्रह चला वह इतिहास के पृष्ठों पर अपना एक उदाहरण छोडे हुए हैं और आर्य समाज के विशाल सगठन का परिचायक है।

राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए लोक सभा की ओर से जो रीजिनल फार्मूला स्वीकृति के निमित्त प्रस्तुत किया गया था उस प्रारूप में ६ और १० संख्या की धाराए सम्मिलित थी जो निम्न प्रकार है।

(६) वर्तमान पजाब राज्य के क्षेत्र में सच्चर फार्मूला लागू रहेगा और उसमें जो वर्तमान पेप्सु

राज्य है वर्तमान व्यवस्था तब तक जारी रहेगी जब तक कि बाद में पारस्परिक समझौते से उसके स्थान पर दूसरी व्यवस्था लागू नहीं की जाती अथवा वह बदल नहीं दी जाती।

(१०) "जिला स्तर और उससे नीचे प्रत्येक क्षेत्र की सरकारी भाषा क्षेत्रीय भाषा होगी।" उपरोक्त धाराओं के वर्णन के पश्चात् आपको यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि राष्ट्रपति महोदय को भारतीय संविधान की धारा ३७१ के अन्तर्गत यह अधिकार प्राप्त है कि वह जो चाहे करें। धारा इस प्रकार है —

इस संविधान में निहित किसी व्यवस्था के होते हुए भी, राष्ट्रपति अपने आदेश से आन्ध्र प्रदेश व पंजाब राज्य के लिए विधान सभा की क्षेत्रीय कमेटियों के संगठन और कार्य क्रम को गवर्नमेंट की कार्य व्यवस्था के नियमों में सुधारों की, राज्य की विधान सभा की कार्य प्रणाली की, और क्षेत्रीय कमेटियों के सम्यक संचालक के लिए गवर्नर की विशेष उत्तरदायिता की व्यवस्था कर सकते हैं।"

फार्मूला वैधानिकता को प्राप्त होने ही वाला था कि ठीक इसी समय आंदोलन प्रारंभ कर दिया गया। जैसा कि "आर्य समाज और पंजाब की भाषा समस्या" नामी पुस्तक के पृष्ठ १२ पर श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त ने लिखा है कि "इस प्रकार हमने सच्चर फार्मूला" पेप्सू व्यवस्था और क्षेत्रीय-योजना की वास्तविक स्थिति जान ली। अभी कुछ दिन हुए राष्ट्रपति ने अपने आदेश से पंजाब को २ क्षेत्रों में विभाजित किया है जिनका विस्तार पूर्वक वर्णन किया जा चुका है। राष्ट्रपति महोदय संविधान की उक्त धारा के अनुसार अपनी आज्ञा से आगे जो करने की कृपा कर सकते हैं, वह यह है कि वे "राज्य की विधान सभा की क्षेत्रीय कमेटियों" के संगठन और कार्यों की भी व्यवस्था कर दें। राष्ट्रपति को परिस्थितियों के अनुसार जो कार्य सर्वोत्तम सूझ पड़े उसके करने में वे पूर्ण स्वतंत्र हैं। मुझे आशा है कि यह हिन्दी आंदोलन, योजना विषयक जनता की भावनाओं की ओर राष्ट्रपति का ध्यान आकृष्ट करने का काम कर सकता है। जैसा कि मैंने ऊपर कहा है कि कानून और संविधान की दृष्टि से क्षेत्रीय योजना का कोई भी अस्तित्व नहीं है। अधिक से अधिक केवल एक मात्र (ड्राफ्ट) प्रारूप या एक मात्र रूप रेखा ही है। परन्तु जिस क्षण राष्ट्रपति महोदय अपने आदेश से इस प्रारूप की किसी कण्डिका को समाविष्ट कर देंगे उसी क्षण उसे कानूनी स्थिति प्राप्त हो जायेगी। तब उसके मिटाने में और भी अधिक कठिनाई होगी। वर्तमान में तो उसका कोई अस्तित्व ही नहीं। यदि और जब हमारी आवाज राष्ट्रपति तक पहुंचेगी तो वह आज्ञा देने समय लोगों की भावनाओं को अनुभव करके उनका समुचित् ध्यान रखेंगे। अतएव हमारा आंदोलन उचित समय पर प्रारंभ हुआ है और इसको प्रारंभ करने का ठीक समय यही था। हमारे आंदोलन को असामयिक बताने वाले लोग बड़ी भूल करते हैं। यदि हम राष्ट्रपति द्वारा आदेश के दिए जाने के बाद आंदोलन प्रारंभ करते तो हम बहुत पिछड़ जाते। 'आर्य समाज का यह आंदोलन क्षेत्रीय योजना की रूप रेखा के केवल भाषा संबंधी भाग के विरुद्ध है जिसका उल्लेख कण्डिका ८ और १० में है।" (आर्य समाज और पंजाब की भाषा समस्या ६ १० ५७ को प्रकाशित)।

अब आपको स्पष्ट हो गया होगा कि राष्ट्रपति की स्वीकृति के पश्चात् ही—'रीजनल फार्मूला" को वैधानिक रूप प्राप्त हुआ है। राष्ट्रपति की स्वीकृति तक रीजिनल फार्मूला एक प्रारूप के अतिरिक्त और कोई अपना अस्तित्व नहीं रखता था। अब राष्ट्रपति ने ३ ४ ५६ के रीजिनल फार्मूला को स्वीकृति देकर सरकारी "गजट" में प्रकाशित कर दिया है। गजट संख्या ५१२ दिनांक ४ ११ ५७ ई० देखने से स्पष्ट होगा कि राष्ट्रपति ने

कण्डिका ९ और १० को पृथक कर के ही रीजिनल फार्मूला के प्रारूप को स्वीकृति प्रदान की है। इस गजट के प्रकाशित होने के पश्चात् वैधानिक स्थितियों और अन्य विषयों के सबध मे सरकार द्वारा आश्वासन प्राप्त कर लेने के पश्चात् ही इस आदोलन को स्थगित किया गया, जब कि सरकार के हृदय परिवर्तन का पूर्ण विश्वास हो गया था।

केन्द्रीय गृह मन्त्री श्री प० गोविन्द वल्लभ जी पन्त ने २१-१२ ५७ को श्री घनश्यामसिह जी से भेट मे मौखिक कहा कि "सब कुछ ठीक हो जायगा।" और अपने दिए गए इसी मौखिक आश्वासन को चण्डीगढ मे २२-१२ ५७ को और लुधियाना में २३-१२ ५७ को एव कर्नाल में इन्हीं शब्दों को दुहराया कि "पजाब के वातावरण के ठीक हो जाने पर भाषा की समस्या की पूर्ति की जा सकती है।" "सर्वदल सम्मेलन (गोल मेज कान्फ्रेन्स) के आयोजन का अब यह अवसर बडा ही उपयुक्त है।" "इस ६ मास मे हिन्दी आदोलन वालों ने अपनी वास्तविकता एव अपनी धीरता का बडा ही प्रभावशाली प्रदर्शन किया है। माननीय प० गोविन्द वल्लभ पन्त के इन भाषणों के उपरात हिन्दुस्तान टाईम्ज,' ने अपने २५ १२ ५७ के अग्र लेख में लिखा है कि —

" It is only when the agitation has been given up and those arrested for taking part in it have been set at liberty that Pandit Pant can be expected to act *on his offer to help in finding a solution* '

"सत्याग्रह के स्थगित होने और सत्याग्रहियों के मुक्त होने के बाद ही पन्त जी से यह आशा की जा सकती है कि वह पजाब की भाषायी समस्या को सुलझाने में अपने दिए गए अभिवचन की पूर्ति कर सकते है।"

इसी प्रकार दैनिक "तेज" दिल्ली ने भी दिनाक ५-३-५८ को अपने अग्रलेख "पजाब की भाषायी गुत्थी को सुलझाने की जरूरत" के शीर्षक से लिखा है कि "आदोलन स्थगित कर दिया गया है तो सरकार कदापि न सोचे कि इस सबध में उसका कोई उत्तरदायित्व नहीं है। इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि रीजनल फार्मूला अपने किसी सिद्धात पर टिका हुआ नहीं है और न ही यह किसी मन्तव्य विशेष की पूर्ति ही कर सकता है। तब और मागों के साथ आर्य जनता की मागों पर भी विचार किया जाना चाहिए।"

इन सभी घोषणाओं के पश्चात् श्री घनश्याम सिह जी गुप्त ने २७ १२ ५८ को सत्याग्रह स्थगित करते हुए कहा था कि"।

"सत्याग्रहियों की बिना शर्त आम रिहाई के जारी रहने से मुझ पर यह बात स्पष्ट हो गई है कि इन सब के पीछे सद्भावना काम कर रही है जैसा सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति की २२ १२ ५७ की बैठक के प्रस्ताव का अभिप्राय था। इसी भावना के अनुसार आर्य समाज सद्भावना का प्रत्युत्तर सद्भावना के द्वारा ही देने मे पीछे नहीं रह सकता। अत उस अधिकार के अनुसार जो सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति ने मुझे दिया है मै पजाब के भाषा विषयक आदोलन से सम्बद्ध सत्याग्रह को स्थगित करता हू। मुझे विश्वास है कि इसके पश्चात् सद्भावना और हृदय परिवर्तन का वातावरण व्याप्त होकर सब बातों का अन्तिम समाधान हो जायगा।"

श्री घनश्यामसिह जी, गुप्त के इस वक्तव्य के पश्चात् २८ १२ ५७ को पजाब के मुख्य मन्त्री श्री प्रतापसिंह जी कैरों ने प्रेस प्रतिनिधियों को वक्तव्य देते हुए बताया था कि

" I have no hesitation in responding to Ghanshiam Singh Gupta's sentiments with all concomitants of good will which should flow as a result of the atmosphere now developing "

इस घटना के पश्चात् सत्याग्रह स्थगित किया गया और सभी सत्याग्रही मुक्त कर दिए गए।

अब प्रश्न यह खडा हो सकता है कि ४ नवम्बर १९५७ के गजट में हिन्दी आंदोलन के प्रभाव के परिणाम स्वरूप सफलता प्राप्त करली जा चुकी थी तो स्थगन के समय ही इस बात की घोषणा क्यों नहीं कर दी गई ? इसका कारण केवल नीति सबधी कुछ विवशता थी कि कुछ काल तक मौन धारण किया जाए। किन्तु यह मौन आर्य समाज के लिए बडा महगा सिद्ध हुआ। देश और सरकार दोना को आपत्ति से बचाने की भावना से यह नीति अपनाई गई थी। इस बात की भी सम्भावना थी कि कहीं अकाली सरकार के विरुद्ध कोई ऐसी काय वाही या द्वन्द प्रारम्भ न कर दें कि जिससे सरकार को किसी और नई कठिनाई का सामना करना पडे। परन्तु ३ २ ५८ को पार्लियामेन्ट के सदस्य श्री माथुर और अटल बिहारी लाल वाज पेयी के एक प्रश्न पर प० गोविन्द वल्लभ पन्त गृह मन्त्री भारत सरकार ने जो उत्तर दिया है उससे सर्व साधारणमे चिन्ता और आशका का वातावरण बन गया है। ऐसी स्थिति मे इसका स्पष्टीकरण करना मै आवश्यक ही नही अपना कतव्य अनुभव करता हू। मुझे भविष्य मे अकालियों द्वारा सरकार के विरुद्ध होने वाले किसी दुर्घटनात्मक व्यवहार की सभावना की अपेक्षा श्री पन्त के उत्तर से जो जनता मे भ्रम फैला है उसका निराकरण करना आवश्यक हो गया है।

"पेप्सू' और 'सच्चर योजना' की अब कोई वैधानिक महत्ता नहीं रही। कारण कि इसे पजाब विधान सभा की स्वीकृति प्राप्त नहीं है। यह विषय एक प्रान्तीय प्रश्न होने के कारण अब पजाब विधान सभा की स्वीकृति प्राप्त किए बिना इसकी भाषा क्या हो ? Administrative language और इसका राज्यीय व्यवहार रूप किस प्रकार का हो ? कोई निश्चय नहीं किया जा सकता। सभव है पजाब सरकार लाठी और गोली के बल पर कुछ दिन और इस फार्मूला को जिसकी कि कोई वैधा निक महत्ता नहीं जनता पर थोप रखे किन्तु अधिक दिनों तक किसी अवैधानिक योजना को जनता सहन करे इस जागृत युग मे सभव नहीं है।

'सच्चर' आर पप्सू योजना के शिक्षा सबधी विषयों की व्यवस्था 'रीजिनल फार्मूला" में रीजिनल कमेटियों के आधीन की गई है और यह रीजिनल समिति एक अधिकार प्राप्त समिति है, तथा यह उस पर निर्भर है कि यह प्रारम्भिक श्रेणी से माध्यमिक श्रेणी (हायर सैकन्ड्री) तक शिक्षण की भाषा के माध्यम का निर्णय करें। हिन्दी क्षत्र की क्षेत्रीय समिति कभी भी गुरुमुखी मे लिखा जाने वाली पजाबी को अनिवार्यत पढाने के सिद्वात को किसी भी रूप मे स्वीकार नहीं कर सकती। अब रहा प्रश्न जालन्धर क्षेत्र का इसके सम्बन्ध मे म कोई निश्चयात्मक अपनी सम्मति प्रकट नहीं कर सकता किन्तु यह बात स्पष्ट है कि जालन्धर में भी एस० आर० सी० के विवरणीय निर्णय के प्रकाश मे यदि किसी क्षेत्र में ३० प्रतिशत से अधिक और किसी भाषा के बोलने वाले हो तो उनकी यह भाषा भी द्वितीय क्षेत्रीय भाषा निर्धारित होगी। इस निर्णय क अनुसार जालन्धर मे पजाबी के साथ साथ हिन्दी का क्षेत्रीय भाषा होना आवश्यक ही नहीं अपितु स्वाभाविक है। पजाब के इस आदोलन से हम इस स्थिति में आकर खडे हो गये है कि जालन्धर क्षत्र की क्षत्रीय समिति दोनों दलों को सहमति के बिना कोई सिद्धात निर्धारित नहीं कर सकती। शैक्षणिक विषयो का निर्णय तो समितियों से ही होगा और राज्य व्यवहार की सरकारी भाषा के निर्णय को सन् १९५० के भारतीय सविधानानुसार पजाब विधान सभा द्वारा स्वीकृति प्राप्त होनी चाहिए। जैसा कि हाल ही मे मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश की सरकारो न एक बिल के द्वारा

अपने-अपने प्रांत की सरकारी भाषा" हिन्दी होने की स्वीकृति विधान सभा द्वारा प्राप्त कर ली है।

अब पंजाब की जनता का कर्तव्य है कि वह पंजाबी की अनिवार्य शिक्षा और राज्य व्यवहार के लिए पंजाबी का प्रयोग प्रचलित रखने के प्रश्न पर उच्च न्यायालय अथवा सर्वोच्च न्यायालय में इसके लिए पंजाब सरकार को चुनौती दें और पंजाब सरकार की इस तानाशाही को अधिक दिनों तक चलने न देवें। इन ९ वीं तथा १० वीं कण्डिका की सीमा तक तो आर्य समाज ने जो आंदोलन सत्याग्रह रूप में प्रारम्भ किया था वह पूर्ण सफलता प्राप्त कर चुका है।

मानव भाषा

1 After much futile discussion, linguists have reached the conclusion that the data with which they are concerned yield little or no evidence about the origin of human speech

(An introduction to Linguistic Science by Edgar Sturtivent P 40 New Havan)

बहुत से निरर्थक तर्क-वितर्क के पश्चात् भाषा शास्त्री इस परिणाम पर पहुँचे है कि उनके पास जो सामग्री है उससे मानव-भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कोई प्रमाण नहीं मिलता।

कोलम्बिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एडगर स्टूर्टिवेंट कृत भाषाविज्ञान की भूमिका

2 If there is one thing on which all linguists are fully agreed, it is that the problem of the origin of human speech is still unsolved.

(The story of lauguage by Mariopei P 18 London 1956)

यदि कोई एक बात ऐसी है जिस पर सब भाषा शास्त्री एकमत हैं तो वह यह है कि अभी तक मानव-भाषा की उत्पत्ति की समस्या का कोई समाधान नहीं मिला है।

इटली के विद्वान

मेरीयोपाई कृत 'भाषा की कहानी' पृ० १८

कुछ भाषा शास्त्री, भाषा की उत्पत्ति विषयक प्रचलित सिद्धान्तों की अयुक्तता को अनुभव करने लगे हैं और प्राकृतिक ढंग से भाषा की उत्पत्ति के समाधान के प्रयत्नों को छोड़कर इस धार्मिक विश्वास की ओर आने लगे हैं कि आदि काल के मनुष्यों को पहली भाषा स्वयं परमात्मा ने सीधे रूप में सिखाई थी।

एन्साइक्लो पीडिया ब्रिटैनिका वा० १३ पृ० ७०२, १९५१ का संस्करण

दूध पीने में हिंसा नहीं होती

कई लोग शंका किया करते हैं कि दूध भी तो पशुओं से प्राप्त होने वाला भोजन ही है। दूध भी पशुओं के खून से ही बनता है। दूध के पीने में

भी हिंसा होगी अत यह भी न पीना चाहिए। फिर वेद शास्त्र मे जो कि अहिंसा को धर्म मानते हैं, दूध पीने का विधान क्यों है ?

यह शका भी ठीक नहीं है। दूध पीने मे हिंसा नहीं। दूध लेने के लिये पशु को पीडित नहीं करना पडता, उसे कष्ट नहीं दिया जाता, और उसके प्राण नहीं लिये जाते। हम पशु की सेवा करते है। उसे अच्छी तरह खिलाते पिलाते है। उसकी रक्षा करते है उसकी सेवा और रक्षा के बदले मे हम उससे दूध लेते हैं ? हम उसे अच्छी तरह खिला पिलाकर उसका दूध बढा लेते है जो कि उसके बछडे की आवश्यकता से अधिक होता है। इस अधिक दूध को हम पशु को प्यार पुचकार कर उससे ले लेते है कुछ बडा होने पर उसके बछड को भी हम खाना देने लगते है। दूध लेने मे किसी प्रकार की हिंसा नहीं होती।

यह विचार भी ठीक नहीं है कि पशु के खून से दूध बनता है। घास आदि खाने से पशु के पेट मे जो रस बनता है उस रस से सीधा दूध बन जाता है। दूध के काम जितना रस आता है उसे खून बनने की आवश्यकता नहीं होती। वह रस तो सीधा पशु के शरीर मे स्थित दूध बनाने वाले यन्त्रों मे जाकर दूध बन जाता है। यह नहीं होता है कि एक बीस सेर दूध देने वाली गाय मे पहले बीस सेर रक्त बने और फिर उससे दूध बने। यदि ऐसा हुआ करे तो रोज बीस सेर खून बढने के कारण पहले तो गाय खूब मोटी हो जाया करे और फिर उसका दूध बनने से वह पतली हो जाया करे। हम ऐसा होते नही देखते। एक बात और है। किसी भी शरीरधारी के शरीर मे हर समय उसके शरीर के भार का लगभग २० वा हिस्सा रक्त रहा करता है। गाय मे इतना रक्त तो हर समय रहता ही है। उससे अधिक रक्त उसकी नस नाडियों मे नहीं समा सकता। दूध बनने के लिये इससे अधिक रक्त की आवश्यकता होगी। वह उसकी नस नाडियों मे नहीं समा सकेगा वस्तुत रक्त से दूध नही बनता। घास आदि के रस से सीधा दूध बन जाता है। यह इससे भी पता लगता है कि जब बरसात मे पशु अधिक हरा घास चरते है तो कई बार उनके दूध मे बहुत बे मालूम सी हलकी सी हरी झलक दिखाई देती है। कई बार जैसी जडी बूटियें पशु खाता है उसका स्वाद और गन्ध की भी अत्यन्त हलकी सी झलक दूध मे प्रतीत होती है। पशु का शरीर तो दूध बनाने का एक यन्त्र मात्र है पशु के रक्त से दूध बनने का कोई प्रश्न नहीं है। इस प्रकार दूध पीने मे हिंसा का कोई सवाल नहीं उठता।

यदि यह भी मान लिया जाये कि रुधिर से ही दूध बनता है तो भी हिंसा का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है। जब रुधिर रासायनिक परिवतन (Chemical change होकर दूध बन जाता है तो वह एक नई चीज हो जाती है। जैसे खेत मे डाला हुआ गोबर मूत्र और विष्ठा रासायनिक परिवतन होकर जब गेहू, चना, मकई, चावल आम और अगूर मे बदल जाते है तो वे गोबर आदि नहीं रहते। बिलकुल नई चीज बन जाती हैं। इसी प्रकार रासायनिक परिवतन द्वारा दूध मे बदल कर रक्त बिलकुल नई वस्तु बन जाती है वह रक्त नहीं रहता। फिर जैसा ऊपर की पक्तियो मे कहा है हम दूध लेने मे पशु को हिंसा भी नहीं करते। हां जो लोग पशु की सेवा नहीं करते, उसे अच्छी तरह खिलाते पिलाते नहीं और उसके साथ प्यार पुचकार नहीं करते तथा 'फूका" आदि द्वारा कष्ट देकर उनका दूध निकालते है, वे अवश्य हिंसा करते हैं क्योंकि वे पशु को अपने स्वार्थ के लिए कष्ट दे रहे है। ऐसी हिंसा करने वालों को अवश्य पाप लगेगा। नहीं तो वैसे दूध पीने मे कोई हिंसा नहीं है। फिर कोई नहीं चाहे तो बिना दूध पीये अनाज, सब्जी और फलों पर निर्भर रहकर भी अपने शरीर को पुष्ट रख सकता है।

(मेरा धर्म्म पृ० २४२)

आर्य संस्कृति का केन्द्रीय विचार

वह केन्द्रीय विचार क्या था? भारत की संस्कृति के प्राण वेद रहे हैं, उपनिषद् रहे है, गीता रही है। यहा संस्कृति का मूल मन्त्र वही विचार था जिसका वेद के ऋषियों ने गान किया था, जिसका उपनिषदों के मुनियों ने उपदेश दिया था, जिसका गीता में श्रीकृष्ण ने प्रतिपादन किया था। यहा का मूल-भूत विचार एक था—प्रकृति हैं, परन्तु प्रकृति ही सब कुछ नहीं प्रकृति के पीछे आत्म-तत्त्व हैं वही तत्त्व जिसे कुछ परमात्मा कहते है शरीर है, परन्तु शरीर ही सब कुछ नही, शरीर के पीछे भी आत्म तत्त्व है, वही तत्त्व जिसे कुछ लोग जीवात्मा कहते हैं। प्रकृति और शरीर का खेल ससार है ससार है तो ससार का भोगना भी टल नहीं सकता, परन्तु जैसा सत्य यह है कि ससार को हमने भोगना है, वैसा ही सत्य यह भी है कि ससार को हमने छोडना है। परमात्म तत्त्व के सामने प्रकृति तत्त्व तुच्छ है। जीवात्म तत्त्व के सामने शरीर-तत्त्व तुच्छ है। जीवात्म तत्त्व ने शरीर को साधन बनाकर परमात्म तत्त्व की तरफ आगे आगे बढते २ जाना है जहा पहुच चुका है उसे छोडकर जहा नहीं पहुचा वहा कदम बढाना है। द्वैत मानें अद्वैत मानें आस्तिकवाद मानें नास्तिकवाद मानें—आर्य संस्कृति की घोषणा है कि जब प्रत्येक व्यक्ति को ससार किसी न किसी प्रकार छोडना है, तब ससार मे रमे रहना, इसी के भोग में लिप्त रहना किसी का अन्तिम लक्ष्य नहीं हो सकता है।

सुख तो नास्तिक-से-नास्तिक भी चाहता है। ससार को भोगने में सुख हैं, परन्तु इन भोगों में लिप्त रहने मे सुख नहीं। जीवन का वही मार्ग सुख देने वाला है जिससे मनुष्य ससार को भोगता हुआ भी उसमें लिप्त न हो—'एव त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे' जब अन्तिम सत्ता इसकी नहीं है, विश्व की नहीं, विश्वात्मा की है तब निर्लेप, निस्सग, निष्काम भाव से ससार में रहना—यही तो जीवन का एकमात्र लक्ष्य रह जाता है। इस विचार में ससार को बिलकुल त्याग देने का जगल मे भाग जाने का भाव नहीं है। आर्य संस्कृति यथार्थवादी संस्कृति है। ससार जो कुछ दिखाई देता है वह उसे वैसा मानती है उसकी सत्ता को पूरी तरह से स्वीकार करती है यह ससार हमारे भोगने के लिय रचा गया है यह इसलिए नहीं रचा गया कि इसे देखकर हम आखें मूद लें। इससे भाग खडे हों। आर्य संस्कृति का मौलिक विचार यह है कि ससार तो भोगने के लिए ही रचा गया है, इसे भोगो परन्तु भोगते हुए इसमे इतने लिप्त न हो जाओ कि अपनी सुध बुध ही भुला दो, अपने आपको इसी में खो दो। ससार को भोगो परन्तु त्यागपूर्वक, ससार मे रहो, परन्तु निलिप्त होकर, निस्सग होकर इसमे रहते हुए भी इसमें न रहने के समान पानी में कमल दल की तरह, घी मे पानी की तरह। यह सब इसलिए क्योंकि यथार्थवादी दृष्टि से जैसे ससार का होना सत्य है वैसे यथार्थवादी दृष्टि से ही ससार का छूटना भी सत्य है। 'भोगना' और 'त्यागना' इन दोनों सत्यों का सम्मिश्रण ससार की और किसी संस्कृति में नहीं है, सिर्फ आर्य संस्कृति में है। अन्य संस्कृतिया इन दोनों मे से एक सत्य को ले भागी हैं। कोई त्यागवाद को ले बैठी है कोई भोगवाद को। किसी ने प्रकृतिवाद को भौतिकवाद को जन्म दिया किसी ने कोरे अध्यात्मवाद को। भोग और त्याग का समन्वय भौतिकवाद और अध्यात्मवाद का मेल सिर्फ आर्य संस्कृति में पाया जाता है और यही इस संस्कृति का आधारभूत मौलिक विचार है।

(आर्य संस्कृति के मूलतत्त्व पृ० ११ १३)

महर्षि जीवन

चंचल मन कैसे ठहराया जाय ?

दानापुर के श्री जनक धारीलाल जी ने बम्बई मे श्री स्वामी जी महाराज की सेवा में उपस्थित होकर उनके सत्सग से लाभ उठाया। एक दिन उन्होंने स्वामी जी से कहा "महाराज उपासना के समय चचल मन भाग जाता है। इसे कैसे ठहराया जाय और किस रूप मे कहा ठहराया जाय ?"

स्वामी जी ने कहा 'मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक, जिस चक्र मे आपका चित्त स्थिर हो सके उसी में ठहरा लो, रूप की अभ्यास मे कोई भी आवश्यकता नहीं है। यदि चित्त किसी प्रकार भी स्थिर न हो तो मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक प्रत्येक चक्र मे चमकते हुए मनकों की धारणा करो। उनके साथ ओ३म् का जप ध्यान से करो अथवा त्रिकुटी में सुई की नोक के समान बिन्दु की कल्पना करके उसमे धारणा पूर्वक ओ३म् का ध्यान करो। ज्यों २ धारणा दृढ होती जाय त्यों २ उस तिल के खण्ड करते जाओ। यहा तक कि अन्त मे बिन्दु के बिना ही आपकी धारणा ध्रुवता को धारण करले।'

अभी यम नियम का पालन करो

श्री जनकधारीलाल के एक साथी ने भी प्रार्थना की कि भगवन्! मुझे भी उपासना की पद्धति का उपदेश कीजिये। महाराज ने उसके मुख पर अपने नेत्रों की ज्वलन्त ज्योति को डाल कर कहा कि आप अभी यम नियम का ही पालन कीजिये। उसने तीन बार यही प्रश्न पूछा और महाराज ने भी तीनों बार उसे यम नियम का निभाना ही बताया।

यह भद्र पुरुष कुछ खिन्न और उदास होकर कोठरी से बाहर निकल आया। जब उसके साथी भी उसे आ मिले तो वह उन्हें उलाहना देकर बोला कि इतनी दूर से यहा आए परन्तु प्राप्त कानी कौडी भी न हुई। इस पर उसके साथियों ने उसे समझाया कि स्वामी जी तो मनुष्यो के मन के गुप्त भेदों को भी जान जाते हैं। वे यदि आपको यम नियम न बताते तो आप ही बताए और क्या कहते ?

उस समय उस भद्र पुरुष को भी अपने किए दुष्कर्म का ध्यान आ गया। वह मन ही मन कहने लगा कि जब मै दाय भाग के एक बडे भारी झगडे मे झूठी गवाही देकर आया हू और यहा से जाकर भी मिथ्या कथन करू गा तो महाराज ने मुझे ठीक ही उपदेश दिया है। इससे अधिक का अधिकारी मैं हूँ ही नहीं।

क्या पातंजल शास्त्र का विभूति पाद सच्चा है ?

एक सज्जन ने स्वामी जी से निवेदन किया "भगवन्! पातंजल शास्त्र का विभूति पाद क्या सच्चा है ?"

स्वामी जी ने कहा "आप यों ही सन्देह करते हैं। योग शास्त्र तो अक्षरश सत्य है। वह कोई पुराणो की सी कल्पना नहीं है, किन्तु क्रियात्मक और अनुभव सिद्ध शास्त्र है। दूसरी विद्याओ मे उत्तीर्ण होने के लिए, आप लोग कई वर्ष व्यय करते हैं इसके लिए यदि आप तीन मास तक मेरे पास निवास करें और मेरे कथनानुकूल योग क्रियाए साधें तो आप इस शास्त्र की सिद्धियों का साक्षात् स्वय कर लेंगे।"

एक भक्त ने विनय की "आप योगादि के परम गोपनीय गहन और गुप्त भेदो को जिस किसी के सामने वर्णन कर देते है, यह उचित प्रतीत नहीं होता। अनधिकारियों को उपदेश देना ऐसा है जैसे मूअरों के सामने मोती बखेरना।"

महाराज ने उत्तर दिया "भद्र! ऐसे बडे समारोह मे कोई न कोई हस भी आ जाया करता है परन्तु यदि परम देव की दया हो तो सूअर भी हस बन सकते हैं।

आप उपदेश का कार्य करने लग जाइये

एक दिन एक मनुष्य महाराज के पास आया। उन्होंने उससे पूछा "आप कौन है? क्या काम करते हैं? क्या कुछ संस्कृत भी जानते हैं?" उसने उत्तर दिया—"भगवन्! मै ब्राह्मण कहा जाता हू। अब काम धन्धा तो कुछनहीं करता, केवल पेंशन पर निर्वाह होता है। सस्कृत तो नहीं आती परन्तु कुछ कर्म काण्ड के श्लोक कण्ठाग्र किए हुए है।

स्वामी जी ने कहा "आप उपदेश का कार्य करने लग जाइए।' उसने विनय की 'रात दिन बाल बच्चों की चिन्ता मे लीन रहता हू। ऐसी अवस्था मे उपदेश का काम कैसे किया जा सकता है?"

स्वामी जी ने कहा 'आपको पेंशन मिलती है उसमे पुत्र पौत्र का परिपालन भली भांति हो सकता है। आपके पुरातन पुरुष पूर्व काल मे जगद् गुरु समझे जाते थे। वे जगत् के उपकार मे जी जान से लगे रहते थे। आपके लिए भी उनके चरण चिन्हों पर चलना उचित है। अपने पूर्वजों की भांति परोपकार का व्रत धारण कीजिए और कटि बाध कर भीलों की बस्तियों मे चले जाइए। वे दिनों दिन धडाधड ईसाई होते चले जा रहे है। उनको अपनी इच्छानुकूल ईश्वर भक्ति का उपदेश देकर किसी प्रकार ईसाइयो के चगुल से बचाइए। आर्य जाति के छिलते हुए तलुओं की टूटती हुई अगुलियों की और कटते हुए पाव की रक्षा कीजिये।"

*

साहित्य

समालोचना

आत्म-कथा

(आपबीती जगबीती)

श्री आचार्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ
कुलपति महाविद्यालय ज्वालापुर, हरिद्वार।
भूतपूर्व सदस्य विधान सभा उत्तरप्रदेश आदि २।

प्रकाशक—महाविद्यालय ज्वालापुर

साइज २० x ३०।८ पृ० ६०७
मूल्य ५) लागतमात्र

आचार्य नरदेव शास्त्री आर्य समाज के उन पुराने महारथियों में से हैं जिनका जीवन पुराना और नई पीढी के लिए पुल का काम करता है। आचार्य जी मूलत हैदराबाद राज्य के निवासी हैं। उनका जन्म का नाम नरसिंह राव था। १८६४ में लाहौर में शिक्षा प्राप्ति के लिए आए थे और तब से वे यहा के ही हो गए। इस समय उनकी आयु ७६ वर्ष की है। इस सुदीर्घ काल मे उनका सम्पर्क धार्मिक, शैक्षिक और राजनैतिक अनेक सस्थाओं, विद्वानों, पण्डितों, नेताओं और कार्यकर्ताओं के साथ रहा। वे उच्चकोटि के सस्कृत के विद्वान् है। मराठी, सस्कृत, अग्रेजी, हिन्दी आदि अनेक भाषाओं के पण्डित हैं। महा विद्यालय ज्वालापुर के सर्वस्व हैं। महाविद्यालय से पृथक उनकी और उनसे पृथक् महाविद्यालय की कल्पना नहीं की जा सकती। आर्यसमाज को उन जसे उद्भट विद्वान और पुराने महारथी पर गर्व है। उनकी आत्म-कथा उनके उतार चढाव के जीवन की झलकियों के साथ २ आर्यसमाज उसकी अनेक शिक्षा सस्थाओं, उसके अनेक विशिष्ट व्यक्तियों, काग्रेस आदि राजनैतिक शैक्षिक, एव सास्कृतिक सस्थाओं तथा नेताओं के जीवन तथा इतिहास को खोलकर पाठकों के सामने रख देती है।—उन्हें बहुत सी नई उपयोगी और आश्चर्यजनक जानकारी प्राप्त होती है।

आचार्य जी के घर मे आर्यसमाज किस प्रकार प्रविष्ट हुआ इसका वर्णन करते हुए लिखते हैं – ‘मे स्कूल में मराठी पढता था किन्तु घर में पिताजी हिन्दी भी सिखाते थे। क्यों ? इसका भेद फिर खुला। इस बात की हमको तनिक भी गन्ध न थी। उस समय हम अधिक समझते भी क्या कि पिता जी सामाजिक विचार क हो गए हैं। वे अवकाश क समय स्वामी दयानन्द जी के ग्रन्थों का स्वाध्याय करते देखे गए। गोवन्दसिंह जी के द्वारा ही इन ग्रन्थो को देखने की प्रेरणा हुई। प० लेखरामजी से भी भेंट हुई तभी से पिता जी आर्य सामाजिक विचार के हुए।” (पृ० ६)

दक्षिण छोडकर उत्तर भारत आने के घटना चक्र का वर्णन बडा मार्मिक है। उसका एक अश इस प्रकार है —“मै अत्यन्त क्रोधी व हठी लडका था। माता को लाहौर की स्कीम का पता था पर उसने हमारे सामने कभी जिक्र नही किया। कभी कभी मेरे हठ व क्रोध को देखकर कह दिया करती थीं कि “हिमालय की तरफ जाओगे तो सब क्रोध

व हठ भूल जाओगे।" अब मैने क्रोध व हठ सर्वथा वश में कर रखे हैं।" (पृ० १५)

प्राचीन साहित्य की महिमा का वर्णन करते हुए उसके प्रति अपनी श्रद्धांजलि इन शब्दों मे प्रस्तुत करते हैं —

"हमारे प्राचीन साहित्य मे मनुष्य को मनुष्य बनाने के नहीं नहीं मनुष्य को मनुष्यता से ऊपर उठाकर देव बनाने के क्या २ उपाय नहीं बतलाए गए हैं। सब कुछ है पर कोई देखे तब न। जब मेरी अंग्रेजी छूटी थी और संस्कृत विद्या गले मे पड़ गई तब मुझे अंग्रेजी के छूटने का बड़ा भारी दुःख हुआ था—किन्तु मेरा प्रवेश संस्कृत साहित्य मे जैसे २ बढ़ता गया मुझे अवर्णनीय आनन्द मिला। उस आनन्द के सम्मुख उस सन्तोषरूपी धन के सम्मुख संसार के अच्छे-से-अच्छे पदार्थ उत्तम से उत्तम वस्तु भी हेय है। अब मै आत्म वित होने का, शोक मोह से तरने का कुछ २ आनन्द उठा रहा हूं क्योंकि स्वरूप को कुछ २ पहचानने लगा हूं।"

देश के स्वतन्त्र होने पर उनके जीवन की एक साध पूरी हुई। उस पर उन जैसे महामना का प्रफुल्लित होना स्वाभाविक है। इस सम्बन्ध में उन्होंने जो उद्गार प्रकट किए और भविष्य के विषय में चेतावनी दी है वह उनके अपने शब्दों में सुनिए —

"ईश्वर की कृपा और पूर्वजन्म के शेष पुण्य कि १९४७ में भारत वर्ष को अपनी आखों स्वतन्त्र देख लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस सौभाग्य को लाने मे इस नश्वर शरीर ने भी अपनी २ अल्प-स्वल्प शक्त्यनुरूप योग दिया। इतना होने पर भी जीवन के एक अंश में अपूर्णता ही बनी रहती यदि हमको वर्तमान प्रजातन्त्र शासन किस प्रकार चलता है इसका भीतरी ज्ञान न हो पाता। भगवत्कृपा से ५ वर्ष तक विधान सभा (उत्तर प्रदेश) में हमको यह अनुभव मिला। हमारा अपना विचार है कि जिस २ प्रकार अनुभव होता जायगा भारतीय सविधान मे "भारतीय ढग के भारतीय वातावरण के अनुरूप परिवर्तन करने पड़ेंगे।"

उन महान् और भले व्यक्तियों की जीवनी का पढना जो अपने यत्नों और परिश्रम से ऊंचे उठते और उपयोगी बनते हैं प्रेरणादायक और उच्च अध्ययन माना जाता है।

श्री आचार्य जी भी स्वनिर्मित तपोधनी महान् व्यक्ति हैं उनकी यह आत्मकथा इसी प्रकार का उच्च अध्ययन है।

आर्यसमाज (साप्ताहिक पत्र)

दरियागंज दिल्ली।

सम्पादक—श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री

वार्षिक मूल्य ५) एक प्रति का १० नए पैसे

छपाई कागज उत्तम है।

श्री शास्त्री जी आर्य जगत् के ओजस्वी वक्ता, कुशल नेता और कर्मठ कार्यकर्ता हैं। हिन्दी-आन्दोलन मे श्री शास्त्री जी का महत्वपूर्ण भाग रहा है।

आर्य समाज की विचारधारा को अब तक शास्त्रीजी ओजस्वी भाषणो द्वारा प्रचारित करते रहे हैं अब लेखनी द्वारा भी यह कार्य उन्होंने अपने हाथ मे लिया है। साप्ताहिक आर्य समाज का प्रकाशन इस दिशा मे महत्वपूर्ण प्रयास और हिम्मत का कार्य है।

हमें आशा है कि आर्य जगत में श्री शास्त्रीजी के पत्र का भारी स्वागत होगा। प्रत्येक आर्यपरिवार में इसका अध्ययन किया जावेगा। हम पत्र की हृदय से सफलता के इच्छुक हैं।

महिला जगत

स्त्री शिक्षा की उपेक्षा से राष्ट्र को हानि

(उत्तरप्रदेश राज्य के शिक्षामन्त्री श्री कमलापति त्रिपाठी के विचार)

भारतीय नारी-समाज ने देश के प्रत्येक जीवन में महत्वपूर्ण भाग अदा किया है। हमारे इतिहास का कोई काल ऐसा नहीं रहा जब नारी जाति ने अपनी प्रतिभा, क्षमता और निष्ठा का परिचय न दिया हो। आधुनिक युग मे भी उनकी देन कम नहीं रही। भारत की स्वतन्त्रता के सग्राम मे उन्होंने पूरा भाग लिया और निश्चय ही वे अब नव-रचना के लिए भी सचेष्ट है।

नारी अर्थोपार्जन करे, इसके लिए वह सक्षम हो, यह सर्वथा उचित है। परन्तु नारी मात्र पुरुष की भाति ही जीविकोपार्जन मे सलग्न हो, यह ऐसा विषय है, जिस पर हमें विचार कर ही निश्चय करना चाहिए।

पश्चिम में यह क्रम कुछ वर्षों से चलता आ रहा है। इसके अन्य परिणाम वहा जो भी हुए हों, एक परिणाम तो निश्चय ही हुआ है कि कुटुम्ब संस्था की नींव हिल गई। सम्मिलित कुटुम्ब पहले ही नहीं था, व्यक्तिगत कुटुम्ब भी अपना आधार खोते जा रहे हैं। हम अभी इस सम्बन्ध मे आरम्भिक अवस्था में हैं। अत हमारे लिए कौन सा पथ अच्छा होगा, इस पर हमारे मनीषियो को समय रहते विचार कर लेना चाहिए। स्वय मेरी कल्पना में नारी पुरुष की सहयोगिनी बने तभी व्यक्ति और राष्ट्र अभ्युदय की ओर जा सकते है। इनके बीच की प्रतिस्पर्द्धा, चाहे वह किसी क्षेत्र मे हो, किसी के लिये भी श्रेयस्कर न होगी।

इस दृष्टि से जब हम विचार करते हैं तो एक बडा प्रश्न हमारे सम्मुख उपस्थित हो जाता है कि शिक्षा का क्रम, उसकी पद्धति और उसका स्वरूप क्या हों? स्वतन्त्र भारत में इस प्रश्न ने बडा गम्भीर और मौलिक रूप ग्रहण किया है?

दासता के युग मे हम स्त्री-शिक्षा के प्रति विशेष रूप से उदासीन थे पर आज यह भी निर्विवाद रूप से स्वीकार कर लिया गया है कि स्त्री-शिक्षा का प्रबन्ध हमारे लिए उतना ही आवश्यक है, जितना पुरुष की शिक्षा की आवश्यकता है। बडे २ विद्वान यह स्वीकार करने लगे है कि वास्तविक शिक्षा मा की गोद से आरम्भ होती है और माता जीवन मे सब मे श्रेष्ठ प्रथम गुरु है। आज तो यह भी कहा जाने लगा है कि सारे ससार मे वर्तमान शिक्षा पद्धति एक इस बात मे समान रूप से दोषपूर्ण है कि वह व्यक्ति को परिवार से दूर ले जाती है, जिसका परिणाम यह होरहा है कि मनुष्य की नैसर्गिक और शुभ्र प्रवृत्तियों का विकास कुण्ठित हो रहा है। जो सस्कार जीवन को माता और पिता के सान्निध्य मे प्राप्त होते हैं, जिनसे जीवन को उन्मुखता मिलती है। उनसे बच्चे वचित हो रहे हैं।

जघन्य अपराधों की ओर प्रवृत्ति

पडितो का मत तो यहा तक जाता है कि आज

सम्पूर्ण संसार में अपराधों की वृद्धि और शिक्षित लोगो का, विशेषकर युवक युवतियों का जघन्य कर्मों मे प्रवृत्त होना यह प्रश्न उपस्थित करता है कि हमारे शिक्षा के क्रम मे कोई ऐसा मौलिक विकार है, जो हमें शिक्षित बनाते हुए भी मनुष्य बनाने में समर्थ नहीं हो रहा है। इस प्रकार के प्रश्नों का गम्भीर विवेचन करने वाले का यह मत है कि इस स्थिति का सब से बड़ा कारण आज की वह शिक्षा पद्धति है जो मनुष्य को माता और पिता के प्रेम और प्रभाव को प्राप्त करने से वचित कर रही है।

मनुष्य की शिक्षा मूलत परिवार से ही प्रारम्भ होनी चाहिए और परिवार की आधारशिला माता ही है। फिर किस प्रकार हम स्त्री-शिक्षा के प्रश्न की उपेक्षा कर सकते हैं? उसकी उपेक्षा करना व्यक्ति के अध पतन और समाज की विच्छिन्नता का आवाहन करना है। यहा फिर यह प्रश्न उठता है कि स्त्री शिक्षा के लिए हमारी पद्धति और क्रम क्या हो?

शिक्षा की एक पद्धति का प्रयोग शताब्दियों तक हो चुका। हमारे देश में प्राचीन काल में उन्नत रूप में शिक्षा की पद्धति का विकास तो हुआ ही था। आज विचार करना है कि क्या हम अपने शिक्षा के क्रम में कुछ उन तत्त्वों का समावेश नहीं कर सकते जिनका जन्म गुरुकुलों की प्राचीन पद्धति और परम्परा के गर्भ से हुआ था। क्या वह समय नहीं आ गया है कि जब हम साहसपूर्वक शिक्षा को वह स्वरूप प्रदान करें जिसमे छात्र और छात्राओं को पढने और सीखने के लिए सब से महान् ग्रन्थ और विषय के रूप में स्वयं गुरु और उसका आचरण सम्मुख प्रस्तुत हो और शिक्षा-सस्थाओं में उस वातावरण की प्रतिष्ठा रहे जो सहज ही मनुष्य की सन्मयी सौन्दर्यशीलता और सन्मयी प्रवृत्तियों को उद्बोधन प्रदान करता है।

स्त्री-शिक्षा के सम्बन्ध में विशेष रूप से इस विषय पर विचार करना ही होगा क्योंकि तभी मां की गोद में वह सन्तति प्रस्फुटित होगी जो भारतीयता के संस्कारों से ओत-प्रोत होकर उन विशिष्टताओं से विभूषित होगी जो मनुष्य को मानव जाति के गौरव के अनुकूल विकसित करने का काम दे।

ग्रामीण महिलाओं में शिक्षा प्रसार की आवश्यकता *

"भारतीय आदर्शों के अनुसार शरीर और आत्मा होने पर ही भारतीय नारी सुघड़ बनती है। हमारी प्राचीन सस्कृति की रक्षा देवियों ने ही की है। हमें भी उस परम्परा की रक्षा करनी चाहिए।

मुख्य समस्या देहातों की है जहा निर्धनता और अविद्या व्याप्त है। स्त्रियों में उचित शिक्षा की कमी के कारण बच्चों की तन्दुरुस्ती खराब रहती है। स्त्री-सुधार का कार्य केवल नगरों तक ही सीमित न रहना चाहिए वह गांवों तक विस्तृत होना चाहिए।

राज्य द्वारा शिक्षा और स्वास्थ्य के केन्द्र नवयुवतियों के लिये पृथक् खुलने चाहिएं।

महाराष्ट्र मे जनसघ के महिला विभाग की ओर से बच्चों को कहानिया सुनाने का सगठन बनाया गया है। घर २ जाकर और बच्चों को एकत्र करके भारतीय इतिहास की कहानियां सुनाई जाती हैं। प्रसिद्ध नेताओं, शिक्षा-विशेषज्ञों और विद्वानों को कहानियां सुनाने के लिये आमन्त्रित किया जाता है। इस रीति से हम अपने राष्ट्र को

* अखिल भारतीय जनसघ के छठे अधिवेशन के अवसर पर अम्बाला में ६-४-५८ को आयोजित महिला सम्मेलन में दिए गए श्रीमती मालती पराजपे (जनसघ बम्बई के महिला विभाग की अध्यक्षा) के भाषण का सार।

बना सकती हैं, ४०० वर्ष पूर्व जिस तरह जीजाबाई ने शिवाजी को प्रशिक्षित किया था उसी तरह हम अनेक शिवाजी उत्पन्न कर सकती हैं।

महाराष्ट्र की देविया हिन्दी के पठन पाठन कार्य में बड़ा रस ले रही हैं और प्रतिवष अनेक देविया हिन्दी में ग्रेजुएट और पोस्ट ग्रेजुएट बन रही हैं। इससे स्पष्ट है कि महाराष्ट्र का नारी समाज राष्ट्र-भाषा हिन्दी को लोकप्रिय बनाने में सलग्न है।

उत्तर भारत की देवियों को निश्चिन्त रहना चाहिए कि हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाए रखने के सबध में महाराष्ट्र की देविया उनके साथ रहेंगी।

पजाब की देवियों ने हिन्दी रक्षा आन्दोलन में जो वीरता पूर्ण भाग लिया है वह प्रशसनीय और स्पृहणीय है।

आर्य बन्धुओं से विनम्र प्रार्थना

आर्य समाज ने आरम्भ से ही मानव मात्र के कल्याण के लिए बड़े २ कार्य किये हैं। जिस समय 'स्त्री शूद्रो नाधीयताम्' कहकर महिलाओं को पढ़ाने लिखाने में भी बड़े २ अड़गे लगाए जाते थे, महर्षि दयानन्द ने घोषणा की "इम मन्त्र पत्नी पठेत्" और कल्याणी वेदवाणी का द्वार सब के लिए खोल दिया। कन्याओं के लिए भी उसी प्रकार गुरुकुल खोले गए जिस प्रकार बालकों के लिए। स्त्रियों को उच्च शिक्षा दी गयी और समान अधिकार प्रदान किए गए। जिस मनुस्मृति का ढिंढोरा पीट कर नारियों को अपमानित करने का प्रयास किया जाता था उसी मे से महर्षि दयानन्द ने सिद्ध किया "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।"

महिलाओं तथा पुरुषों को उनके कर्तव्य सम झाये गए और बतलाया गया कि गृहस्थ आश्रम रूपी रथ के स्त्री और पुरुष दोनों समान रूप से एक एक पहिए हैं। एक पहिये के भी गड़बड़ होने से रथ आगे न बढ सकेगा।

तब से समय बहुत बदल गया है किन्तु जागरण के समय में कहीं २ पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव ने सीमा का भी उल्लघन कर दिया है। वातावरण दूषित होने लगा है। स्त्री और पुरुष एक दूसरे के विरोधी से समझे जाने लगे हैं। स्त्रिया पुरुषों पर और पुरुष स्त्रियों पर आरोप लगाने लगे हैं। कर्तव्य का उतना ध्यान नहीं, केवल अधिकारों की माग बढती जा रही है। मानव मात्र को समान अधिकार दिलाने का दावा करने वाले तथा वर्ग विहीन समाज का नारा लगाने वाले चुनावों के समय प्राय जाति पाति का सहारा लेकर काम करने लगते हैं। यहा तक देखा गया है कि स्त्री और पुरुष यदि प्रतिद्वन्द्वी उम्मीदवार हुए तब कहीं २ स्त्रियों से स्त्रियों को और पुरुषों से पुरुषों को वोट देने के लिए कहा जाने लगता है।

जब तक स्वार्थ रहित सयम से काम नहीं लिया जायगा तब तक भेद भाव बढता ही जायगा और इसका बहुत भयकर परिणाम होगा। आर्य समाज ने इस क्षेत्र मे पहले से कार्य किया है किन्तु काग्रेस बहुत आगे बढ गई है। अखिल भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के अध्यक्ष पद पर महिलाए आसीन हो चुकी है, विदेशों मे राजदूत का पद सम्भाले हुए हैं। देश मे भी मन्त्री तथा राज्यपाल के पदों पर कार्य रही है। आर्य समाज में आज तक कोई भी महिला सार्वदेशिक की कौन कहे प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं तक के प्रधान पद पर निर्वाचित नहीं की गई हैं। हमारे उत्तरप्रदेश में सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्री आदर्श आर्य महिला श्रीमती शकुन्तला गोयल कई वर्षों से उपप्रधान पद पर तो निर्वाचित करदी जाती हैं किन्तु उससे आगे नहीं।

❀ रामवती देवी

संसार का सर्वप्रथम गणितज्ञ बालक

श्रीनिवास रामानुजम् ए० आर० एस०

(जन्म १८८७ ई०—मृत्यु १९२० ई०)

[ले०—डॉ० श्री लक्ष्मीनारायण जी 'प्रेमी' एम० ए०, साहित्य रत्न, एन० डी०]

श्री रामानुजम् का जन्म २२ दिसम्बर सन् १८८७ ई० को मद्रास प्रात के इरोद नाम के एक छोटे गाव मे हुआ। उनके पिता एक साधारण परिवार के निर्धन ब्राह्मण थे और मुनीमी करके अपना पेट पालते थे। पाच वर्ष की आयु मे वे ग्राम की पाठशाला मे पढने बैठे। दस वर्ष की आयु में कुम्भकोणम् हाई स्कूल मे पढकर सन् १८९८ मे प्राइमरी परीक्षा मे वे सर्वोच्च उत्तीर्ण हुए।

'होनहार विरवान के होत चीकने पात' के अनुसार इन्हें बाल्यावस्था से ही गणित से अत्यन्त प्रेम था। यह बालक सदा अपनी ज्ञान पिपासा की शान्ति में लगा रहता। तीसरी कक्षा मे पढते हुए ही इन्होंने बीजगणित आदि का इटरमीडियेट कक्षाओं का पाठ्य क्रम समाप्त कर दिया था तथा चौथी कक्षा में बी० ए० के त्रिकोणमिति के कठिन प्रश्न। उस समय वे केवल बारह वर्ष के थे। उन्होंने बी० ए० के एक छात्र से लोनी साहब की सुप्रसिद्ध त्रिकोणमिति पुस्तक बहुत हठ करके प्राप्त की, क्योकि पहले उस छात्र ने इनकी बात हसकर टाल दी थी। १२ वर्ष की आयु मे त्रिकोणमिति सारी हल कर देना इनकी अलौकिक प्रतिभा का उदाहरण है। पाचवी कक्षा में इन्होंने 'ज्या' और 'को ज्या' का विस्तार कर डाला। यह जानकर अत्यन्त आश्चर्य होता है कि इस ऐतिहासिक बालक को आयलर नामक विद्वान् का नाम तक ज्ञात न था, जो कि गणित के ऐसे विषयों में सर्वप्रथम अनुसन्धान करने के कारण यूरोप के गणितज्ञों में अमर हो गया है। आयलर के सिद्धान्तों को बताने वाला न इन्हे कोई गुरू ही मिला था न किसी ग्रन्थ से सहायता ही। १३ वर्ष की आयु मे इनका किया हुआ कार्य सर्वथा मौलिक तथा स्वत प्रेरित था। इस छोटी आयु मे इन्होंने गणित सम्बन्धी जो कार्य कर लिया था, वह बड-बड गणिताचार्यों की सम्पूर्ण आयु की मौलिक खोजों से किसी प्रकार कम महत्त्व का नहीं था।

१७ वर्ष की आयु मे इन्हाने सरकारी छात्रवृत्ति प्राप्त करते हुए १९०३ ई० में मैट्रीकुलेशन की परीक्षा पास की, पर इटरमीडियेट कक्षा में वार्षिक परीक्षा में अग्रेजी में अनुत्तीर्ण हो जाने से इनकी छात्रवृत्ति बन्द हो गयी और निर्धन छात्र की पढाई का वहीं अन्त हो गया। अपना पूर्ण समय और ज्ञान गणित की ओर ही लगाने से इन्हें अग्रेजी या अन्य विषयों के पढने का समय ही न मिलता था और न रुचि ही थी।

बिना किसी गुरू की सहायता या सहायक ग्रन्थों को प्राप्त किये ही ईश्वर प्रदत्त प्रेरणा से वह

एक प्रकार से पूर्ण मौलिक कार्य करते थे। सची, लगन, प्रतिभा और अध्यवसाय के आगे कुछ भी असम्भव नहीं है। यह अत्यन्त विस्मय की बात है, इन्हें कोई भी प्रसिद्ध गणित की पुस्तकें देखने को नहीं मिली थी जो भी यदा कदा कोई गणित पुस्तक इन्हें देखने को मिल जाती थी, यह उसी पर सन्तोष करते थे। हा, एक पुस्तक, कारकी सिनोप्सिस इन्हें इनके मित्र ने कुम्भकोणम् कालेज पुस्तकालय से ला दी थी। यह पुस्तक इन की प्रतिभा तथा प्राकृतिक शक्तियों को जगाने मे बहुत सहायक सिद्ध हुई। यद्यपि यह पुस्तक बहुत उच्चकोटि की नहीं है।

बाल्यावस्था मे इन्हे इनके अध्यापकगण सनकी समझते थे। प्राय महान् पुरुषों को साधारण बुद्धि के लोग एसे ही झक्की समझते हैं। इन महान् आत्माओं की महत्ता और प्रतिभा का ज्ञान तो अन्तिम अवस्था या मरणोपरान्त ही होता है। तीसरी और चौथी कक्षा मे पढने वाला जब यह विद्यार्थी अपने अध्यापक से तथा सहपाठियों से गणित के कठिन प्रश्नों नक्षत्र तथा पृथ्वी की परिधि आदि के विषय में पूछता तब इन असाधारण प्रश्नों का ठीक से उत्तर सहपाठी तो क्या अध्यापक भी नहीं जानते थे। एक बार एक अध्यापक तीसरी कक्षा में बता रहा था कि किसी सख्याको उसीसख्यासे भाग दियाजाय तो भजनफल एक होता है। इन्होंने पूछा कि क्या शून्य के सम्बन्ध में भी यही नियम लागू होता है ? बचारे अध्यापक स्वय नहीं जानते थे कि शून्य को यदि शून्य से भाग दिया जाय तो भजनफल एक नहीं, वह अपरिमित अथवा अनिर्दिष्ट (Indeterminate) होता है। अत अध्यापक का इन्हे झक्की समझना स्वाभाविक ही था।

पढ़ाई तो अर्थाभाव से समाप्त ही हो गई अत घर पर रहकर ये गणित के अध्ययन मे लवलीन हो गये। पर पेट की समस्या विकट थी। विवाह भी इनका हो चुका था। कछ हितैषियों की महायता से यह युवक ट्यूशन तथा साधारण क्लर्की आदि करके पेट पालने पर विवश हुआ किन्तु इनका अध्ययन खोज तथा ज्ञान दिनोदिन बढता ही गया।

२३ वर्ष की छोटी अवस्था मे जब विवश होकर उन्ह घर छोडकर नौकरी के लिये भटकना पड रहा था, उस समय उनकी जेब की नोटबुकों में गणित की वह महत्वपूर्ण खोज थीं, जिन्ह यूरोप के महान् गणितज्ञो को निकालने में सैकडो वर्ष लगे थे और तब भी पूर्ण सफलता नहीं मिली थी।

श्री वा० रामास्वामी अय्यर डिप्टी कलक्टर भूतपूर्व गणित प्रोफेसर श्री पी० वी० शेष अय्यर नैलोर के कलक्टर दीवान बहादुर श्री आर० रामचन्द्र राव आदि उनके हितैषी थे। पहले तो श्री राव ने उनका भार अपने ऊपर ले लिया, किन्तु अन्त मे उस आत्म सम्मानप्रिय नवयुवक को उन्होंने ३०)मासिक की मद्रास पोट ट्रस्ट की नौकरी दिला दी। श्री राव ने एक स्थान पर इनके लिये लिखा है— 'एक नाटा, तन्दुरुस्त, मैले से कपडे पहने हुए, चमकीली आखों वाला युवक मेरे सामने उपस्थित हो गया। यही युवक श्री निवास रामानुजम् थे। युवक की सूरत स ही गरीबी टपक रही थी। एक मोटी सी कापी वह बगल मे दबाये हुए था और गणित के अध्ययन के लिये कुम्भकोणम् से मद्रास भाग आया था। धन और यश का भूखा न था। चाहता था कि उसके गणित के अध्ययन में कोई बाधा न पडे कोई उसके भोजनवस्त्र का प्रबन्ध कर दे और वह निश्चिन्त होकर अपना अध्ययन जारी रक्खे ”

हाय रे भारतवर्ष ! यदि यूरोप या अमेरिका में यह पैदा हुआ होता तो ३३ वर्ष की कची आयु मे इसे क्षय से न मरना पड़ता। श्री नेहरू जी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दुस्तान की कहानी' में कितने मार्मिक शब्दों में लिखा है—'रामानुजम् का अल्प

कालिक जीवन और मृत्यु भारत की आज की दशा का प्रतीक है। हमारे करोड़ों लोगों में कितने हैं, जिन्हें थोडी सी शिक्षा भी प्राप्त है, कितने हैं जिन्हें पेट भर भोजन मिल जाता है—और उन लोगों के पास भी, जिन्हें कुछ शिक्षा प्राप्त हो जाती है, दफ्तर मे क्लर्की करने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं होता। अगर इन्हें जीवन मे अवसर मिले और इन्हें भोजन तथा दूसरी सुविधाए प्राप्त हो जाय, इनके लिये शिक्षा तथा उन्नति का मार्ग खुल जाय, तो इन करोडों मे से कितने है जो कि बडे वैज्ञानिक, शिक्षक, लेखक और कलाकार नहीं बन सकते हैं और इस प्रकार एक नवीन भारत और नवीन ससार-निर्माण मे सहायक नहीं हो सकते।'

ऐसे असाधारण बालक की सक्षिप्त जीवनी जान लेना हमारा धर्म है। सरकारी वेधशालाओं के डाइरेक्टर जनरल डा० जी० टी० वाकर की सहायता से इन्हें दो वर्ष की ७५) मासिक की छात्रवृत्ति मिली इसके बाद ये जीवन पर्यन्त गणित की गवेषणा में ही लगे रहे।

ट्रिनटी कालेज के फेलो डा० जी० एच० हार्डी आपको गणित सम्बन्धी खोजों से प्रभावित होकर उन्हें इगलैंड बुलाना चाहते थे, पर अन्ध-विश्वासी परिवार इन्हें समुद्र-यात्रा की अनुमति नहीं दे रहा था। राजानुजम् की दशा का पता उनके श्री हार्डी को लिखे पत्र से लगता है—'अपने दिमाग को ठीक बनाये रखने के लिये मुझे भोजन की भी आवश्यकता है और मैं पहले उसी विषय की सोचता हूँ।' कैम्ब्रिज के गणित प्रोफेसर नेविल ने जो एक पत्र लिखकर मद्रास विश्वविद्यालय मे इन्हें छात्रवृत्ति तथा इगलैंड जाने की अनुमति दिलाई, उसका कुछ अश यह है—'रामानुजम् को गहन अन्धकार से निकालकर विश्वव्यापी प्रसिद्धि प्रदान करने के लिये मद्रास नगर और विश्वविद्यालय को सदैव उचित गर्व करने का अच्छा मौका मिलेगा।'

यदि अग्रेजों ने इस विश्व विख्यात युवक को न पहचाना होता तो गणित-ससार की कितनी भारी हानि होती। प्रो० हार्डी तथा अन्य अग्रेज गणितज्ञों का आपके गणित सम्बन्धी ज्ञान से प्रभावित होना स्वाभाविक ही था। रामानुजम् ने जिस विधि से अपने परिणामों को स्थापित किया था, वह विधि अति सूक्ष्म तथा मौलिक थी। उनके सभी स्थापित सूत्र प्राय निर्दोष थे। उच्चकोटि के तो वे थे ही। उनके विद्वत्तापूर्ण लेखों ने गणित ससार को इनकी ओर आकर्षित किया।

प्रसिद्ध अग्रेज वैज्ञानिक जूलियस हक्सले ने कहा कि 'वह इस शताब्दी का सबसे बडा गणितज्ञ है।' कहते हैं भारतकी मैथिमेटिकल सोसाइटी की प्रसिद्ध पत्रिका में उन्होंने लगभग ७० प्रश्न किये थे और लगभग २० प्रश्न अभी तक हल नहीं हो पाये हैं। यह थी उनकी विलक्षणतापूर्ण प्रतिभा।

अनेक कठिनाइयों के बाद १९१४ ई० में आप इगलैंड गये। अपनी भारतीय वेशभूषा, आचार-व्यवहार, भोजन तथा वस्त्रों मे उन्होंने कोई परिवर्तन नहीं किया। अत्यधिक परिश्रम, पौष्टिक पदार्थों का अभाव तथा इगलैंड की जलवायु आपके क्षय रोग से १९१७ ई० में पीड़ित होने का कारण हुई। १९१४ ई० मे जर्मन युद्ध छिड़ जाने के कारण भी आपको अध्ययन-सम्बन्धी अनेक असुविधाए हुई। भारत लौटना भी आपका सम्भव न था। इगलैंड के अच्छे अस्पतालों में आपका इलाज होता रहा और हितैषियों तथा डाक्टरों के मना करने पर भी आपकी गणित सम्बन्धी गवेषणाओं का क्रम वैसा ही रहा। १९१८ई० में आपका स्वास्थ्य कुछ ठीक हुआ। इसी वर्ष केवल ३० वर्ष की अल्पायु मे आप रायल सोसाइटी के फेलो बनाये गये। यह सम्मान प्राप्त करने वाले आप प्रथम भारतीय थे।

स्वास्थ्य की ओर से उपेक्षा तथा क्षय-सा

भयकर रोग। यह सत्य है कि उनके अनुसन्धान कार्य में इस रोग ने बहुत बाधा डाली, किन्तु जितना वे कर सकते थे, उससे अधिक ही वे करते थे। २० मार्च १६ ६ ई को आप भारत पहुचे। निरन्तर अनुरोध पर भी आपने अध्ययन कार्य नहीं रोका। अस्पतालों की मृत्यु शय्या पर ही उनका M ck Jheta t inctio s पर सब काम पूरा हुआ था। डा० हार्डी ने मद्रास विश्वविद्यालय को लिखा था—'रामानुजम् इतने बड़े गणितज्ञ होकर भारत लौटेंगे, जितना आज तक कोई भारतीय नहीं हुआ। मुझे आशा है भारत इन्हे अपनी अमूल्य सम्पत्ति समझकर उचित सम्मान करेगा। २७ अप्रैल १६२० को चेतपुर ग्राम मे आपका स्वर्ग वास हुआ मृत्यु के चार दिन पहले तक उनका अनुसन्धान चलता रहा और मृत्यु के कुछ क्षण पूर्व तक कोई विकार उनकी मानसिक वृत्तियों मे नही उत्पन्न हुआ।

इनकी प्रतिभा कितनी विलक्षण थी, इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि जिन कठिन प्रश्नों के हल करने मे गणितज्ञ घण्टों लगा देते, उन्हे ये चुटकी बजाते कर देते थे। इनकी गणना शक्ति तथा स्मरणशक्ति भी अलौकिक थी। प्रो० हार्डी ने इनके सम्बन्ध मे एक जगह लिखा है—

'मैंने आज तक श्री रामानुजम् सरीखा कोई गणितज्ञ नही देखा। मै आपकी तुलना आयलर और जैकेनीसे ही कर सकता हू। अकों और सख्याओं से आपकी गहरी दोस्ती थी' तथा एक सफल' "व्यक्ति—पर उनको अपनी सफलता का ज्ञान नहीं।' आवश्यकता थी कि उन्हे उनकी महत्ता और सफलता का ज्ञान कराया जाता '

अपने अन्तर्ज्ञान से ही वे बड़े बड़े मौलिक परिणामों को बिना प्रमाण के ही हल कर देते थे। ऐसा वह किस प्रकार कर पाते हैं—इसे विद्वान् आज तक नहीं समझ सके।

सख्याओं की मीमासा Th e ry of N imbers सम्बन्धी उनकी खोजे अधिकतर हुई है। अनेक नये सिद्धान्तों को उन्होने जन्म दिया तथा उन्नत बनाया। लगभग ४००० बिना प्रमाण किये हुए ही आपके नियम हैं, जो लिपिबद्ध है। उनके सारे मौलिक लेख पुस्तकाकार सन् १६२७ ई० में कैम्ब्रिज मे प्रकाशित हुए।

वे स्वभाव के शान्त, सरल, माता पिता के अपूर्व भक्त धर्म भीरू, विनयी, निरभिमान तथा आस्तिक थे। आपकी उदारता का आभास आपके मद्रास—विश्वविद्यालय को लिखे एक पत्र से मिलता है 'मुझे ऐसा अनुभव होता है कि भारत लौटने के पश्चात् सब धन जो मुझे मिलना चाहिये मेरी आवश्यकताओं से कहीं अधिक होगा। मै आशा करता हू कि इगलैंड मे मेरा व्यय तथा ५० पोंड वार्षिक माता पिता को देने के पश्चात् मेरे आवश्यक खर्च मे जो शेष बचे, वह किसी शिक्षा कार्य मे विशेषत स्कूल मे दरिद्र बालकों की फीस पढाई और पुस्तकों का प्रबन्ध करने मे व्यय कर दिया जाय।

श्री रामानुजम् ससार की उन थोडी विभूतियो मे से थे जो दरिद्र परिवार मे जन्म लेकर भी अपनी प्रतिभा के बल से गणित ससार मे सदा को अपना नाम अमर कर गये। इतिहास मे किसी बालक गणितज्ञ का इनके पूर्व हमे नाम नहीं मिलता। इतने कम समय मे उन्होंने जो असाधारण सफलता प्राप्त की वह वास्तव मे महान् है।

---

१ विद्या धर्मेण शोभते—विद्या की शोभा धर्म से होती है।

२ आत्म-सहाय्य उत्तमम्— अपनी सहायता आप करना उत्तम है।

३ सुहृत आपत्काले हि ससह्येत — आपत्काल में मित्र की जाच होती है।

श्रीयुत पन्त जी के भाषण

सार्वदेशिक के पाठकों की यह मांग है कि केन्द्रीय गृहमन्त्री श्रीयुत पं० गोविन्द वल्लभ पन्त के उन भाषणों को प्रकाशित किया जाय जो उन्होंने सत्याग्रह के स्थगन के समय चण्डीगढ़, लुधियाना और करनाल में सार्वजनिक सभाओं में दिये थे और सद्भावना के वातावरण की उत्पत्ति के लिए सत्याग्रह के स्थगन पर बल दिया था। उन भाषणों की जो रिपोर्ट समाचार पत्रों मे छपी हैं वह नीचे दी जाती हैं :—

चण्डीगढ़ का भाषण

चण्डीगढ २१ दिसम्बर। केन्द्रीय गृहमन्त्री पं० पन्त ने आज यहा पजाब विश्वविद्यालय का दीक्षात भाषण देते हुए लोगों से प्रदेश और भाषा के विवादों से ऊपर उठने और भावनात्मक एकता के लिए काम करने की अपील की, जिससे सब किस्म के लोग भाईचारे से इस महान् देश के योग्य नागरिक बन सके।

उन्होंने कहा कि अगर हम आपसी झगडो मे उलझे रहे तो उन उच्च उद्देश्यों की पूर्ति की कोई आशा नहीं रहेगी जो भारत ने अपने सामने रखे हैं।

पन्त जी ने कहा कि हमने अपने शासन के लिए जनतन्त्री तरीका चुना है किन्तु यह कोई आसान मार्ग नहीं है, इसे हमें सब के सम्मिलित प्रयत्नों से बनाना है। इस महान् कार्य की पूर्ति में शिक्षित नौजवान बहुत महत्वपूर्ण भाग अदा कर सकते हैं।

उन्होंने कहा कि जनतन्त्र का मतलब बहुमत का शासन नहीं समझा जाना चाहिए। इसकी सफलता अल्पसख्यकों के सन्तोष से मापी जानी चाहिए। सहिष्णुता और समझदारी के वातावरण मे ही यह पनप सकती है। किसी भूले भाई को बल और युक्ति से उतना नहीं जीता जा सकता जितना आलिंगन से। किसी को जीतने के लिए प्राय स्वय झुकना पडता है।

भाषा विवाद

पजाब के भाषा विवाद का उल्लेख करते हुए पत जी ने कहा कि एक भाषा का विकास दूसरी को समृद्ध करता है। किसी देश की भिन्न २ भाषाए एक राष्ट्रीय संस्कृति के निर्माण मे समान रूप से योग देती हैं।

उन्होंने कहा कि रूस मे २०० भाषाए और बोलिया हैं—हमारे अपने देश मे १७१ भाषाए और ५४४ बोलिया हैं। इन सब का अलग २ रूप है किन्तु वे सब एक दूसरे को प्रभावित करती हुई विकसित हुई है। प्रत्येक ने राष्ट्रीय जीवन की विशाल धारा मे एक सहायक नाले की तरह काम किया है। कभी किसी ने दूसरी भाषा की तरक्की मे बाधा नहीं डाली। आपसी सम्पर्क और आदान प्रदान से उनका विकास हुआ है यहा तक कि सस्कृत और द्रविड़ भाषाओं मे भी काफी समानता आ गई है।

पजाब के भाषा विवाद का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि यह बडे दु ख की बात है कि इस

राज्य का वातावरण पिछले कुछ अरसे से भाषा विवाद के कारण खराब हो रहा है। पजावी और हिन्दी भाषाए एक दूसरे के बहुत नजदीक है और दोनो को पजाब के सब लोग समझते है। दोनों के ९० प्रतिशतक शब्द एक दूसरे मे विद्यमान है। इसलिए ये दोनों भाषाए प्रतिस्पर्धी नहीं—सगी बहिनें हैं—एक ही नदी की दो धारायें है।

अगर हम इन तथ्यों पर ठण्डे दिमाग से विचार करेंगे तो सन्देह और विद्वेष का वातावरण खत्म हो जायगा और इस राज्य में शान्ति व एकता फिर स्थापित हो जायगी।

लुधियाना

लुधियाना २२ दिसम्बर। गृहमन्त्री प० गोविन्द वल्लभ पन्त ने आज यहा एक विराट सार्वजनिक सभा मे भाषण देते हुए कहा कि पजाब मे भाषा समस्या के हल के लिए क्षेत्रीय फार्मूले मे मेरा बडा विश्वास है।

उन्होंने कहा—हिन्दी रक्षा आन्दोलन अब समाप्त हो जाना चाहिए और राज्य की भाषा समस्या एव अन्य समस्याओं के हल के लिए अनुकूल वातावरण तैयार किया जाना चाहिए।

हिन्दुओं और सिखो मे एकता होनी अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा कोई काम न किया जाना चाहिए जिससे दोनो जातियों मे भेद भाव उत्पन्न हों। दोनों को एक दूसरे की कठिनाइया समझनी चाहिए और साथ २ रहना चाहिए।

यदि हिन्दू और सिख मिल कर न रहेंगे तो देश के विकास मे बाधा आएगी और उसकी स्वतन्त्रता को खतरा पैदा होगा। वे एक सीमान्तिक राज्य के निवासी हैं, अत उनको राज्य मे पूर्ण शान्ति रखनी चाहिए। आर्यसमाज का आदोलन राजनैतिक नहीं अपितु सास्कृतिक है।

चण्डीगढ़ सम्वाददाता सम्मेलन

चण्डीगढ २८ दिसम्बर। भारत के गृहमन्त्री प० गोविन्द वल्लभ पन्त ने आज पजाब के हिन्दी रक्षा आन्दोलन पर, जिसे चलते हुए सात मास हो गये है, परेशानी और दु ख प्रकट किया और कहा—मुझे निश्चय है कि जल्दी ही यहा सामान्य अवस्था स्थापित हो जायगी।

पन्त जी एक सम्वाददाता सम्मेलन मे बोल रहे थे। उन्होने कहा—मै चाहता हूँ कि राज्य सरकार और जनता के कुछ वर्गों का यह सघष समाप्त हो जाय और कोई हल निकल आए।

उन्होंने आगे कहा—किन्तु भाषा समस्या का हल सब सम्बन्धित लोगों द्वारा बातचीत के लिए अनुकूल वातावरण बनाने से ही निकल सकता है।

पन्त जी ने कहा—हमारी दिलचस्पी यह है कि राज्य मे सामान्य अवस्था स्थापित हो जाए और जनताके सब वर्गो मे सद्भाव पैदा हो। केन्द्रीय सरकार ने सम्बन्धित पक्षों को सदा यही सलाह दी है।

पजाब मे कानून और व्यवस्था का सतत भग और स्त्रियो एव पुरुषों का जेल गमन दु ख जनक है। इस समस्त स्थिति से मुझे चिन्ता ही नहीं, परेशानी भी होती है।

आखिर हम सब हैं तो एक ही। यहा पजाब मे और देश मे अन्यत्र सरकार जनता के मत से तो बनती है, इसलिए सरकार का जनता या जनता के किसी वर्ग से सघर्ष होना खेदजनक है।

रिहाइयों का स्वागत

मै नहीं चाहता कि लोग जेलों मे जाए और जेलों मे रहें। मे हिन्दी रक्षा समिति के बन्दियों की पजाब सरकार द्वारा रिहाई की इस प्रक्रिया का स्वागत करता हू।

एक सवाददाता ने प्रश्न किया, क्या एक ऐसा गोलमेज सम्मेलन करना वाछनीय होगा जिसमे अकाली और आर्य समाजी कोई प्रेम पूर्वक समझौता कर सकें?

पन्त जी ने कहा- ऐसे सम्मेलन का समय अब आ चुका है। यदि इससे दोनों वर्गों मे कुछ सद्भाव स्थापित हो सके और उसस सम्बन्ध सुधर सकें तो इससे ज्यादा और सन्तोष की बात

क्या होगी ?

एक सवाददाता ने सुझाव दिया कि हिन्दी क्षेत्र मे गुरुमुखी शिक्षण की अनिवार्यता हटा दी जाय।

पन्त जी न उत्तर मे कहा कि ज्यादा भाषाए सीखने से मानसिक विकास मे सहायता मिलती है और सद्भाव भी बढता है। मनुष्य जितनी भाषाए सीख सके उसे सीखनी चाहिए ज्ञान से सदा ही शक्ति मिलती है और समझदारी आती है एव उदात्त विचारो का उदय होता है। यदि कोई व्यक्ति एक भाषा विशेष सीखता है तो वह उसके लिए अनिवार्य नहीं रहती।

(परन्तु यह कार्य स्वेच्छया होना चाहिए और इसके पीछे बाध्यता व राजनैतिक प्रभुत्व की भावना न होनी चाहिए)—सम्पादक

पन्त जी ने भाषा सम्बन्धी सच्चर फार्मूले का उल्लेख किया और कहा कि वह सन १९४९ मे एसे समय बनाया गया था जब हमारे मस्तिष्कों मे उदारता कदाचित अब से अधिक थी।

करनाल का भाषण

करनाल २३ दिसम्बर। केन्द्रीय गृहमन्त्री प० गोविन्द वल्लभ पन्त ने आज यहा विशाल सभा मे भाषण देते हुए हिन्दुओं और सिखो से दिलों की एकता तथा भाईचारे की भावना बनाने की मार्मिक अपील की।

ऐतिहासिक करनाल नगर में अपने पजाब के दौरे की अन्तिम सभा मे भाषण देते हुए पन्त जी ने राज्य में शान्ति, सद्भावना और सहिष्णुता का वातावरण पैदा करने पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि यदि ऐसा वातावरण बन सका तो कुछ लो, कुछ दो' की भावना से आपस में मिल बैठ कर भाषा की समस्या हल करना सम्भव हो सकेगा। इसमें किसी की सहायता अथवा हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं होगी।

गृहमन्त्री ने कहा कि पजाब सरकार द्वारा हिंदी सत्याग्रहियों को रिहा करनेकी नीति अच्छी है, परन्तु मुझे यह जान कर आश्चर्य हुआ है कि रिहा सत्याग्रहियों ने फिर सत्याग्रह किया, जिससे उन्हें फिर जेल में बन्द कर दिया गया। यदि रिहाई और गिरफ्तारी का यह सिलसिला इसी प्रकार जारी रहा तो इससे कोई भी समस्या हल नही होगी और न ही भाषा समस्या पर समझौते के लिए उचित वातावरण बन पायेगा।

लोकतन्त्र का अर्थ कानून और व्यवस्था का पालन करना है। कानून तोडने वाले लोकतन्त्र की प्रगति मे कोई योग नहीं दे रहे हैं। **सरकार स्वय अच्छे व्यक्तियों को बद नहीं रखना चाहती क्योंकि राष्ट्र निर्माण कार्यों के लिए उनकी शक्ति और बुद्धि की आवश्यकता है।**

एकता जरूरी

पन्त जी ने कहा कि इस सीमा राज्य मे आज एकता, एक परिवार की भावना की आवश्यकता सर्वोपरि है। पाकिस्तान की घटनाओं और कश्मीर प्रश्न को देखते हुए यह और भी आवश्यक है। भाई २ मे भी मतभेद हो सकते हैं परन्तु उन्हें एक दूसरे के लिए कुछ न कुछ त्याग करना पडता है। सही बात पर भी कभी एक पक्ष को झुक जाना चाहिए जिससे देश के व्यापक हित में अनुकूल वातावरण बन सके

उन्होंने कहा कि मुझे हिंदी और पजाबी तथा हिन्दुओं और सिखों मे कोई खास फर्क नजर नहीं आता। इनकी परम्परा एक समान है। इस प्रकार आपस मे लडने से कोई फायदा नहीं होगा। घृणा और सन्देह के स्थान पर अब शांति, सद्भाव व प्रेम का वातावरण बनना चाहिए।

पन्त जी ने पजाबियों के साहस की प्रशसा करते हुए एकता बनाए रखने की अपील की। उन्होंने स्त्रियों से विशेष रूप से अपील की कि वे पुरुषों को राष्ट्र विरोधी कार्यों मे भाग लेने से रोकें।

आदिवासी विवाहिता लड़की का संरक्षक ईसाई पादरी नहीं

झाबुआ के जिलाधीश का फैसला : ईसाई से दूसरा विवाह गैरकानूनी

'जिस प्रकार ईसाई पादरी नरोणा ने कन्या को अपने मिशन मे कन्या की इच्छा के विरुद्ध एक ईसाई से विवाह करने को रखा है वह निश्चय ही गैरकानूनी है। हरिसिह कन्या का पति ही कानूनी सरक्षक है। कन्या बदुदू उसी को सौपी जानी चाहिए, क्योकि यह प्रकरण एक नाबालिग कन्या को गैर कानूनी तौर पर गैर कानूनी कार्य के लिए रोक रखने और ईसाई पादरी नरोणा द्वारा, जिसका उस कन्या पर कोई अधिकार नहीं हैं, उस कन्या को तलाक दिलाकर उसकी इच्छा के विरुद्ध किसी ईसाई से दूसरा विवाह कराने का है। प्रार्थी ही, जो उसका पति है, कन्या के दूसरे पति के मुकाबले उसका रक्षण करने का अधिकारी है।" यह निर्णय झाबुआ के जिलाधीश श्री पाटिल ने जाब्ता फौजदारी की धारा ५५२ के प्रार्थना पत्र पर दिया।

विद्वान् जिलाधीश ने प्रकरण की चर्चा करते हुए लिखा है कि पादरी नरोणा की कन्या उसके पति हरीसिह और पिता से समझौता कराने की दिलचस्पी प्रकट होती है। एक ईसाई प्रचारक के नाते ऐसे प्रकरणों मे उनकी ऐसी दिलचस्पी अनावश्यक है तथा उनकी ऐसी हलचलों पर निगरानी रखने तथा धिक्कारने की आवश्यकता है यह विशेषतया इसलिए भी आवश्यक है कि ईसाई प्रचारक अपने बोर्डिंग हाउसों मे स्त्रियों को रखने का लायसेंस प्राप्त नहीं करते है जबकि उनके लिए मध्यभारत के प्रचलित कानूनों के अन्तगत ऐसा लायसेंस लेना आवश्यक है। इस कन्या को स्कूल मे पढाया नहीं जाता है किन्तु वह ईसाई पादरी के पवित्र चरणों में उनकी निजी सेवा करती है। इन परिस्थितियों मे कन्या का रोका जाना गैर कानूनी पाया जाता है।

इस प्रकरण मे ईसाई पादरी नरोणा ने स्वीकार किया है कि कन्या बदुदू गिरजाघर के घेरे मे तथा घरेलू कामकाज और पादरी की निजी सेवा करती है। कन्या ने भी अपने बयान में प्रकट किया है कि पादरी नरोणा उसका दूसरा विवाह करना चाहता है तथा वह ईसाई पाठशाला मे रहती है। किन्तु उसे लिखना पढना नहीं सिखाया जाता। वह तो पादरी का निजी काम करती है।"

विद्वान् जिलाधीश ने प्रचलित कानूनों की चर्चा करते हुए लिखा है कि इस प्रकरण मे यह देखना है कि पादरी नरोणा ने इस प्रकरण मे किस प्रकार भाग लिया। प्राय ईसाई प्रचारक यह दम भरते हैं कि वे दूसरे धर्म वालों को कानूनी तरीकों से राजी कर ईसाई धर्म मे दीक्षित करते है। किन्तु यह आश्चर्यजनक है कि पादरी नरोणा यह कार्य करते हुए जबर्दस्ती धर्म परिवर्तन के लिए विवाह करवाते है जैसा कि इस प्रकरण मे प्रमाणों से समने आया है।

प्रकरण में आगे चलकर न्यायाधीश ने कहा है कि पादरी नरोणा इस प्रकरण मे बहुत महत्वपूर्ण भाग ले रहे हैं और स्थानीय मामलो मे अधिक दिलचस्पी लेते दिखाई दे रहे है। वह न केवल विवाह के झगडो को निपटाते है किन्तु आदिवासियो के झगडे तोडने का न्यायालय का कार्य भी करते है। यह वह व्यक्ति है जिसने इस प्रकरण मे कन्या को अपने कब्जे मे रखा। यह कार्य उसके पति की इच्छा के विपरीत है जो कि गैर-कानूनी रोक है। वह कन्या का विवाह किसी ईसाई से करना चाहते है यह जानते हुए कि उसका विवाह हरिसिह प्रार्थी से चुका है न्यायाधीश ने कहा कि

प्रकरण की कहानी इस प्रकार है। "कोई ढाई वर्ष पूर्व प्रार्थी हरीसिह का विवाह खीमा डामर भील की कन्या बदू से हुआ था। कन्या बदू विवाह के बाद एक वर्ष तक प्रार्थी के साथ रही। प्रार्थना पत्र प्रस्तुत होने के छ माह बाद पिता खीमा कन्या को अपने घर ले गया। प्रार्थी खीमा के पास गया और अपनी स्त्री को भेजने को कहा किन्तु उसने स्त्री को नहीं भेजा। प्रार्थी को यह भी पता चला कि उसकी स्त्री तो ईसाई गिरजाघर क्षेत्र मे पादरी नरोणा के पास रहती है। प्रार्थी और कन्या का पिता पादरी नरोणा के पास गये और बदू को वापस ले जाने को कहा। इस पर पादरी नरोणा ने पति हरिसिह को ईसाई धर्म स्वीकार करने को कहा, क्योंकि बदू ईसाई है उसने यह भी कहा कि बदू ईसाई है इसलिए उसका विवाह एक ईसाई पति से ही होगा। प्रार्थी ने ईसाई धर्म स्वीकार करने से इन्कार किया और इस न्यायालय मे अपनी स्त्री का कब्जा दिलाने की माग लेकर आया है। बदू की अवस्था सत्रह वर्ष की है और इस प्रकार वह प्रार्थी की नाबालिग स्त्री है।

विद्वान् न्यायाधीश ने बदू का कब्जा उसके पति हरिसिह को दिलाने की आज्ञा देते हुए लिखा है कि "माता पिता भी पति की इच्छा के विरुद्ध यदि कन्या को दूसरे विवाह के लिए रोकते हैं तो यह गैर कानूनी कृत्य के लिए गैर कानूनी रोक होती है।"

पादरी नरोणा का भी यह कृत्य उसी उद्देश्य में आता है अर्थात् गैर कानूनी कृत्य के लिए गैर कानूनी रोक जो कि दिवानी और फौजदारी दोनों गलतियों मे आता है। इसलिए प्रार्थी की नाबालिग स्त्री जिसे ईसाई गिरजाघर क्षेत्र मे गैर कानूनी कार्य के लिए गैर कानूनी तौर पर रोक रखा है उसे धारा ५५२ जाब्ता फौजदारी के अन्तर्गत प्रार्थी हरिसिंह कन्या के पति को सौंपने की आज्ञा देता हू।"

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
(महत्त्वपूर्ण निश्चय)

आर्य समाजो की रजिस्ट्री प्रान्तीय सभाओं से पृथक् नहीं हो सकती

निश्चय हुआ कि घोषणा की जाय कि प्रान्तीय सभाओं से सम्बद्ध कोई समाज अपनी सम्पत्ति और सगठन की रजिस्ट्री पृथक् न कराये। यदि कोई समाज इसका उल्लघन करे और प्रान्तीय सभा चाहे तो सार्वदेशिक सभा द्वारा सशोधित आर्य समाज के उपनियमों की धारा स० ४१ और ४६ के अनुसार उन समाजों के विरुद्ध कार्यवाही कर सकती है।

(अन्तरङ्ग सभा, १२ १० १६४१)

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा

निश्चय हुआ कि दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार समिति द्वारा नियत हिन्दी परीक्षा के स्नातकों को सभा की ओर से प्रतिवर्ष सत्यार्थप्रकाश की प्रतिया भेंट की जाया करें। (अन्तरग सभा, १२ १० ४१)

आर्यसमाज स्थापना दिवस की छुट्टी

अंग्रेजी कलेण्डर के अनुसार ७ अप्रैल की छुट्टी के लिए सरकार से पत्र व्यवहार किया जाय।

(अन्तरंग सभा, १ ७ ४२)

आर्यवीरदल व राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ

जब से सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने आर्य वीर दल का व्यापी संगठन करने का निश्चय किया है तभी से उत्तर भारत मे एक कठिनाई उपस्थित हो गई है जिसे दूर करने के लिए इस वक्तव्य के निकालने की आवश्यकता हुई है। कठिनाई यह है कि बहुत से स्थानों पर कई वर्षों से राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ कार्य कर रहा है। प्राय सभी जगह स्थानीय आर्य समाजी उसमे शामिल हो चुके है और अनेक स्थानों पर तो संघ के कार्यालय ही आर्य समाज मन्दिरों मे बने हुए है। ऐसे स्थानो पर जब आर्य वीर दल की स्थापना का प्रयत्न आरम्भ होता है तब वे आर्य समाजी जो संघ मे शामिल हो चुके है, दल की स्थापना का विरोध करते हैं। मेरठ, सहारनपुर और पंजाब के कुछ शहरों के दृष्टान्त इस प्रसंग मे विशेषत उल्लेख योग्य है।

इस प्रसंग मे यह बता देना आवश्यक है कि संघ के होते हुए भी आर्य वीर दल की स्थापना क्या आवश्यक हुई राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ जिस विशेष आदर्श और कार्य प्रणाली को सामने रख कर संगठित हुआ है उससे आर्य समाज को कोई झगडा नही। परन्तु दो बात स्पष्ट हैं। राष्ट्रीय स्वय सेवक संघ की स्पष्ट नीति है कि वह किसी सार्वजनिक कार्य मे भाग नहीं लेता और आर्य समाज एक प्रगतिशील व्यावहारिक संस्था है, उसे रक्षा और सेवा कार्य के लिए शिक्षित स्वय सेवकों की आवश्यकता है। संघ से उसे क्रियात्मक सहायता नहीं मिल सकती। इस कारण उसके लिए आर्य वीर दल का संगठन अनिवार्य है। दूसरी बात यह है कि राष्ट्रीय स्वय सेवक संघ के मूलभूत आदर्शों और प्रतिदिन के कार्यक्रम मे भी मूर्तिपूजा का विशेष स्थान है। संघ के संस्थापक डा० हेडोगेवार की 'विचारधारा' मे 'जनसाधारण को उस अव्यक्त स्वरूप का सम्यक् ज्ञान करा देने का मूर्तिपूजा ही एक मात्र सुलभ साधन है।" (परम पूज्य डा० हेडोगेवार" विचारधारा पृष्ठ ७५) इत्यादि शब्दों द्वारा मूर्तिपूजा की भावना को आवश्यक बतलाया गया है और संघ अपने व्यवहार मे भी उस भावना से पूरा काम लेता है। आर्यसमाजियों के लिए जहा राष्ट्रीय संघ की इस मूलभूत भावना को मानना असम्भव है वहा आर्यसमाज मन्दिरों मे उसे स्थान देना भी सम्भव नही। ऐसी दशा में सिद्धान्त रूप मे आर्य समाजियो के लिए राष्ट्रीय स्वय सेवक संघ के रीति रिवाजों मे शामिल होना दुष्कर है। इन कारणों से राष्ट्रीय स्वय सेवक संघ के रहते भी आर्य वीर दल की स्थापना आवश्यक हो गई है।

राष्ट्रीय स्वय सेवक संघ हिन्दू नवयुवकों को शारीरिक व्यायाम और संघ व्यायाम का शिक्षण देता है यह उसकी उपयोगिता है। उसका विरोध करना न सभा का उद्देश्य है और न किसी दूसरे देशभक्त का होना चाहिये परन्तु यदि आर्य समाज अपने रक्षा और सेवा के प्रतिदिन के कार्यक्रम को भली प्रकार से चलाने के लिए आर्य वीर दल सचालित करे तो उससे भी किसी को न झगडना चाहिए। आर्य समाज के सदस्यों का तो कर्तव्य है और परम धर्म है कि वे आर्य वीर दल में सम्मिलित हों, यह भी स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि आर्य समाज मन्दिर मे यदि किसी स्वय सेवक दल को स्थान मिल सकता है तो वह आर्य वीर दल ही है। सार्वदेशिक सभा का यह निश्चय समस्त आर्य समाजों और आर्य समाजियों के लिए एक आदेश के समान है कि वे आर्य वीर दल के दृढ संगठन बनाने मे अपनी सारी शक्ति लगा दें। प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं को भी इस विषय मे सचेत होने की आवश्यकता है।

(अन्तरंग सभा, २२ ८ ४२)

धर्म के नाम पर

(१)

ऐसे साधु को क्यों छोड़ा ?

उन्नानी। उन्नानी में एक साधु एक आठ नौ वर्षीय बच्चे को लेकर भीख मागता था।

बच्चे के पैरों मे पट्टिया बधी हुई थीं। जिन मे से मवाद निकलता था। कुछ व्यक्तियों को उस पर शक हो जाने के परिणामस्वरूप उसे पकड लिया गया। बच्चे को जब ध्यान से देखा गया तो पता चला कि उसे बुरी तरह से यातनायें दी गई है। बच्चे से जानने की चेष्टा की गई तो उससे कोई लाभ न हुआ। बच्चा मुसलमान था अत उन्नानी का एक सहृदय गोताखोर मक्कू खा उसे अपने यहा चिकित्सा को ले आया तथा साधु को पुलिस अधिकारियो ने छोड दिया।

बच्चे से भेंट

१६ मई को साय बच्चे से मिलने के लिए एक सज्जन मक्कूखा के घर गए। वहा बच्चा एक चारपाई पर लेटा था। मक्कू खा की सहायता से उससे कुछ बातें कर सके। यह जिह्वा की खराबी के कारण बहुत धीरे २ बोल पाया। उसके पैरों के कई घाव भर गये थे। कोई अभी बीभत्स रूप में है। उन्हें देखने से ज्ञात होता है कि वह कोढ न होकर जलाया गया है। इसकी पुष्टि उपस्थित कई व्यक्तियों ने भी की। एक वृद्ध ग्रामीण सज्जन ने कहा कि कोढ होने पर नाखून नहीं रहते हैं लेकिन उसके सब नाखून थे।

उससे पूछा कि यह घाव कैसे हुए तो उसने एक शब्द 'जलाया' कहा, जिसका यही अर्थ निकलता है कि उसे जलाया गया है। पूछने पर उसने अपना नाम मलूर, भाई का नाम मुलू पिता का नाम सभवतया अली तथा निवासस्थान दुमियार बरेली के पास बताया।

उसके दायें हाथ मे मुह से काटने के दातो के स्पष्ट चिन्ह बने हुये थे तथा हाथ की एक उगली का नाखून टूटा हुआ था जो थोडा जुडा था।

जनता मे इससे आश्चर्य है कि ऐसा जघन्य अपराधी होने पर भी उस साधु को क्यो छोड दिया गया ?

(२)

साधु द्वारा कत्ल

पिलखतरा (एटा) पास के वरसौली ग्राम मे ठा० कुवरजीतसिह के आठ वर्षीय नाती को दिन दहाडे मुगदर के प्रहार मे एक महात्मा ने मार डाला।

घटना का कारण पूछे जाने पर वरसौली ग्राम के अधिकाश व्यक्तियों ने बतलाया है कि इसी ग्राम के एक मन्दिर से २५ बीघे भूमि लगी हुई थी। जो भी व्यक्ति मन्दिर का पुजारी होता रहा है उसी ने उस भूमि का लाभ उठाया है। अभियुक्त साधु गत २५ वर्षों से उस मन्दिर का पुजारी था और उस भूमि का भोग वही भोगता था। ठा० कुवरजीत सिह के ग्राम पचायत का प्रधान बन जाने पर मन्दिर के अधिकार से प्रधान द्वारा भूमि ले ली गई और उस भूमि का लाभ स्वय ठा० कुवरजीतसिंह उठाते रहे।

यह भी बताया जाता है कि भूमि छीने जाने पर कुछ समय के लिये अपराधी महात्मा पागल भी हो गया था। महात्मा के हृदय मे भूमि के छिन जाने पर जो टीस हुई वह अब तक मिटी नहीं थी।

बताया गया है कि मृत कुमार शौच से आया और मन्दिर पर आकर महात्मा से हाथ धुलाने को कहा। महात्मा ने क्रुद्ध होकर पास मे रक्खे हुये मुगदर से प्रहार कर दिया जिससे बच्चे की उसी स्थान पर मृत्यु हो गई। महात्मा को गिरफ्तार कर लिया गया है और मृत कुमार की लाश पोस्ट मार्टम् के लिये अलीगढ भेज दी गई।

(३)

नेपाली कन्या की महादेव भक्ति

मथुरा। मथुरा के सदर बाजार मे महादेव घाट पर एक अविवाहित नेपाली कन्या गई। वह बिना खाये पिये चार दिन तक मन्दिर के अन्दर महादेव जी की मूर्ति को पकड़े हुए बैठी रही। सिटी मजिस्ट्रेट ने उसे सतरे का रस पिलाया। इस प्रकार वह १० दिन बिना खाये पिये तथा शौच आदि जाय हुए लगातार बैठी रही। वह आखें बन्द किये हुये भजन करती हुई मालूम होती थी। लोग उसके सम्बन्ध मे नाना प्रकार की बातें करते थे। परन्तु उसने किसी से भी बातें नहीं कीं। उसके माता पिता कहा हैं यह भी कोई नहीं बता सकता। समाज कल्याण अधिकारी उसे महिला आश्रम लेजाने में असफल रहे। उसे देखने के लिये हर समय भीड लगी रहती थी।

(४)

पुरखों की लीक पर अडीग

वाराणसी की एक वैभवशालिनी विधवा पुरखों की लीक न छोड़ने के उत्साह में दस सहस्र रुपये की धनराशि कुए में डालने पर तत्पर है। बताया जाता है कि इस विधवा ने अपने एक निकट सम्बन्धी को, जो राज्य के समाज कल्याण विभाग मे उच्च अधिकारी है बताया कि वह वाराणसी मे एक सार्वजनिक कूप बनाने के निमित्त १० सहस्र रुपया व्यय करने का सकल्प कर चुकी है। विस्मित अधिकारी ने उसे ऐसा करने से रोकना चाहा। उसने कहा कि वाराणसी मे कुओं की आवश्यकता नहीं है, अत यदि यह धन वहां निराश्रिता महिलाओं के लिये एक सदन बनाने के निमित्त लगा दिया जाये, तो उसका पूर्ण सदुपयोग होगा किन्तु इस धर्मशीला विधवा ने उस अधिकारी से कहा, कुछ भी हो, मे पुरखों की लीक नहीं छोड सकती, वे लोग कुए ही बनवाते आये हैं और मै भी वही करू गी, इस प्रकार वाराणसी उस नारी सदन से वचित रह जायेगी, जिसकी उसे सख्त जरूरत है, किन्तु उसे एक नया कुआ मिल जायेगा जिसकी उसे कोई जरूरत नहीं है।

(५)

धर्म के नाम पर चोरी

गाजियाबाद। गाजियाबाद परगनाधीश महोदय की अदालत में एक ऐसे व्यक्ति का मुकदमा पेश हुआ जो कि पिछले आठ वर्ष से प्रतिदिन धर्म के नाम पर चोरी करता आ रहा था। यह व्यक्ति परगना पिलखुवे का रहने वाला एक रेलवे क्रासिंग का चौकीदार है।

अभियुक्त के कथन के अनुसार इस व्यक्ति का चोरी के माल से दो बड़ी आलीशान धर्मशालायें बनाने का विचार था।

उक्त व्यक्ति चोरी के माल को जमा करता रहा, उसने उसमें से किसी चीज को अपने प्रयोग में नहीं लिया। पुलिस को भी चोरी का सारा सामान मिल गया है।

(६)

पुत्रों की रक्षा के लिए जलेबी खाना आवश्यक

सरदारशहर। जलेबी की बिक्री बढ गई है क्योंकि प्राय अनपढ औरतें एक गलत धारणा की

शिकार होकर कूए या तालाब के किनारे जाकर पाव भर जलेबी खाती है। बची हुई मिठाई कूए या तालाब में डाल देती हैं। कहा जाता है कि एक बुढ़िया को स्वप्न आया कि यदि पुत्रों की रक्षा करनी है तो प्रति पुत्र के हिसाब से पाव भर जलेबी कूए या तालाब के किनारे जाकर खानी चाहिये अन्यथा उनके पुत्रों को सकट का सामना करना पड़ेगा।

(७)

५ अप्रैल को थ ना (बम्बई) के अतिरिक्त सेशन जज की अदालत में एक बडा सनसनी पूर्ण अभियोग प्रस्तुत किया गया। २ आदि वासी लड़कियों ने अपनी दादियों के साथ अपने पिता को मार कर उसका मास खाया। उनकी दादिया उन्हें जादूगरनी बनाने की दीक्षा दे रही थीं। पिता का नाम रजिया जीविया था। वह खलिहान मे सोया हुआ था। हत्या के अपराध मे अन्य ७ स्त्रियों पर भी मुकदमा चलाया गया है जिनकी अवस्था ६० वर्ष से ऊपर है। ७ वीं अभियुक्ता गिरफ्तारी के बाद मर गई। लडकिया थाना जिले के उमर गाव तालुका की रहने वाली हैं। उनके नाम नवशी (१५) ओपोटरी (आयु १० वष हैं।

पुलिस के विवरण के अनुसार दोनों लडकियों को गत अक्टूबर में दशहरा के अवसर पर जादूगरनिया बनाने की दीक्षा दी जा रही थी। उन्हे ५ मन्त्र सिखाए गए और उन्हें कहा गया कि अन्तिम दीक्षा के रूप में वे अपने पिता की हत्या कर दें। कुछ झिझक के पश्चात दोनों लडकिया ऐसा करने के लिए राजी हो गई।

५ अक्टूबर की रात्रि को दोनों लड़किया और सातों स्त्रिया नगी होकर जलूस के रूप में खलिहान मे गई। स्त्रियों ने रजिया जीविया को जगाया और कहा हमारे साथ चलो। जब रजिया ने पूछा कि मुझे कहा ले जाओगी तो उसकी मा रशमी ने कहा तुम्हे देवी की भेंट चढायेंगे। रजिया ने जाने मे इन्कार किया और प्रतिरोध किया। इस पर वे सब स्त्रिया उस पर टूट पड़ीं। उसके मु ह में कपड़ा ठू स कर और घसीट २ कर जगल मे ले गई जहा उसकी हत्या कर दी गई। लड़कियों ने बताया कि जब रजिया जगल को ले जाया जा रहा था तब ४ स्त्रिया कुत्तों पर सवार थीं। उन्होंने यह भी कहा कि कुत्तों पर सवार होते समय वे बहुत छोटी बन गई थीं।

जगल से लौटने पर एक स्त्री ने जादू किया और जमीन फट कर पानी निकल आया। लड़कियों ने बताया कि रजिया के टुकडे करके उसका मास पकाया गया। इस अनुष्ठान के बाद पुन जादू किया गया। इससे आग बुझ गई और फटी हुई भूमि जुड गई।

(८)

पठानकोट के निकट एक ग्राम मे एक युवा दम्पत्ति किसी रोग से पीड़ित थे। उन्होंने एक झाड फू क करने वाले ससार सिंह को उपचार के लिए बुलाया। उसने बताया कि उनके घर में भूत रहता है। भूत को हटाने के लिए उसने पति पत्नी को लोहे के चिमटे से पीटना आरम्भ कर दिया। उसने उन्हें इतना पीटा कि दोनों दम तोड़ गए। मृतक ५ मास का बालक छोड़ गए हैं। पुलिस जाच कर रही है।

स्वदेश प्रचार

—श्री आयमूर्ति जी तथा अन्य आर्य भाईयों के उद्योग से बगलौर में एक आर्य सेवाश्रम (अनाथालय) की स्थापना हुई। इस समय आश्रम में ६ अनाथ हैं। श्री धर्मराज आर्य ने ४ वर्ष की लीज पर १ भवन १ कुआ और २ एकड़ भूमि इस कार्य के लिए दी है।

मंगलौर (दक्षिण) में श्री स्वामी सदानन्द जी द्वारा बेंगलूर के श्री रंगाचारी नामक एक ब्राह्मण को जो रेलवे के रिटायर्ड अफसर हैं सन्यास की दीक्षा दी गई और सेवानन्द नाम रखा गया। अब वे बगलौर के आर्य सेवाश्रम में सेवा कार्य कर रहे हैं।

—हरियाना प्रान्तीय आयुर्वेद महाविद्यालय गुरुकुल, झज्जर, रोहतक, पंजाब के द्वितीय वर्ष का वार्षिक परीक्षा फल —

पूर्णाङ्क ६००

			प्राप्त	श्रेणी
१.	ब्र०	महादेव	३१५	द्वितीय
२.	,,	धर्मपाल	२६६	,,
३	,,	देव शर्मा	२५८	तृतीय
४.	,,	बलदेव	३३४	द्वितीय
५.	,,	मनुदेव	३३०	,,
६.	,,	चन्द्रपाल	२७८	,
७.	,,	यश पाल	२८८	,,
८.	,,	सोमवीर	३१५	,,

—६-४-५८ को आर्य समाज नरकटियागंज द्वारा एक मुस्लिम परिवार की शुद्धि जिसके ३ सदस्य थे हुई, इस अवसर पर लगभग ३००० नर नारी उपस्थित थे।

श्री शिवसागर जी वानप्रस्थ कार्यालय मन्त्री आर्य समाज नैनीताल सूचना देते हैं कि आर्य समाज में निवासार्थ आने वाले महानुभावों में प्राथमिकता उन्हें दी जायगी जो आद्योपान्त पूर्णतया आर्य विचारों के होंगे किसी भी आर्य समाज से प्रमाणित तथा स्वस्थ होंगे। रोगी व्यक्ति प्रवेश न पा सकेंगे।

—नगर आर्य समाज महर्षि दयानन्द मार्ग आगरा का वार्षिकोत्सव श्री मोहनलाल जी आर्य प्रधान आर्य समाज की अध्यक्षता में १० से १४ अप्रैल ५८ तक समारोह पूर्वक मनाया गया। अनेक सुव्याख्याताओं के भाषण हुए।

विदेश प्रचार

माननीय श्री अनथ विजयधर जी प्रधान सम्पादक दैनिक ऐडवाम तथा मेम्बर लेजिस्लेटिव कौन्सिल के प्रधानत्व में पूज्य वर्य श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज का व्याख्यान शुक्रवार दिनांक ११४५८ ई० को दिव्येर जी रायार के सिनेमा होल (बारोडा भवन) में वेद सन्देश ही मानव समाज का कल्याण कारक है विषय पर हुआ एक घण्टा और बीस मिनट तक स्वामी जी के व्याख्यान को जनताने मन्त्र मुग्ध होकर सुना। उपस्थिति इतनी अधिक थी कि सभा स्थल में श्रोताओं को स्थान न मिलने पर सडक पर खड़े होकर ही अनेक जनों को उपदेश श्रवण करना पड़ा। अनेक जनों के अलावा माननीय श्रीबारिस्टर बाभणी जी मेम्बर लेजिस्लेटिव कौन्सिल, श्रीबारिस्टर गोबरधन जी श्रीयुत गौतम तिलक जी, सरदार श्रीयुत रामप्रसाद जी, सरदार श्रीयुत महेश जी आदि भी उपस्थित थे।

• स्वागत समिति का कार्य प्रबन्ध सराहनीय था जिसके प्रधान श्रीयुत रामचरित्र जी भोगन थे।

रामलगन
प्रधान उपदेशक मंडल
आर्य सभा—मोरिशस

पंजाब क्षेत्रीय योजना को लोक सभा की स्वीकृति प्राप्त नहीं है

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के प्रधान श्री घनश्यामसिंह जी का प्रेस वक्तव्य

केन्द्रीय गृह मन्त्री श्रीयुत पं० गोविन्द वल्लभ पन्त ने लोक सभा के उपाध्यक्ष श्रीयुत सरदार हुकमसिंह को जो पत्र लिखा बताते हैं उसका कुछ अंश "हिन्दुस्तान टाइम्स" के ३ अप्रैल के अंक में प्रकाशित हुआ है। इस पत्र में एक बात बड़े मार्के की कही गई है और वह इस प्रकार है —

"मुझे यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि समस्त क्षेत्रीय योजना जिसमें ९ वीं और १० वीं कंडिकाएं सम्मिलित हैं जो लोक सभा के सामने रखी गई थी और **जिसे लोक सभा की स्वीकृति प्राप्त है**, वैध और बन्धन कारिणी है।"

जिन शब्दों के नीचे रेखा खिंची हुई हैं उन्हें रेखांकित मैंने ही किया है। यदि क्षेत्रीय योजना जो दि० ३-४-५६ को लोक सभा की मेज पर रखी गई थी लोक सभा द्वारा स्वीकृत होती तो निश्चय ही वह वैध और बन्धन कारिणी होती भले ही राष्ट्रपति के क्षेत्रीय योजना विषयक आदेश में उसको स्थान प्राप्त न होता। परन्तु यदि इसके विपरीत लोक सभा की स्वीकृति न हो तो तमाम युक्ति व्यर्थ और निस्सार हो जाती है, और यह योजना उस समय तक वैध और बन्धन कारिणी नहीं हो सकती जब तक कि वह राष्ट्रपति के आदेश में सम्मिलित नहीं होती या संविधान की धारा ३४५ के अनुसार पंजाब की विधान सभा द्वारा पारित कानून का रूप नहीं ले लेती। लोक सभा की स्वीकृति हवाई बात या मौखिक मामला नहीं है। नियमित रूप से प्रस्तावित होने पर ही यह पारित हो सकती थी और यही एक उचित और मान्य ढंग है। यदि यह योजना लोक सभा से पास हो गई है तो लोक सभा की प्रकाशित कार्यवाही में अवश्य मिलनी चाहिए। निस्सन्देह भारत सरकार के गृह मन्त्री और उपाध्यक्ष से यह आशा की जाती है कि उन्हें मेरी अपेक्षा इस विषय का अधिक ज्ञान होना चाहिए। यदि मुझे लोक सभा की तत्सम्बन्धी कार्यवाही में उपर्युक्त बात बतादी जाय तो मैं अपनी बात को ठीक कर दूंगा। जहां तक मैंने लोक सभा की कार्यवाही की जाच पड़ताल की है मुझे ऐसी कोई वस्तु नहीं मिली। इसके विपरीत श्री सरदार बहादुर सिंह और प० ठाकुर दास भार्गव ने ९ वें अमेन्ड मेन्ट बिल में परिशिष्ट के रूप में पंजाब क्षेत्रीय योजना को संयोजित करने का प्रस्ताव किया था परन्तु लोक सभा ने उसे रद्द कर दिया था।

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति

Shri Ghanshyam Singh Gupta, President Sarvadeshik Bhasha Swatantrya Samiti says in a press statement that the Punjab Regional Formula has no sanction of the Lok-Sabha The text of his statement is as follows —

The letter alleged to have been addressed by Pt G B Pant, the Union Home Minister to Sardar Hukum Singh, (Deputy Speaker, Lok-Sabha) the extract of which has appeared in Hindusthan Times of the 3rd inst contains one crucial statement which is as follows —

" I need hardly add that the whole of the Regional Scheme, including para 9 & 10, which was laid before and *ca ries the appro val of Parliament*, is valid and binding '

The underlining is mine If the statement that the outline of the Regional Scheme

which was laid on the table of the Lok Sabha on 3 4 56 was approved by Parlia ment then it is certainly valid and binding even though it has no place in the Regional order of the President But if on the other hand there is no such approval of Parliament the whole argument falls to the ground and it could not be valid or binding unless it were incorporated in the order of the President or an Act of the Punjab Legislature under Act 345 of the Constitution The approval of Parliament is not an airy affair or a verbal matter It has to be passed in one of the recognised method on a motion duly made As such it must be found in the published proceedings of the Parliament The Union Home Minister and the Deputy Speaker of the Lok Sabha are no doubt expected to know more about the matter than my self and I shall stand corrected if I am pointed out the relevent proceedings of the Lok Sabha So far as I then searched the proceedings of the Lok Sabha in that connection I found no such thing On the contrary the motion of Sardar Bahadur Singh as also that of Pt Thakur Das Bhargava to incorporate the Regional Scheme as a Schedule to the Constitution (9th Amendment) Bill were actually rejected by the Lok Sabha

रीजनल फार्मूला में भाषा सम्बन्धी ९ और १० धारायें नही हैं.

गृहमन्त्री पर कोई नया फार्मूला हो तो पता नहीं।

लोक सभा के उपाध्यक्ष सरदार हुक्मसिंह जी को लिखे गये एक पत्रोत्तर में गृहमन्त्री श्री गोविंद वल्लभ पन्त ने लिखा है पंजाब के रीजनल फार्मूले से भाषा सम्बन्धी ९ और १० धाराओं को हटाने का समाचार निराधार है। सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के प्रचार मन्त्री श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने आश्चर्य प्रगट करते हुए कहा है मै नहीं समझता यह समाचार कहा तक सत्य है ? पन्त जी का पत्र तो हमारे सामने है नहीं, हमारे सामने तो माननीय राष्ट्रपतिमहोदय द्वारा स्वीकृत और ४ नवम्बर को भारत सरकार के असाधारण गजट द्वारा प्रकाशित रीजनल फार्मूला है जिसमे उक्त दोनों धारायें नहीं है। गृह मन्त्री की जेब मे यदि और कोई फार्मूला हो तो उसका हमे पता नहीं। अकालियों के किसी अनुचित दबाव या राजनैतिक साठ-गाठ मे आकर अब यदि गृहमन्त्री महोदय ने राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृत फार्मूले से बाहर जाने अथवा उसमें परिवर्तन का प्रयास किया तो कल को पंजाब में होने वाली किसी भी विस्फोटक स्थिति का दायित्व स्वय उन पर ही होगा। श्री पन्त को भारतीय राजनीति का एक कुशल खिलाडी गिना जाता है। पर कुशलता का यह अभिप्राय नहीं हैं कि आर्यसमाज से कुछ और बातें हों और अकालियों से कुछ और। आर्य समाज राजनैतिक स्वार्थों से ऊपर उठकर जिस विशाल हिन्दू समाज का नेतृत्व करता है अभी शायद वह भूले न हों। अच्छा है राष्ट्रहित मे उन बातो को फिर न दोहराना पडे और यदि फिर से हमारा गौरव कसौटी पर कसने की इच्छा हो तो हम उसके लिए भी उद्यत हैं। एक आर्य समाजी अन्याय के आगे मस्तक झुकाने से मरना कहीं ज्यादा पसन्द करेगा।

प्रकाशवीर शास्त्री
सार्वदेशिक भाषा स्वातंत्र्य समिति

मनुष्य का बुढ़ापा और उसका कर्तव्य

(लेखक—श्री देवराज सहगल)

आजकल विवाहित सन्तान के बहुधा माता-पिता अपनी सन्तान के प्रति उलाहने की भावना रखते हैं। उनकी यह शिकायत होती है कि जिन बच्चों के पालन पोषण में उन्होंने इतने दु ख झेले, जिनसे उन्हें इतनी आशायें थीं, और जिन आशाओं पर वे इतने महल बनाते थे, सब रेत के ढेर की तरह बिखर गए। उनकी सन्तान पत्नी की दास है। वह इनकी इज्जत नहीं करती, सेवा नहीं करती, आज्ञा का पालन नहीं करती। केवल इतना ही नहीं, कई अवस्थाओं में तो उनकी उपेक्षा से इन्हें अपने शरीर और आत्मा के सम्बन्ध को बनाए रखने के आवश्यक साधनों से भी वचित रहना पडता है हालाकि अपने ऐश्वर्य तथा अपने बच्चों के पालन पोषण एव दूसरे अनावश्यक खर्चों के लिए उन्हें कोई कमी नहीं, कमी है तो केवल इनके लिए।

निस्सन्देह ऐसी अवस्था किसी भी मनुष्य के लिए दु ख, कष्ट तथा मन की अशान्ति का कारण होती है। किन्तु तनिक सोचिये तो! ऐसी अवस्था पैदा किस ने की? इसका उत्तरदायित्व किस पर है? नि सन्देह उनपर और केवल उन पर, जिन्होंने समय पर अपने कर्तव्य को न निभाया, जिन्होंने अपनी सन्तान को अच्छा न बनाया और या फिर जिन्होंने अपने भावी जीवन के लिए कुछ न बचाया और यदि बचाया भी, तो अपनी कुपात्र सन्तान को सब कुछ सौंपकर अपने पाव पर आप कुल्हाडा चलाया। मेरे भाई! अब तो गुजरी को, भूलकर भविष्य को सुधारना होगा, अब तो अपनी बिगडी को आपको अपने आप बनाना होगा। इस सम्बन्ध में कुछ आवश्यक बातें मैं बताना चाहता हू, जिन पर आचरण करने से बहुत से होने वाले कष्टों से बच जायेंगे तथा सतान भी आपकी आज्ञाकारी होगी अन्यथा याद रखें, पद पद पर कष्टों का सामना होगा।

यदि आप दुकानदार हैं, व्योपारी हैं, बड कारखानादार हैं, अथवा छोटे-मोटे कारखाना के मालिक हैं, तो आपको दो बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। पहली बात बच्चा के युवा होने पर उसे स्कूल या कालेज से उठाकर सीधा अपनी गद्दी पर ला बिठाना सौ भूल की एक भूल है। उसे किसी बडे कारखाना, दुकान या व्योपार में शागिर्द रूप (Apprentice) में वर्ष दोवर्ष केलिए लगवा दें। वहा वह मजदूरों की तरह काम करना सीखे। इस प्रकार वह कुए का मेंढक न रहकर, अधिक परिश्रमी, हुनरमन्द तथा दक्ष होकर अपने व्योपार को चारचाद लगाने वाला होगा। दूसरी बात जो मैं बताना आवश्यक समझता हू, वह आपके अपने लिए है। अपने बच्चों को कारोबार सौंपने के बाद उनकी देख रेख बिलकुल ही छोड़ देना भी दुखदायक होता है। बच्चों को पूरा मालिक बनाकर, हर प्रकार की आजादी देकर भी अपने कारोबार पर आपका हाथ रहना आवश्यक है। अन्यथा कहीं 'मक्खन के बाल' वाली बात न हो। मैं कब कहता हू कि ऐसा होना आवश्यक है, मैं तो कहता हू ऐसा काम हो क्यों किया जाये, जिसमें लाभ के स्थान पर हानि की सम्भावना अधिक हो और बाद में पछताना पड़े। हा, यदि गृहस्थाश्रम को त्यागकर वानप्रस्थी बनने की इच्छा है, तो दूसरी बात है, वरन् ससार के झमटों में रहते हुए, ससार के कष्टों से बचने के लिए आपको ऐसा करना ही होगा।

इसके विपरीत यदि आप नौकरी पेशा हैं।

यानी सरकारी अथवा असरकारी नौकर हैं, तो नौकरी छोड़ने अथवा पैंशन होने पर बिना किसी कार्य अथवा व्यवसाय के घर में बेकार बेठ रहना भी अपनी आयु को घटाना है। ऐसा मनुष्य हर प्रकार स्वस्थ होता हुआ भी बड़ी तीव्र गति से अकाल मृत्यु की ओर भागने लगता है, जबकि वही मनुष्य पैंशन से पहले अपनी निश्चित मृत्यु की ओर केवल चलता ही था। दूसरे शब्दों मे ऐसा समझो कि पैशन के बाद भी अपने कार्य करने की आदत को न छोड़ने वाला मनुष्य यदि बीम वर्ष और जीवित रहता, तो वह अपने कार्य करने की आदत को छोड़ देने से शीघ्र ही ससार से चलता बनता है। इसके अतिरिक्त जितना समय वह जीवित रहता है, उसका कार्य पोतों को खिलाना, उनका नाक साफ करना तथा ड्योढी में बैठकर कुत्तों को दुतकारना रहता है। इस पर भी वह कुल पर बोझ समझा जाता है। इसके विपरीत अपने कार्य करने की आदत को बनाये रखने वाला मनुष्य सम्मान, स्वस्थता तथा आसूदगी से अपनी शेष आयु पूरी गुजारता है तथा सम्पन्न होने की अवस्था में परोपकार भावना से अपने जीवन को कल्याण मार्ग पर लगाते हुए, कार्य करने वाला मनुष्य भी अपनी शेष आयु इज्जत, सम्मान और सुखपूर्वक बिताने का कारण बनता है। अब अन्त में एक मोटा नियम बताता हूँ, जिस पर आचरण करने से आपका बुढ़ापा आराम से कट जावेगा और पछताने की नौबत न आवेगी।

"ससार के झगटों में रहते हुए, आपका यत्न यह होना चाहिये, अन्त समय तक आप अपने हाथों से कमायें, बच्चों के आगे आपको हाथ पसारना न पड़। जायदाद और धन बाटते समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि अपने निर्वाहार्थ भी आपने पर्याप्त धन रख लिया है, अथवा उचित प्रबन्ध कर लिया है। कहीं अपने हाथ कटवा बैठें, फिर बुढ़ापे में पाई पाई के लिए आपको दूसरों का मुहताज होना पड़े।

याद रखें!

ऐसे लोगों की दाढ़ी प्राय नोच ली जाती है, जो लाड़ में आकर अपनी दाढ़ी बच्चों के हाथों में देने की गलती कर बैठते हैं।

स्वाध्याय योग्य साहित्य

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा २)
(२) वेद की इयत्ता(श्री स्वा०स्वतन्त्रानन्दजी) १॥)
(३) दयानन्द दिग्दर्शन(श्री स्वा० ब्रह्ममुनिजी) ॥
(४) ईंजील के परस्पर विरोधी वचन ।=) (पं० रामचन्द्र जी देहलवी)
(५) भक्ति कुसुमांजलि (पं० धर्मदेव वि० वा० ॥)
(६) धर्म का आदि स्रोत (पं० गंगाप्रसाद जी एम ए) २)
(७ भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक (श्री राजेन्द्र जी) ॥)
(८) वेदान्त दर्शनम् स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ३)
(९) संस्कार महत्व (पं० मदनमोहन विद्यासागर जी) ।॥)
(१०) जनकल्याण का मूल मन्त्र „ ।॥)
(११) वेदों की अन्त साक्षी का महत्त्व ॥=)
(१२) आर्य घोष ॥)
(१३) आर्य स्तोत्र „ ॥)
(१४) स्वाध्याय सन्दोह „ ४)
(१५) सत्यार्थ प्रकाश १।=)
(१६ महर्षि दयानन्द ।।=)
(१७) सनातनधर्म और आर्य समाज ।=)
(१८) सन्ध्यापद्धति =)
(१९) पंजाब का हिंदी आंदोलन ।=) (माननीय श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त)
(२०) भोज प्रबन्ध २।)
(२१) डाक्टर वर्नियर की भारत यात्रा ४॥)
(२२) सनातन शुद्धि शास्त्र और आर्यों का चक्रवर्ती राज्य २)

English Publications of Sarvadeshik Sabha

1 Agnihotra (Bound) (Dr Satya Prakash D Sc) 2/8/
2 Kenopanishat (Translationby Pt Ganga Prasad ji, M A /4/
3 Kathopanishat (Pt Ganga Prasad M A Rtd Chief Judge) 1/4/
4 Aryasamaj & International Aryan League Pt Ganga Prasad ji Upadhyaya M A /1/
5 Voice of Arya Varta (T L Vasvani) /2/
6 Truth & Veds (Rai Sahib) (Thakur Datt Dhawan) -/6/
7 Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) /8/
8 Vedic Culture (Pt Ganga Prasad Upadhyaya M A) 3/8/
9 Aryasamaj & Theosophical Society (Shiam Sunber Lal) /3/-
10 Wisdom of the Rishis 4/ / (Gurudatta M A.)
11 The Life of the Spirit (Gurudatta M A) 2/ /
12 A Case of Satyarth Prakash in Sind (S Chandra) 1/8/
13 In Defence of Satyarth Prakash (Prof Sudhakar M A) /2/-
14 Universality of Satyarth Prakash /1/
15 Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt Dharma Deva ji Vidyavachaspati) /8/
16 Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati) /8/-
17 Elementary Teachings of Hinduism /8/- (Ganga Prasad Upadhyaya M A)
18 Life after Death „ 1/4/-
19 Philosophy fo Dayanand 10-0-0

Can be had from —SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI 6

नोट--(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत चौथाई धन आगाऊ अवश्य भेजें। (२) थोक ग्राहकों को नियमित

आवश्यक सूचना

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम आने वाले समस्त मनीआर्डरों की कूपनों पर भेजने वाले का नाम, पूरा पता तथा राशि स्पष्ट और सुपाठ्य शब्दों में लिखी होनी चाहिए। ठीक विवरण न होने से मनीआर्डरों के सम्बन्ध में कार्यवाही करने में कठिनाई होती है। और किसी २ पर कार्यवाही हो नहीं पाती।

—रामगोपाल
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली।

प्रचारार्थ सस्ते ट्रैक्ट

१. आर्य समाज के मन्तव्य
लेखक—श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी शास्त्रार्थ महारथी — मूल्य -) प्रति ५) सैकड़ा

२. शंका समाधान ,, ,, — मूल्य)॥ प्रति ३) ,,

३. आर्य समाज लेखक—श्री ला० रामगोपाल जी — ,,)॥ ,, २॥) ,,

४. पूजा किस की ? ,, ,, — ,,)॥ ,, २॥) ,,

५. भारत का एक ऋषि लेखक—रोमा रोल्या — ,, -) ,, ५) ,,

६. गोरक्षा गान — ,,)॥ ,, २॥) ,,

७. स्वतन्त्रता खतरे में लेखक—श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी — ,,)॥ ,, २॥) ,,

८. दश नियम व्याख्या -)॥ ७॥) सै०

९. आर्य शब्द का महत्व -)॥ ,, ,,

१०. तीर्थ और मोक्ष -)। ,, ,,

११. मांसाहार घोर पाप -) ५) सै०

१२. स्वर्ग में हड़ताल =)

१३. भारत में जाति भेद ।=)

हजारों की संख्या में मंगाकर साधारण जनता में वितरित कर प्रचार में योग दें।

प्राप्ति स्थान **सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली ६**

सार्वदेशिक में विज्ञापन देकर लाभ उठावें

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
१ पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा ,,	८ १०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

२ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

Regd No D 51

आर्य समाज का इतिहास

सचित्र प्रथम और द्वितीय भाग

इस सभा द्वारा श्रीयुत पण्डित इन्द्र विद्यावाचस्पति कृत आर्य समाज के इतिहास का प्रथम और द्वितीय भाग छप कर बिकने लगा है। इतिहास की भूमिका आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान तथा पंजाब सरकार के भूतपूर्व शिक्षामन्त्री श्रीयुत डा० गोकुलचन्द जी नारंग, एम ए पी एच डी ने लिखी है। ग्रन्थ सजिल्द है जिसमें $\frac{18 \times 22}{8}$ के आकार पर है। कागज व छपाई उत्कृष्ट है। स्थान २ पर २ लाइन ब्लाक दिये गये हैं।

महर्षि की जन्म तिथि, आर्य समाज स्थापना तिथि, महर्षि की मृत्यु कैसे हुई इत्यादि विवादास्पद विषयों पर परिशिष्ट रूप में मूल्यवान सामग्री दी गई है।

प्रारम्भ से सन १९०० ई० तक के इतिहास में आर्य समाज की स्थापना से पहले की धार्मिक तथा सामाजिक स्थिति, महर्षि दयानन्द का आगमन, आर्य समाज की स्थापना, प्रचार युग, अन्य मतों से संघर्ष, संगठन का विस्तार, संस्था युग का आरम्भ आदि विषयों का समावेश है। शैली बड़ी रोचक और चित्ताकर्षक है।

दो भाग छप चुके हैं और तीसरा भाग तैयार किया जा रहा है।

इस ग्रन्थ की सामग्री के एकत्र करने, बढ़िया से बढ़िया रूप में इसकी ५० प्रतियां छपाने में तथा चित्रादि के देने में सभा का बहुत व्यय हुआ है। इस राशि की शीघ्र से शीघ्र प्राप्ति आवश्यक है जिससे कि वह तीसरे भाग की छपाई में काम आ सके।

सभा ने यह विशाल आयोजन प्रदेशीय सभाओं, आर्य समाजों, आर्य नर नारियों के सहयोग के भरोसे बहुत खटकने वाले अभाव की पूर्त्यर्थ किया है। अतः प्रत्येक आर्य समाज और आर्य नर नारी को इस ग्रन्थ को शीघ्र से शीघ्र अपना कर अपने सहयोग का क्रियात्मक परिचय देना चाहिये।

प्रत्येक आर्य प्रतिनिधि सभा, आर्य समाज तथा आर्य संस्था के पुस्तकालय में अनिवार्य रूप से यह ग्रन्थ रहना चाहिये। यह विषय इच्छा या पसन्द का नहीं है अपितु एक स्थायी रूप से रहने वाले ग्रन्थ के संग्रह करने का है जिससे वर्तमान ही नहीं आने वाली सन्तति को भी लाभ उठाने का अवसर मिल सके।

प्रथम भाग का मूल्य ४) और द्वितीय भाग का ५ रु० कर दिया गया है। कम से कम ५ प्रतियां एक साथ मंगाने पर २० प्रतिशत कमीशन दिया जायगा। पुस्तकों का आर्डर भेजते समय डाकखाने और निकटतम रेलवे स्टेशन का नाम स्पष्ट शब्दों में लिखा होना चाहिये।

कृपया आर्डर भेजने में शीघ्रता करें। प्राप्ति स्थान —

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,

श्रद्धानन्द बलिदान भवन, दिल्ली-६

... में छपकर

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री स्वामी अभेदानन्द जी महाराज का

आर्य-जगत् को सन्देश

[गतांक से आगे]

समाज और सभा में उपस्थित विवादों, आरोपों और अभियोगों के सुलझाने का ढंग देना चाहिये । किसी भी अवस्था में पार्टी या दल बनाने का प्रोत्साहन न देना चाहिये ।

यदि अपनी कुछ भी महानता और विशेषता हो, तो उसका उपयोग समाज और सभा के भीतर किसी प्रकार के दुराव वराव की गन्दगी और कोढ़ को सर्वदा के लिये निकाल देने का यत्न आरम्भ करना चाहिये ।

काट-छाट, दुराव-वराव की अशुभनीति वर्तने की अपेक्षा, समाधान और सम्मान को महत्त्व दिया जाना चाहिये। यदि प्रतीकार ही उपयोगी हो, तो प्रह्लाद की भांति सादर ही किया जाना चाहिये ।

वेद और वेदार्थ, धर्म और धर्मार्थ, समझने और समझाने के लिये महर्षि दयानन्द जी महाराज के दिव्य-दृष्टि बिन्दु के प्रकाश में सर्वतोभावेन चलने का व्रत लेना चाहिए।

सम्पादक—सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक | मूल्य स्वदेश ५) विदेश १० शिलिङ्ग | जून १९५८

विषय सूची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

का

वार्षिक अधिवेशन

८ जून १९५८ को होगा और ९ जून को

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति

की आवश्यक बैठक होगी।

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३३ | जून १९५८ ज्येष्ठ २०१५ वि०, दयानन्दाब्द १३४ | अङ्क ४

वैदिक प्रार्थना

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥८॥ य० ३१ । १८ ॥

व्याख्यान—सहस्रशीर्षादि विशेषणोक्त पुरुष सर्वत्र परिपूर्ण (पूर्णत्वात्पुरि शयनाद्वा पुरुष इति निरुक्तोक्तेः) है। उस पुरुष को मैं जानता हूं अर्थात् सब मनुष्यों को उचित है कि उस परमात्मा को अवश्य जानें। उसको कभी न भूलें अन्य किसी को ईश्वर न जानें वह कैसा है कि "महान्तम्" बड़ों से भी बड़ा, उससे बड़ा वा तुल्य कोई नहीं है "आदित्यवर्णम्" आदित्यादि का रचक और प्रकाशक वही एक परमात्मा है तथा वह सदा स्वप्रकाशस्वरूप ही है। किंच "तमस परस्तात्" तम जो अन्धकार अविद्यादि दोष उससे रहित ही है तथा स्वभक्त, धर्मात्मा सत्यप्रेमी जनो को भी अविद्यादिदोषरहित सद्य करने वाला वही परमात्मा है। विद्वानों का ऐसा निश्चय है कि परब्रह्म के ज्ञान और उसकी कृपा के बिना कोई जीव कभी सुखी नहीं होता। 'तमेव विदित्वेत्यादि०" उस परमात्मा को जान के जीव मृत्यु को उल्लंघन कर सकता है अन्यथा नहीं। क्योंकि "नाऽन्य, पन्था, विद्यतेऽयनाय" बिना परमेश्वर की भक्ति और उसके ज्ञान के मुक्ति का मार्ग कोई नहीं है, ऐसी परमात्मा की दृढ़ आज्ञा है, सब मनुष्यों को इसमें वर्त्तना चाहिये और सब पाखण्ड और जंजाल अवश्य छोड़ देना चाहिये ॥ ८ ॥

प्राणदण्ड उठाया जाय या नहीं ?

समाज सुधारकों तथा अपराधों का विश्लेषण करने वालों का यह मत है कि प्राण-दण्ड की प्रथा को बिल्कुल उड़ा देने से मनुष्य समाज मानव-जीवन का अधिक सम्मान करने लगेगा। उनकी मान्यता और युक्ति है कि बहुत से युरोपियन और अमेरिकन राष्ट्रों में प्राण दण्ड की प्रथा कई बार उड़ा दी गई परन्तु इससे मनुष्य हत्या में कुछ भी वृद्धि नहीं हुई। वे ऐसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि जहा इस प्रथा को पुन प्रचलित करने पर भी मनुष्य हत्याओं की सख्या में किसी प्रकार की कमी नहीं हुई।

रूमानिया को इस बात का गर्व है कि प्राण दण्ड की प्रथा को उड़ाने वाला वह सर्व प्रथम देश है। १५० वर्ष के लगभग समय हो गया तब से फिनलैण्ड में किसी को मृत्यु दण्ड नहीं दिया गया। डेनमार्क ने १९३० मे मृत्यु दण्ड की प्रथा को उड़ाया परन्तु वहा १८९२ ई० से ही किसी को फासी पर नहीं लटकाया गया। डेन्मार्क की सरकार का दावा है कि जब से प्राण दण्ड की प्रथा बन्द हुई है तब से हत्याओं मे कमी हो गई है। हालैंड में सन् १८६० ई० से मृत्यु दण्ड बन्द कर दिया गया है। इटली में १८९० में मृत्यु दण्ड की प्रथा उड़ा दी गई थी परन्तु पुन जारी कर दी गई परन्तु इसका कारण हत्याओं में वृद्धि नहीं वरन् राजनैतिक है। नार्वे, स्वीडन, लेटविया, लिथ्वेनिया तथा जैकोस्लोवेकिया ने भी मृत्यु दण्ड को उड़ा दिया है। स्विटजरलैण्ड के भी बहुत से प्रान्तों में यह प्रथा बन्द कर दी गई है। आस्ट्रेलिया के क्वीन्सलैण्ड नामक प्रान्त में किसी को फांसी पर नहीं लटकाया जाता। फ्रास में भी फांसी की सजा पाये हुए व्यक्तियों में से बहुत कम को फांसी दी जाती है। १९२८ में मृत्यु दण्ड प्राप्त ४० कैदियों में से एक को भी फांसी के तख्ते पर नहीं लटकाया गया। संयुक्त राज्य अमेरिका के ४८ राज्यों में से १२ राज्यों ने प्राण दण्ड देना बन्द कर दिया है। मध्य तथा दक्षिण अमेरिका के केवल ६ राज्यों में फासी देना प्रचलित है। इग्लैण्ड में भी कुछ प्रतिबन्धों के अधीन प्राण दण्ड वर्जित हो गया रूस में साधारण कानून से सुधर जाने योग्य अपराधियों को फासी का दिया जाना बन्द कर दिया गया है। हत्यारे कुछ वर्ष तक के लिए सख्त मेहनत की सजा काटते हैं। इसके बाद वे साइबेरिया में बसा दिये जाते हैं। पूर्वी साइबेरिया स्वतन्त्र खूनियों से भरी रह चुकी है। कहा जाता है वहा कोई भी मनुष्य निश्चिन्तता पूर्वक नहीं घूम सकता था।

प्राणदण्ड को उठा देनेके पक्षमे कई बड़ी प्रबल युक्तिया दी जाती हैं। एक तो यह कि अपराधियों के बच जाने और निरपराधियों के फंस जाने की बड़ी आशंका रहती है। इसके प्रमाण में अनेक उदाहरण भी प्रस्तुत किये जाते हैं। दूसरी यह कि हम अपराध के साथियों, सहायकों और उन बुरी सामयिक परिस्थितियों एव त्रुटि पूर्ण विधानों को नहीं मारते जिनसे भयानक अपराधों की सृष्टि होती है। इनके अतिरिक्त प्राण दण्ड के घिनौने उपायों और इसे मखौल बना देने से भी इसके विरुद्ध घोर प्रतिक्रिया हुई है। यह भावना भी काम करती रही है कि प्राण दण्ड दे दिये जाने पर अपराधी को सुधार का अवसर नहीं दिया जाता।

पृथ्वी भर मे फासिया यदि कहीं फली फूली हैं तो इग्लैण्ड में। एलीजाबेथ के जमाने का एक लेखक लिखता है कि ७२ हजार चोर और अवारा व्यक्ति आठवें हेनरी के राज्य काल में फांसी पर लटकाये गए थे। अब से कोई डेढ सौ

वर्ष पहले इङ्गलैण्ड में इतने कैदी मारे गये थे जितने युरोप के किसी भी भाग मे नहीं मारे गए। अब तक इङ्गलैंड में कुछ लोग जीवित थे जिन्होंने अन्धाधुन्ध कतार की कतार फासियां अपनी आखों से देखी थीं यहां तक कि उत्पात मचाने के अपराध में एक १८ वर्ष के बालक को भी फासी पर लटका दिया गया था। केवल ८० ९० वष पूर्व एक ९ वर्ष का बालक ढाई आने का रंग चुराने के अपराध मे फांसी पर चढाया गया था। भेडें और पोस्ट आफिस की चिठियां चुराने के अपराध में तो कुछ काल पहले तक इङ्गलैंड मे मनुष्य फासी पर लटकाये जाते थे।

यद्यपि आज प्राण दण्ड की सजा मरती जाती है तथापि प्रामाणिक पुरुषों का इस सम्बन्ध में मतभेद है। कुछ व्यक्ति स्वाभाविक अपराधियों को मार डालने के पक्ष मे हैं। बदले के विचार से नहीं वल्कि इस विचार से कि वह समाज का एक गला सड़ा अंग है और उसे नष्ट ही कर देना चाहिये। गेरो फेनो प्रसिद्ध नैपोलिटिन वक्ता और कानूनी व्यक्ति जो प्राण दंड का शायद सब से बडा पक्षपाती था कहता है कि प्राण दंड ही एक ऐसा दंड है जिससे अपराधी भय खाता है। उसने ऐसे अपराधियों का उदाहरण दिया है कि जिन्होंने अपराध इस विचार से किया कि प्राण दंड नष्ट हो चुका है और उन्हें अब जीवन भर जेल में खाना और आश्रय मिल सकता है। सर राबर्ट ने कहा था "खूनी को आजीवन जेलखाने मे रखना तुरन्त मार डालने की अपेक्षा कहीं सख्त सजा है लेकिन इतनी घबरा देने वाली नहीं।"

एक बार ड्यूक मोन्डोशियर ने एक अपराधी के बारे में जो अन्त में २० हत्याओं के बाद फासी पर लटका था, १४वें लुई के समक्ष कहा था "इसने केवल एक खून किया है—पहली बार—उसी की जिम्मेवारी इस पर है, बाकी खून के जिम्मेवार आप हैं जिन्होंने उसे रहने देकर १९ हत्याएं कराई हैं।

प्राण दंड के पक्ष विपक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। कानून के पंडितों के मतानुसार अपराधियों को ५ श्रेणियों में बांटा गया है —

(१) ऐसे मनुष्य जिनमें किसी प्रकृति दोष के कारण उनकी युवावस्था मे भी सुधार नहीं किया जा सकता और अन्य निकृष्ट स्वभावों की भांति जिनमें यह भी एक असाध्य रोग है।

(२) ऐसे मनुष्य जो बुद्धि मे विकार हो जाने के कारण अपने कार्य की महत्ता को न जान कर अपराध कर बैठते हैं। ये भी चार प्रकार के होते हैं —

[क] पागल, चाहे वह केवल अपराध करते समय हों या जन्म से।

[ख] ना समझ बालक तथा निर्बोध मनुष्य जो अपराध की महत्ता समझने में असमर्थ हों।

[ग] ऐसे मनुष्य जो किसी आकस्मिक वेदना उत्तेजना अथवा घटना हो जाने के कारण क्षणिक मतिहीन होकर अपराध कर बैठते हैं।

[घ] ऐसे मनुष्य जो किसी नशीली वस्तु के सेवन करने से बुद्धि विहीन होकर विना किसी उद्देश्य के अपराध कर बैठते हैं।

(३) ऐसे मनुष्य जो जान बूझ कर साधारण सी बात पर अपराध कर बैठते हैं।

(४) ऐसे मनुष्य जिनसे देश तथा जाति के हित के लिए कोई अपराध हो जाय।

(५) ऐसे अपराधी जो अपनी जान माल तथा सम्पत्ति की रक्षा के लिए अधिक तंग किये जाने पर उन पर आक्रमण करने वाले की हत्या कर दें।

प्रथम श्रेणी के अपराधी यदि मनुष्य हत्या जैसा निकृष्ट पाप कर तो उनका प्राण हरण कर लेना ही अच्छा है। उनके सुधार का उद्योग करना निरर्थक है।

द्वितीय श्रेणी के अपराधी वस्तुत अपराधी नहीं है क्योंकि कोई कर्म तब तक अपराध नहीं हो सकता जब तक वह किसी बुरे इरादे से न किया जाय। ऐसे मनुष्य यदि नर हत्या भी कर बैठें तो वे प्राण दण्ड के योग्य नहीं है। उनके लिए शास्त्रोक्त प्रायश्चित्त दण्ड उपयुक्त है।

तृतीय श्रेणी के मनुष्य यद्यपि कानून की दृष्टि में अपराधी हैं परन्तु यत सुधर जाने की सम्भावना है अत उनको हत्या के अपराध में भी फासी की सजा न देनी चाहिये। वरन् अन्य प्रकार के कठोर दण्ड देकर उनकी बुद्धि के विकार को दूर करने की चेष्टा करनी चाहिए।

चौथे प्रकार के अपराधी प्राण दण्ड पाने के सर्वथा अयोग्य हैं। न्यायाधीश का प्रधान कर्तव्य है कि वह ऐसे अपराधियों को केवल ऐसा दण्ड दे जिससे वे सन्मार्ग पर आ जाय।

पाचवें प्रकार के अपराधी सर्वथा क्षमा के पात्र हैं। प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि वह अपनी जान माल तथा सम्मान की रक्षा करे। यदि ऐसा करने में कोई बाधक हो तो वह स्वय उसे दड दे सकता है और यदि ऐसा भी कोई अवसर आ जाय जब कि बिना हत्या के अपनी जान, सम्पत्ति तथा इज्जत की रक्षा होनी असम्भव प्रतीत हो तो उसको अधिकार है कि वह अपराधी को जान से भी मार दे। परन्तु भारतीय वर्तमान कानून के अनुसार वह ऐसा नहीं कर सकता, यदि करता है तो दड का भागी बनता है और जज चाहे अभियुक्त को सर्वथा निर्दोष समझे परन्तु यदि यह सिद्ध हो जाय कि उसने जान बूझ कर (चाहे कैसी ही दशा क्यों न हो) हत्या की है तो वह उसको मुक्त नहीं कर सकता।

एक विचार यह भी है कि क्षमा प्रदान का अधिकार राष्ट्रपति के समान अत्यन्त विशेष अवस्थाओं में न्यायाधीशों को भी प्रदान कर देना चाहिये।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

"पुनर्जन्म"

वैदिक धर्मावलम्बियों का पूर्व जन्म और पुनर्जन्म में विश्वास है जिससे सुख दुःख की असमानता का सन्तोष जनक समाधान होने के साथ २ आस्तिकता का पूर्ण समर्थन होता है। इस धार्मिक विश्वास की व्यापकता सार्वभौम है। परन्तु कुछ देशों और वर्गों मे पुनर्जन्म मे विश्वास नहीं किया जाता। इस विषय पर अन्तर्राष्ट्रीय गैलप सस्था ने मत सग्रह किया है, जिसके विवरण से विदित हुआ है कि ससार के आधे से अधिक व्यक्ति पुनर्जन्म के सिद्धान्त में विश्वास रखते हैं। इटली जैसे रोमन कैथोलिक देशों में ५ मे से ४ व्यक्ति पुनर्जन्म मे आस्था रखते हैं। उधर जापान में ३० प्रतिशत व्यक्तियो का पुनर्जन्म मे विश्वास नहीं रहा है यद्यपि बौद्ध और शिन्टो दोनों ही मतो मे आत्मा का अमरत्व स्वीकार किया गया है। मैक्सिको और आस्ट्रिया मे पुनर्जन्म मे विश्वास रखने और न रखने वालों की सख्या समान पाई गई है। इटली नारवे और रोम की महिलाओं का पुरुषो की अपेक्षा पुनर्जन्म मे अधिक विश्वास है। ज्यों २ लोग बूढे होते रहते हैं त्यों २ उनका यह विश्वास दृढ होता रहता है कि मृत्यु से जीवन का अन्त नहीं होता अपितु मृत्यु के पश्चात् भी जन्म होता है।

राष्ट्रसघ द्वारा वैवाहिक कानूनों का विश्लेषण

एशिया और अफ्रीका के बहुत से भागों में रिवाज, धर्म और परम्परा के कारण बच्चों की किसी भी आयु में शादी हो सकती है। उन पर कोई कानूनी अकुश नहीं है। कई देशों में जो आर्थिक और समाजिक दृष्टि से उन्नत हैं लड़कियों का १२ वर्ष की और लड़कों का १४ वर्ष की आयु में विवाह कानून सम्मत है जबकि अन्य देशों में विवाह योग्य कम से कम आयु का विधान नहीं है।

आयरलैंड स्विटजरलैंड वा बोलीविया में १२

वर्ष की आयु की लड़की की शादी वैध मानी गई है परन्तु जकोस्लोवाकि डेन मार्क और अबीसीनिया में यह आयु १८ वर्ष की है। अन्य देश मे १४, स्पेन, जर्मनी, पेरू और स्वीडन मे २ वर्ष से पूर्व कोई पुरुष कानूनन शादी नहीं कर सकता ग्राम्ट्रेलिया के तीन राज्यों म उध विवाह के लिए लड़की की आयु . वर्ष से अधिक होनी चाहिए। वहा के अन्य राज्यों मे यह आयु १२ वष को नियत है। कनाडा और अमेरिका के बड़े राज्या मे भी यही नियम प्रचलित है।

कुछ क्षेत्रों मे बाल विवाह तथा उसमे सहायता करने वालो के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जाती है। अन्यत्र जुर्माने और कैद की सजा दी जाती है परन्तु विवाह अवैध उद्घोषित नहीं किए जाते।

कुछ देश ऐसे भी हैं जहा विवाह की आयु पर कोई कानूनी प्रतिबंध नहीं है परन्तु व्यवहार मे युवकों की ही शादिया की जाती हैं।

कहीं पर वर और वधू की स्वीकृति ही विवाह की मुख्य शर्त मानी जाती है। रूस और युगोस्लाविया मे ऐसा ही होता है।

ब्रिटिश कामनवैल्थ अमेरिका और लेटिन अमेरिका मे विवाह करने वाले लडके और लड़की की स्वतन्त्र सहमति आवश्यक होती है परन्तु एक नियत आयु से नीचे माता पिता वा सरक्षक की सहमति भी अनिवार्य होती है। यहा लडके और लड़की दोनो के लिए एक जैसे नियम बने हुए हैं।

एक प्रथा यह है कि एक नियत आयु पर पहुच जाने पर वर की सहमति पर्याप्त मानी जाती है परन्तु कन्या के लिए माता पिता वा सरक्षक की स्वीकृति का प्राप्त करना अनिवार्य होता है। अल्प वयस्कों की स्वतन्त्र सहमति का कोई अर्थ नहीं होता।

रिवाज, प्रथा और परम्परा पर आश्रित विवाहों में माता पिता वा सरक्षकों की स्वीकृति प्राप्त होने पर ही विवाह वैध स्वीकार किए जाते हैं।

भारत मे विवाहार्थ लड़की की १४ वर्ष की और लड़के की १८ वर्ष की आयु वैध स्वीकार की गई है।

बाल दीक्षा निरोधक विधेयक

श्रीयुत टी० सी० शर्मा ने ससद् के समक्ष 'बालदीक्षा प्रतिबन्ध बिल प्रस्तुत किया है जिसके पारित हो जाने पर छोटे २ अबोध बच्चों और बच्चियों को जैन साधु और साधुनिया बनाए जाने पर प्रतिबन्ध लग जायगा। दीक्षा के मर्म और महत्व को न समझने वाले बच्चों के बलात बाल मूडने तथा उन्हें प्रव्रज्या के अन्य चिह्न धारण कराने से दीक्षा का उद्देश्य पूर्ण नहीं हो सकता अत उस प्रथा को बनाए रखने से क्या लाभ जो अत्याचार पूर्ण देख पड़ती हो और जिससे बालक बालिकाओं के जीवन के बिगड़ने की आशंका हो? सती प्रणाली को भी धार्मिक स्वीकृति प्राप्त थी परन्तु वह प्रणाली प्रथा बनकर जघन्य और अत्याचार पूर्ण बन गई थी जिसमे सती होने वाली विधवा की इच्छा वा अनिच्छा के लिए कोई स्थान न रह गया था और मृत्यु की वीभत्सता से भयभीत चिता पर से भागती दौड़ती और करुण क्रन्दन करती हुई देवी को बलात् जीवित जला दिया जाता था। देवदासी प्रथा भी धार्मिकता मे अकुरित और पालित पोषित हुई थी। इस पर भी प्रशासन ने कड़े हाथों से वैध प्रतिबन्ध लगाया। स्वस्थ प्रथाओं की रक्षा और अस्वस्थ प्रथाओं का उन्मूलन राज्य का एक कर्त्तव्य है। इस प्रकार की प्रथाओं का शिकार होने वाले नागरिकों का सरक्षण धर्म मे वा नागरिक अधिकारों मे हस्तक्षेप स्वीकार नहा किया जा सकता। इस प्रकार के सदुपायों का विरोध करने वालों को समय की गति को पहचानना चाहिए। जो प्रथा शिष्टता, नैतिकता और उन्नति विरोधिनी होगी वह देर तक न रह सकेगी चाहे उसे धार्मिक स्वीकृति ही प्राप्त क्यों न हो।

भारत सेवक समाज सावधान

देश और विदेश के अनेक विचार शील और दूरदर्शी लोग भारत में कृत्रिम उपायों के द्वारा संतान नियमन की योजना को बड़े विस्मय और भय की दृष्टि से देख रहे हैं। उन्हीं में से आचार्य विनोवा भी एक हैं। उन्होंने अनेक बार इन उपायों के अवलम्बन और प्रसार का विरोध किया है। यहां ही तक नहीं उन्होंने इस अनैतिक कार्य को अपने हाथमें लेने केलिए सरकार की भत्सना भी की है। उनकी मान्यता है और सही मान्यता है कि इनके प्रचार से लोगों का रहासहा नैतिक स्तर भी बहुत गिर जायगा। सरकार बढ़ती हुई आबादी और खाद्य समस्या के हल के लिए इस कार्य को अपने हाथ में लेने के लिए बाध्य हुई है परन्तु उसका यह कार्य उस व्यक्ति के कार्य के समान गर्हित है जो चोरी का आश्रय लेकर अपना और अपने परिवार का पेट भरने का यत्न करता है। एक ओर सरकार देश के बढते हुए नैतिक ह्रास से दुख और चिन्तित है और दूसरी ओर ऐसे उपायों को काम में ला रही है जिनसे इस ह्रास की प्रक्रिया को प्रेरणा मिलती है। इस असगति का सरकार के पास कोई समाधान नहीं है। स्वय भारत सेवक समाज के पास भी नहीं है जो राजनीति से पृथक रह कर जनता की सामाजिक सेवा का दम भरता हुआ इस अनैतिक योजना को क्रियान्वित करने में लगा है। पिछले दिनों भारत सेवक समाज के एक शिष्ट मण्डल को जो विनोवा जी से मिला था उन्होंने यह बात स्पष्ट रूप से कह दी थी। विनोवा जी ने कहा कि भारत सेवक समाज के लिए यही काफी नहीं है कि वह राजनीति से पृथक् रहे। उसे 'सन्तान निग्रह' जैसे विवादास्पद विषय से भी पृथक् रहना चाहिए। जो समाज एक हाथ में दूध की और दूसरे में शराब की बोतल लेकर जनता के स्वास्थ्य को सुधारने का यत्न करना चाहता है वह अपने को और दूसरों को धोखे में रखने का पाप करता है। भारत सेवक समाज स्थान २ पर सन्तों और महात्माओं के द्वारा आध्यात्मिक सत्संगों के आयोजन में जितना उत्साह दिखाता है उतना ही परिवार नियोजन की योजना की सफलता के लिए दिखा रहा है। विनोवा जी ने चेतावनी दी है कि इस प्रकार की दुरंगी नीति से समाज का मूल भूत उद्देश्य समाप्त हो जायगा। उसे अपनी शक्ति और ध्यान तपेदिक आदि महामारियों के निवारण में लगाना चाहिए इसी प्रकार के कार्यों से उसकी उपयोगिता प्रमाणित होगी और वह यशस्वी बनेगा अन्यथा इस प्रकार के अनैतिक कार्यों में हाथ डालने और आंखें बन्द करके सरकार का पिठ लग्गु बने रहने से वह लोगों की निन्दा का पात्र बन जायगा।

राजा जी का हिन्दी प्रेम

बम्बई के हिन्दी स्कूलों के प्रमुख सचालक श्री चन्द्रभान अवस्थी को भेजे हुए एक सन्देश में राजा जी ने १९४२ में अपने हिन्दी प्रेम को इस प्रकार व्यक्त किया था —

"हिन्दी हमारी राष्ट्र भाषा है और अन्य कोई भाषा इसका स्थान ग्रहण नहीं कर सकती। महात्मा गांधी के नेतृत्व मे समस्त भारत मे हिन्दी का प्रचार करते हुए इण्डियन नेशनल कांग्रेस कहती है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हम हिन्दी को भारत की सरकारी भाषा सुगमता से बना सकते हैं। हम अंग्रेजी द्वारा अपने देश का शासन नहीं कर सकते जो हमारे लिए विदेशी है। अंग्रेजी का भारत में ससार की एक भाषा के रूप मे स्थान रहेगा और कोई भी भारतीय अपनी इच्छानुसार उसको पढ़ सकेगा।

बम्बई में हिन्दी के स्कूलों के खोले जाने का मै स्वागत करता हू और जिन हाथों में हमारी नई पीढी की शिक्षा का दायित्व है उन्हें प्रेरणा करूं गा कि वे शक्तिभर देश की अपनी इस भाषा का प्रचार करें। मैं बम्बई के उदार दानियों से भी अपील करूं गा कि वे इन स्कूलों के सचालन के लिए दिल खोल कर दान दें। वह दिन आएगा जबकि प्रत्येक भारतीय को हिन्दी पढ़नी होगी।

घटना चक्र कितना दु खद और आश्चर्यजनक है कि स्वतन्त्रता से पूर्व हिन्दी का यह प्रबल प्रेमी आज दक्षिण के कतिपय प्रतिगामियों द्वारा छेड़े

वेदों मे भक्ति का स्वरूप

[लेखक—श्री दीनानाथ जी सिद्धान्तालङ्कार]

भक्ति का स्वरूप

वेद वस्तुत भक्ति के आदि स्रोत है। यदि हम भक्ति का स्वरूप समझ ले तो वेदो मे वर्णित भक्ति तत्त्व को समझने मे सुगमता होगी। भक्ति का लक्षण शास्त्रों मे इस प्रकार किया गया है—'सा परानुरक्तिरीश्वरे' अर्थात् परमेश्वर मे अ चचल और ऐकान्तिक भावना और आ म समर्पण की उत्कट आकाक्षा को 'भक्ति' कहा गया है। हमे यह भी न भूलना चाहिए कि भक्ति शब्द 'भज सेवायाम्' धातु से 'क्तिन' प्रत्यय लगकर सिद्ध होता है अर्थात् भक्ति हृदय की उस भावना का नाम है जिसमे साधक जहा एक ओर पूर्ण भाव से ब्रह्म मे अनुरक्त हो और सर्वतोभावेन अपने को ब्रह्मार्पण करने वाला हो वहा साथ ही ब्रह्म द्वारा रचित इस सारी सृष्टि के प्रति सेवा की भावना रखने वाला भी हो। ऋग्वेद के शब्दों मे—

मित्रस्याह चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्॥

वेद का भक्त कहता है—मै सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूँ और सब प्राणी मुझे मित्र की दृष्टि से देखने वाले हों।'

भक्ति और शक्ति का अटूट सम्बन्ध

वैदिक भक्ति की एक और विशेषता है आगे चलकर जिसका मध्यकाल मे लोप हो गया। वह यह कि वेद मे आपको ऐसा कोई मन्त्र नही मिलेगा जिसमे उपासक, साधक अथवा भक्त अपने को अधम, नीच, पापी, खल, दुष्ट पतित इत्यादि कहे अथवा प्रभु को किसी प्रकार का उपालम्भ दे। इसका कारण यह है कि वेद मे 'भक्ति' के साथ शक्ति' का सतत और अविच्छिन्न सम्बन्ध माना गया है। वेद के द्वारा प्रभु यह आदेश देते है कि निर्बल और अशक्त आत्मा सच्चा भक्त नहीं बन सकता। इसलिए वेद मे भक्त—

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि, वीर्य मसि वीर्यं मयि धेहि बल मसि बल मयि धेहि। ओजोऽस्योजो मयि धेहि सहोऽसि सहो मयि धेहि॥ (यजुर्वेद)

प्रभु को तेज, वीर्य (शक्ति) बल, ओज और सहन शक्ति का अजस्र भडार मानता हुआ उससे तेज, शक्ति, बल ओज और सहन शक्ति की कामना करता है। वेद का भक्त कितना सशक्त और कितना आत्म विश्वासी है—यह इस मन्त्र के एक अश मे देखिए—

कृत मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः॥
(अथर्व ७, ४०, ८)

'मेरे दाये हाथ मे कार्य शक्ति है और बाये हाथ मे विजय है।'

प्रभु के प्रति प्रणयन की भावना

पर इसका यह अभिप्राय नही है कि वेद मे ब्रह्म के प्रति साधक की प्रणयन विनम्रता और आत्म लघुता की भावना का निराकरण है। निम्न लिखित उदाहरण स्वरूप मन्त्रो मे भक्त कितनी तन्मयता के साथ विशाल प्रभु के चरणो मे अपने को नतमस्तक हो उपस्थित करता है।

(१) यो भूत च भ य च सर्व यश्चाधितिष्ठति।
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः॥
(अथर्व १०, ८, १)

भूत भविष्यत वर्तमान का जो प्रभु है अन्तर्यामी।
विश्व व्योम में व्याप्त होरहा जो त्रिकाल का है स्वामी॥
निर्विकार आनन्द कन्द है जो कैवल्य रूप सुखधाम।
उस महान् जगदीश्वर को है अर्पित मेरा नम्र प्रणाम॥

(२) यस्य भूमिः प्रमा अन्तरिक्ष मुतोदरम्।
दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय नमः॥
(अथर्व० १०, ७, ३२)

सत्य ज्ञान की परिचायक यह,
पृथ्वी जिसके चरण महान्।
जो इस विस्तृत अन्तरिक्ष को,
रखता है निज उदर समान॥
शीष तुल्य है जिसके शोभित,
यह नक्षत्र लोक द्युतिमान्।
उस महान् जगदीश्वर को है,
अर्पित मेरा नम्र प्रणाम॥

प्रभु से हम क्या मांगें ?

यह निम्न मन्त्र में देखिए—

गूहता गुह्य तमो वि यात विश्वमत्रिणम्।
ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि॥ (ऋ० १, ८६, १०)

'हे प्रियतम्! हृदय गुहा के अंधकार को विलीन करदो, नाशक पाप को भगादो और हे ज्योतिमय! हम जिस ज्योति को चाहते हैं यह हमें दो।'

शरणागत की भावना

त्वमग्ने व्रतपा असि देव आ मर्त्येष्वा।
त्वं यज्ञेषु ईड्यः॥
(ऋ० ८, ११, १० यजु० ४। १६
अथर्व १६, ५६, १)

चतुर्दिक तुम्हीं नाथ छाए हुए हो,
मधुर रूप अपना बिछाए हुए हो।
तुम्हीं व्रत विधाता, नियन्ता जगत के,
स्वयं भी नियम सब निभाए हुए हो।
प्रभो! शक्तियां दिव्य अनुपम तुम्हारी,
तुम्हीं दूर, तुम पास आए हुए हो।
करें हम यजन, पुण्य शुभ कर्म जितने,
सभी मे प्रथम स्थान पाए हुए हो।
तुम्हारी करें वन्दना देव! निशिदिन,
तुम्हीं, इस हृदय में समाए हुए हो॥

निराश मत हो मानव !

जिस समय मानव की जीवन नैया भवसागर में डावाडोल होती है और वह निराश हो जाता है उस समय करुणागार भगवान् आशा की प्रेरणा देते हैं—

उद्यानं ते पुरुष नावयानं जीवातुं
ते दक्षतातिं कृणोमि।
आहि रोहे मम मृत सुखं रथम्
अथ जिर्विर्विदथ मा वदासि
(अथर्व० ८, १, ६)

किस लिए नैराश्य छाया!
किस लिए कुम्हला रहा, यह फूल सा चेहरा तुम्हारा।
तुम स्वयं आदित्य! दुर्दिन का न गाओ गान रोकर।
हे सुदिव्य महारथी! संकल्प एक महान् होकर।
फिर बढो, फिर फिर बढो,
चिरतक बढो, अभिमान् खोकर।
फिर तुम्हारी हार भी विख्यात होगी जीत बनकर।
फिर तुम्हारी मृत्यु गूंजेगी अमर संगीत होकर।
काल यह सन्देश लाया, किस लिए नैराश्य छाया॥

प्रभु का यह विश्व रमणीक है

वेद का भक्त इस विश्व को दुःख दायक और भ्रमपूर्ण नहीं समझता। वह इसे 'रमणीय' समझता है और वास्तविक समझता है। वह प्रभु से प्रार्थना करता है—

वसन्त इन्नु रन्त्य ग्रीष्म इन्नु रन्त्यः।
वर्षाण्यनुशरदो हेमन्त शिशिर इन्नु रन्त्यः॥
(सामवेद, ६, ३, १३, २)

वसन्त रमणीय सखे, ग्रीष्म रमणीय है।
वर्षा रमणीय सखे, शरद् रमणीय है।
हिमान्त रमणीय सखे, शिशिर रमणीय है।
मन स्वय भक्त बने, विश्व तो रमणीय है॥

वेदों में भक्ति के उदात्त और पुनीत उद्गार अनेक स्थलों पर अ कित हैं। हमने यहा पर कुछ उदाहरण ही उपस्थित किए हैं इन्हें पढकर यदि हमारी वेदों मे श्रद्धा बढे, उसके स्वाध्याय की ओर प्रवत्ति हो, वेदों की रक्षा और उसके प्रचार की ओर हम लगसक तो निश्चय ही हमारा अपना, देश का और विश्व का कल्याण होगा मङ्गलमय भगवान् ऐसी कृपा करें।

विवाह सस्कार मे वर वधू के आसन तथा परिक्रमा का प्रकार

(लेखक—श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द सरस्वती, आ० स० हापुड़)

मार्च मास के सार्वदेशिक पत्र द्वारा विवाह सस्कार में आसन परिवर्तन तथा लाजा होम की परिक्रमाओं के विषय मे धर्मार्य सभा के मन्त्री जी ने आर्य विद्वानों की सम्मति मागी है। उसी के सम्बन्ध में कुछ पक्तिया श्री मन्त्री जी एव पाठकों के विचारार्थ लिख रहा हू।

जो विद्वान् विवाह सस्कार के आरम्भ से लेकर अन्त तक कहीं पर भी वर वधू का आसन बदलते हैं, वे सस्कार विधि ही नहीं, अपितु पार स्करादि गृह्य सूत्रों के भी विपरीत क्रिया करते हैं। सस्कार विधि और तदाधारभूत गृह्यसूत्रों के विवाह प्रकरणों को ध्यान पूर्वक देखने से मूल ग्रन्थों में कोई ऐसा प्रमाण नहीं मिलता जिसके आधार पर सप्तपदी क्रिया के बाद वर वधू का आसन बदला जा सके। अपितु एक स्मार्त वचन ऐसा तो मिलता है कि —

श्राद्धे यज्ञे विवाहे च पत्नी दक्षिणतः सदा।

अर्थात् श्राद्ध, यज्ञ और विवाह सस्कार में पत्नी सर्वदा सर्वत्र पति के दक्षिण भाग में रहेगी। ऐसा ही वर्णन अग्निष्टोम यज्ञ के निष्केवल्य शास्त्र में भी आता है।

रही बात युक्ति की, सो ऐसी युक्ति वही लोग देते हैं, जो सस्कार विधि के उस स्थल को ठीक प्रकार से समझने नहीं या समझने का यत्न नहीं करते। सप्तपदी के पश्चात् वर वधू अपने २ आसन पर यथापूर्व अर्थात् वधू वर के दक्षिण भाग में और वर वधू के वाम भाग में पूर्वाभिमुख बैठ जाते हैं। यहाँ "आपोहिष्ठा" आदि मन्त्रों से वर वधू के मस्तक पर जल सिंचन के पश्चात् लिखा है कि तत्पश्चात् वधू वर वहा से उठके "ओ३म् तच्चक्षु-र्देवहितम्' इस मन्त्र को पढके सूर्य का अवलोकन करें। त पश्चात् वर वधू के दक्षिण स्कन्ध पर से अपना दक्षिण हाथ लेके उससे वधू का हृदय स्पर्श करके ओ३म् ममव्रते ते हृदय दधामि" इस मन्त्र को बोले और उसी प्रकार वधू भी अपने दक्षिण हाथ से वर के हृदय को स्पर्श करके इसी ऊपर लिखे हुए मन्त्र को बोले। तत्पश्चात् वर वधू के मस्तक पर हाथ धरके "सुमङ्गलीरियम्" इस मन्त्र को बोलके कार्यार्थ आये हुए लोगों की ओर अवलोकन करना और इस समय सब लोग "ओ३म् सौभाग्यमस्तु। ओ३म् शुभ भवतु।" इस वाक्य से आशीर्वाद देवें। तत्पश्चात् वधू वर यज्ञ कुण्ड के समीप पूर्ववत् बैठ के । यह इतना भाग है। जिसे लोग नहीं समझ पाते। वास्तव में सूर्यावलोकन, हृदय स्पर्शन, सुमगलीकरण और

आशीर्वाद प्राप्त करना इतनी क्रिया वर वधू खड रहकर ही सम्पन्न करते है। वर का हृदय स्पर्श के लिए वधू खडी २ केवल उतने समय केलिए वर के वाम भाग मे आ जाती है। उसके आधार पर वर वधू का आसन परिवर्तन करना सर्वथा विधि विरुद्ध है। क्योंकि जहा वर वधू को आसन पर बैठने के लिए लिखा वहा स्पष्ट रूपेण 'पूर्ववत्' श द आया है। जिसका अर्थ है वधू वर के दक्षिण भाग मे और वर वधू के वाम भाग मे बठ इसलिए सप्त पदी के बाद वर वधू का आसन नही बदलना चाहिए।

अब रही लाजा होम वाली परिक्रमाओं की बात। सो केवल लाजा होम की परिक्रमाओ मे ही क्या अपितु जब भी वर वधू परिक्रमा करेंगे सर्वत्र वर आगे और वधू पीछे होगी।

पाणिग्रहण विधि का आरम्भ मधुपर्क के पश्चात् अग्न्याधान से आरम्भ होकर सप्तपदी के पश्चात् सार्वजनिक आशीर्वाद के साथ समाप्त होता है। सप्तपदी पहली सारी क्रिया का उपसहार है। वहा प्रत्येक पद के साथ अनुव्रता शब्द आता है। जो स्पष्ट रूप से वधू को वर के पीछे चलने का आदेश देता है। वर वधू के कन्धे पर हाथ रख कर प्रत्येक पद के साथ यही कहता है कि जैसे यहा विवाह सस्कार मे तुमने मेरा अनुवर्तन किया है उसी प्रकार भविष्य मे भी अनुवर्तिनी रहना।

हो सकता है कुछ सज्जन उपरोक्त युक्ति से सन्तुष्ट न हो। उनकी सेवा मे निवेदन है कि वर वधू की लाजा होम कालीन स्थिति और उसके पश्चात् परिक्रमा का आदेश इन पर ध्यान दीजिये। लाजा होम के समय वधू वर के दक्षिण भाग पूर्वाभिमुख और वर वधू के वाम भाग मे पूर्वाभिमुख खडा रहता है। अब लाजा होम के पश्चात् दोनो प्रदक्षिणा करगे। यहा केवल ऋषि वचन इतना ही है कि इन मन्त्रो को पढ यज्ञ कुण्ड की प्रदक्षिणा करके । परिक्रमा के लिए अपने स्थान पर ही दोनो को पहले उत्तरा भिमुख होना पडगा। और फिर परिक्रमा के लिए दोना एक साथ चलेगे ऐसी दशा मे वर अपने आप ही आगे रहेगा और वधू पाछे। यदि वधू को आगे रखना होता तो इसका भी उल्लेख होता पर नही है। अत स्पष्ट है कि परिक्रमा करते समय सर्वत्र वर आगे और वधू पीछे रहेगी। रही बात प्रमाण की सो गोभिल गृह्यसूत्र २।२।२। विवाह प्रकरण मे प्रदक्षिणा के विषय मे लिखते हुए स्पष्ट उल्लेख है कि 'पत्नी पीछे और पति आगे रह कर ही प्रदक्षिणा कर।' प्रवास मे होने के कारण ग्रन्थों के मूल प्रमाण नहीं दिये जा सके इसके लिए श्री म त्री जी और पाठक क्षमा करें।

देवों की शरण मे

(लेखक—श्री डा० मुन्शीराम शर्मा, एम० ए० पी० एच० डी० लिट)

जीवन मे कभी २ ऐसे भी क्षण आ उपस्थित होते है जब हम अन्तर्मुख होकर आत्म परीक्षण मे सलग्न हो जाते हैं। ये क्षण वस्तुत अमूल्य होते हैं। इन्हीं क्षणों मे मानव अपने सब मे लीन होकर दैवी जगत् का दर्शन करता है। क्षणिक ही सही, पर यह देवत्व की झाकी एक बार सत्य की अनुभूति का विषय बनती अवश्य है। इसी अनुभूति मे मग्न होकर एक ऋषि ने कहा है —

'त्रातारो देवा अधिवोचता नो मा नो निद्रा ईशत मोह जल्पिः।

'हे दिव्य देवो ! तुम्हीं हमारे रक्षक हो, अब ऐसी कृपा करो, ऐसा उपदेश दो, जिससे निद्रा और जल्पि (निरर्थक बकवास) हम पर शासन न कर सकें। निद्रा और प्रमाद तमो गुण के तथा जल्पि रजो गुण का परिणाम है। इन दोनो से ही हम दूर रहे । तम और रज के साम्राज्य से निकल कर हम सत्व मे प्रविष्ट हो, सत्व गुण के शीतल, स्निग्ध एव आल्हादकारी वातावरण मे विराजमान हों। सत्व मे समाविष्ट होना ही मानो देवत्व मे प्रवेश करना है। देवत्व मे यह प्रवेश दिव्यता का यह वरण पतन और पाप से प्रथक रहने के लिए अमोघ ओषधि है। पतन और पाप मरण के द्योतक है पर दिव्यता जीवन की जननी है। यहा जीवन ही जीवन है। वह जीवन उत्थान उन्नति एव अभ्युदय से लेकर परम श्रेय तक पहुचाता है। दिव्यता अथवा सत्व मे प्रवेश पाने के लिए यज्ञ, तप और दान करने पडते है।

यो अस्मै घ्रंस उत वा य ऊधनि सोम सुनीति भवति द्युमा ऊह ॥

सत्व का तेज सोम सवन से ही उत्पन्न होता है। दिन हो या रात्रि हमे यज्ञ की ही ओर अपना ध्यान ले जाना चाहिये। देव यज्ञकर्ता की कामना करते है। देवों को तप भी परमप्रिय है। तप से देव प्रसन्न होते है और तपस्वी के घट (हृदय) को अपनी अमृत वर्षा से भर देते है। 'अतप्त तनूर्न तदामो अश्नुते' जैसे कच्चे घडे में जल नहीं भरा जा सकता, भरा भी जायगा तो उससे घडा गल कर नष्ट हो जायगा और उससे जल निकल कर फैल जायगा। इसी प्रकार जिसने तप की भट्टी मे अपने को डालकर पका नहीं लिया वह अमृत रस को धारण न कर सकेगा। मिट्टी का घडा कुम्हार के आवे मे आच पाकर जब पक जाता है तब उसे पानी से चाहे ऊपर तक भर दो वह फूटेगा नहीं और पानी भी उसमे भरा रहेगा। इसी प्रकार तपश्चर्या ने जिस मानव के व्यक्तित्व को तपा दिया है, जो सुख दुख, निन्दा स्तुति, लाभ हानि आदि द्वन्द्वों को सहन कर चुका है वही सत्व के रस का स्वाद ले सकता है और वही उसे सुरक्षित भी रख सकता है। दान भी एक उपयोगी साधन है। इससे हृदय की सकीर्णता दूर होती है वह विशाल बनता है और पवित्रता से सयुक्त होता है।

यज्ञ, तप और दान के लिए हृदय मे दृढ सकल्प जाग्रत होना चाहिये। मे व्रत ले लूँ पक्का निश्चय कर लूँ कि मुझे इस पथ पर चलना ही है। जब तक सकल्प मे दृढता न होगी मै सत्पथ पर चलता हुआ भी बार २ फिसलूगा। दृढ सकल्प उत्पन्न करने के लिए प्रभुभक्ति भी अनुपम सहायता पहुचाती है। 'मा प्रगाम पथो वयम्' प्रभो ! हम सन्मार्ग से कभी विचलित न हों।

क्रत्व समह दीनता प्रतीय जगमा शुचे। मृला सु क्षत्र मृलय ॥

पूज्य महनीय भगवन् ! मेरी दीनता ही मुझे कर्तव्य पथ से पराङमुख कर रही है। तुम दया करो, इस दीनता से मेरा त्राण करो और मुझे कर्तव्य मार्ग पर लगा दो।

इस प्रकार की प्रार्थनाए भक्त के व्रत तथा सकल्प को दृढ कर देती है। भद्र सकल्प यदि दृढ हो जाए, अदम्य और विघ्नों को छिन्न-भिन्न करने वाले बन जाए तो वे समस्त दुराग्रहोंको दूरकर देते हैं और मानव दिव्यता के सरक्षण मे पहुच जाता है। उसे एक अमोघ कवच की उपलब्धि हो जाती है।

♣

श्री विद्यानन्द विदेह और उनके व्याख्या ग्रन्थ

[आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री]

(३)

वेदार्थ करने वालों की योग्यता का भी हमारे शास्त्रों में वर्णन मिलता है। अत यहा पर उस कसौटी पर भी इस व्याख्या ग्रन्थ के कर्ता को रखकर देखा जाता है कि वे इस योग्यता वाले हैं या नहीं। ऋग्वेद के १० वे मण्डल के ७१ वें सूक्त को ज्ञान सूक्त कहा जाता है। उसमें वेदवाणी की महत्वपूर्ण गुत्थियों पर प्रकाश डाला गया है। कौन उसका ज्ञाता हो सकता है ? और कौन उसके रहस्य को खोल सकता है ? इत्यादि प्रश्नों का इस सूक्त मे ही समाधान हो जाता है। इसमे वेदवाणी के वास्त विक स्वरूप पर भी प्रकाश डाला गया है। इस सूक्त को दृष्टिकोण मे रखते हुए यह कहना पड़ेगा कि निम्न योग्यताए वेदभाष्यकार में होनी चाहिए—

(१) आर्ष दृष्टि—यज्ञेन वाच पदवीयमापन्ता मन्वाविन्दन ऋषिषु प्रविष्टाम्।

(२) तप, योग की दृष्टि " " ,

(३) तर्क तथा अहदृष्टि वाला भूयो विद्य होना—ओह ब्राह्मणा विचरन्ति।

इसके अतिरिक्त ऋग्वेद ६। १७। ३४ में निम्न वर्णन वेदवाणी के स्वरूप और उसके ज्ञाता के विषय में मिलते हैं।

तिस्रो वाच ईरयति प्रवह्नि ऋतस्य धीतिं ब्रह्मणो मनीषाम्। गावो यन्ति गोपति पृच्छमाना सोम यन्ति मतयो वावशाना ॥

अर्थात्—प्रत्येक कल्प के आदि मे प्रेरक परमे श्वर वेदवाणियों का उपदेश करता है। ये वाणिया ऋत अर्थात सृष्टि नियम के अध्ययन हैं, और ब्रह्माण्ड के ज्ञान हैं। वाणी के पालक के पल्ले केवल शब्दार्थ ज्ञान पड़ता है और योगी एव ऋषि को इसका रहस्य खुलता है। इन योग्यताओं में से श्री विदेह जी में कौन सी योग्यता है इसका पता नहीं चलता है। जब श्रीमती सार्वदेशिक सभा की धर्मार्य सभा में उनका विषय विचाराधीन था तब उन्होंने स्वय स्वीकार किया था कि उन्हें सस्कृत नहीं आती। उनके लेखों से भी यह प्रकट होता है कि उन्हें सस्कृत का परिज्ञान नहीं है। निरुक्त आदि शास्त्रों को वे अपने वेदार्थ में उपयोगी नहीं मानते। साथ ही उन्हें इनका परिज्ञान भी नहीं है। उनके ग्रन्थ ही इस विषय मे भी पर्याप्त प्रमाण हैं। अत वे भूयोविद्य और ऊहदृष्टि तो हो नहीं सकते। यास्क ने ऋग्वेद २। ३। २१ मन्त्र की व्याख्या के प्रसग में लिखा है—नह्येषु प्रत्यक्षमस्त्यनृषेरतपसो वा पारोवर्यवित्सु खलु वेदितृषु भूयोविद्य प्रशस्यो भवति अर्थात्—अनृषि, अतपस्वी को इस वेदार्थ का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं हो सकता। विद्याओं के रहस्य को जानने वालों में भूयोविद्य ही इस दिशा में प्रशस्त होता है। ऐसे ही प्रसगों पर यास्क पुन लिखते हैं—मनुष्या वा ऋषिषू क्रामत्सु देवानब्रुवन् को न ऋषिर्भविष्यति—इति। तेभ्य एत तकमृषिं प्रायच्छन् मन्त्रार्थ चिन्ताभ्यूहमभ्यूदम। तस्माद्यदेव किञ्चानूचानोऽभ्यूहति आर्ष तद्भवति।

अर्थात्—साक्षात्कृतधर्मा ऋषियों के उठ जाने पर मनुष्यों ने देवों से पूछा कि हमारा अब कौन ऋषि होगा। दोनों ने उन्हें तर्क ऋषि दिया। मन्त्रार्थ की चिन्ता में उस ऊह का प्रयोग होता है। इसलिए ऊह के आधार पर जो भूयोविद्य वेदज्ञ वेदमन्त्रों के अर्थ की ऊहा करता है वह ऋषि पद्धति प्रतिपादित होता है। यह क्या है। यास्क

के अनुसार श्रुति, मति बुद्धि—अर्थात् निरुक्त विद्या ही ऊह है। सक्षेप में तर्क और निरुक्तविज्ञान ही ऊह हैं। वेदमन्त्र में ऊपर दिये गये ऊह का यही अर्थ है। श्री विदेह जी में यह ऊह शक्ति उनके ग्रन्थों के आधार पर देखी नहीं जाती। फिर भी वे भाष्य करने को उद्यत हैं।

अपने को भाष्यकार की योग्यता वाला सिद्ध करने के लिए वे कुछ बनावटी बाते अपने लिए अपने ग्रन्थ में लिखते हैं वे निम्न हैं—१-२८ वर्ष का होते होते मैंने सस्कृत, अग्रेजी तथा हिन्दी मे उपलब्ध वेदों के समस्त भाष्यों का अनुशीलन समाप्त किया।

२—इसी अवधि मे साथ साथ मेने निरुक्त, निघण्टु, ब्राह्मण ग्रन्थों, स्मृतियों तथा दर्शनशास्त्र का भी पारायण किया।

३—आबू पर्वत के प्रसिद्ध नक्की ताल में स्नान करने के उपरान्त मैं सिद्धशिला पर ध्याना वस्थित हो गया। ध्यान से निवृत्त होकर मैं वेद विषयक चिन्तन में निमग्न हुआ। आत्मनिवेदन पृ० १८।

४—मध्याह्नोत्तर सिद्धशिला से नीचे उतर कर गृह को जाते हुए मार्ग में मुझे एक चट्टान पर अप रिचित नवागन्तुक सन्यासी दिखायी पड़ा मेरे आश्चर्य की सीमा न रही, जब उसने मुझे मेरे नाम से सम्बोधन करके कहा "वेदों का सही और सच्चा अर्थ करना है तो योगाभ्यास कीजिए, सयमपूर्वक समाधि में उतरिये। इत्यादि।

५—एक अन्य अपरिचित नवागन्तुक सन्यासी के दर्शन हुए। मुझे सम्बोधन करके सन्यासी बोले, "आप पिछले जन्म के वेद और योग के अभ्यासी है"।

६—अगले दिन से ही नये सिरे से, मेरी वेद और योग सम्बन्धी साधना प्रारम्भ हो गयी। योग की भित्ति पर स्थित होकर मैंने स्वय वेदों मे बैठकर वेद के मन्त्रों पर मनन करना प्रारम्भ किया। दोनों ही साधनायें पूर्ण निष्ठा के साथ वर्षानुवर्ष चलती रहीं और अपने प्रत्येक जन्म दिवस पर मैं अपनी प्रगति को मापता रहा। पृष्ठ २१

इन ऊपर की बातों को लिख कर श्री विदेह जी अपने को वेदार्थ करने की योग्यता वाला सिद्ध करना चाहते हैं। वे अपने को वेदज्ञ, शास्त्रज्ञ, तपस्वी और योगी सिद्ध करना चाहते हैं। परन्तु ये बातें आडम्बर मात्र हैं यह उनके भाष्य की अन्त परीक्षाओं से ही मै दिखलाने का प्रय न करूगा। वे अपने वेद व्याख्या ग्रन्थ प्रथम पुष्प ऋग्वेद व्याख्यान प्रसग मे पृ० ७ पर लिखते हैं "भूमि ऋषियों से रिक्त कभी नही रहती। यह दूसरी बात है कि जन और जनता उन्हें जानें या न जानें, मनुष्यों की आखें उन्हें पहचानें या न पहचानें, ससारी लोग उन्हें ऋषि मानें या न माने" यहा भी अपने को ऋषि सिद्ध करने का प्रयास ध्वनित होता है। लोगों की आखों में धूल डालने का यह कैसा तरीका है। उनके ही वेद भाष्य ग्रन्थ से कुछ ऐसी बातें आगे दी जावेंगी जो यह सिद्ध करेंगी ये उपर्युक्त सभी चीजें गलत हैं और वे वेद के नाम पर लोगों मे भ्रम फैला रहे हैं।

भ्रम और असत्य से भरी बातें

उनके ग्रन्थों के देखने से पता चलता है कि उन्होंने बहुत सी बातें ऐसी लिखी हैं जो असत्य हैं भ्रमपूर्ण है। इन बातों का यहा पर दिग्दर्शन कराया जाता है।

१—पुराण, कुरान, बाइबिल सब पढ़िये और सब की वैदिक व्याख्या कीजिये प्रथम पुष्प आत्म-निवेदन पृ० २०। "सभी धार्मिक ग्रन्थों की वैदिक व्याख्या बहुत सीमा तक सफलतापूर्वक की जा सकती है"।

यहा पर पूछना चाहिये कि वैदिक व्याख्या का क्या तात्पर्य है? क्या यह भी योग का ही फल है।

२—फोटो अपना दिया और नीचे लिखा—"मै कहता हू, दयानन्द से मैने जीवन ज्योति पाई। और उसी से वेदव्यारया की अन्त अनुभूति पाई। कृतज्ञ विदेह। पुष्प २ फोटो।

यहाँ पर स्वामी जी महाराज के नाम का केवल लाभ उठाने और आर्यों के मुँह बन्द करने के लिए ऐसा किया गया मालूम पडता है। क्योंकि व्यवहार तो उसके विपरीत है।

३—स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज के तीसरे नियम मे वेद के लिये एक वचन का प्रयोग इसी अभिप्राय [वेद एक है और उसके चार काड है] से किया है। प्रथम पुष्प ऋग्वेद व्याख्यान पृ० २।

श्री विदेह जी का यह कथन ठीक नहीं क्योंकि ऋषि दयानन्द का यही अभिप्राय है जो वे मान रहे है—ऐसा कोई मानता नहीं और ऐसा है भी नहीं।

४-"अनन्ता वै वेदा" से तात्पर्य उन असख्य वेदो [उपवेदों] से था, जो अब लुप्त हो चुके है। वेद सस्थान की योजना मे उन उपवेदों की पुन र्रचना भी सम्मिलित है। ऋग्वेद व्यारया प्रथम पुष्प पृ० ३॥

क्या यह जनता को भ्रम मे डालने की वात नहीं है। ये उपवेद भी क्या आपके द्वारा ही रचे जावेगे।

५—पूर्व मन्त्र मे स्तोता ऋषि ने कहा है, "मै, पुरोहित, यज्ञ के देव, ऋत्विज, होता रत्नधारकतम अग्नि की स्तुति करता हू। इत्यादि-पृ० ७॥

क्या आप यहा पर वेद मे इतिहास नहीं मान रहे हैं। यदि नहीं तो क्या कहना चाहते है ?

६—वेद एक है और उसके चार काण्ड हैं। उसके प्रथम ज्ञानकाण्ड का नाम ऋग्वेद है, दूसरे कर्मकाण्ड का नाम यजुर्वेद है, तीसरे उपासनाकाण्ड का नाम सामवेद है और चौथे विज्ञानकाण्ड का नाम अथर्ववेद है। यजुर्वेद व्याख्या प्रथम पुष्प पृ० १॥

यहा पर भी विदेह जी उल्टा ही दरिया बहाना चाहते है। ऋग्वेद ज्ञानकाण्ड नहीं विज्ञानकाण्ड है। अथर्ववेद ज्ञानकाण्ड है। आपने यह उल्टा सिद्धान्त कहा से निकाला ?

७—प्रत्येक कर्म, प्रत्येक क्रिया, प्रत्येक चेष्टा कर्मकाण्ड का एक काण्ड [अ श, भाग] है पृ० १ (यजुर्वेद व्याख्या)

यह भी दर्शन की अनभिज्ञता का सूचक है। प्रत्येक चेष्टा क्रिया, कर्म आदि नहीं बल्कि प्रत्येक इच्छापूर्वक की गई चेष्टा क्रिया, कर्म आदि कहना चाहिए। अन्यथा छींकना, सास लेना आदि भी इस कोटि मे आ जावेगे।

८—वैदिक वाड्मय मे केवल अनृत, ऋत और सत्य इन तीन शब्दो का ही प्रयोग हुआ है, असत्य शब्द का कही नाम भी नही है। वैदिक शब्द कोष मे असत्य शब्द है ही नही। साथ यह भी प्रष्टव्य है कि वैदिक वाड्-मय मे सर्वत्र अनृत से पृथक् होकर सत्य की प्राप्ति का ही उल्लेख है अनृत से पृथक होकर ऋत की प्राप्ति का कही भी उल्लेख नही है।

प्रथम पुष्प यजुर्वेद व्याख्या पृ० १५ १६।

मै यहा पर श्री विदेह जी की इस प्रतिज्ञा पर विचार करना चाहता हू। इससे ही पता चल जावेगा कि वे कितने पानी मे है। वे कहते हैं कि वैदिक वाडमय मे कहीं पर भी असत्य" का न प्रयोग हुआ है और न वैदिक शब्द कोष मे इसका कही नाम ही है। यह तो बहुत स्पष्ट है कि सत्य और असत्य के अर्थ मे सत् तथा असत् का प्रयोग वेद मे है। सत्य और असत्य शब्द दोनों क्रमश सत् और असन् से बने है। अथर्व ८। ४। १२ मे असत् का इस प्रकार वर्णन है—

सुविज्ञान चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते। तयोर्यत्सत्य यतरदृजीयस्तदित्सोमोऽवति

इन्त्यासत् अ० ८ । ४ । १२ ॥

अर्थात्--सत्यासत्य का सुनिश्चित ज्ञान जिज्ञासु को हुआ करता है। सत् और असत् वाणिया परस्पर स्पर्धा करती हैं। उनमे जो सरल है वह सत्य है। ज्ञानी असत् का परित्याग करता है और सत् की रक्षा करता है। इसके अतिरिक्त ऋग्वेद ४। ५। ५ मे असत्य शब्द ही मिलता है। मन्त्र का अन्तिम चरण इस प्रकार है—पापास सन्तो अनृता असत्या इद पदम जनता गभीरम्—

अर्थात् दुष्टाचरण वाले व्यक्ति पापी होकर अनृत और असत्य हुए नरक के स्थान को प्राप्त करते हैं। यहा मन्त्र में अनृत और असत्य दोनों ही शब्द पड़े हैं। श्री विदेह जी से पूछना चाहिये कि वैदिक साहित्य की बात तो दूर रही यहा पर ऋग्वेद मे ही असत्य पद मिल रहा है। आपकी समाधि और वेदज्ञता क्या यही है कि इस प्रकार का अनर्गल लेख लिखा करें। इससे स्वय ज्ञात होता है कि न आपको समाधि ही प्राप्त है और न वेद का ही परिज्ञान है।

आप लिखते है कि वेद में अनृत से पृथक् होकर 'ऋत' की प्राप्ति का कहीं भी उल्लेख नही है—यह भी आपकी नितान्त वेदानभिज्ञता का सूचक है। वेद मे अनृत से हटकर ऋत की प्राप्ति का भी उल्लेख है। ऋग्वेद २। २४। ७ का मन्त्रार्थ निम्न प्रकार है—ऋतावान प्रतिचक्ष्यानृता पुनरात आ तस्थु कवयो महस्पथ ।

अर्थात् क्रान्तदर्शी विद्वान् जन का अनृत प्रत्याख्यान करके इससे पुनः ऋतावान ऋत को प्राप्त हुये हुये महत् पद को प्राप्त होते हैं। यहां पर मन्त्र में स्पष्ट रूप से अनृत से हटकर ऋत की प्राप्ति का उल्लेख है। श्री विद्यानन्दजी विदेह का कहना है कि वेद मे ऐसा है ही नहीं यह उनकी बडी अनभिज्ञता है। क्या समाधि का ही यह फल है? वेद जैसे अगाध सागर के विषय में समाधि का आडम्बर और वेदज्ञता का आडम्बर कभी भी पार नही लगने देता। इसमे तो सच्ची समाधि और सच्ची वेदज्ञता की आवश्यकता है। आचार्य दयानन्द ने हमे सत्य के ग्रहण और असत्य के परित्याग की शिक्षा दी है। वे स्वय असत्य के प्रत्याख्याता थे और उनके शिष्यों को भी ऐसा ही होना चाहिए। इसीधारणा से मै इस लेखमाला के लिखने मे प्रवृत्त हुआ। आशा है पाठक इसका यही भाव समझ कर पूरा लाभ उठायेंगे।

निरीक्षण-कला अथवा संस्थाओं का निरीक्षण

(श्री फूलचन्द शर्मा 'निडर' सिद्धान्त शास्त्री भिवानी)

स्थानीय अथवा बाहर से पधारे हुए किसी योग्य व्यक्ति को किसी सस्था के निरीक्षण कराने की एक साधारण परिपाटीसी हो गई है और यह परिपाटी जिस लाभ के लिए चलाई गई थी वह न होकर अब यह एक परिपाटी मात्र रह गई है। यह सब कुछ जानते हुए भी 'आर्य शिक्षा समिति' (यहा स्थानीय आर्य समाज ने एक 'आर्य कन्या विद्यालय' के प्रबन्धार्थ 'आर्य शिक्षा समिति' के नाम से एक उप समिति बनाई हुई है और मैं इस समिति का मन्त्री हू) के अधिकारी अथवा कार्यकर्ता अपनी सचाई, निस्वार्थता तथा अपने मानापमान तथा ढोंग से दूर रहने की भावना के कारण वे भी कुछ लाभ समझ कर कभी २ किसी २ को अपने इस विद्यालय के निरीक्षणार्थ प्रार्थना

कर बैठते हैं। इन पंक्तियों मे आज इसी विषय में अपने कुछ अनुभव एवम् उनका परिणाम पाठकों की भेंट करता हू —

एक बार एक महानुभाव हमारी प्रार्थना पर हमारे इस विद्यालय मे पधारे, तो देखा कि उस दिन हमारी कोई भी छात्रा उनके किसी भी प्रश्न का कोई उत्तर न दे सकी। बात यह थी कि उनका उद्देश्य छात्राओं से कुछ पूछने और उनसे उत्तर पाने का न था वे जो प्रश्न छात्राओं से कर रहे थे वे कर तो रहे थे छात्राओं से पर उनसे वे हम अधिकारियों को जो सेवक की तरह उनके पास मे खड़े थे यह दिखलाना चाहते थे कि मैं कितना योग्य हू। कैसे प्रश्न पूछता हू अथवा पूछ सकता हू।

एक बार एक और सज्जन आए, जो यही समझते थे कि किसी संस्था में जितनी त्रुटियां निकाली या बताई जाय उतना ही बढ़िया समझा जाता है और इसलिए वे हों या न हों त्रुटियां ही बताते थे। कुछ ऐसे भी होते हैं जो केवल प्रशंसा ही करते हैं। परन्तु यह भी ठीक नहीं। वास्तव में अच्छा और असली निरीक्षक वही होता है जो अन्य किसी भी बात पर न जाकर जो वह वहां देखे सुने उसी के अनुसार अपने सच्चे विचार सभ्यता पूर्वक अधिकारियों से प्रकट कर दे।

दरअसल बहुत ही कम ऐसे होंगे जिन्हें निरीक्षक की जिम्मेदारियों का ज्ञान हो और यह ज्ञान तब हो सकता है जबकि पहले अनेक बार निरीक्षक नहीं, वरन् निरीक्षण कराने वाला रहा हो। प्राय यह देखा जाता है कि निरीक्षण के समय निरीक्षण कराने वाले तो डरते से रहते है और निरीक्षक महोदय अपने को बड़ा और स्वच्छन्द समझते हैं। चाहे उस समय कोई निरीक्षक मुंह से न कहे कि मै बड़ा हू पर अपवाद को छोड़कर उसके दिल मे यही भावना काम करती होती हैं। हमारे विद्यालय मे छात्राए तो जूता निकाल कर बैठती ही हैं अध्यापिकाए भी जूता निकाल कर ही बैठती हैं और अधिकारी आदि भी जब कभी जाए तो उन्हें भी अपना जूता निकाल कर ही भीतर छात्राओं में जाना पड़ता है। परन्तु एक बार एक निरीक्षक आए तो वे जूते समेत धड़ाधड़ भीतर चले गए। मे साथ था मैने अपना जूता इस ढंग से निकाला कि मेरे बिना कहे ही उनको भी जूता निकालना ही चाहिए था। परन्तु ऐसा करना शायद उन्होंने अपनी शान के विरुद्ध समझा होगा। परन्तु वास्तव मे उनकी शान जूता निकालने में नहीं घटती, वरन् जूता न निकालने मे घटती थी।

एक बार हम अधिकारियों ने एक सेठ जी के मुखिया को अपना विद्यालय दिखाना चाहा। हम जानते थे कि वे मुखिया जी सिगरेट का अत्यधिक प्रयोग करते है और हमारे यहा इसे (सिगरेट पीना) बहुत बुरा समझा जाता है। अब यदि हम इस डर से कि वे हमारे यहा आकर सिगरेट अवश्य पीएंगे उन्हें न बुलाए तो जिस लाभ की आशा (चाहे लाभ न हो हो आशा तो थी ही) उनसे थी उससे वंचित रह और यदि बुलाए तो जो डर था सो था ही आखिर उन्हें बुलाया ही गया। शुकर है कि निरीक्षण के नाते मे तो उन्हें सिगरेट याद न आई पर जाते समय जब वे हम से अन्तिम बात चीत कर रहे थे तो आखिर सिगरेट जला ही ली, और लगे फका फक वहीं धुआ उड़ाने।

एक बार एक डी० ए० बाबू को हमारा विद्यालय दिखाने का काम पड़ा और तो वे बड़े अच्छे साबित हुए पर तु वे हमारी कुछ छात्राओं का लेख असुन्दर बता गए और वास्तव मे हमें उन छात्राओं के लेख की सुन्दरता पर ही अधिक गर्व था। मुझ से रहा न गया और निरीक्षक का अपमान अथवा उनके नाराज हो जाने के डर से अपने साथियों की आखों द्वारा इनकार करने पर भी मै कह ही गया कि "वाह जी वाह! यह क्या कहा

आपने ? इनके लेख की सुन्दरता पर तो हम बड़ा गर्व है। स्यात् अन्य किसी भी स्कूल मे छात्राओं का इतना सुन्दर लेख न होगा। मुझे अच्छी तरह ज्ञात हो गया कि इस पर मेरे साथी तो स्यात् मुझ से कुछ नाराज ही हुए पर वे महाशय ऐसे झेंपे कि अन्त तक प्रत्येक बात मे हमारे विद्यालय की प्रशंसा ही करते चले गए।

एक बार एक बहुत बड़े सेठ जी का आगमन हमारे नगर में हुआ और उन्होंने यहां की संस्थाओं को देखने की स्वयं अपनी इच्छा प्रकट की। हमसे कहा गया कि हम भी यदि अपना विद्यालय उन्हें दिखाना चाहें तो उनके Progr[illegible] अधिकारी से मिलें। निदान हमने उनसे मिलकर अपनी संस्था का पता नोट करा दिया और उन्होंने हमारे यहां सेठ जी के पहुंचने का समय हमें बता दिया। चाहे झूठे दिखावे आदि से कितने ही दूर हों तथापि अपनी चीज दिखाने के लिए कुछ थोड़ी बहुत तैयारी तो करनी पड़ती है। अपनी शिक्षा समिति का मन्त्री तो मैं हूं ही समिति की संस्थाओं की देख रेख तथा प्रबन्ध आदि का कार्य भी अन्य अधिकारियों ने अधिकांश मुझ पर ही छोड़ा हुआ है। मैंने पहले दिन अपने विद्यालय की मुख्य अध्यापिका जी को जो एक बड़ी ही योग्य महिला हैं साधारण सूचना दे दी कि अमुक सेठ जी अमुक समय अपना विद्यालय देखेंगे। वे अपने अधिक उत्तरदायित्व के स्वभाव के कारण मैंने जितना कहा था उससे भी कहीं अधिक मात्रा में समय से कुछ पहले ही तैयार हो गई। छात्राओं के अति मनोहर गाने अनोखी बातचीत निराले अभिनय तथा विचित्र खेल आदि। कम से कम दो घण्टे के कार्यक्रम को यह सोच कर कि बड़े आदमी हैं अधिक समय तक नहीं ठहरेंगे काट छांट कर ४० मिनट का कार्यक्रम तैयार किया गया।

सेठ जी अपने कई साथियों समेत ठीक समय पर पधारे और सब जने विद्यालय की दीवारों पर निगाह डालते हुए बड़े प्रेम से यथा स्थान विराज गए। यहां तक तो ठीक परन्तु हमारी समिति के प्रधान अपनी भूमिका भी समाप्त नहीं कर पाए थे कि सेठ जी के साथियों ने बार २ अपने हाथों पर बन्धी घड़ियों को देखना आरम्भ कर दिया। उनकी ऐसी दशा देख मैं अपने मन मे सोच रहा था कि अभी से (तब तक स्यात् ५ मिनट भी नहीं हुए थे) यह दशा है तो ये लोग क्या देखेंगे ? आखिर वही हुआ और २ मिनट उन लोगों ने बड़ी मुश्किल से हमारे यहां लगाए। इस बीच मे भी बार २ घड़ियों को देखा और हमसे कहा कि आगे कई जगह जाना है।

अनेक संस्थाओं को देखने का समय दे दिया जाता है फिर थोड़ी देर पहले उनकी मार्ग रोकनी है और थोड़े २ (नाम मात्र) मे [illegible] कर नेग पूरा कर दिया जाता है मैं कहूं कि ऐसे अनेक संस्थाओं को [illegible] की बजाय [illegible] कर किसी एक संस्था का देखना अधिक श्रेयस्कर है उस दिन बड़ी निराशा मुझे हुई और मैंने अपने साथियों से कहा कि आज से मैं इस प्रकार किसी संस्था का देखना [illegible] एक दम विरुद्ध हो गया हूं। निःसन्देह उक्त सेठ जी और उनके साथियों का हमारे दिलों मे बड़ा ही आदर है और रहेगा। इतना ही नहीं वरन् उनका बार २ धन्यवाद करते हैं हम कि जाते हुए हमारी छात्राओं को ५०) के लड्डू बांट गए और अपने स्थान पर जाकर ५०) की राशि सेठ जी ने तथा ५०) एक सेठ जी के साथी ने जो हमारे भी अपने हैं [illegible] द्वारा हमें भेजे। परन्तु यह दान पाकर भी रह २ कर मेरे दिल मे यही आ रहा है कि सेठ जी दान में राशि चाहे हमें ५००) की बजाय कुछ कम ही दे देते परन्तु यदि हमारे विद्यालय मे २० मिनट की बजाए एक घण्टा शान्तिपूर्वक लगा देते तो उनके इस दान से हमें जो सुख और सन्तोष होता वह स्यात् इन ५०) से न हुआ हो।

वह सेठ जी और उनके साथी बड़े अच्छे थे

उनकी हम हर प्रकार से प्रशसा ही करेंगे। केवल इतनी ही कमी रही कि वे हमें हमारी इच्छानुसार समय नहीं दे सकें। परन्तु सब ऐसे नहीं होते। अधिकाश ऐसे ही निरीक्षक होते हैं कि जिनमें बहुत से तो समय देकर आते ही नहीं। चाहे दिखाने वालों ने तीन दिन पहले से उनकी तैयारी में लगा कर अपना खून पसीना एक कर दिया हो। पर उन्हें ऐन समय पर इनकार करते एक मिनट भी नहीं लगता। जब पता लगता है कि वे महानुभाव नहीं आयेंगे तब किसी सस्था का सारा स्टाफ और अधिकारी तथा छात्र छात्राए आदि मु ह बाए देखते रह जाते है। तब उनके साथ वैसे ही बनती हैं जैसे किसी गृहस्थी ने किसी बहुत ही बडे महमान के लिए बढिया से बढिया खाने तैयार किए हों और बडी प्रतीक्षा के पश्चात् कोई आकर उसे कह दे कि उन्होंने और कहीं भोजन कर लिया हैं, आज आपके यहा नहीं आए गे।

एक बार एक सज्जन ने हमारा विद्यालय देखने की प्रतिज्ञा की, परन्तु देखना तो एक ओर रहा समय पर सूचना भी नहीं दी कि मै नहीं आऊगा। घण्टों प्रतीक्षा करने पर हमे स्वय ही पता लगाना पडा कि वे आएँगे या नहीं। बहुत से निरीक्षक ऐसे होते हैं कि उन्होंने जो समय दिया हुआ होता है, उससे पहले ही आखडे होते हैं। यह भी बहुत बुरा है। क्योंकि अधिकारियों को इससे भी बडी निराशा होती है और उनका अपनी सस्था के दिखाने का जो उद्देश्य होता है वह पूरा नहीं हो पाता।

इन सबको छोड कर सबसे घटिया चीज जो है वह यह है कि कोई निरीक्षक आए भी ठीक समय पर और समय भी पूरा दें। बार २ घडी को न देखे अर्थात् दौड धूप न करें। परन्तु निरीक्षण की कला उसे न आती हो, अथवा इससे वह अपना उत्तरदायित्व न समझता हो तो इसमें जितनी किर किरी होती हैं वह किसी तरह लई दई नहीं पड सकती। निरीक्षक का कर्त्तव्य है कि या तो किसी के यहा जाए नहीं यदि जाए तो वह वहा जितनी देर जो कुछ देखें उतनी देर उसी मे अपना अन्त करण (मन, बुद्धि, चित्त, अहकार) लगाए। हमारा अनेक ऐसे निरीक्षकों से भी काम पडा है कि कन्याए बेचारी बडा बढिया गाना सुना रही हैं और निरीक्षक महोदय बैठे ऊ घ रहे है। कुछ ऐसे देखे जो इधर दिखाने का कोई परीणाम चल रहा है उधर वे अपने किसी साथी अथवा अधिकारी से और बातें कर रहे है। तीसरे एक ऐसे भी देखे जो किसी आईटम के आरम्भ करते ही उसके आगे का अनुमान करके तत्काल ही यह कह देते हैं कि बस २ सुन लिया, ठीक है। वे नहीं सोचते कि वह आईटम चाहे उनके लिए नया नहीं है अथवा वे उसे पहले ही आगे तक समझ गए है, परन्तु तब भी उन्हें अब यहा इसे पूरा ही फिर से सुनना या देखना ही चाहिए। वे नहीं सोचते कि ऐसा करने से छोटी आयु के बालक बालिकाओं का कितना उत्साह बढता है और इसमे उन्हें कितनी प्रसन्नता होती है।

अन्त मे मै कहूगा कि जिस निरीक्षक मे उपर्युक्त तीनो त्रुटियों मे से यदि एक भी है तो वह कदापि निरीक्षक कहलाने का अधिकारी नहीं है। क्योंकि इन त्रुटियों से न केवल ठीक निरीक्षण नहीं होता वरन् इनसे निरीक्षण की जाने वाली सस्था एवम् उसके स्टाफ एवम् अधिकारियों का घोर अपमान होता है इसलिए निरीक्षक बनने से पूर्व निरीक्षण कला को अवश्य सीख लो, वरना हरगिज कहीं निरीक्षक बन कर मत जाओ। निरीक्षण कराने वालों को भी चाहिए कि किसी भी लालच में आकर किसी अधूरे निरीक्षक द्वारा निरीक्षण करा कर अपनी सस्था का अपमान न कराएँ।

विज्ञान, दर्शन और धर्म्म

कुछ दिन पहले शिक्षित जगत् के नाम से जो समुदाय प्रसिद्ध था उसने यह फैशन सा बना रखा था कि ईश्वर धर्म्म दोनों का बहिष्कार करना चाहिए। उनकी समझ मे इसका कारण यह था कि ईश्वर के मानने से मनुष्य को व्यर्थ बन्धन मे पडना पडता है और धर्म्म लडाई झगडे की चीज है ही। १९वीं शती मे युरोप मे प्राय उपर्युक्त भाति के पुरुषों का शिक्षित समुदाय पर आधिपत्य था उस समय यदि 'निटशे' ने एक ओर उद्घोषित किया कि इस विज्ञान युग में ईश्वर की मृत्यु होगई तो दूसरी ओर मेकाइल्ल वेकुनिन ने दावा किया कि If God really existed it would be necessary to abolish him अर्थात् यदि सचमुच कोई ईश्वर मौजूद है तो उसे नष्ट कर देना आवश्यक है। बोलशेविक २० वीं शताब्दी मे भी शोर मचा रहे हैं कि मामूली अमीर और राजा से लेकर ईश्वर तक का आधिपत्य नष्ट कर देना, उनके गढे हुए 'साम्यवाद' (Soo alism) का उद्देश्य है। इस प्रकार के भ्रम मूलक विचार जन समुदाय मे क्यों उत्पन्न हुये इसे हम उचित रीति से मध्य कालीन यूरोप मे धर्म के नाम से दार्शनिकों और वैज्ञानिकों पर हुये अत्याचार रूपी कार्य का प्रति कार्य ही कह सकते हैं और दोनों कार्य और प्रतिकार्य में कुछ दरजों का अन्तर भले ही कोई कह देवें परन्तु श्रेणी का भेद नहीं कहा जा सकता—अर्थात् मध्य कालीन यूरोप मे जो कार्य कुछ अज्ञानी पुरुषों ने धर्म के नाम से किये उनमे और जो कार्य अब उसी श्रेणी के पुरुष विज्ञान के नाम से कर रहे है उनमें नाममात्र का ही अन्तर कहा जा सकता है।

उपनिषदों ने जो एक प्रकार से वैदिक आस्तिकवाद के व्याख्यान ग्रन्थ है, बडी उत्कृष्टता के साथ, विज्ञान (Science) दशन (फिलोसोफी) और धर्म का मूल तत्व और सीमा बताने का यत्न किया है- याज्ञवल्क्य अपनी विदुषी पत्नी मैत्रयी को उपदेश देते हुए कहते हैं "आत्मा वा अरे द्रष्टव्य श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो मैत्रेय्यात्मनो वा अरे श्रवणेन मत्या विज्ञानेनेद सर्व विदितम्"। दर्शनेन (बृहदारण्यकोपनिषद् २।४।५) अर्थात 'अरे मैत्रेयि निश्चय आत्मा ही द्रष्टव्य, श्रोतव्य, मन्तव्य और निदिध्यासितव्य है—अयि मैत्रेयि। निश्चय आत्मा के दशन और श्रवण से, मन से और विज्ञान से यह सब विदित होता है।

याज्ञवल्क्य ने आत्मा पर्य्यन्त समस्त जगत् के ज्ञान के लिए तीन साधन बतलाये है —

(१) दर्शन और श्रवण—इसी का नाम विज्ञान (साइन्स) है।

(२) मनन—दर्शन या फिलोसोफी को कहते है।

(३) निदिध्यासन-(अनुभव Realisation) का नाम धर्म है। कितनी उत्तम शिक्षा है। मनुष्य

दर्शन और श्रवण के बाद ही मनन और मनन के बाद ही निदिध्यासन करने के योग्य होता है। इसी लिए कहा जाता है कि अनुभूत विज्ञान फिलासफी है तो अनुभूत फिलासफी का नाम धर्म है। तीनों की अपने २ दरजों पर कितनी आवश्य कता है और तीनों मे कितना सहयोग है और किस प्रकार वे तीनों जीवन के उच्च उद्देश्य की प्राप्ति के साधन है, ये सभी बातें याज्ञवल्क्य के एक छोटे परन्तु सार गर्भित वाक्य से प्रकट हो रही है।

भूर्भुव स्व

इसी शिक्षा और समन्वित ज्ञान का समर्थन तीनों महाव्याहृतियों भूर्भुव स्व' से भी होता है।

(१) भू =सत्=प्रकृति
(२) भुव =चित्=आत्मा
(३) स्व =आनद=परमात्मा

अर्थात् भूर्भुव स्व कहो या सच्चिदानन्द यह ईश्वर का नाम इसी लिए है कि वह प्राकृतिक जगत् और आत्मिक ससार मे मेल रखने वाला है। यदि आत्मिक जगत् धर्म्म का बोधक है तो प्राकृतिक जगत् विज्ञान (साइ स) का विधायक है।

(आस्तिक वाद प्राक्कथन
श्री नारायण स्वामी जी)

आर्य सस्कृति का दूसरा मूलतत्व

आर्य सस्कृति का जीवन के प्रति दृष्टिकोण त्याग पूर्वक भोग का दृष्टि कोण है। हम ससार मे रहें परन्तु निर्लिप्त होकर, निस्सग होकर निष्काम भाव से। वेदों की उपनिषदों की, विशुद्ध आर्य सस्कृति के अध्यात्मवाद की विचारधारा यह थी कि ब्रह्म सत्य है परन्तु इस ससार से भी तो इन्कार नहीं किया जाता हा इस ससार के मुकाबले में अन्तिम सत्ता, यथार्थ सत्ता शरीर की नहीं आत्मा की है प्रकृति की नहीं परमात्मा की है। वेद ने कहा क्योंकि शरीर है इसलिए शरीर से काम करो परन्तु क्योंकि अन्तिम सत्ता इसकी नहीं है इसलिए इसमें लिप्त होने से बचे रहो, क्योंकि ससार है इसलिये इसका भी उपभोग करो क्योंकि अन्तिम सत्ता इसकी भी नहीं इसलिये इस ससार में लिप्त होने से बचे रहो। भारतीय अध्यात्मवाद का अभिप्राय 'निष्कर्मण्यता' समझा जाता है, असल में इस समझ में भूल है। भारतीय अध्यात्मवाद का अभिप्राय 'निष्कर्मण्य' जीवन बनाने के स्थान में 'निष्काम' जीवन बनाने से है। **निष्काम भाव का विचार आर्य सस्कृति की विचारधारा का दूसरा मौलिक विचार है।** आर्य सस्कृति की इसी विचारधारा को श्रीकृष्ण ने खोलकर अर्जुन के सामने रखा और अध्यात्मवादी होते हुये भी उसे ससार से भागने के स्थान पर ससार में डटने का उपदेश दिया। आर्य सस्कृति का बीज मन्त्र यही है कि कर्म करते जाओ, परन्तु उसके बन्धन को मत पड़ने दो। ससार मे रहो इसलिए रहो क्योंकि तुम इसे छोड़ना चाहो तब भी छोड़ नहीं सकने, परन्तु इसमें रहते हुये इसके भोक्ता बनकर रहो इसके भोग्य बनकर मत रहो। इसी को कर्म योग कहते हैं, कर्म करते हुये उसके बन्धन को न पड़ने देना ससार में रहते हुये ससार से मुक्त रहना यही जीवन का सही रास्ता है। इस मार्ग का उल्लेख करते हुये गीता का कथन है— कर्म करो, फल की इच्छा मत करो। परन्तु कर्म करते हुये उसके फल की आशा न करना कहने में सरल पर करने में कठिन है जो लोग जीवन को यज्ञमय बना लेते है वे स्वत निष्कामकर्म' करने लगते हैं। यज्ञ का अभिप्राय है—त्याग'। स्वार्थ की भावना को छोड़ देना ही तो यज्ञ है। यज्ञ करते हुये मनुष्य अपने को परमात्मा की महान् शक्ति के सहारे छोड़ देता है। मैं कुछ नहीं, तू ही सब कुछ है, मेरा कुछ नहीं। सब तेरा ही तेरा है— 'इदन्नमम' यही भावना यज्ञ की आधार भूत भावना है। यही भावना यज्ञ में जगमगा उठती है। जो भावना

यज्ञ में होती है वही भावना यदि जीवन के प्रत्येक कार्य में अनुप्राणित कर दी जाय तब तो प्रत्येक कार्य यज्ञ हो गया, जीवन ही यज्ञरूप बन गया। यज्ञमय नि स्वार्थ जीवन बिताने वाले को गीता में 'आत्मरत-आत्मतृप्त-आत्म-सन्तुष्ट कहा गया है। वह अपने में रमा हुआ है, आत्ममें भरा हुआ है। अपने आत्मा में सन्तुष्ट है। स्वार्थमय जीवन बिताने वाले को 'इन्द्रियारम', कहा गया है। वह इन्द्रियों के साथ खेलता है। आत्मा से दूर भागता है। स्वार्थ की भावना को छोड़कर निरसग, निष्काम, निर्मोह कार्य करना आर्य सस्कृति का रहस्यमय उपदेश है, उसका बीज मन्त्र है और जीवन की गूढ़तम समस्या पर यही उसकी दार्शनिक विचारधारा है। निष्काम कर्म करने का परिणाम यह होगा कि कर्म में सिद्धि हो, असिद्धि हो, सफलता हो असफलता हो मनुष्य में समता रहेगी और समता रहेगी तो शान्ति रहेगी। हम अपना कार्य करते चलें और 'इदन्नमम' कह कर 'फल' को परमात्मा के चरणों में रखदें, हम अपनी सकुचित दृष्टि से न देखकर विश्वात्मा की विशाल दृष्टि से देखें।

—(आर्य सस्कृति के मूलतत्व पृ० २६-३५)

विकासवाद का खंडन

The mystry of life remains as impenetrable as ever

अर्थात् जीवन का रहस्य अब भी उतना ही गूढ़ है जैसे पहले था।

(डार्विन के सुपुत्र प्रो० जार्ज डार्विन के दक्षिण अफ्रीका की ब्रिटिश एसोसियेशन में (१६ ८-१६०५) दिये गये भाषण का अंश)

एबडान विश्व विद्यालय के प्रो० जे० ए० थामसन और एडिम्बरा विश्व विद्यालय के प्रो० पेट्रिक गेडीस ने विकासवाद पर लिखते हुये कहा है —

' We can not know whence he emerged
nor do we know how man arose
for it must be admitted that the factors of the evolution of man partake largely of the nature of may hes which has no permanent position in science' (Ideals of science and faith)

'हम नहीं जानते कि मनुष्य कहा से आया वा कैसे आया? यह मान लेना चाहिए कि मनुष्य के विकास के प्रमाण सन्दिग्ध हैं और सायस में उनके लिये कोई स्थायी स्थान नहीं है।

६-६-१६०५ के टाइम्स ('Time's literary supplement) में कई विकासवादियों के वाद-विवाद के विषय में लिखा था —

Never was seen such a melee The humour of it is that they all claim to represent science—for the plain truth is that though some agree in this and that, there is not a single power in which all agree. Battling for evolution they have torn it to pieces nothing is left nothing at all, on their showing save a few fragments strewn about the arena

ऐसी गड़बड़ पहले कभी नहीं हुई। तमाशा यह है कि ये सब अपने को विज्ञान का प्रतिनिधि बताते है ·····सच तो यह है कि यद्यपि कुछ लोग एक दो बातों में सहमत हैं। कोई एक बात भी ऐसी नहीं है जिसमे सब सहमत हो। विकासवाद के पक्ष में युद्ध करते हुए उन्होंने इसके टुकड़े २ कर डाले। अब इसका कुछ भी शेष नहीं रहा। केवल युद्ध क्षेत्र में कुछ टुकड़े इधर-उधर बिखरे पड़े हैं।

मनुष्य की बन्दर से उत्पत्ति के विषय में सर. जे. डब्ल्यू डौसन कहते हैं—
no remains of intermediate forms are yet known to science.

अर्थात् 'बन्दर और मनुष्य के बीच आकृति का विज्ञान को कुछ पता नहीं और

The earliest known remains of man are still human and tell us nothing as to the previous stages of development

मनुष्य की प्राचीनतम हड्डियां भी मनुष्य की सी हैं और उनसे उस विकास का कुछ पता नहीं लगता जो मनुष्य शरीर से पहले हुआ है।

प्रो० औवेन का कथन है —

Man is the sole species of his genus and the sole representative of his species

'मनुष्य अपने प्रकार की एक मात्र जाति है और अपनी जाति का एक मात्र प्रतिनिधि है।

इतना ही नहीं बहुत से वैज्ञानिकों का मत है कि मनुष्य दिन प्रतिदिन उन्नति नहीं, अवनति करता जाता है। सिडनी कौलैट ने अपनी पुस्तक Scripture of truth के पृ० १८३ पर लिखा है —

Science is equally explicit in its testimony that instead of man having slowly improved from the lower to the higher, the tendency is exactly in the opposite direction,

'सायस की स्पष्ट साक्षी है कि मनुष्य अवनत दशा से उन्नत दशा की ओर चलने के स्थान में उलटा अवनति कर रहा है।"

वह लिखते हैं--

Mr Horatio Hale shows in a remarkable article in the Transaction of the Royal Society of Canada, that primitive man in his earliest state must have been endowed with, as high intellectual powers as any of his descendant while sir I W Dawson writing on this subject says the earliest remains of man show that man s earliest state was his best

ट्राजेक्शन आफ दी रौयल सोसाइटी कनाडा मे मि० होरेशियों हेल ने एक लेख लिखा था जिसमे सिद्ध किया था कि आदि मनुष्य मे उसकी आदिम अवस्था मे उतनी ही उच्च बुद्धि थी जितनी उसकी सन्तान मे और सर० जे० डबल्यू डासन ने उसी विषय मे यह लिखा है कि मनुष्य की आदिम अवस्था सबसे उच्च थी।

वस्तुत सच्ची आस्तिकता को सच्ची सायस से कोई भय नहीं। सृष्टि की अज्ञात वस्तुओं तथा घटनाओं को खोज कर निकालने मे ईश्वर का महत्त्व ही प्रतिपादित होता है और विकासवाद का घर ढह जाता है।

(आस्तिकवाद पृ० १२४-१२७)

महर्षि जीवन (जीवन की कुछ घटनाएं)

दान की मर्यादा

महर्षि भावना और शक्ति के अनुसार दानादि करना बताया करते थे। उत्तेजित होकर उतावली से किसी कार्य को कर बैठना और पीछे पछताने लग जाना, वे अच्छा नहीं समझते थे। वे कहा करते थे कि दान उतना दो जिससे तुम्हें भीख न

मागना पड़े। कार्य क्षेत्र में उतना चलो जिससे जी हार न जाय और पात्र पीछे लौटाने की आवश्यकता न हो।

मुम्बई मे आर्य समाज मन्दिर के निर्माण के लिए एक निधि खोली गई। लोग यथा शक्ति उसमें दान देते। उन्हीं दिनों एक मारवाडी सज्जन श्री स्वामी जी के निकट आया और नम्रता पूर्वक कहने लगा 'भगवन्! मेरे पास दस हजार रुपया है। यह सारा द्रव्य मैं आर्य समाज मन्दिर के कोश में समर्पित करता हू। कृपया तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिये।"

'भगवान ने भक्त की भावना की भूरि २ प्रशसा की और कहा "मैं अतीव प्रसन्न हूँ कि आपके हृदय में आर्य धर्म का इतना अगाध प्रेम है। परन्तु मैं आपकी सम्पूर्ण पूजी लेकर आपके परिवार को परमुखापेक्षी, पराश्नपरायण भिक्षु नहीं बनाना चाहता। जिस धर्म के अग को पालन करते पहला धर्माङ्ग बिगड जाय वह धर्म ठीक नहीं है। उस मन्दिर की क्या शोभा होगी जिसके बनने में आपका व्यापार बन्द हो जाय। आपकी गृहस्थ यात्रा न चल सके। हा आप से १ हजार रुपया लिया जा सकता है।"

पुरुषार्थ का जीवन बनाओ

महाराज का जीवन उद्योग और पुरुषार्थ का जीवन था। उनके सेवक भी आलसी, निरुद्यमी और भू भार रूप न थे। प्रत्येक कर्मचारी कुछ न कुछ कार्य करता ही दीख पडता था। स्वामी जी उपदेश दिया करते "जैसे देव यज्ञ के अनन्तर देवों का दिया भोग भोगने में पुण्य है ऐसे ही मनुष्यों का उपकार करके उनका दिया भोगने का अधिकार है। यदि किसी का अन्नादि ग्रहण करने लगो तो पहले मन में सोचो कि इसे लेने का मुझे कोई अधिकार भी है? और दानियों के लिये मैं क्या कर रहा हूं व्यर्थ में पर पुरुषार्थ जीवी बनना पाप है।"

मनुष्य उतना ही अधिक अच्छा है जितना वह उपयोगी हो

एक दिन का वर्णन है कि अंग्रेजी का विद्वान एक पञ्जाबी स्वामी जी के दर्शनार्थ मुम्बई मे आया। महाराज के आदेशानुसार उसके खान पान और निवास का उत्तम और उचित प्रबन्ध उनके डेरे पर ही कर दिया गया। कई दिन तक वह महाशय सुख पूर्वक रहा। उसका दैनिक काम छड़ी घुमाते नगर मे चक्कर लगाना और थक कर खाट पर पडे खर्राटे लेना ही था। एक दिन महाराज ने उसको आमन्त्रित किया और कहा—"भद्र! जो पदार्थ जितना अधिक उपयोगी है उतना ही अधिक अच्छा है। मनुष्य भी उतना ही अधिक अच्छा है जितना वह उपयोगी हो। अब आप सोचिये कि व्यर्थ मे समय खोकर आप कितनी उपयोगिता नष्ट कर रहे हैं। देखिये, मैं भी पराम्न भोगी हू, परन्तु प्रात से साय पर्यन्त परार्थ कार्य करता हूँ। आलसी और निष्क्रिय होकर किसी की कमाई पर ताकते रहना मेरे सिद्धान्त के सर्वथा विरुद्ध है। परमात्मा ने पुरुषार्थ के लिए प्रत्येक को पर्याप्त साधन दिये हैं। उन्हीं के आधार पर प्राण यात्रा चलाना उचित है। आप भी मेरे मत के अनुयायी बन जाइये। इस कर्म भूमि में कर्म योग को प्रधान मानिये। जब तक आपका निवास इस नगर में रहें मुझे अ ग्रेजी समाचार पत्र सुनाया कीजिये।

उस भद्र पुरुष ने उनके कथन को सिर आखों पर रख लिया और उसी दिन से इस कार्य को करना आरम्भ कर दिया।

चाहे जिस मत का मनुष्य हो जब जल मांगे उसे गिलास में ही दिया करो

स्वामी जी को अतिथियों के सत्कार का बड़ा ध्यान रहता था। एक दिन एक बगाली भद्र पुरुष

उनके दर्शनों को आया। वह महाराज के चरण छूकर बैठ गया और वार्तालाप करते, उसने पानी पीने की इच्छा प्रकट की महाराज ने अपने एक गुजराती शिष्य को आज्ञा दी कि इनको जल पिलाइये। गुजरात देश के आर्य दाढी नहीं रखते। उस सज्जन की लम्बी दाढी देखकर शिष्य ने उसको मुसलमान समझा, इसलिए उसे दौने मे पानी पिलाया। जब अतिथि उठ कर चला गया तो उन्होंने उस शिष्य को बुला कर झिडका और कहा "आप लोग अभी तक सभ्यता के साधारण नियम भी नहीं सीख पाये हैं। बताओ आपने उसे गिलास में जल क्यों नहीं दिया?

शिष्य ने प्रार्थना की "एक मुसलमान को अपने वर्तन में पानी पिला कर मैं वर्तन को भ्रष्ट कैसे कर लेता?" महाराज ने उसे कहा "वैसे तो वह मुसलमान न था, प्रत्युत एक उपाधिधारी बड़ा भारी आर्य भूमि हार था। किन्तु मेरे पास ईसाई मुसलमान सभी लोग आते हैं। उनके आदर मे कदापि त्रुटि न होनी चाहिए। आगे को चाहे किसी मत का मनुष्य हो जब जल मागे उसे गिलास में दिया करो।"

स्वामी जी विदेश क्यों नहीं गये

मुम्बई में पश्चिम के सुप्रसिद्ध पंडित मोनियर विलियम्स महाशय आये हुए थे। एक दिन उन्होंने श्री श्री स्वामी जी का शुभ मिलाप प्राप्त किया। पहले सस्कृत भाषा में बात चीत आरम्भ हुई, परन्तु अतिथि को अनभ्यास के कारण सस्कृत में वार्तालाप करना कठिन प्रतीत होता था। इसलिए महाराज ने एक दुभाषिया बीच मे बैठा लिया। स्वामी जी तो सस्कृत ही मे बोलते थे और मोनियर महाशय की अग्रेजी का आर्यभाषा मे अनुवाद करके दुभाषिया स्वामी जी को समझाता था।

बड़े लम्बे कथनोपकथन के अनन्तर विलियम्स महाशय ने कहा 'आपके विचार परिमाजित और अत्युच्च हैं। युरोप वासियों मे भी इन विचारों का प्रचार होना चाहिये। यदि आप उस महाद्वीप की यात्रा करना स्वीकार करें तो मैं आपके व्ययादि का भार अपने ऊपर लेता हू।

स्वामी जी ने अतिथि को उसकी इस उदारता के लिये धन्यवाद देकर कहा "जिस भारत भूखंड में मैं रहता हू वहा अविद्यान्धकार घोरतम रूप धारण किये बैठा है। इस देश के वासी दिन पर दिन दु खी और दरिद्र होते चले जाते हैं। यहा के समाज में कुरीतियों का कोई भी पारावार नहीं है। ऐसे ही कारणों से इस देश का सुधार करना मै अपन मुख्य कर्तव्य समझता हू।

दूसरे विदेश जाने के लिए वहां की भाषा सीखना आवश्यक है जितना समय विदेश की भाषा सीखने मे लगता है उसमें मैं यहीं अधिक कार्य कर सकू गा। तीसरे जिस देह के इतने लोग विरोधी हैं उसका भी अब अधिक भरोसा नहीं है। थोडे से समय में, यदि इससे इसी देश का कल्याण कार्य बन सके तो बहुत अच्छा है।"

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय गोधन को कतल से नहो बचा सकता

पशु विशेषज्ञों के सफल षडयन्त्र का दुष्परिणाम

लाला हरदेव सहाय जी मन्त्री गोहत्या निरोध समिति ने सर्वोच्च न्यायालय की बावत निम्न लिखित वक्तव्य दिया।

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा बिहार की विधान सभाओं ने गाय, बैल, सायड बछड़े बछड़ी की हत्या को सम्पूर्णतया बन्द करने के कानून

बनाये। इन तीनों राज्यों के कसाइयों, खाल आदि के व्यापारियों ने सर्वोच्च न्यायालय में गोहत्या निषेध कानूनों को चुनौती देते हुये प्रार्थना पत्र दिये। सर्वोच्च न्यायालय ने २३ अप्रैल १९५८ को इन प्रार्थना पत्रों पर सब आयु सब तरह की गाय, भैंस के बछड़े बछड़ी तथा काम देने वाले बैलों, साण्डों, भैंसों का कतल बन्द करने का निर्णय दिया। जो बैल और साण्ड काम नहीं दे सकते और भैंस दूध नहीं दे सकतीं उनकी हत्या जारी रखी। जिन सज्जनों को पशु वध की समस्या तथा कतल का अनुभव नहीं सम्भव है उन्हें इस निर्णय से सन्तोष हो। पर गत दस वर्षों के अनुभव और सरकारी रिपोर्टों के अनुसार भावना नहीं व्यवहारिकता की दृष्टि से यह सिद्ध है कि जब तक गाय बैल साण्ड, बछड़े, बछड़ी सब की हत्या सम्पूर्ण बंद नहीं होगी, तब तक आंशिक कानून होने पर भी न गाय कतल से बच सकेगी न उपयोगी बैलों का वध बन्द होगा। न ही अनुपयोगी कहलाने वाले पशुओं की समस्या का समाधान होगा। न दूध और अच्छे बैलों की कमी दूर होगी। जिन बैलों ने वर्षों तक परिश्रम करके हमारे पेट भरने के लिये हजारों मन अन्न उत्पन्न किया, जिन साण्डों ने नसलों को उन्नत करके दूध और बैलों के उत्पादन को बढाया वृद्ध होने पर उनको कतल करना भारतीय संस्कृति को चुनौती देना तथा कृतघ्नता की पराकाष्ठा है। नैतिक पतन है। आज भी लाखों कृतज्ञ किसान अपने बूढे बैलों को किसी मूल्य पर नहीं बेचते, मरण पर्यन्त घर रखते हैं।

राज्य सरकारों के व्यवहारिक निर्णय

मध्य प्रदेश की सरकार ने नवम्बर १९४९ में गाय, बछड़े, बछड़ी की हत्या सम्पूर्णतया तथा १४ वर्ष तक की आयु के उपयोगी बैल, साण्ड की हत्या बन्द करने का कानून बनाया। पर बैलों के नाम पर गाय तथा अनुपयोगी के नाम पर उपयोगी बैलों का कतल होता रहा। गौवंश की इस हत्या को दृष्टि में रखते हुये मध्य प्रदेश की सरकार को गौवंश मात्र की हत्या बन्द करने का कानून बनाने को बाध्य होना पड़ा। बिहार विधान सभा की प्रवर समिति ने सर्वप्रथम केवल गाय, बछड़े, बछड़ी की हत्या पर प्रतिबन्ध लगाने का निश्चय किया था, पर दो साल के अनुभव के बाद यह मालूम हुआ कि जब तक गौवंश मात्र की हत्या सर्वथा बन्द नहीं होगी तब तक केवल गाय, बछड़े, बछड़ी की हत्या बन्द करने से कोई लाभ नहीं पहुंचेगा। अत गोहत्या सम्पूर्णतया बन्द करने का कानून बनाने की सिफारिश की। उत्तर प्रदेश सरकार तो अपने प्रांत के २१ सब विचार के प्रतिष्ठित सज्जनों और पशु विशेषज्ञों की कमेटी के द्वारा एक वर्ष तक एक २ बात की जाच करवाकर इस निश्चय पर पहुची कि जब तक गोवंश मात्र की हत्या बन्द नहीं होगी तब तक गौवंश कतल से नहीं बचेगा। इन राज्यों ने चारे आदि के साधनों, गोसदनों की व्यवस्था की दृष्टि मे रख कर ही कानून बनाये। आंशिक गोहत्या निषेध कानून व्यर्थ सिद्ध हुये हैं। सन्त विनोबा भावे ने भी गाय, बछड़ी, बछड़ा ही नहीं बैल, साण्ड की हत्या सम्पूर्णतया बन्द होनी चाहिये कहा। गोहत्या की समर्थक पशु विशेषज्ञ कमेटी १९५४ ने भी यह स्वीकार किया है कि उपयोगी पशु वध निषेध कानूनों से कोई लाभ नहीं पहुँचा, अत आंशिक नहीं गोवंश मात्र की हत्या बन्द करने से ही लाभ पहुच सकता है। अत उपयोगी पशु वध निषेध कानून केवल मात्र धोखा है।

कोई भी पशु अनुपयोगी नहीं

सरकारी पशु संख्या रिपोर्ट १९५६ के अनुसार देश में आज एक भी अनुपयोगी पशु नहीं। जो गाय दूध नहीं देती या बल काम नहीं देते, गोबर गोमूत्र देने के कारण उन्हें भी इस रिपोर्ट में अनुपयोगी नहीं बताया "अदर्स" या "अन्य" के नाम से उनकी संख्या लिखी है। १९५६ में देश भर में "अन्य" के नाम से लिखी हुई गायों की

सख्या १०२४ हजार और बैलों की सख्या २ ३० हजार कुल ३० लाख ५४ हजार या कुल गौवश मात्र की सख्या का दो प्रतिशतक है। पर दुख है कि जनता को भयभीत करने के लिये साधारण पशु विशषज्ञ हो नहीं मन्त्री तक अनुपयोगी पशुओं की सख्या बढा कर बतलाते हैं। कृषि मन्त्री श्री पजाब राव देशमुख ने २१ मई १९५४ को लोकसभा मे अनुपयोगी (नहीं 'अन्य" कहलाने वाले) पशुओं की सख्या जो दो प्रतिशत है, उसे दस से तीस प्रतिशतक यानी वास्तविक सख्या का १५ गुणा अधिक बढा कर बतलाया। प्रथम पचवर्षीय योजना की रूपरेखा रिपोर्ट के पृष्ठ १११ पर अनुपयोगी कहलाने वाले पशुओं की समस्या का समाधान उनका कतल नहीं उन्हें गोसदनों में रखना बतलाया है। महात्मा गाधी जी ने दिनाक ७ जुलाई १९२७ को लिखा कि एक २ लगडे, लूले बीमार पशु को रखने की जिम्मेवारी सरकार की है। पर जैसा कि बिहार उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश जिनका कि सुप्रीम कोर्ट के मामले से सम्बन्ध के १९५१ के अकों से जो सरकारी मास बाजार रिपोर्ट पृष्ठ २५ प्रथम पच वर्षीय योजना प्रथम भाग और गोरक्षा उन्नति कमेटी रिपोर्ट के पृष्ठ ४७ के आधार पर लिखे गये हैं निम्न प्रकार से हैं।

है। अत आर्थिक दृष्टि से भी अनुपयोगी कहलाने वाले गौवश के कतल की अपेक्षा उससे गोबर गो मूत्र का ठीक तरह पर लाभ उठाना अधिक लाभ दायक है।

सरकारी पशु विशेषज्ञों का सफल षडयत्र

पचास साठ वर्ष पूर्व जब देश मे गोहत्या कम थी, किसान पशु विषेषज्ञों की सम्मति से नहीं स्वय पशु पालन करता था, तब सरकारी रिपोर्टों के आधार पर भी आज की अपेक्षा अधिक अच्छे पशु थे। पश्चिमीय सभ्यता के दुष्प्रभाव से सरकारी पशु विशेषज्ञ ने गत पचास वर्षों में यह कह कर गौवश की हत्या को जारी रखा कि अच्छे पशुओं को जो चारा दाना मिलना चाहिये वह निकम्मे पशु खा जाते हैं, अत गोवध बन्द कर दिया गया तो पशुओं की उन्नति नहीं हो सकेगी। इस दलील के आधार पर गौवश की हत्या जारी रही। (सर्वोच्च न्यायालय ने भी इस दलील के आधार पर अनुप योगी बैलों, साण्डों का वध जारी रखा) पर गोवश की उन्नति नहीं हुई। सब सरकारी रिपोर्टों ने यह स्वीकार किया कि गोधन का ह्रास हो रहा है। गाय का दूध ४१३ पौंड से ३६१ पौंड तथा भैंस का दूध ११०१ पौंड से ९७० पौंड वार्षिक रह गया। गत

नाम प्रान्त	अनुपयोगी पशुओं की सख्या	गोमास मनों में	कीमत रुपयों में	खाद से आय	गोसदन पर खर्च
बिहार	५४४०१	३६०१०६५	२६०१०६५	१८८३६३४	६६७२१८
उत्तरप्रदेश	५१०००	३५७००००	३५७००००	१७३४०००	६१८०००
मध्यप्रदेश	४४०००	३५२००००	३५२००००	१४६६०००	७६२०००

कतल होने वाले पशुओं से केवल एक बार मास मिलता है, गोसदन में रखे जाने वृद्ध और अपग पशु से कम से कम तीन चार वर्ष तक खाद प्राप्त होगा। यहा एक साल की खाद की आय का हिसाब दिया गया है। तीन चार वर्ष तक खाद देने पर यह आय तीन चार गुणा अधिक बढ जाती

कुछ वर्षों में ही वार्षिक पाच करोड मन से अधिक दूध की कमी हुई है, बैलों की शक्ति में भी कमी आई। उच्च न्यायालय ने भी पशु विशेषज्ञों के आधार पर अनुपयोगी बैलों तथा साण्डों के वध का जो निर्णय किया है उससे पशुधन की उन्नति नहीं होगी।

प्रधान मन्त्री श्री नेहरू जी ने बार २ कहा है कि गोहत्या निषेध का विषय राज्य सरकारों के अधीन हैं। भारत के अटर्नी जनरल ने ६ मई १९५४ को लोकसभा में इसकी ही पुष्टि की। उचित था गोहत्या निषेध के मामले मे केन्द्रीय सरकार और उसके विशेषज्ञ हस्तक्षेप न करते, राज्य सरकारें जैसा उचित समझतीं करतीं पर जब बिहार, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में गोहत्या निषेध कानून बनान की बात चली तब केन्द्रीय पशु पालन विभाग के लोगों ने गोवश की हत्या जारी रखने की अनाध कार चेष्टा की। २१ मई १९५४ को केन्द्रीय कृषि मत्री श्री पजाबराव देशमुख ने कलकत्ते, बम्बई मे होने वाली अच्छे पशुओं की हत्या तथा फूके को बन्द करने आदि के लिये विशेषज्ञों की कमेटी बनाने की घोषणा की। इस कमेटी को देश मे होने वाली गोहत्या और गोसदनों के बारे मे सम्मति देने का अधिकार नहीं दिया गया और न ही दिया जा सकता था। सरकारी पशु विशेषज्ञों ने न हो चारे दाने का उत्पादन बढाया न गोसदनों को सफल बनाने की कोशिश की, नसल सुधार पर भी ध्यान नहीं दिया। गोहत्या जारी रखने और गोसदनों की अनुपयोगिता की बाबत सम्मति दी। इस अनधिकार चेष्टा के लिये विशेषज्ञों से सबधित मन्त्रियों ने जवाब तलब तक नहीं किया। बल्कि गुलजारीलाल नन्दा ने द्वितीय पचवर्षीय योजना रिपोर्ट में राज्य सरकारों को गोहत्या निषेध कानून बनाने के लिये इस विशेषज्ञ कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर निरुत्साहित किया या अप्रत्यक्ष रूप से गोहत्या जारी रखने का सुझाव दिया। सम्पूर्ण गोहत्या बन्द होने से पशु पालन विभाग के लोगों को कोई आर्थिक लाभ नहीं, आशिक या आयु विशेष के पशुओं का वध बन्द करने के कानून के पशु पालन विभाग के लोगों को कसाईखानों में अधिक नाकरिया ही नहीं मिलती, कसाई को उप योगी पशु के कतल से ही अधिक लाभ पहुचता है, अत उपयोगी पशु को अनुपयोगी लिखने के लिये पशु विभाग के लोगों को रिश्वत देता है, पशुपालन विभाग के लोग यही कोशिश करते हैं कि गोवश की हत्या सम्पूर्णतया बन्द न हो। कसाईयों के वकील की बहस का बडा आधार सरकारी विशेषज्ञों की रिपोर्ट तथा द्वितीय पचवर्षीय योजना ही था।

देश मे चारे दाने की कमी नहीं व्यवस्था की कमी है। कमी बतलाने की अपेक्षा सरकार और उसके विशेषज्ञ व्यवस्था को ठीक करते तो अच्छा था। व्यवहारिकता की दृष्टि से यह सिद्ध है कि जब तक गोवश मात्र की हत्या सम्पूर्णतया बन्द न होगी, तब तक न गाय बछडे बछडी कतल से बचेंगे न पशुओं की हालत सुधरेगी, न दूध का उत्पादन बढेगा। विधान की धारा १९ के अनुसार कसाईयों के गोहत्या करने को सरक्षण देना भारत के लिये एक आश्चर्य जनक घटना है। यदि सर्वोच्च न्याया-लय बार २ हिन्दुओं की साधनहीन कमजोरी तथा गोहत्या का अनुचित और आवश्यक समर्थन करने वाले शास्त्रों का जिकर न करता तो कोई हानि न थी।

राष्ट्रहित चाहने वाले लोगों से प्रार्थना है कि वह सुप्रीमकोट के निर्णय पर नहीं. उसके व्यव हारिक दुष्परिणामों पर गम्भीरता से विचार करें। और जब तक सरकार एक २ गाय बैल, साण्ड, बछडे, बछडी को कतल से बचाने तथा गोहत्या समर्थक विशेषज्ञों को निकालने के लिये बाध्य न हो तब तक शान्तिमय और वैध आन्दोलन जारी रखें। जनता भी यथा शक्ति और यथा साधन गायों की नसल का सुधार करने चारे का उत्पादन बढाने, चमडे की चीजों का व्यवहार न करने इत्यादि पर ध्यान दे।

ईसा के विचारों पर हिन्दू सिद्धान्तों की छाप

(श्रीयुत गगाशकर एम० ए०)

जब श्रीयुत बाबा सावरकर जी काला पानी मे थे तब उन्होंने "खिस्त परिचय" नामक एक पुस्तक मराठी मे लिखी थी। उसमें उन्होंने यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि "ईसा का जन्म या तो भारत मे हुआ या फिलिस्तीन मे बसने वाले किसी हिन्दू के घर में।' डाक्टर बुकानिन, मेजर विल्फोर्ड आदि ने लिखा है कि फिलिस्तीन, शाम, मिस्र, अबीसीनिया आदि मे हिन्दू जीवन के चिन्ह अब तक पाये जाते हैं। पादरी हेरास ने अपनी पुस्तक Proto -Indo Medi terra nean culture मे सप्रमाण सिद्ध किया है कि प्राचीन भारतीय ही जाकर उक्त देशों मे बसे थे। ऐसी दशा में हो सकता है कि ईसा का जन्म फिलस्तीन मे बसने वाले किसी हिन्दू घराने में हुआ हो। बाइबल में आये हुए शब्द 'गीधा' का अभिप्राय 'गीता' से है। फ्रेंच यात्री क्रेक्वोनियर का कहना है कि "तामिलनाड के हिन्दुओं और फिलिस्तीन के यहूदियों के रीति-रिवाज बहुत कुछ एक से हैं।"

पादरी गोपालाचारी का भी ऐसा ही मत है। सब से आश्चर्य जनक समता तो ईसा की मूर्तियों तथा चित्रों में मिलती है। फ्लोरेंस के एक चित्र में ईसा की माता हिन्दू रानी के वेष में दिखलाई गई है। वह हिन्दू आभूषण तथा साड़ी पहने हुए हैं और उसके मस्तक पर कुमकुम लगा है। यह चित्र ईस्वी सन् की पांचवीं शताब्दी का बतलाया जाता है। मिलन के गिर्जाघर में भी एक ऐसा ही चित्र है जो उसी समय का बतलाया जाता है। म्यूनिक के एक चित्र में ईसा सन्यासी वेष मे है और उनके मस्तक पर तिलक भी है। फ्लोरेंस की एक मूर्ति में वे यज्ञोपवीत धारण किये हुए हैं।

अपने जीवन में १८ वर्ष ईसा कहा रहे, इसका ईसाई ग्रन्थों में कोई उल्लेख नहीं। रूसी विद्वान डा० नोटो विच इस सम्बन्ध में ४५ वष तक अनुसन्धान करते रहे। अन्त मे वे इस निर्णय पर पहुँचे कि इन वर्षों मे ईसा भारत में रह कर हिन्दू शास्त्रों का अध्ययन तथा योगाभ्यास करते रहे। इसका प्रमाण उन्होंने तिब्बत के एक बौद्ध विहार के कुछ प्राचीन ग्रन्थों मे पाया। इसके उन्होंने तीन फोटो लिए जिनमे से एक उन्होंने पोप के पास भेजा। पोप ने उसे तुरन्त जला देने की आज्ञा दी और डा० नोटो विच को अपनी पुस्तक प्रकाशित न करने के लिए लिखा। पर उन्होंने उसे छपा ही दिया। उसका नाम है— 'Ihe unknown life of esus" "ईसा का अज्ञात जीवन।" कहा जाता है कि सिकन्दरिया के एक व्यक्ति ने ईसा के सूली दिये जाने का आखों देखा वर्णन अपने एक पत्र में लिखा था। सिकन्दरिया की खुदाई मे यह प्राप्त हुआ है। एक फ्रासीसी पुरातत्वज्ञ इसे जर्मनी ले गया, जहा लातिन भाषा से इसका अग्रेजी मे अनुवाद कराया गया। वह पत्र सर्व प्रथम १८७३ में अमेरिका में प्रकाशित हुआ, पर बाद में जब्त कर लिया गया। (सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्त्वावधान में यह पत्र मथुरा शताब्दि के अवसर पर क्रूसिफिक्शन बाई ऐन आई विटनेस के नाम से पुस्तकाकार छपा था इस पुस्तक का शीघ्र ही नया संस्करण छपने वाला है—सम्पादक) उस पत्र में बतलाया गया है कि "ईसा का शरीर मृत समझ पाइलट ने उसे उनके शिष्यों को दे दिया। वास्तव में वे मरे नहीं थे। वे किसी अज्ञात स्थान को चले गये। बंगाल के नाथ सम्प्रदाय में यह पद बहुत प्रचलित है—"(आवे) आख आशे ईशोद

गेल फिरलो मीर" अर्थात् ईशानाथ मृत्यु के बाद अरब गये। अरबी के इतिहास "तारीख आजम" में लिखा है कि 'ईसा काश्मीर की सीमा पर ठहरे थे।" स्व० मौलाना मुहम्मद अली का कुरान के अपने अंग्रेजी अनुवाद मे कहना है कि ईसा सूली पर मरे न थे। वास्तव मे उनकी मृत्यु कश्मीर मे हुई। वहा व योग सीखते रहे और समाधि अवस्था मे उनका शरीर छूटा।

ईसा चाहे भारत मे पैदा हुए हों या अन्यत्र, वे चाहे कभी भारत आये हों या न आये हों, उनके साथ किसी हिन्दू सन्त का सम्पर्क हुआ हो, अथवा न हुआ हो यह स्पष्ट है कि उनके विचारों पर हिन्दू सिद्धान्तों की छाप है। जो लोग भारत मे भक्तिवाद को ईसाई मत की देन कहते और मानते हैं और यह सिद्ध करने का असफल यत्न करते है कि कृष्ण का जन्म ईसा के पश्चात् हुआ वे बड़े भारी भ्रम में हैं और दूसरों की आखों मे वे धूल झोंकने का व्यर्थ प्रयास करते हैं।

जेल मे क्या देखा ?

(श्रीमती सावित्री गुप्ता भूषण (लुधियाना)

जब दिसम्बर की १ १२ ५७ तारीख को देवियों के सत्याग्रही जत्थे ने इस शहर ने प्रथम ही आर्य समाज दाल बाजार से प्रारम्भ करके मुहल्लों गलियों मे घूमते हुए आर्य समाज साबुन बाजार के सम्मुख आकर पुलिस को गिरफ्तारी दी उसी समय लेडी पुलिस ने पहुच कर लारी मे बन्द करके जेल मे पहुचा दिया। देवियों के सत्याग्रही जत्थे ने जेल के तृतीय द्वार पर पहुचते ही क्या देखा ?

इस जत्थे के आगमन से पूर्व ही जो विदुषी माता बहिनें वहां उपस्थित थीं, उन्होंने प्रसन्नता पूर्वक इस जत्थे का स्वागत किया। साथ हिन्दी मा के गीतों तथा नारों से आकाश को गुजायमान करके अन्त में भरत मिलाप करते देखा।

सायकाल के साढे पांच बजे होंगे और वार्तालाप करने के पश्चात् सन्ध्या की। भोजन खाने को मिला, जो कि निज के राशन में से ही उन माता बहिनों के नये जत्थों को भोजन बना कर खिलाया, अत वह भोजन बूढी माताओं ने प्रेम भाव से कराया, खाना बनाने व खिलाने का सेवा भाव का आदर्श देखा।

प्रात काल की अमृत बेला में अढाई तीन बजे से प्रारम्भ होकर पाच बजे तक सब बूढ़ी माता व युवती बहिनें नन्हें और बच्चे जग जाते थे। शौच, दातुन, स्नान तथा वस्त्र धोते समय समस्त हिन्दी प्यारियों को मौन रहन का नियम देखा।

ज्यों ज्यों स्नानादि कर्मों से निवृत्त होती जाती त्यों त्यों यज्ञशाला में एकत्रित हो जाती, पतित पावनी गायत्री गान से ब्रह्म यज्ञ आरम्भ होकर हवन यज्ञ यजुर्वेद तथा सत्यार्थप्रकाश की कथा, भजन गीत उपदेश, प्रार्थना, शान्ति पाठ के साथ उपासना का कार्यक्रम समाप्त होता, यज्ञ करने कराने का ढग यह देखा कि ११ अथवा १२ के लगभग वहा जत्थे थे एक दिन ही जिस जत्थे ने यज्ञादि सब कार्यवाही करनी करानी होती थी उसी जत्थे को सूचित कर दिया जाता था। अत किसी माता बहिन को निराश होते नहीं देखा।

इसके पश्चात् दूध चाय पानी चनों के साथ खाना प्रसन्नता पूर्वक प्रात का नाश्ता किया जाता। इस जेल में १०५ देविया तथा ३० के लगभग बच्चे थे, सब का नाम तथा गुण लिखने से लेख

लम्बा होने का भय है, परन्तु श्रीमती बहिन वेद कुमारी जी का नाम लुधियाना के प्रसग में विशेष है, उनका साहस अत्यधिक था उनके साथ तीन छोटे बच्चे थे, मेरे साथ दो छोटी बच्चिया थी एक की आयु ५ वर्ष और नाम अरुण प्रभा, दूसरी की आयु ४ वर्ष और नाम सरोजिनी देवी। एक छोटी बच्ची श्रीमती बहिन धर्मवती जी के साथ थी उसका नाम था प्रभा, पू० बहिन जी का यथा नाम तथा काम। इसी प्रकार इस जेल में वानप्रस्थिनी माताओं के अतिरिक्त विदुषी गुणवती माता तथा बहिनों को उत्तम विचारों की अमृतवर्षा करते देखा।

दोपहर के भोजन से पूर्व कईयों के पिता पुत्र भाई पति माता बहिनें इत्यादि सम्बन्धी मिलाप करने आते, दस पन्द्रह मिनट मिलने देते केवल केला, सगतरा, इत्यादि फलों की तो सम्बन्धी भर मार ही कर देते थे। लिखने के लिए कापिया और पढने के लिए पुस्तकों को माग होती थी। जेल का नाम भूल आश्रम प्रतीत होता था भोजन के पश्चात् मनमानी करते देखा।

एक मुट्ठी चने भी चबाने के लिए मिलते। साढे तीन बजे सत्सग प्रारम्भ होता, योग्यतानुसार प्रत्येक बहिन अपने विचार प्रकट करती थी, उपदेश व्याख्यान भी प्रतिदिन होते थे, सत्सग की समाप्ति पर वैदिक नारा ओ३म् कह कर भोजन के पीछे रात्रि के समय कई घण्टे सत्सग होता रहता।

लुधियाना जेल का जो स्टाफ था, उनका बताव इतना बुरा न था, वाणी से नहीं बिगड़ते थे, कमरे थोडे थे हमारी सख्या अधिक थी तम्बू लगा दिये। लकडी थोड़ी देनी दोनों समय निराहार ही रहते देखा।

इसी प्रकार इसी खेल में सुखप्रद तथा शान्तिदायक अवसर व्यतीत होता जितनी सहायता लुधियाना की हिन्दी रक्षा समिति ने की उसका धन्यवाद करना कठिन है। साबुन, चीनी, लकडी घीसामग्री इत्यादि बहुत वस्तुए लिए जिनकी गणना लेखनी से बाहर है बात क्या घटों ही जेल के सींखचों के आगे खडे देखा।

अमृतसर जेल मे क्या देखा

लुधियाना जेल से २४ १२ ५७ को अमृतसर पहुच कर दो दिन ठहरना पडा। २६ १२ ५७ को पुन सत्याग्रह कर दिया जो कि इस जत्थे का अन्तिम सत्याग्रह था। अब की बार इस जत्थे में बारह देविया और बारह ही बच्चे थे। सत्याग्रह अत्यधिक साहस के साथ किया। कई के साथ दो-दो तीन-तीन बच्चे थे। उन बच्चों ने भी बहुत वीरता दिखाई। इनमें एक सहर्षकुमार नाम का बच्चा जिसकी आयु साढे आठ के लगभग होगी यह बच्चा मेरे साथ था नारे लगा लगाकर सब का उत्साह बढाते देखा।

रात्रिको ८ बजे के लगभग देवियों के जत्थे ने कमरे में आकर देखा कि बहुत ही छोटा और भीतर ही पाखाना बना हुआ। २४ व्यक्ति बच्चों समेत जत्थे के एक बहिन पहिले ही नजरबन्द थी और तीन कई दिनों से सिकुड़ कर बैठी रही। दुर्गन्धि ने नाक में दम कर दिया।

जैसे तैसे रात बीती, अब दिन निकल आया प्रात काल सात बजे ताला खुला, तो शौच, दातुन, स्नान, कपडे धोये। सत्याग्रही वीरों ने चाय, डबल रोटी बिस्कुट भेजे और दोपहर पुन भोजन बनाकर भेजा व रोटी के साथ साबुत मूली काट धोकर सब भेजी यह भोजन कितना स्वादु था खूब खाते और हसते देखा। अधिक न लिखती हुई समाप्त करती हू।

ओ३म् शान्ति शान्ति शान्ति

*

गो-वध पर पूर्ण प्रतिबन्ध युक्तियुक्त

बिहार के अधिनियम के विरुद्ध चुनौती पर उच्चतम न्यायालय का निश्चय

२३—४—१९५८

उच्चतम न्यायालय ने आज यह निर्णय दिया कि सभी आयु की गौओं, बछड़ों और भैसों के वध पर पूर्ण प्रतिबन्ध पूर्णत उचित और वैध है तथा सम्विधान के अनुच्छेद ४८ मे जो निर्देश सिद्धान्त है उनके अनुरूप हैं।

न्यायालय ने यह भी निर्णय दिया कि भैसों, प्रजनन के काम में आने वाले साडों, खेत में काम करने वाले, बैलों (भैसे भी) के वध पर भी जब तक वे दुधारू हैं तथा भार ढोने के काम मे आते है, वध पर पूर्ण प्रतिबन्ध भी उचित और वैध है। परन्तु भैसों, साडों और बैलों (भैसे भी) के जब वे दूध देना बन्द कर दें, खेती के काम के न रहें या भारवहन के भी लायक न हों तब भी उनके वध पर प्रतिबन्ध सार्वजनिक हित की दृष्टि से युक्तियुक्त नहीं कहा जा सक्ता है।

इस निर्णय की दृष्टि से न्यायालय ने यह घोषणा की कि बिहार पशु सरक्षण और सम्वर्धन अधिनियम १९५६ के अधीन जहा तक सभी आयु की गौओं, बछड़ों, कटडी, भैंस और भैंसा, के वध पर प्रतिबन्ध लगाया गया है सवैधानिक रूप से वैध है और जहा तक भैंसों, साडों, और बैलों आदि के वध पर बिना किसी निरीक्षण या उनकी आयु या उपयोगिता का निश्चय किये बिना पूर्ण प्रतिबन्ध लगाने की बात है व्यापार की स्वतन्त्रता के आधार भूत सिद्धान्त का विरोधी है। अत इस सीमा तक यह कानून अवैध है।

उच्चतम न्यायालय ने उत्तर प्रदेश और मध्य-प्रदेश के भी गोवध प्रतिबन्ध के कानूनों को वैध करार दिया तथा उनकी उन धाराओं को अनुचित बताया जिनमें अनुपयोगी पशुओं के वध पर भी प्रतिबन्ध लगाया गया था।

न्यायालय ने मध्यप्रदेश के विधेयक में गोवश इतर पशुओं के वध के लिए अनुमति आदि लेने की जो नियन्त्रित व्यवस्था की गई है उसको भी वैध करार दिया।

इन तीनों कानूनों के विरुद्ध सवैधानिक औचित्य की चुनौती इन तीनों राज्यो बिहार, उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश मे कसाई का धन्धा करने वाले १२ मुसलमानों ने दी थी।

इन्होंने युक्ति दी थी कि इन कानूनों द्वारा सविधान के अनुच्छेद १४ मे दी गई सरक्षण की बात का उल्लघन होता है क्योंकि इस कानून का प्रभाव उन पर नहीं पडता जो बकरी आदि के मास का धन्धा करते हैं। सविधान के अनुच्छेद १९ (१) (जी) में व्यापार की जो स्वतन्त्रता प्रदान की गई है वह भी इस कानून से खण्डित हो जाती है।

मुख्य न्यायाधीश श्री एस आर. दास ने फैसला सुनाते हुए कहा कि देश मे दुधारू पशुओं, साडों और बैलों की कमी है अगर राष्ट्र को अपना स्वास्थ्य और पोषण कायम रखना है तो हमारे मवेशियों की हालत सुधरनी चाहिये। जो भी चारा उपलब्ध हो उसे दुधारू का काम करने वाले मवेशियों के लिए सुरक्षित रखा जाना चाहिए। बेकार पशुओं की रक्षा से देश के हितों को नुक्सान पहुचता है। वे उपयोगी पशुओं को चारे से वचित करते है और उन्हें जीवित रखने के लिए देश को बहुत धनव्यय करना पड़ता है जो अन्य आवश्यक कार्यों में काम आ सकता है।

साहित्य समालोचना

वेदिक वन्दन

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी महाराज आर्यसमाज के उद्भट वैदिक विद्वानों में से एक हैं। आपका सारा समय वेदों के अध्ययन और मनन में व्यतीत होता है। आपने वेद विषयक अनेक पुस्तकें लिखी हैं जिनका विद्वानों और सर्वसाधारण स्वाध्याय शील जनता ने समान रूप से आदर किया है। आपने अपनी नई पुस्तक 'वैदिक वन्दन' अभी हाल में प्रकाशित की है, इस पुस्तक में वेदों के कतिपय भक्ति प्रधान सूक्तों और अध्यायों तथा अनेक प्रकीर्ण मन्त्रों की सारगर्भित सक्षिप्त आध्यात्मिक व्याख्या की गई है। व्याख्या सरल सुन्दर और प्रेरणाप्रद है। मन्त्रों और सूक्तों के ऋषि और देवता वाचक पदों से जो भाव ध्वनित होते हैं उनका मन्त्रों के वर्णनीय विषय के साथ समन्वय करने का भी प्रशसनीय प्रयत्न किया गया है। यह पुस्तक आपके अन्य ग्रन्थों की भांति ही वेदों के प्रति आपकी श्रद्धा तथा आपकी योग्यता एव विद्वत्ता के अनुरूप ही सम्पन्न हुई है। प्रत्येक स्वाध्याय शील व्यक्ति के लिए यह पुस्तक सग्रह करने योग्य है।

प्रियव्रत,
आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी,

स्वामी ब्रह्ममुनि जी आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध प्रतिभाशाली विद्वान् हैं इनकी "वैदिक वन्दन" पुस्तक में अध्यात्म विषयक वेदों के १४ सम्पूर्ण सूक्तों वा अध्यायों और ईश्वर, जीवात्मा, मन, मोक्ष ध्यान, अभ्यास, वैराग्य, योग इत्यादि विषयक १४ विषयों के १५० प्रकीर्ण मन्त्रों का भी सरल किन्तु विद्वत्ता पूर्ण व्याख्या मन्त्रों के ऋषियों देवताओ की सगति लगाते हुए की है जो न केवल सभी अध्यात्म जिज्ञासुओ के स्वाध्याय के लिए अत्यन्त उपयुक्त होगी किन्तु आर्यसमाजों के सत्सगों मे कथा प्रवचनादि के लिए भी सर्वथा लाभ प्रद सिद्ध होगी। प्रत्येक प्रकरण के मन्त्रों के अन्त में सम्पूर्ण प्रकरण का साराश सरल शब्दों मे दे दिया गया है। पाद टिप्पणियों मे विद्वानों के लाभार्थ धात्वर्थ तथा ब्राह्मण ग्रन्थ, निघण्टु, निरुक्तादि के प्रमाण अपने अर्थ के समर्थन मे दिये गए हैं। इस प्रकार यह ग्रन्थ वैदिक अध्यात्म वाद के सच्चे स्वरूप को समझने के लिए अत्यधिक उपयोगी बन गया है। हमे तो इसके पढने में इतना आनन्द आया कि ४ दिनों मे ही हमने इसको समाप्त करके विशेष लाभ उठाया। अत हम बडे विश्वास के साथ इससे लाभ उठाने के लिए सब अध्यात्म प्रेमियों और जिज्ञासुओं को प्रेरित करते हैं। पुस्तक सजिल्द ४३६ पृष्ठ कागज छपाई बढिया मूल्य ५॥)

धर्मदेव
विद्यावाचस्पति विद्यामार्तण्ड
गुरुकुल कांगड़ी

मिलने का पता—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
श्रद्धानन्द बलिदान भवन, दिल्ली-६

सार्वदेशिक विद्यार्य सभा देहली कार्यालय रायबरेला

परीक्षा फल फाल्गुन परीक्षा सं० २०१४ वि०

निम्नलिखित परीक्षार्थी उत्तीर्ण घोषित किये जाते हैं —

आर्य सिद्धान्त रत्न परीक्षा

केन्द्र	क्रमाक	नाम विद्यार्थी	पत्र १	पत्र २	पत्र ३	योग	श्रेणी
ज्वालापुर	४	चन्द्रपालसिंह	४६	३४	३०	११३	तृतीय
	५	कैलाशचन्द्र	६०	४४	५३	१५७	द्वितीय
	६	श्री नारायण उपाध्याय	४०	३३	३०	१०३	तृतीय
	७	अशोक कुमार जोशी	३६	२४	४०	१०३	,,

आर्य सिद्धान्त भूषण परीक्षा

केन्द्र	क्रमाक	नाम विद्यार्थी	पत्र १	पत्र २	योग	श्रेणी
सीसामउ कानपुर	१	सेवाराम मदान	५६	६१	१२०	प्रथम
जयपुर	२	राम मनोरथ लाल	६७	५३	१२०	,,
पीलीभीत	४	सुमन लता	३४	३३	६७	तृतीय
	८	किरण वर्मा	५८	३३	६१	द्वितीय
	९	पद्मा मसीन	५४	४०	६६	,,
	१०	खेम कुमारी	३६	३३	६६	तृतीय
ज्वालापुर	१४	कुलदीपचन्द्र गुप्त	५५	६३	११८	द्वितीय
	१५	नरदेव शर्मा	६५	७४	१३६	प्रथम
	१६	देवव्रत वर्मा	३६	६०	६६	द्वितीय
	१७	जागेश्वर प्रसाद	४७	४६	६३	,,
बदायूं	१८	निबाहूराम नारग	५५	५४	१०६	,,
	१९	महेन्द्र नाथ	६३	६१	१२४	प्रथम
झांसी	२०	नीलम रानी	४५	३३	७८	तृतीय

आर्य सिद्धान्त विशारद परीक्षा

केन्द्र	क्रमाक	परीक्षार्थी	ल०	फल	केन्द्र	क्रमाक	परीक्षार्थी	ल०	फल
अनूपशहर	१	मालती देवी	३४	३य		४	जगरानी	३५	,,
	२	शशिप्रभा	३३	,,		५	शीला रानी	४३	,,
	३	मनोरमा देवी	४०	,,		६	प्रभा देवी	३२	,,

केन्द्र	क्रमांक	परीक्षार्थी	ल०	फल	केन्द्र	क्रमांक	परीक्षार्थी	ल०	फल
इटावा	७	कुमारी सुनीति	४५	२य		५५	कुमारी कान्ति देवी	४५	२य
	८	सुशील कुमारी	४०	३य		६०	वीना कुमारी	४५	,,
	९	सन्तोष कुमारी	३३	३य		६३	कुन्ती देवी	७०	१म
	१०	पुष्पा रायजादा	५२	२य		६४	विमला देवी प्रभा	६५	,,
	११	शशि रायजादा	६२	१म		६६	नमिता मिश्रा	६७	,,
	१२	गोविन्द नारायण	६३	१म		६८	सन्तोष कुमारी	३४	३य
	१३	हरदयाल जाटव	३३	३य		६९	वीना देवी	३५	,,
कचौरा	१४	बनवारीलाल	३४	,,		७०	हंसा देवी	४५	२य
	१५	श्री कृष्ण	३३	,,		७१	शशि बाला	३४	३य
	१६	देवकीनन्दन	३३	,,		७४	मीनाक्षी	४५	२य
	१७	ज्ञानेन्द्रसिंह	३९	,,		७५	कमला चैनानी	६०	१म
	१८	राजेन्द्रसिंह	३३	,,		७७	प्रेमलता	६६	,,
	२०	राजवीरसिंह यादव	३३	,,		८०	अरुणा जौहरी	३५	३य
	२१	राजवीरसिंह	३४	,,		८१	कमला मिश्रा	३६	,,
	२२	रामावतारसिंह	३९	,,		८२	मंजुल मिश्रा	४२	,,
	२३	मातादीन	३३	,,		८३	कृष्णा खरे	३७	,,
	२४	महेन्द्रपालसिंह	३५	,,		९१	सरोज	५६	२य
	२५	जगदीशप्रसाद	३६	,,		९२	प्रतिमा देवी	६१	१म
	२६	गणपति देव	३३	,,		९३	कलावती द्वितीय	५७	२य
	३०	श्यामसुन्दर	४६	२य		९४	सुमन बाला चावला	६२	१म
	३३	मन्नुलाल आर्य	४५	,,		९५	सरोज देवी द्वितीय	६६	,,
	३४	राधाकृष्ण	३३	३य	पीलीभीत	९७	शान्ति देवी	३३	३य
	३६	लक्ष्मी नारायण	३३	,,		९८	लक्ष्मी देवी	३६	,,
	३७	नैपालसिंह	३५	,,		९९	लक्ष्मी देवी	३४	,,
	४०	सुनीति देवी	३८	,,	लुधियाना	१०७	मनोहरलाल शर्मा	७७	१म
	४१	दयाप्रकाश	३६	,,		१०८	योगेश्वरसिंह	७५	,,
	४२	भगवानदास	३४	,,		१०९	मदनलाल नारंग	७८	,,
सीखामद	४५	शरणसिंह	३३	१म		११०	रवीन्द्रनाथ बत्रा	७६	,,
कानपुर	४६	घनश्याम बीदानी	७०	१म		१११	कृष्णलाल	७४	,,
जयपुर	४७	रामसुख तंवर	३६	३य		११२	हरीश कुमार	७८	,,
	४८	यशोदा विजय	४५	२य		११३	कृष्णलाल चावला	७१	,,
झांसी	५०	कुसुम कुमारी	४०	३य		११४	चिरंजीतराय	६९	,,
	५१	पद्मा कुमारी	३३	,,		११५	अमीरचन्द	७५	,,
	५३	शशि कान्ता	३३	,,		११६	गिरधारीलाल	७७	,,

केन्द्र	क्रमांक	परीक्षार्थी	ल०	फल
	११७	भारत भूषण	७५	
	११८	भूपेन्द्र नाथ	७४	
	११९	राजेन्द्र कुमार	७९	,
	१२०	भगवानलाल	७५	,,
	१२१	विनोदकुमार	७१	,
ज्वालापुर	१२२	ब्र० रामानन्द	६३	,
	१२३	,, गगाप्रसाद	६४	,,
	१२४	रामावतार	६३	,,
	१२५	विश्वनाथ प्रसाद	५९	२य
बदायू	१२६	राधा कृष्ण	६०	१म
	१२७	शिवेन्द्रमोहन	६०	,
	१२८	भगवान स्वरूप	५९	२य
	१२९	विजयशकर	६८	१म
	१३०	रामगोपाल गौड	६४	,,

केन्द्र	क्रमांक	परीक्षार्थी	ल०	फल
	१३१	मिश्रीलाल	६९	,,
	१३३	गुरुप्रसाद	५६	,,
	१३४	हीरालाल	६५	१म
	१३५	हरिशकर शर्मा	८०	,

विवरण

परीक्षा	सम्मिलित	उत्तीर्ण	प्रतिशत
विशारद	१०३	९२	८७ ३ प्र०श०
भूषण	१६	१३	८१ प्रतिशत
रत्न	४	४	१०० प्रति०

सब परीक्षाओं मे सर्व प्रथम हरिशकर शर्मा बदायू केन्द्र

वीरेन्द्र शास्त्री एम० ए०
मन्त्री

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति का निश्चय

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति देहली की दिनाक २७ ४ ५८ की बैठक मे जो प्रात काल ८ बजे से श्रद्धानन्द बलिदान भवन मे श्री माननीय घनश्यामसिंह जी गुप्त की अध्यक्षता मे हुई पारित प्रस्ताव —

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति का यह अधिवेशन अनुभव करता है कि हिन्दी सत्याग्रह के स्थगन के अवसर पर सरकार तथा काग्रस के उच्चतम नेताओं द्वारा अपने सार्वजनिक भाषण में तथा अन्य प्रकार से पजाब की भाषा समस्या को शान्त वातावरण मे सुचारू रूप से हल करने का जो विश्वास दिलाया गया था उसे कार्यान्वित करने की दिशा मे गत चार मास से कोई सक्रिय पग नहीं उठाया गया जिसके फल स्वरूप जनता में बेचैनी एव रोष बढ़ता जा रहा है और सरकार के प्रति उनका विश्वास उठता जा रहा है। ऐसी विषम परिस्थिति में समिति अपने उत्तरदायित्व का अनुभव करते हुए सरकार से कहना चाहती है कि जनता की भावनाओं को ध्यान मे रखते हुए पजाब की भाषा समस्या को जो कि भाई को भाई से लड़ाने का एक कारण बन गया है इस प्रकार हल करने के लिए निकट भविष्य मे कोई सक्रिय पग उठावें जिससे उचित तथा न्यायपूर्ण समाधान हो सके। साथ ही समिति हिन्दी प्रेमी जनता को बताना चाहती है कि उसे इसका पूरा ज्ञान है कि आर्यसमाज मे और उसके समर्थकों में वास्तविक समय पड़ने पर त्याग और बलिदान का अटूट सामर्थ्य है।

आगामी ९ जून को सारी परिस्थिति को ध्यान मे रखते हुए हिन्दी रक्षा आन्दोलन के सम्बन्ध में भावी कार्यक्रम निर्धारित करने के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरग सभा सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति तथा पजाब हिन्दी रक्षा समिति की एक सयुक्त बैठक होगी।

नोट—(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत चौथाई धन अगाऊ रूपमें भेजें। (२) बोक ग्राहकों को नियमित

ग्रहण और दान

नवीनतम ट्रैक्ट

इस ट्रैक्ट से सूर्य और चन्द्र ग्रहण के पौराणिक आधार का खण्डन और वैदिक एव वैज्ञानिक आधार का मडन किया गया है। साथ ही दान की उत्तम और निष्कृष्ट प्रणालियों पर विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। शास्त्रीय प्रमाणों और उत्तम कहानियों से परिपूर्ण। मूल्य ‑)॥ ७॥) सैकड़ा

मिलने का पता—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली-६

प्रचारार्थ सस्ते ट्रैक्ट

१. आर्य समाज के मन्तव्य
लेखक—श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी शास्त्रार्थ महारथी — मूल्य ‑) प्रति ५) सैकड़ा
२. शका समाधान " " — मूल्य)॥ प्रति ३) "
३. आर्य समाज लेखक—श्री डा० रामगोपाल जी — ")॥ " २॥) "
४. पूजा किस की ? " " — ")॥ , २॥) "
५. भारत का एक ऋषि लेखक—रोमा रोल्या — " ‑) " ५) "
६. गोरचा गान — ")॥ " २॥) "
७. स्वतन्त्रता खतरे में लेखक- श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी — ")॥ " २॥) "
८. दश नियम व्याख्या ‑)॥ ७॥) सै०
९. आर्य शब्द का महत्व ‑)॥ " "
१०. तीर्थ और मोच ‑)। " "
११. मांसाहार घोर पाप ‑) ५) सै०
१२. स्वर्ग में हड़ताल =)
१३. भारत मे जाति भेद ।=)

हजारों की सख्या मे मंगाकर साधारण जनता में वितरित कर प्रचार मे योग दें।

प्राप्ति स्थान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली ६

सार्वदेशिक में विज्ञापन देकर लाभ उठावें

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
१ पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " "	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई "	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

२ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

व्यवस्थापक—'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली-६ से प्रकाशित।

ओ३म्

कृण्वन्तोविश्वमार्यम्

सार्वदेशिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री स्वामी अभेदानन्द जी महाराज का

आर्य-जगत को सन्देश

[गतांक से आगे]

सभी साधु सन्यासी, उपदेशक और प्रचारक (भजनोपदेशक) को आर्य समाज के गठन में महत्त्व और गौरव पूर्ण स्थान हो, ऐसा समझते हुए परस्पर मृदुल व्यवहार होना चाहिये और उन्हें भी सभा और समाज के अधिकारियों तथा कार्य कर्त्ताओं के साथ यथोचित सम्मान देने में किसी प्रकार की दुर्बलता का शिकार नहीं बनना चाहिये।

अधिवेशनों, उत्सवों और विशेष समारोहों के अवसरों पर नित्य धार्मिक-कृत्यों को समुचित रूप में सम्पन्न कराते रहना चाहिये।

इस जन जागरण के युग में अपने अपने आर्य-समाज और संस्थाओं के नेताओं और अधिकारियों का सम्पर्क और सम्बन्ध अन्यान्य संस्थाओं, और शासनाधिकारियों से रखना आवश्यक समझते हुये, अपनी गतिविधि से उन्हें परिचित कराते रहना और उनकी गतिविधि से स्वयं परिचित होते रहना चाहिये।

सम्पादक—सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक | मूल्य स्वदेश ५) विदेश १० शिलिंग | जोलाई १९५८

विषय सूची

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा दिल्ली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३३ } जौलाई १९५८. श्रावण २०१५ वि०, दयानन्दाब्द १३४ { अङ्क ५

वैदिक प्रार्थना

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ऋग्वेद

व्याख्या—हे सर्वाधिस्वामिन्! आप ही चर और अचर जगत् के ईशान (रचने वाले) हो "धियजिन्वम्" सर्वविद्यामय विज्ञानस्वरूप बुद्धि को प्रकाशित करने वाले प्रीणनीयस्वरूप "पूषा" सब के पोषक हो, उन आपका हम "न, अवसे" अपनी रक्षा के लिये "हूमहे" आह्वान करते हैं। "यथा" जिस प्रकार से आप हमारे विद्यादि धनों की वृद्धि वा रक्षा के "अदब्ध रक्षिता" निरालस रक्षा करने में तत्पर हो वैसे ही कृपा करके आप "स्वस्तये" हमारी स्वस्थता के लिये "पायु" निरन्तर रक्षक (विनाश निवारक) हो आप से पालित हम लोग, सदैव उत्तम कामों में उन्नति और आनन्द को प्राप्त हों ॥

मानव-निर्माण की योजना

श्रीयुत प० जवाहरलाल जी नेहरू ने जून के दूसरे सप्ताह मे दिल्ली मे आयोजित एक प्रेस कान्फ्रेंस मे एक बडी महत्त्व पूर्ण बात कही थी और वह यह कि हमे उत्तम मनुष्यो की उत्पत्ति पर विशेष ध्यान देना चाहिए क्योंकि विश्व को आज उनकी बडी आवश्यकता है।

श्री नेहरू जी के शब्द इस प्रकार है—

"भारत मे तथा अन्यत्र वास्तविक समस्या उत्तम मनुष्यो की उत्पत्ति की है। यदि मनुष्य श्रेष्ठ हों तो सब बातें ठीक हो सकती है। यदि मनुष्य ठीक न हो तो हमारी आधार शिला सबल नहीं हो सकती। कृषि और उद्योग धन्धों मे सम्पत्ति का लगाया जाना महत्त्वपूर्ण है परन्तु मनुष्य को मनुष्य बनाने के लिए योजना का बनाया जाना उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।"

यह कितने दुर्भाग्य की बात है कि इस २० वीं शती में इस समय ऐसा महान् व्यक्ति उपलब्ध नहीं है जिस पर ससार के स्वस्थ मार्ग प्रदर्शन के लिए जन साधारण की दृष्टि ठहर सके। क्या ससार निरन्तर तनाव और अशान्ति की स्थिति बनाए रखने वाले सत्ताधारी राजनीतिज्ञों के हाथों मे अपना कल्याण सुरक्षित समझ सकता है? क्या ससार उन नेताओं पर निश्चिन्त रह सकता है जिनकी योजनाओं में चाहे वे राजनैतिक हों, या सामाजिक या धार्मिक मानव की मानवीय विशेषताओं का मूल्य उसी सीमा तक रहता हो जिस तक उनके प्रभुत्व और स्वार्थ पर आच न आती हो और जिसके आगे मानव और मानवता का कोई मूल्य न रहता हो?

यह भारत का सोभाग्य है कि यहां जीवन का दृष्टिकोण एक मात्र राजनीति से प्रभावित नहीं है। यही कारण है कि बाहर के अशात और सतप्त लोग विश्व शान्ति के लिए भारत की ओर आखें लगाए हुए है। यहा मानव को राजनैतिक चश्मे मे से देखकर ही उसका मूल्याङ्कन नही किया जाता और ना ही यहां वह यत्र की तुलना मे हेय ही समझा जाता है।

साम्यवादी समाज—व्यवस्था मे मनुष्य वह यन्त्र समझा जाता है जो राज्य के लिए काम करता रहे और राज्य के लिए जो बात ठीक हो वही उसके लिए ठीक हो। पाश्चात्य समाज व्यवस्था पर मनुष्य अनुचित रूप से छाया हुआ है। दोनो ही व्यवस्थाओमे निर्बलको जीनेका अधिकार नहीं माना जाता। राजनीति जिस बात को ठीक समझती है वही ठीक है भले ही धर्म और नीति की दृष्टि से वह हेय और अग्राह्य क्यों न हो।

श्री नेहरू की कल्पना का मनुष्य वह है जो सच्चा और ईमानदार हो। यदि वह व्यापारी है तो चोर बाजारी और नफे खोरी से पृथक् रहता हो। यदि वह सरकारी नौकर है तो वह हर प्रकार से विशुद्ध और कर्त्तव्य परायण हो। यदि वह देश भक्त है तो अपने स्वार्थ को एक ओर रखकर निष्काम भाव से देश की सेवा करता हो, जो प्रान्तीयता, जातीयता आदि की सकुचित भावनाओं के प्रभावो से ऊपर रहता हो। उनकी कल्पना का मनुष्य बुद्धि वादी (वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखनेवाला) हो और विश्व को कुटुम्ब मानने की प्रवृत्ति रखने वाला हो।

निस्सन्देह श्रेष्ठ मनुष्य का निर्माण राजनीति की गोद मे नहीं अपितु धर्म की गोद मे हुआ करता है। परन्तु दुर्भाग्य से नेहरू जी को धर्म और ईश्वर से बडी भारी चिढ है इसीलिए राज्य मे धार्मिक वातावरण के बनाए जाने की घोर उपेक्षा हो रही है और हमारी जो कुछ पुरानी सम्पत्ति है उसे

नष्ट किए जाने का प्रयत्न हो रहा है। यह स्थिति एकदम अवाञ्छनीय और घातक है।

वेद मे मनुष्य को मनुष्य बनने की प्रेरणा की गई है 'मनुर्भव (ऋ० १०।५३।६) ईसाई, मुसलमान बौद्ध आदि बनने केलिए नहीं कहागया है। क्यो? इसलिए कि इन से भाई २ का विरोधी और शत्रु बनता और वसुधैव कुटुम्बकम् के आदर्श की पूर्ति में व्यवधान उपस्थित होता है।

वेद मे कहा गया है कि मनुष्य ससार का ताना बाना बुनता हुआ भी प्रकाश का अनुसरण करे अर्थात् उसके समस्त कर्म शुभ और ज्ञान मूलक होने चाहिए। अज्ञान और अधकार मृत्यु है। उसे पूर्वजों के ज्ञान की रक्षा कर उस ज्ञान मे वृद्धि करने का कारण बनना चाहिए। इतना ही नहीं दिव्य जनों को उत्पन्न करना भी उसका एक महान दायित्व है।

मानव को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के लिए मनुष्य शरीर प्राप्त होता है। धर्माचरण से ही मनुष्य इनकी सिद्धि करता और स्वय श्रेष्ठ और दिव्य बनता है।

राजनीति का कार्य मनुष्य को धर्माचरण करने मे समर्थ बनाना होता है परन्तु यह सब श्रेष्ठ शासकों पर निर्भर करता है। इस सम्बन्ध मे चीन के सत कन्फ्यूशस की शिक्षाओ और व्यवहार से बहुत कुछ सीखा जा सकता है।

कन्फ्यूशस तत्त्ववेता शासक थे। वे एक प्रान्त के मुख्य न्यायाधीश बनाए गए। २ वर्ष के काल में ही वह प्रान्त सुखी और समृद्ध हो गया। इसका रहस्य उन्ही के शब्दोंमें सुनिए "मैने भले आदमियो को पुरस्कृत और बुरों को दण्डित किया। जब लोगो ने देखा कि भला बनना अच्छा और बुरा बनना बुरा है तो वे अच्छे बन गए। श्रेष्ठ व्यक्ति एक दूसरे के प्रति तथा राज्य के प्रति निष्ठावान होता है। मैंने बुद्धिमान पुरुषों को बुरे आदमियों के शिक्षण के लिए नियत किया। यद्यपि लोग सदैव शिक्षित नहीं किए जा सकते तथापि वे अनुसरण अवश्य करते है। जब वे श्रेष्ठ और बुद्धिमान् पुरुषों का अनुसरण करते हैं तब वे सुखी हो जाते हैं। मैंने जेलों में जाकर कैदियों का निरीक्षण किया। मुझे विदित हुआ कि लगभग सभी कैदी निर्धन और अज्ञानी है निर्धनता और अज्ञान के वशीभूत होकर ही मनुष्य अपराध करता और कानून का उल्लघन करता है। यदि अज्ञान और निर्धनता दूर हो जाय तो अपराध न हों। शिक्षा के द्वारा अज्ञान को मिटाया और लोगों को उपयोगी उद्योग धन्धे सिखाए जिससे वे ईमानदारी से पूर्ण आजिविका प्राप्त कर सकें। लोगों को ऐसे शासकों की आवश्यकता होती है जिनका वे अनुसरण करसकें। यदि शासक भ्रष्टाचारी होंगे तो प्रजा भी भ्रष्टाचारी होगी। यदि शासक भले होंगे तो प्रजा भी भली होगी। उत्तम कर्म करने का पहला नियम यह है कि तुम वह काम मत करो जिसको तुम चाहते हो कि दूसरे तुम्हारे प्रति न करें। इन उपायों का फल यह हुआ कि लू प्रान्त की जेलें और अदालतें २ वर्ष मे खाली और वीरान हो गई।'

आज विश्व को ऐसे ही तत्त्ववेत्ता धार्मिक शासकों की आवश्यकता है। उन्हीं के हाथों मानव निर्माण की श्रेष्ठ योजनाए मूर्त्त रूप धारण कर सकती है।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

श्री प० प्रकाशवीर जी की विजय

श्रीयुत प० प्रकाशवीर जी शास्त्री के नाम के साथ ससद सदस्य (ऐम० पी०) शब्द का प्रयोग करते हुए बड़ा हर्ष होता है। बिना किसी दल के अनुशासन से बचे हुए आर्य समाज के एक सम्मानित सदस्य का स्वतन्त्र रूप मे चुनाव मे विजयी

होना आर्य जनों के लिए बड़े गौरव की बात है। इसके लिए वे अपने को जितना अधिक गौरवा न्वित समझें उतना ही कम है।

श्री प्रकाशवीर जी जी की टक्कर कांग्रेस के प्रत्याशी श्री मौलिचन्द्र शर्मा के साथ थी। श्री शर्मा जी आर्य समाज के निकट समझे जाते हैं अत उनके साथ आर्य समाज के एक सदस्य की टक्कर वाञ्छनीय न थी। श्री प्रकाशवीर जी तथा उनके समर्थक इस टक्कर को बचाने के लिए जहा तक जा सकते थे गये। उनकी माग थी कि पडित जी स्वतन्त्र रूप से खड़े हों तो प्रकाशवीर जी अपना नाम वापस ले लेंगे। परन्तु वे इसके लिए उद्यत न हुए। फलत टक्कर हुई और श्री शास्त्री जी ३८ हजार वोटों के बहुमत से विजयी हुए। गुड़गावा की इस सीट पर कांग्रेस का एकच्छत्र अधिकार चला आता था। स्व० मौलाना आजाद के निधन पर यह स्थान रिक्त हुआ था। कांग्रेस के इस अभेद्य दुर्ग का भेदन करना सरल कार्य न था। परन्तु गुड़गावा के मतदाताओं के निर्णय से यह बात स्पष्ट हो गई है कि यह गढ़ टूट गया है। गुड़गावा के मतदाताओं ने अपने मत को तोला और उसका सदुपयोग किया। पजाब में हिन्दी के प्रति घोर अन्याय होने से जनता पजाब तथा केन्द्रीय सरकार से बहुत रुष्ट है। प०प्रकाशवीर जी की विजय और कांग्रेस की पराजय में इस रोष की अभिव्यक्ति भली भाति हो गई है। यह विजय हिन्दी आदोलन के सत्प्रभाव और उसकी सफलता की द्योतक नहीं तो क्या है?

यद्यपि यह चुनाव स्वतन्त्र रूप से लड़ा गया आर्य समाज का सामूहिक रूप से इसके साथ कोई सम्बन्ध न था, इसे आर्य संस्कृति के प्रेमी राजनैतिक दलों और व्यक्तियों का समर्थन और साहाय्य प्राप्त था, तथापि आर्य समाज को इस चुनाव की विजय में सामूहिक रूप से हर्ष और गौरव अनुभव हो सकता है कि उसका एक योग्य प्रत्याशी चुनाव के मैदान में खड़ा हुआ। आर्य समाज देश को उत्कृष्ट व्यक्तित्व प्रस्तुत करता रहा है। इस चुनाव में इसी परम्परा की रक्षा हुई।

इस चुनाव के परिणाम पर कांग्रेस को अपनी स्थिति पर गभीरता पूर्वक विचार करने की आव श्यकता है। सर्व साधारण जनता पर से उसका प्रभुत्व क्यों हटता जा रहा है इस पर भी उसे विचार करना है। शासन की त्रुटिया और देश के भाग्य का भारतीय आदर्शों की अवहेलना पूर्वक पाश्चात्य भौतिक आधार पर पुनर्निर्माण ये दोनों ही कांग्रेस के वर्चस्व के ह्रास का कारण बन रहे हैं। यदि कांग्रेस की रीति नीति और उसके कर्ण धारों में अपेक्षित सुपरिवर्तन न हुआ और जनता को सुशासन प्राप्त न हुआ तो वह दिन दूर नहीं जब अनेकों प्रकाशवीर शास्त्री राजनीति में प्रविष्ट कर जायगे, आत्म सवर्द्धन केलिए नहीं अपितु इस विचार को लेकर कि भले व्यक्तियों का राजनीति की गदगी से दूर रहना अपराध है जब कि वे अयोग्य शासन से परिपीड़ित हों।

श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री को हम क्या बधाई दें? हमारी शुभ कामनाए उनके साथ रही हैं और वे निरन्तर उनकी विजय की माला गूथती रही हैं।

संगीत शास्त्र का उद्धार

यह सत्य है कि आर्य समाज में सगीत की विशेषताओं पर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता। दु ख है कि प्रार्थना के भजन भी थियेटर की तर्ज पर गाये जाते हैं और श्रोताओं में भी गम्भीरता का भाव नहीं होता। यह भुला दिया जाता है कि भजनीक भी एक प्रकार का उपदेशक ही है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि यदि उपदेष्टा के जीवन में वह चीज न हो जिसका वह उपदेश कर रहा है तो उसका श्रोताओं पर कुछ प्रभाव नहीं हो सकता। हमें अपनी सगीत योजना में हारमोनियम की अपेक्षा सितार, वीणा आदि

का प्रयोग अधिकाधिक करना चाहिए।

साप्ताहिक सत्संगों में खण्डन के भजन बेतुके जान पड़ते हैं। इनके स्थान में शुद्ध भक्ति रस से परिपूर्ण भजन होने चाहिएं। अधिकांश भजन वेद मन्त्रों के आधार पर बने हुए होने से अधिक प्रभावोत्पादक होंगे। शान्ति प्रकरण और स्वस्ति-वाचन के मन्त्रों का सरल हिन्दी में पद्यानुवाद बड़ा उपयोगी सिद्ध हो सकता है। पर्वों तथा संस्कारों के अवसरों पर उन्हें स्त्री पुरुषों को मिल कर गाना चाहिए। गायन में सभी को सम्मिलित होना उचित है।

दुर्भाग्य से आर्य समाज में गाना छोटे आदमियों का काम समझा जाता है। इसी लिए आर्यों ने गान विद्या से यथोचित लाभ नहीं उठाया। हमें क्षमा किया जाय यदि हम यह कहें कि आर्य समाज में कुछ अपवादों को छोड़ कर भजनीकों की ऐसी जमाअत पैदा हो गई है जिनके साथ आर्य समाजका भविष्य भी खतरेमें देखपड़ता है। अत इस कृत्रिम जमाअत को हटा कर स्वयं नर नारियों को प्रभु के गुण गान में सम्मिलित होना चाहिए। सूरदास, कबीर, मीरा आदि भक्तों के अमर गीतों में से भी वैदिक सिद्धान्तानुकूल गीतों को लेकर एक संग्रह तैयार होना चाहिए जिसका उपयोग मुख्यत सत्संग के अवसर पर किया जाय।

हिन्दी शिक्षा संघ (दक्षिण अफ्रीका)

आर्यसमाज ने प्रवासी भारतीयों में जहां प्रचार और सुधार का प्रशंसनीय कार्य किया है वहां हिन्दी को लोकप्रिय बनाने की दिशा में भी बहुत कुछ किया है। धर्म प्रचार, समाज सुधार और हिन्दीप्रचार का कार्य अबभी द्रुतगति से चलू रहा है। भारत की राष्ट्र भाषा हिंदी बनजाने पर तो यह कार्य विदेशों में बड़े पैमाने पर होने लगा है।

दक्षिण अफ्रीका में हिन्दी प्रचार का योजनाबद्ध कार्य 'हिन्दी शिक्षा संघ' के द्वारा हो रहा है जिसकी स्थापना २५-४-१९४८ को आर्य प्रतिनिधि सभा दक्षिण अफ्रीका द्वारा आयोजित एक वृहत् सम्मेलन में हुई थी।

दक्षिण अफ्रीका में हिन्दी प्रचार कार्य का सबसे बड़ा श्रेय श्री स्व०स्वामी भवानीदयालजी को प्राप्त है। उपर्युक्त सघकी स्थापना गुरुकुल कांगड़ीके स्नातक पं० नरदेव जी वेदालङ्कार के सत्प्रयत्नों से हुई थी। सघ की लगभग ५० शाखाए कार्य करती हैं। अनेक विद्यार्थियों ने 'कोविद' की तथा एक विद्यार्थी ने 'रत्न' की परीक्षा पास करली है। सघ की कार्य-विधि इस प्रकार है —

(१) सम्बद्ध हिन्दी स्कूलों में एक जैसी व्यवस्थित पाठ विधि।

(२) कक्षा १ से लेकर कक्षा ४ तक के लिए विशेष पाठय पुस्तकों का निर्माण व प्रकाशन।

(३) कक्षा ४ के लिए प्रथमा परीक्षा का संचालन।

(४) बड़े विद्यार्थियों के लिए डरबन, जोहन्सबर्ग, पीटरबर्ग, केपटाउन और लाडरेनो में हिन्दी कक्षाओं की योजना जिनमें हिन्दी प्रचार समिति वर्धा की प्रारम्भिक, प्रवेशिका, परिचय, कोविद और रत्न परीक्षाओं के लिए विद्यार्थी तैयार किये जाते हैं।

(५) पीटर बर्ग और लेडी स्मिथ में छुट्टियों में हिन्दी के पठन पाठन का कार्यक्रम।

(६) हिन्दी साहित्य सम्मेलनों, भाषणों और अन्य सार्वजनिक समारोहों पर हिन्दी का प्रचार।

(७) वादविवाद निबन्ध तथा भाषण प्रतियोगिताओं इत्यादि के वार्षिक आयोजन।

विविध विषयों पर प्रतिवर्ष होने वाली विवाद प्रतियोगिता में सर्वप्रथम आने वाले को श्रीयुत मगनलाल जी स्वामी भवानीदयाल स्मारक ट्रौफी भेंट किया करते हैं।

अभी कुछ दिन हुए डरबन के सिटी हाल में 'राज्य त्याग' नामक ड्रामा खेला गया जो धन सग्रह उपस्थिति और सफलता तीनों ही दृष्टियों से बड़ा सफल सिद्ध हुआ।

प्रसन्नता है कि यह सघ डरबन मे ५ जुलाई १९५८ से १३ जुलाई १९५८ तक अपना दशाब्दी महोत्सव मना रहा है।

यदि पाठयक्रम में पत्रकार शिक्षण की भी व्यवस्था उचित और सम्भव हो तो सचालकों को इस पर भी विचार कर लेना चाहिए। साथ ही हिन्दी पुस्तकालयों और वाचनालयों की भी स्थान स्थान पर व्यवस्था होनी चाहिए।

हम अपनी तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से इस आयोजन का स्वागत करते हुए इसकी सफलता की कामना करते हैं।

श्रीयुत यदुनाथ सरकार

श्री यदुनाथ सरकार के निधन से भारतवर्ष अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के एक इतिहासकार से वचित हो गया है। मध्यकालीन भारत के इतिहास के अनुसधान कार्य में उन्होंने बड़ी सफलता और प्रसिद्धि प्राप्त की थी। औरगजेब की जीवनी उनके प्रसिद्ध तम ग्रन्थों में से एक है। शिवाजी महाराज की जीवनी तथा मराठा इतिहास को भी उनकी उत्कृष्ट कृतियों में स्थान प्राप्त है। उन्होंने जहा तक बन पड़ा एतिहासिक तथ्यों की निष्पक्ष जाच की। इसके लिए वे स्थान २ पर गए और प्रत्येक उपलब्ध तथ्य ग्रन्थ और हस्तलेख की खोज करके उससे पूरा २ लाभ उठाया। यही कारण है कि उनके इतिहास मौलिकता और तथ्यों के अधिक सन्निकट सिद्ध हुए हैं।

सरकार महोदय का जन्म १८७० ई० में वर्तमान पाकिस्तान के राजशाही जिले के एक ग्राम मे हुआ था। मैट्रिक की परीक्षा से लेकर एम० ए० की परीक्षा तक प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होते रहे। १८९२ ई० मे उन्होंने अग्रेजी मे एम० ए० किया और सम्पूर्ण अकों में से ९० प्रतिशत अक प्राप्त करके विश्व विद्यालय के उत्तीर्ण छात्रो में सर्व प्रथम रहे। अनेक वर्षो तक वे पटना विश्व विद्यालय मे इतिहास के अध्यापक रहे और २ वर्ष तक (१९२६ २८) कलकत्ता विश्व विद्यालय के वायस चासलर रहे।

उनका वैयक्तिक जीवन बड़ा सरल था। आजन्म पढने लिखने का शोक रहा। वे सादा जीवन और उच्च विचार की प्रतिमूर्त थे। यश और सम्पदा उन्हे पथ भ्रष्ट न कर सके। ८८ वर्ष की अवस्था में उन्होने इह लीला समाप्त की।

सरकार महोदय आर्य समाज के प्रश सक थे। गत वर्ष उन्होंने मौडर्न रिव्यू में प्रकाशित अपने लेख मे देश के भाषायी विभाजन का घोर विरोध किया था और चरित्र निर्माण के कार्य में आर्य समाज का पूरा २ सहयोग लेने की भारत सरकार को प्रेरणा की थी। उन्होंने भाषायी विवाद और कटुता के समाधान के रूप में गुरुकुलों जैसी सस्थाओं की स्थापना का सुझाव दिया था जहा भिन्न २ प्रदेशों के भिन्न २ भाषाओं के बोलने वाले छात्र एक साथ रहकर मत भेदों को भूलकर एक ही भाषा और एक जैसी विचारधारा में सस्कृत और दीक्षित हो सकें। उनकी सही मान्यता थी कि इस प्रकार के छात्रों के हाथों में देश की भावी एकता सुरक्षितरह सकती है।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

॥ ओ३म ॥

परिपत्र (१)

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति
(सघर्ष समिति)

श्री मन्त्री जी

आर्य समाज

श्रीमन्नमस्ते !

सार्वदेशिक भाषा स्वात""य समिति द्वारा नियुक्त सघर्ष समिति न अपनी दि० २२ ६ ५८ की बैठक मे निम्न लिखित ३ दिवसा के मनाए जाने का निश्चय किया है —

१ प्रतिज्ञा दिवस २० जोलाई १९५८
२ आर्य समाज चण्डीगढ अपमान प्रतिकार दिवस ६ अगस्त १९५८
३ श्री सुमेरसिह बलिदान दिवस २४ अगस्त १९५८

आप अभी से इन दिवसों को ससमारोह मनाने का प्रबन्ध कर । उपस्थिति, गम्भीरता तथा उत्साह की दृष्टि से सार्वजनिक सभा सफल हो इसकी अभी से तैयारी प्रारम्भ कर देव। प्रतिज्ञा-पत्र प्रस्तावो का प्रारूप तथा दि० २२ जून ५८ की बैठक का निश्चय साथ है।

इन दिवसों की कार्यवाही की पूर्ण रिपोर्ट समाचार पत्रों में प्रकाशित कराए तथा प्रतिज्ञा पत्र एव पारित प्रस्तावो की लिपिया इस प्रकार भेजें —

१ केन्द्रीय गृह मन्त्री भारत सरकार नई दिल्ली
२ प्रधान मन्त्री भारत सरकार नई दिल्ली
३ मुख्य मन्त्री पजाब सरकार, चण्डीगढ
४ सार्वदेशिक सघर्ष समिति श्रद्धानन्द बलिदान भवन, दिल्ली ६

रघुवीरसिह शास्त्री
मन्त्री

•

नोट —सभाओं में नारे ऐसे न लगाये जाय जिनसे किसी वर्ग की धामक तथा सास्कृतिक भावनाओं को ठेस लगे। केवल नियत नारे ही लगाये जाय।

(प्रतिज्ञा)

हम आर्य नर नारी और हिन्दी प्रेमी जन प्रजापति परमात्मा को साक्षी करके यह पवित्रव्रत लेते हैं कि पंजाब में जब तक हिन्दी को न्यायपूर्ण स्थान प्राप्त न होगा तब तक शासन के साथ हमारा संघर्ष जारी रहेगा और हम सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति की संघर्ष समिति के आह्वान पर प्रत्येक प्रकार का बलिदान और कष्ट सहन करने के लिये उद्यत रहेंगे। परमात्मा हमारी सहायता करें।

दि० ६-८-५८ की मीटिंग के लिए प्रस्ताव का प्रारूप

की हिन्दुओं और आर्यों की यह विराट् सभा गतवर्ष सत्याग्रह के काल में पंजाब राज्य की पुलीस द्वारा हुए आर्य समाज मन्दिर चण्डीगढ़ के अपमान का अभी तक समुचित प्रतिकार न होने पर रोष और क्षोभ प्रकट करती है और केन्द्रीय सरकार को प्रेरणा करती है कि वह अपराधियों को समुचित दण्ड देकर और आर्य समाज का बलात् उठाया हुआ सामान लौटाकर इस पाप का प्रायश्चित करे आर ऐसा प्रबन्ध करे कि भविष्य में इस प्रकार की दुर्घटनाओं की पुनरावृत्ति करने के लिए किसी को साहस न हो सके।

दि० २४-८-५८ की मीटिंग के लिए प्रस्ताव का प्रारूप

की यह सभा फीरोजपुर जेल काड के हुतात्मा श्री स्व० सुमेरसिंह की पुण्य स्मृति में अपनी श्रद्धांजलि प्रस्तुत करती और धर्म रक्षा हेतु किए गए उनके बलिदान को आदर और गौरव की दृष्टि से देखती है।

यह सभा हिन्दी सत्याग्रह आन्दोलन के अन्य हुतात्माओं, मोहरी ट्रेन दुर्घटना में कालग्रस्त हुए सत्याग्रहियों तथा राज्य के अत्याचारों से पीड़ित अनेक ज्ञात और अज्ञात नर नारियों के प्रति अपनी आदर भावना प्रदर्शित करती है। भयंकर अत्याचारों, कष्टों और प्रलोभनों की परीक्षाओं में अडिग रहने और अपने को मिटा देने से ही सत्याग्रह की सफलता का मार्ग प्रशस्त हुआ था। निश्चय ही उनका उदाहरण हमारा मार्ग दर्शक रहा है और रहेगा।

वेदों में ईश्वर भक्ति

[श्री राजेन्द्रप्रसाद सिंह]

कुछ लोगों का कहना है कि वेदों मे ईश्वर भक्ति का समावेश नहीं परन्तु विचार करने से पता लगता है कि वेदों मे ईश्वर भक्ति के विषय मे जो मन्त्र विद्यमान् है वे इतने सार गर्भित तथा रस से भरे पड़े हैं कि उनसे बढकर भक्ति का सोपान अन्यत्र मिलना कठिन है। ईश्वर भक्ति के सुगन्धित पुष्प वेद के प्रत्येक मन्त्र मे विराजमान है जो अपने प्राण की सुगन्ध से स्वाध्यायशील व्यक्तियों के हृदयों को सुवासित कर देते है। वेद में एक मन्त्र आया है —

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्र रसया सहाहु ।
यस्येमा दिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥
(यजु० २५—१२)

जिसकी महिमा का गान हिम से ढके हुए पहाड़ कर रहे है, जिसकी भक्ति का राग समुद्र अपनी सहायक नदियों के साथ सुना रहा है और ये विशाल दिशाए जिसके बाहुओं के सदृश है, उस आनन्द स्वरूप प्रभु को मेरा नमस्कार है।"

प्रभु की महिमा महान् है। अणु अणु मे उसकी सत्ता विद्यमान है। ये सूर्य्य, चन्द्र तारे तथा ससार के सारे पदार्थ उसकी सर्व व्यापकता के साक्षी हैं। उषा को लालिमा जब सब ओर छा जाती हैं, भाति २ के पक्षी अपने विविध कलरवों से उसी की भक्ति के गीत गाते है। पहाडी झरनों मैं उसी का सगीत है। जिस प्रकार समाधि की अवस्था मे एक योगी बिल्कुल निश्चेष्ट होकर ईश्वर के ध्यान मे लवलीन हो जाता है, उसी प्रकार ये ऊचे २ पहाड़ अपने सिरों को हिम की सफेद चादर से ढककर ध्यानावस्थित होकर अपने निर्माता की भक्ति मे मौन भाव से खड़े हैं। कभी २ यह देखा जाता है कि भक्ति के आवेश में ईश्वर भक्त की आखों से प्रेम के अश्रु छलक पड़ते है उसी प्रकार पर्वतों के भीतर से नदिया प्रवाहित हो रही है। वे ऐसी लगती हैं मानों उन पर्वतों के हृदयो से जल धाराए भक्ति के रूप में निकल पड़ी हैं। जैसे ईश्वर भक्त के हृदय में लहराते हुए परमात्मा प्रेम के अगाध सिन्धु मे नाना प्रकार की तरगें उठती है उसी प्रकार आकर्षण शक्ति के द्वारा जिसे प्रभु ने समुद्र के हृदय मे डाल रखा है उस प्रेम की ज्वारभाटा के रूप मे विशाल लहरें समुद्र में उठती है। यह प्रेम समुद्र के हृदय में किसने पैदा किया ? समुद्र और चन्द्रमा के बीच जो आकर्षण शक्ति है वह कहा से आई ? किस महान् शक्ति की प्रेरणा से पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा के पूर्ण विकसित चेहरे को देख कर समुद्र अपने प्राणप्रिय चन्द्रदेव से मिलने के लिए वासो उछलता है ? ठीक इसी प्रकार जब ईश्वर भक्त परमात्मा का साक्षात्कार कर लेता है उसका हृदय भी गद्गद् होकर उसकी ओर आकृष्ट हो जाता है। यह सच है कि प्रकृति देवी अपने प्रभु परमात्मा की भक्ति मे दिन-रात लगी रहती है वाटिका के खिले फूल अपनी मनोरम सुरभि के साथ मूक स्वर से अपने निर्माता का स्तवन करते रहते है। सूर्य्य की प्रचडता, चन्द्र की शीतल ज्योत्सना, तारों का झिलमिल प्रकाश, अरोरा बोरिआ लिसका दक्षिण ध्रुव मे उदय होना हिमाच्छित पर्वत मालाए कलकल करती हुई सरिताए झर झर झरते हुए झरने, मानो अपने निर्माता का गुणगान कर रहे है। वेद हमे आदेश देते हैं कि वह प्रभु जिसकी महिमा का दर्शन ये सब पदार्थ कर रहे है, जिसकी भक्ति का राग यह सकल ब्रह्माण्ड गा रहा है-हे मानव यदि दु खों से छूटना चाहता है तो तू भी उसकी भक्ति कर। इसके अतिरिक्त दु.खो से छूटने का कोई दूसरा मार्ग नहीं है।

क्या भक्ति इस्लाम की देन है ?

[लेखक—श्रीयुत गंगाशंकर मिश्र एम. ए]

कुछ विद्वानों ने यह सिद्ध करने का साहस किया है कि 'भक्ति भारत को इस्लाम की देन है'। सर्व प्रथम चार्ल्स इलियट ने १९२१ में प्रकाशित 'Hinduism and Buddhism' (हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म) नामक अपनी पुस्तक मे लिखा है कि "रामानुज मध्व, लिंगायत और वीर शैव सिद्धान्तों पर कुछ इस्लामी प्रभाव हो सकता है।" इसे लेकर कुछ भारतीय विद्वान उड़ पड़े और 'हिन्दू मुस्लिम एकता' की धुन मे उन्होंने यह सिद्ध करना आरम्भ कर दिया कि 'भक्ति भी भारत को इस्लाम की देन है।' इनमें सबसे प्रमुख हैं 'प्रयाग के डा. ताराचंद' जो भारत के मध्यकालीन इतिहास के प्रकांड पंडित माने जाते हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक Infuence of Islam on Indian Culture (भारतीय संस्कृति पर इस्लाम का प्रभाव) में यह दिखलाने का प्रयास किया है कि निम्बार्क, रामानुज, शंकर, रामानन्द, वल्लभाचार्य दक्षिण के आलवार सन्त तथा वीर शैव ये सब के सब इस्लाम के प्रभाव के कारण आविर्भूत हुए। वे लिखते हैं कि "निम्बार्क, और मध्व का चिन्तन नजाम, अशअरी, और मजरी के चिन्तन के समान लगता है। उन आचार्यों ने जो मार्ग चलाया उनमें ज्ञात पात की कट्टरता न थी, धर्म के बाहरी उपचार अप्रमुख थे तथा एकेश्वरवाद, आकुल भक्ति भावना प्रपत्ति और गुरु भक्ति पर बहुत जोर दिया गया था। ये सब इस्लाम की ही विशेषताएं है।"

आधुनिक इतिहासकार भी अब यह मानने लगे हैं कि इस्लाम के आविर्भाव के पहले केवल अरब में ही नहीं उन समस्त अफ्रीकी तथा एशियाई देशों में जो आज मुस्लिम हैं वैदिक धर्म विकृत रूप में विद्यमान् था। इस्लाम के सूफियों ने उस धर्म के कुछ तत्वों से 'रहस्यवाद' की कुछ प्रेरणा प्राप्त की है (भले ही वह अयथार्थ हो) भारत में भारतीय संतों के सम्पर्क मे आने पर सूफी संत उनके विचारों मे भी प्रभावित हुए। सूफी विचार-धारा पर वेदान्त की छाप है। उसे भी आधुनिक विद्वान स्वीकार करने लगे है। तब फिर यह कैसे कहा जा सकता है कि भारत के आचार्य सूफी विचारो से प्रभावित थे।"

डाक्टर फर्कुहर ने जो भारत के प्रसिद्ध ईसाई प्रचारक माने जाते हैं अपनी पुस्तक 'A Primer of Hinduism' में लिखा है कि 'उत्तर भारत भक्ति प्रचार के लिए रामानन्द का ऋणी है। उनका समय १५ वीं शती है तब भी उनके मत तथा आचरण मे किंचित भी मुस्लिम प्रभाव नहीं देख पड़ता "

डाक्टर ताराचद का यह भी कहना है कि वीर शैव सम्प्रदाय अवश्य उस समय उत्पन्न हुआ होगा जब मुसलमान व्यापारी के रूप में भारत आने तथा काम्बे से लेकर किलोन तक बसने लगे' इस सम्प्रदाय का पर्याप्त साहित्य तमिल और तिलुगु भाषाओं में उपलब्ध है। इस साहित्य में सभी उद्धरण वेदों तथा आगम से लिए हुए हैं। हिन्दू धर्म के अतिरिक्त उसमें किसी धर्म का उल्लेख नहीं है। अल्लम प्रभु इस सम्प्रदाय के बड़े सत हुए हैं जो वीर शैव मत के प्रवर्त्तक बासव के समकालीन थे। 'अल्ला और अल्लम' के बीच अक्षरों की समानता देखकर कुछ विद्वानों ने वीर शैव मत पर इस्लाम के प्रभाव का अनुमान लगाया है। इसकी पुष्टि वे इससे भी करते हैं कि. वीर शैवों में शव

जीव के रहने का स्थान

[लेखक—'आचार्य']

हृदय में जीव का आवास और सारे शरीर में जीव की व्याप्ति रहती है। यही मान्यता वेद और शास्त्रों की है। हमारे कुछ मित्र मस्तक मे ही जीव का निवास मानते हैं।

यह मानी हुई बात है कि जीव का साक्षात्कार ब्रह्म के स्वरूप का परिचायक है। यह अनुभूत विषय है कि नींद के समय सारी इन्द्रिया एक झटके के साथ हृदय पर एकत्र हो जाती हैं। चेतनता का सचार भी यहीं से होता है। लोग खास समयों में यहीं जीव की गति की खोज करते हैं। छान्दोग्योपनिषद् ने इसे हृदय में माना है। इसने हृदय की 'निरुक्ति इस प्रकार की है—'हृदि, अयम्' (यह जीव हृदय मे रहता है) इसी कारण (हृदयमित्या चक्षते) (इत को हृदय कहते है)।

हृदय कैसा और कहा है ? छान्दोग्योपनिषद् में इसे ब्रह्मपुर कहकर स्मरण किया गया है। साथ ही पु डरीक सन्श भी बतलाया है। वह कहती है 'अस्मिन ब्रह्मपुरे दहर पु डरीक वेश्म दहरो ऽस्मिन्न न्तराकाशस्तस्मिन यदन्त तदन्वेष्टव्य तद वाव विजि ज्ञासि तव्यम्' अर्थात् यह शरीर ब्रह्म का निवास होने के कारण ब्रह्मपुर भी कहा जा सकता है। इसमें एक हृदय रूपी कमल है। इसी के

को गाड़ने की प्रथा है पर किटेल के कन्नड़ कोप के अनुसार 'अल्लम' का अर्थ 'लिङ्गायत भक्त है' न कि 'अल्ला का अनुचर'। रही शव गाडे जाने की प्रथा तो इसका प्रचार भारत की कई जातिया और सम्प्रदायों में पहले भी था और अब भी है इस तरह उन पर इस्लामी प्रभाव सिद्ध नहीं होता। सच बात तो यह है कि जब दक्षिण में पहले शैव मत और बाद में वीर शैव मत फैला तब तक वहा इस्लाम का प्रचार ही न हुआ था।

डाक्टर ताराचद जैसे विद्वानों ने तो यहा तक कहने का साहस किया है कि यदि भारत में इस्लाम न आता तो शकराचाय का आविर्भाव होता या नहीं इसी में सन्देह है। डा॰ ताराचद जैसे ही विचार रखने वाले दूसरे विद्वान प्रो॰ हुमायू कबीर ने जो भारत सरकार के शिक्षा विभाग के एक उच्च अधिकारी हैं अपनी पुस्तक 'Our Heritage (हमारी विरासत) में यह दिखलाने का यत्न किया है कि 'आचार्य शकर ने अद्वैत का पाठ इस्लाम से सीखा है भक्ति पर भी इस्लाम का प्रभाव मानते हैं। उनका कथन है 'भारत की विचार धारा में ८ वीं शताब्दी के आरम्भ के लगभग सहसा क्रान्तिकारी परिवर्तन होता है। भारतीय विचार धारा का नेतृत्व उत्तर मे दक्षिण को चला जाता है। शकर और रामानुज निम्बादित्य और बल्लभाचार्य सब दक्षिण भारत के हैं। वहीं वैष्णव तथा शैव मतों का उत्थान एव विकास हुआ। उत्तर भारत के राजनैतिक एव सामाजिक कारणों से यह सहसा क्रान्तिकारी परिवतन समझ में नहीं आता और इतिहासकार इससे बडे चक्कर में हैं। इस रहस्य की कु जी हमे तब मिलती है, जब हम इसका सम्बन्ध दक्षिण मे सातवीं शताब्दी के मध्य के लगभग इस्लाम के प्रादुर्भाव से जोड देते हैं।" परन्तु जो तर्क दिए जा चुके हैं उनसे इस मत में कुछ दम नहीं रह जाता। दक्षिण में उस समय तक इस्लाम का प्रभाव नाम मात्र था। उससे उन आचार्यों की विचार धारा प्रभावित नहीं मानी जा सकती। इस तरह भक्ति इस्लाम की देन है यह बे सिर पैर की कल्पना है।

आर्य्य समाज के पास वेद का प्रामाणिक संस्करण न होना लज्जा जनक है

[लेखक—श्री प्रो० परमात्माशरण एम० ए०]

वेद के प्रति आर्य समाज के उत्तरदायित्व के मुख्यतया दो विभाग हैं। एक तो पूर्णतया शुद्ध मूल संहिता प्राप्त करना और प्रकाशित करना दूसरे वेद भाष्य करना। वेद की शिक्षा और संस्कृति का प्रचार करना ही आर्य समाज का एक मात्र उद्देश्य है। दयानन्द के पीछे आर्य समाज ने अपने इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए क्या कार्य किया। क्या यह अत्यावश्यक नहीं है कि वेद का एक प्रामाणिक मूल पाठ तो हमारे पास हो ?

परन्तु हम देखते है कि आर्य समाज ने अपने ८० वर्ष से अधिक के जीवन में सर्वथा शुद्ध वेद-संहिता को प्राप्त या तैयार करने की ओर ध्यान तक नहीं दिया। उसे प्रकाशित करके जनता तक पहुंचाने की तो बात ही क्या ? विचारपूर्वक देखा जाय तो यह बात आर्य समाज के लिए कुछ कम खेद और लज्जा की नहीं है। जिस पुस्तक को हम समस्त ज्ञान का पुंज, धर्म का स्रोत एवं मूलाधार मानते हों उसके प्रति क्रियात्मक दृष्टि से हम इतने उदासीन हों कि आज ८० वर्ष तक बराबर मौखिक रूप से वेद का डंका बजाने के बाद उसकी मूल संहिता का शुद्ध पाठ भी हमारे पास न हो यह कितनी लज्जा की बात है ? यदि कोई बाहरी विद्वान हमसे वेद की प्रति मांगने लगे (ऐसा हो भी चुका है) तो कौनसा संस्करण है जिसे हम प्रामाणिक कहकर किसी को दे सकें। क्या ऐसी दशा किसी और धर्म ग्रन्थ की भी है ? जिन्दवस्ता और तोरेत, कुरान और बाइबिल इत्यादि अनेक धर्म

भीतर जानने और खोजने की चीजें रहा करती हैं। कठोपनिषद् में यम नचिकेता से कहते हैं कि हृदय में अंगूठे के बराबर पोल है इसी में जीव का निवास रहता है।

चरक और सुश्रुत के अनुसार हृदय के नीचे बांईं ओर प्लीहा, दांयीं ओर यकृत और फेफड़ा तथा क्लोम दोनों ओर होते हैं। प्लीहा तिल्ली का नाम है। यह पेट में होती है। लिवर का नाम यकृत है। वेद ने पुरुष सूक्त में हृदय को नाभि से १० अंगुल ऊपर माना है। यही वैद्यक शास्त्र का भी मत होना चाहिए। हृदय के स्वरूप के बारे में आयुर्वेद और उपनिषद् एक ही बात कहते हैं। सुश्रुतकार कहते हैं 'पुण्डरीकेन सदृशं हृदयं स्यादधो मुखम्। जाग्रतस्तद् विकसति स्वपतश्च निमीलति' अर्थात कमल के समान ही हृदय का आकार है। यह शरीर में नीचा शिर या मुख किए लटकता रहता है। जब मनुष्य जागता है तब वह कमल खिल जाता है पर जब निद्रावश होता है तब वह बन्द हो जाता है।

सारा संसार हृदय में ही जीव मानता चला आया है। जब कभी कोई बात होती है तब वह हृदय पर ही हाथ धरता है।

आज हम यह मानने को तो प्रस्तुत हैं कि संज्ञान शिर में समाया हुआ है पर जो धड़ बिना सिर के भी युद्ध रत रहे हैं उनकी प्रवृत्ति किस आत्मा से चलती होगी ? आज भी ऐसे उदाहरण हैं जो धड़ों ने भी भयंकर युद्ध किये हैं बैरियों के छक्के छुड़ा दिए हैं। अत नाभि के ऊपर ही हृदय में जीव का निवास स्थान है, वहीं जीव रहता है।

♣

भारतीय इतिहास मे रामायण काल

[लेखक—श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द सरस्वती आ० स० हापुड]

मास अप्रैल के सार्वदेशिक पत्र मे ठा० अमर सिंह जी का एक लघु लेख रामायण के विषय मे प्रकाशित हुआ है। उक्त लेख में रामायण का काल निर्णय करते हुए सम्माननीय लेखक महाभारत का एक प्रमाण प्रस्तुत करते हुए इसी २८ वी चतुर्युगी के त्रेता युग में महाराजा राम हुए ऐसा लिखकर लिखा है कि महाराजा राम को हुए ८६८९९४ वर्ष व्यतीत हो चुके।

इस लेख में दो बड़ी भूले हुई है। एक तो महाभारत के प्रमाण के विषय मे और दूसरी त्रेता युग के विषय में। क्योंकि वर्तमान में वैवस्वत मन्वन्तर की २७ वी चतुर्युगी चल रही है। इस प्रकार अब तक २८ त्रेता युग बीत चुके। सो यह कौनसा त्रेता युग समझा जावे। क्योंकि महाभारत के श्लोक मे युग संख्या नहीं दी है। अब हम नीचे दोनों ही बातों पर समुचित विचार कर भारतीय इतिहास की दृष्टि से रामायण काल को आज तक कितने वर्ष बीत चुके यह पाठकों के समक्ष रखना चाहते हैं।

पहिले महाभारत का त्रेतायुग वाला श्लोक ही देखिए। पाठक अच्छी तरह समझ जावें इसलिए उसके आगे पीछे के कुछ श्लोक लिखना उपयोगी होगा। महाभारत आदि पर्व अध्याय दो का आरम्भ इस प्रकार होता है —

ऋषय ऊचु —समन्तं पचकमिति यदुक्त सूतनन्दन ?।
एतत सर्वं यथा तत्त्व श्रोतुमिच्छामहे वयम्॥ १

सौतिरुवाच शृणुध्व मम भो विप्रा ब्रुवतश्च कथा शुभा।
समन्त पचकाख्य च श्रोतुम र्हथ सत्तमा ॥ २
त्रेता द्वापरयो सन्धौराम शस्त्रभृतावर ।
असकृत् पार्थिव क्षत्र जघानामर्ष चोदित ॥ ३
स सर्वं क्षत्रमुत्साद्य स्ववीर्येणानल द्युति ।
समन्त पचके पच चकार रौधिरात् ह्रदान्॥ ४
स तेषु रुधिराम्भ सु ह्रदेषु क्रोध मूर्च्छित ।
पितृन सतर्पयामास रुधिरेणेति न श्रुतम्॥५
अथर्चीकादयोऽभ्येत्यपितरोराममब्रुवन्।
राम राम महाभाग प्रीता स्म तवभार्गव ॥ ६
अनया पितृभक्त्या च विक्रमेण तव प्रभो ? ॥७

उक्त श्लोकों के पाठ से स्पष्ट प्रतीत होता है कि इनमे दाशरथी राम नहीं अपितु भार्गव राम का इतिवृत्त वर्णित है। अस्तु ! अब हम त्रेतायुग की ओर आते हैं। दाशरथी राम को २४ वें त्रेता युग

पुस्तकों के सैकड़ों एक से एक उत्तम संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं वेद के प्रामाणिक मूल का अभाव हमारे मानसिक प्रमाद और शिथिलता का द्योतक है।

मैक्समूलर तथा ग्रिफिथ आदि पाश्चात्य विद्वानों ने वेदों को बड़े परिश्रम से संग्रह करके और यथाशक्ति शुद्ध करके प्रकाशित कराया और उस काम में लाखों रुपया व्यय हुआ। परन्तु न तो ये संस्करण सर्वथा प्रामाणिक तथा शुद्ध हैं और न इतने सस्ते कि कोई व्यक्ति तो क्या साधारण पुस्तकालय भी इनको खरीद सके। इन संस्करणों के एक २ मूल वेद का मूल्य कई सौ रुपया है परन्तु हमारा आदर्श तो यह होना चाहिए कि वेद की प्रतियां मनुष्य मात्र के पास पहुंचा दी जाय। इतना भी न हो तो कम से कम हिन्दूमात्र के हर घर में वेद की प्रति होनी चाहिए।

आर्य समाज का परिचय

[लेखक व संपादक रघुनाथ प्रसाद पाठक]

दयानन्द कौन थे ?

महान् स्वामी सरस्वती का जन्म सन १८२४ई० में काठियावाड़ के मौरवी राज्य के टंकारा नामक ग्राम में हुआ था और सन् १८८३ ई० में अजमेर में उनका देहान्त हुआ था।

फरवरी १९२५ में मथुरा में उनकी जन्म शताब्दि मनाई गई और १९३३ में अजमेर में उनके निर्वाण का अर्द्ध शताब्दि महोत्सव मनाया गया।

महर्षि के जीवन का पूरा परिचय उनके जीवन चरित्र से प्राप्त किया जा सकता है।

में हुआ मानता है। अब हम इसी की पुष्टि में कुछ प्रमाण प्रस्तुत कर २४ वें त्रेता युग से आज तक का समय निकाल कर ऐतिहासिक आधार पर पाठकों के सामने रामायण के सही काल का प्रतिपादन करते हैं।

भारत के इतिहास में अब तक प्रत्येक चतुर्युगी में एक व्यास होता रहा है। इस प्रकार इस वैवस्वत मन्वन्तर की २८ चतुर्युगियों में अब तक २८ व्यास हो चुके हैं। इनमें २४ वा व्यास महर्षि वाल्मीकि है जो २४ वीं चतुर्युगी के त्रेतायुग के अन्त में हुआ है और महर्षि वाल्मीकि के समकालीन ही दाशरथी राम हुए हैं। अत रामचन्द्र जी २४ वीं चतुर्युगी के त्रेता युग के अन्त में ही हुए हैं, २८ वें त्रेता के अन्त में नहीं।

वायु पुराण अध्याय ७० श्लोक ४८ में वर्णन आया है कि—

त्रेता युगे चतुर्विंशे रावणस्तपस क्षयात्।
राम दाशरथिं प्राप्य सगण क्षय मीयिवान्॥

अर्थात् २४ वें त्रेतायुग में तप के क्षीण हो जाने से रावण दाशरथी राम के साथ युद्ध में लड़ कर अपने परिवार सहित नष्ट हो गया। इस प्रकार उक्त दोनों प्रमाणों के आधार पर बल पूर्वक कहा जा सकता है कि भारतीय इतिहासानुसार महाराज रामचन्द्र जी २४ वें त्रेतायुग की समाप्ति मानकर उस समय से आज तक की वर्ष गणना करते हैं, जो निम्नलिखित है —

२४ वीं चतुर्युगी के द्वापरयुग के वर्ष	८६४०००
,, ,, ,, कलियुग ,,	४३२०००
२५ वीं चतुर्युगी के वर्ष	४३२००००
२६ वीं ,, ,,	४३२००००
२७ वीं ,, ,,	४३२००००
२८ वीं चतुर्युगी के कृतयुग के वर्ष	१७२८०००
,, ,, त्रेतायुग ,,	१२९६०००
,, ,, द्वापर ,,	८६४०००
,, ,, कलि ,,	५०००

इस प्रकार रामायण काल की अवधि=१८१४९०००

एक करोड़ इकासीलाख उनचास हजार वर्ष हुए। यही ठीक रामायण काल है। इसलिए दाशरथी राम को हुए १८१४९००० वर्ष व्यतीत हो चुके। यदि गणना में कहीं भूल चूक हो तो पाठक सुधार करलें।

उन्होंने ऋग्वेद और यजुर्वेद का भाष्य किया और संस्कृत तथा हिन्दी भाषा में अनेक ग्रथ लिखे उनका ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश वैदिक साहित्य की कुंजी है।

महर्षि ने वैदिक हीरों पर पड़ी हुई सब धूल को साफ किया। भारत के प्रसिद्ध योगी श्री अरिविन्द ने जो आर्यसमाज के सदस्य न थे, उनके वेद भाष्य के विषय में इस प्रकार लिखा था —

"वेद भाष्य के सम्बन्ध में मेरा यह दृढ विश्वास है कि वेद का अन्तिम और सर्वाङ्ग पूर्ण भाष्य कोई क्यों न हो, वेद भाष्य की सच्ची कुंजी ज्ञात करने वाले के रूप में स्वामी दयानन्द का आदर होता रहेगा। युग युगान्तरों के भ्रम, सशय, अज्ञान और अंधविश्वासों की भूल भूलइयों में उनकी दिव्य दृष्टि ने सत्य के दर्शन किए।"

(दयानन्द ऐन्ड व्यूह बाई श्री अरिविन्द घोष नामक पुस्तक)

स्वामी दयानन्द ने वैदिक धर्म के प्रचार के लिए १८७५ ई० में आर्य समाज की स्थापना की जिसका शाब्दिक अर्थ है भले और श्रेष्ठ व्यक्तियों का समाज ।

अध्याय २

ईश्वर विश्वास

आर्य समाज आस्तिक समाज है। वह नास्तिक वाद का परम विरोधी है।

एकेश्वर-वाद

आर्य समाज के सदस्य एक ईश्वर में विश्वास रखते और उसको छोड़कर अन्य किसी की उपासना नहीं करते हैं।

हमारे मुसलमान भाईयों को इस बात का अभिमान है कि इस्लाम ने ही ससार को सर्व प्रथम एक मात्र ईश्वर की उपासना करनी सिखाई है। परन्तु उनके मत के जन्म से करोड़ों वर्ष पूर्व वेदों ने तथा अन्य धर्म ग्रन्थों ने एकेश्वरवाद की घोषणा कर दी थी। युरोपियन भी इस सचाई को स्वीकार करते है। प्रो० मैक्समूलर ऋग्वेद की (हिरण्यगर्भ) ओर सकेत करके इस मान्यता की पुष्टि करते हैं। वेदों और उपनिषदों में एकेश्वरवाद के समर्थक अनेक मन्त्र उपलब्ध होते है।

इस प्रकार के स्पष्ट उद्धरणों की मौजूदगी में यह कथन अनर्गल है कि वेद बहु देवतावाद की शिक्षा देते है। वेद तो विशुद्ध एकेश्वरवाद का प्रतिपादन करते हैं।

परमात्मा के विशेषण

आर्य समाज अपने परमात्मा को समस्त सत्य ज्ञान का मूल स्रोत मानता है।

परमात्मा के नाम

परमात्मा का सर्व श्रेष्ठ निज नाम 'ओ३म्' है। परमात्मा की विशेषता बताने वाले अन्य अनेक नाम हैं यथा ब्रह्मा, विष्णु रुद्र और इन्द्र इत्यादि।

हमारे पौराणिक भाई ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र इत्यादि को पृथक् सत्ताधारी प्राणी मानते है परन्तु यह भावना वेद विरुद्ध है। पुराणों ने ब्रह्मा, विष्णु आदि की पृथक् सत्ताएँ मानी हैं परन्तु वेदों में इस प्रकार का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

यद्यपि वेदों में ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्र इत्यादि शब्द मिलते हैं तथापि वैदिक शब्द शास्त्र में इन शब्दों को परमात्मा के गुणों का वाचक माना गया है। ब्रह्मा का अर्थ है ससार का कर्त्ता, विष्णु का अर्थ है ससार का रक्षक और रुद्र का अर्थ है सहार करने वाला।

एक मात्र परमात्मा ही ससार का कर्त्ता, धर्त्ता और सहारक है अत ब्रह्मा विष्णु और रुद्र इत्यादि उसी एक परमात्मा के गुण वाचक नाम हैं।

यह है वेद की शिक्षा। ऋग्वेद मंडल १, १६४ १६ (इन्द्र मित्र) का प्रो० मैक्स मूलर ने भी हवाला

देकर यह प्रतिपादित किया है कि वेद के अनुसार इन्द्र, रुद्र, विष्णु, ब्रह्मा आदि परमेश्वर के विशेषण है।

ईश्वर के नाम का कोई लिंग नहीं है। वेद के अनुसार परमात्मा के नाम पुलिंग, स्त्री लिग और न पु सक तीनो लिगों मे व्यवहृत होते हैं।

वेद को पढने का अधिकार मनुष्य मात्र को है चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, ब्राह्मण हो या शूद्र, राजा हो या रक।

परमात्मा का पितृत्व

हमारे ईसाई भाईयों की मान्यता है कि ईसा ने ही सर्व प्रथम परमात्मा के पितृत्व की शिक्षा दी थी परन्तु यह बात निश्चित रूप से असत्य है।ईसा के जन्म से बहुत पूर्व भारत वासियों को यह शिक्षा दी गई थी कि परमात्मा न केवल हमारा पिता ही है अपितु वह हमारी माता भी है। पाठकों को ज्ञात होगा कि पिता की अपेक्षा माता का प्रेम बहुत ऊचा होता है। (देखें ऋग्वेद मडल १-८९, १०।

ईश्वर की सत्ता

रग बिरगी और विचित्र सृष्टि को नियमानुकूल बनी देखकर यह सहज ही अनुभव हो जाता है कि इसको बनाने वाला कोई न कोई सर्व शक्तिमान महान् विद्वान और महान ज्ञानवान शक्ति अवश्य हैं। परमात्मा बहुत सूक्ष्म है इसलिए इन आखों से दिखाई नहीं देता। इसके देखने की विधि इस प्रकार है —

१ अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अपरिग्रह स्वाध्याय।

२ प्राणायाम के द्वारा शरीर और मन की उन्नति करना।

३ अभ्यास के द्वारा चित्त को एकाग्र करना।

४ निष्काम कर्म करना और ज्ञान बढाना।

५ ईश्वर के गुणों को जीवन में धारण करना, परोपकार करते हुए अपना जीवन ईश सेवा पर अर्पण रखना।

अध्याय ३

ईश्वरीय ज्ञान

वेद

ब्रह्म समाज को छोडकर अन्य सब आस्तिक धर्म और मत ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता को स्वीकार करते है।

वेद ४ है—ऋग, यजु, साम और अथर्व। इन चारों मे ईश्वरीय ज्ञान भरा हुआ है।

वेद सब सत्य विद्याओ के भण्डार है। ससार का समस्त ज्ञान विज्ञान और कला कौशल वेद से प्राप्त होता है।

वेद और साइस

श्री अरविन्द जी स्वीकार करते हैं —

दयानन्द की इस मान्यता मे कि वेद ज्ञान और साइस की सचाईयों से परिपूर्ण है जरा भी अत्युक्ति नहीं है। मैं तो यहा तक कहूगा कि वेदो में अन्य भी ऐसी सचाइया भरी हुई है जिनका आधुनिक ससार को पता नहीं है। ऐसी अवस्था मे दयानन्द ने वैदिक ज्ञान की गहराई और विस्तार को घटा कर ही बताया है बढाकर नहीं।'

वेद कालीन सभ्यता

वैदिक युग के हमारे पूर्वज अत्यन्त सस्कृत थे युरोप के विद्वान भी—इस बात को स्वीकार करते हैं। श्री ऐच० ऐच० विल्सन कहते हैं —

"वैदिक युग के हिन्दू सभ्यता में बढ चढे थे।"

(देखें ग्रन्थकार की ऋग्वेद वाल्यूम २ भूमिका पृष्ठ १७)

वेदो की प्राचीनता

वेद मानव जाति की प्राचीनतम पुस्तक हैं। प्रो० मैक्समूलर लिखते है –

यशस्वी जीवन

[श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक]

यशस्वी जीवन व्यतीत करना और मरने के बाद अक्षय कीर्ति छोड़ जाना जीवन की बड़ी सार्थकता समझी जाती है। कीर्ति जीवन की सुगन्धि और चादनी होती है जिनसे मनुष्य सुवासित और प्रकाशित रहता है। अत प्रत्येक प्राणी को यशस्वी जीवन व्यतीत करना चाहिए और ससार से विदा

"मानव समाज के पुस्तकालय की पहली पुस्तक ऋग्वेद है।"

(मेक्स मूलर कृत सैकरड बुक्स आफ दी ईस्ट वाल्यूम ३२ पृ० ३१)

भाषा

वेद की भाषा सब भाषाओ का मूल स्रोत है और उनमे जो विचार प्रकट किए गए हैं वे ही समस्त मतों के आदि स्रोत हैं।

(देखें श्री प गगा प्रसाद जी रि० चीफ जज कृत फाउन्टेन हैड आव रिलीजन ग्रन्थ)

वेद भाष्य

यत वेद मानव समाज की सर्व प्रथम पुस्तक है अत उनमे इतिहास नहीं हो सकता था।

यास्काचार्य का अनुसरण करते हुए महर्षि दयानन्द ने वेद मन्त्रों के यौगिक अर्थ किए हैं। इस बात की सत्यता को मैक्समूलर भी अगीकार करते हैं। वे लिखते है —

"वेदो मे अनेक नाम पाए जाते है परन्तु वे व्यक्ति वाचक सज्ञाओं के रूप मे नहीं देख पड़ते है।

(हिस्ट्री आव एनशियट सस्कृत लिटरेचर)

सशोधन

वेद ईश्वरीय ज्ञान की पुस्तक है अत उनमें कोई परिवर्तन या सशोधन अपेक्षित नहीं है।

वेदों मे भौतिक, नैतिक और अध्यात्मिक नियम और विधान भरे हुए हैं।

उनका प्रामाण्य सदैव एक जैसा रहता है।

इसके विपरीत कुरान मे बड़े सुधार की वा सुसगत व्याख्या की आवश्यकता है। ईसाई मत के धर्म ग्रन्थ बाइबिल के नए अहदनामे ने पुराने अहदनामे का रूप ही बदल दिया है।

परमात्मा को अपनी आज्ञाओं को रद्द करने की क्या आवश्यकता है? क्या उसका ज्ञान पूर्ण नहीं है? या उसके कर्मों और वचनों में कहीं कोई भूल है। यदि नहीं तो जिस पुस्तक मे कुछ घटाया बढ़ाया जा सकता हो वह ईश्वरीय ज्ञान की पुस्तक नहीं कही जा सकती।

प्रमाण

हमारे लिए ४ वेद ही प्रमाण है। अन्य ग्रन्थ प्रमाण रूप मे तभी स्वीकार किए जा सकते है जब कि वे वेदानुकूल हो। ४ वेदों के बाद ४ उपवेद, ४ ब्राह्मण १० उपनिषद, मनुस्मृति तथा अन्य स्मृतियां, ६ दर्शन सूत्र ग्रन्थ, रामायण और महाभारत माना है। वेदो के अतिरिक्त *कतिपय उपर्युक्त तथा अन्य ग्रन्थों मे बहुत से प्रक्षेप पाए जाते है। मूल पाठ से प्रक्षेपों को पृथक् करने का विद्वानों के लिए बहुत बड़ा और आवश्यक काम है। (क्रमश)

हो जाने पर उसका यश बना रहना चाहिए। इस प्रकार वह मर कर भी जीवित रहता है।

यश सौभाग्य और शक्ति का सूचक होता है। यश का सबसे बड़ा लाभ यह है कि मनुष्य का नाम उन लोगों में पहुँचे जाता है जो उससे परिचित नहीं होते और यदि उसमें युग पुरुष बनने की क्षमता होती है तो वह युग पुरुष बन जाता है। युग पुरुष वे व्यक्ति बनते हैं जो यश और कीर्ति की चिन्ता किए बिना परीक्षणों और प्रलोभनों से ऊपर रहकर अपने कर्त्तव्य कर्म मे निरत रहते और जिनके प्रयत्न प्राणी मात्र के हित सपादन कीदिशा में प्ररित रहने हैं। कीर्ति का मार्ग सरल नहींअपितु बीहड़ होता है। निष्काम भाव से परहित मे लगे हुए व्यक्ति की कीर्ति को त्याग और बलिदान स्थायी रूप दे देते हैं। जब हत्यारे की गोली से महात्मा लिंकन के प्राण पखेरू उड गए तब उनके एक परम विरोधी राजनीतिज्ञ ने अश्रु पूर्ण नेत्रों और रुधे हुए हृदयसे यह ठीक ही कहा था कि "अब लिंकन युग पुरुष बन गए"। कीर्ति ऐसे महापुरुषों के पीछे पीछे चलती है परन्तु वे उसकी परवाह नहीं करते। तभी कहा जाता है कि कीर्ति सदैव अविवाहित रहती है क्योंकि श्रेष्ठ जन उसका वरण नहीं करते और अयोग्य जनों को वह वरण नहीं करती।

कीर्तिप्राप्त महापुरुषों के समक्ष उद्देश्य मुख्य होता है कीर्ति गौण। क्या आदि कवि ने अपनी अमर रचना (रामायण) यश प्राप्ति की कामना से की थी? क्या मिल्टन ने ख्याति की प्राप्ति के लिए अपनी रचनाए प्रस्तुत की थीं? उनके जीवन की महत्त्वाकाक्षा यह थी कि 'मैं अपने पीछे ऐसी कृति छोड़ जाऊ जिसे लोग जान बूझकर मिटाना चाहें तब भी वह मिट न सके।' वह समय आया जब कैटों यह कहने के लिए विवश हुआ कि आने वाली सतान यह पूछेगी कि मिल्टन का स्तूप क्यो नहीं बनाया गया?

सच्ची कीर्ति का आधार गुण होते हैं परन्तु बहुत से महत्त्वाकाक्षी व्यक्ति बिना गुणों और योग्यता के ही यश की सोपान पर चढने की सोचते और यत्न करते है। इसके लिए वे उचित आ अनुचित, ग्राह्य वा अग्राह्य का ध्यान तक नहीं रखते। ना ही वे अपनी अन्तरात्मा की स्वीकृति या अस्वीकृति की ही चिन्ता करते हैं। यदि वे अपनी धन सम्पत्ति वा हथकडो से कीर्ति प्राप्त करने में सफल भी हो जाते है तो उनकी प्यास अधिक बढ जाती है परन्तु जिस प्रकार खारा पानी पीने से प्यास बुझने के स्थान मे बढ जाती है उसी प्रकार नाम की चाह बढने लगती है। लोग ऐसे व्यक्तियों की प्रशसा करते है परन्तु यह न भूल जाना चाहिए कि धूल और तिनके जल्दी ही पृथ्वी से उडकर आकाश मे छा जाया करते है। झूठी कीर्ति प्राप्त करने वाले को तूफान का सदैव भय सताए रहता है। बड आदमियों की रीति नीति तो यह है कि वे अपनी सच्ची प्रशसा से भी दूर भागते है। एक बार लियेन्स नगर के विद्वानों ने एक लेख के लिए पुरस्कार की घोषणा की। उस समय नेपोलियन युवक थे। उन्होंने भी प्रतियोगिता के लिए लेख भेजा और उनका लेख ही प्रथम पुरस्कार के योग्य माना गया। सम्राट होने पर नेपोलियन को यह बात भूल चुकी थी किन्तु उनके मत्री टेलीरान्त ने एक विशेष व्यक्ति को भेजकर लियेन्स से उसलेखकी मूलप्रति मगाई। लेख को सम्राट के आगे रखकर उसने हसते हुए पूछा—'सम्राट इस लेख के लेखकको जानते हैं?" टेलीरान्त को आशा थी कि उसके इस कार्य से सम्राट उस पर प्रसन्न होंगे और वह पुरस्कार पावगा किन्तु नेपोलियन ने लज्जित होकर सिर झुका लिया और लेख को उठाकर जलती अगीठी में डाल दिया।

यदि हमारे काम यश के योग्य होंगे तो वह हमे अवश्य प्राप्त होगा। यदि हम पात्र न होंगे तो हम बलात यशस्वी कभी नहीं बन सकते। बुरे कर्मों से प्राप्त प्रशसा शीघ्र ही नष्ट हो जाने वाली वस्तु

होती है अच्छे कर्मों का आरम्भ में आदर न भी हो तो अन्त में उनका आदर हुए बिना नहीं रहता।

निस्सन्देह कीर्ति का अपना महत्त्व है यदि इससे शुभ कर्मों की प्रेरणा प्राप्त हो और मनुष्य उससे ऊपर रहकर विनम्र और निरभिमानी बना रहे। लन्दन के वेस्ट मिनिस्टर के विशाल मन्दिर में आईजक-न्यूटन का स्मारक बना है। बहुतसे स्त्री पुरुष और बच्चे उस स्मारक के पास जाकर कुछ क्षण ठहर जाते है, कुछ चिंतन करते है क्योंकि उसे बडा प्रतिभाशाली और चिन्तन शील व्यक्ति समझते हैं और वह था भी ऐसा ही। भयकर विपत्तियों के बावजूद भी उसने केवल २२ वर्ष की अवस्था मे बीजगणित के द्विपद सिद्धान्त (Bi nomeal the orem) का आविष्कार किया था। उसने प्रकृति का गभीर अध्ययन करके गुरुत्वा कर्षण' आदि सिद्धान्तों का आविष्कार किया। सूर्य की किरणों मे ७ रग क्यों हैं? सूय, चन्द्र की क्षीणता और पूर्णता के कारण समुद्र में ज्वार भाटा क्यों होता है, ये सभी गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त के अन्तर्गत समझे जाते हैं। न्यूटन की विद्या बुद्धि पर सारे इग्लैड को गर्व था और है। इतने पर भी न्यूटन को स्वय अपनी विद्या बुद्धि का कोई अभि मान न था। न्यूटन को एक दिन एक महिला मिली जिसने उसकी भूरि २ प्रशसा की और उसकी विद्या बुद्धि की मुक्त कण्ठ से सराहना की।

न्यूटन ने कहा 'अरे तुम कहा की बातें कर रही हो—मैं तो उस बच्चे के समान हू जो विद्या के विशाल समुद्र के तट पर बैठा हुआ केवल ककडों को ही चुनता रहा।'

कीर्ति हल्का बोझ नहीं होती। कीर्ति प्राप्त व्यक्ति इसके बोझ के नीचे परेशान भी रहता है। उसे पग २ पर सावधान रहना पडता है।

नीतिकार ने बताया है कि मनुष्य को ८ गुण चमकाते है अर्थात् बुद्धि, कुलीनता, इन्द्रिय निग्रह, विद्या, पराक्रम, मितभाषण, यथा शक्ति दान तथा कृतज्ञता।

अष्टौ गुणा पुरुष दीपयन्ति
प्रज्ञा च कौल्य च दम श्रुत च॥
पराक्रममश्चाबहुभाषिता च।
दान यथा शक्ति कृतज्ञता च॥
(विदुर नीति अ० ७ श्लोक ५२)

इन गुणों को जीवन मे धारण कर चमकने का प्रत्येक को यत्न करना चाहिए।

आत्म, मन, वाणी और कर्म को सन्मार्ग में रखने से मनुष्य का चरित्र बना करता है। सच्चरित्रता ही कीर्ति की जननी है। ये दोनों ही जीवन के अविनाशी तत्त्व होते हैं। इनके अतिरिक्त हम में जो कुछ होता है उसको पशुत्व की सज्ञा दीजाती है। यश का सम्बन्ध दूसरों की सम्मति के साथ होता है। वह ठीक हो सकती है और गलत भी। परन्तु हमारा चरित्र ही वास्तविक तथ्य है जिसे देखने वाला परमात्मा होता है। हम उसे धोखा नहीं दे सकते। अत हमारे चरित्र मे और यश में एक रूपता होनी चाहिए तभी हम सच्चे आनन्द और सन्तोष के पात्र हो सकते हैं।

जिस मनुष्य का समाज मे आदर न हो और जिसका मरने के बाद आदर के साथ स्मरण न किया जाता हो उसका जीवन व्यर्थ होता है। जिसके स्मरण से ही हृदय प्रफुल्लित हो उठता हो और जिसका स्मारक मनुष्योंके हृदय मेंहो वह धन्य है। ऐसे महा भागों की अम्लान आभा भूमण्डल पर दीप्तिमान रहतीं और पक्ष धारण करके दिग् दिगन्तर में व्याप्त हो जाती है।

(आर्य समाज के सौजन्य से)

समाज किस ओर जा रहा है ?

(कल्याण सम्पादक हनुमानप्रसाद पोद्दार के एक भाषण का अंश)

दैवी और आसुरी समाज का यही भेद है कि दैवी समाज में दैवी गुणों का आदर तथा ग्रहण होता है और उन्हीं को जीवन की सर्वथा रक्षण करने योग्य बहुमूल्य सम्पत्ति माना जाता है एवं आसुरी समाज में दैवी गुणों का अनादर तथा त्याग होता है एवं आसुरी गुणों का सत्कार—ग्रहण होता है तथा उन्हीं को जीवन की परम सम्पत्ति मानकर उनके होने में गौरव का अनुभव किया जाता है। आज समाज में आसुरी भाव बढ़ रहा है, इसलिए सत्य, ईमानदारी, संयम और सदाचार तथा त्याग का तिरस्कार हो रहा है और असत्य, बेईमानी, असंयम, यथेच्छाचार तथा अधिकार का आदर तथा गौरव के साथ ग्रहण किया जा रहा है और इसी को आदर्श मानकर लोग बड़े चाव से आँखें मूँदकर इसी ओर दौड़े चले जा रहे हैं।

किसी युग में सत्य का आदर था, सत्यवादी ही बुद्धिमान् और चरित्रवान् माना जाता था। हरिश्चन्द्र और युधिष्ठिर का नाम लोग बड़े आदर से लेते और उन्हें आदर्श मानते थे। सत्य तथा ईमानदारी की रक्षा के लिए लोग बड़े से बड़ा त्याग करने को प्रस्तुत रहते थे। झूठ बोलने या किसी को धोखा देना समाज में ही नहीं, प्रत्येक व्यक्ति के अपने मन में भी बड़ा भारी अपराध था। कोई ऐसा करता या किसी का असत्य, बेईमानी या धोखे का बर्ताव साबित हो जाता तो समाज में उसका तिरस्कार होता था। उसे पाँच आदमियों के सामने—समाज के सामने झेंपना पड़ता था, नीचा देखना पड़ता था, समाज उसे नीची दृष्टि से देखता था। पर आज यह बात नहीं है। आज सभी जानते हैं कि हमारे यहाँ बड़े से बड़े व्यापारी भी ऐसे कोई विरले ही हैं, जो सच्चे तथा ईमानदार हों तथा जो व्यापार में चोरी बेईमानी न करते हों। सरकारी अधिकारियों में से भी सच्चे ईमानदार आदमी बहुत थोड़े ही हैं। बल्कि आज झूठ, चोरी बेईमानी को दक्षता, बुद्धिमानी, चातुरी और व्यापार कुशलता समझा जाता है और ऐसे लोग छाती ठोककर समाज के सामने अपना बड़प्पन प्रकट करते हैं तथा समाज उनका समर्थन तथा बड़प्पन को स्वीकार ही नहीं करता, उनकी पूजा करता, उन्हें सम्मान देता और उनका अनुकरण करना चाहता है। यह जो केवल अर्थ को सामने रखकर असत्य, बेईमानी का समर्थन और समादर है, यह जो चोर पूजा है सो आसुरी सम्पत्ति की प्रत्यक्ष विजय है! इसलिए समाज का एक २ व्यक्ति आज झूठ, चोरी, बेईमानी करके बड़ा आदमी बनना तथा समाज में पूजित होना चाहता है।

इसी प्रकार आज संयम का तिरस्कार हो रहा है। जहाँ हमारी गृहदेवियों का आदर्श सीता, सावित्री, लोपामुद्रा, अनसूया, सुकला सरीखी त्याग मूर्ति पातिव्रता सतियाँ, कौशल्या, सुमित्रा, विदुला के समान माताएँ मैत्रेयी, गार्गी, विश्ववारा, अपाला, चूडाला सरीखी ज्ञानमूर्तियाँ और दुर्गावती, लक्ष्मीबाई के सदृश वीराङ्गनाएँ थीं, वहाँ आज सिनेमा संसार की विलासविभ्रम रता, यथेच्छाचारिणी नर्तकियाँ आदर्श हो रही हैं। सीता, सावित्री का उपहास होता है, सतीत्व को कुसंस्कार बताया जाता है, सीता सावित्री के सच्चे इतिहासों को स्त्रियों की स्वतन्त्रता का अपहरण करने के लिए पुरुषों द्वारा गढ़ी हुई कहानियाँ कहा जाता है और केवल नृत्य, गीत, अभिनयकला को ही आर्य संस्कृति का मुख्य रूप बताकर हमारी बहू बेटियों को उसी

ओर लगाया जाता है और उनके मन में सिनेमा की नर्तकी बनने की अदम्य लालसा उत्पन्न की जाती है। इसके तीन प्रधान कारण हैं—पहला सम्मान दूसरा प्रचुर अर्थ की प्राप्ति और तीसरा असयम की छूट।

सिनेमा की नतकियों का प्राय सर्वत्र सम्मान होता है, उनके आचरण तथा व्यवहार की ओर जरा भी न देखकर उनके शरीर सौन्दर्य सुराले स्वर और अभिनयचातुरी की सरस बडी बात माना जाता है। हमारे राष्ट्रपति तथा देश के प्रधान मत्री तक से वे अबाध मिल सकती है, उनके छायाचित्र उतरते है, और उनके छायाचित्रों को समाचार पत्रो के मुखपृष्ठों पर छापा जाता है। उनका सभी क्षेत्र में आदर होता है। सत महात्माओ के दर्शनों के लिए शायद कोई भी अध्यापक, तरुण विद्यार्थी या व्यापारी इतना लालायित नहीं रहता, परन्तु किसी सिनेमा की नटी के दर्शनार्थ हजारों की भीड इकट्ठी हो जाती है और दर्शन न मिलने पर उपद्रव करने लगती है। देश विदेशों मे उनका नाम होता है और उनके चित्रो से घर सजाये जाते है। वोट लेने के लिये भी उनके चित्रो का उपयोग किया जाता है।

बडे से बडे मिनिस्टरों, जजों, आचायो को जो वेतन नहीं मिलता, उससे कहीं अधिक सिनेमा के नट नटियों को वेतन मिलता है और नाम हो जाने पर चारों ओर से उनकी माग होने लगती है। इसी से अच्छे सद्गृहस्थ भी चाहते है कि हमारी लडकी को कहीं नटी होने का सुअवसर मिल जाय तो हमारे भाग्य खुल जाय और इसीलिए आजकल नृत्य गान की शिक्षा का प्रसार बढ रहा है। नाम तो कला का है, परन्तु अधिकाश के मन मे रहती है—अर्थकामना।

सीना, पिरोना, कसीदे काढना, मोजे गजी बुनना, खाद्य पदार्थों का निर्माण करना तथा अन्यान्य गृह शिल्प की शिक्षा इसीलिये लडकियों को दी जाती थी कि जिसमे वे स्वय इन निर्दोष कामों को करके घर की आवश्यकता को बिना खर्च के पूरी कर सकें और कभी विपत्ति मे पडने पर इन निर्दोष कामों के द्वारा अपनी आजीविका भी चला सकें परन्तु नृत्य गीत एसी चीज है जो मनोरञ्जन की वस्तु है तथा ललित कला के नाते आदरणीय भी है परन्तु उसके द्वारा आजीविका चलाने का काम तो नृत्य गीत वृत्ति के अतिरिक्त अन्य प्रकार से होता नहीं, इसी से मन मे रहता है कि लडकी नृत्य गीत सीखी हुई रहेगी तो कभी उसे सिनेमा मे अवसर मिल सकता है क्योंकि सिनेमा मे जितनी पैसो की आमदनी होता है, उतनी किसी भी अन्य छोटे व्यापार या नौकरी में सम्भव नहीं। यह एक बडा आकर्षण है।

तीसरी बात है—असयम की। सयम, नियम आदि से जीवन पवित्र और आदर्श बनता है परन्तु उसके लिये कुछ त्याग करना पड़ता है, मन इन्द्रिया को पतन के प्रवाह से रोकने के लिये प्रयास करना पडता है, परन्तु सयम नियम के त्याग मे और मन इन्द्रियों के पतन प्रवाह के साथ बहने में कोई प्रयास नहीं करना पडता और जहा सयम नियम के त्याग की और यथेच्छाचार की प्रशसा होती है, वहा तो वह और भी प्रलोभन की वस्तु बन जाता है। सिनेमा नर्तकी इस सयमहीनता के पथ मे होड बदकर मानो दौड लगाती है। पर पुरुष का अबाध दर्शन और मिलन ही नहीं, परस्पर अङ्गों का स्पर्श—वहा जरा भी दोष की बात नहीं माना जाता। बल्कि उसमे दोष देखने वालों की हसी उड़ायी जाती है।परिणाम प्रत्यक्ष है। वे नट नटी इन्द्रिय विजयी शुकदेव तो हैं ही नहीं। स्खलन सहज है। बडे बडे त्यागी, तपस्वी, सयमी पुरुष भी जब सङ्ग दोष से पतित हो जाते हैं, तपस्वी त्यागियों के आश्रमों मे भी दोष हो जाते है, तब रात-दिन शृङ्गार विलास मे रहते हुए इन इन्द्रिया-

राम प्राणियों का पतन होना कौन आश्चर्य की बात है। शास्त्रकारों ने आठ प्रकार के मैथुन बतलाये हैं-

श्रवण कीर्तन केलि प्रेक्षण गुह्यभाषणम्।
सकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिष्पत्तिरेव च॥

चर्चा सुनना, चर्चा करना, मिलकर खेलना, देखना, एकान्त मे बातचीत करना, सकल्प करना, प्रयत्न करना और अङ्गसङ्ग करना। इनमे पहले पाच तो स्वाभाविक होते ही रहते हैं। कहा तो यह आदर्श था कि श्री सीताजी हनुमान का स्पर्श करना भी पाप मानती हैं और कहा हास विलास मे लगे हुए इन दुर्बलहृदय मनुष्यो के दिन रात इस प्रकार साथ रहने और स्पर्श भाषणादि की मर्यादा का सहज त्याग करके यथेच्छ आचरण करने में भी कोई दोष तो माना ही नहीं जाता, बल्कि उनकी तारीफ की जाती है।

इस प्रकार असयम और व्यभिचार प्रवृत्ति का खुले आम आदर सत्कार और पूजन हो रहा है और इसके फलस्वरूप समाज के प्राय सभी वर्गो में पुरुषमण्डल के सामने भले घर की बहू बेटी के नृत्य-गान में, परपुरुष और परस्त्री के अबाध मिलन में, परस्पर हास विलास मे, मानस पापवृत्ति के उदय में कोई दोष या पाप की भावना क्रमश घट रही है और समाज का चारित्रिक स्तर बडी तेजी से नीचे जा रहा है। लोग धन मान के लोभ में अपने चरित्र का नाश करने पर बडे चाव से उतारू हो रहे हैं।

तीसरा दोष आ गया है—सदाचार और त्याग के तिरस्कार का। हमारे यहा आचार को प्रथम धर्म बतलाया गया है पर आज आचार के त्याग में ही गौरव का बोध किया जाता है। इसी से जीवन उच्छृङ्खल तथा अत्यन्त खर्चीला बन गया है। लोग कहते हैं, 'हमें राम नहीं चाहिये, रोटी चाहिये।' बात एक अ श में ठीक है, रोटी मिलनी ही चाहिये। परन्तु रोटी की कमी का कारण देश में अन्न का कम उत्पन्न होना नहीं है, उसका प्रधान कारण है हमारा विलासपूर्ण उच्छृङ्खल खर्चीला जीवन। किसी छात्रावास में या पढे लिखे लोगों के घरों में जाकर देखिये—एक एक व्यक्ति के लिये पाच सात तरह के जूतों की पक्ति लगी मिलेगी। अ ग्रेजी ढग के कोट पतलून आदि घर घर मिलेंगे, इन पोशाकों के कपडों मे ही नहीं, सिलाई में इतने पैसे खर्च हो जाते है कि जितने मे एक साधारण आदमी का साल भर का सादे वस्त्रों का खर्च चल सकता है। महात्माजी के प्रयत्न से एक बार सादे धोती कुर्ते का प्रचार हुआ था पर अब वह प्राय उठ गया है और कोट पतलून का विदेशी पोशाक समाज में आ गयी है। 'रहन सहन का स्तर ऊ चा होना चाहिये' इस धारणा ने जीवन मे इतनी अनावश्यक आवश्यकताए और अभाव पैदा कर दिये है कि जिनके कारण खर्च अत्यधिक बढ गया है, त्याग की पवित्र भावना का तिरस्कार और उपहास होने लगा है तथा सादे जीवन और सादे रहन सहन वाले लोगों को मूर्ख, असभ्य और निम्न श्रेणी के समझा जाने लगा है। सादगी को जीवन का नीचा स्तर मानने के कारण सादे जीवन और सादी पोशाक में लज्जा का बोध होने लगा है, जीवन आडम्बर पूर्ण हो गया है और परिणाम में असदाचार और भोग की पूजा होने लगी है एव इस कामोपभोग परायण जीवन के लिये अर्थ की अनिवार्य आवश्यकता होने के कारण अन्याय असत्य से और चोरी हिंसा से अर्थोपार्जन का घोर प्रयत्न होने लगा है। साथ ही यह धारणा दृढ हो चली है कि अर्थोपार्जन के लिये भी इस प्रकार के असदाचारी और भोग परायण जीवन की आवश्यकता है। इसी के साथ साथ खान-पान की मर्यादा का नाश हो चला है। किसी भी मनुष्य के साथ खाना पीना और किसी भी वस्तु का खाना पीना सभ्यता तथा सुधार का ही लक्षण नहीं, अर्थोपार्जन के लिये भी आवश्यक माना जाने लगा है।

यों आज हमारे भारतीय समाज मे—प्रकारान्तर से चोर पूजा, व्यभिचारवृत्ति की पूजा और असदाचार की पूजा जोरों से होने लगी है और अब

समाज में प्रतिष्ठित, बड़ तथा आदर्श माने जाने वाले त्यागी, धनी, नेता, समाज सेवक और सरकारी अधिकारी ऐसा कहते हैं, तब इतर सभी लोग उन्हीं का अनुकरण करने के लिये लालायित और सचेष्ट हों, इसमें क्या आश्चर्य है। हमारे समाज की यह दशा अत्यन्त ही विचारणीय है। यह प्रवाह यों ही चलता रहा, यों ही पतन को प्रगति माना जाता रहा तो समाज कहा जाकर टिकेगा, कौन कह सकता है। चोरी, व्यभिचार, असदाचार कानून से बद नहीं होते, जब तक कि कानून बनाने वाले कानून मानने वाले और कानून को मनवाने वाले सभी लोग स्वय चोरी, व्यभिचार और असदाचार को हृदय से बुरा न समझे और उनसे घृणा न करें। पर यहा तो बात ही दूसरी हो रही है, उलटे कानूनो के द्वारा ही प्रकारान्तर से व्यभिचार, चोरी और असदाचार को प्रोत्साहन दिया जा रहा है— वर्तमान सिनेमा का प्रचार प्रसार और सरक्षण, अत्यधिक कर, विवाह और तलाक विधान आदि के द्वारा कानून की सहायता से स्त्रियों की सतीत्व मर्यादा, धनोपार्जन की शुद्ध निर्दोष वृत्ति और सदाचारी जीवन को कितनी ठेस पहुच रही है, इस पर गहराई से आज विचार नहीं किया जाता। लोगों की मनोवृत्ति में उच्छृङ्खलता की उत्पत्ति और एकमात्र भोग तथा अर्थ ही जीवन का परम लक्ष्य है. इस भ्रान्त धारणा के बद्धमूल हो जाने से आज सभी क्षेत्रों मे मनुष्य का जीवन अमर्यादित आसुर जीवन में परिणत होता जा रहा है और इसका परिणाम मानव जीवन के लिय कितना दु खद होगा, गीता की भाषा में उसे सुनिये और विचारिये तथा उससे बचने का प्रयत्न कीजिये—

> चिन्तामपरिमेया च प्रलयान्तामुपाश्रिता।
> कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिता ॥
> आशापाशशतैर्बद्धा कामक्रोधपरायणा।
> ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान् ॥
> अहकार बल दर्प काम क्रोध च सश्रिता।
> मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयका ॥
> तानह द्विषत क्रूरान् ससारेषु नराधमान्।
> क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥
> आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि।
> मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमा गतिम् ॥
> (श्रीमद्भगवद्गीता १६। ११ १२, १८ १६ २०)

मरणपर्यन्त रहने वाली अपार चिन्ताओं से घिरे हुए, कामोपभोग मे लगे हुए उन्होंने यह निश्चित सिद्धान्त मान लिया है कि कामोपभोग ही जीवन का लक्ष्य है, अत आशारूपी सैकड़ों पाशों मे बधे हुए काम क्रोधपरायण होकर वे काम भोगों की प्राप्ति के लिये अन्यायपूर्वक अर्थसचय करते हैं। एव अहकार, (भौतिक) बल,दर्प काम,क्रोध का आश्रय लिये हुए, दूसरों मे दोष देखने तथा उनकी निन्दा करने वाले वे लोग अपने तथा दूसरों के शरीर में स्थित मुझ (भगवान) से द्वेष करते रहते हैं। ऐसे उन द्वेष करने वाले निर्दय नराधमो को मैं (भगवान्) ससार मे बार बार आसुरी योनियों मे पटकता हू। भैया अर्जुन! वे मूढ लोग मुझको न पाकर (जिसके लिये उन्हें मानव जीवन मिला था) जन्म जन्म में आसुरी योनियो को प्राप्त होते हैं और फिर उससे भी अत्यन्त नीच गति (नरकादि) में जाते हैं।

मानव जीवन की इस भयानक असफलता से बचकर मानव जीवन के प्रधान तथा वास्तविक लक्ष्य की प्राप्ति का उपाय बताते हुए भगवान् कहते हैं—

> त्रिविध नरकस्येद द्वार नाशनमात्मन।
> काम क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत् त्रय त्यजेत् ॥
> एतैर्विमुक्त कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नर।
> आचरत्यात्मन श्रेयस्ततो याति परा गतिम् ॥
> (श्रीमद्भगवद्गीता १६। २१ २२)

असयत काम, क्रोध और लोभ—ये तीन प्रकार के नरक के द्वार आत्मा को अधोगति में पहुँचाने वाले हैं, अतएव इन तीनों को त्याग देना चाहिये। भैया अर्जुन! इन तीनों नरकद्वारों से बचा हुआ पुरुष ही अपने कल्याण के लिये आचरण करता है और उससे वह परमगति को प्राप्त होता है।

आत्म-तत्व

आर्य संस्कृति की विचार धारा के २ रूप हैं—एक इह लोकिक, दूसरा पारलोकिक। आर्य संस्कृति ने जीवन के कार्य क्रम का निर्माण जिस विचार को आधार बनाकर किया है यह विचार है—शरीर के पीछे आत्मा है, प्रकृति के पीछे परमात्मा है। शरीर आत्मा का साधन है और प्रकृति परमात्मा का साधन है। यह इहलौकिक विचार है जिससे आर्य संस्कृति ने अपने जीवन के प्रति दृष्टिकोण को बनाया है। शरीर हो, आत्मा न हो प्रकृति हो परमात्मा न हो तो जीवन की दिशा एक तरफ चली जाती है। शरीर हो परन्तु आत्मा का साधन हो, प्रकृति हो परन्तु वह परमात्मा का साधन हो तो जीवन की दिशा दूसरी तरफ चल पड़ती है। आर्य संस्कृति की जीवन दिशा इस दूसरी तरफ ही गई है। इस दिशा की ओर जाते हुए आर्य संस्कृति के इहलौकिक जीवन का कार्यक्रम बना है। निष्काम कर्म, आश्रम व्यवस्था, यज्ञ, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अपरिग्रह, प्राणी मात्र मे आत्म भावना आर्य संस्कृति के इन सब इहलौकिक विचारों का उद्गम आत्म तत्व की कल्पना से ही हुआ है। आत्म तत्व एक पारलौकिक कल्पना नहीं है। आर्य संस्कृति मे आत्मतत्व को एक वैसी ही इहलौकिक वस्तु माना गया है जैसे हम प्रकृति तत्त्व को मानते हैं। हा, जैसे जो लोग प्रकृति को ही यथार्थ तत्त्व मानते हैं वे प्रकृति की छानबीन मे लग जाते हैं और प्रकृति के सम्बन्ध मे भी सैकडों पारलौकिक कल्पनाएं कर डालते है वैसे क्योंकि आर्य संस्कृति के उपासक आत्म तत्त्व को यथार्थ तत्त्व मानते थे इसलिए आत्मतत्व के पारलोकिक स्वरूप की उन्होने भी खूब छानबीन की, खूब चर्चा की। क्या आत्म तत्त्व प्रकृति तत्व जैसा एक स्वतन्त्र तत्त्व है जिससे हम सबका भिन्न २ आत्मा विकसित होता है? क्या आत्म तत्त्व परमात्मा का भी आधार भूत तत्त्व है? क्या प्रकृति तत्त्व का विकास भी इस आत्म तत्त्व से होता है? आत्मा-परमात्मा एक है या इनका मौलिक भेद है? जड चेतन एक है या इनका मौलिक भेद है? त्रैत वादियों की तरह आत्मा, परमात्मा प्रकृति इन तीनों को पृथक २ मानें, परमात्मा और प्रकृति को ही यथार्थ सत माने, आत्मा को परमात्मा की रचना मान, वेदान्तियों की तरह प्रकृति और जीव को ब्रह्म का ही रूपान्तर मानें—ये सब पारलौकिक विचार हू। इन सब विचारो को आर्य संस्कृति ने जन्म दिया है। इन सब विचारों का आर्य संस्कृति के विकास पर प्रभाव भी पडा है। परन्तु इन सब विचारो का आधारभूत इहलौकिक विचार, इन सब विचारों का सार, वह विचार जो भिन्न २ पारलौकिक विचारों के होते हुए भी सब मे समान है एक ही विचार है और वह यह कि आत्मतत्त्व एक इहलौकिक यथार्थ सत्ता है। हमे अपने वैयक्तिक और सामाजिक जीवन का विकास इस सत्ता को मानकर करना है इसके बिना माने नहीं। प्रकृति तत्त्व के सम्बन्ध मे भिन्न २ कल्पनाओं के होते हुए भी इसका अन्तिम पारलौकिक रूप क्या है, परमाणु है इलेक्ट्रोन है, वे भी धन-ऋण विद्युत के आवेश के बिना कुछ हैं या कुछ नहीं—इन विविध कल्पनाओं के होते हुए भी प्रकृति तत्त्व को आधारभूत तत्व मान कर जीवन का एक प्रकार का विकास-

क्रम बना है और बनता चला जा रहा है। ठीक इसी प्रकार आत्म तत्त्व के सम्बन्ध में भिन्न २ कल्पनाओं के होते हुए भी इसका अन्तिम रूप पारलौकिक रूप क्या है, एकत्व ठीक है, द्वैत ठीक है अद्वैत ठीक है, मुक्ति का स्वरूप क्या है, मुक्ति से लौट आते हैं, नहीं आते, पुनर्जन्म कैसे होता है, आत्मा पशु योनि में लौट करजाता है, नहीं जाता—इन विविध मान्यताओं पर विचार करते हुए, इन सब में एक मत न होते हुए भी आत्म तत्त्व को आधारभूत मूलतत्त्व मानकर जीवन का एक दूसरी प्रकार का विकास-क्रम बना था। आर्य संस्कृति के विचारकों ने बनाया था। उनका दावा था कि जीवन की यही दिशा मनुष्य को सुख, शांति और सन्तोष दे सकती है, दूसरी नहीं। हमने सदियों तक दूसरी दिशा की तरफ जाकर देख लिया। उससे न सुख मिला न शांति मिली, न सन्तोष मिला। ज्यों २ हम उस दिशा की ओर बढ़ते हैं त्यों २ सुख, शांति और सन्तोष से दूर होते चले जा रहे हैं। क्या आज समय नहीं आ गया कि हम आत्म तत्त्व को प्रकृति की तरह यथार्थ सत्ता मानकर उसके मार्ग पर चल कर भी देखें और देखें कि जिस सुख, शांति और सन्तोष की खोज में मानव समाज भटक रहा है वह ऋषि मुनियों के बताए मार्ग पर चलने से मिलता है या नहीं। (आर्य संस्कृति के मूलतत्त्व पृ० ६६ ६८)

अन्तःकरण और धर्म

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है—

"जब आत्मा मन इन्द्रियों को किसी विषय में लगाता वा चोरी आदि बुरी या परोपकार आदि अच्छी बात के करने का जिस क्षण आरम्भ करता है उस समय जीव की इच्छा ज्ञानादि उसी इच्छित विषय पर झुक जाता है उसी क्षण आत्मा के भीतर से बुरे काम करने में भय, शंका और लज्जा तथा अच्छे कामों के करने में अभय, निःशंकता और आनन्दोत्साह उठता है। वह जीवात्मा की ओर से नहीं किन्तु परमात्मा की ओर से है और जब जीवात्मा शुद्ध होकर परमात्मा का विचार करने में तत्पर रहता है उसको उसी समय दोनों प्रत्यक्ष होते हैं। (सप्तम समुल्लास)

यहां ईश्वर सिद्धि का प्रकरण था अतः ज्ञात होता है कि महर्षि दयानन्द ईश्वर के अस्तित्व का एक प्रमाण यह भी समझते थे कि मनुष्य के अन्तःकरण में उचित अनुचित में भेद करने की एक शक्ति है जो ईश्वर प्रदत्त है। अंग्रेजी में इसी को कान्शेन्स (Conscience) के नाम से पुकारते हैं, फिन्ट अपने 'आस्तिकवाद' पुस्तक के पृ० २१० पर लिखता है—

"कुछ ग्रन्थकारों ने सदाचार सम्बन्धी नियम को जो मनुष्य के अन्तःकरण द्वारा ज्ञात हो सकता है ईश्वर अस्तित्व का सबसे बड़ा प्रमाण माना है। उनकी दृष्टि में अन्य प्रमाणों की आवश्यकता ही नहीं रहती। जिस काण्ट ने अपनी तर्क बुद्धि से यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया था कि जितना मनुष्य अपनी तर्क शक्ति का ईश्वर विषय में प्रयोग करता जाय उतना ही वह भूल भुलैइयों में फँसता जायगा, उसी काण्ट को यह मानना पड़ा कि व्यावहारिक बुद्धि और अन्तःकरण द्वारा ईश्वर की ऐसी साक्षी मिलती है कि सन्देहवाद के लिए कोई स्थान नहीं रहता। सर विलियम हैमिल्टन ने भी यही माना है कि ईश्वर के अस्तित्व और जीवके अमर होने का यही उत्तम प्रमाण है कि मनुष्य में आचार सबंधी ज्ञान प्राप्तकरनेकी योग्यता है। डा०-यूमैन अन्तःकरण को धर्म का मूलाधार बताते हैं। उनका आग्रह है कि प्राकृतिक धर्म के सिद्धांतों को इसी मुख्य नियम के आधार पर निश्चित करना चाहिए। जर्मनी के आस्तिकवादी डाक्टर शैकिल ने अपने समस्त आस्तिकवाद की आधार शिला अन्तःकरण पर ही रखी है। उनका प्रारम्भिक सिद्धांत यह है कि अन्तःकरण आत्मा की धर्म सम्बन्धी इन्द्रिय है और उसी से हम ईश्वर का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। (आस्तिकवाद)

वैदिक कर्त्तव्य शास्त्र के आधारभूत मूलसिद्धांत

१—परमेश्वर सब प्राणियों का एक ही पिता है।

अत इस सबको परस्पर भ्रातृभाव मित्र दृष्टि धारण करनी चाहिए। अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के लिए प्राणियों की हिंसा करना अनुचित है। द्वेष भाव को दूर करके प्रेम भाव की वृद्धि करनी चाहिए।

२—परमेश्वर सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है।

उसकी अध्यक्षता में सार्वभौम अटल नियम काम कर रहे हैं। इनका पालन करने से ही मनुष्य का कल्याण हो सकता है। इनका उल्लंघन करना अपने को आपत्तियों के मुंह में डालना है।

३—मनुष्य जीवन का उद्देश्य दिव्य शांति, दिव्य ज्योति दिव्य आनन्द अथवा मोक्ष प्राप्त करना है।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना उपासना तथा निष्काम शुभ कर्मों का अनुष्ठान (यज्ञ) करना मुख्य साधन है।

४—आत्मा दिव्यशक्ति सम्पन्न, अमर और शरीर, मन तथा बुद्धि का अधिष्ठाता है।

सब प्राणियों में आत्मौपम्य दृष्टि को धारण करते हुए व्यवहार करना चाहिए। आत्मा के अन्दर काम क्रोधादि शत्रुओं को वश में करने की पूर्ण शक्ति विद्यमान है। उसको ईश्वर भक्ति, आत्म विश्वासादि द्वारा विकसित करते हुए पवित्र जीवन व्यतीत करना चाहिए।

५—"कर्म नियम संसार में काम करता है।"

किए हुए कर्म के फल से कोई अपने को बचा नहीं सकता। परमेश्वर कर्म फल-दाता है। प्रार्थनादि का उद्देश्य भावी पाप से अपने को मुक्त करना है।

६—'प्रत्येक व्यक्ति को सदा अंधकार से प्रकाश, मृत्यु से अमृत और पाप से पुण्य मार्गकी ओर आने का यत्न करना चाहिए।'

इसके लिए दृढ़ निश्चय अत्यावश्यक है।

७—शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियों का समविकास होना चाहिए।

इनमें से किसी एक शक्ति का विकास होना पर्याप्त नहीं। समविकास ही उन्नति का मूलमंत्र है।

८—व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र में लगभग एक ही अटल व्यापक नियम कार्य कर रहे हैं।

व्यक्ति और समाज का अटूट सम्बन्ध समझते हुए व्यक्ति को अपनी शक्तियां समाज की सेवा मे लगा देनी चाहिए।

९—बाह्य और आंतरिक स्वाधीनता अथवा स्वराज्य को प्राप्त करने से ही सुख प्राप्त हो सकता है।

स्वतंत्रता में ही आनन्द है तथा परतंत्रता में दुःख है। अत स्वतंत्रता का संरक्षण करना प्रत्येक व्यक्ति तथा समाज का मुख्य धर्म है।

१०—कर्त्तव्य का निर्णय ईश्वरीय ज्ञान वेद, वेदानुकूल स्मृतियों, सत्पुरुषों के आचरण तथा पवित्र अन्त करण की साक्षी से होता है।

सदाचारादि भी उसमें सहायक हैं।

११—'सत्य' ही के कारण इस पृथिवी का धारण हो रहा है।

सत्य, यज्ञ और श्री इन तीनों को उत्कृष्ट समझते हुए सत्य की रक्षा के लिए सर्वस्व तक अर्पण करने को उद्यत रहना चाहिए।

१२—परमेश्वर को सदा अपना रक्षक समझते हुए प्रत्येक व्यक्ति को अपने भीतर निर्भयता पूर्ण रूप से धारण करनी चाहिए।

(धर्मदेव विद्यामार्त्तण्डकृत वैदिक कर्त्तव्य शास्त्र पृ० २४)

शास्त्रों में विकासवाद ?

आजकल के वैज्ञानिक सिद्धान्तों को प्राचीन शास्त्रों मे दिखलाने के लिए बडा प्रयत्न किया जाता है। ऐसा करने मे गर्व का अनुभव होता है, पर कभी-कभी इसका क्या परिणाम होता है, इस पर ध्यान नहीं दिया जाता। उदाहरणार्थ कुछ विद्वान विकासवाद भी अपने यहां के प्राचीन शास्त्रों में दिखला रहे है, पर वे यह नहीं सोचते कि ऐसा कर वे चेतन से सृष्टि पुनर्जन्म, कर्म फल आदि के अमूल्य सिद्धान्तों पर पानी फेर रहे हैं। अपने यहा मुख्य दर्शनों से जो कुछ सिद्ध किया गया विकास वाद ठीक उसके विपरीत है।

एक विद्वान् ने "या ओषधी पूर्वा जाता" इस वेद मत्र से विकासवाद की पुष्टि की है। मत्र जरा युज अण्डज और अष्मजों के पूर्व ओषधियों का होना बतलाता है। यह ठीक ही है, पर इससे वह सिद्ध नहीं होता कि 'ओषधियों से प्राणी बन गये, इस प्रकार एक बार ब्रिटेन के प्रोफेसर हक्सले ने भी "आकाशाद् वायु' का वैदिक सिद्धात लेकर कहा था कि 'पूर्व काल में भारत में भी विकासवाद माना जाता था।' परन्तु इसमें भी डाविन के विका सवाद का गन्धलक नहीं।

प्राकृतिक पदार्थों का आदि और मूल कारण ईश्वर है। उसी की कल्पना और तरङ्गावली से विद्युत् प्रकाश, शब्द और गर्मी पैदा होती है। उसी के सूक्ष्मातिसूक्ष्म कण 'एलेक्ट्रोन' कहलाते हैं इन 'एलेक्ट्रोनो' के सङ्घात से ही विद्युत् होती है। यही शक्ति के रूप से स्थूल आकार में 'मैटर' कहलाता है। 'मैटर' की विरल दशा को 'गैस', तरल दशा को 'लीक्विड' और ठोस दशा को 'सालिड' कहते है। ईश्वर से उत्पन्न यह पदार्थ घनीभूत होकर और आकर्षानुकर्षण के नियम से चक्राकार गति में हो जाते हैं। कुछ दिनों में यही चक्र सूर्य हो जाता है, सूर्य में गर्मी और गति के कारण चक्कर पड़ जाते हैं और जुदा होकर दूसरे ग्रह बन जाते हैं। उन ग्रहों से दूसरे उपग्रह बनते हैं, इसी प्रकार के ग्रहों में हमारी पृथ्वी भी एक ग्रह है। यह पृथ्वी पहले तरल थी धीरे धीरे ठण्डी हुई, समुद्र बने, उनमे भूमि निकली और जीवन आरभ हुआ। जड से ही प्राणी पैदा हो गये।

पहले पृथ्वी पर न जन्तु, किन्तु दोनों को उत्पन्न करने वाली चेतनता थी। उसकी एक शाखा एक कोषधारी 'अमीवा' (एक प्रकार का कीट) बन गया। अमीवा इतने बढे कि उनके खाने पीने की दिक्कतें होने लगीं, वे नाना प्रकार के प्रयत्न करने लगे। उनकी सतति जो शारीरिक प्रयत्न और मानसिक अभ्यास से बलवान् थी जीवन सग्राम में बच गयी, वह फिर बढ गयी। भोजन की तङ्गी के कारण सङ्ग्राम जारी रहा और योग्य बचे, अयोग्य मारे गये। बचे हुए अमीवा पहले वालों से कुछ भिन्न प्रकार के थे। इनमें भी वही क्रम जारी रहा और बहुत दिनों के बाद मरते बचते तथा परिस्थिति के अनुसार आकार प्रकार बदलते २ मछली, मण्डूक, सर्प पक्षी गाय, बैल, बन्दर बन मनुष्य और मनुष्य की उत्पत्ति हुई, पहले मनुष्य जङ्गली था, धीरे २ वह सभ्य बन पाया है। सक्षेप में यही विकासवाद है क्या इसका समथन अपने यहा के शास्त्रों में मिलता है ?

विकासवाद का क्रम किस प्रकार चलता है। उसमें परिवतन किस प्रकार होते है, इन सबके सम्बन्ध में वैज्ञानिकों ने बहुत खोज की है। पर यहा उसमे जाने की आवश्यकता नहीं। उन सबकी आलोचना तो कोई वैज्ञानिक ही करेगा। यहां तो हमें केवल इतना ही दिखलाना है कि अपने शास्त्रों से विकासवाद का समर्थन नहीं होता। शास्त्रीय

महर्षि जीवन

मै धार्मिक बन्धनों को मानता हू !

एक दिन शाहपुरा मे दधिमथ स्वामी जी के पास आया। स्वामी जी ने कहा 'आइए' व्यास जी बैठिए। आज मुझे भी छुट्टी है आपसे वार्त्तालाप करने में पूरा सुभीता होगा।' व्यास ने निवेदन किया 'भगवन ! छुट्टी तो बद्ध लोगों के लिए हुआ करती है। आप तो परमहंस हैं। पूर्ण स्वाधीन और स्वच्छन्द हैं। आपको ऐसा कौनसा बन्धन शेष है जिससे आपने आज अवकाश मनाया है ?

स्वामी जी ने उत्तर दिया 'मैं सारे धार्मिक बन्धनों को मानता हू। वर्णाश्रम से नाति रीति में उच्छृंखल और निरङ्कुश नही हू। स्वच्छन्दतापूर्वक ही वेद-भाष्य आदि का कार्य किया करता हूँ। आज उससे छुट्टी मनाई है।

केवल नाम से ही निस्तार नहीं हो जाता !

एक राम सनेही सज्जन ने स्वामी जी के निकट आकर निवेदन किया 'केवल नाम से ही निस्तार हो जाता है भव सागर पार उतरने के लिए नामी के गुणों को जानना कोई आवश्यक नहीं है।'

स्वामी जी ने कहा 'परमानन्द की प्राप्ति के लिए

दृष्टि से तो विकास की अपेक्षा ह्रास पक्ष ही सङ्गत जचता हैं। सत्युग के प्राणी आज के प्राणियों की अपेक्षा बहुत बड़े थे। युगह्रास से सब मे ह्रास हो रहा है। जो गायें पहले बड़ी होती थीं, वे भी आज छागप्राय हो रही है—"छागप्रायासुधेनुषु" भागवत १२, २, १४)। किन्तु विकास का कहना है कि भीमकाय प्राणी भी अमीबा के ही विकास थे परिस्थिति प्रतिकूल होने से वे नष्ट हो गये।" यदि ऐसा हो, तो विकासवाद का यान्त्रिक सिद्धान्त कैसे सत्य ठहरता है ? सृष्टि का यह नियम है कि पहले भोग्य, फिर भोक्ता उत्पन्न होता है और कर्मानुसार प्राणी ही भोक्ता होता है सादी रचना वाले भोग्य और क्लिष्ट रचना वाले भोक्ता बनते है। यदि ऐसा न हो, तो कोई भोग्य किसी के काम ही न आये। वनस्पति यदि भाग जाय तो पशु कैसे जियें। घोड़ा यदि मनुष्य से अधिक बुद्धिमान हो जाय तो उससे सवारी का काम कैसे लिया जाय। इसव्यवस्था के अनुसार पहले वनस्पति, फिर पशु (जिनमें हाथी से कृमिपर्यन्त सम्मिलित हैं, और अन्त मे मनुष्य पैदा हुए। इस प्रकार ही उत्पत्ति तो अपने यहा के शास्त्रों को भी मान्य है। पर इससे क्रमिक विकास की बात सिद्ध नहीं होती।

विकासवाद पर विश्वास का आज भयानक परिणाम दिखाई पड़ रहा है। विकासवाद में निर्बलों के लिए समाज मे स्थान की बात ही क्या, उन्हें जीने का ही अधिकार नहीं। इसमें विश्वास रखने से क्या समाज की भलाई हो सकती है ? इसमें नैतिक बल की गुञ्जाइश ही नहीं इसमें तो पाशविक बल का ही प्राधान्य है। आज संसार में उसीका बोल बाला है, सर्वत्र निर्बलों को दबाया जा रहा है।

विकासवाद पर पूरी तरह विचार करने की आवश्यकता है हमें आशा है कि हमारे विद्वान् लेखक इस ओर ध्यान देंगे।

(सिद्धांत वर्ष १३ अंक ६ पृ० १११-११२)

नामी के गुणों का ज्ञान होना अत्यावश्यक है। जैसे शब्द के साथ ही उसके अर्थ का बोध होजाता जल कहते ही शीत गुण प्रधान द्रवीभूत जल पदार्थ की प्रतीति होती है, ऐसे ही नाम लेते ही उसके वाच्य का ज्ञान हो जाना चाहिए। जैसे जल शब्द कहते ही उसके वाच्य का ज्ञान होना और उसकी प्राप्ति की क्रिया करना परमावश्यक है ऐसे ही नाम और उसके अर्थ को जानना तथा उसकी प्राप्ति के लिए प्रत्याहार, धारणा और ध्यान आदि क्रिया करना अत्यन्त आवश्यक है।"

मैं जीव हूं!

एक दिन जोधपुर में महाराजा प्रतापसिंह ने निवेदन किया कि 'भगवन! आप ब्रह्म हैं' अथवा जीव?

स्वामी जी ने कहा 'मैं जीव हूं।' महाराजा महाशय ने कहा 'हमारे पण्डित तो हमें ब्रह्म बताया करते हैं।'

स्वामी जी ने उपदेश देते हुए कहा कि आप ब्रह्म होते तो आप में ब्रह्म के गुण भी पाए जाते। उसके सर्वज्ञता आदि गुण आप में नहीं है इसलिए आप जीव हैं। ब्रह्म में भूल और अशुद्धि का मानना भारी भ्रम है।"

न्याय करने मे न्यूनता न आने दो!

महाराज महाशय ने फिर निवेदन किया—भगवन! कोई ऐसा उपाय या साधन बताइए जिस से विविध वासनाओं के पाश में बद्ध मेरे जैसे मनुष्य की भी मुक्ति हो जाय?" महाराज ने कहा 'आप लोगों के दूसरे कर्म तो मोक्ष मार्ग के नहीं है किन्तु एक काम करना आपके आधीन है और वह निरपेक्ष न्याय करना है। यदि आप प्रजा का न्याय करने में न्यूनता न आने देंगे तो आपका आत्मा इसी से निर्लेप होकर निर्वाण पद पा लेगा।

दो चार राजपूतों की पीठ ठोक देता!

महाराज अपने व्याख्यानों में सभी मत-मतान्तरों पर प्रसंगानुसार समालोचना कर दिया करते थे। कोई कितना ही सत्ताधारी सामने क्यों न बैठा होता प्रकरणानुसार वे उसके मत के भ्रम- मूलक विचारों पर आक्षेप कर ही देते। जोधपुर में भगवान दयानन्द ने मुसलमान मत पर भी समालोचनात्मक भाषण दिया। उसको सुनकर भैया फैजुल्ला खां के तन बदन में आग सी लग गई। वे बहुत ही चिढ़कर बोले 'स्वामी! यदि मुसलमानों का राज्य होता तो आपको लोग जीवित न छोड़ते। उस समय आप ऐसे भाषण भी न कर पाते।'

स्वामी जी ने खान महाशय को बड़ी धीरता से उत्तर दिया 'यदि ऐसा अवसर आता तो मैं भी कभी थरथराहट में न आता और निठल्ला न बैठता किन्तु निधड़क मन से दो चार वीर राजपूतों की पीठ ठोककर विरोधियों के धुर्रे उड़ा देता। ऐसा छकाता कि उनके छक्के छूट जाते।" महाराज के इस उत्तर से खान महाशय सटपटा गए।

शिष्यों से मुझे कोई आशा नहीं है!

एक दिन रावराजा ज्वानसिंह जी ने महाराज से नम्र निवेदन किया 'प्रभो! आप कोई सुयोग्य शिष्य तो बनाइए जिसमें आपके उद्देश्यों की लड़ी बीच में कहीं टूटने न पाए।'

भगवान दयानन्द ने कहा 'शिष्यों से मुझेकोई आशा नहीं है। ऐसा एक भी सुपात्र और सुयोग्य शिष्य मुझे न मिल सका जिसके हाथ में अपने कार्य की बागडोर सौंप सकूं। अब तो मेरे शिष्य सभी आर्य सामाजिक हैं। वे ही मेरे विश्वास और भरोसे के भव्य भवन हैं। उन्हीं के पुरुषार्थ पर मेरे कार्यों की पूर्ति और मनोरथ की सफलता अवलम्बित है।"

महिला जगत

निकट सम्बन्धियों में विवाह वर्जन का कारण

[लेखक—'अज्ञात']

डेविस महोदय लिखते हैं 'जिस प्रकार प्राण विद्युत प्राण विद्युत को हटाती है—आकर्षण नहीं करती उसी प्रकार निकट सम्बन्ध मे विवाह हो जाने पर जैसा आकर्षण होना चाहिए वैसा स्त्री पुरुषों में नहीं होता। यह नियम है कि प्राण विद्युत रयि (मन की) विद्युत आकर्षण करती है अथवा यों कहो कि विरुद्ध प्रकार की बिजलियों में जिस प्रकार आपस में मेल होता है ठीक उसी प्रकार दूर के विवाह सम्बन्धों में परस्पर प्रेम बढ़ता है। अतएव निकट सम्बन्ध में कदापि विवाह न होना चाहिए।

मनु कहते हैं—

असपिण्डा च या मातुर सगोत्रा च या पितु
सा प्रशस्ता द्विजातीनां दार कर्मणि मैथुने॥

(मनु० अ० ३ २१)

द्विजों में उस कन्या के साथ विवाह सर्वोत्तम होता है जो माता के कुल की और पिता के गोत्र की न हो।

याज्ञवल्क्य स्मृति में आया है:—

अविप्लुत ब्रह्मचर्य्यो लक्षण्यां स्त्रिय मुद्वहेत।
अनन्य पूर्विका कान्तामसपिण्डा मवी यसीम्॥
अरोगिणीं भ्रातृमतीम समानार्ष गोत्र जाम्।
पंचमांत सप्तमादूर्ध्वं मातृत पितृतस्तथा॥

(याज्ञ० १-५२,५३)

पूर्ण ब्रह्मचर्य धारण कर लेने पर मनुष्य को सुन्दरी, युवती, निरोगिनी, विदुषी भिन्न गोत्र की और भाईयों वाली कन्या के साथ जो माता के कुल की ५ और पिता के कुल की ७ पीढियो मे न हो विवाह करना चाहिए।

हमारे वैदिक ऋषियों ने निकट सम्बन्धों के विवाहों की हानियों को जिस सूक्ष्मता से अनुभव किया था उसका समर्थन आज के प्राणी विज्ञान के अनुसंधानों से भली प्रकार हो रहा है जिसकेप्रमाण में एक अवतरण ऊपर दिया गया है। इस प्रकार के अनेक प्रमाण उपलब्ध होते हैं। यहा २ ४ अवतरण और दिए जाते है।

'प्राणियों के जन्म के लिए काम प्रवृत्ति इतनी महत्त्व पूर्ण है कि उसकी सामान्य विशेषताओं की उपयोगिता पर गम्भीर विचार आवश्यक है। एक ही वर्ग में विवाह न करने के मौलिक कारण का आधार प्राणी विज्ञान से सम्बद्ध है जिसका पशुओं और पौधों से सम्बद्ध अनेक तथ्यों से समर्थन होता है। पौधों की स्वत उपज और पशुओं की एक जैसी नसल ये दोनों ही वंश वृद्धि के लिए हानिकारक है।"

प्रो० ईवार्ट के कथनानुसार 'प्रकृति एक नियत सीमा तक एक ही नस्ल के प्रजनन को सहन करती है। यह बात विचारणीय है कि रक्त परिवर्तन न

युक्ताहार विहारस्य योगो भवति दुःखहा

अपनी प्रिय पत्नी यशोधरा को नव जात पुत्र राहुल को स्नेह मूर्ति पिता महाराज शुद्धोदन को न था वैभव सम्पन्न राज्य को ठुकराकर युवावस्था में ही गौतम घर से निकले थे। उन्हें रोग, बुढापे और मृत्यु पर विजय पानी थी। उन्हें अमरत्व अभीष्ट था वे गया के समीप वन में तपस्या करने लगे थे।

जाडा, गरमी और वर्षा में भी गौतम वृक्ष के नीचे नग्न अपनी वेदिका पर स्थिर बैठे रहे। उन्होंने सब प्रकार का आहार बंद कर दिया था। दीर्घ कालीन तपस्या के कारण उनके शरीर का मास और रक्त सूख गया। केवल हड्डियां और चमड़ा शेष रहा।

गौतम का धैर्य अविचल था। कष्ट क्या है, इसे वे अनुभव ही न करते थे किन्तु उन्हें अपना अभीष्ट प्राप्त न हो रहा था।

एक दिन उस स्थान के समीप के मार्ग से कुछ गायिकाएं निकलीं। वे किसी नगर के उत्सव में भाग लेकर अपने घर लौट रही थीं। मार्ग में भी वे गाती, बजाती और आमोद प्रमोद करती आ रही थीं। जब वे गौतम के पास से निकलीं तब एक गीत गा रही थी। उस गीत का भाव यह था सितार के तारों को ढीला मत छोड़ो। ढीला छोड़ने से वे सुस्वर नहीं उत्पन्न करेंगे परन्तु इतना खींचो भी मत कि वे टूट जाय"

गौतम के कानों में यह संगीत ध्वनि पड़ी। उनकी प्रज्ञा में सहसा प्रकाश आ गया। साधना के लिए शरीर को सुखाने का मार्ग उपयुक्त नहीं। संयमित भोजन तथा नियमित निद्रादि व्यवहार ही उपयुक्त है। यह मध्यम मार्ग उन्हें स्पष्ट सूझ गया। उसी समय उन्होंने अपना आसन छोड़ दिया और नदी की ओर चल पड़े।

❀

होने से वश वेल सूख जाती है।

(वेस्टर मार्क का विवाह का संक्षिप्त इतिहास पृ० ९९ १०१)

यदि रक्त सम्बन्ध में विवाह किया जायगा तो सन्तान भद्दी और प्रतिभा शून्य होगी, खाने पीने और सोने में तो वह चतुर होगी परन्तु बौद्धिक और आत्मिक कार्यों के अयोग्य होगी।

साथ ही अधिक स्वार्थी होगी। यदि रक्त सबंध में विवाह करने की प्रथा बंद न हुई तो मनुष्यजाति का विनाश अवश्यम्भावी है। ससार में आज अधिक विषय वासना पाई जाती है। रक्त संबंधी विवाहों की सन्तान बहुत विषयी सिद्ध हुई है। अमेरिका इत्यादि देशों में कई बार शोर मच चुका है कि इस प्रकार के विवाहों को सरकारों को त्याज्य और दण्डनीय ठहराना चाहिए ताकि अयोग्य संतान पैदा न हों।"

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
(महत्त्वपूर्ण निश्चय)

पौरोहित्य परीक्षा पटल

'आर्य समाज में यथा विधि संस्कार कराने और वेद मंत्रों को शुद्ध और सार्थक पढ़ने योग्य पुरोहितों की प्राय कमी है। इस त्रुटि को पूर्ण करने के लिए आवश्यक है कि सार्वदेशिक सभा द्वारा पौरोहित्य परीक्षा-पटल बनाया जाय जो परीक्षा पाठ विधि तय्यार करे और वार्षिक परीक्षा लिया करे। परीक्षार्थियों की शिक्षा के लिए भिन्न २ गुरुकुलों में शिक्षा केन्द्र बनाए जावें और आर्य प्रतिनिधि सभाएं इसका प्रचार करें कि उन पुरोहितों से कार्य लिया जावे।"

(अन्तरंग सभा ३०-१ ४४)

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ व आर्य वीर दल

(क) राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ को अपनी शाखाएं लगाने के लिए किसी भी अवस्था में आर्य समाज मन्दिर न देने चाहिएं। आर्यसमाज की अन्य संस्थाओं में भी आर्य वीर दल को ही अपनी शाखा लगाने के लिए स्थान मिलना चाहिए संघ को नहीं।

(ख) आर्य समाज के अधिकारियों को आर्य वीर दल की उपेक्षा करके राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए। अनुशासन की मांग है कि केवल अधिकारी ही नहीं वरन् प्रत्येक आर्य समाजी अपनी पूर्ण शक्ति आर्य वीर दल को दृढ़ करने में लगाए।

(ग) जब कभी आर्य समाज को जन-सेवा और रक्षा के कार्यों के लिए आर्य वीर दल की आवश्यकता हो तो आर्य समाज के प्रधान को अधिकार है कि वह आर्य वीर दल के दलपति को प्रेरणा करें जिसका कर्तव्य है कि वह अपनी आज्ञा से वीरों से कार्य कराएं। आर्य समाज के अधिकारियों का कर्तव्य है कि वे दल की आर्थिक तथा अन्य प्रत्येक प्रकार की यथा संभव सहायता करें।

(घ) आर्य समाजों में आर्य वीर दल की स्थापना आर्य वीर दल समिति की ओर से नियुक्त व्यक्ति या उसके द्वारा ट्रेंड व्यक्ति ही करेगा। परन्तु जब तक उनके वहा ट्रेंड शिक्षक न पहुँच जाय तब तक उन समाजों को आर्य वीर दल की स्थापना स्वयं करनी चाहिए।

आर्य प्रतिनिधि सभाओं को चाहिए कि वे आर्य वीर दल के नियमों के अनुसार अपने प्रांत में पूरा समय देनेवाले वैतनिक दल पतियों की नियुक्ति करे और अपने उपदेशकों को आदेश दें कि वे आर्य वीर दल की शक्ति बढ़ाने में आर्य वीर दलों को यथेष्ट सहायता देवें।

आर्य वीर दल की, नीति सम्बन्धी समस्त सूचनाएं और योजनाएं सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रांतीय सभाओं को और उनके द्वारा आर्य समाजों को भेजी जाया करें और आर्य वीर दल उपसमिति अपनी सूचनाएं आदि प्रांतीय दल पति के द्वारा शाखाओं को भेजा करें।

(अन्तरंग १६ । ६ । ४५)

'ऋषि दयानन्द के चित्र'

[श्रीयुत प० राजेन्द्र जी]

ऋषि दयानन्द के चित्रों का संग्रह जो श्री मामराज जी खतौली (मुजफ्फरनगर) निवासी के पास हैं वह मैंने देखा है। उसमें कुछ चित्र तो ऋषि के असली फोटो हैं और कुछ फोटो से तय्यार किए हुए हैं। जिस समय यह फोटो आज से ६० वर्ष से लेकर ७६ वर्ष पूर्व लिए गए उस समय फोटो ग्राफी अपनी प्रारम्भिक अवस्था में थी। इसलिए यह फोटो कला की दृष्टि से बहुत सुन्दर नहीं हैं, फिर इतने लम्बे समय में यह धुंधले और अस्पष्ट हो गये हैं। केवल दो चित्र, एक मेरठ में सन् १८६७ ई० में जब कि ऋषि की अवस्था ३५-४० वर्ष के बीच में थी लिया हुआ फोटो, दूसरा सन् १८७४ ई० का जबलपुर में लिया हुआ है, कुछ अच्छे हैं। शेष सब या तो धुंधले हो गये हैं या चित्रकारों द्वारा ऋषि के इस समय अप्राप्त चित्रों से तय्यार किए गए हैं।

इन चित्रों को सुरक्षित रखने की ओर आर्य समाजों का बहुत कम ध्यान है। आर्य नेता कदाचित यह समझ कर कि ऋषि के चित्रों का सुरक्षित रखना एक प्रकार की मूर्ति पूजा है—इस ओर से उदासीन हैं। परन्तु यह सब कुछ होते हुए भी आर्य समाज के मन्दिरों और आर्यपत्र, पत्रिकाओं तथा ग्रन्थों में ऋषि के सस्ते तय्यार कराये हुए घटिया और भोंडे चित्र सर्वत्र देखे जाते हैं। न तो ऋषि के जो चित्र उपलब्ध हैं, उन्हें सुरक्षित रखने का कोई प्रयत्न किया जा रहा है और न उनके आधार पर अच्छे चित्रकारों द्वारा ऋषि के सुन्दर चित्र बनवाने की ओर किसी का ध्यान है। श्री महाशय मामराज जी के पास जो चित्र उनके एक छोटे बक्स में रखे हुए हैं वह थोड़े समय में नष्ट हो जायगे और फिर वह साधन भी जिनकी सहायता से कोई प्रसिद्ध चित्रकार चित्र तय्यार कर सके, नष्ट हो जायगे।

अतएव मेरा सार्वदेशिक सभा एवं आर्य नेताओं से विनम्र निवेदन है कि इन चित्रों में से प्रत्येक के अच्छे नेगेटिव (Negative) तय्यार कराये जाय और जो अस्पष्ट हैं उनकी सहायता से श्री अचरेकर, श्री सातवलेकर जैसे प्रसिद्ध चित्रकारों से सुन्दर चित्र तय्यार कराके उनको आगे आने वाली आर्य सन्तति के लिए सुरक्षित रखा जाय।

चित्रों को सुरक्षित रखना मूर्तिपूजा समझ बैठना, एक भ्रम है। सुन्दर और प्रभावशाली चित्र अपना प्रभाव रखते हैं और भद्दे, सस्ते कलाकारों द्वारा तय्यार कराए गए चित्र जो प्रायः बाजार में ऋषि दयानन्द के मिलते हैं सर्वसाधारण एवं शिथिल समाज में अपना दुष्प्रभाव उत्पन्न किये बिना नहीं रह सकते। ऋषि दयानन्द जैसे सुन्दर और सुडौल आकृति वाले महापुरुष के ऐसे भद्दे चित्रों का प्रचलन हमारे लिए लज्जा की बात है साथ ही चित्रकारी जैसी ललित कला के प्रति हमारी उदासीनता का भी एक प्रमाण है। अभी समय है कि हम इस अमूल्य निधि का जो श्री महाशय मामराज जी के अथक प्रयत्नों द्वारा आज भी सुरक्षित है सदुपयोग करें अन्यथा इन चित्रों के थोड़े समय में नष्ट हो जाने पर हमें अपनी अकर्मण्यता पर पछताना पड़ेगा। आशा है कि सार्वदेशिक सभा इस कार्य के लिए एक अच्छी धनराशि व्यय करके इन चित्रों को सुरक्षित रखने का प्रयत्न करेगी।

"श्रीयुत प० राजेन्द्र जी (प्रधान आर्य समाज अतरौली अलीगढ़) के उपर्युक्त विचार और सुझाव वस्तुतः विचारणीय हैं। सार्वदेशिक सभा ने महर्षि दयानन्द के श्रेष्ठतम चित्र के प्रकाशन का निश्चय किया हुआ है। आशा है यह निश्चय शीघ्र ही मूर्त रूप धारण करेगा।

—सम्पादक सार्वदेशिक

साहित्य समालोचना

वैदिक वन्दन

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी महाराज आर्य समाज के उद्भट वैदिक विद्वानों में से एक हैं। आपने वेद विषयक अनेक पुस्तकें लिखी हैं जिनका विद्वानों और सर्वसाधारण स्वाध्यायशील जनता ने समानरूप से आदर किया है। आपने अपनी नई पुस्तक "वैदिक वन्दन" में वेदों के कतिपय भक्तिप्रधान सूक्तों और अध्यायों तथा अनेक प्रकीर्ण मन्त्रों की सारगर्भित संक्षिप्त आध्यात्मिक व्याख्या की है। व्याख्या सरल सुन्दर और प्रेरणाप्रद हैं। मन्त्रों और सूक्तों के ऋषि और देवतावाचक पदों से जो भाव ध्वनित होते हैं उनका मन्त्रों के वर्णनीय विषय के साथ समन्वय करने का भी प्रशंसनीय प्रयत्न किया गया है। यह पुस्तक आपके अन्य ग्रन्थों की भांति ही वेदों के प्रति आपकी श्रद्धा तथा आपकी योग्यता एव विद्वत्ता के अनुरूप हुई हैं। प्रत्येक स्वाध्याय-शील व्यक्ति के लिये यह पुस्तक संग्रह करने योग्य है।

प्रियव्रत

आचार्य गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी

स्वामी ब्रह्ममुनि जी आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध प्रतिभ शाली विद्वान् हैं। आपकी "वैदिक वन्दन" पुस्तक मे अध्यात्मविषयक वेदो के १४ सम्पूर्ण सूक्तों अध्यायों और ईश्वर, जीवात्मा, मन, मोक्ष, ध्यान, अभ्यास, वैराग्य, योग आदि १४ विषयो के १५० प्रकीर्ण मन्त्रों की भी सरल और विद्वत्तापूर्ण व्याख्या मन्त्रों के साथ ऋषियों देवताओं की सङ्गति लगाते हुए की है जो न केवल अध्यात्म-जिज्ञासुओं के स्वाध्याय के लिये ही अत्यन्त उपयुक्त होगी किन्तु आर्य समाजों के सत्सङ्गों में कथा प्रवचनादि के लिये भी सर्वथा लाभप्रद होगी। पादटिप्पणियों में विद्वानों के लाभार्थ तथा धात्वर्थ तथा ब्राह्मण ग्रन्थ, निघण्टु, निरुक्तादि के प्रमाण अपने अर्थ के समर्थन में दिए है। इस प्रकार यह ग्रन्थ वैदिक अध्यात्मवाद के सच्चे स्वरूप को समझने के लिये अत्यधिक उपयोगी है। हमें तो उसके पढ़ने में इतना आनन्द आया कि ४ दिनों में ही हमने इसको समाप्त करके विशेष लाभ उठाया। पृष्ठसंख्या ४३६ पक्की जिल्द कागज छपाई बढ़िया मूल्य ५॥)

मिलने का पता—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली।

धर्मदेव

विद्यावाचस्पति विद्यामार्तण्ड

गुरुकुल कांगड़ी

स्थगित हिन्दी रक्षा आन्दोलन के पुनः संचालन का निश्चय

गत ९ जून को दिल्ली में श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त की अध्यक्षता में सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति और हिन्दी रक्षा समिति पंजाब का संयुक्त अधिवेशन हुआ जिसमें सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अनेक सदस्यों ने भी भाग लिया। इस बैठक का विचारणीय विषय था भावी कार्यक्रम का निर्माण। सभा लगभग ६ घन्टे तक होती रही। अनेक सदस्यों ने अपने विचार रखे। सबकी सम्मतियों का सार यह था कि अपनी मांगों की स्वीकृति के लिए शीघ्र ही ठोस कदम उठाया जाय। अन्त में इस कार्य के लिए एक संघर्ष समिति का बनाया जाना निश्चित हुआ। समिति का प्रस्ताव इस प्रकार है —

"सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति की राय है कि आर्य समाज की भाषा सम्बन्धी मांगों को शासन द्वारा क्रियात्मक रूप से मनवाने के लिए जो आन्दोलन आरम्भ किया गया था उसका जारी रहना आवश्यक है। इस कार्य की पूर्ति के लिए एक संघर्ष समिति बनाई जाय। आन्दोलन का किस समय क्या रूप हो समय २ पर यह समिति निर्धारित करती रहेगी। समिति के प्रधान श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त को इस समिति के सदस्यों के नाम घोषित करने का अधिकार दिया जाता है।

समिति के सदस्य

१ — श्री वीरेन्द्र एम० ए० 'प्रताप' जालन्धर,
२—,, डा० रामगोपाल जी मन्त्री सार्वदेशिक सभा दिल्ली।
३—,, रघुवीरसिंह शास्त्री (संयोजक)
४—,, जगदेवसिंह सिद्धान्ती महामंत्री आ०प्र० सभा पंजाब
५—,, प्रो० शेरसिंह जी एम० एस० ए०
६—,, प्रिं० भगवानदास जी डी ए वी. कालेज चण्डीगढ़
७—,, वीर यज्ञदत्त जी
८—, कैप्टन केशवचन्द्र जी
९—,, प्रकाशवीर शास्त्री
१०—,, पं० नरेन्द्र जी (हैदराबाद)
११—,, स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज गुरुकुल घरौंडा (करनाल)

प्रतिक्रिया

इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में जो प्रतिक्रिया देख पड़ी है उसका समुचित दिग्दर्शन 'आर्य जगत्' के निम्नलिखित सम्पादकीय लेख से हो जाता है :—

१—२७ अप्रैल १९५८ को दीवान हाल दिल्ली में पंजाब भर की आर्य समाजों, हिंदी रक्षा समितियों के प्रतिष्ठित प्रतिनिधियों तथा सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के सदस्यों की एक बैठक में निश्चय हुआ था कि ९ जून को श्रद्धानन्द बलिदान भवन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय में सार्वदेशिक सभा के अन्तरंग सभा सदस्य, पंजाब हिन्दी रक्षा समिति के प्रमुख नेता तथा सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के सब सभासद् परस्पर विचार परामर्श करके कोई निश्चित घोषणा करें कि वह पंजाब की शासन व्यवस्था और शिक्षा विभाग में राष्ट्र भाषा हिन्दी को समुचित स्थान दिलाने के लिए अगला पग उठाने का कैसा संकल्प करते हैं क्योंकि भारत सरकार, काग्रेस उच्च सत्ता और पंजाब सरकार सबके द्वारा प्रदर्शित सद्भावना के उत्तर में आर्य समाज द्वारा सत्याग्रह स्थगन के पश्चात् आर्य नेता श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त ने जनता को ऐसा गम्भीर आश्वासन दिया था कि प्रशांत वातावरण में शीघ्र ही एक गोलमेज कान्फ्रेंस बुला कर पंजाब की भाषा समस्या

समुचित और सतोष जनक समाधान निकाला जावेगा।

२-आर्य समाज के नेताओं ने पूरे सवा पाच मास प्रतीक्षा की। श्री गुप्त जी अनेक बार स्वय श्रीगोविन्द वल्लभ पन्त, स्वर्गीय मौलाना अबुलकलाम आजाद और काग्रेस प्रधान श्री ढेवर भाई से मिलते रहे और प्रत्येक मुलाकात के अ त में आर्य जनता को बार २ यह सात्वना देते रहे कि प्रशासक वर्ग आर्य समाज की मागों की पूर्ति सम्बन्धी अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर दृढ है और और कि वह गम्भीरता पूर्वक स्थिति की जाच करके आर्य समाज के लिए सतोष जनक निर्णय करने में सकल्प बद्ध है। श्री गुप्त जी के ऐसे आश्वासनों पर विश्वास करते हुए पजाब के आर्य हिन्दू अपने सत्याग्रह की विजय घोषणा कर प्रसन्न हो रहे थे कि श्री गोविन्द वल्लभ पन्त ने लोक सभा में एक वक्तव्य में यह रहस्योद्घाटन किया कि आर्य समाज अथवा हिन्दी सत्याग्रह आन्दोलन के सचालकों को सत्याग्रह स्थगन के समय कोई आश्वासन अथवा निर्णय करने के सबध में शासक पक्ष की ओर से नहीं दिया गया था— इस वक्तव्य ने आर्य हिदू हृदयों पर एक वज्रपात का सा भाव उत्पन्न किया। उनके मन पर एक निराशा की बिजली गिरी—उनके हृदयों में क्षोभ का एक ज्वार भाटा उमड़ पड़ा—उसके कुछ दिन बाद श्री पन्त जी गृह मन्त्री भारत सरकार ने लोक सभा के डिप्टी स्पीकर अकाली फिरका परस्त नेता श्री हुकमसिंह के नाम एक स्पष्टीकरणात्मक पत्र में आर्य नेताओं के इस प्रचार का प्रतिवाद और खडन करते हुए यह निर्देश किया कि यद्यपि राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने ३ नवम्बर १९५७ को पजाब में (अकाली काग्रेस समझौते के परिणाम स्वरूप तय्यार हुए रैजीनल फारमूले की धारा ९ व १० की स्वीकृति नहीं दी तथापि वह रैजीनल फारमूला ज्यू का त्यू पूरा रूपेण पजाब में लागू किया जावेगा और कि उसमें अकालियों की इच्छानुसार बिंदु मात्र भी परिवर्तन नहीं किया जावेगा।

३—जब ४ अप्रैल १९५७ को अकाली काग्रेस समझौते का क्षेत्रीय फारमूला लोक सभा की मेज पर रखा गया था तो उसके अध्ययन के पश्चात् आर्य समाज के नेता श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त ने उस पर एक अ ग्रेजी पुस्तिका The Case of Arya Samaj प्रकाशित कर राष्ट्रपति, भारत सरकार व पजाब सरकार के मन्त्री मण्डल तथा भारत भर के लोक सभा के सदस्यों व भिन्न २ प्रदेशों की विधान सभाओं व विधान परिषदों के सदस्यों को उसकी प्रतिया वितरण की थीं। उसका हिंदी अनुवाद भी प्रकाशित कर ससदीय सस्थाओं, सदस्यों व साधारण जनता में बाटा गया था। उस लेख में श्री गुप्त जी ने यह माग की थी कि आर्य समाज की सातों मागों की बहुत हद तक पूर्ति हो जाती है यदि राष्ट्रपति इस क्षेत्रीय फारमूले की धारा ९ व १० की स्वीकृति न देकर उसे कानून का दरजा न देवें। श्री गुप्त जी ने राष्ट्रपति से व्यक्तिगत भेंट में भी उनका ध्यान उस ओर आकर्षित किया था।

४—राष्ट्रपति जी ने धारा ९ व १० की स्वीकृति न दी। आर्य जनता व नेताओं ने समझा उनके तर्क ने राष्ट्रपति व सरकार को सन्मार्ग प्रदर्शन करा दिया है वह यह विचार प्रसार करने में सवथा सच्चे थे कि रैजीनल फारमूले की धारा ९ व १० को वैधानिक स्वीकृति प्राप्त नहीं अत वह पजाब में लागू न होंगी। उन्हें एक और भी कानूनी शक्ति व शान्ति प्राप्त थी कि रैजीनल फारमूला लोक सभा की मेज पर रखने मात्र से कानून का दरजा प्राप्त नहीं कर सकता था।

५—श्री पन्त जी के श्री हुकमसिंह के नाम स्पष्टीकरणात्मक पत्र ने जलती पर तेल का काम किया पजाब की आर्य हिंदू जनता में हार्दिक दु ख और मानसिक वेदना उत्पन्न हुई। काग्रेस शासक उच्च सत्ता के अपनी प्रतिज्ञा व वचन से मुकर जाने

संघर्ष समिति के निश्चय पर समाचार पत्रों की प्रतिक्रिया

हिन्दी आन्दोलन

जिस देश की राष्ट्रभाषा हिन्दी है, उसी के एक राज्य में इसकी रक्षा के लिये आन्दोलन अनिवार्य होना विचित्र बात है। 'सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति' की संघर्ष समिति ने देश के सभी हिंदी प्रेमियों से अनुरोध किया है कि पंजाब में हिंदी की रक्षा करने के लिये वे तैयार हो जाय। सात मास तक चलने के बाद यह आन्दोलन गत वर्ष के अन्त में इस आशा के साथ समाप्त हुआ था कि सभी सम्बन्धित पक्षों को मान्य होने योग्य कोई मार्ग निकल आयेगा। आन्दोलन चलानेवाली संघर्ष समिति का कहना है कि उसके स्थगित किये जाने के बाद सरकार का रुख ऐसा रहा है कि समिति के सामने पुन आन्दोलन प्रारम्भ करने के अलावा कोई रास्ता ही नहीं है।

पंजाब देश की पश्चिमोत्तर सीमा पर स्थित राज्य है। सीमा पर स्थित किसी राज्य में भी उत्तेजनात्मक वातावरण का होना देश की सुरक्षा के लिये चिन्ताजनक है। इसलिये संघर्ष समिति के निश्चय की जानकारी से चंडीगढ़ अथवा दिल्ली के अधिकारी तो चिन्तित होंगे ही, जन साधारण को भी कम चिन्ता न होगी।

पंजाब में हिन्दी भाषी तथा पंजाबी भाषी, दो क्षेत्र बनाये गये है। आन्दोलनकारियों का कहना है कि यह 'फार्मूला' केवल अकालियों को सन्तुष्ट करने के लिये लागू किया गया है और इससे फूट बढ़ाने वाले तत्वों को प्रोत्साहन मिला है। यह बात निरर्थक अथवा निराधार नहीं कही जा सकती। यह भी सही है कि पंजाब के सत्तर प्रतिशत निवासियों की केवल बोल चाल की भाषा पंजाबी है और लिखने पढ़ने की भाषा तो हिन्दी ही है। फिर भी यदि तीस प्रतिशत पंजाबी अपनी विशेष लिपि की रक्षा चाहते हैं, तो उस पर किसी को आपत्ति नहीं

पर हार्दिक खेद का प्रकाश किया गया। जितने मुख उतनी बातें, भांत २ की बोलियां कहने सुनने में आ रही थीं। लोगों के विश्वास की भित्ति हिल रही थी कि अब पुन सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति ने हिन्दी आंदोलन को पंजाब में चालू करने का निश्चय किया हैं। बिना किसी लिखित प्रतिज्ञा प्राप्त किए स्थगन सत्याग्रह से जो आघात आर्य समाज के सम्मान और गौरव को पहुंचा था उसे पुनस्थापना करने के इस निश्चय का हम स्वागत करते हैं। जातियों और राष्ट्रों की जीवन शक्ति का रहस्य सत्य की रक्षा के लिए आग्रह और संघर्ष की भावना में निहित है। यदि आज आर्यसमाज निष्क्रिय और मौनी बाबा बन कर चुप्पी साध लेता तो वह अपनी नैतिक मृत्यु को स्वयं निमन्त्रण देने का पापी बनता।

❋ ❋

होनी चाहिये। यदि उन्हें क्षेत्रीय फार्मूले द्वारा कुछ अधिक सुविधा मिली, तो भी बहुसंख्यकों को शांत रखने में ही देश का कल्याण है। आपत्ति का कारण तो यह है कि हिन्दी को क्षेत्रीय भाषा के रूप मे गुरुमुखी लिपि में लिखी जाने वाली पंजाबी की तुलना में असाधारण पाबन्दियों का शिकार बनना पड रहा है। यदि पंजाबी को सरकार प्रोत्सा हित करती है, तो इस पर भी किसी को दुःख नहीं होना चाहिये, क्योंकि क्षेत्रीय भाषायें विकसित होने पर हिन्दी को समृद्ध ही करेंगी, लेकिन पंजाबी मे, जहा हिन्दी प्रधान क्षेत्रीय भाषा भी रही है, पंजाबी को बढाने के लिये इसकी प्रगति में रुकावट डालना उचित नहीं हो सकता। जिस प्रकार बम्बई मे अभि भावकों को अपने बच्चों को अपनी रुचि की भाषा के माध्यमसे शिक्षा दिलाने की सुविधा है पंजाबमे वह क्यों नहीं दी जासकती, यह साधारण समझ के बाहर की बात है। यदि पंजाबी को लोकप्रिय बनाना है, तो भी उसकी लिपि केवल गुरुमुखी ही क्यों मानी जाय और अधिक परिचित देवनागरी भीक्यों न रखी जाय, यह विचारणीय प्रश्न है।

जो लोग 'सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति' के पुन आन्दोलन चलाने के निश्चय से चिन्तित होंगे, वे भी यह तो अनुभव करेंगे ही कि सरकार को ऐसा मार्ग निकालना चाहिये, जिससे किसी को यह अनुभव न हो कि उस पर बलपूर्वक कोई भाषा या लिपि लादी जा रही है। नवभारत टाइम्स

२४-६-५८

तप और त्याग के मार्ग पर

हिन्दी प्रेमी जगत ने एक बार फिर से तप और त्याग के मार्ग पर चलने का निश्चय किया है। ६ जून को भाषा स्वातन्त्र्य समिति ने जो संघर्ष समिति बनायी थी उसका पहला अधिवेशन २२ जून, को दिल्ली में हुआ। उसमें सर्वसम्मति से हिंदी आन्दोलन को तीव्र करने का निश्चय किया गया। उस दिन दोपहर बाद पंजाब हिंदी रक्षा समिति का अधिवेशन भी हुआ जिसमें संघर्ष समिति के निश्चय को पूर्ण करने का निश्चय हुआ लक्ष्य है—मोर्चा। और हर कोई मानता है कि इसके सिवा कोई चारा नहीं परन्तु हम कांग्रेस नेताओं की सद्भावना के झांसे में आकर सत्याग्रह स्थगित करने की गलती कर चुके हैं। इसलिये अब उसका दण्ड भुगतना होगा और नये सिरे से मोर्चा गर्म करना होगा। मै मानता हू कि नेहरू सरकार ने सच्चर फार्मूला मे परिवर्तन का कोई निश्चित वचन नहीं दिया परन्तु हमारे संकल्प को शिथिल करने के लिए कांग्रेस नेताओं ने बहुत कुछ किया। पण्डित नेहरू ने कहा कि हिंदी रक्षा समिति की ९० प्रतिशत मांगें मानी जा चुकी है और शेष १० प्रतिशत मागें बातचीत से तय हो सकती है। श्री ढेबर भी इसी प्रकार ही कहते रहे और पंडित पन्त ने भी चण्डीगढ, लुधियाना और करनाल केभाषणों में कुछ ऐसी ही भावनायें व्यक्त कीं। और तो और सरदार प्रतापसिंह कैरों ने भी कहा अब जबकि सत्याग्रह बन्द हो गया है, शांत वातावरण में सारी बात तय हो सकेगी परन्तु जब सत्याग्रह बन्द हो गया तो छः मास व्यतीत हो जाने पर भी सरकार ने कोई करवट नहीं ली। जिससे यह समझा जा सकता है कि उसने यह विषय ठप्प ही कर दिया है और यह समझती है कि आर्यसमाज ने बिना शर्त के हथियार डाल दिये है। उसका यह मिथ्या भ्रम दूर करने की आवश्यकता है परन्तु स्पष्ट है कि इसमे समय लगेगा और परिश्रम भी बहुत करना होगा। पहला सत्याग्रह एक वर्ष की तैयारी से आरम्भ किया गया था। हिंदी के पक्ष मे जनमत पैदा करने के लिये संघर्ष समिति ने एक कार्यक्रम निश्चित किया है। २० जुलाई को सारे भारत में 'प्रतिज्ञा दिवस' मनाया जायेगा। उस दिन हिन्दी प्रेमी यह प्रतिज्ञा करेंगे कि वे उस समय तक चैन न लेंगे जब तक कि पंजाब में हिंदी को उसका उचित स्थान न दिला लेंगे।

६ अगस्त को चण्डीगढ़ 'आर्य समाज मन्दिर

दिवस' मनाया जायेगा। यह वह दिन है जबकि कैरों की पुलिस ने इस मन्दिर को भ्रष्ट किया था। इसी दिन वहा हिंदी प्रेमियों का एक भारी सम्मेलन होगा। भाषा स्वातन्त्र्य समिति, सघर्ष समिति और पंजाब हिंदी रक्षा समिति का संयुक्त अधिवेशन होगा और हो सकता है पंजाब की दोनों प्रतिनिधि सभाओं की अंतरंग सभाओं का सयुक्त अधिवेशन भी हो। फिर २४ अगस्त को सुमेरसिंह का बलिदान दिवस मनाया जायेगा इस प्रकार हिंदी प्रेमी जगत को अगला कदम उठाने के लिये तैयार किया जायेगा।

हर कोई जानता है कि सत्याग्रह करना सरल नहीं। सत्याग्रही को भी काफी परेशानी होती है। सरकार को विवश करने के लिये घर फूंक तमाशा देखना पड़ता है। यह काम आरम्भ हो गया समझो और इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दी प्रेमी जगत पहले की भांति इस परीक्षा में पूरा उतरेगा। —कृष्ण

(वीर अर्जुन) २४-६-५८

कैरों की फूंकें

कांग्रेस हाई कमान की धमकी और पंजाब विधान सभा के कांग्रेसी सदस्यों से विश्वास प्राप्त करने के बाद सरदार प्रतापसिंह कैरों को होंठ खोलने का साहस हुआ है। अमृतसर में एक सीमित सभा के सामने भाषण करते हुये उन्होंने सबसे पहले मास्टर तारासिंह को आड़े हाथों लिया। कहा कि पंजाबी प्रांत का समर्थन प्राप्त करने के लिए मास्टर जी लन्दन गये और लार्ड वडवुड से मिले और जब उनसे यह सुना कि इस युग में साम्प्रदायिकता के आधार पर प्रांत की स्थापना की मांग निराधार है, तो अपना-सा मुंह लेकर लौट आये। उन्होंने यह भी कहा हिन्दी सत्याग्रह और पटवारियों की हड़ताल बुरी तरह असफल रही हैं। पटवारियों की हड़ताल असफल रही है इसका उत्तर तो पटवारी देंगे परन्तु जहां तक हिन्दी सत्याग्रह का सम्बन्ध है, मैं सरदार कैरों से कहूंगा कि वह बढ़ २ कर बातें न बनायें ताकि उन्हें लज्जित न होना पड़े। उन्हें याद करना चाहिये कि उन्होंने आवेश में आकर यहां तक कहा था कि मैं इस सत्याग्रह को चार दिन में समाप्त कर दूंगा, उसे फूंकों से उड़ा दूंगा परन्तु २० हजार से अधिक सत्याग्रहियों ने उनके जेलों के द्वार खटखटाए और साढ़े दस हजार पर द्वार खोल भी दिये गये। जब जेलों में स्थान न रहा और आर्थिक बोझ से पंजाब सरकार की गर्दन टूटने लगी तो उसने दो हजार सत्याग्रही बिना शर्त के रिहा कर दिये और जब हिन्दी सत्याग्रह के नेता श्री घनश्यामसिंह गुप्त पण्डित पन्त से मिले और उनसे प्रश्न किया कि इन दो हजार सत्याग्रहियों की रिहाई जेलें खाली करने के लिये की गई है या आर्य समाज को सद्भावना का परिचय देने के लिए। तो उन्होंने कहा सरकार की सद्भावना का परिचय देने के लिए। कैरों सरकार हिन्दी सत्याग्रह के अपराध में अपदस्थ किएगये म्युनिसपलकमिश्नरोंको पुन प्रतिष्ठितकरने कोतैयार न थी परन्तु उसे पण्डित पन्त के कहने पर उन्हें प्रतिष्ठित करना पड़ा। जिस सत्याग्रह को सरदार कैरों चार दिन में समाप्त कर देने की डींग मारते थे वह सात मास तक चला और एक प्रकार से सरकार से समझौता के बाद बन्द हुआ। बजाये इसके कि सरदार कैरों लज्जित होते वह फिर बढ़ हांकने लगे हैं परन्तु मै उनसे कहूगा कि घमण्ड का सिर नीचा होता है। वे इस बात पर घमण्ड न करें कि आर्य समाज का सत्याग्रह स्थगित हो गया है। उनकी गर्दन झुकाने दम्भ तोड़ने के लिए आर्य समाज फिर से मैदान में आ रहा है। परन्तु इसका क्या ? कठिनाई तो खडी होगी नेहरू सरकार के लिए और इससे चिंता होगी इस बात की कि किसी प्रकार सत्याग्रह बन्द हो ताकि पंजाब का सीमांत प्रांत शांति व चैन की सांस ले सके। हिन्दी सत्याग्रह में जो तेजी आई उसके लिये बहुत सीमा तक कैरों के भाषण उत्तरदायी है और हम कृतज्ञ होंगे यदि वह ऐसे भाषण जारी रखेंगे, क्योंकि इससे हमें भारी सहायता मिलेगी।

—कृष्ण

वीर अर्जुन २४-६-५८

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक अधिवेशन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक अधिवेशन दिनांक ८ ६ ५८ को श्रद्धानन्द बलिदान भवन दिल्ली में श्रीयुत स्वामी अभेदानन्द जी की अध्यक्षता में हुआ। अधिवेशन में देश और विदेश के ८२ प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

आगामी वर्ष के लिये अधिकारियों और अन्तरग सदस्यों का निर्वाचन हुआ। प्रधान श्री स्वामी अभेदानन्द जी महाराज, मन्त्री श्री ला० रामगोपाल जी, उपप्रधान श्री प० नरेन्द्र जी, बा० पूर्णचन्द्र जी, तथा श्री प० अलगूरायजी शास्त्री, उपमंत्री श्री प्रो० रत्नसिंह जी तथा प० प्रकाशवीर जी शास्त्री, श्री ला० बालमुकन्द जी आहूजा कोषाध्यक्ष, और प० नरदेव जी स्नातक पुस्तकाध्यक्ष निर्वाचित हुये। अधिकारियों के अतिरिक्त १६ अन्तरग सदस्य भी निर्वाचित हुए। जिनके नाम इस प्रकार है —

अन्तरग सदस्य

पंजाब

१—श्री रामनाथ जी भल्ला,
६ मोरवर्द रोड नई दिल्ली

२—श्री लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित, प्रिंसिपल,
आर्य कालेज, पानीपत (करनाल)

उत्तर प्रदेश

१—श्री जगनन्दनलाल जी ऐडवोकेट
पडमास्टन रोड, इलाहाबाद

२—श्री प्रि० महेन्द्रप्रताप जी शास्त्री
जाट वैदिक कालेज, बड़ोत (मेरठ)

बगाल

श्री मिहिरचन्द जी धीमान्
११५ तुलसी निवास, सलकिया, हावड़ा

मध्य भारत

श्री डा० महावीरसिंहजी रिटायर्ड, सिविलसर्जन
नया बाजार, लश्कर

बिहार

श्री रामानन्द जी शास्त्री, आर्य प्रचारक
आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार, पटना

हैदराबाद

श्री प० विनायकरावजी विद्यालकार, एम पी
विनायक भवन, मौजमजाही सर्किट हैदराबाद

बम्बई

श्री प० विजयशकर जी आर्य समाज
विट्ठल भाई पटेल रोड, गिरगाम, बम्बई-४

राजस्थान

श्री प० भगवानस्वरूप जी, मैनेजर
वैदिक यन्त्रालय अजमेर

पूर्वी अफ्रीका

श्री डी० डी० पुरी जी
पो० बो० १५१, नई देहली

आजीवन सदस्यों के प्रतिनिधि

श्री प्रो० रामसिंह जी, एम ए
२३ बीडनपुरा, करौलबाग, नई देहली

जनरल

१—श्री प० हरिशकर जी शर्मा,
शकर सदन लोहामडी, आगरा

२—श्री बेणीभाई जी आर्य
कड़वा शेरी, अहमदाबादी पोल, बड़ौदा

३—श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालकार
आर्य समाज हनुमान रोड नई देहली

पंजाब राज्य द्वारा हिन्दी पर कुठाराघात

(श्री मेहरचन्द जी हिन्दी रक्षा समिति अमृतसर)

पजाब में इस वर्ष (अप्रैल १९५८) से कुछ हाई स्कूलों मे बहुद्देशीय उच्च माध्यमिक शिक्षा की योजना आरम्भ हो गई है, अर्थात १०० के लगभग हाई स्कूल M ı t pırpose Hıgl r Secon dary Schc ls मे परिवर्तित हो गय हैं और दो तीन वर्षमे पजाबके समस्त हाई स्कूलों को भी ऐसे परिवर्तित कर देने की योजना है। इस सम्बन्ध मे एक तथ्य की ओर मैं आपका ध्यान विशेषतया दिलाना चाहता हू क्योंकि इस पर पजाब की भावी विद्यार्थी श्रेणी और पजाब मे "हिन्दी भाषा' का भविष्य निर्भर है।

Mult Purpose Hıgher Secondary Scheme के अनुसार ९ वी श्रेणी मे विद्यार्थीको 6 Core Subjects लेने पडगे, और 7 groups में से किसी एक ग्रुप मे से 4 Subjects चुनने होंगे। Core Subjects में नीचे लिखे विषय है

1 Englısh	2 Mathematıcs
3 Social Studies	4 G neral Scıcnce
5 One of the Crafts	6 Hındı or Punjabı ❀

इस विषय अर्थात् हिन्दी या पजाबी के सबन्ध मे एक शर्त लगा दी गई है कि जो बालक हिन्दी की शिक्षा का माध्यम (या परीक्षा का माध्यम चुनेंगे उन्हें पजाबी ही लेनी होगी और जो पजाबी को परीक्षा (शिक्षा) का माध्यम चुनेंगे उन्हे हिंदी ही लेनी पडेगी। अग्रेजी में यह clause निम्न प्रकार है —

Hır dı or Panjabı (A candıdate offerıng H ndı for the Electıve Group or Hındı as medıum of examınatıon shall offe. **only** Panjabı, and vıce versa provided that a candıdate who does not fall ınto eıther of these categoııes shall offer a combıned paper of H ndı and Panjabı

ऐच्छिक (Electıve) ग्रुपस (groups) मे से केवल एक ग्रप Humanıtıes मे एक विषय Hıgher Hındı रखा गया है और विद्यार्थी की इच्छा है उसे भी ले या न ले, शेष ६ ग्रुप मे

४—श्री माता प्रियम्वदा देवी जी वानप्रस्थ
४४ कैसर रोड, लालबाग, लखनऊ

वार्षिक रिपोर्ट पढ कर सुनाई गई और स्वीकृत हुई।

सभा ने आगामी वर्ष वैदिक अनुसधान, नवयुवकों में प्रचार, विदेश प्रचार, नैतिक उत्थान होस्टल के ढग पर ब्रह्मचर्य आश्रमों की स्थापना, आर्य वीर दल सगठन, शुद्धि प्रचार, गोरक्षा एव साहित्य प्रकाशन कार्य को बढ़ाने की विशेष योजनायें कार्यान्वित करने के लिए बजट में धन की व्यवस्था की है। विविध भाषाओं मे सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशनार्थ २० हजार रुपये भी बजट में रखे गये हैं।

आगामी वर्ष के कार्य के सचालनार्थ विविध उपसमितियो की नियुक्ति की गई।

रामगोपाल मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली
दिनाक ९-६-५८

Hindi को सर्वथा नहीं रखा गया इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि जो विद्यार्थी शिक्षा का माध्यम हिंदी रखेंगे उनकी हिन्दी भाषा की विषय के तौर पर पढ़ाई ८ वी श्रेणी के बाद बन्द हो जावेगी। Higher S condary में उन्हें ३ वर्ष पंजाबी पढ़नी पढ़ेगी और वह अन्य विषयों (गणित, सामाजिक अध्ययन, साधारण विज्ञान आदि) की पढ़ाई हिंदी में करेंगे। यह बात विद्यार्थियों के हित के सर्वथा प्रतिकूल होगी और राष्ट्र क्षेत्रीय तथा मातृ भाषा हिंदी पर एक अत्यन्त हानिकारक प्रतिबन्ध होगा।

ससार मे शायद ही कोई देश होगा औरपजाब के अतिरिक्त भारतवर्ष में शायद ही कोई ऐसा प्रान्त होगा जहा उस भाषा की पढाई को जो बालक की मातृ या क्षेत्रीय या राष्ट्र भाषा हो और जिस भाषा को बालक ने शिक्षा तथा परीक्षा का माध्यम चुना हो, ८वीं श्रेणी के बाद बन्द कर देना उचित समझा गया हो। जहा तक मेरा अध्यापक के रूप में अनुभव है जबतक वह भाषा जिसमें बालक ने शिक्षा प्राप्त करनी है दृढ़ नहीं होती बालक भिन्न २ विषयों को ठीक न समझ सकता है न उनको प्रगट कर सकना है। यदि एक अंग्रेजी बालक के लिये ८ वीं श्रेणी के बाद स्कूल अर्थात् कालेज में अंग्रेजी के विषय की पढ़ाई बन्द करनी उचित नहीं तो एक भारत के बालक के लिये जो हिंदी को अपनी शिक्षा का माध्यम बनाता है हिंदी की पढ़ाई कैसे बन्द करनी उचित ठहराई गई है। राष्ट्र भाषा हिंदी, भारतीय एकता, राष्ट्रीयता की माग है कि हिंदी की पढ़ाई का उच्चतम श्रेणी (अर्थात् बी० ए०) तक हर एक बालक के लिये प्रबन्ध किया जाये। इस विषय पर पूरा सोच विचार करके उचित कार्यवाई की जानी चाहिए जिस से यह "हिन्दी पर प्रतिबन्ध" दूर हो।

❀ ❀

राष्ट्र के नैतिक उत्थान का दायित्व आर्य समाज पर है,

—हरिशंकर शर्मा,

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के ७१वें बृहदधिवेशन के शुभअवसर पर सभा के नवनिर्वाचित प्रधान हिन्दी के प्रसिद्ध पत्रकार एवं साहित्यकार श्री प० हरिशंकर जी शर्मा कविरत्न ने आगन्तुक प्रतिनिधियों को सम्बोधित करते हुये कहा कि ऋषि दयानन्द ने विदेशी राज्य से स्वदेशी राज्य को उत्तम बताकर जिस राष्ट्रीय भावना को जन्म दिया था उसी के परिणाम स्वरूप हमारा देश आज स्वतन्त्र है परन्तु स्वतन्त्रता के दस वर्ष पश्चात् भी राष्ट्रीय चरित्र का ह्रास होता चला जा रहा है। आज सदाचार का अर्थ बहुत संकुचित हो गया है परन्तु जीवन की प्रत्येक क्रिया का आचार से सम्बन्ध रहता है, इस दृष्टि से राष्ट्रीय चरित्र का पतन हो चुका है। आर्य समाज के कार्यकर्ताओं को अपने व्यक्तिगत् तथा सामूहिक प्रयत्नों द्वारा राष्ट्र के नैतिक अभ्युत्थान का नेतृत्व करना होगा। आज राष्ट्र सत्ता राजनीति के पंक में निमग्न है, राष्ट्र-रथ को संकट से बाहर निकालने के लिए हमें पूर्ण प्रयत्न करना होगा, राष्ट्र की राजनीति को विमल तथा जनमत को सबल बनाकर ही भारत को आदर्श राष्ट्र बनाया जा सकता है।

इसी अवसर पर शिकोहाबाद के श्री फूलसिंह जी सभामन्त्री एवं श्री ईश्वरदयालु जी आर्य मुख्य उपमन्त्री तथा कार्यकारिणी के ६१ सदस्य भी निर्वाचित किये गये।

कर्नाटक में एक मास

[लेखक —वैद्य कृपाराम मैसूर]

१३ ५ ५८ मगलवार साय ६ बजे मैसूर मे पहुचा वर्षा हो रही थी मन्दिर खुला ठहरने का सुप्रबन्ध हुआ।

१४ ५ ५८ प्रात ७ बजे श्री वसुलिंग चेटी प्रधान आर्य समाज (आयु ८१ वर्ष) कुछ और सज्जनों के साथ प्रारम्भिक यज्ञ वेद पाठ धर्म्मोपदेश हुआ। १० बजे सभा विसर्जित हुई। १२ से ५बजे तक श्री रामसरन आहूजा की दुकान अमरीकन स्टोर में बैठ प्रचार की योजनाए बना समाचार पत्रों में दे दी गई।

साय ६ बजे आर्य सदस्य सम्मिलित सन्ध्या के लिये आ गए, यह कक्षा उत्तरोत्तर उन्नति कर रही है, प्रथम सन्ध्या फिर प्रार्थना फिर वेद पाठ प्रतिदिन होता है।

१५ ५ ५८ को प्रात काल ६ बजे योगासन प्राणा याम व लाठी व्यायाम कक्षा खोल दी गई, जो उत्त रोत्तर उन्नति कर रही है, योगाभ्यास का इतना चाव है, कि दो वीर तो रात्रि में आय समाज मन्दिर मे ही सोते हैं और प्रात चार बजे उठकर योगाभ्यास करते हैं।

१६ ५ ५८ को प्रात ८ बजे दयानन्द धर्मार्थ औषधालय आर्य समाज मन्दिर में ही आठ बजे से १२ बजे तक के लिये खोल दिया गया जिससे इस मास में २०२ रोगी स्वस्थ हुए, रोगी २४ घन्टे आ सकते हैं।

१७-५ ५८ शनिवार को आर्य विद्या भवन आर्य समाज मन्दिर मे ही साय ५ से ६ तक एक घन्टा सन्ध्या प्रार्थना के पीछे ७ से १० तक खोल दिया गया।

१ ६ ५८ से इसकी सस्कृत (७ विद्यार्थी) हिंदी (८ वि०) २ कक्षा कर दी गई हैं।

१८ ५ ५८ रविवार साप्ताहिक अधिवेशन के पीछे अन्तरग सभा में १००) औषध्यर्थ स्वीकार हुए तथा पारिवारिक सत्सगोंकी योजना स्वीकार हुई एक मास में सोलह पारिवारिक सत्सग भिन्न २ परिवारों मे हुए हैं, जिनमें उत्साह रहा।

३१ ५ ५८ को आर्य वीर दल भी बन गया साय सन्ध्या के पीछे हिंदी कक्षा की श्रद्धालु मडली लाठी व्यायाम कर शारीरिक उन्नति कर रही है।

आर्य समाज बैंगलोर से प्रचारार्थ बुलाने पर ६ ६ ५८ शुक्रवार वहा गया। ७-६ ५८ व ८ ६ ५८ दो दिन मे दो यज्ञ एक श्री सुधाकर जी के घर पर दूसरा आर्य समान मन्दिर कण्टूनमेंट में हुए, तथा दोनों स्थानों पर भाषण हुए, तथा दो पारिवारिक सत्सग इनही दोनों दिनों में श्री भागीरथ जी वर्मा सिल्क हाऊस के घर पर हुए। कर्नाटक की जनता निर्धन है, फिर भी धर्म प्रेम बहुत है, प्रोत्साहन की परमावश्यकता है।

यह प्रतीत होते ही कि उपदेशक आ गया हैं श्री सेठ बद्री प्रसाद जी मालिक इन्द्र भवन ने श्री पृथ्वीचन्दबहल ने रामसरनजी आहूजा आदि ने विशेष सेवा भाव दर्शाया है।

वैदिक धर्म प्रसार
और सूचनायें

—आर्य समाज कृष्ण पोल बाजार जयपुर (राजस्थान) ने अपने साप्ताहिक अधिवेशन (दिनाक १३ ६ ५८) मे आगरा से प्रकाशित 'तारागढ की लड़ाई' नामक पुस्तक के विरुद्ध प्रस्ताव करके माग की है कि यह पुस्तक तत्काल जब्त की जाय और प्रकाशक तथा लेखक के विरुद्ध कठोर कानूनी कार्यवाही की जाय।

आर्यसमाज चण्डीगढ़ सैक्टर २२ में श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वती तथा श्री हरवसलाल भजनोप देशक द्वारा १६ मई से २७ मई तक प्रतिदिन रात्रि में ८॥ बजे से १०॥ बजे तक आध्यात्मिक प्रवचन और भजन हुए। स्त्री समाज तथा सैक्टर १६ और और १६ में भी श्री स्वामी जी के व्याख्यान हुए।

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ का वार्षिक निर्वाचन १८ मई ५८ को हुआ। प्रधान श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त तथा मन्त्री श्रीकृष्ण जी गुप्त निर्वाचित हुए। १२ पदाधिकारियों के अति-रिक्त ११ अन्तरग सदस्य चुने गए।

—गत १७-१८ मई को लखनऊ में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का वार्षिक अधिवेशन हुआ। १६५८-५६ के लिए पदाधिकारियों और अन्तरग सदस्यों का चुनाव हुआ। प्रधान श्रीयुत हरिशकर शर्मा कविरत्न और मन्त्री श्री फूलनसिंहजी (शिकोहाबाद निवासी निर्वाचित हुए।

—आर्य कुमार सभा ग्राम रिवाली पो० बहरोड (अलवर) के उपमन्त्री श्री मेहरचन्द विद्यार्थी (१६ वर्षीय) राजस्थान विश्वविद्यालय से एफ ए की परीक्षा में हिन्दी सस्कृत लेकर ५० हजार छात्रों में सर्वप्रथम उत्तीर्ण हुए। बधाई

सपादक सार्वदेशिक

समाजो के निर्वाचन

—समाज	निर्वाचनतिथि	प्रधान	मन्त्री
मन्डी मुरादाबाद	१-६-५८	श्री बलदेव जी	श्री कृष्णगोपाल
कुसुमु (ईस्ट अफ्रीका)	२५-५-५८	श्री बनामल खोसला	श्री विप्रबन्धु
पानीपत	१८-५-५८	श्री जयभगवानदास मिल मालिक	श्री योगेश्वरचन्द जी
चण्डीगढ़	२२-५-५८	श्री प० ज्ञानचन्द शर्मा एम ए ऐडवोकेट	श्री डा० सोमदत्त ए बी ए ऐस ऐम ऐस
आर्य वीर दल आबूरोड	१३-५-५८	नगरनायक मन्त्री	श्री गेंदालाल प्रेमी श्री जेटमल आर्य

'Breach of Faith' By Punjab Govt

Hindi Agitation Leader's Charge

"The Times of India" News Service CHANDIGARH June 24 Prof Sher Singh, Chairman of the newly constituted "Action Committee" of the Hindi Raksha Samiti, today reaffirmed that the 'Save Hindi" movement would be resumed

The satyagraha was suspended about six months ago after 10 000 Arya Samaj volunteers had courted imprisonment They were subsequently released as a gesture of goodwill

Both the State Government and Arya Samajists had hoped that the suspension of the movement would create a cordial atmosphere and pave the way for a settlement of the language controversy

Prof Sher Singh, a former Punjab Minister, while giving reasons for the revival of the agitation, charged both the Union and State Governments with failure to redeem their pledge to resolve the tangle in a peaceful atmosphere

Prof Sher Singh alleged that Mr. Nehru was not looking at the Punjab language problem with an "open mind" and that the Kairon Ministry was merely toeing his line.

NON-POLITICAL MOVEMENT

He claimed that the Arya Samaj sponsored movement was non-political He refuted the suggestion that Arya Samajists wanted to dabble in the politics for it was purely a cultural and social organisation.

Prof Sher Singh could not indicate whether the revival of Hindi agitation would take the form of volunteers courting arrest He said that the "Action Committee' would determine from time to time steps necessary to achieve its objective

Significantly Prof Sher Singh emphasised that there would be no "going back" or compromise until the Punjab or the Union Government ensured the rightful place for Hindi in the State

He said that Arya Samajists were not opposed to the development of Punjabi or Urdu but were fundamentally opposed to the compulsory teaching of Punjabi or Hindi

The Arya Samaj's contention according to Prof Sher Singh, apparently, was that the people in Hariana must not be compulsorily taught Punjabi

Prof Sher Singh did not rule out the possibility of discussing the language controversy at a round-table conference provided the Union and Punjab Governments were eager to settle the issue by mutual discussions

आर्य वीर दल ग्रीष्मावकाश शिविर सफलता पूर्वक सम्पन्न हुए

इस वर्ष आर्य वीर दल के ग्रीष्मावकाश शिविर विदिसा (म० प्र०), लखनऊ, कलकत्ता, वाराणसी, डमरी (कानपुर), मुरलीपुर (कानपुर) गाथा नोनापुर (कानपुर) आदि नगरों व ग्रामोंमें पूर्ण सफलता के साथ सम्पन्न हुये। समस्त शिविरों में ५६५ आर्य वीरों ने शारीरिक, मानसिक व सामाजिक शिक्षण प्राप्त किया। शिविरों में श्री प्रिंसिपल भारत भूषण जी त्यागी, श्री प० अवधविहारी लाल जी एम ए एल एल बी श्री निरंजनलाल जी वर्मा, श्री रामजी प्रसाद जी गुप्त अधिष्ठाता आर्य वीर दल उ० प्र० तथा श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी, प्रधान सचालक सार्वदेशिक आर्य वीर दल आदि महानुभावों ने बौद्धिक शिक्षणका कार्य किया और श्रीकाशीनाथजी शास्त्री व्यायाम विशारद तथा श्री रामसिंह जी ने शारीरिक शिक्षण बड़ी ही योग्यता के साथ दिया। शिविर में सैनिक अनुशासन था और नित्य सन्ध्या, हवन, प्रवचन के अतिरिक्त आसन, प्राणायाम, व्यायाम, लाठी, भाला, छुरा तथा खेल आदि की शिक्षा दी गई।

शिविर में विशेष रूप से चरित्र निर्माण पर बल दिया गया और वर्तमान सामाजिक कुरीतियों से अवगत कराते हुये उनसे समाज को मुक्ति दिलाने की प्रेरणा शिविर के शिक्षार्थियों को प्रदान की गई। फल स्वरूप सैकड़ों नवयुवक कैम्पों से दृढ़ प्रतिज्ञा लेकर निकले।

वाराणसी शिविर का दीक्षान्त समारोह आर्य जगत के प्रसिद्ध वेदज्ञ विद्वान पूज्यपाद श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु की अध्यक्षता में २२ जून को सम्पन्न हुआ। श्री प० जी महाराज ने अपने दीक्षान्त भाषण में आर्य समाज और महर्षि दयानन्द जी के सिद्धान्तों व मान्यताओं पर प्रकाश डालते हुये समस्त आर्य वीरों से आग्रह किया कि वे नित्य 'सत्यार्थ प्रकाश' ग्रन्थ का स्वाध्याय और ईश्वरोपासना अवश्य किया करें।

श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी ने आर्य वीरों को विदाई सदेश देते हुए कहा कि वर्तमान समय में भारतीय राष्ट्र के निर्माण में प्रत्येक भारतीय को अपने मतभेद भुलाकर अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करना चाहिए। राष्ट्र निर्माण में जहा नदियों के बाध, सड़क, नल और कारखाने अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते है वहा इनसे कहीं महत्वपूर्ण स्थान व्यक्तियों के शारीरिक, मानसिक, व चारित्रिक निर्माण का है जिसके बिना अन्य समस्त निर्माण कार्य अधूरे एव अरक्षित हैं। शोक कि आज देश के चरित्र निर्माण की ओर कम ध्यान दिया जा रहा है। नेताओं को वोटों की सख्या की चिन्ता रहती है उनके चरित्र की नहीं। आर्य वीरदल अपने शिविरों और दैनिक शाखाओं के द्वारा राष्ट्र के सास्कृतिक और चारित्रिक उत्थान का कार्य कर रहा है। अत प्रत्येक देशवासी का कर्त्तव्य है कि वह अपने बच्चों को आर्य वीर दल में भेजें और इसे प्रत्येक प्रकार का सहयोग प्रदान करें।

राम गोपाल
सभा मन्त्री

हर्ष सूचना

आर्य हवन सामग्री पर आर्य नेताओं की

* शुभ सम्मतियां *

❀ श्री पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज लिखते हैं—आज श्री प० धर्मवीर जी आर्य द्वारा निर्मित हवन सामग्री से यज्ञ कराया जो कि बहुत ही उत्तम सुगन्धियुक्त थी।

❀ स्वर्गीय श्री पूज्य महात्मा चन्द्रानन्द जी परिव्राजक अजमेर से लिखते हैं —

मैं प्रमाणित करता हूं कि श्री प० धर्मवीर जी आर्य द्वारा निर्मित हवन सामग्री शुद्ध विश्वसनीय शास्त्रोक्त व सुगन्धित है। वे बहुत ही उत्तम प्रकार से हवन सामग्री बनाते हैं। मैंने भी एक पैकिट उनकी हवन सामग्री मगा कर उसका प्रयोग किया है और मुझे काम में लाने के बाद सन्तोष हुआ।

❀ श्री प० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति भूतपूर्व प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा लिखते हैं —

आर्य धर्म प्रचारक श्री धर्मवीर जी द्वारा निर्मित हवन सामग्री का प्रयोग करके मुझे यह प्रमाणित करने में प्रसन्नता होती है कि सामग्री सुगन्धयुक्त और उत्कृष्ट है। आर्य जनों को उचित है कि उनकी सामग्री का प्रयोग करें और धर्मवीर के धर्म सेवा कार्य में सहायक हों।

❀ श्रीमान लाला रामगोपालजी मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली लिखते हैं —

श्री प० धर्मवीर जी आर्य झंडाधारी द्वारा निर्मित आर्य हवन सामग्री का प्रयोग मैंने किया। सामग्री उत्तम व सुगन्ध युक्त है। प्रत्येक यज्ञ प्रेमी को इस सामग्री का प्रयोग करना चाहिए।

❀ श्री पूज्य शास्त्रार्थ महारथी प० रामचन्द्र जी देहलवी लिखते हैं —

मैंने वेदपथिक श्री धर्मवीर जी आर्य झंडाधारी की प्रदान की हुई हवन सामग्री का प्रयोग किया। उसमें कोई वस्तु भी पुरानी और सड़ी हुई नहीं है और सुगन्ध भी बड़ा रुचिकर और आनन्ददायक है।

❀ श्रीमान प० शिवकुमार जी शास्त्री महोपदेशक आ० प्र० सभा पंजाब लिखते हैं —

श्री झंडाधारी जी की सुगन्धित सामग्री को प्रयोग में लाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। इसकी सुन्दर सुगन्धि से घर का कोना २ सुवासित हो गया। मेरे अनुभव में अब तक की बरती हुई हवन सामग्रियों में सर्वोत्तम है।

❀ श्रीमान् प० ठाकुरदत्त जी शर्मा वैद्य अमृतधारा देहरादून से लिखते हैं कि हवन सामग्री उत्तम है और भाव भी उचित है। आर्य हवन सामग्री निर्माणशाला के लिये ५०) की सहायता प० ठाकुरदत्त जी ने भेजी है।

आर्यजगत् के उद्भट विद्वानों ने हमारी सुगन्धित रोगनाशक हवन सामग्री की भूरी २ प्रशंसा की है। भूमण्डल की समस्त आर्य समाजों से तथा अन्य धर्म प्रेमी जनता से निवेदन है कि हमारी निर्माणशाला की पवित्र हवन सामग्री का नित्य ही प्रयोग करें।

प्रत्येक नगर मे हवन सामग्री के विक्रेताओं की अविलम्ब आवश्यकता है। एजेन्सी के लिये आज ही लिखें।

मेवायुक्त हवन सामग्री का भाव ८०) मन का है।
न० २ सुगन्धित हवनसामग्री का भाव ५०)मनहै।

नोट—एक मन या इससे अधिक हवन सामग्री एक साथ मगवाने वाले ग्राहकों को रेल किराया माफ होगा।

निवेदक—

वेदपथिक धर्मवीर आर्य्य झंडाधारी

अध्यक्ष आर्य हवन सामग्री निर्माणशाला

महाला ठाकुरदास सराय रुहेला, देहली-५

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) यमपितृ परिचय (पं० प्रियरत्न आर्य) २)
(२) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(३) वेद में असित शब्द पर एक दृष्टि ,, -)॥
(४) आर्य डाइरेक्टरी (सार्व० सभा) १।)
(५) सार्वदेशिक सभा का सत्ताईस वर्षीय कार्य विवरण अ० २)
(६) स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार (पं० धर्मदेव जी वि० वा०) १।)
(७) आर्य समाज के महाधन (स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) २॥)
(८) आर्यपर्व पद्धति (श्री पं० भवानीप्रसादजी) १।)
(९) श्री नारायण स्वामी जी की सं० जीवनी पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) -)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण(पं०इन्द्रजी) ।=)
(११) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या (अनुवादक पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) ।)
(१२) आर्य मन्दिर चित्र (सार्व० सभा) ।)
(१३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र(पं०प्रियरत्नजी आर्य) १॥)
(१४) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।)
(१५) आर्य समाज के नियमोपनियम(सार्वसभा) -)॥
(१६) हमारी राष्ट्रभाषा (पं०धर्मदेवजी वि० वा०) ।-)
(१७) स्वराज्य दर्शन स०(पं०लक्ष्मीदत्तजीदीक्षित) १)
(१८) राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
(१९) योग रहस्य (श्री नारायण स्वामी जी) १।)
(२०) मृत्यु और परलोक ,, १।)
(२१) विद्यार्थी जीवन रहस्य ॥=)
(२२) प्राणायाम विधि ,, =)
(२३) उपनिषदें:—

ईश	केन	कठ	प्रश्न
=)	॥)	॥)	।=)
मुण्डक	माण्डूक्य	ऐतरेय	तैत्तिरीय
।=)	।)	।)	१)

(२४) बृहदारण्यकोपनिषद् ४)
(२५) आर्यजीवनगृहस्थधर्म पं०रघुनाथप्रसादपाठक) ॥=)
(२६) कथामाला ,, ॥)
(२७) सन्तति निग्रह १।)
(२८) नैतिक जीवन स० ,, २॥)
(२९) नया संसार ,, =)
(३०) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(३१) मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक -)
(३२) भारत में जाति भेद -)॥
(३३) दस नियम व्याख्या -)॥
(३४) इजहारे हकीकत उर्दू ला० ज्ञानचन्द जी आर्य) ॥=)
(३५) वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप ,, १॥)
(३६) धर्म और उसकी आवश्यकता ,, १)
(३७) भूमिका प्रकाश (पं० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री) १।)
(३८) एशिया का वैनिस (स्वा० सदानन्द जी) ।॥)
(३९) वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां (पं० प्रियरत्न जी आर्य) ।॥)
(४०) सिंधी सत्यार्थप्रकाश २)
(४१) कन्नड सत्यार्थप्रकाश ३।)
(४२) मराठी सत्यार्थप्रकाश ३)
(४३) सत्यार्थ प्रकाश और उस की रक्षा में -)
(४४) ,, ,, आन्दोलन का इतिहास ।=)
(४५) शंकर भाष्यालोचन (पं०गंगाप्रसादजी उ०) ५)
(४६) सर्व दर्शन संग्रह ,, १)
(४७) आर्य स्मृति ,, १॥)
(४८) जीवन चक्र ,, ५)
(४९) आर्योदयकाव्यम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, १।), १॥)
(५०) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम ॥=)
(५१) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर २।)
(५२) भजन भास्कर १॥)
(५३) मुक्ति से पुनरावृत्ति ,, ,, =)
(५४) वैदिक ईश वन्दना (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।=)॥
(५५) वैदिक योगामृत ,, ॥=)
(५६) कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द (श्री नारायण स्वामी) ।॥)
(५७) आर्य वीर दल लेखमाला १=)
(५८) ,, गीतांजलि (श्री रुद्रदेव शास्त्री) ।=)
(५९) ,, ,, भूमिका =)
(६०) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)
(६१) वैदिक संस्कृति १।)
(६२) वैदिक वन्दन ५।)
(६३) दार्शनिक आध्यात्मिक तत्व १।)
(६४) ईसाइयों से प्रश्न =)
(६५) सिनेमा मनोरञ्जन या सर्वनाश =)
(६६) धर्म सुधा सार ।=)
(६७) गोहत्या क्यों ? =)
(६८) चमड़े के लिए गोवध =)
(६९) गोकरुणा निधि -)
(७०) भयंकर ईसाई षडयन्त्र ।)

मिलने का पता—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली ६ ।

स्वाध्याय योग्य साहित्य

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा ४।)
(२) वेद की इयत्ता (श्री स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) १।।)
(३) दयानन्द दिग्दर्शन (श्री स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।။
(४) ईंजील के परस्पर विरोधी वचन (प० रामचन्द्र जी देहलवी) ।=)
(५) भक्ति कुसुमांजलि (पं० धर्मदेव वि० वा० ।।)
(६) धर्म का आदि स्रोत (प० गंगाप्रसाद जी एम ए) २)
(७ भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक (श्री राजेन्द्र जी) ।।)
(८) वेदान्त दर्शनम् स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ३)
(६ संस्कार महत्व (प० मदनमोहन विद्यासागर जी) ।।।)
(१०) जनकल्याण का मूल मन्त्र ।।।)
(११) वेदों की अन्त साक्षी का महत्व ।=)
(१२) आर्य घोष ।।)
(१३) आर्य स्तोत्र " ।।)
(१४) स्वाध्याय सदोह , ५)
(१५) सत्यार्थ प्रकाश १।=
(१६ महर्षि दयानन्द ।।=)
(१७) सनातनधर्म और आर्य समाज ।=)
(१८) सन्ध्यापद्धति =)
(१६) पंजाब का हिंदी आंदोलन (माननीय श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त) ।=)
(२०) भोज प्रबन्ध २।)
(२१) डाक्टर वर्नियर की भारत यात्रा ४।।)
(२२) सनातन शुद्धि शास्त्र और आर्यों का चक्रवर्ती राज्य २)

English Publications of Sarvadeshik Sabha

1 Agnihotra (Bound) (Dr Satya Prakash D Sc) 2/8/
2 Kenopanishat (Translationby Pt Ganga Prasad ji M A /4/
3 Kathopanishat (Pt Ganga Prasad M A Rtd Chief Judge) 1/4/
4 Aryasamaj & International Aryan League Pt Ganga Prasad ji Upadhyaya M A /1/
5 Voice of Arya Varta (T L Vasvani) /2/
6 Truth & Veds (Rai Sahib) (Thakur Datt Dhawan) -/6/
7 Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) /8/
8 Vedic Culture (Pt Ganga Prasad Upadhyaya M A) 3/8/
9 Aryasamaj & Theosophical Society (Shiam Sunber Lal) /3/-
10 Wisdom of the Rishis (Gurudatta M A) 4/ /
11 The Life of the Spirit (Gurudatta M A) 2/ /
12 A Case of Satyarth Prakash in Sind (S Chandra) 1/8/
13 In Defence of Satyarth Prakash (Prof Sudhakar M A) /2/
14 Universality of Satyarth Prakash /1/
15 Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt Dharma Deva ji Vidyavachaspati) /8/
16 Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati) /8/-
17 Elementary Teachings of Hinduism /8/- (Ganga Prasad Upadhyaya M A)
18 Life after Death " 1/4/-
19 Philosophy fo Dayanand 10-0-0

Can be had from —**SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI 6**

नोट--(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत चौथाई धन अगाऊ रूपमें भेजें। (२) थोक ग्राहकों को नियमित [illegible] । (३) [illegible] २ लिखें।

Regd No D 51

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार के

पठनीय ग्रन्थ

संग्रह योग्य ग्रन्थ

वेदों के प्रसिद्ध विद्वान

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी कृत

१—यमपितृ परिचय	मूल्य	२)
२—वैदिक ज्योति शास्त्र	"	१॥)
३—वैदिक राष्ट्रीयता	,	।)
४—वैदिक ईश वन्दना	"	।≈)॥
५—वैदिक योगामृत	"	॥≈)
६—दयानन्द दिग्दर्शन	"	॥)
७—वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां		॥)
८—वैदिक वन्दन	"	५॥)

अन्य पढ़ने योग्य ग्रन्थ

१—आर्य समाज के महाधन (श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी)	२॥)
२—दयानन्द सिद्धान्त भास्कर (श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी)	१॥)
३—स्वराज्य दर्शन (श्री प० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित)	१)
४—राज धर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती)	॥)
५—एशिया का वेनिस (श्री स्वामी सदानन्द जी)	॥)
६—नैतिक जीवन (रघुनाथ प्रसाद पाठक)	२॥)
७—आर्य वीरदल सैनिक शिक्षा (ओम्प्रकाश पुरुषार्थी)	॥)
८—भारत में मूर्त्ति पूजा (श्री प० राजेन्द्र)	१≈)
९—Mahatma Buddha an Arya Reformer, प० धर्मदेव जी विद्यामार्त्तण्ड	१॥)

भजन भास्कर मू० १॥।)

संग्रहकर्त्ता श्री प० हरिशंकर जी शर्मा

यह संग्रह मथुरा शताब्दी के अवसर पर सभा द्वारा तैयार करके प्रकाशित कराया गया था। इसमें प्राय प्रत्येक अवसर पर गाये जाने योग्य उत्तम सात्त्विक भजनों का संग्रह किया गया है।

स्त्रियों का वेदाध्ययन का अधिकार मू० १)

लेखक —श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति

इस ग्रन्थ में उन आपत्तियों का वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों के आधार पर खण्डन किया गया है जो स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार के विरुद्ध उठाई जाती हैं।

आर्य पर्व पद्धति मू० १)

(पंचम संस्करण)

लेखक —श्री प० भवानी प्रसाद जी

इसमें आर्य समाज के क्षेत्र में मनाये जाने वाले स्वीकृत पर्वों की विधि और प्रत्येक पर्व के परिचय रूप में निबन्ध दिये गए हैं।

नित्य कर्म विधि मू० ॥)

(सम्पादक, ईश्वरी प्रसाद प्रेम, M A)

मिलने का पता —

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, श्रद्धानन्द बलिदान भवन दिल्ली—७

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली—से प्रकाशित।

"संकीर्णता के परित्याग का व्यावहारिक रूप हमें अपने जीवन यापन में यथासम्भव शीघ्र ही लाने का पूर्ण उद्योग करना चाहिये।

हमारे सामाजिक जीवन में कटुता और वैषम्य कहीं बद्धमूल तो नहीं हो रहे हैं, इस बात का ध्यान और चौकसी प्रत्येक आर्य नर और नारी को रखनी चाहिये। प्रतिबन्ध और पाबन्दी को बहुत महत्व देना, रजोगुणी भावना को जाग्रत करना ही है, अत सतोगुणी भाव और भावना को फैलाने के लिये विकटतम स्थिति में भी वैदिक और नैतिक मर्य्यादा भंग न हो, ऐसा ध्यान हम सबको रखना चाहिये। सभा और समाज द्वारा दरिद्र व्यक्तियों की सुधि-बुधि हमे लेते रहना चाहिये, क्योंकि हमारा दण्ड तो सुधारने और सभालने के लिये ही होता है, न कि द्वेष और ईर्ष्या के वशीभूत होकर किसी को गिराने, बिगाड़ने या मिटाने के लिये।

आर्य समाज के सेवकों को साप्ताहिक सत्सङ्गों में सम्मिलित होने का प्रोत्साहन हमें देना चाहिये।"

सम्पादक—सभा-मन्त्री
सहायक सम्पादक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक | मूल्य स्वदेश ५) विदेश १० शिलिङ्ग | अगस्त १९५८

विषय सूची

सार्वदेशिक पत्र को ५०००) का दान

श्री भवानीलाल गज्जूलाल जी शर्मा स्थिर निधि

विश्वकर्मा कुलोत्पन्न स्व० श्रीमती तिज्जोदेवी-भवानीलाल शर्मा स्कुहास की पुण्य स्मृति मे श्री भवानीलाल जी शर्मा कानपुर, वर्तमान अमरावती (विदर्भ) निवासी ने सार्वदेशिक पत्र के हितार्थ बी० जी० शर्मा स्थिर निधि की योजना निम्न लिखित नियमानुसार कार्तिक २०१३ वि० नवम्बर १९५६ ई० को प्रस्थापित की।

नियम—

१—इस मूलधन से प्राप्त वार्षिक ब्याज का आधा भाग पत्र को सहायता रूप मे मिलता रहेगा। शेष आधा भाग इसी निधि मे सम्मिलित होता रहेगा।

२—यदि किसी भी कारण वश पत्र बन्द हो जाय तो उक्त सहायता का मिलना भी बन्द हो जायगा और वार्षिक ब्याज की सम्पूर्ण रकम मूलधन मे मिलती रहेगी।

३—पत्र यदि पुन चालू हुआ तो उक्त सहायता प्राप्ति के लिये वह पूर्ण अधिकारी होगा।

४—पत्र के चालू न होने की पूर्ण निराशा मे सार्वदेशिक सभा उक्त योजना का सर्वाधिकार अपने ही किसी अन्य योग्य आर्य पत्र को दे सकती है।

५—सभा के निश्चयानुसार उपर्युक्त सम्पूर्ण योजना सार्वदेशिक पत्र मे उत्साहार्थ प्रति तीसरे मास प्रकाशित होती रहेगी।

सार्वदेशिक सभा की ७-१०-५६ की अन्तरग का तत्सम्बन्धी निश्चय—

सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि यह ५०००) का दान सधन्यवाद स्वीकार किया जाय और उक्त योजना भी स्वीकार की जाय। यह सभा श्री भवानीलाल जी शर्मा को यह आश्वासन देती है कि उपरोक्त योजना सदैव चलती रहेगी। श्री शर्मा जी ५०००) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली को अविलम्ब भेज दें ताकि कार्य आरम्भ करने मे विलम्ब न हो।

श्री शर्मा जी का सार्वदेशिक पत्र की सहायतार्थ ५०००) का दान सभा को प्राप्त हो चुका है। जहा यह दान उनकी दानशीलता एव आर्य समाज के प्रति उनकी निष्ठा का सूचक है वहा सार्वदेशिक पत्र की लोकप्रियता का भी द्योतक है। उन्होने आर्य नर नारियो के सम्मुख एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। हम सभा तथा सार्वदेशिक परिवार की ओर से उन्हे हार्दिक बधाई देते हैं। इस राशि की अर्द्ध आय सार्वदेशिक की उन्नति मे ही व्यय की जाती रहेगी।

रामगोपाल
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली-६

अमरावती के सुप्रसिद्ध दानवीर
श्रीयुत भवानीलाल जी शर्मा

श्रीमती तिज्जोदेवी जी
(धर्मपत्नी श्रीयुत भवानीलाल जी शर्मा)

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा दिल्ली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३३ } अगस्त १९५८ श्रावण २०१५ वि०, दयानन्दाब्द १३४ { अङ्क ६

वैदिक प्रार्थना

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

यजुर्वेद १३ । ४ ॥

व्याख्यान—जब सृष्टि नहीं हुई थी तब एक अद्वितीय हिरण्यगर्भ (जो सूर्य्यादि तेजस्वी पदार्थों का गर्भ नाम उत्पत्तिस्थान उत्पादक) है सो ही प्रथम था। वह सब जगत् का सनातन प्रादुर्भूत प्रसिद्ध पति है। वही परमात्मा पृथिवी से ले के प्रकृतिपर्यन्त जगत् को रच के धारण करता है "कस्मै" (कः प्रजापति ' प्रजापतिर्वै कस्तस्मै देवाय। शतपथे) प्रजापति जो परमात्मा उसकी पूजा आत्मादि पदार्थों के समर्पण से यथावत करें, उससे भिन्न की उपासना लेशमात्र भी हम लोग न करें, जो परमात्मा को छोड़ के वा उसके स्थान में दूसरे की पूजा करता है, उसकी और उस देश भर की अत्यन्त दुर्दशा होती है वह प्रसिद्ध है। इससे चेतो मनुष्यों, जो तुमको सुख की इच्छा हो तो एक निराकार परमात्मा की यथावत् भक्ति करो, अन्यथा तुमको कभी सुख न होगा ॥

ज्योति बुझी नहीं है

अर्थ शास्त्री हमें बताते हैं कि यदि विविध राष्ट्रों के मध्य खड़ी हुई व्यापारिक दीवारें हट जाय और औद्यौगिक दृष्टि से समुन्नत देश अविकसित देशों के लोगों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने में पूरा २ योग देने लगे तो विश्व में शान्ति व्याप्त हो जाय। विज्ञान के पंडित चेतावनी दे रहे हैं कि यदि अणु युद्ध छिड़ गया तो विश्व नष्ट हो जायगा। विशिष्ट स्वार्थ रक्षा और स्व विनाश की आशंका ही अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और शांति की अवस्थाएं उत्पन्न करती देखपडती हैं भलेही पंचशीलकी दुहाईदी जाय परन्तु शांति और सहयोगकी स्थिर आधारशिला उस समय तक नहीं रखी जा सकती जब तक संसार के लोग द्वेष और घृणा को प्रेम से न जीतने लगें और प्रतियोगिताओं का स्थान पारस्परिक सहयोग न लेले। यह तभी सम्भव हो सकता है जब कि मनुष्य अपने को विश्व परिवार का सदस्य समझने लग जाय और उनके पारस्परिक व्यवहार सार्व भौम नैतिक और धार्मिक सिद्धान्तों से प्रशासित होने लगें क्योंकि मनुष्य स्वभावतः धार्मिक प्राणी है। राष्ट्रों के भीतर तथा बाहर देश जन्म, वर्ग, नस्ल और मजहब इत्यादि पर आश्रित द्वेष, और घृणा मानव स्वभाव के विपरीत और कृत्रिम हैं। जब हम भोगवाद की वर्तमान संस्कृति के अभिशापों पर विचार करते हुए संसार में व्याप्त अशान्ति, कलह, विद्वेष, घृणा स्वार्थ लोभ, और विलासिताका सूक्ष्म विवेचन करते हुए मानव को पतन की ओर अग्रसर हुआ देखते हैं तो हमें वैदिक ऋषियों की सूक्ष्म दृष्टि एवं विद्या बुद्धि पर आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता जिन्होंने घोषणा की थी कि मनुष्य प्रकृति का भोग करते हुए भी आत्म-तत्व की ओर बढ़े स्व को पर में परिणत करता जाय तभी वह सुख और शान्ति से रह सकता है। स्व के पर में परिवर्तित होते रहने से मनुष्य अपना उत्थान करते हुए समाज का अधिकाधिक हित सम्पादित करता रहता है। इसी को दूसरे शब्दों में धर्म्माचरण कहते हैं।

इस समस्त अशान्ति और विद्वेष के मूल में जीवन की अशुद्ध भावनाएं काम करती देख पड़ रही हैं। मजहब के नाम पर मनुष्य को मनुष्य का शत्रु बनाकर धर्म और मानवता को लाञ्छित किया जा रहा है। भोगवाद के नाम पर जिस जीवन दर्शन का विकास होरहा है उसने तो संसार में तबाही ही मचाई हुई है। कहा जाता है कि साम्यवादियों ने विश्व को दो वर्गों पूंजीवादीय और समाज वादीय— में विभक्त किया हुआ है परन्तु यह विभाजन कृत्रिम और भ्रामक हैं। यह विभाजन उन लोगों के मध्य में है जो मानव जीवन का एक विशिष्ट और ऊंचा उद्देश्य मानकर उसको सोद्देश्य इस्ती मानते हैं और जो उसको राज्य की मशीन का एक पुर्जा मानते हैं और उसका पृथक और अपना अस्तित्व न मानकर उसकी बलि चढाने में आगा पीछा नहीं करते। जिस जीवन दर्शन में मनुष्य का स्वतन्त्र अस्तित्व और कर्तृत्व नहीं स्वीकार किया जाता अथवा रंग, वर्ग, देश, जाति जन्म, नस्ल आदि के कृत्रिम भेद भाव के बिना उसकी आध्यात्मिक विशिष्टता एवं जीवन की पवित्रता स्वीकार नहीं की जाती वह भले ही उन्नत माना जाय, व्यर्थ ही है। मानव समाज का दुर्भाग्य यहहै कि उपर्युक्त प्रकार के भ्रान्त जीवन दर्शन का उन्मूलन नहीं हुआ है। मुसलमान का हिन्दू से इसलिए घृणा करना कि वह मुसलमान नहीं है कहा की मानवता है? मुसलमान का गिरे से गिरे मुसलमान की तुलना में उच्च से उच्च हिन्दू को हेय समझना कहाँ की धार्मिकता है? गोरे ईसाईयों का काले भारतीयों तथा हब्शियों को कुत्तों से भी बुरा समझ कर उनको हेय समझना वा उनके साथ पशुवत व्यवहार करना कहाँ की सभ्यता है? जन्मना उच्चनीच और खुश्य

अस्पृश्य की भावना का रखना कहाँ का हिन्दुत्व है?

इस समय की सब से बड़ी आवश्यकता यह है कि मनुष्य को सही जीवन दर्शन का बोध हो और वह यह समझ जाय कि मानव-जीवन का ध्येय है और वह है स्वय अच्छा बनना, दूसरों को अच्छा बनाना, अपने को और समाज को सुखी, समृद्ध और उन्नत बनाना। ऐसी स्थिति के लिए प्राणी मात्र के प्रति प्रेम, निस्वार्थ सेवा और सदाचार आदि विशिष्ट गुणों और परम्पराओं की आध्यात्मिक आधार शिला पर ही समाज के निर्माण और विकास की परमावश्यकता है। ससार का यह भी दुर्भाग्य है कि इस समय उसका भाग्य सूत्र राजनीतिज्ञों के हाथ मे है। धार्मिक एव नैतिक प्रेरणाओं का दम घुट रहा है। शीत युद्ध, पारस्परिक सन्देह, भय, राज्य क्रान्तियों, लूट पाट, हत्याओं से वातावरण विषाक्त बनता जा रहा है। औद्योगिक सभ्यता ने मुट्ठी भर राजनीतिज्ञो के हाथ में अमित शक्ति प्रदान की हुई है परन्तु इस शक्ति का दुरुपयोग जनता की निष्काम सेवा के बजाय उनके दोहन में होता है इसीलिए ससार का भविष्य उनके हाथों मे अरक्षित है। जो राजनीतिज्ञ जन हित की उदात्त भावना से प्रेरित होकर शक्ति सचय में निमग्न है उनसे भी अशान्ति व्याप्त और मानवता लाछित है। ये दोनों अवस्थाए भयावह एव खतरों से परिपूर्ण हैं।

प्रकाश की ज्योति तो उन धर्मपरायण लोगों के हाथ में रहती है जो मानव को सन्मार्ग दिखाते और सन्मार्ग पर चलाते है। वे प्रलोभनों, भय, दबाव और कूटनीति से ऊपर रहते हुए सत् सिद्धान्तों पर अडिग रहते हैं। यह ज्योति बुझी नहीं है यद्यपि धूमिल हो गई है। राजनीति की मृग-तृष्णा से क्लान्त और परिश्रान्त मानव शीघ्र ही इस ज्योति के लिए छटपटाएगा और उसकी ओर अग्रसर होगा जिसके लक्षण अब देख पड़ने लगे है। इस ज्योति के दर्शन के लिए उसे बाहर की ओर से दृष्टि हटाकर अपने भीतर की ओर दृष्टि लगानी होगी।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

सृष्टि की आयु

रूस के एक भूगर्भ विद्या विशारद ने हिसाब लगाकर बताया है कि जीवन के वतमान स्थिति तक विकास मे कम से कम १ अरब वर्ष लगे होंगें। इस विज्ञान वेत्ता ने जिनका नाम प्रो० लेव जेन कीविच है अपनी गणना को समुद्र की सतह पर जमा हुई कीचड की मात्रा पर अवलम्बित किया है। उन्होंने यह भी प्रकट किया कि जीव विद्या पर आधारित यह गणना धातु विज्ञान पर आधारित गणना की अपेक्षा अधिक ठीक है जिसके अनुसार अब तक पृथ्वी की आयु ५० करोड वर्ष से अधिक नहीं बताई गई है।

वैदिक वाड्मय के अनुसार सृष्टि की वर्तमान आयु १अरब ९७करोड के लगभग है हर्ष है। जीव विज्ञान के पडित भी इस सत्य की ओर आ रहे हैं।

गाधी मार्ग

पजाब के मुख्य मत्री सरदार प्रतापसिंह कैरों ने कपूरथला मे १० जून को पत्रकारों के साथ वार्त्तालाप करते हुए कहा कि 'पाच सात वर्षों तक ऐसी व्यवस्था हो जायगी कि यदि एक भी छात्र हिंदी, पजाबी अथवा उर्दू पढना चाहेगा तो उसका उचित प्रबध किया जायगा। उन्होंने यह भी कहा कि पाच वर्षों के भीतर भूतपूर्व पजाब और पटियाला सघ के क्षेत्रों में समान कानून लागू हो जायगा।

आर्य समाज की पहली माग यह थी कि समूचे पजाब प्रदेश में जिसमे पेप्सू भी सम्मिलित हो, एक जैसी सरकारी भाषा नीति हो। इस माग को सिद्धान्त रूप मे स्वीकार किया गया है परन्तु व्यवहार में यह सिद्धात जैसा कि मुख्य मत्री ने

संकेत किया है पाच वर्ष में आ सकेगा।

जलंधर डिवीजन में सच्चर फार्मूले के अनुसार स्कूल में हिंदी की पढ़ाई की व्यवस्था तभी हो सकेगी जबकि क्लास में कम से कम १० छात्र हिंदी पढ़ने की माग करें अथवा स्कूल भर में ऐसे ४० छात्र हों। जहा यह संख्या पूरी न होगी वहा बच्चा अपनी पढ़ाई हिंदी में प्रारम्भ करने से वंचित रहेगा। इसका समाधान मुख्य मत्री महोदय यह करते हैं कि ५-७ वर्षों में प्रत्येक छात्र के लिए हिंदी, पजाबी या गुरुमुखी की पढ़ाई की व्यवस्था की जायगी। ५-७ वर्ष तक अपने बच्चों का अहित करना माता पिताओं को क्योंकर सहन होगा? फिर मुख्यमन्त्री महोदय के इन आश्वासनों पर कहां तक विश्वास किया जाय जबकि उनसे बड़े २ नेता और राज्याधिकारी हिंदी आंदोलन के पुरस्कर्ताओं को आश्वासन देकर भी उनसे मुकर गए हों। ऐसी स्थिति में आर्य समाज के समक्ष सिवा इसके कि आंदोलन को पुन वेगवान किया जाय दूसरा मार्ग नहीं है। आर्यसमाज के भावी संघर्ष का रूप क्या होगा यह तो संघर्ष समिति ही निर्धारित करेगी। वह स्थगित हुए सत्याग्रह को पुन: जारी कर सकती है अथवा सरकारी नीति के प्रतिवाद स्वरूप हिंदी प्रेमी अभिभावकों को उन स्कूलों में अपने बालकों को भेजने से रोक सकती है जिनमें गुरुमुखी में लिखित पंजाबी के पढ़ने की बाध्यता हो।

संघर्ष समिति ने प्रधान मंत्री पं० जवाहर लाल जी नेहरू की सेवा में एक स्मृति पत्र भेजा है। यदि इस पत्र का अभिलषित परिणाम हुआ तो ठीक, अन्यथा संघर्ष के लिए बाध्य हो जाने पर आर्य जगत् पुन अग्नि परीक्षा में से गुजरने के लिए बाध्य होगा। दुर्भाग्यकी बात यह है कि भाषा जैसे सांस्कृतिक विषय को राजनीति की गंदगी में घसीटा जा रहा है और आर्यसमाज की विशुद्ध सांस्कृतिक मांगों और आंदोलन को राजनैतिक चश्में में से देखा जाता है। यह विचार-धारा और मनोवृत्ति शासकों के लिए हितकर सिद्ध न होगी। राज्याधिकारियों को आर्य समाज के इरादों की पवित्रता और सद्भावना पर विश्वास करना चाहिए और उसकी शक्ति का परीक्षण करने से परहेज करना चाहिए। शासकों ने आर्य समाज की सद्भावना का उत्तर आश्वासन देने पर भी सद्भावना से नहीं दिया है। इसके लिए वे देश के जनमत के समक्ष अपराधी है। उन्हें आर्य समाज की न्याय्य मांगों को स्वीकार करके अपने इस अपराध का तत्काल प्रायश्चित कर देना चाहिए। यही गाँधी मार्ग है जिसकी वे जब-तब दुहाई देते नहीं थकते।

स्व० पं० रामावतार जी विद्याभास्कर

श्री प० रामावतार विद्याभास्कर के निधन से सस्कृत और हिंदी के एक प्रकाड पडित का स्थान रिक्त हो गया। वे महाविद्यालय ज्वालापुर के स्नातक थे। पंडित जी उत्तर प्रदेश के बिजनोर जिले के ग्राम रत्नगढ़ के निवासी थे। इस जिले में रामावतार जी जैसा अखिल भारतीय ख्याति का विद्वान् स्व० पं० पद्मसिंह जी के बाद दूसरा न था। रामावतार जी प० पद्मसिंह जी के शिष्य थे और उनके परमभक्त भी थे। पं० जी पजाब विश्वविद्यालय के शास्त्री, कलकत्ता विश्वविद्यालय के वेदांततीर्थ और काशी के संस्कृत विश्वविद्यालय के मीमांसाचार्य थे। उन्होंने स्नातक बनने के पश्चात महाविद्यालय ज्वालापुर में अध्यापक आचार्य, मुख्याधिष्ठाता, और उपसभापति आदि २ पदों पर भी कार्य किया था।

उनके अध्ययन और लेखन के प्रिय विषय अध्यात्म, नीति और सदाचार आदि थे। उन्होंने छोटे बड़े लगभग ५० ग्रन्थ लिखे हैं जिनमें से कई ग्रंथ सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हैं। उनके प्रमुख ग्रंथों में 'मनुष्य जीवन का लक्ष्य' 'आदर्श परिवार' 'ईश्वर भक्ति का स्वरूप, 'सत्य अहिंसा' 'जागृत जीवन' 'आदर्श विद्यालय' आदि २ हैं।

उनका गीता-भाष्य जो गीता 'परिशीलन' के नाम से प्रकाशित हुआ था, उनके विविध भाष्यों में सर्वोपरि स्थान रखता है। इस भाष्य की महा मा गाधी ने मुक्तकंठ से प्रशसा की थी और लोकनायक अणे ने गीता पर लोकमान्य तिलक की टीका के बाद दूसरा ग्रथ बताया था। यह ग्रथ उत्तर प्रदेश राज्य के द्वारा पुरस्कृत हुआ और इसे राज्य की पाठ-विधि में स्थान प्राप्त हुआ था।

पंडित जी का जीवन बड़ा सादा और सात्विक था। उनमें निर्भयता और स्पष्टवादिता कूट २ कर भरी थी।

हम दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिए पर-मात्मा से प्रार्थना करते और उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना का प्रकाश करते है।

वेदाध्ययन पर बल

प्रसन्नता है कि देश के बड़े २ नेता और राज्याधिकारी वेदों के पठन-पाठन पर इन दिनों बड़ा बल दे रहे हैं। राष्ट्रपति श्री डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने २६ जून को अ० भा० माधवतत्व सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए हैदराबाद में कहा कि भारत की अखडता की झलक हिंदु विचार-धारा के प्रसार और विकास में उपलब्ध है क्योंकि इस विचार धारा के मूल स्रोत वेद हैं।

नि:संदेह वेद से ही पीड़ित मानवता कोअपना अस्तित्व बनाए रखने की नई दिशा प्राप्त हो सकती है। इस बात को लक्ष्य में रखते हुए उत्तर प्रदेश के मुख्यमत्री श्री सम्पूर्णानंद जी ने २६ जून को नैनीताल में शंकराचार्य के सम्मान में आयोजित स्वागत समारोह में अध्यक्षता करते हुए अपील की कि वेदों का वैज्ञानिक आधार पर अध्ययन किया जाय। उन्होंने शिकायत की कि वेदों का अध्ययन तेजी से विलुप्त होता जा रहा है और उसे बनाए रखने के लिए ठोस प्रयत्न होना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि संस्कृत भाषा सरल है और कोई भी व्यक्ति जो आधा घंटा प्रतिदिन इसका अध्ययन करे उसे २-३ मास में सीख सकता है।

इससे पूर्व लोक सभा के अध्यक्ष माननीय श्री अनन्त शयनम् महोदय ने वेद-विद्यालय दिल्ली में आयोजित वेद-सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए वेदों के पठन-पाठन पर बल दिया और वेद को लोकप्रिय बनाने के लिए सनातन धर्मियों और आर्य समाजियो को मिलकर काम करने की प्रेरणा की। उन्होंने कहा कि सनातन धर्मी तो वेद को भूल गए केवल उपनिषदों को पकड़ने से कुछ लाभ न होगा।

महर्षि दयानन्द के वेदोद्धार के कार्य के प्रति श्रद्धाजलि प्रस्तुत करते हुए अध्यक्ष महोदय ने कहा- "ऋषि दयानन्द को हमें वेदोद्धार के लिए धन्यवाद देना चाहिए। यदि वे प्रवचन न करते तो कोई वेदों का नाम भी न लेता। हमारा कुछ ध्यान वेदों की ओर गया और यह उन्हींकी कृपा से।"

उत्तर प्रदेश सरकार का दुर्भाग्यपूर्ण पग

विदित हुआ है कि उत्तर प्रदेश सरकार अपने गोवध-निरोध अधिनियम में संशोधन करने जा रही है। इस संशोधन की आवश्यकता इसलिए पड़ी क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय ने एक अपील पर निर्णय देते हुए गोवध के निरोध का सिद्धात तो स्वीकार कर लिया किन्तु यह भी स्थिर कर दिया कि 'अनु-पयोगी' पशुओं का वध किया जा सकता है। परंतु इस न्यायालय ने अनुपयोगी शब्द की व्याख्या नहीं की। इस पर राज्य सरकार ने अपने विधि और न्याय विभाग के उपमंत्री श्री लक्ष्मीरमण आचार्य की अध्यक्षता में एक समिति यह निर्णय करने के लिए नियुक्त की कि कौन सा पशु किस समय उपयोगहीन हो जाता है। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रेषित कर दी है। उसके प्रकाश में उक्त अधिनियम में यह संशोधन किया जा रहा है कि गाय तो सदा अवध्य रहेगी किन्तु बैल या साड १५ वर्ष की आयु भोगने के पश्चात मारा जा सकता है। उत्तर प्रदेश सरकार का यह

पग निश्चय ही दुर्भाग्यपूर्ण है। इसकी क्या गारटी होगी कि १५ वर्ष की आयु अथवा उससे ऊपर की आयु के ही बैल या साड मारे जायगे ? इस विषय में जनता का अनुभव बडा कटु है। कसाई लोग बैलों या गायोंके दात तोडकर उन्हें अगहीन बनाकर वा विकृतकर उन्हें बूढा दिखाकर डाक्टरोंसे बध के लिए पास कराते रहे हैं। क्या इन हथकडों की सरकार कोई रोकथाम कर सकेगी ? इसकी आड मे तो जवान बैल या साड भी बडी सख्यामें मारे जाते रहेंगे। परिणाम यह होगा कि कृषि के योग्य बैलों की भारी कमी व्याप्त हो जायगी। आंकडों से यह अनेक बार प्रतिपादित हो चुका है कि अनुपयोगी कहे जाने वाले बैलों इत्यादि के गोबर और खादसे उनके ऊपर व्यय होने वाली राशि से कही 'अधिक राशि प्राप्त होती वा हो सकती है। इस प्रकार आर्थिक दृष्टि से बूढे बैलों का वध हानिप्रद है। रहा मानवीय दृष्टिकोण इसकी भी जीवन की योजना में उपेक्षा नहीं की जा सकती। क्या अनुपयोगी बूढों की समस्या का समाधान उनको मौत के घाट उतार देना ग्राह्य और क्षम्य हो सकता है ? कदापि नहीं। तब फिर बेचारे मूक बैलों या साडों पर ही मनुष्य यह गजब क्यों ढाए।

शक्ति को पवित्र रूप दो

दुर्भाग्य से हम में आन्तरिक सगठन की कमी व्याप्त हो रही है। यह इस बात की सूचक है कि हमारा वैयक्तिक और सामाजिक स्तर नीचा हो गया है। आर्य समाज का दशवा नियम शब्द और अर्थ दोनों दृष्टियों से पूर्णतया हृदयङ्गम हुआ प्रतीत नहीं होता। यदि किसी आदमी को कोई शिकायत होती है अथवा कोई निर्वाचन से असन्तुष्ट होता है तो वह सीधी अखबारों की शरण लेता है और एक जबरदस्त आन्दोलन प्रारम्भ कर देता है। ऐसे व्यक्ति को सम्बद्ध समाज या प्रान्तीय सभा से निर्णय कराना चाहिए। यदि वह इन दोनों के निर्णयों से सन्तुष्ट न हो तो प्रान्तीय सभा की अनुमति से सार्वदेशिक सभा से निर्णय करा लेना चाहिए।

हम समाज में कुछ सीखने और सेवा करने के लिए प्रविष्ट होते हैं। इस भावना को निरन्तर सामने रखने से व्यक्ति और समाज का हित होता और सगठन दृढ होता है। गड़बड़ तब उत्पन्न होती है जब हम अपने को आगे और समाज को पीछे रखते हैं। यहीं कर्त्तव्यों और अधिकारों में सघर्ष उत्पन्न होकर कलह और अशान्ति को प्रश्रय मिल जाता है। आत्म सवर्धन के लिए समाज का दोहन करना वह पाप और अपराध है जिसका दड समाज से भले ही न मिले अन्तरात्मा से अवश्य मिलता है।

आर्य समाज के नियमों में वैयक्तिक और सामाजिक उन्नति और व्यवहार की प्रणाली दर्शा दी गई है। उन नियमों को आचरण में लाने वाला व्यक्ति समाज का सुगन्धित पुष्प बन सकता है। परन्तु दशवें नियम मे उसकी वैयक्तिक स्वतन्त्रता पर समाज के हित मे प्रतिबन्ध लगा दिया गया है और वह यह कि समाज का सदस्य स्व हितकारी नियम पालनेमें स्वतंत्र परंतु परहितकारी नियममें परतंत्र है। इसका एक अर्थ यह है कि आर्य समाज का सदस्य दूसरे सदस्यों के विचारों का सम्मान करे और उनके साथ वहा तक जाय जहा तक समाज-हित के लिए आवश्यक हो। साथ ही वह अपने विचारों में तथा व्यवहार में सहिष्णु बना रहे। इन दोनों बातों पर आचरण करने से सदस्य बड़ा सफल सदस्य सिद्ध होता है।

आर्यसमाज का सामूहिकवाह्य सगठन बड़ा दृढ़ है और उसमें शक्ति है। आर्य समाज के सदस्यों की सामूहिक नियन्त्रित बुद्धि ने, सुस्पष्ट विचार सरणि ने, मानव स्वभाव के ज्ञान ने, सभ्यता और सच्चरित्रता ने, सुधारसेवा परोपकार भावनाने और शिक्षा तथा प्रचार कार्य ने उस शक्ति को पवित्र रूप दिया है। आर्य समाज के प्रत्येक सदस्य का यह कर्तव्य है कि वह इस शक्ति को बढाता हुआ उसे पवित्र रूप दिए जाने का कारण बने। सगठन कब कमजोर और छिन भिन्न होते हैं ? जब सेवा की भावना अधिकार की भावना से दब जाती और मानव स्वभाव की कमजोरिया खुला खेल खेलने लगती हैं और शक्ति को कलुषित रूप प्राप्त होने लगता है। आर्य समाज के सदस्यों और अधिकारियों को इस घातक बुराई से आर्य समाज के संगठन को पृथक रखने में कोई यत्न उठा न रखना चाहिए।

—रघनाथ प्रसाद पाठक

❀ ओ३म ❀

कार्यालय
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
३ दयानन्द भवन, (रामलीला मैदान)
नई दिल्ली—१

सत्याग्रह बलिदान-स्मारक दिवस

शुक्रवार २६ अगस्त १९५८ को मनाइये

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली के दिनांक १३–१०–४० के स्थायी निश्चयानुसार हैदराबाद सत्याग्रह मे अपने प्राणों की आहुति देने वाले आर्य वीरों की पुण्य स्मृति मे श्रावण शुक्ला पूर्णिमा तदनुसार शुक्रवार २६ अगस्त १९५८ को आर्यसमाज मन्दिरों में सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस मनाया जायगा। इसी दिन श्रावणी का पुण्य पर्व है। इसका कार्यक्रम आर्य पर्व पद्धति के अनुसार श्रावणी उपाकर्म के साथ मिलाकर निम्न प्रकार किया जाय —

प्रात ८॥ बजे आर्यसमाज मन्दिरों मे सभाए की जाय जिनमे उपाकर्म की कार्यवाही के पश्चात् सब उपस्थित भद्र पुरुष तथा देविया मिलकर निम्न पाठ करें।

१—ओ३म् ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृतद्विष ।
तेषा व सुम्ने सुच्छर्दिष्टमे वय स्याम ये च सूरय ॥ ऋग्वेद ७। ६६। १३॥

२—ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रत चरिष्यामि तच्छकेय तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि ॥ यजुर्वेद १। ५॥

३—ओ३म् इन्द्र वर्धन्तो अप्तुर कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।
अपघ्नन्तो अराव्ण ॥ सामवेद ॥

४—ओ३म् उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्य सन्तु पृथिवि प्रसूता ।
दीर्घ न आयु प्रतिबुध्यमाना वय तुभ्य बलिहृत स्याम् ॥ अथर्ववेद १२। १६२॥

आर्य समाजों के पुरोहित अथवा अन्य कोई वेदज्ञ विद्वान् उपर्युक्त मन्त्रों का तात्पर्य इन शब्दों में पढ कर प्रार्थना कराये —

१—जो विद्वान् सदा सत्य के मार्ग पर चलते हुए सत्य की निरन्तर वृद्धि और असत्य के विरोध में तत्पर रहते हैं, उनके सुखदायक उत्तम आश्रय में हम सब सदा रहें तथा हम भी उनकी तरह मन, वचन और कर्म से पूर्ण सत्यनिष्ठ बनें।

२—हे ज्ञानस्वरूप सब उत्तम सकल्पों और कर्मों के स्वामी परमेश्वर ! हम भी आज से एक उत्तम व्रत ग्रहण करते हैं जिसके पूर्ण करने की शक्ति आप हमे प्रदान करें ताकि उस व्रत के ग्रहण से हमारी सब तरह से उन्नति हो। वह व्रत यह है कि असत्य का सर्वथा परित्याग करके हम सत्य की ही शरण में आते हैं। आप हमे शक्ति दें कि हम अपने जीवनों को पूर्ण सत्यमय बना सकें।

३—हे मनुष्य ! तुम सब आत्मिक शक्ति तथा उत्तम ऐश्वर्य को बढाते हुए श्रमशील बन कर उन्नति में बाधक आलस्य प्रमादादि दुर्गुणों का परित्याग करते हुए सारे ससार को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ सदाचारी, धर्मात्मा बनाओ।

४—हे प्रिय मातृ भूमे ! हम सब तेरे पुत्र और पुत्रिया तेरी सेवा मे उपस्थित होते हैं। सर्वथा नीरोग, स्वस्थ तथा ज्ञान सम्पन्न होते हुए हम दीर्घायु को प्राप्त हों और तेरी तथा धर्म की रक्षा के लिये आवश्यकता पड़ने पर अपने प्राणों की बलि देने को भी तैयार रहें।

इसके पश्चात् मिलकर निम्नलिखित कविता का गान किया जावे —

❀ धर्मवीरों के प्रति श्रद्धाञ्जलि ❀

श्रद्धाजलि अर्पण करते हम, करके उन वीरों का मान।
धार्मिक स्वतन्त्रता पाने को, किया जिन्होंने निज बलिदान ॥
परिवारों के सुख को त्यागा, युवक अनेकों वीरों ने।
कष्ट अनेकों सहन किये पर, धर्म न छोड़ा वीरों ने ॥
ऐसे सभी धर्म वीरों के, आगे सीस झुकाते हैं।
उनके उत्तम गुण गण को हम, निज जीवन में लाते हैं ॥
अमर रहेगा नाम जगत् मे, इन वीरों का निश्चय से।
उनका स्मरण बनायेगा फिर, वीर जाति को निश्चय से ॥
करे कृपा प्रभु आर्य जाति में, कोटि कोटि हों वीर।
धर्म देश हित जो कि खुशी से, प्राणों की आहुति दें वीर ॥
जगदीश को साक्षी जान कर, यही प्रतिज्ञा करते हैं।
इन वीरों के चरण चिन्ह पर, चलने का व्रत करते हैं ॥
सर्व शक्ति दें बल ऐसा, धीर वीर सब आर्य बनें।
पर उपकार परायण निशि दिन, शुभ गुण धारी आर्य बनें ॥

(ध० दे०)

❀ धर्मवीर नामावली ❀

श्यामलाल जी महादेव जी राम जी श्री परमानन्द।
माधव राव विष्णु भगवन्ता, श्री स्वामी कल्याणानन्द ॥
स्वामी सत्यानन्द महाशय मलखाना श्री वेदप्रकाश।
धर्म प्रकाश रामनाथ जी पाण्डुरग श्री शांति प्रकाश ॥
पुरुषोत्तम जी ज्ञानी लक्ष्मण राव सुनहरा वेंकट राव।
भक्त अरुडा मातुराम जी नन्हूसिंह श्री गोविन्दराव ॥
बदनसिंह जी रतीराम जी मान्य सदाशिव ताराचन्द।
श्रीयुत छोटेलाल अशर्फीलाल तथा श्री फकीरचन्द ॥
माणिकराव श्री भीमराव जी महादेव जी अर्जुनसिंह।
सत्यनारायण बैजनाथ ब्रह्मचारी दयानन्द नरसिंह ॥
राधाकृष्ण सरीखे निर्भय अमर हुए इन वीरों का।
स्मरण करें विजयोत्सव के दिन, सबही वीरों धीरों का ॥

रामगोपाल
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली

आत्म-कल्याण का मार्ग

[ले० श्री स्वा० गगागिरि जी महाराज, गुरुकुल रायकोट]

मनुष्य जीवन का लक्ष्य आत्मा का कल्याण करना है। वह काम सरल नहीं है। इसमें बडे २ समझदार कहे जाने वाले महानुभाव भी भटक जाते हैं मार्गभ्रष्ट हो जाते हैं। साधारण जनों का तो कहना ही क्या है। क पन्था ? मार्ग कौन सा है ? यह सनातन प्रश्न है। सब कालों, सब देशों में यह प्रश्न सब विचारकों के समक्ष आया है। बहुत थोडे ऐसे भाग्यवान् हैं जो इस प्रश्न का पूरा समाधान कर सके हैं और तदनुसार स्वजीवनयात्रा व्यतीत कर सके हैं। यह मार्ग अति कठिन है इसके लिए वेद हमें क्या उपदेश देता है ? पाठक ध्यान से इस मन्त्र के भाव को समझें। मन्त्र इस प्रकार है —

मैतं पन्थामनुगा भीम एष येन पूर्वं नेयथ तं ब्रवीमि। तम एष पुरुष मा प्रपत्थाः भय परस्तात्, अभयं ते अर्वाक्।

अ० ८। १। १०।

इस मार्ग पर "मा अनुगा" मत चल, "भीम एष" क्योंकि यह भयकर है, येन=जिस मार्ग से "पूर्व" पहिले "नेयथ" ले जाया गया "त ब्रवीमि" उसे बताता हु "पुरुष" हे पुरुष ! नागरिक ! "एतत तम" इस अन्धकार को "मत प्राप्त हो—अथवा अन्धकार में मत गिर। "परस्तात् भयम्"=पिछली ओर भय है "अर्वाक्" इस ओर तुझे "अभय" अभय है। वेद उल्टे मार्ग में चलने से मनुष्य को बन्द करता है। "मैत पन्थामनुगा" वेद कहता है कि इस मार्ग पर मत चल। सभी मनुष्यों का यह अनुभव है कि कठोर कर्त्तव्य-पालन के समय उन्हें सासारिक मोह घेर लेता है। न्यायाधीश का अपना पुत्र अपराधी के रूप में उसके सामने आता है, अपराध प्रमाणित हो जाता है किन्तु पुत्र प्रेम न्याय के मार्ग में आ खडा होता है, यह न्याय नहीं करने देता। क्या वह "गुरुपदिष्टेन रिपौ सुतेऽपि वा निहन्ति दण्डेन स धर्मविप्लवम्"=कानून का भङ्ग करने वाला धर्म का उलघन करने वाला पुत्र हो या शत्रु हो—उसके लिए वेद कहता है कि "मैत मन्थामनुगा" मत इस राह पर चल। मनुष्य जीवन का लक्ष्य क्या यही है ? कि बस खाना पीना और भोग भोगना। प्राचीन समय में रावण ने सीता को कहा था कि—

भुङ्क्ष्व भोगान् यथाकामं पिब भीरु रमस्व च।

वा० रा० सुन्दर काण्ड २०—४०।

अर्थात्=खा-पी-और भोगों को भोग, आनन्द-पूर्वक जीवन को व्यतीत कर। किन्तु सीता माता ने वेद पढा था "मैत पन्थामतेगा" सीता इस भोग मार्ग पर न चली, और राक्षस रावण के प्रणय प्रलाप को उसने ठुकरा दिया। इससे पता लगता है कि भोग भोगना मनुष्य के जीवन का लक्ष्य नहीं है। क्या मनुष्य खान पानादि विषयों मे पशुओं की बराबरी कर सकता है ? क्या कोई हाथी के बराबर खा सकता है ? खाना, पीना, मौज उडाना तो राक्षसों का धर्म है। रावण ने सीता को कहा है कि—

स्वधर्मो रक्षसां भीरु सर्वथैव न संशयः।
गमनं वा परस्त्रीणां हरणं संप्रमथ्य वा।

वा० रा० सु० २०-५।

अर्थात्—हे धर्मभीरु ! सीते ! परस्त्रीगमन या व्यभिचार तो राक्षसों का अपना धर्म है। तो क्या हम राक्षस बनें ? वेद कहता है कि—'ना भाई !

"भीम एष" यह मार्ग भयकर है। आज भी जो लोग कहते हैं कि —'खाओ, पीओ, आनन्द करो, —उन्हें भी रावण का भाई समझो। वे लोग राक्षस धर्म के प्रचारक हैं। जब जीवन यात्रा के लिए मनुष्य तय्यार होता है तो उसके सम्मुख 'दो राहा' आता है। एक मार्ग पर तो सब लुभावनी सामग्री= नाच गान=स्त्री खान पान आदि २ होता है। दूसरे मार्ग पर ऐसा कुछ दीखता नहीं है। साधारण मनुष्य=जिसका विवेक अपक्व है, वह तो पहले मार्ग को ही चुनता है। 'पहले=मार्ग के चुनने में दो कारण हैं। पहला कारण "मन्दमति" दूसरा कारण= 'सासारिक भोगों की लालसाओं की पूर्ति की सभावना। यम ने नचिकेता को इस दोराहे की बात भलीभाति समझाई थी। उसने कहा था कि — "श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतत्" कठ–१ २ २। यम ने कहा श्रेय मार्ग और प्रेय मार्ग दोनों ही मनुष्य को मिलते हैं। किन्तु श्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते कठ० १ २ २। मन्दमति मूर्ख, 'योग क्षेम' के कारण सासारिक भावना के कारण–प्रेय मार्ग को पसन्द करता है। मूर्ख मनुष्य दोनों का भेद नहीं जानता है। वह उनकी पहिचान नहीं कर सकता है। पहिचान तो धैर्यवान्—विचारशील ही कर सकता है। "तौ सपरीत्य विविनक्ति धीर" कठ० १–२–२। धीर मनुष्य ही इन दोनों मार्गों=(श्रेय और प्रेय) को जाच करके भेद कर सकता है। मह। अज्ञानी मूढ ही इस प्रेय मार्ग पर चलते हैं। यम कहता है नचिकेता को —

> अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः,
> स्वय धीराः पडितं मन्यमानाः।
> दद्रम्यमाणाः परियन्ति मूढाः,
> अन्धेनैव नीयमानाः यथान्धाः ॥
> कठ० १–२–५।

अर्थात् जो अविद्या में फसे हैं किन्तु अपने आपको ध्यानी और पडित मान रहे हैं—ऐसे दुख त्रस्त महामूढ ही इस प्रेय मार्ग में चलते हैं। वे स्वय अन्धे हैं–और अन्धों के पीछे चल रहे हैं। वेद कहता है कि —"मत चल इस मार्ग पर" तुझे मैं बताता हू मार्ग। पहिले भी इसी मार्ग से तुझे और तेरे बडों को चलाया था। 'येन पूर्व नेयथ त ब्रवीमि"। अरे! वह प्रेय मार्ग अन्धकार ढापा हुआ है। अन्धकार मृत्यु है। तू अन्धकार में मत फस। भगवान् ने कहा है कि —

"त एतत् पुरुष मा प्रपत्था" नगर के रहने वाले! यह अन्धकार है, इसमे मत गिर। नगरवासी तो प्रकाश का अभ्यासी है। पुरुष की नगरी शरीर है। ज्योति से आवृत है। 'प्रकाश से ओत प्रोत" का अन्धकार में गिरना लज्जास्पद है। यदि ससार पथ में "प्रेयो माग–अथात् भोगपद्धति इतनी भया वह है तो ऐसा हमें प्रतीत क्यो नहीं होता है? इस पुराने प्रश्न की मीमासा यम ने इस प्रकार की है —

> न सपरायः प्रतिभाति बाल प्रमाद्यन्त वित्तमोहेन मूढम्। अयं लोको नास्ति पर इति मानी पुनः पुनर्वशमापद्यते मे"।
> कठ० १–२–६।

अर्थात् —यह सपराय=ध्यानी ज्ञानी=विनश्वर ससार "बालक" को=मूढ अज्ञानी को—सही रूप में नहीं दीखता है। प्रमादी को यह सही नहीं सूझता है। भर्तृहरि के शब्दों में उसने तो शराब पी रखी है।

"पीत्वा मोहमयी प्रमादमदिरा उन्मत्तभूत जगत्'

अर्थात् प्रमाद की—मोह की मदिरा पीकर यह ससार पागल हो रहा है—धन के मद में मत्त पुरुष भी इसकी यथार्थता को नहीं पहिचान सकता है। धन का नाश बडा तीव्र होता है। इन तीनों की दृष्टि ससार से परे नहीं जाती। वे तो इस लोक एव अपने शरीर को ही सब कुछ समझते हैं। अत जन्ममरण के चक्र में फसे रहते हैं। वेद कहता है कि —"भय परस्तात्'=अरे! पीछे तो भय है। अत इस पथ पर मत चल। "अभय ते अर्वाक्" तेरे लिए इस ओर अभय है—तू इधर चल।

❀

भक्ति

[लेखक—डा० श्री सम्पूर्णानन्द जी मुख्य मन्त्री उत्तर प्रदेश]

परमार्थ सम्बन्धी किसी विषय की चर्चा करते समय मैं इस बात को आखों से ओझल नहीं कर सकता कि अभ्युदय और नि श्रेयस के सम्बन्ध में हमारे लिए श्रुति एक मात्र स्वत सिद्ध प्रमाण है। अभ्युदय की बात जाने दीजिए नि श्रेयस के सबध मेकोई दूसरा ग्रन्थ किसी महापुरुष का कथन श्रुति का समकक्ष नहीं माना जा सकता। यदि भक्ति श्रेयस्कर है तो उसका पोषण श्रुति से होना चाहिए। यहा 'पोषण' शब्द से मेरा तात्पर्य स्पष्ट आदेश से है।

मैं यह दावा नहीं कर सकता कि मैने वेद शब्द से उपलक्षित सारे वाङमय का अध्ययन किया है पर यह भी कहना यथार्थ न होगा कि मेरे द्वारा इस अलौकिक साहित्य के पन्नों पर दृष्टिपात नहीं हुआ है। पहले मन्त्र भाग को लीजिए। जहा तक देख पाया हूँ किसी भी सहिता की किसी भी प्रसिद्ध शाखा मे भक्ति शब्द नहीं मिलता। और यदि कहीं आ भी गया होगा तो उसका व्यवहार उसी अर्थ मे न होगा जिस अर्थ मे हम आजकल उसका प्रयोग करते हैं। उपनिषदों मे भी 'भक्ति' का कहीं पता नहीं लगता। मोक्ष के उपाय सभी उपनिषदों ने बताए हैं परन्तु कहीं भी इस प्रसग में भक्ति की चर्चा नहीं आती। नचिकेता को यम ने-

विधामेता योग विधिं च कृत्स्नम्।

(कठ० २। ३। १८)

इस ब्रह्मविद्या और सम्पूर्ण योग विधि की दीक्षा दी। वहीं यह भी लिखा है कि जो कोई दूसरा भी इस मार्ग का अवलम्बन करेगा वह मुक्त होगा। छान्दोग्य में कई विद्याओं का उपदेश है परन्तु उसमें 'भक्ति' की गणना नहीं है। इसका तात्पर्य क्या है? क्या वैदिक काल में कोई मुक्त नहीं हुआ? क्या जिसको वे लोग मुक्ति मानते थे वह कोई दूसरी चीज थी? क्या वेद मोक्ष के विषय में प्रमाण नहीं हैं। यदि यह बात हो तो फिर हिन्दुओं के पास कोई भी धार्मिक आधार नहीं रह जायगा क्योंकि श्रुति को छोड़कर ऐसा एक भी ग्रन्थ नहीं है जो सवमान्य हो।

बहुधा यह कहा जाता है कि कलियुग में मोक्ष का एक मात्र साधन भक्ति' है। इस काल के लिए नए और सरल उपाओं को आवश्यकता क्यों पड़ी? क्या सचमुच कोई सरल उपाय निकला है? यदि निकला है तो क्या वह वेदोक्त प्राचीन उपायों से भिन्न है? अथवा किसी प्राचीन परिपाटी को ही नया नाम दे दिया गया है। क्या वेद में ईश्वर का वही अर्थ है जो आज साधारण बोलचाल में आता है? यदि आजकल की मान्यता के अनुसार यह माना जाय कि ईश्वर 'कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं समर्थ' है तो बडा अन्धेर हो जायगा। पुण्य और अपुण्य के लिए कोई आधार न रह जायगा। ऐसी कल्पना का जनसाधारण पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ेगा। ऐसा माना जाने लगा है कि मनुष्य चाहे कितने भी दुष्कर्म करे भगवान का नाम स्मरण करने से सब पापों से छूट जाता है। कहा तो वेद की यह शिक्षा थी—

''नाविरतो दुश्चरितात्' आदि

दुश्चरित्र से विरत हुए बिना कोई मोक्ष का अधिकारी नहीं हो सकता और कहा यह धारणा कि किसी भी प्रकार की पूजा अर्चना मोक्ष का द्वारखोल देती है। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव यह पड़ा है कि सच्चरित्रता का मोक्ष की प्राप्ति में कोई स्थान नहीं रह गया। लाखों मनुष्य सत्यनारायण की कथा

पढ़वाते हैं जिसमें कहीं भी सत्यनिष्ठा का उपदेश नहीं हैं। भगवान मानों उत्कोच के भूखे हैं। 'भक्त माल' प्रसिद्ध भक्त नाभा जी की कृति है। उसमें बहुत से भक्तों की कथाएं हैं ऐसे भी भक्तों का उल्लेख है जो चोरी करके मन्दिर बनवाते हैं और भगवान उनसे प्रसन्न होते हैं। तोते को पढ़ाने वाली वेश्या और पुत्र को नारायण नाम से पुकारने वाला अजामिल दोनों मोक्ष गामी होते हैं। कोई भी सिद्धान्त हो उसके लिए 'फलेन परिचीयते का तर्क लागू होता है। जिस किसी सिद्धान्त की शिक्षा मनुष्य मे इस प्रकार की प्रवृत्ति उत्पन्न करे वह निश्चय ही दूषित है। भक्ति का स्वरूप कुछ भी हो बार २ यह कहना कि यह बड़ा सरल है भ्रामक है। मोक्ष का उपाय कदापि सरल नहीं हो सकता। उसके लिए कठोर व्रत की आवश्यकता होगी और उस मार्ग पर चरित्रहीन व्यक्ति के लिए कदापि स्थान नहीं हो सकता। भगवान के नाम पर दंभ और दुराचार उसी प्रकार अक्षम्य हैं जैसे किसी देवी और देवताका नाम लेकर जीभ के स्वाद के लिए निरीह पशु की बलि देना। प्राचीन काल में मनुष्य को कर्म पर भरोसा था और वह आत्म-निर्भर होता था। उसके लिए उपनिषद् का यह उपदेश था 'नायमात्मा बलहीनेन लभ्य" परंतु जब से उसे सरल मार्ग का प्रलोभन मिला और ऐसे ईश्वर का परिचय बताया गया जो कर्म को अपनी इच्छा से काट सकता है तब से वह पथ-भ्रष्ट हो गया।

होइ हि सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावइ साखा॥

सुनेरी मैंने निर्बल के बल राम

ऐसे उपदेशों का प्रचार निश्चय ही मनुष्य की आत्म-निर्भरता को कम करता है और वह इस बात को भूल कर कि मोक्ष मार्ग—

क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया।
दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति॥

छुरे की तीखी धार के समान दुर्गम है, उस पर चलना कठिन है, सीधे सादे रास्तों के भ्रमजाल में पड़ जाता है और यह समझता है कि ईश्वर उसे अवश्य ही भवसागर से पार करेगा। जिस अगाध समुद्र को पार करने की बात सोचकर महा-तपस्वियों के हृदय कांप जाते हैं उसको वह गोष्पद के समान लांघ जाना चाहता है।

जब भक्ति सरल नहीं है और श्रुति से सम्मत भी नहीं है तब फिर वह क्या है?

मेरा यह दृढ विश्वास है कि 'भक्ति' नाम का मोक्ष के लिए कोई स्वतन्त्र साधन नहीं है। वह या तो 'ईश्वर प्रणिधान' का नाम है या योगाभ्यास की क्रिया का। मोक्ष के लिए केवल वही एक मार्ग है जिसका उपदेश यम ने नचिकेता को दिया था। नचिकेता ने श्रवण और मनन द्वारा वेदों के सिद्धान्तों का ग्रहण किया और निदिध्यासन की अवस्था में योग का अभ्यास किया। भले ही किसी आग्रह के कारण 'योग' शब्द का बहिष्कार करके इसको 'भक्ति' नाम से कहा जाय परन्तु योग से भिन्न भक्ति नाम का कोई दूसरा साधन नहीं है। किसी दूसरे साधन पर विश्वास करना जन्म-जन्मान्तर तक अपने को दुःख में डालना है। योग के द्वारा ही चित्त के मल, विक्षेप और आवरण दूर हो सकते हैं और जीव अपनी शुद्ध बुद्धि स्वरूप में स्थित हो सकता है। एक और बात! जब तक 'अहमन्य' का भाव बना रहेगा कितनी ही झीनी क्यों न हो जाय द्वैत प्रतीति बनी ही रहेगी और मोक्ष नहीं हो सकता। जहा तक भक्ति की बात है उसमें द्वैत भाव निश्चय रूप से निहित है। बहुत से भक्तों ने किसी न किसी रूप में यह कहा है कि हम मोक्ष नहीं चाहते अनन्तकाल तक भगवान के सौन्दर्य के आनन्द का अनुभव करते रहना चाहते हैं। यह अनुभव कितना ही सुखद क्यों न हो द्वैत मूलक है और 'यत्र द्वैतं तत्र भयम्' वेद प्रोक्त साधन ही जीव के लिए पूर्ण कल्याण का देनेवाला है। उपनिषद के शब्दों में 'नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय'। (कल्याण)

❀

बुद्धि और धर्म

मानवीय नियम

(२)

[लेखक—श्रीयुत प० गगा प्रसाद जी उपाध्याय]

मानवीय नियमों से मेरा अभिप्राय मानव समाज पर शासन करने वाले नियमों से नहीं, वरन् उन नियमों से है जिन्हे मनुष्य ने समय २ पर अपने तथा दूसरों के लिए बनाया है। मनुष्य समाज प्रकृति का ही एक अश है अतएव मनुष्य समाज पर शासन करने वाले नियम प्रकृति परशासन करने वाले नियमों के ही अन्तर्गत हैं। परन्तु मनुष्य का मस्तिष्क कुछ विचित्रता लिए हुए हैं। इसके दो पहलू हैं। यह स्वय निर्मित है परन्तु निर्माता भी है। इस पर दूसरों का शासन है परन्तु स्वय भी दूसरों पर शासन करता है। प्रकृति का अश होने के कारण इसका सम्बन्ध गणित, शरीर विज्ञान, रसायन शास्त्र इत्यादि २ सभी भौतिक विद्याओं की प्रक्रियाओं के साथ है। परन्तु यह इससे भीअधिक महत्त्व का है। यह अभौतिक है। जबकि ससार की अन्य वस्तुओं मे अपना कर्तृ व नहीं होता और उन पर दूसरों की क्रियाओं का प्रभाव पड़ता है मानव मस्तिष्क ही ऐसा है जो स्वय क्रिया करता है और उस पर दूसरों की क्रियाओं का भी प्रभाव पड़ता है। यह एक मात्र प्रकृति का पुतला नहीं है और ना ही यह प्रकृति की व्यवस्थित प्रति कृति ही है। यह तो किसी व्यवस्थापक की व्यवस्थित कृति के साथ २ इससे भी आगे बढी हुई वस्तु हैं। यह स्वय व्यवस्थापक है। मानवीय मस्तिष्क की इसी शक्ति के कारण ही जीवन की अनेक जटिलताओं का उद्भव हुआ है। जीवन इस प्रकार की सरल वस्तु नहीं है। मानवीय मस्तिष्क की प्रक्रियाओं की तुलना मे ससार की प्रत्येक वस्तु चाहे वे आख के बिन्दु हों, आकाश के तारे हों, बिजली हो वा आकर्षण शक्ति हो, बडी सरल देख पडती है। चिऊन्टी या किसी कीडे का मस्तिष्क भी भौतिक नियमों से प्रशासित तथ्यों की अपेक्षा अधिक जटिल और गूढ जान पडेगा। 'मस्तिष्क' शब्द का अर्थ शरीर शास्त्र, रसायन शास्त्र और गणित शास्त्र से भी अधिक गूढ और व्यापक है इसीलिए जीव विज्ञान मनोविज्ञान और समाज विज्ञान जैसी जीवन से सम्पर्क रखने वाली विद्याओं का स्वरूप दुरूह है।

शरीर विज्ञान से लिए हुए कार्य कारण भाव का हर नियम प्राय मस्तिष्क पर गलत रूप से लागू किया जाता रहा है जिसका परिणाम यह हुआ है कि सत्य पर पहुचने मे नितान्त असफलता प्राप्त होती रही है सरल रूप में रखे जाने पर प्रश्न यह होता है क्या जीवन उन्हीं कट्टर नियमों से प्रशासित होता है जिनसे अन्य पदार्थ प्रशासित होते हैं? यदि ऐसा ही होता हो तो हेकेल के शब्दों में "कार्बन के रासायनिक तत्त्व गति के मुख्य कारण हैं और जीवन तत्त्व का सरलतम स्वरूप स्वत उत्पत्ति की प्रक्रिया द्वारा निर्जीव नाइट्रोजन द्रव्य के सम्मिश्रण से अवश्य उद्भूत होना चाहिए १।" घोर जड़वादियों को यह कहने का चाव था 'जीवन आदि कालीन चिकनी मिट्टी में भवर स्वरूप था। २ परन्तु 'स्वत उत्पत्ति' और भवर' इन शब्दों से

---

१ डैम्पियरकृत हिस्ट्री आव साइ स पृ० ३१८।

२ जोडकृत मैटर लाइफ और वैल्यू ग्रन्थ पृ० ५।

सन्तोष नहीं होता। इनकी विशेष व्याख्या की आवश्यक्ता है। स्वत उत्पत्ति का यह क्रम क्यों प्रारम्भ होना चाहिये। क्यों जारी रहना चाहिए और इस क्रम का अन्त मानव समाज की वर्तमान स्थिति मे उसकी नैतिक, धार्मिक और सामाजिक जटिलताओं के साथ क्योंकर होना चाहिए? एक मात्र शब्दों से काम न चलेगा। इनसे तो यही स्पष्ट होता है कि विज्ञान वेत्ता इनकी व्याख्या करने मे असमर्थ हैं। इसी कारण दार्शनिक विज्ञानवेत्ता विश्व में एक ऐसी निबायक सत्ता के अस्तित्व को मानने के लिए वाध्य हुए है जो अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए प्रकृति का प्रयोग करते हुए भी अप्राकृतिक है ३। इतना ही नहीं 'जीवन' प्राकृतिक जगत में एक चमत्कारिक विस्फोट है जिसमें से एक अभौतिक सत्ता का प्रादुर्भाव हुआ और उसके चेतनायुक्त अग प्रत्यग उस सत्ता के प्रादुर्भाव के दृश्यमान् चिन्ह हैं।

यह अभौतिक सत्ता क्या है? यही अत्यन्त सुविकसित रूप में मनुष्य है, यही मनुष्य न केवल पृथ्वी की धरातल को ही निरन्तर बदल रहा है अपितु पृथ्वी के बाह्य या आभ्यन्तर को भी बहुत कुछ परिवर्तित कर रहा है। कभी धारा के साथ और कभी धारा के विरुद्ध तैरता है परन्तु यह निश्चित है कि वह तैरता सदैव है। कभी वह प्रकृति के काय में हस्ताक्षेप करता है कभी उसके साथ सघर्ष में जूझता है और कभी उसके साथ सहयोग करता है, कभी अपने को वातावरण के अनुकूल बनाता है तो कभी वातावरण को अपने अनुकूल बनाता है। प्रकृति के साथ मनुष्य के इस सम्पर्क के कारण ही असख्य स्थापनाए अस्तित्व में आई है जिनके पीछे मानवीय इच्छा काम करती है। इच्छा शक्ति और प्रकृति ये दोनों एक जैसी वस्तुए नहीं है और न ये दोनों ऐसी ही हैं जो एक दूसरे से स्वतन्त्र हों या दोनों का आपस में कोई सम्पर्क न हो। इस पर भी दोनों का पारस्परिक सम्बन्ध सदैव और सर्वत्र एक जैसा नहीं रहता। यदि ऐसा होता तो मनुष्य का दायित्व बहुत कम हो गया होता और अनेक रूपता भी न हुई होती। परन्तु मनुष्य ने सदैव प्रकृति की सवारी गाठने की चेष्टा की है और प्रकृति ने भी सधे हुए घोड़े की तरह सवार की इच्छा के समक्ष आत्मसात किया है परन्तु ऐसा तब ही सम्भव हुआ है जबकि उग्र रूप धारण न किया हो।

मानवीय नियम क्या है? ये मनुष्य के वे प्रयत्न है जिनके द्वारा वह प्रकृति और अपनी इच्छा शक्ति के मध्य मेल बिठाता है। इन नियमों का प्रकृति के नियमों के साथ तारतम्य इसी भाव में कायम रहता है कि वे प्रकृति के नियमों का अतिक्रमण नहीं कर सकते और उनके लिए ऐसा करना सम्भव भी नहीं हैं। वे इसी अर्थ में मानवीय हैं कि उनका उद्देश्य अपने निर्माता की इच्छा की पूर्ति करना मात्र है। ये नियम इस उद्देश्य की पूर्ति किस सीमा तक करते हैं यह मनुष्य की दूरदर्शिता और अन्त दृष्टि पर निर्भर होता है। जब कभी मनुष्य प्रकृति को समझने में भूल करता है तभी वह असफल होता है। इस असफलता का कारण उसकी अपनी त्रुटिया होती हैं परन्तु क्या वे त्रुटिया प्रकृति का भाग नहीं है? ये त्रुटिया प्रकृति का भाग ही हैं। इस प्रसग में प्रयुक्त प्रकृति का अभिप्राय भौतिक प्रकृति भी होगा इसमें समष्टि रूप से समस्त क्षेत्र समाविष्ट हो जाते हैं। यहां प्रकृति का अर्थ है प्रकृति और जीवन दोनों आपस में गुथे हुए।

इस सम्बन्ध में दो बातें ध्यान देने योग्य हैं। मनुष्य स्वभावत स्वतन्त्र और ससीम है। स्वतन्त्रता ही इसे कर्म करने न करने वा उल्टा कर्म करने की प्रेरणा देती है। उसकी निर्णय शक्ति की भीसीमाए

३ देखें मैटर लाइफ और वैल्यू ग्रन्थ पृ० २६।
४ जोत की मैटर लाइफ और वैल्यू पृ० २६।

है जो उसको मनमानी करने से रोकती हैं। यदि मनुष्य कुदरत के हाथ में खिलौना मात्र होता तो उचितानुचित सफलता या असफलता का प्रश्न ही न होता क्योंकि इन शब्दों से किसी निर्दिष्ट स्थान की ओर जाने का आभास मिलता है और निर्दिष्ट मात्र का अर्थ सदैव 'इच्छा' के साथ समाविष्टहोता है। केवल चेतन प्राणियों का ही निर्दिष्ट स्थान हो सकता है, निर्जीव प्राणियों का अपना कोई लक्ष्य या निर्दिष्ट स्थान नहीं होता। प्रकृति के नियम नित्य और अपरिवर्तनशील होते हैं। वे सर्वाङ्गपूर्ण भी होते हैं। परन्तु मनुष्य प्रगतिशील होता है।वह किसी लक्ष्य की ओर जा रहा है क्योंकि उसकी स्वतन्त्र इच्छा है अत उसकी गति में एक रूपता नहीं होती और न वह गति एक दिशा की ओर ही प्रेरित रहती है। कभी वह सीधा जाता है तो कभी वह तेली के बैल की तरह एक ही दायरे में दौड़ता रहता है परन्तु फासला एक इच का भी तय नहीं कर पाता।

उसमें एक प्रकार की दिव्यता होती है जो हमारे जीवनोद्देश्य का निर्माण करती है। परन्तु वह दिव्यता हमारा निर्माण उस प्रकार नहीं करती जिस प्रकार कुम्हार बर्तन का निर्माण करता है। इसनिर्माण कार्य मे हमारा भी भाग होता है। एक मात्र शक्ल बना देने से ही मनुष्य बर्तन के समान हो जायगा जिसकी अपनी कोई उत्तरदायिता न होगी। मनुष्य किसी वस्तु को काटता है और भद्दे ढग से काटता है क्योंकि ऐसा करने की उसमे क्षमता है और दिव्यता कुम्हार के सदृश निर्माता के रूप में नहीं अपितु मित्र के रूप में उसकी सहायता करती है। यह काटना, सहायता करना, क्रिया तथा प्रतिक्रिया का होना हमे धर्मके क्षेत्र में ले जाते हैं। धर्म क्या है? प्रकृति के साथ उचित तारतम्य स्थापित करने का प्रयास ही धर्म कहलाता है। माली के हाथ में एक छोटा पौधा है। माली उस पोधे को पैदा नहीं करता। वह तो केवल उसकी बढवार मे योग देता है। बढवार की प्रक्रिया स्वय बीज मे से प्रवाहित होती है। माली तो केवल उसे मुर्झाने या उल जलूल ढग मे बढने से रोकता है। बीज वनस्पति शास्त्र के नियमों के अनुसार चलता है और यही उसका सच्चा धर्म है। इसी प्रकार जब मनुष्यप्रकृति के नियमों के साथ सहयोग करता है तब वह धर्म के मार्ग पर चलता होता है। मनुष्य ने समय २ पर जो नियम बनाए है वे सब इसी सहकारिता का सकेत करते हैं। वे प्रकृति के नियमों के समान नित्य नहीं होते। वे परिवर्तनीय होते हैं। वेमनुष्य के सदृश ही क्षणिक होते है। वे समय २ और स्थान २ पर बदलते रहते है। परन्तु एक वस्तु नित्य होती है और वह है प्रकृति के साथ सहयोग करने की उसकी इच्छा और चेष्टा।

सृष्टि के अवलोकन से इतनी बातो का पता लगता है :—

(१) सृष्टि नियमानुकूल है। (२) नियमों से अपार बुद्धि का परिचय होता है।
(३) नियम अटल हैं। (४) वह नियम सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु पर भी शासन करते हैं और कोई वस्तु उनका उल्लघन नहीं कर सकती।

इसलिए सिद्ध है कि ईश्वर—

(१) नियन्ता है (२) ज्ञानवान अर्थात् सर्वज्ञ है
(३) एक रस है (४) सूक्ष्म से सूक्ष्म और सर्वशक्तिमान् है।

कृष्ण और गोपी

लेखक—डा० श्री मगलदेव शास्त्री एम० ए० डी० लिट (आक्सन)

मनुष्य के जीवन का सब से बडा प्रश्न यह है कि परम तत्व का साक्षात्कार उसे कैसे हो और उसका स्वरूप क्या है ?

इन्द्रियों की जहा तक गति है उससे ऊपर उठ कर, इन्द्रियों का सर्वथा निरोध करके योग शास्त्रोक्त धारणा ध्यान और समाधि के द्वारा ही भगवान् का साक्षात्कार किया जा सकता है।

देखना यह है कि यह साक्षात्कार किस रूप में होता है। वह साक्षात्कार ऐन्द्रिय नहीं हो सकता।

एक प्रकार से यह ठीक है। पर प्रश्न उठता है कि जब इन्द्रिया उस साक्षात्कार में बाधक ही है तब क्या आध्यात्मिक दृष्टि से सृष्टि की योजना में इन्द्रिया व्यर्थ ही हैं। क्या वे बाधक होने के स्थान में अध्यात्म दर्शन में सहायक नहीं हो सकतीं।

प्रकृति का सौन्दर्य क्या है यह भी भगवान का ही रूप है। जलों में रस, चन्द्र सूर्य में प्रभा, पृथिवी में पवित्र सुगन्ध और अग्नि मे प्रकाश ये सब परमात्मा की महिमा का दिग्दर्शन कराते हैं।

जैसे मास मज्जा आदि से पूर्ण और दुर्गन्ध पूरित इस शरीर में जो मनोज्ञता और आकर्षण है उसके मूल में चेतन आत्मा की सत्ता है उसी प्रकार इस विश्व में तत्तत् पदार्थों द्वारा जो दिव्य शान्ति, जीवन प्रेरणा अनन्तानन्द ऐश्वर्य और सौन्दर्य की प्रतीति इन्द्रियों द्वारा हो रही है उसके मूल में मूल तत्व स्वरूप भगवान की सत्ता है। इस दृष्टि से भगवान के स्वरूप के साक्षात्कार में अनुभव में स्पष्टत इन्द्रिया साधन ही हैं बाधक नहीं।

इस परम विशाल विश्व के माध्यम से जिसका सुन्दर रूप हमें सदैव इन्द्रिय गोचर हो रहा है और जो स्वभावत इन्द्रियों के लिए आकर्षक है उसी परम तत्व को 'कृष्ण' इस नाम से कहा जाता है। अपनी वृत्तियों द्वारा ही इन्द्रियों को बाह्य दृश्यों का बोध होता है। दूसरे शब्दों में इन्द्रियों के इन्द्रियत्व को सार्थक करने वाली या उनको पुष्ट करने वाली (उनके योग्य अनुभवों को देने वाली) इन्द्रिय वृत्तिया ही हैं।

इन्द्रियो का नाम 'गौ' है इसलिए उनकी वृत्तियों को गोपी कहा जाता है। इन वृत्तियों (गोपियों) का स्वाभाविक आकर्षण (प्रवृत्ति) बाह्य जगत् की ओर है। जैसे मधु मक्खिया नाना प्रकार के पुष्पों से मधु को या सूर्य रश्मिया नाना प्रकार के जल स्थानों से विशुद्ध जल को खींच लेती है उसी प्रकार आध्यात्मिक उत्कर्ष की अवस्था में इन्द्रियों के बाह्य जगत् के माध्यम से ही परम तत्व रूप भगवान के साक्षात्कार की योग्यता आ जाती है। बाह्य जगत में भगवान् की स्थिति आपातत नहीं दिखाई देती आध्यात्मिक उत्कर्ष की अवस्था में ही उसका भान होता है इसीलिए परमतत्व को परमेष्ठी कहा गया है।

स्थिरता का आधार

कांग्रेस के विघटित हो जाने के क्या परिणाम होंगे ? बहुत से कांग्रेस जनों का विश्वास है कि यदि कांग्रेस का विघटन हो जाता है तो देश मे अशान्ति व्याप्त हो जायगी। जब प्रधान मन्त्री नेहरू ने कुछ समय के लिए पद त्याग का प्रस्ताव रखा था तो देश में बेचैनी छा गई थी और भविष्य वक्ताओं ने नाना प्रकार के दुष्परिणामों की भविष्य वाणियां कर दी थी। अभी हाल में श्री नम्बूदरी पाद ने कहा था कि यदि असाम्यवादी राजनतिक दलो ने अपनी नीति और सिद्धान्तों की अवहेलना पूर्वक साम्यवादी दल को सत्ता रूढ न होने देने के लिए मिलकर यत्न किया तो देश मे गृह युद्ध हो सकता है। आज कोई भी निश्चित रूप से यह नहीं कह सकता कि विशेष स्थिति मे क्या होगा क्योकि प्रत्येक देश मे इतने अधिक राष्ट्रीय आर अन्तर्राष्ट्रीय तत्व एक साथ काम कर रहे है कि किसी राजनेतिक भविष्य वाणी का किया जाना खतरे से खाली नहीं हो सकता। बिना सोचे विचारे एक दम निराशा पूर्ण परिणाम निकाल लेने की प्रवृत्ति भयानक और निंदनीय है। यह प्रवृत्ति इस बात की सूचक है कि हम मे राजनतिक सस्थाओं का प्रबन्ध करने की अपनी योग्यता मे आस्था नहीं है या हम स्वराज्य का सचालन करने के अयोग्य हैं। इस से हमारे आत्म विश्वास को ठेस लगती, व्यक्ति-पूजा को प्रोत्साहन मिलता और मति-भ्रम उत्पन्न होता है।

प्रजातन्त्र देशो मे राजनैतिक दलो और राज नैतिक नेताओं के उत्थान और पतन से उनकी राजनैतिक स्थिरता को खतरा पैदा नहीं होता। एक मात्र ताना शाही देशो में राजनैतिक स्थिरता व्यक्ति या दल के साथ जुड़ी होती है। स्टैलिन के मरने पर कम्युनिस्ट नेता भयभीत हो गए थे। वे नहीं जानते थे कि ताना शाह की मृत्यु होने से देश की स्थिरता किस प्रकार कायम रह सकेगी। प्रजातन्त्र देशो में आम चुनाव के परिणाम स्वरूप शासन बदल जाते है, परन्तु वहा भय व्याप्त नही होता। कतिपय राजनैतिक परिवर्तनों के आधार पर अशान्ति की बात सोचना बुद्धिमत्ता नहीं है। निराशा की भाषा मे सोचने वा बोलने वा हिंसा की धमकी देने से कोई लाभ न होगा। राजनतिक बुद्धिमत्ता पर किसी भी दल का एकाधिपत्य नही होता ओर न कोई दल ऐसा होता है जिसके बिना काम न चल सके।

राष्ट्रीय प्रगति मे राजनैतिक दलो का जो योग होता है उस को छोटा करके दिखाने का हमारा अभिप्राय नहीं है ओर ना ही हमारा यह आशय है कि कांग्रेस जैसे राजनैतिक दल के विघटन से हानि न होगी। हमारा अभिप्राय केवल यह दिखाना है कि यह भाव उत्पन्न करना गलत है कि देश मे कांग्रेस शासन न रहने से अशान्ति फैल जायगी या तानाशाही शासन व्यवस्था स्थापित हो जायगी। इस प्रकार का प्रचार वोट प्राप्त करने की चाल भले ही हो परन्तु यह है बडी भयानक। प्रत्येक राज नैतिक दल की यह चिन्ता ओर प्रचार तो समझ मे आ सकता है कि मतदाताओं को यह विश्वास दिलाते फिरें कि एक मात्र उसी के पास राम बाण औषधि है जिससे वह देश के सब रोगों का शमन कर देगा परन्तु इस भाव के उत्पन्न करने का कोई औचित्य नही है कि यदि कांग्रेस चुनाव न जीती तो देश की एकता और स्थिरता को खतरा उत्पन्न हो जायगा। ऐसे देश मे जहा विघटक प्रवृत्तियों का पूर्णतया उन्मूलन न हुवा हो और जहा स्थानीय तथा प्रादेशिक प्रवृत्तियों का अब भी बोल बाला हो वहा इस प्रकार के विचार का दिया जाना बड़ा घातक सिद्ध हो सकता है।

यदि देश के विभिन्न राजनैतिक दल कम्युनिस्टों

को सत्ता न हथियाने देने के एक मात्र उद्देश्य से आपस में गठ बन्धन करलें और इस गठ-बन्धन पर कम्युनिस्ट अप्रसन्न हों तो यह बात समझ में आने वाली है। यदि कम्युनिस्टों का यह विश्वास हो कि अकेले वे ही देश को समृद्ध बना सकते और न्याय पूर्ण समाज-व्यवस्था स्थापित कर सकते हैं तो कोई कारण नहीं है कि वे गृह युद्ध की चर्चा करें भले ही वे अप्रत्यक्ष रूप से ऐसा करें। गृह मन्त्री ने अपने हाल के कलकत्ता के भाषण में कहा कि उनकी इच्छा है कि देश में प्रजा सत्तात्मक शक्तियों का प्रभुत्व हो। हम सब को इन शक्तियों को बलवती बनाने का यत्न करना ही चाहिए। परन्तु कांग्रेस को इस मान्यता को प्रोत्साहित न करना चाहिए कि कांग्रेस शासन के हटते ही कम्युनिस्टों का शासन हो जायगा वा देश में अराजकता फैल जायगी। यदि कांग्रेस अपने क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार का उन्मूलन कर दे अप्रजातान्त्रिक तत्त्वों को आश्रय देने के स्थान में उनसे दृढ़ता पूर्वक लोहा लेलें और अन्य प्रजातन्त्र दलों को देश की सर्वोत्तम सेवा करने का प्रोत्साहन देदे तो निश्चय ही वह प्रजातन्त्र की अमिट सेवा करने के यश की भागी बन जाय। कांग्रेस और समाज वादी दलों में अधिकाधिक सहयोग की आवश्यकता है।

किसी दल विशेष के शासना रूढ़ बने रहने से ही देश की स्थिरता कायम रह सकती है यह विचार भ्रम-पूर्ण है। देश की राजनैतिक स्थिरता कई बातों पर निर्भर करती है। जब प्रजा एक विचार की बनजाय और अपने वैयक्तिक तथा दलीय स्वार्थों को पीछे तथा सर्व साधारण के हितों को आगे रखना सीख ले तो निश्चय ही यह स्थिरता कायम रह सकती है उसी मात्रा में जिस मात्रा में ये बातें उसमें आ जायें। इस देश में शक्ति के लिए वास्तविक संघर्ष राजनैतिक दलों के मध्य में नहीं है अपितु उनके मध्य है जो राष्ट्रीय एकता और सामाजिक न्याय के पक्ष पोषक हैं और जो वर्गवाद के विभिन्न स्वरूपों का प्रतिनिधित्व करते हैं। क्या समस्त कांग्रेसजन वा उनमें से अधिकांश पक्के राष्ट्रवादी हैं? क्या समाजवादी जन क्षेत्रीय या वर्गीय भावनाओं का अनुचित लाभ नहीं उठाते हैं? केवल कांग्रेस जन ही प्रगति शील राष्ट्रीयता के पृष्ठ पोषक हैं इस मान्यता का खंडन प्रतिदिन हो रहा है और वह भी प्रमुख कांग्रेसजनों द्वारा। हमारी उन्नति हमारी देश भक्ति की भावनाओं और श्रेष्ठ नेतृत्व पर निर्भर करती है। औद्योगिक दृष्टि से उन्नत राज्यों में उन्नति की प्रगति अक्षुण्ण बनी रहती है चाहे वहां शासन दुर्बल ही क्यों न हो। अनुन्नत देशों में आर्थिक प्रगति की गति के द्रुत होने के लिए आवश्यक है कि वहां का शासन दृढ़ और योग्य हो। कांग्रेस ने आर्थिक समस्याओं के सन्तोषजनक समाधानकी दिशामें विशेष योग्यता का परिचय नहीं दिया है। यद्यपि विधान सभाओं में कांग्रेस का बहुमत है फिर भी आर्थिक क्षेत्र में उसका नेतृत्व बड़ा पिछड़ा हुआ है। देश की स्थिरता और जनता की आर्थिक उन्नति उसी पर निर्भर है, कांग्रेस के इस कथन का अब तक के अनुभव से समर्थन नहीं होता है। यह संभव है कि कांग्रेस का सुधार हो जाय यह भी संभव है कि वह विघटित हो जाय। हमारी कामना है कि कांग्रेस एक सुदृढ़ एव व्यवस्थित संस्था का रूप ले। हमें इसकी आवश्यकता भी है। परन्तु राजनैतिक दल उठते और गिरते रहते हैं। कभी २ राजनैतिक दल का पतन देश के लिए घातक भी सिद्ध हो जाता है। चीन के लिए यह घातक सिद्ध हो चुका है। हमें आशा है कि यदि कांग्रेस विघटित हो जाय तो देश वासियों की प्रजातन्त्रीय भावनायें देश में प्रजातन्त्र व्यवस्था को बनाये रखने में प्रबल सिद्ध होंगी। इस आशा को दुराशा मानना गलत होगा। इस देश की प्रजातन्त्र-व्यवस्था के भविष्य को शासनारूढ़ कांग्रेस के साथ ग्रथित कर देना अपनी पराजय की वृत्ति को अंगीकार कर लेना है। यदि हमारी प्रजातन्त्र व्यवस्था में दृढ़ निष्ठा हो तो घात प्रतिघात के होते हुए भी यह फले फूले गी।

(ट्रिब्यून, अम्बाला)

*

नियमित और व्यवस्थित जीवन

[लेखक—रघुनाथ प्रसाद पाठक]

जिन गुणों की कसौटी पर मनुष्य का चरित्र परखा जाता है उनमें व्यवस्था और नियम बद्धता विशेष स्थान रखते हैं। मनुष्य कितना ही विद्वान् और चरित्रवान् क्यों न हो यदि उसके जीवन में इन दोनों गुणों की कमी हो तो लोगों की उसके सम्बन्ध में अच्छी सम्मति नहीं बनती। विपरीत इसके साधारण विद्या-बुद्धि और चरित्र रखने वाला व्यक्ति इन गुणों के कारण अधिक प्रभावशाली बन जाता है।

प्रसिद्ध विजेता नेलसन ने एक बार कहा था कि "मैं सदैव नियत समय से १५ मिनिट पूर्व निर्दिष्ट स्थान पर पहुंच जाता था। मेरे इस स्वभाव ने मनुष्य बनने में मेरी बड़ी सहायता की।" जब हम किसी के साथ कोई प्रतिज्ञा करते वा मिलने जुलने आदि का समय नियत करते हैं तो हम पर एक बड़ा ऋण चढ़ जाता है। यदि हम आलस्य, प्रमाद और दीर्घ सूत्रता के कारण इस ऋण से उऋण नही होते तो हम दूसरों का समय नष्ट करने के अपराधी बनते हैं। नियमहीनता से जीवन असफल और नियम-बद्धता से सफल होता है। जब वाशिंगटन के एक सेक्रेटरी ने देर से आने के लिए क्षमा मागते हुए कहा 'मेरी घड़ी सुस्त हो गई थी' तो वाशिंगटन ने उत्तर दिया 'तुमको नई घड़ी लेनी चाहिए अन्यथा मुझे नया सेक्रेटरी रखना होगा।" गोल्ड स्मिथ एक ग्रन्थ रचना में लगे थे। एक निर्धन विद्यार्थी की सहायता करने की इच्छा से उन्होंने उसे अपना लेखक बना रखा था। विद्यार्थी दूर रहता था। प्रतिदिन पैदल चलकर आता था। वे दो घंटे बोलने जाते थे और वह विद्यार्थी लिखता जाता था। एक दिन उन्होंने उस विद्यार्थी से कहा 'कल कुछ रात रहते ही आ जाना। ग्रन्थ लिखवा कर मुझे बाहर जाना है।' बेचारे विद्यार्थी को पर्य्याप्त रात रहते उठना पड़ा। अंधेरे में ही चल कर वह उनके पास गया। परन्तु केवल एक पंक्ति लिखवा कर वे बोले—'आज का काम हो गया। अब जा सकते हो।'

विद्यार्थी झुंझलाया। वह कुछ बोला नहीं किंतु उसके मुख का भाव देखकर वे बोले 'नाराज मत हो ओ। आज तुमको ऐसी शिक्षा मिली है जिस पर यदि चलोगे तो जीवन में सफलता प्राप्त करोगे। वह शिक्षा यह है कि जो नियम बनाओ उसे टूटने मत दो। चाहे जैसी स्थिति आए नियम का नित्य निर्वाह करो।"

व्यापारियों के लिए तो नियम-बद्धता वरदान सिद्ध होती है। इससे उनका व्यापार बढता और उनकी साख बढ़ती है।

रसोइयों तथा महमानों के लिए समय और नियम का विशेष ध्यान रखना आवश्यक होता है। इससे दोनों ही को सुविधा रहती है।

जार्ज वाशिंगटन ठीक समय पर भोजन करते तथा निश्चित समय पर सोते थे। उनके जीवन का प्रत्येक कार्य निर्धारित समय पर पूरा होता रहता था। वे सायकाल को ४ बजे के लगभग भोजन किया करते थे। एक दिन उन्होंने अमेरिका की कांग्रेस के नए सदस्यों को भोजन के लिए आमंत्रित किया। सदस्यों के आने में कुछ देर हो गई। राष्ट्रपति वाशिंगटन भोजन करने लगे। नए सदस्यों को बड़ा आश्चर्य हुआ। 'भाई! इसमें आश्चर्य की क्या बात है। मेरा रसोइया कभी यह नहीं देखता कि सबके सब आमन्त्रित अतिथि आ गए हैं या नहीं, वह तो निश्चित समय पर भोजन सामने रख दिया करता है। राष्ट्रपति भोजन करने

मुक्ति मार्ग का प्रेरक श्रावणी उपाकर्म पर्व

[लेखक—श्री कालीचरण प्रकाश 'सिद्धान्त शास्त्री' आर्योपदेशक, हैदराबाद]

वैदिक सिद्धान्त मे धारणा है कि जीवात्मा अपने शुभाशुभ कर्मों के फलस्वरूप ही पुनर्जन्म को प्राप्त होता है। परमात्मा की व्यवस्थानुसार पुनर्जन्म की अवस्था मे 'भोग योनि' तथा 'कर्म योनि' प्राप्त होती है। भोग योनि के प्राप्त होने पर जीवात्मा को केवल अपने पिछले कर्मो के अनुसार ही सुख दुःख भोगने होते है। जिस भोग योनि मे वह प्रविष्ट होता है वहा उसे मन और बुद्धि भी वैसी ही प्राप्त होती है जिससे कि वह केवल कर्म फलों को भोगा करे अर्थात यह उसका स्वभाव हो जाता है और इसी स्वभाव को सम्भवत ऋषियों ने 'जातीय स्वभाव' की संज्ञा दी हो। इसे हम परमात्मा की सृष्टिमे वृक्ष तथा पशुओंकी अवस्था मे अवतरित पाते है। जिन्हे केवल फल भोगता हुआ ही रहना होता है, और यह इस अवस्था मे किसी प्रकार के कोई परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव किये हो ऐसा आज तक नही देखा गया।

'भोग योनि' की इस संक्षिप्त परिभाषा के उपरान्त अब हमे 'कर्म योनि' के उस महत्त्व और सिद्धान्त पर पहुचना है जिसमे कि हम विद्यमान है और यहा से आगे बढना चाहते है अर्थात् मुक्ति मार्ग के द्वार की ओर अग्रसर होने के इच्छुक है। कर्म योनि मे मुख्यत मनुष्य योनि आती है। यहां जीवात्मा पहुच कर अपने पूर्व

में व्यस्त हो गए।

लोगों का नेतृत्व करने वाले महापुरुषों की यही रीति नीति होती है। उनका एक २ क्षण मूल्यवान् होता है। नियम बद्धता के गुण के कारण उनको ऊचा उठने मे सहायता मिलती है। समयका दुरुपयोग न होनेसे उनको समय के न मिलने की शिकायत नहीं होती उनके कार्य जल्दबाजी के कारण भी नहीं बिगडते।

व्यवस्था सृष्टि का सर्वोपरि नियम है। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, पृथ्वी, वनस्पति आदि के स्थान, क्रम, गति अनुपात, स्वरूप, कार्य, ऋतु, इत्यादि सब मे व्यवस्था और नियम प्रतिलक्षित होता है सृष्टि की सुव्यवस्था हमे पग २ पर व्यवस्थित रहने की शिक्षा देती है जिसमे, व्यवस्थापक की अलौकिक बुद्धि और विचार के शुभ दर्शन होते है। बाहरी व्यवस्था भीतरी व्यवस्था की द्योतक होती है। हमारा वस्तुओं के रखने और काम करने का ढग इस प्रकार होना चाहिए जिससे हमारे मस्तिष्क की स्वच्छता और व्यवस्था झलकती हो। इसके लिए यह आवश्यक है कि हम प्रत्येक वस्तु का स्थान और काम का समय नियत करलें और वह वस्तु अपने नियत स्थान पर मिले और नियत समय पर ही काम हो। इसका परिणाम यह होगा कि काम मे सुविधा होगी अधिक मात्रामे तथा अच्छी तरह होगा और अधिक फुर्सत मिलेगी। इसका स्वास्थ्य पर सुप्रभाव पड़ेगा और हम अनुशासन प्रिय अच्छे नागरिक सिद्ध होंगे।

व्यवस्था का अर्थ है प्रकाश और शान्ति आन्तरिक स्वतन्त्रता और आत्म शासन, शक्ति और अधिकार सौन्दर्य और चातुर्य्य। आराम, सफाई और कर्मण्यता उसके सहचर है। आनन्द और प्रसन्नता उसमें निवास करते हैं। जब हम अव्यवस्था की व्यवस्था के साथ तुलना करने लग जाते हैं तो हमें असीम आनन्द प्राप्त होता है। वस्तुत सुव्यवस्था समस्त अच्छी बातों की आधारशिला होती है।

कर्मों का फल तो भोगता ही है परन्तु अन्य योनियो की अपेक्षा यहा इसे कर्म करने की स्वतन्त्रता प्राप्त होती है। अर्थात् इसे जो यहा 'मन' और 'बुद्धि' प्राप्त होती है वह उसका प्रयोग अपनी प्रत्येक क्रिया के समय कर सकता है। यदि इसको यू कहा जाय कि अपने प्रत्येक कर्म द्वारा इनका उप योग 'मनन' और 'विचार' के लिए कर सकता है तो उचित ही है। यही मानव योनि की अपनी विशेषता है अर्थात् 'कर्म' स्वातन्त्र्य।

मनुष्यों की भी चार श्रेणियो का निर्धारण जो ऋषियों ने वेदादि सत्य ग्रन्थो के द्वारा किया है वह इसप्रकार है कि 'शूद्र' अर्थात् क्षुद्र' किंचित् भी विचार पूर्वक कर्म न करने का स्वभावा व्यक्ति जो केवल अन्यों के बताये हुए विचारों का ही अनु करण करे निम्नकोटि का। और दो वह जो जीवन और जीवन के प्रस्तर तथा विस्तृत मार्ग का बोध करा देने पर अपने २ कर्तव्यों का बुद्धि पूर्वक मनन करते हुए पालन करने वाले मध्यम वर्ग के होंगे। और यह भी श्रेष्ठ वर्ग की भाति 'द्विज' कहलायेंगे। चू कि इन्हे अपने जीवन मार्ग मे चलते समय प्रत्येक कर्म की पूर्ति मे 'मनन' और 'विचार' का प्रयोग कर ही कर्म करने होंगे। यहा एक बात स्पष्ट कर दें तो शायद ही अनुचित न हो। वह यह कि मध्यम वर्ग 'क्षत्री' तथा 'वैश्य' लगभग एक दूसरे के समीपवर्ती ही रहेगे। निम्न तथा मध्य वर्ग के पश्चात् श्रेष्ठ वर्ग का क्रम हमारे सम्मुख प्रस्तुत होगा। वह यह कि इसे हम 'ब्राह्मण' के रूप मे देखेंगे जो स्वय विचारवान होगा और केवल अपने ही कर्मों के प्रति विचार करने का दायित्व वाला न होकर अपने अनुवर्ती जनों के शुभाशुभ कर्मो के प्रति भी विचार करने वाला होगा। अर्थात् वह 'ब्राह्मण' होगा। यू कहिये कि उसके सम्पूर्ण जीवन का ध्येय 'ब्रह्म' अर्थात् ज्ञान विचरण करना होगा।

मध्य तथा श्रेष्ठ योनि के मनुष्यों को ससार मे पहुँच कर अपने जीवन के मार्ग पर यथेष्ट रूप में चलने के निमित्त दीर्घ काल तक इस पर गतिमान होने के लिए अभ्यास बनाना आवश्यक होता है। अन्यथा ऐसा भी होना स्वाभाविक ही हो सकता है कि आज कल या कुछ अवधि विशेष तक तो अपने जीवन मार्ग पर चलें किन्तु अवस्था परिस्थिति और कारण विशेष से हम च्युत भी हो जावें। ऐसा न होने के लिए ही वैदिक धर्म मे एक उपाय की खोज की जाकर उसका जो प्रयोग बताया गया, वह था 'सस्कार'। सस्कार से 'जीवात्मा' (मनुष्य) अपने पथ पर दृढता पूर्वक गतिमान होता रह सकता है। सस्कारो द्वारा मनुष्य अभ्यासी बनता है। जिन क्रियाओं को हम जीवन मे लाना चाहते है उन क्रियाओं को बार २ करते व करवाते है। आत्मा सहित शरीर के १५ सस्कार और आत्मा रहित शरीर का एक सस्कार ऐसे जुमला मनुष्य के १६ सस्कार निर्धारित है। इनमे एक सस्कार जिसको "उपनयन" या "यज्ञोपवीत" सस्कार कहते है द्विजों के होता है। इसके बाद ही 'वेदारम्भ' सस्कार किया जाता है उपनयन सस्कार मे ब्रह्मचारी को 'यज्ञोपवीत' दिया जाता है। जो उसकी ३ अवस्था 'ब्रह्मचर्य' गृहस्थ और वानप्रस्थ तक उसके कन्धों पर रहता है।

'यज्ञोपवीत' का व्यावहारिक अर्थ हम यू लेंगे कि यह याज्ञिक का एक चिन्ह अर्थात् यज्ञ करने वालों का 'ड्रेस' है। वैदिक धर्म और वैदिक सभ्यता मे यज्ञ को श्रेष्ठ ही नहीं, श्रेष्ठतर और इससे बढ कर भी इसे "यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म" कहा है। अर्थात् जितने भी श्रेष्ठ कर्म है वे सब इसमे समाविष्टहोजाते हैं,ऐसाबताया है। यज्ञोपवीत में जो ३ सूत्र होते है वे मनुष्य के लिए ३ ऋण और उनसे विमुक्त कराने वाले ३ साधनों के परिचायक व द्योतक होते हैं। यज्ञोपवीत धारण के बाद जीवात्मा मननशीलता और विचार पूर्वक कर्मों की क्रिया मे परस्पर एक घनिष्ठ सम्बन्ध हो जाता है। यदि हम यहा थोडा सा विचार करें तो

एक चीज बड़ी ही स्पष्टता के साथ हमारे सम्मुख आ जायगी, वह यह कि 'ऋण' ही तो बन्धन हैं और इनसे विमुक्त हो जाना 'मुक्ति'। इसमे प्रेरक हमारा यज्ञोपवीत तीनों अवस्था मे हमारे साथ कन्धे पर रहता है।

हम परमात्मा की इस सृष्टि मे प्रादुर्भूत हुए। इसका कोई साधन अवश्य था। प्रथम साधन प्रकृति (देवता) द्वितीय साधन 'माता पिता' तथा तृतीय साधन 'ज्ञान पूर्वक' प्रत्येक उस क्रिया का होना जिससे हम यहा ठीक २ आ सके, वह 'ब्रह्म' अर्थात् ज्ञान। अब इन्हीं तीनों के हम ऋणी है और इनसे हमें विमुक्त होना है। प्रत्येक यज्ञोपवीत धारी को यज्ञ करना होगा। यज्ञ की क्रिया से हमे एक बात का बोध होगा कि हम जो यज्ञ क्रिया करेंगे उसमें प्रत्येक आहुति के उपरान्त कहेंगे 'इदन्नमम' अर्थात् यह भी मेरी नहीं। चूंकि स्वभावश जब हम कर्म करेंगे तब हम मे २ बातें आवेंगी जिनसे हमें बचना होगा। यदि हम इनसे नहीं बचेंगे तो हम अपने प्रयत्नों से ऋणी से उऋणी तो अवश्य होंगे किन्तु दूसरी ओर एक बात बद्धता की उत्पन्न हो जायगी। जो हमें मुक्ति द्वार पर पहुँचने के बाद भी पुन वापिस खींच लेगी और वापिस लौटने के बाद पुन यह अवस्था कब प्राप्त हो सकेगी यह कहना कुछ कठिन ही है। वैदिक फिलास्फी की यह एक विशेषता है जो मनुष्य को सचेत और सावधान करती है। 'बद्धता' मे डालने वाली दो चीजें, जो उत्पन्न होंगी। उनमें पहली यह कि हम में कर्म का 'गर्व' और दूसरी बात कर्मों का 'मोह' उत्पन्न होगा। इनसे बचने के लिए यज्ञ की क्रिया के अन्त में बताया कि याज्ञिक 'इदन्न मम' की भावना रखे। अर्थात् वेद के इस आदेश को 'न कर्म लिप्यते नरे' का सावधानी पूर्वक पालन करता जाये।

ब्रह्मचर्य अवस्था में हमे हमारे कन्धों पर पड़े यज्ञोपवीत के सूत्र ब्रह्म मे (ज्ञान में) विचरण की प्रेरणा देंगे, और हम अपना, प्रकृति का और जो हमें ज्ञान पूर्वक इससे मिला कर अद्भुत शक्ति देता है उसका भी परिपूर्ण ज्ञान प्राप्त करेंगे। तदुपरान्त गृहस्थ में हम एक ऐश्वर्य का सम्पादन करके उसकी अभिवृद्धि के लिए प्रयत्नशील रहेंगे। हमारा ऐश्वर्य अर्थ और सत्ता के अतिरिक्त सन्तति धन भी होगा। इसके पश्चात् वानप्रस्थ अवस्था में पहुँच कर "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना को जागृत करेंगे और इसमें हम २५ वर्ष तक रह कर इस भावना को क्रियात्मक रूप देने का अभ्यास करेंगे। जब पूर्ण अभ्यस्त हो जावेंगे तब गृह (परिवार) तथा नगर या वन की परिधि से आगे बढ़ समस्त ससार को अपना कार्य क्षेत्र बना उसमें उतर जावेंगे। ब्रह्मचर्य में प्राप्त किया हुआ सम्पूर्ण ज्ञान जिसे गृहस्थ की कसौटी पर कस कर अनुभूत किया हो उसका प्रसार कर 'ऋषि ऋण' से और गृहस्थ मे सन्तति उत्पन्न कर 'पितृ ऋण' से तथा समस्त जीवनभर त्याग भावना से यज्ञ कर्म कर कर 'देव ऋण' से विमुक्तता प्राप्त करेंगे। यही हमारे जीवन में मुक्ति और जीवन के पश्चात् चूंकि हम अपने कर्मों में गर्व (अभिमान) तथा मोह आदि के दोष में लिप्त नहीं हुए अर्थात् जीवात्मा इनसे भी विलिप्त न होने के कारण मृत्यु के पश्चात् 'मुक्ति' अर्थात् इह लौकिक व पारलौकिक दोनों में मुक्ति प्राप्त कर लेंगे।

वानप्रस्थ के पश्चात् सन्यास में पहुँच कर जब हम समस्त संसार में वेद और वैदिक धर्म का यह पावनीय सन्देश मानव मात्र तक पहुँचावेंगे तो ससार को इस मुक्ति मार्ग के प्रेरक प्रकाश की प्राप्ति होगी। संसार अज्ञान, अभाव और अन्याय के अन्धकार से प्रकाश में आवेगा। तब ऋषि दयानन्द जिन्होंने वर्तमान तिमिर युग में वैदिक सस्कारों की विशेष कर प्रत्येक उस मानव मात्र को जिसमें कि मुक्ति प्राप्ति अग्नि की चिनगारी हो 'उपनयन' (यज्ञोपवीत) संस्कार का अधिकारी होने की घोषणा की और स्वयं स्वामी जी महाराज ने जिन ऋषियों के ज्ञान से प्रेरणा प्राप्त की थी उनका भी तप-त्याग और उनकी मनोकामना कि "दु खित प्राणियों का कल्याण हो" साकारित होगी। परमात्मा करें हम यज्ञोपवीत धारी जो प्रति वर्ष उपाकर्म के अवसर पर नूतन यज्ञोपवीत धारण करते हैं इस यज्ञोपवीत धारण करने सम्बन्धी उद्देश्यों की पूर्ति कर सकें।

वेदों के अत्यन्त शुद्ध एव प्रामाणिक प्रकाशन की दुर्लभता

[ले०—श्री वीरसेन जी वेदश्रमी,
वेदसदन ७२ महारानी रोड, इन्दोर नगर (म० प्र०)]

जुलाई मास के "सार्वदेशिक" के अक मे एक छोटासा अपितु अत्यन्त महत्वपूर्ण लेख श्री प्रो० परमात्मा शरण जी एम० ए० का वेद की शुद्ध प्रतियों के अभाव के विषय मे प्रकाशित हुआ है। समस्त आर्य जनता एव समस्त आर्य सस्थाओं को इस अभाव की पूर्त्ति के लिये विशेषरूप से प्रय न करना चाहिये और अत्यन्त शुद्ध तथा सुन्दर वेद के प्रकाशनों को सर्व साधारण जनता के समक्ष प्रस्तुत करने का अविलम्ब प्रयत्न करना चाहिये।

वेद का पढना पढाना और सनना सुनाना हमारा परम धर्म है परमधर्म वेद ही हमारा आधार है। हमारे ज्ञान विज्ञान, सस्कृति एव सभ्यता का उद्गम वेद ही है। अत ऐसे उत्तम ग्रन्थ को हम जितना ही शुद्ध एव सुन्दर छपा कर जनता को प्रस्तुत करेंगे वह हमारे ही हित मे साधक होगा। वेद मन्त्रों के यथावत एव स्वर रहित उच्चारण के प्रति हमारे दुर्लक्ष्य के कारण वेदों के प्रकाशन में भी अशुद्धता और अग्राह्य प्रकाशनों की वृद्धि होना स्वाभाविक है। अशुद्ध प्रकाशनों ने वेद मन्त्रों के अशुद्ध उच्चारण में वृद्धि और अशुद्ध उच्चारण के अभ्यास प्रकाशन ग्रन्थों में अशुद्धियों की वृद्धि होना स्वाभाविक है। इस प्रकार एक दूसरे के परस्पर पूरक प्रयत्नों से हमारे सत्य विद्या के महान वेदों के प्रति हमारे आलस्य, एव प्रमाद से वेदों की ऐसी शुद्ध प्रामाणिक प्रति आर्य जगत् में उपलब्ध नहीं है कि उसे गौरव से हम विदेशियों के सम्मुख प्रस्तुत कर सकें। यह आर्यसमाज के लिये नि सन्देह खेद एव लज्जाजनक ही है। अत हमे सब ओर से अपने प्रयत्नों को आकृष्ट करके वेदों के परम शुद्ध एव सुन्दर मुद्रण की ओर केन्द्रित करना अत्यावश्यक है।

वेद के मुद्रित ग्रन्थो के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उत्तरोत्तर उनमे शुद्धता और सौन्दर्य का ध्यान रखा जाता है परन्तु अन्य धर्मावलम्बियों के उपल ध धर्म ग्र थों की तुलना मे अभी हम बहुत पीछे हैं। सशोधन कार्य के बारे में एक मौलिकमूल यह हो रही है कि जिस किसी से भी पूर्व पुस्तक के आधार पर 'मक्षिकास्थाने मक्षिकापात' न्यायानुसार सशोधन करा लिया जाता है अथवा किसी शास्त्री या आचार्य को कष्ट दे दिया जाता है कि वे उसे और सावधानी से देख लें। परन्तु वैदिक ग्रन्थों के सशोधन का कार्य ऐसे वैदिक विद्वानों से नहीं लिया जाता जिन्हें वेदसस्वर कठ हों, जिन्हें वैदिक स्वरों का अभ्यास हो या जिसने वेदों की शिक्षा ग्रन्थ एव प्रातिशाख्यादि ग्रन्थों का अध्ययन किया हो। इस विशिष्ट योग्यता वाले ही व्यक्ति वास्तव मे वेदों के शुद्ध मुद्रण कार्य मे परमोपयोगी सिद्ध हो सकेंगे। सस्कृत साहित्य, काव्य अलकार दर्शनादि शास्त्रों के तीर्थ, शास्त्री या आचार्य योग्यता वाल विद्वान् वेद का सशोधन कर लेंगे यह सम्भव नहीं है।

यजुर्वेद के प्रथम अध्याय के ११ वें मन्त्र को हम यहा उदाहरणार्थ उपस्थित करते हैं। इस मन्त्र में 'मन्वेमि पृथिव्यास्त्वा' इस प्रकार प्राय सर्वत्र ही सहिता ग्रन्थों मे दृष्टिगोचर होता है। यहा क्या त्रुटिया है इसको शास्त्रीय विद्वान कभी भी बता नहीं सकेगा। परन्तु वैदिक विद्वान बता देगा कि यहा पर मध्य मे विराम चिन्ह नहीं है।

यदि विराम चिन्ह यहा लगाना अभीष्ट मान लिया जावे तो 'पृथिव्या' इस पद में इस प्रकार स्वर स्थिति करनी होगी। परन्तु इस प्रकार स्वर स्थिति भी उन्होंने नहीं प्रकाशित की अत दो प्रकारसेयहा अशुद्धि है। इत्यादि प्रकार की अनेक अशुद्धिया ऐसी हैं जिन्हें केवल वैदिक विद्वान् जिन्हे वेद कठ है और स्वराभ्यास हैं वे ही बता सकते है एव सशोधित कर सकते है।

एक बार मैने निर्णय सागर के उव्वट महीधर भाष्य युक्त यजुर्वेद के प्रथम एव द्वितीय अध्याय के मन्त्रों को सशोधन की दृष्टि से देखने की इच्छा करके उसका अवलोकन किया। प्रथम अध्याय के मन्त्रों में २५ और द्वितीय अध्याय के मन्त्रों मे १३ अशुद्धिया दृष्टिगोचर हुई। इस प्रतीति का कारण एक मात्र सस्वर वेद का कण्ठस्थ होना और उसके नित्य पाठ का अभ्यास ही था। बिना कण्ठस्थ वेद पाठ के अशुद्धियों का सरलता से ज्ञान होना अत्यत कठिन है।

इसी प्रकार सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास के प्रथम एव द्वितीय मन्त्रो क सभी ने पाठ किया होगा। श्री स्वामी वेदानन्द जो एव श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के अपूर्व प्रयत्नों से स्थूलाक्षर मे सुन्दर एव शुद्ध सत्यार्थप्रकाश का मुद्रण हुआ। अन्य प्रकाशको ने भी सत्यार्थप्रकाश मुद्रण किया और कर ही रहे है। पर उसमे जो स्वर की अशुद्धिया चली आ रही हैं वे सभी मे दृष्टिगोचर हो रही है। कतिपय प्रकाशको का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया। परन्तु पत्र का भी किन्हीं ने उत्तर दिया शेष चुप रहे। परन्तु सशोधन करन की चिता न हुई। इसका भी कारण यही है कि स्वरों मे सशोधन का कार्य शास्त्रीय विद्वानों की पहुच व दृष्टि से अत्यन्त दूर है और वे अपनी प्रतिष्ठा की हानि की दृष्टि से ऐसे पत्रों की उपेक्षा कर जाते है तथा प्रकाशकों को समझा देते हैं कि यहा अशुद्धि नहीं है ठीक ही है। अत जब तक वेद आदि ग्रन्थों के मुद्रण में वैदिक विद्वानों का ही सहयोग नहीं लिया जायगा तब तक शुद्ध वेद की प्रतिया जनता तक पहुच नहीं सकती।

वेद की शुद्ध प्रतिया उपलब्ध न होने मे प्रकाशकों एव ग्राहको का भी दोष है। प्रकाशक शुद्ध अशुद्ध छपाकर सस्ते मूल्य पर प्रस्तुत कर देते हैं ग्राहक भी सस्तेपन के लोभ मे उसे ले लेते हैं। प्रकाशक यहभी समझते हैं कि ग्राहकों को शुद्धि और अशुद्धि का ज्ञान है ही नहीं। अत जैसा भी प्रकाशन वे कर देगे जनता ले लेगी। एक प्रकाशक ने सस्कार विधि खरीदी उसको वह व्यक्ति मेरे पास इसलिए लाया कि आप मेरे लिये यह प्रति शुद्ध कर दें। मैने सामान्य प्रकरणोक्त भाग के मत्र भाग में लगभग १६० अशुद्धिया उसमे शुद्ध की और उस व्यक्ति को लौटा दी कि जब इतने ही भाग मे इतनी अशुद्धिया हैं तो सारी प्रति के सशोधन का समय कहा से प्राप्त होगा। एक अत्यन्त विश्वस्त व प्रामाणिक स्थान की 'हवन मन्त्रा' पुस्तक को देखा तो उसमे २८ या ३० अशुद्धि स्वर एव वर्णों की थी, अभी एक दैनिक कर्मकाण्ड की पुस्तक देखी उसमे भी ४८ के लगभग स्वर एव वर्णों की अशुद्धिया है। इस सबका कारण एक मात्र प्रकाशकों का प्रमाद तथा वदिक विद्वानों से सशोधन कार्य न कराकर किसी भी शास्त्रीय विद्वान् से वेद का सशोधन काय करा लेना है।

जब हमारे छोटे २ प्रकाशनो में भी इतनी अशुद्धिया होती है तो उन पुस्तकों के आधार पर जो भी मन्त्र पाठ या सन्ध्या हवन कण्ठस्थ करेंगे उनको भी अशुद्ध ही मन्त्राभ्यास होगा और इस प्रकार अशुद्ध प्रकाशित पुस्तकों से अशुद्ध मन्त्र पाठ का ही प्रचार होता रहेगा तथा अशुद्ध वेद मत्र पाठ एव मुद्रण की परम्परा चलती रहेगी। ऐसी स्थिति मे आर्य समाज का भविष्य वेद विषय में अन्धकारमय ही बनता चला जायगा तथा बनता भी चला जारहा है। उदाहरणार्थ हमें कई ऐसे दैनिकयज्ञादि पद्धतियों की पुस्तकें देखने को प्राप्त हुई। उनमें उन्होंने "अन्नपते" इस मन्त्र को भी प्रकाशित किया

साहित्य समालोचना

रजत जयन्ती स्मृति ग्रन्थ (सचित्र)

सम्पादक—श्री भीमसेन विद्यालकार, प्रधानमन्त्री पजाब हिन्दी साहित्य सम्मेलन, निकलसन रोड, अम्बाला छावनी।
२० × ३० / ८ - पृ० २५४ मू० ६)

प्रस्तुत ग्रन्थ पजाब प्रातीय हिंदी साहित्य सम्मेलन की रजत जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष्य मे प्रकाशित किया गया है। पजाब मे हिंदी की प्रगति और उन्नति का यह विवरण उपादेय है। पजाब में हिन्दी भाषा के क्रमिक इतिहास के सकलन में इससे लाभ उठाया जा सकता है। लेखों और कविताओं का चयन अच्छा हुआ है। ग्रन्थ पढने तथा सग्रह करने योग्य है।

श्री रामचरित दर्पण (सजिल्द)

(वाल्मीकीय रामायण का सचित्र पद्यानुवाद) रचयिता तथा प्रकाशक प० मुन्नालाल मिश्र प्राचीन मल्लेपल्ली हैदराबाद (आ० प्र०)

मू० ३।।) १८ × २२ / ८ पृ० १६८

वाल्मीकि रामायण का यह सचित्र हिंदी पद्यानुवाद अपने ढग का प्रथम और अनूठा प्रयत्न है। वाल्मीकि रामायण के प्रक्षेप स्थलों को निकाल दिया गया है। इस प्रकार ग्रन्थ की ... सुरक्षित रख ली गई है। पद्यानुवाद उत्तम हुआ है। कथा वार्ताओं के प्रसग मे इस ग्रन्थ से विशेष लाभ उठाया जा सकता है।

अनमोल मोती

लेखक—श्री जगदीशचन्द्र विद्यार्थी विद्यावाचस्पति, भूमिका—श्री स्वामी अभेदानन्द जी सरस्वती, प्रकाशक आर्यकुमार सभा किग्सवे दिल्ली, मू० ३५ नये पैसे २० × ३०।१६ पृ० ६६।

इस पुस्तक में बुद्धि, क्रोध त्याग, ब्रह्मचर्य से मृत्यु पर विजय धर्म पर चल, समय का सदुपयोग आदि २ विविध वैदिक सूक्तियो की व्याख्या की गई है। व्याख्याओं को सरल, सुबोध और रोचक

है। मन्त्र के अन्तिम भाग मे निम्न शब्द दिये हैं 'द्विपदे श चतुष्पदे।' ज्ञात नहीं होता कि 'श' पद किस आधार पर उन्होंने बढा दिया है जबकि सहिता में 'शम्' पद यहा है ही नहीं। इसी प्रकार से 'आब्रह्मन्०' में भी कई प्रकाशकों ने 'अभिवर्षतु' ऐसा पाठ छापा था। उस समय उनका इस ओरध्यान आकृष्ट किया तो अब 'अभि' पद हटा दिया है। तात्पर्य यह है कि अनेक प्रकार की अशुद्धियों से युक्त हमारे छोटे २ वैदिक ग्रन्थों के प्रकाशन हैं तो वेद ग्रन्थों के शुद्ध मुद्रण करने के लिए कितनी सतर्कता एव सावधानी बर्तनी होगी जिससे हमारे ग्रन्थों की प्रामाणिकता और शुद्धता में जनता का विश्वास जागृत हो उठे।

कर्मकाण्ड के ग्रन्थों के अशुद्ध प्रकाशन से कर्म काण्ड मे भी दोष उत्पन्न होता हैं। ज्ञान काण्ड की पुस्तकों मे अशुद्धिया करने से अज्ञानता की वृद्धि होती है। अज्ञानयुक्त अशुद्ध पाठसे धर्मकी वृद्धि की कल्पना कब तक सजीव रह सकेगी। वह तो व्यवसाय मात्र की वर्धक कुछ काल तक रह सकेगी। अत समस्त आर्यजनों तथा आर्य सस्थाओं को वेद के शुद्ध मुद्रण तथा प्रामाणिक प्रति के लिए शीघ्र ही अपनी कमी को दूर करने का प्रयत्न करना अत्यन्त आवश्यक है।

❀

बनाने पर विशेष ध्यान रखा गया है। छात्रों एवं छात्राओं के लिए पुस्तक बड़ी उपयोगी है।

प्राणायाम

लेखक—आचार्य भद्रसेन जी, संचालक—यौगिक व्यायाम संघ, भूमिका लेखक—सुखसम्पत्तिराय जी भण्डारी, प्रकाशक—आदर्श साहित्य निकेतन, अजमेर, पृ० संख्या ६१, मूल्य ।।।)

वैसे तो आचार्य भद्रसेन जी ने अनेक उपयोगी पुस्तकों की रचना की है, परन्तु इस 'प्राणायाम' पुस्तक में योग के इस प्रधान अंग 'प्राणायाम' पर जो मैटर स्वकीय अनुभव के आधार पर दिया गया है वह पाठकों के लिए तथा प्राणायाम मे रुचि रखने वाले महानुभावों को अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। अनेक चित्रों से सज्जित इस पुस्तक मे प्राणायाम में सहायक जो आसन, बन्ध, नोली बस्ती क्रियाएं होती हैं उनका भी विशद वर्णन किया गया है। अन्त में प्राणायाम करने में जो गलतिया या त्रुटियां रहती हैं इनसे भी सावधान किया गया है और नाना प्रकार के प्राणायामों की विधिया तथा उनके लाभ भी दिये हैं। पुस्तक अत्यन्त उपादेय है। इतने काम के चित्रों के लिए कागज कुछ और अच्छा लगाया जाता तो और अच्छा होता।

सूर्यदेव शर्मा सि० शास्त्री साहित्यालंकार
एम० ए० डी० लिट, परीक्षा मन्त्री
भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद्, अजमेर

प्राप्ति स्वीकार

योग और स्वास्थ्य
लेखक—आचार्य भद्रसेन
प्रकाशक—प० रमेशचन्द्र वैद्य, मू० २।।)

प्राणायाम
लेखक—आचार्य भद्रसेन
प्र०-आदर्श साहित्य निकेतन अजमेर मू० ।।।)

योगासन
लेखक—आचार्य भद्रसेन
प्र०-आदर्श साहित्य निकेतन अजमेर, मू०।।≈)

स्वामी वेदानन्द
लेखक—जगदीशचन्द्र विद्यार्थी
प्रकाशक—आर्यकुमार सभा किंग्जवे कैंप, मू०-)

प्रार्थनालोक
लेखक—जगदीशचन्द्र विद्यार्थी
प्रका०-आ०कु०सभा, किंग्जवे कैंप मू०≈)

अमरीका के स्वावलम्बी विद्यार्थी
लेखक—स्वामी सत्यदेव परिव्राजक
प्रका०-सत्य ज्ञान प्रकाशन ज्वालापुर, मू० ।।')

आर्य समाज का महत्व पूर्ण कार्य
लेखक—प० हृदयप्रकाश भारद्वाज
प०—प० सत्यव्रत शास्त्री ज्वालापुर, मू० -)

महर्षि दयानन्द का महत्व
लेखक—प० हृदयप्रकाश भारद्वाज
प्र०-आर्य समाज ज्वालापुर, मू० -)

सृष्टि का इतिहास
लेखक—प० लेखराम आर्य पथिक
प्रकाशक—वेदप्रकाश दिल्ली, मू० ।।)

गांधी जी की विचित्र अहिंसा मू० ।।)
लेखक—भक्त रामशरणदास
प्रकाशक—हिन्दू प्रकाशन, पिलखुआ (मेरठ)

दक्षिण अफ्रीका में धर्मोदय मू० ३)
लेखक—पं० नरदेव वेदालंकार
प्र०-आ० प्रति० सभा दक्षिण अफ्रीका डरबन

Fountain head of religion
Ganga Prasad
Arya Sahitya Mandal, Ajmer. ४)

सत्य सनातन धर्म
लेखक—मानीराम लड्डा
प्रका०-मानीराम लड्डा, मू० १।≈)

Inspiring thoughts of Emeson
S C. Dass.
S. C. Das, 3206 Dassan Street,
Delhi, मू० २)

महर्षि जीवन

पैसे का प्रेम न छोड़ा

एकदिन स्वामीजी महाराज एक भेड़िये की माद में पले हुए मनुष्य को देखने गए। उसे बचपन में ही एक भेड़िया उठाकर ले गया था फिर वह किसी प्रकार ईसाइयों के हाथ लग गया। महाराज ने जब उसे देखा तो उस समय वह एक कुरता धारण किये हुए था और थोड़े २ मानुषी व्यवहार भी सीख चुका था। स्वामी जी से नमस्कार पूर्वक पैसा मांगा। इस पर स्वामी जी ने उससे कहा कि इतने दिन पशुओं में वास करने पर भी तुमने पैसे का प्रेम न छोड़ा। महाराज के सकेत से उनके साथी भक्त ने दो-चार आने उसे दे दिये।

फलित ज्योतिष

सहारनपुर में लक्ष्मीदत्त नामक एक ज्योतिषी ने महाराज से कहा कि मैं ज्योतिष के अनुसार प्रश्नों के उत्तर दिया करता हूं। वे उत्तर सच्चे होते हैं। इस पर महाराज ने कहा "ऐसे उत्तर निरे अटकल पच्चू हुआ करते हैं। जैसे एक कौवा उड़ता हुआ जब आम के पेड़ के नीचे से निकला तो अचानक उस पर ऊपर से आम टूट पड़ा। उस फल की चोट से कौवा गिर कर मर गया। आम के लगने का ज्ञान न तो कौवे को था और नाहीं आम जानता था कि मुझसे यह मर जायगा। ऐसी बातें दैवयोग से हो जाया करती हैं। आपके उत्तर कभी दैव योग से सच्चे हो जाते होंगे। यदि गणना से सच्चे है ने मानो तो गणित में तो कोई भूल नहीं होती। उसके सारे नियम शुद्ध हैं परन्तु आपके सारे प्रश्न पूर्ण नहीं होते। गणित नियम से फलित होता तो उसमें भूल कदापि न होती। फलित ज्योतिष को 'काक तालीय' न्याय के तुल्य ही समझना चाहिए।

क्या सूतक शास्त्रानुकूल है ?

एक भक्त ने पूछा—भगवन्! जन्म के समय जो दस दिन का सूतक माना जाता है क्या वह शास्त्रानुकूल है? महाराज ने उत्तर दिया "मनु-स्मृति के अनुसार तो केवल नव-जात बालक की माता ही को एक रात का सूतक होता है, बच्चे के पिता तक को भी नहीं होता। यह सूतक-पातक का झमेला वैसे भी ठीक नहीं है। इसमें लोग सन्ध्या, अग्नि होत्र आदि भले काम भी छोड़ बैठते हैं। कोई असत्य भाषण और चौर कर्म आदि बुराइयों को तो नहीं छोड़ता। ऐसी रीतियों को मान कर क्या करना जिससे शुभ तो दूर हो जाय और अशुभ धड़ाधड़ होता रहे।"

सोना तपाने पर कुन्दन होता है

देहरादून में श्री भोलानाथ जी ने खिन्न चित्त होकर कहा—महाराज! जैन मत वालों ने समाचार पत्रों में विज्ञापन निकलवाये हैं। उनसे प्रतीत होता है कि वे लोग आपको कारागार में आबद्ध कराना चाहते हैं। इसी विषय के विज्ञापन सहा-रनपुर में भी स्थान २ पर लगे हुए हैं।' यह वचन सुन कर महाराज के प्रफुल्ल मुख कमल का रंग जरा भी न बदला। उन्होंने गम्भीरता से कहा—"भाई! सोने को जितना तपाया जाता है उतना ही कुन्दन होता है। विरोध की आंच से सत्य की कांति चौगुनी चमकती है। दयानन्द को तो यदि कोई तोप के मुंह के आगे रख कर भी पूछेगा कि सत्य क्या है तब भी उसके मुख से वेद की श्रुति ही निकलेगी। अब तो मैने जैन मत के बहुत से ग्रन्थ देख लिए हैं। वे मेरे प्रश्नों का उत्तर कदापि नहीं दे सकते।"

स्वाध्याय का पृष्ठ

राइट भाइयों से पूर्व भारतीय जन विमान विद्या जानते थे

राइट (Wright) बन्धुओं के जन्म से पूर्व ही भारतवासियों के पास वायुयान था। रामायण में इसका सविस्तर वर्णन पाया जाता है।

राम ने पुष्पक विमान में यात्रा की थी जो सम्भवत ससार का प्राचीनतम विमान था। अपने साहित्य अनुशीलन से विदित होता है कि हम भारतीय वायुयान विद्या से परिचित थे और चिर काल से उसके विकास में सलग्न थे। अनेक व्यक्तियों को इस कार्य मे आश्चर्यजनक सफलता भी मिली थी। परन्तु बाद में इस प्रकार के यत्नों का परित्याग कर दिया गया था और इनका बनना बन्द हो गया था। यजुर्वेद मे इस परित्याग के अनेक कारण उपलब्ध होते है।

२ मई १६०३ को बम्बई के एक समाचार पत्र में यह खबर छपी थी कि एक व्यक्ति स्वनिर्मित वायुयान में उडनेवाला है, वह बहुसख्यक लोगों के सामने उड़ा और सफलता पूर्वक उड़ने के बाद १६ मिनट में भूमि पर उतरा परन्तु ब्रिटिश शासन ने उस व्यक्ति को प्रोत्साहित न किया और धना भाव के कारण उसे अपने यन्त्र और सामान एक अग्रेजी जहाज कम्पनी को बेच देने पड़े।

मैसूर के 'अन्तर्राष्ट्रीय प्राच्य विद्या मन्दिर' में एक प्राचीन सस्कृत हस्त लेख है। इस ग्रन्थ मे वायुयान निर्माण की विधि का विस्तृत वर्णन मिलता है। ग्रन्थ के निर्माता महर्षि भारद्वाज हैं। उन्हों ने भिन्न २ प्रकार के वायुयानों के निर्माण के भिन्न २ प्रकार बताये हैं। उसमें अभेद्य, वायुयान की भी चर्चा की गई है। अन्य प्रकार के वायुयानों के नाम 'सुन्दर, सुकना और रुक्मा' आदि २ पढने को मिलते हैं। इस पुस्तक से यह स्पष्ट है कि प्राचीन भारतीय वायुयान विद्या में निष्णात थे।

माउन्ट वर्नन विश्व विद्यालय (अमेरिका) के अध्यापक चर्च वुड ने एक ग्रन्थ लिखा है जिसका नाम है "प्राचीन भारत में वायुयान की उड़ानें (Aeroplane flights in an 1ɔnt India) इस ग्रन्थ मे बताया गया है कि प्राचीन भारत में हवाई युद्ध किस प्रकार हुआ करता था। साथ ही युद्ध में प्रयुक्त होने वाले अनेक प्रकार के वायुयानों का भी विस्तृत वर्णन किया गया है।

'अगस्त सहिता' में युद्ध विद्या का वर्णन है। इसमे 'छत्र विमान और द्विगुण' इन दो प्रकार के विमानों का उल्लेख है। इसमें विद्युत् के सहारे जलवायु (हाइड्रोजन) विमान के बनाने का भी ढग बताया गया है।

भारद्वाज कृत एक दूसरी प्राचीन सस्कृत पुस्तक में उन सिद्धान्तों का वर्णन है जिनसे आज के विज्ञान वेत्ता अनभिज्ञ हैं। उदाहरणार्थ एक सिद्धान्त है 'पराशब्दगृह' जिसके अनुसार उड़ते हुए वायुयानों में बैठे हुए जन परस्पर में वार्तालाप कर सकते थे। भारद्वाज ने शत्रु के विमानों को नष्ट करने के उपाय और साधन भी बताये हैं।

(कलचरल इडिया बड़ौदा
जून २० पृ० ३ ४)

देवनागरी लिपि की गरिमा

The Alphabatical order of each class of

letters, vowels, mutes, semi vowels and sibilants is order of organs of utterence beginning with throat and ending with lips
(A grammer of Hindi language by Kelogg P 1 1883)

स्वर, वर्गीय अक्षर, अन्त स्थ वर्ण और ऊष्म इन प्रत्येक श्रेणियों के अक्षरों का क्रम, उच्चारण के अगों का क्रम है जो कण्ठ से आरम्भ होकर ओष्ठ पर समाप्त होता है।

Before the writer had gained any acquaintance with language he considered the grammatical structure of Arabic to be without a rival, but he is now more fully aware of the immense labour of Hindu philogist and the powerful regulative influenc of their system

(Ain I Akbari by Abul Fazal English Translation by Jarret Vol III Page 223)

लेखक को जब इस भाषा (सस्कृत) से कुछ परिचय न था तब उसका विचार था कि अरबी भाषा की शब्द रचना अद्वितीय होगी परन्तु अब वह हिंदू शब्द शास्त्रज्ञोंके महान्परिश्रम और उनकी पद्धति को सुव्यवस्थित करने वाले शक्तिशाली प्रभाव से पूर्णतया परिचित हो गया है।

रोमन और देवनागरी लिपि

It (Devanagri Script) not only represents all the sounds of the Sanskrit language but is arranged on a thoroughly scientific method, the simple vowels coming first than the dipthongs and lastly the consonants in uniform groups according to the organs of speech with which they are pronounced We Europeans on the other hand 2500 years later and in scientific age still employ an alphabet which is not only inadequate to represent all the sounds of our languages but even preserves the random order in which vowels and consonants are Jumbled up as they were in Greek adoption of primitive semitic arrangements of 3000 year age.

(Sanskrit Grammar by Mecdonell III Edition 1926 Page 8)

यह देवनागरी लिपि न केवल सस्कृत भाषा की ध्वनियों का ही वर्णन करती है परन्तु पूर्णतया वैज्ञानिक रीति पर क्रमबद्ध है। पहले असयुक्त स्वर आते हैं फिर सयुक्त स्वर और उसके पश्चात् समान वर्गों के व्यजन वाणी के अवयवों के अनुसार जिनसे वे उच्चारण किये जाते हैं। इसके विरुद्ध हम यूरोप निवासी २५०० वर्ष के पश्चात और इस वैज्ञानिक युग मे अब भी एक ऐसी वर्ण माला (रोमन) का उपयोग करते हैं जो न केवल हमारी भाषाओं की समस्त ध्वनियों को प्रकट करने में असमर्थ है परन्तु ऐसे आकस्मिक क्रम को बनाये हुए है जिसमे स्वर और व्यजन मिले जुले हैं जैसा कि वह उस समय थे जब कि यूनान वालों ने ३००० वर्ष हुए प्रारम्भिक सैमेटिक क्रम को अपनाया था।

The great number of the letters of Hindu Alphabet is explained first y by the fact they express every letter by a separate sign of it is followed by a vowel or a dip thong or a Hamza (Vesarga) or a small extension of the sound beyond the measure of the vowel and reasonably by the fact that they have cousonants which are not found in any other larguage though they may be scattered through different languages

(Albrunis India Vol 1 Page 172, 1910)

हिंदू वर्णमाला में अक्षरों की सख्या इसलिए अधिक है कि उन्होंने स्वरों की मात्रा (ह्रस्व,दीर्घ) के लिए पृथक २ अक्षर नियत किये और उनकी वर्णमाला में ऐसे व्यजन अक्षर हैं जो दूसरी किसी भाषा मे नहीं हैं किन्तु भिन्न २ भाषाओं में बिखरे पड़े हैं।

The arrangement of the Alphabet is that adopted by the ancient Indian Grammarians and being thoroughly scientific

(History of Indian literature by Wintert Vol 1 Page 8)

• पाणिनीय व्याकरण ऐसा पूर्ण है कि अभी तक उसके समान और कोई व्याकरण नहीं बना। इस व्याकरण की वर्णमाला पूर्णतया वैज्ञानिक है।

❀

महिला जगत

वीरांगना लक्ष्मीबाई

[ले०—श्री शम्भुनाथ जी]

प्रत्येक वर्ष १८ जून को हम महारानी लक्ष्मीबाई की पुण्यतिथि मनाते हैं और उस वीरांगना के जीवन की स्मृतियों का स्मरण कर मन ही मन पुलकित हो उठते हैं, और इस बात की प्रेरणा ग्रहण करते हैं कि यदि कभी देश पर आंच आए या उसका गौरव संकट में हो, तो हम अपना सर्वस्व बलिदान कर शहीद हो जाएं। महारानी लक्ष्मीबाई इस तरह भारतीय जीवन क्रम के मध्य एक ऐसी आस्था और विश्वास की चट्टान है, जिसका धरातल, पवित्रता और आत्मोत्सर्ग के पुण्यशील विचारों पर अवलम्बित है। मृत्यु के समय उनकी अवस्था २२ वर्ष ७ महीने और २७ दिन की थी। वह अवस्था ऐसी है जब कि वह देश की आजादी, उसे स्वतन्त्र कराने और मर मिटने की भावना से परे हटकर अपने सुख, अपने ऐश्वर्य और अपने मनोविनोद को प्रधानता देकर आराम से अपना जीवनयापन कर सकती थीं। लेकिन उनके सामने केवल अपने सुख और अपने ऐश्वर्य का ही प्रश्न नहीं था, बल्कि देश का वह मानचित्र और वे परिस्थितियां थीं, जबकि भारतीय नागरिकों को 'नेटिव' कहकर उनके साथ पशुत्वपूर्ण व्यवहार किया जाता था, उनकी कोमल धार्मिक भावना को कुचला जाता था और उन्हें बौद्धिक तथा शारीरिक रूप में हीन व पंगु बनाकर जन्म भर के लिए निष्क्रिय और निस्तेज बना दिया जाता था।

१८५७ की क्रांति

सन् १८५७ की जनक्रांति, जैसा कि चन्द लोगों का अभिमत है केवल कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों का तत्कालीन शासन के विरुद्ध षड्यन्त्र नहीं था, न वह अपने २ स्वार्थों की रक्षा का ही परिणाम था। यदि ऐसा होता तो यह क्रांति देशव्यापी न होकर केवल कुछ क्षेत्रों एवं कुछ रियासतों तक ही सीमित रह जाती। जनता अपनी शक्ति के बल पर मर मिटने के लिए तैयार न हो जाती। लेकिन १८५७ में जनता अंग्रेजों से जूझी और उसने अपनी एकता तथा अपने बल-पौरुष का परिचय अंग्रेजों को दिया। जहां जनता के लिए स्वाभिमान और अपने स्वत्वों का प्रश्न था, वैसा ही उस समय के रजवाड़ों और पूर्व शासकों के सामने भी यही एक भाव था, कि उनके साथ मानवीय व्यवहार किया जाए व उनके अधिकारों तथा आधारभूत विश्वासों के प्रति शासक होने के नाते आंखें न मींच ली जाएं। महारानी लक्ष्मीबाई एक निष्ठावान महिला थीं। अपने पति राजा गंगाधरराव के जीवन काल में ही वह अपनी बुद्धिमत्ता और शासकीय क्षमता का परिचय देती रहती थी। उनका आरम्भिक काल बड़ी विचित्र परिस्थितियों में गुजरा। काशी के अस्सीघाट मौहल्ले में २१ अक्तूबर, १८३५ में उनका जन्म मोरोपंत तांबे के घर हुआ। वह मोरोपन्त दक्षिण से निर्वासित पेशवा के कर्मचारी थे। अतएव आरम्भ से ही लक्ष्मीबाई को ऐसा वातावरण और ऐसे साधन मिले, जिन्होंने उन्हें सैनिक शिक्षा में पारंगत, मन से दृढ़ और कर्म से तेजस्वी बना दिया। रानी ने विवाह के बाद अपने झांसी राज में देखा कि उनके पति नाममात्र के शासक हैं और शासनतन्त्र

जैसे अंग्रेजों के इशारे पर चल रहा है। यह बात उन्हें नहीं भाई। लेकिन वह उस समय सीधे सादे शासनतन्त्र के सम्पर्क में नहीं थी, इस कारण अपनी भावना को पी गई। उसी समय लार्ड डलहौजी ने समस्त देशी रियासतों को अंग्रेजी शासन में मिलाने का एक षड्यन्त्र रचा। पुत्र गोद लेने की प्रचलित प्रथा को भी समाप्त कर दिया। उन्हीं दिनों राजा गंगाधर राव बीमार पड़े। उन्होंने झांसी के उस समय के अंग्रेजी प्रबंधक श्री एलिस को बुलाकर उनके सामने ही एक लड़का गोद लिया तथा श्री एलिस ने शपथबद्ध होकर कहा कि वह रानी और गोद लिए हुए बच्चे पर कभी अंग्रेजी हुकूमत की टेढ़ी दृष्टि नहीं पड़ने देंगे। लेकिन यह वचन राजा की मृत्यु के पश्चात बहुत जल्दी पानी के बुदबुदे की तरह समाप्त हो गया। उन्हीं एलिस ने रानी को दरबार में आकर सरकारी फरमान सुनाया कि रानी का दत्तक पुत्र अस्वीकार किया गया और वह पांच हजार रुपए माहवार की पेंशन लेकर झांसी अंग्रेजों को सौंप दें।

रानी क्रोधित हो उठी। यह अपमान, यह विश्वासघात और यह चालाकी उसके शरीर में जहर की तरह बिंध गई। उसने कड़ककर कहा –

"मैं अपनी झांसी नहीं दूंगी।"

राज लक्ष्मीबाई का

रानी की इस घोषणा में उस युग का प्रतिनिधित्व था। जिस अन्याय के जाल को बराबर अंग्रेजों द्वारा फैलाया जाता रहा था और जिसके नीचे सर्वसाधारण सिसक उठा था, उस साम्राज्यवादीभावना के विरुद्ध युद्धघोष था। ऐसा पुनीत पावन विचार था जिसमें हिन्दू-मुसलमान सभी ने मन, वचन और कर्म से देश की आजादी के लिए कुर्बानी की शपथ ग्रहण की। बचपन से बने हुए संस्कार रानी के मन में प्रेरणा बनकर आए और उन्होंने उसके मन को फौलाद की तरह दृढ़ बना दिया। उसने शासन की कमान अपने हाथों में ले ली, उस समय क्रांतिकारियों का एक ही नारा था।

"खलक खुदा का, मुलक बादशाह का, राज महारानी लक्ष्मीबाई का।'

झांसी में जनता द्वारा अंग्रेजों का कत्लेआम आरम्भ हो गया और वे निस्सहाय रूप में किनारे से टकराई हुई दरिया की लहरों की तरह इधर से उधर भागने लगे। हो सकता था कि यदि रानी का जरा सा भी संकेत जनता को मिल जाता, तो झांसी के अंग्रेज लोग बच्चों सहित मौत के घाट उतार दिए जाते। लेकिन रानी का संघर्ष, उसका विद्रोह और उसका पराक्रम अन्याय के विरुद्ध था। अंग्रेज बच्चों और स्त्रियों के विरुद्ध नहीं था। जब रानी को अपनी सेना की उद्दंडता और क्रूरता का समाचार मिला तो वह सहम उठी। वह मानवता के मूलभूत सिद्धान्तों के लिए लड़ रही थीं और अंग्रेज निर्दोष बच्चों की रक्षा का प्रश्न भी मानवता की सुरक्षा का ही प्रश्न था। इस कारण उन्होंने अपनी सेना को बुरी तरह से लताड़ा और विपत्तिग्रस्त अंग्रेजों की सहायता की। यह रानी के निर्मल चरित्र और अपने विश्वासों के प्रति अडिग भावना का प्रतीक उदाहरण है। रानी अपने स्वत्वों के लिए लड़ती रही। शासन को अपने हाथ में लेने के बाद उन्होंने लड़ाई की पूरी योजना तैयार की। उन्होंने दो बातों पर विशेष जोर दिया। एक तो यह कि सेना अनुशासित रहे और दूसरे जनता को न्यायपूर्ण हक मिलें। एक स्त्री के हाथ में राज आया देखकर आस पास के रजवाड़ों ने एक मजाक सा समझा। ओरछा के दीवान नत्थेखां ने ३० हजार का सैन्य-बल लेकर झांसी पर हमला कर दिया, लेकिन रानी की तोपों ने उसका भुरकस निकाल दिया। दीवान साहब को जिन्दगी के लाले पड़ गए। अपना सारा गोलाबारूद छोड़कर उन्हें भागना पड़ा। राज्य में उस समय डाकू चोर और बटमारों का बड़ा जोर था। रानी ने साहस का परिचय दिया और परिस्थितियों को अनुकूल बनाया। इस तरह एक निश्चिंतता और सुरक्षा का भाव झांसी की जनता के

मन में उत्पन्न हुआ और वह रानी के प्रति विश्वास और भावनामयी अवस्था के साथ देखने लगी।

झांसी पर चढ़ाई

अंग्रेजों ने इस जनक्रांति को गदर कहा और उसे मिटाने के लिए तत्पर हो गए। सर ह्यूरोज भोपाल और हैदराबाद की मदद लेकर रानी पर चढ़ दौड़ा।

तेईस मार्च अट्ठारह सौ अट्ठावन को सर ह्यूरोज ने झांसी पर आक्रमण किया। लेकिन उसे पीछे हटना पड़ा। रानी ने खड़ी फसल बरबाद करा दी थी और सारे पेड़ कटवा डाले थे, जिससे कि विरोधियों को न अन्न मिल सके और न छाया मिले। लेकिन ग्वालियर से अंग्रेजी सेना को सहायता मिली और ३१तारीख को झांसी की सैन्य-शक्ति क्षीण पड़ने लगी। लड़ाई चलती रही। रानी ने समझ लिया कि झांसी खाली करनी होगी। वह अपने दत्तक पुत्र को पीठ पर बांधकर कालपी की ओर भाग निकली। अंग्रेजों ने उसका पीछा किया लेफ्टिनेंट बोकर रानी के बहुत पास तक पहुंच गया। उसी समय रानी ने एक भरपूर हाथ तलवार का बोकर पर मारा और वह भूलुंठित हो गए। कालपी में राव साहब पेशवा की सेना में बड़ी अन्धेरगर्दी थी। सैनिक अनुशासन का नाम नहीं था। रानी ने सारी व्यवस्था की, सर ह्यूरोज झांसी से कालपी पर टूटा। रानी ने विलक्षण रण-कौशल का परिचय दिया। वह सर ह्यूरोज के तोपचियों पर टूट पड़ी लेकिन राव साहब की सेना लुटेरे और बटमारों की सेना थी, न उसमें आत्मिक बल था और न चारित्रिक निष्ठा थी। कालपी अंग्रेजों ने सर कर लिया। रानी, राव साहब और तातिया टोपे अपने विश्वस्त साथियों सहित ग्वालियर की ओर दौड़ पड़े। रानी के दिमाग में केवल एक ही विचार था कि एक मजबूत किला हाथ में आए और खाने की सामग्री पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो जिससे कि सेना को पुनः एक सूत्र में बांधा जा सके। रानी ग्वालियर आई और उन्हें जनता तथा ग्वालियर की सेना का सहयोग प्राप्त हुआ। ग्वालियर का किला रानी के हाथों में था, लेकिन पेशवा के सैनिक अबआमोद-प्रमोद की बातें सोचने लगे थे।

राव साहब पेशवा के राज्याभिषेक की बात दोहराई गई। नाच रंग शुरू हुए लेकिन रानी तटस्थ रही। वह अच्छी तरह जानती थी कि अंग्रेज चैन से नहीं बैठने देंगे। वही हुआ भी। ११ जून १८५८ को जनरल रोज की सेनाओं से रानी की मुठभेड़ हुई, लेकिन वह दिन अनिर्णीत रहा १८ जून को पौ फटते ही लड़ाई शुरू हो गई। रानी ने रोज की सेनाओं पर दबाव डाला लेकिन अंग्रेजी सेनाएं समुद्र तट से दूर हटती हुई लहरों सी फैलती गई। रानी अदम्य साहस के साथ अन्तिम समय तक लड़ी। एक गोरे की पिस्तौल की गोली उनकी जांघ में लगी। रानी ने पास आए हुए अंग्रेज पर तलवार से वार किया और वह वहीं खत्म हो गया। अन्तिम समय तक रानी के पास उनका विश्वस्त सरदार गुल मोहम्मद पठान था। रानी ने भरसक यत्न किया कि वह सामने आए हुए नाले को पार कर जाए, लेकिन घोड़ा सहमा और बिदक गया। अंग्रेजों का दबाव बढ़ता जा रहा था। एक और अंग्रेज सामने आया। वह भी रानी की तलावर से मारा गया। एक और बढ़ा और उसे गुल मोहम्मद ने कत्ल कर डाला, रानी क्षीण पड़ चलीं और घोड़े पर से गिर पड़ी। उनके साथी उन्हें निकटवर्ती बाबा गंगादास की कुटी में ले गए और वह परलोकवासी हुई। अविलम्ब पास ही लगी घास की गंजी में उन्हें रखकर आग लगा दी गई।

रानी आज नहीं है। एक शतक गुजर गया। अनेक बार उनकी गाथाओं को गाया गया और उनके प्रति श्रद्धा के फूल चढ़ाए गए। रानी अब नहीं लेकिन उनकी स्मृति सुरक्षित है। वह एक अमर गाथा है जिसे आजादी के दीवानों ने आज तक गाया और भविष्य में भी गाएंगे।

*

महापुरुष दिखावे से दूर रहते हैं

महा पुरुष स्वभावत सीधे सादे और सरल चित्त होते हैं। जब सादगी महत्ता के साथ मिल जाती है तब वह सोने मे सुगन्ध का काम करती और महत्ता को अलकृत कर देती है। जो वास्तविक रूप से महान होते हैं वे चुपचाप अपना काम करते हैं। थोथे और यश के भूखे व्यक्ति ही अधिक शोर मचाते और प्रदर्शन करते है।

एक बार महान् ईश्वरचन्द्र विद्यासागर एक बडे भोज में आमत्रित किए गए। वे अपने सादे कपडों में ही भोज में सम्मिलित होने के लिए चले गए। द्वार-रक्षकों ने उनको आवारा व्यक्ति समझकर भीतर न जाने दिया। इस पर विद्यासागर अपने घर लौट गए। घर पहुँच कर उन्होंने बढिया वस्त्र धारण किए और पुन द्वार पर जा पहुचे। द्वार रक्षक उन्हें बडे सम्मान के साथ अन्दर ले गए। जब उनके सामने खाना रखा गया तो उन्होंने कोई पदार्थ न खाया और अपना कीमती शाल थालो के पास रखकर वे उसे खाना खाने की प्रेरणा करने लगे।

पहले तो मेहमानों और मेजबान ने यहसमझा कि विद्यासागर मजाक कर रहे हैं। परन्तु उन्हें शीघ्र ही यह पता लग गया कि यह बात नहीं है। आश्चर्य में डूबे हुए मेजबान ने विनय पूर्वक इस का कारण पूछा। विद्यासागर ने कहा "आप मेरे व्यक्तित्व की अपेक्षा मेरे कपडों का अधिक सम्मान करते प्रतीत होते है इसलिए मैं अपने शाल को खाना खाने के लिए कह रहा हू।"

सम्मान पद में है या मानवता में ?

सिकन्दर ने किसी कारण से अपनी सेना के एक सेनापति से रुष्ट होकर उसे पदच्युत करके सूबेदार बना दिया। कुछ समय बीतने पर उस सूबेदार को सिकन्दर के समक्ष उपस्थित होना पडा। सिकन्दर ने पूछा—"मैं तुमको पहले के समान प्रसन्न देखता हू, बात क्या है ?"

सूबेदार बोला-"श्रीमान्! मैं तो पहले की अपेक्षा भी सुखी हू। पहले तो सैनिक और सेना के छोटे अधिकारी मुझ से डरते थे। मुझसे मिलने मे सकोच करते थे, किन्तु अब वे मुझसे स्नेह करते हैं। प्रत्येक बात मे मुझसे सम्मति लेते हैं। उनकी सेवा करने का अवसर तो मुझे अब मिला है।"

सिकन्दर ने फिर पूछा—"पदच्युत होने पर तुम्हे अपमान नहीं प्रतीत हुआ ?"

सूबेदार ने कहा—'सम्मान पद में है या मानवता मे ? उच्चपद पर कोई प्रमाद करे, दूसरों को सतावे, रिश्वत आदि ले और गर्व में चूर रहे तो वह निन्दा के योग्य है। वह तो बहुत तुच्छ है। सम्मान तो है दूसरों की सेवा करने में, कर्त्तव्य निष्ठ रहकर सबसे नम्र व्यवहार करने में और ईमानदारी मे, भले ही वह व्यक्ति सैनिक हो या उससे भी छोटा गाव का चौकीदार।'

सिकन्दर ने कहा—'मेरी भूल पर ध्यान मत देना। तुम फिर सेनापति बनाए गए।

❀

विदेशी पूंजी के बल पर भारत में धर्म-परिवर्तन

ईसाई पादरियों की करतूत

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाके प्रधान स्वामी अभेदानन्द जी ने बिहार में धर्म परिवर्तन की नीति देखकर बिहार आर्य प्र०सभाके आग्रह पर २० दिनों तक राज्य का दौरा करने का निश्चय किया है। इस सिलसिले में वे रांची, लोहरदगा, गुमला, सिमडेगा, खूटी, हजारी बाग, धनबाद, पलामू और सिंहभूमि की यात्रा कर रहे हैं। २२ २३ जुलाई को हजारी बाग जिला आर्य समाज प्रतिनिधियों का सम्मेलन हुआ।

गत ४ जुलाई को स्थानीय आर्य समाज भवन में उन्होंने पत्रकार सम्मेलन मे बताया कि हमारी सरकार जनतान्त्रिक एव असम्प्रदायवादी है, जो दुनिया के सामने आदर्श है। इस पद्धति के अनुसार हर व्यक्ति को अपने विचार प्रकट करने, धर्म एव संस्कृति कायम रखने का अधिकार है और उस अधिकार पर कोई आघात पहुँचाता है तो संविधान के अनुसार सरकार को उसकी रक्षा करनी चाहिये। उन्होंने बताया कि उसके बाद भी विदेशी ईसाई पादरी विदेशों से धन मंगाकर स्वतन्त्र भारत के अबोध बच्चों को लाखों की संख्या में ईसाई (क्रस्तान) बना रहे हैं औ विधान के प्रतिकूल हैं। उन्होंने बताया कि वे पादरी विदेशी दलाल हैं और अपनी जनसंख्या बढाकर हमें और हमारी सरकार को खतरे में डाल सकते हैं। उन्होंने बताया कि आर्य समाज यह नहीं चाहता कि वह किसी का धर्म बिगाड़े, बल्कि उसका सिद्धान्त है कि सभी जाति या धर्म के लोग अपनी परम्परा, इतिहास और विचार को जीवित रखें और उसमें यदि कोई हस्तक्षेप करेगा तो समाज उनकी रक्षा करने की कोशिश करेगा। उन्होंने कहा कि जिस प्रकार हमारी सरकार पंचवर्षीय योजना द्वारा देश का उत्थान करना चाहती है उसी प्रकार इन विदेशी पादरियों ने अपनी योजना बनाई है और विदेशी पूंजी के बल पर धर्म परिवर्तन की योजना पूरी कर अपनी जन संख्या बढ़ा रहे हैं। उन्होंने कहा कि इनके जितने कालेज, स्कूल या छात्रावास हैं, सभी में भगाये और छिपाये गये छात्र और छात्रायें मिलेंगी। एक प्रान्त का भगाया गया छात्र दूसरे प्रान्त में रखा जाता है।

उन्होंने बताया कि हिन्दी आन्दोलन को अभाड़ना हमारा उद्देश्य नहीं है, बल्कि हमारे उचित विचार सरकार मानले और किसीका अहित भी न हो यही हमारा आन्दोलन है। अन्त में उन्होंने बताया कि नियोगी कमीशन जैसा एक कमीशन बिहार में नियुक्त करने की सिफारिश की गई है और आशा है बिहार के मुख्य मन्त्री शीघ्र ही कोई उचित कदम उठावेंगे।

—(आर्यावर्त पटना)

छोटानागपुर में मिशनरी प्रचारकों की सक्रियता जारी

सामना करने के लिए आर्य-समाज की नई योजना

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रचार विभाग ने आज यहा सूचित किया है कि बिहार को ईसाई धर्म-प्रचारकों के कुत्सित प्रचार से बचाने तथा बहकाये हुए आदिवासियों एवं अन्य व्यक्तियों को वस्तु स्थिति से परिचित कराने के लिए आर्य-समाज एक योजना पर विचार कर रहा है।

इस योजना के अनुकूल पृष्ठ-भूमि तैयार करने के लिए अभी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष स्वामी अभेदानन्द जी महाराज और बिहार के उप-प्रधान आचार्य पण्डित रामानन्द जी शास्त्री छोटानागपुर में आदिवासी-क्षेत्र के दौरे पर निकले हुए हैं। उन्होंने बिहार शरीफ, नवादा आदि होते हुए रांची, लोहर-दगा, सिमडगा, खूंटी, चाईबासा, चक्रधरपुर और जमशेदपुर के ईसाई प्रभावित क्षेत्रों का न केवल निरीक्षण ही किया है, अपितु सार्वजनिक सभाओं में तथा पत्रकार-गोष्ठियों में राष्ट्रीय संस्थाओं और समाज सेवी कार्यकर्ताओं का ध्यान भी इस ओर खींचा है। इन स्थानों में जनता ने उन्मुक्त-हृदय से आर्य नेताओं का स्वागत किया है और थैलियां भी भेंट की हैं।

हजारीबाग में आर्य समाज के कार्य कर्ताओं का एक बहुत बड़ा सम्मेलन बैरिस्टर श्री श्यामकृष्ण सहाय के सभापतित्व में आगामी २२-२३ जुलाई को होने जा रहा है। इसका उद्घाटन सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष स्वामी अभेदानन्द जी करेंगे। सम्मेलन में दिल्ली स्थित केन्द्रीय आर्य-प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री लाला रामगोपाल भी सम्मिलित हो रहे हैं।

ईसाइयों का व्यापक प्रचार

अपनी विज्ञप्ति में बिहार राज्य आर्य-प्रतिनिधि सभा के प्रचार विभाग ने यह बताया है कि छोटा-नागपुर में आर्यसमाजों का सगठन मंत्रियों की ओर से बराबर यह सूचना प्राप्त होती रही है कि वर्तमान भीषण अकाल और भय कर महगी से पीड़ित मुंडा उरांव आदि आदिवासियों को विभिन्न प्रलोभनों में फंसाकर विदेशी ईसाई मिशनरियों ने बड़े पैमाने पर उनका धर्म परिवर्तन किया है। पिछले दस वर्षों में इस प्रकार की विदेशी मिशनरियों की सख्या पाँच हजार के लगभग बढ़ चुकी है। अमरीकी दवा और दूध-घी बांट-बांट कर दूर जगली अंचलों में फैली हुई इन मिशनरियों ने छोटानागपुर क्षेत्र की आधी से अधिक आबादी को ईसाई बना लिया है। और झारखण्ड पार्टी जैसे राजनीतिक दलों के साथ सम्बन्धित होकर दक्षिण बिहार की राजनीतिक सत्ता ही हथियाने का बहुत बड़ा षडयन्त्र चलाया जा रहा है।

आर्य-प्रतिनिधि सभा को यह भी पता चला है कि रांची में तथा पटने में विदेशी इसाईयों के दो ऐसे केन्द्र हैं, जहा तीन तीन माह का प्रशिक्षण देकर ईसाई प्रचारकों को तैयार किया जाता है और बताया जाता है कि वे हिन्दू जाति की अस्पृश्यता के शिकार छोटी-छोटी चमार, पासी, दुसाध और डोम जातियों का धर्म- परिवर्तन कर उनकी राष्ट्रीय मान्यताओं को बदलने का प्रयत्न करें। ईसाई प्रचारकों को बहुत बड़े पैमाने पर प्रशिक्षण देने के लिए पटना स्थित कुरजी के निकट ईसाई मिशनरी की ओर से एक केन्द्र खोला जाने वाला है। इस प्रशिक्षण महाविद्यालय के लिए सारी योजना अमेरिका से बनकर आ रही है।

खूनी शेर

(लेखक—श्री एम० पी० आर्य)

एक बार मुगल बादशाह औरंगजेब को एक शिकारी ने महा भयकर खूनी शेर भेंट किया। बादशाह ने उसे एक मजबूत पिंजड़े में बन्द कर दिया। किन्तु शेर इतनी जोर से दहाड़ता था कि आसपास के नर-नारी भय के मारे काप जाते थे।

बादशाह ने अपने दरबार में बड़े अभिमान से एक दिन कहा—"जैसा शेर मेरे पास है वैसा शक्तिशाली शेर आज इस धरती पर नहीं है।"

यह सुनकर दरबारियों ने हा में हा मिलाई, पर उस दरबार में एक दरबारी ऐसा भी उपस्थित था जो किसी भी तरह इस बात को नहीं सह पाया। वह उठकर खड़ा हो गया और बोला—"जहापनाह! मेरे पास इससे भी अधिक शक्तिशाली शेर है!" उस दरबारी का नाम महाराज यशवन्तसिंह था।

यह सुनकर बादशाह क्रोध से कापने लगा। वह मुट्ठिया बाधकर बोला—

"महाराज यशवन्तसिंह! अगर आपका शेर हमारे शेर से कमजोर बैठा तो, याद रखिए फिर आपकी गर्दन उड़ा दी जाएगी। अच्छा है कि आप अब भी मजूर करलें कि मेरी ही बात ठीक है।"

महाराज यशवन्तसिंह मुस्कराते हुए बोले—

"जहापनाह! क्षत्रिय अपनी बात से कभी मुकरते नहीं। उन्हें अपनी गर्दन कटने से अधिक चिन्ता अपनी बात रखने की होती है। मैं चाहता हू कि कल दोनों शेरों की लड़ाई हो। यदि मेरा शेर हार जाए तो आप बेशक मेरी गर्दन तलवार से उड़ा सकते हैं।"

यह सुनकर दरबारियों में सन्नाटा छा गया। थोड़ी ही देर मे यह बात सारे शहर में फैल गई।

दूसरे दिन ठीक समय शेरों की लड़ाई देखने के लिए बहुत से लोग इकट्ठ हो गए। जिस मैदान मे शेरों के पिंजड़े रखे थे उसके चारों ओर भीड़ के मारे पैर रखने की जगह नहीं थी।

बादशाह भी ठीक समय पर राजसिंहासन पर आ बैठे। सामने ही महाराज यशवन्त सिंह मुस्कराते हुए बैठे थे।

बादशाह ने देखा कि मैदान में एक ही पिंजड़ा रखा है। दूसरा शेर वहाँ नहीं है।

बादशाह बोले—"महाराज यशवन्तसिंह! आपका शेर कहाँ है? दिखलाई नहीं देता! मैदान में तो एक ही पिंजड़ा है।"

महाराज बोले—

"जहापनाह! मेरा शेर आजाद शेर है। वह पिंजड़े मे बन्द नहीं रहता। इसी लिए तो मैं कहता था कि आपके शेर से भी अच्छा शेर मेरे पास है।"

यह सुनकर बादशाह के होंठ मारे गुस्से के कापने लगे। बोले—

"फिर देर क्यों कर रहे हो? अपने शेर को मेरे शेर के पिंजड़े मे छोड़ते क्यों नहीं?"

ज़ब्त होने योग्य पुस्तक

सहयोगी हिन्दुस्तान यत्र-तत्र-सर्वत्र के शीर्षक से लिखता है —

पिछले कुछ दिनों से अखबारों में 'तारागढ की लड़ाई' नामक पुस्तक की चर्चा है। यह लडाई आजकल नहीं, कई सौ साल पहले अजमेर मे हुई थी। परन्तु उस लड़ाई का अपने टग से वर्णन करने वाली यह पुस्तक हाल में ही प्रकाशित हुई है। पुस्तक छपी है आगरा के मुस्तफाई प्रेस में और उसके ऊपर लिखा है। 'सही हालात-तारागढ़ की लडाई जगनामा मीरा सैयद हुसैन।' पुस्तक में कहा गया है कि मुस्तफाई प्रेस मे हर प्रकार की धार्मिक पुस्तकें मिल सकती हैं। हिंदी में उन्हें इस

यह सुनकर महाराज यशवन्तसिंह ने अपने पास खड़े दस वर्ष के अपने पुत्र के सिर पर हाथ रखा और स्नेह भरे स्वर में बोले—

"मेरे नन्हे शेर! आज मेरी लाज तेरे ही हाथों है।"

यह सुनकर उस कुमार की आखें छलछला आई। बोला—"पिता जी! आप चिन्ता क्यों करते हें? इस देश के क्षत्रियों की शान मिटाने वाला कभी पैदा नहीं हुआ।"

यह सुनकर महाराज यशवन्तसिंह ने अपने प्यारे पुत्र के गाल थपथपाए और उसे ले जाकर पिंजड़े के पास खड़ा कर दिया। तब वह ऊचे स्वर में बोले—

"जहापनाह यही है! मेरा बहादुर शेर। आज्ञा दीजिए कि शेरों का युद्ध शुरू हो।"

बादशाह का हुक्म पाते ही कुछ शिकारियों ने उस ख़ूनी शेर का पिंजड़ा खोला और वह बहादुर लड़का छलाग मार कर उस पिंजड़े में घुस गया। यह देखकर सब लोग मन ही मन काप गए। सबकी सांसें बन्द हो गई। सब स्तब्ध मुंह फाड़े खड़े थे।

सबने देखा कि उस तेजस्वी बालक ने जब स्थिर दृष्टि से उस शेर की ओर देखा तो वह बिल्ली की तरह पूछ हिलाता पिंजड़े में एक ओर बैठ गया।

बादशाह की आज्ञा से उस भयंकर शेर के शरीर में भाले छेदकर उसे लड़ने के लिए मजबूर किया गया।

जब गुस्से मे भरकर वह दहाड़ा और साथ ही उस बालक पर झपटा तो वह दाव बचाकर एक ओर खड़ा हो गया। साथ ही उसने कमर से कटार निकाल ली।

पास खड़े महाराज यशवन्तसिंह ने कहा—"यह क्या करते हो बेटा? शेर के पास कोई हथियार नहीं है। निहत्थे प्राणी से क्षत्रिय निहत्थे ही लड़ते हैं।"

यह सुनकर उस लडके ने कटार फेंक दी और उछलकर उस शेर की गर्दन से जा चिपटा। थोड़ी ही देर में उसने शेर के जबडे चीर दिए। शेर भीगे चूहे की भाति दुबककर एक ओर जा बैठा।

आसपास खड़े लोग पुकारने लगे—"बस! अब कुमार को बाहर निकाल लो। बाहर निकालो। जंगल का शेर हार गया। कुमार को बाहर निकालो।"

बादशाह के हुक्म से उस बहादुर बालक को बाहर निकाला गया। उसके हाथ व कपड़े शेर के खून से लथपथ हो गए थे।

महाराज यशवन्तसिंह ने झपट कर अपने लाड़ले नन्हें शेर को छाती से लिपटा लिया और भीड़ चिल्ला उठी—

"महाराजकुमार की जय हो!"

"महाराज यशवन्तसिंह की जय हो!"

लिए प्रकाशित किया गया है कि हिन्दुओं मे इस्लाम का प्रचार हो और वे भी इस्लाम की खूबियों से परिचित हो सकें।

वे सही हालात किस ढग के है उसका नमूना देखिए —

"...वहा से सिंध को जेरजबर करते हुए मुल्तान का मुहासरा किया। यहा का राजा आनन्द था जिसका लडका जयपाल था। गरज कि राजा मारा गया और उसका लडका कैद हुआ। अब तैयब भी यहीं पर शहीद हुए। चुनाचे काफिरों के जो बुत खाने सामने आए उनको फतह करते हुए लश्करे इस्लाम, जिसकी तादाद सात हजार सवार, पचास हजार पियादे, सही सलामत हिन्दोस्तान को रवाना हुए और किला इन्दरपत के राजा चन्द्रपाल से लडाई हुई जिसके साथ सब राजा शामिल होकर मैदान जंग में आए। सन २०४ हिजरी का वाकया है। सब राजा लडाई हार गए और लश्करे इस्लाम फत हयाब हुआ। आखिर तमाम मकामात को फतह करके लश्करे इस्लाम पोखर पर खेमाजन हुआ। इस मैदान पर पानी का निशान न था। नमाज का समय हुआ तो जनाब करामतयाब वरगुजीदए बार-गाह जनाब मीरा सैयद हुसैन साहब के वजू के वास्ते पानी दरकार हुआ तो वहीं जमीन पर नेजा मारा। अल्ला की कुदरत से पानी का चश्मा जारी हुआ जो अब पोखर के नाम से मशहूर है।"

जिस स्रोत को पोखर का नाम दिया गया है वह पुष्कर नाम का प्रसिद्ध तीर्थ है और मीरा सैयद हुसैन के पुरखों के जन्म से सदियों पहले हिन्दू उसे अपना पवित्र स्थान मानते आए हैं। अब 'सही हालात' के नाम से बताया गया है कि वह पुष्कर और कुछ नहीं, केवल वजू के लिए पानी देने को सैयद साहब के भाले की नोक से तैयार किया गया सोता मात्र है।

'सही हालात' के बाद अब 'इस्लाम की उन खूबियों' की भी एक बानगी देख लीजिए जिनसे हिन्दुओं को परिचित कराने के लिए यह पुस्तक लिखी गई है। राजा पृथ्वीचन्द का उल्लेख करते हुए कहा गया है। " बहुत नादिम हुए। हाथ जोड़ कर खुशामद करने लगे कि आपके हुक्म के बाहर नहीं। आपने फरमाया कि ईमान लाओ खुदा और रसूल पर और बुतपरस्ती छोड़ दो और बुतों को तोड दो। इस पर राजा ने कहा कि आप यह करामात दिखा दें कि अना सागर का पानी जो हर साल सदमा से टूट जाता है, आप बाध दें कि कि वह फिर न टूटे। तब ईमान ले आए गे।

"आपने कहा अच्छा—गाय, बैल, आटा जिस कदर हो सके, जल्द हाजिर करो, अभी बाध तैयार होता है। राजा ने हजारो बैल और मनों आटा भेज दिया। आपने गाजियों से फरमाया, लो बैल जिबह करो और खाओ, खाल और हड्डिया बाध की जगह डाल दो। चुनान्चे ऐसा ही किया गया।"

"राजा को खबर मिली तो बैल जिबह करने से गमगीन हुआ। फौरन बेकरार होकर आपके पास आया और पूछा, बाध तैयार है ? आपने फरमाया, देख ले। जब उसने देखा तो बाध तैयार था। कहा कैसे मालूम हो कि वह हमेशा कायम रहेगा आपने उसी वक्त आस्मान की तरफ देखा। खुदा की कुद-रत से ऐसा पानी बरसा कि बाध के ऊपर आ गया मगर बाध को नुकसान न पहुँचा। फिर तो वह बड़ा शर्मिन्दा हुआ और खफा होकर कहने लगा तुमने बुरा किया जो हमारे बैलों को जिबह कर डाला। अगर जान की खैर चाहते हो तो अभी बैल जिला दो, वरना हम से लडने को तैयार हो जाओ।"

"आपने फरमाया कि तूने रोशन अली दरवेश की अंगुली बेकसूर काटी है, अभी जोड़ दें। हम बैलों को जिला देंगे। वह लाचार हो गया और उसने लडाई की तैयारी कर दी।'

"आपने भी अपनी बहादुर फौज से पृथ्वीचन्द पर चढ़ाई कर दी। दिलेराने इस्लाम ने खुदा की मदद से काफिरों के मुंह फेर दिए। अब आपकिले

के करीब पहुचे तो एक टुकडा पहाड का आदू के ओर से आप पर डाला। आपने देखा तो कोडे से इशारा किया, वह पहाड का टुकड़ा वहीं लौट गया। अब कुछ बस न चला तो काफिर भाग कर किले मे बन्द हो गए और लश्करे इस्लाम पर तीरों का मेह बरसाने लगे।"

"लेकिन दिलेरान और गाजियान कब ख्याल में लाते थे। फौरन मिलकर जो 'अल्ला हो अकबर' का नारा लगा कर हमला किया और आपने जो खिग को किले पर डाला तो अल्ला की कुदरत से और अपनी करामात से पहली टाप से जो तारागढ सात कोस ऊचा था, साढे तीन कोस ज़मीन मे घुस गया और बेदीनों को कत्ल कर दिया।"

'असली' हालात के नाम से बयान किए गए इन अलिफलैलाई किस्सों और 'इस्लाम की खूबी' के नाम पर एकमात्र वर्णित तथ्य 'काफिरों के कत्ल' से भावी सन्तति का प्रत्येक पाठक समझेगा कि इस पुस्तक का लेखक कोई खब्ती है और उसका इलाज अकबर इलाहाबादी बता गए हैं —

हम उन कुल किताबों को
काबिले जब्ती समझते हैं
कि जिनको पढके बेटे
बाप को खब्ती समझते हैं
(हिन्दुस्तान २६ ६ ५८)

कोई भी प्राणी अन्तरिक्ष की उड़ान सहन करने में समर्थ

ब्रसेल्स। प्रथम दो स्पूतनिकों पर रूसी वैज्ञानिकों की एक प्रारम्भिक रिपोर्ट में बताया गया है कि रूसी परीक्षणों ने यह जाहिर कर दिया है कि कोई प्राणी अन्तरिक्ष की उडान को भलीभांति सह सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय भू भौतिकी वर्ष के ब्रसेल्स कार्यालय से प्रकाशित एक रिपोर्ट में लाइका कुत्ते पर रूस के परीक्षणों का उल्लेख किया गया है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि परीक्षण के परिणाम मनुष्य की अन्तरिक्ष यात्रा के लिए आगे खोज जारी रखने के लिए उत्साहप्रद है।

लाइका की प्रतिक्रिया के बारे में कहा गया है कि कुत्ते ने न केवल उपग्रह के अन्तरिक्ष में पहुचने की प्रक्रिया को बल्कि अपने वृत्त में उसके घूमने की अवस्थाओं को भी सहन कर लिया।

उपग्रह को अन्तरिक्ष में चढाते हुए लाइका को इस स्थिति मे रखा गया कि उस पर गति तीव्रता का प्रभाव छाती से पीठ की तरफ हो और जिस कमरे मे वह हो उसके फर्श से वह चिपट जाए।

चढाई के समय लाइका के दिल की धड़कन तिगुनी हो गई और श्वास प्रश्वास की गति तिगुनी चौगुनी हो गई।

उपग्रह जब अपने अयनवृत्त में चला गया तो भारहीनता की अवस्था पदा हो गई और इस हालत में कमरे के फर्श से लगे लाइका के शरीर पर से दबाव हट गया और अपने हाथ-पाव के पुट्ठे को सिकोड कर वह आसानी से उठ गई उसकी ये हरकतें बहुत थोडी देर मे और निर्बाध रूप से पूरी हो गई।

दिल की धड़कन बहुत थोड़ी देर तक तेज रहने के बाद वह निरन्तर कम होती गई और फिर सामान्य हो गई। प्रयोगशाला में परीक्षण के समय हृदय की गति को सामान्य होने में जितना समय लगा, अन्तरिक्ष में वास्तविक उडान के बाद उसके दिल की धडकन सामान्य होने मे उससे तिगुना समय लगा।

उपगृह के अयनवृत्त मे चले जाने के बाद जब भारहीनता की हालत पैदा हो गई तो लाइका के रुधिर प्रवाह और श्वास की गति भी सामान्य हो गई।

इस भारहीनता ने इस जन्तु की मनो-वैज्ञानिक हलचलों मे कोई तात्विक और स्थायी परिवर्तन नहीं किया।

आर्य समाज का परिचय

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

अध्याय ४

दर्शन शास्त्र

दर्शन छ हैं—न्याय, वैशेषिक, साख्य, योग, मीमांसा और वेदान्त।

इनके अनुयायी शताब्दियों से आपस मे लड़ते आ रहे थे। वेदान्ती दूसरो को 'मूर्ख' कहते थे। दूसरे लोग वेदान्तियों को पथ भ्रष्ट कहते थे। स्वामी दयानन्द जी ने ही सर्वप्रथम बताया कि छहों दर्शन एक दूसरे के विरोधी नहीं हैं बल्कि इन छहों को पढकर मनुष्य एक सुनिश्चित परिणाम पर पहुचता है।

दर्शनों में वेदों और उपनिषदों की परिभाषाओं की व्याख्या की गई है।

यूरोपियन हमारे उपनिषदों की दिल खोल कर प्रशसा करते है। देखो युरोप का एक महान् दार्शनिक क्या कहता है?—

"उपनिषदों जैसा उपयोगी और ऊचा उठाने वाला कोई दूसरा अध्ययन नहीं है। उपनिषदों से मुझे जीवन में शाति मिली है और मरते समय भी मुझे इन्हीं से शाति मिलेगी।"

(शापनहार)

(देखें लैक्चर्स आन् वेदात बाई प्रो० मैक्समूलर पृ० ८)

आर्य धर्म्म दार्शनिक धर्म्म है। मैक्समूलर कहते हैं —

"अन्य सब देशों में दर्शन ने धर्म की और धर्म ने दर्शन की निन्दा की है परन्तु भारत ही अकेला ऐसा देश है जहा दर्शन और धर्म ने मिल कर एक साथ काम किया है। यहा धर्म ने दर्शन से स्वतन्त्रता ग्रहण की और दर्शन ने धर्म से अध्यात्म तत्त्व प्राप्त किया।"

(देखो सिक्स सिस्टम्स आव इण्डियन फिलासफी पृ० ४०९)

त्रैतवाद

३ पदार्थ अनादि हैं—ईश्वर, जीव और प्रकृति।

वेद बताते है कि आत्मा और प्रकृति पर परमात्मा का शासन होता है।

ईसाइयत और इस्लाम की मान्यता है कि यह जगत् अभाव से उत्पन्न हुआ है परन्तु आर्य लोग यह मानते है कि अभाव से किसी वस्तु की उत्पत्ति नहीं हो सकती। (देखो भगवद्गीता ११, १६) आधुनिक विज्ञान भी यही सिखाता है।

बहुत से वैज्ञानिक ईश्वर और आत्मा की सत्ता को स्वीकार नहीं करते परन्तु उच्चकोटि के विज्ञान वेत्ता इनकी सत्ताओं को स्वीकार करने के लिए विवश हैं। यजुर्वेद मे कहा गया है कि 'तदेजति तन्नैजति' अर्थात वह ईश्वर गति देता है परन्तु स्वय गति में नहीं आता। यूनान के बडे दार्शनिक अरस्तू ने भी वेद के इस कथन का समर्थन किया है।

(देखें सेविन एजेज़ पृ० ४६)

बिना गति के ससार की पुन उत्पत्ति नहीं हो सकती और गति देने वाला ईश्वर ही है।

प्रकृति के नित्य होने मे विज्ञान के अन्दर कोई मत भेद नहीं है। सभी विज्ञान वेत्ता उसे नित्य मानते हैं।

जीवात्मा की सत्ता को स्वीकार करने में यद्यपि वैज्ञानिकों में मतभेद है तथापि उच्चकोटिके वैज्ञानिक न केवल जीवात्मा की सत्ता ही स्वीकार करते

अपितु उसे नित्य भी मानते हैं।

(देखें साइन्स एण्ड रिलीजन
वाई सेविन मेन आव साइन्स, ६-२६-२५)

ईसाई और मुसलमान दलील देते हैं कि परमात्मा सर्व शक्तिमान् है अत वह अभाव से भाव की उत्पत्ति कर सकता है। निश्चय ही परमात्मा अपने अकाट्य नियमों के विरुद्ध कुछ नहीं कर सकता। ऐसी बहुत सी चीजें हैं जिन्हें वह नहीं कर सकता। न तो वह अपने को मिटा सकता है और न अपने जैसा कोई और परमात्मा बना सकता है। यदि वह ऐसा कर सकता तो वह सर्व शक्तिमान न होता। सर्व शक्तिमान का अर्थ केवल यह है कि वह अपनी सामर्थ्य से सृष्टि की उत्पत्ति करता पालन करता और उसका संहार करता है।

सृष्टि

हम मानते हैं कि दिन और रात की तरह सृष्टि की उत्पत्ति और संहार का क्रम अनादि काल से चला आरहा है। (देखें ऋग्वेदमंडल१०,१६०,३ सूर्या चन्द्रमसौ) सृष्टि का आदि और अन्त नहीं है।

सृष्टि उत्पत्ति के कारण

परमात्मा सृष्टि का निमित्त कारण है प्रकृति उपादान कारण है और समय, स्थान और परमात्मा का ज्ञान आदि २ साधारण कारण हैं।

एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायगी। स्वर्णकार गहना बनाता है। यहां स्वर्णकार निमित्त कारण है स्वर्ण उपादान कारण है और स्वर्णकार के औजार आदि साधारण कारण हैं।

सृष्टि की उत्पत्ति भी इसी प्रकार होती है।

सृष्टि संवत्

इससमय हमारा सृष्टि सम्वत् १६७२६४६०५६ है। इस संवत् की गणना सूर्यसिद्धान्त के अनुसार होती है। आधुनिक विज्ञान-वेत्ता और खगोल विद्या-विशारद भी इसकी प्रामाणिकता को न्यूनाधिक रूप में स्वीकार करते हैं।

त्रैतवाद

आज कल वेदान्त फिलासफी की कई विचार धाराएं प्रचलित हैं। एक शंकराचार्य का अद्वैतवाद दूसरा रामानुज का विशिष्ट अद्वैतवाद, तीसरा वल्लभ का शुद्ध अद्वैतवाद है। माधव का भी द्वैतवाद है।

स्वामी दयानन्द का मत है कि वेद जिस त्रैतवाद का प्रतिपादन करते हैं उसके अनुसार ईश्वर, जीव और प्रकृति तीनों पृथक् २ अनादि नित्य सत्ताएं हैं।

(देखें ऋग्वेद १, १६४, २० द्वा सुपर्णा)

अद्वैत प्रणाली के अनुयायी कहते हैं कि 'समस्त विश्व परमात्मा है' जीव और प्रकृति परमात्मा से पृथक् नहीं हैं। वे यह भी कहते हैं कि परमात्मा स्वयं जीव और प्रकृति है। स्वामी दयानन्द की स्थापना है कि समस्त विश्व परमात्मा नहीं है परन्तु समस्त विश्व परमात्मा में समाया हुआ है यद्यपि वह उससे अलग है।

यदि जीव और प्रकृति की उत्पत्ति परमात्मा से होती तो उनमें परमात्मा की विशेषताएं होतीं परन्तु बात इससे भिन्न है।

यदि विश्व में परमात्मा के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु की सत्ता न होती तो वह इस प्रकार के जटिल विश्व के निर्माण का कष्ट क्यों करता ?

आत्मा

आत्मा चेतन एवं अविनाशी है। हमारे शरीरों का अन्त होता है आत्मा का अन्त नहीं होता।

आत्मा कर्म करने में स्वतन्त्र है वह अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के कर्म करता है परन्तु कर्मों का फल भोगने में स्वतन्त्र नहीं है। परमात्मा की व्यवस्था से वह अच्छे और बुरे कर्मों का फल भोगता है।

परमात्मा ने सृष्टि की रचना इस लिए की है कि जीव सत्कर्म करें, मोक्ष प्राप्ति का उद्योग करे और कर्मों का फल भोगे। आत्मा में ज्ञान और

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

(महत्त्वपूर्ण निश्चय)

आर्य समाज ऐक्ट

निश्चय हुआ कि आर्य समाज ऐक्ट बनाया जाय और श्री मदन मोहन जी सेठ से प्रार्थना की जाय कि वे इस कानून का मसविदा तय्यार करें।

(अन्तरंग ९-१२-४५)

दयानन्द गृह त्याग शताब्दी

दयानन्द गृह त्याग शताब्दी मनाए जाने के विषय में पं० भीम सेन जी शास्त्री का एक पत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती का गृह-त्याग या अपने पिता के अन्तिम दर्शन के प्रसंग ऐसे हैं जिनके लिए यह सभा शताब्दी मनाने की आवश्यकता नहीं समझती।

(अन्तरंग ३०-६-४६)

महर्षि दयानन्द की प्रामाणिक जीवनी

सार्वदेशिक सभा द्वारा महर्षि दयानन्द की प्रामाणिक जीवनी प्रकाशित व प्रमाणित कीजाय इस प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि यह कार्य हाथ में लिया जाय। ऋषि के विभिन्न जीवन चरित्रों से उन घटनाओं को छाँटा जाय जिनमें विभिन्नता पाई जाती हो।

(अन्तरग ३० ६ ४६)

क्रिया है। इन्हें सार्थक करने के लिए ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रिया प्राप्त होती है। आत्मा के सौन्दर्य के लिए हमारा ज्ञान शुद्ध पवित्र होना चाहिए और इन्द्रिया बलवान एव यशस्वी होनी चाहिए। यही सच्चा वैदिक धर्म है। जीवात्मा ब्रह्म नहीं हो सकता। अहं ब्रह्मास्मि उपदेश भ्रमपूर्ण है।

आवागमन

मनुष्य का पुनर्जन्म होता है चाहे उसे मनुष्य की योनि प्राप्त हो या पशु तथा वृक्षादि की। एक शरीर से दूसरे शरीर में जाने में आत्मा को कुछ समय लगता है।

मोक्ष प्राप्ति तक जन्म और मरण का चक्र चलता रहता है।

पुनर्जन्म का सीधा सम्बन्ध मनुष्य के कर्मों से होता है।

कर्म फल का सिद्धान्त वैदिक धर्म का एक विशिष्ट सिद्धांत है। समझदार युरोपीय विद्वान भी इसका समर्थन करते हैं।

जो लोग कर्म के सिद्धांत और पुनर्जन्म में विश्वास नहीं रखते वे जीवन की पहेली को हल करने में असमर्थ रहते हैं। उदाहरण के लिए यदि उनसे यह पूछा जाय कि "कोई व्यक्ति अंधा या बहरा क्यों पैदा होता है? तो उनसे इसका उत्तर नहीं बन पड़ता। वे केवल यह कह देते हैं 'परमात्मा की ऐसी ही मरजी थी। उसने अपनी मर्जी से किसी को अंधा और किसी को सनाखा (आखों वाला) बना दिया है।"

इस प्रकार की धारणा से परमात्मा के गुणों पर आक्षेप आता है। वह न्यायी है या नहीं? अंधा व्यक्ति उससे पूछेगा "भगवन्! (बाइबिल या कुरान का खुदा) मेरा क्या कसूर था कि आपने मुझे अंधा बना कर दंड दिया है। यदि आपने बिना कसूर के मुझे दंड दिया है तो आप न्यायी नहीं हैं। आप से तो वह जज कहीं अच्छा है जो बिना कसूर के किसी को सजा नहीं देता।"

यद्यपि ईसाई और मुसलमान भाई इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकते हैं तथापि हिन्दू अथवा [illegible] कह देगा कि यह अंधा अपने पूर्व जन्म के कर्मों का फल भोग रहा है। (क्रमशः)

आर्य समाज के नेताओं की सेवा में निवेदन-पत्र

आर्य समाज के दसों नियम तथा सिद्धान्त तो बहुत ही श्रेष्ठ तथा कल्याणकारी हैं किन्तु हम लोग उनका पालन नहीं करते, पुस्तकों तक ही सीमित हैं। दसों नियमों का तथा वर्णाश्रम धर्म का पालन सोलह संस्कार, पंच यज्ञ, वेद पाठादि सब आर्य समाज की पुस्तकें ही कर रही हैं। इसी लिए हम लोग कलंकित हो रहे हैं। जो लोग पालन करते हैं वे धन्यवाद के पात्र हैं परन्तु पालन करने वाले बहुत ही कम हैं। हम दूसरों की आलोचना करना जानते हैं किन्तु अपना मुख दर्पण में नहीं देखते कि हम कैसे हैं। आपको हम लोगों का सुधार करने की आवश्यकता है।

आर्य समाज के दस नियम हैं जिनमें जो चार नियम का पालन भी नहीं करते उनको सभासद बनाना तथा रखना बहुत ही अनुचित है। प्रवेश पत्र के अनुसार कम से कम एक साल परीक्षा करके सभासद बनाना उचित है। जो बिना परीक्षा लिये सभासद बनाते हैं वे आर्य समाज के दुश्मन हैं। दस नियमों में कम से कम चार नियमों का पालन करें उनको सभासद, पाँच नियमों का पालन करें उनको मंत्री छ नियम का पालन करें उनको प्रधान और जो सात नियमों का पालन करें उनको उपदेशक बनाया जावे तभी आर्यसमाज जीवित रहसकता है।

बहुत से सभासद ऐसे हैं जिनको यह भी मालूम नहीं कि आर्य समाज के दस नियम कौन-कौन से हैं। वे सब अनार्य ही कहलानेके योग्य हैं। वानप्रस्थी बनकर जो ममता का और असत्य का त्याग नहीं करते वे बड़े ही पाखण्डी हैं, उनका वानप्रस्थ लेना ही निष्फल है और जो बिना वैराग्य के, बिना विवेक के और बिना विद्वता के सन्यास लेते हैं वे सब बहुरूपियों के ही समान हैं। जो सन्यासी सत्योपदेशादि नहीं करते उनको सत्यार्थ प्रकाश के पाँचवें समुल्लास में पतित और नरकगामी बतलाया है।

सन्यासी के गुण प्राप्त करके सार्वदेशिक सभा की लिखित स्वीकृति लेकर सन्यास लेवे उसी को आर्य सन्यासी मानना उचित है और जो सन्यासी मौजूद हैं उनके गुण कर्मों पर विचार करने की आवश्यकता है।

"मूंड मुंडाये तीन गुण सिर की मिट जाय खाज।
खाने को भोजन मिले लोग कहें महाराज ॥

ऐसे सन्यासियों से भी कोई लाभ नहीं है। त्यागी, तपस्वी, सत्यवादी, सदाचारी, विद्वान् सन्यासियों की आवश्यकता है। वे ही हम लोगों पर शिक्षा के द्वारा अनुशासन कर सकते हैं और सन्मार्ग पर चला सकते है लोकैषणा और वित्तैषणा के भूखे जो पुस्तकें छपवा छपवा कर मोल बेचते हैं उन उपदेशकों तथा भजनीकों की आर्य समाज में जरूरत नहीं है। सत्यार्थ प्रकाशादि ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थों का तथा वेदों का उपदेश हो, तब ही हम पक्के आर्य समाजी बन सकते हैं। अपनी पुस्तकें छपवा कर बेचने वालों का उपदेश कराना बहुत ही अनुचित है।

आर्य समाज में अब अनाथालयों की, विधवा आश्रमों की तथा शुद्धि सभाओं की भी आवश्यकता नहीं है और जिन गुरुकुलों में, कालिजों में, पाठशालाओंमें, विद्यालयों में सरकार से सहायता आती है उनमें सरकार के नियमानुसार ही शिक्षा देते हैं, वैदिक धर्म की शिक्षा नहीं मिलती है। वे सब सरकारी स्कूलों के ही समान हैं। आर्य समाज का तो केवल नाम ही नाम है। हम लोग आर्य समाज के दस नियमों का तथा अन्य सिद्धान्तों का पालन करें, तब ही हमारा कल्याण हो सकता है।

नोट—आर्य समाज अपनी-अपनी अन्तरंग सभाओं में इस कथन पर विचार करें और वे विचार लिखकर सार्वदेशिक सभा को भेजें तो सुधार हो सकता है।

मांगीलाल वानप्रस्थी नावाँ
(कुचामन रोड वाला)

पता-मुकाम बारां जिला कोटा राजस्थान (Baran)

श्री वानप्रस्थी जी का निवेदन-पत्र विचारणीय है यद्यपि उनके सभी विचारों से सहमत होना कठिन है। (सम्पादक सार्वदेशिक)

सार्वदेशिक विद्यार्य सभा देहली की

धार्मिक परीक्षायें

प्रत्येक आर्य समाज तथा प्रत्येक आर्य विद्यालय में अनिवार्य रूप से केन्द्र रहे और पूरा यत्न किया जावे कि प्रत्येक आर्य सदस्य तथा प्राइमरी से ऊपर की कक्षाओं के छात्र और छात्राएं इनमें से किसी न किसी परीक्षा में अवश्य सम्मिलित हों।

अगली परीक्षा श्रावणी (रक्षा बन्धन) तथा अगले दिनों में दि० २६ अगस्त १६५८ को दिन में १० से १ बजे तक होगी। परीक्षार्थी सूची और शुल्क नीचे लिखे पते पर पहुंच जाने चाहियें। पुस्तकें भी यहाँ से भेजी जा सकती हैं।

नियमावली

[सन् १६५७ से पुन परिवर्तन पर्यन्त]

१—किसी भी परीक्षा में कोई भी व्यक्ति बैठ सकता है किन्तु मुख्यतया ये परीक्षाएं छात्र और छात्राओं एवम् आर्य सदस्यों के लिए हैं।

२—कम से कम ५ परीक्षार्थी होने पर किसी विद्यालय के आचार्य या आर्य समाज के प्रधान की अध्यक्षता में केन्द्र स्थापित किया जा सकता है।

३—परीक्षाएं प्रतिवर्ष श्रावणी पूर्णिमा तथा शिवरात्रि पर ली जावेंगी। आवेदन पत्र शुल्क सहित साधारणत: एक मास पूर्व भेजना चाहिए।

४—परीक्षाएं आर्य सिद्धान्त विषय में होंगी। परीक्षाओं की उपाधि, शुल्क आदि का विवरण निम्नलिखित है।

नाम उपाधि	शुल्क	प्रश्न पत्र
(१) आर्य सिद्धान्त विशारद	१ रु०	१
(२) आर्य सिद्धान्त भूषण	२ रु०	२
(३) आर्य सिद्धान्त रत्न	३ रु०	३

५—उत्तीर्ण छात्रों को उपाधि तथा प्रमाण पत्र सभा की ओर से सार्वदेशिक सभा के प्रधान के हस्ताक्षरों से युक्त प्रदान किये जायेंगे। सर्व प्रथम परीक्षार्थी को भी विशेष पुरस्कार दिया जायेगा।

६—प्रत्येक प्रश्नपत्र का पूर्णाङ्क १०० उत्तीर्णाङ्क तृतीय श्रेणी में ३३ से ४४ तक द्वितीय श्रेणी में ४५ से ५६ तक प्रथम श्रेणी में ६० से १०० अङ्क तक।

७—परीक्षा का माध्यम हिन्दी होगा। आवश्यकतानुसार अन्य भाषाओं के लिये विशेष अनुमति लेनी चाहिये।

पाठ-विधि

१—आर्य सिद्धान्त विशारद (१ प्रश्न-पत्र पूर्णाङ्क १००) [१] पञ्चमहायज्ञविधि (संध्या अर्थ सहित तथा हवन मन्त्र दैनिक) [२] आर्योद्देश्यरत्नमाला [३] व्यवहारभानु [४] महर्षि का स्वकथित जीवन चरित्र

२—आर्य सिद्धान्त भूषण (२ प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क २००)

प्रथम प्रश्न पत्र—सत्यार्थप्रकाश पूर्वार्ध
द्वितीय " "—संस्कारविधि

३—आर्य सिद्धान्त रत्न (३ प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क ३००)

प्रथम प्रश्न पत्र—ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
द्वितीय " "—सत्यार्थ प्रकाश उत्तरार्ध
तृतीय " "—आर्य सिद्धान्त पर निबन्ध

मन्त्री. सार्वदेशिक विद्यार्य सभा,
कार्यालय—राय बरेली (उ० प्र०)

हिन्दी आन्दोलन

पुनः संघर्ष को आह्वाहन

[लेखक—श्री आचार्य रामदेव जी, दयानन्द मठ, जालन्धर]

हैदराबाद सत्याग्रह के १६ वर्ष बाद आर्य समाज ने जब पजाब की ७० प्रतिशत हिंदी प्रेमी जनता को अकाली काग्रेस गुट्ट की धाधली एव अत्याचारों से पीडित देखा तो उसकी आत्मा तडप उठी, हृदय क्षुब्ध हो गया। इसके प्रत्येक कार्यकर्ता ने अपने आदर्श एव महान् क्रातिकारी गुरू महर्षि दयानन्द के जादू भरे लेखों से यह शिक्षा प्राप्त की हुई थी कि अधर्मी तथा अत्याचारी चाहे कितना ही सनाथ व बलवान क्यों न हो, इससे कदापि न दबना चाहिये। इसलिए वह अपने राष्ट्रीय, सास्कृतिक और क्षेत्रीय भाषा के अपमान और अन्याय को कैसे सहन कर सकता था?

काग्रेस के उच्च नेताओं के सामने कृपाणें घुमा कर विद्रोह, रक्तपात का हव्वा दिखा कर रीजनल स्कीम के द्वारा अकालियों ने जब पजाब का साम्प्रदायिक बटवारा करा कर गुरमुखी को पजाबी का नाम देते हुए इसे दोनों क्षेत्रों की हिंदी भाषी जनता पर बलात्कार से लाद दिया तो हिंदी प्रेमी जनता सकटापन्न गौ के समान त्राहि मा २ कहने लगी। सौभाग्य से आर्य हिन्दू जगत् के अन्दर वेद वेदाङ्गादि शास्त्रों के पारगत विद्वान महा तपस्वी श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज जैसे महान् नेता पजाब में विद्यमान थे, जिन्होंने अपने वयोवृद्ध, ज्ञान-वृद्ध, कर्मठ और कर्मयोगी सहयोगियों सहित सास्कृतिक दासता की दल-दल में फसी हुई गौ के समान हिंदी प्रेमी जनता को अश्रुपूर्ण तथा अग्नि भरे नेत्रों से देखा।

परिणाम स्वरूप हिन्दु जगत् के तपे हुए नेता एक वर्ष तक निरन्तर पजाब और भारत के केन्द्रीय नेताओं से देश भक्ति के उत्तरदायित्व को अनुभव करते हुए इस अन्याय को हटाने की माग करते रहे पर हमारी तानाशाही सरकार के कानों मे जू तक न रेंगी। अन्तत विवश होकर सत्याग्रह को ही अपनाना पडा और इस धर्म युद्ध का शखनाद कर दिया गया और ऋषियो की उम्मत ने सात मास तक लगातार अलौकिक और अभूतपूर्व उत्साह से हजारों की सख्या मे ऐसा ऐतिहासिक अद्भुत अहिंसात्मक सत्याग्रह चलाया कि शासकों के छक्के छूटने लगे और उनके नीचे से भूमि खिसकने लगी।

उधर पजाब के अन्दर हजारों पटवारी अपना सत्याग्रह आन्दोलन शुरू करने वाले थे। पजाब और केन्द्रीय सरकार चिरकाल से थकी हुई अपने आपको असमर्थ मान कर बार २ आर्य नेताओं को यह विश्वास दिलाने लगी कि आपकी सभी मागें पूरी कर दी जावेंगी अत अपने सत्याग्रह को वापस ले लें। देश भक्ति की भावना से ओत प्रोत आर्य नेताओं ने देश के सत्ताधारियों तथा राम राज्य प्रचारकों पर विश्वास करके सत्याग्रह स्थगित कर दिया। विजयी होते हुए भी इनके धोखे में आ गये और जहां इन्होंने अपनी व्यक्तिगत पवित्रता को लक्ष्य मे रखते हुए उच्चस्तरीय नैतिकता का परिचय दिया वहा मुस्लिम और अकाली धाधली के सामने घुटने टेकनेवाले गाधीवादियों ने विश्वास घात करके अपना नतिक स्तर गिरा दिया

और भविष्य के लिए जनता जनार्दन के हृदयों से अपना विश्वास खो बैठे।

आर्य समाज और हिन्दी प्रेमी किसी से व्यर्थ में उलझना नहीं चाहते और ना ही इनको गुरमुखी तथा किसी अन्य भाषा से द्वेष है, परन्तु यह भी एक उज्ज्वल और खरा सत्य है कि अन्याय और अत्याचार को सहन करना भी इनके लिए असम्भव के समान है।

विशाल आर्य जाति के स्वाभिमानी नेताओं, लाखों कर्मठ कार्यकर्ताओं तथा कोटि २ हिन्दी प्रेमियों का खून अभी ठण्डा नहीं हुआ, उनके हृदयों में टीस है, कसक है, अरमान हैं वे कदापि दासों की भांति हाथ पर हाथ रख अधोमुख होकर जीना नहीं चाहते। सैकड़ों वर्षों से संघर्षों के में पलते हुए इन्होंने विविध अभ्युदयों का साक्षात्कार किया है।

हिंदी भाषा को पंजाब में न्याय एवं प्रतिष्ठा पूर्ण स्थान पर आसीन करने के लिए भाषा स्वातन्त्र्य समिति के आदेश से पुनः भारत व्यापी आंदोलन का श्री गणेश होने वाला है। हो सकता है इसको उग्र रूप धारण करने के लिए पहले से कुछ अधिक समय लगे और आत्म गौरव प्रिय हिंदी प्रेमियों को इस अपमान को भी उत्सव मान कर (पराभवोप्युत्सव एव मानिनाम्) आत्म विश्वास और अभिनव उत्साह से आंदोलन की तैयारी में लग जाना चाहिये। किसी स्वाभिमानी समाज के बाल-वृद्ध, नर नारियों के लिए आराम हराम है। हमें पूर्ण विश्वास है कि इस साधना में हार्दिक प्रेम और सरलता से सम्पूर्ण समाज के प्राय सभी वर्गों का सफल सहयोग प्राप्त होगा।

समाचार पत्रों की प्रतिक्रिया

पंजाब की भाषा समस्या

आर्य समाज द्वारा पंजाब में चलाया गया हिंदी रक्षा आंदोलन केन्द्रीय गृहमन्त्री के आश्वासन पर समाप्त हुआ था कि पंजाब में हिंदी और पंजाबी की जो वर्तमान स्थिति है—अर्थात् जो सच्चर फार्मूला लागू है उसमें हिंदी और पंजाबी के समर्थकों के गोलमेज सम्मेलन में पहुँच गए किसी निर्णय के बाद ही परिवर्तन किया जा सकता है। इस आश्वासन से सन्तुष्ट होकर और गोलमेज सम्मेलन के लिए अनुकूल तथा सद्भावना पूर्ण वातावरण बनाने के लिए आर्य समाज ने अपना आंदोलन वापिस लिया था। आर्य समाज के आंदोलन के सूत्रधार ने भद्रतावश सरकार के इस आश्वासन को कभी जनता के समक्ष प्रकाशित नहीं किया और अपनी कटु आलोचना सहकर भी वे सरकार के वचन और आश्वासन पर विश्वास करते रहे। परन्तु जनता का असंतोष बढ़ जाने पर आर्यसमाज के नेताओं को पुनः हिंदी आंदोलन शुरू करने का निश्चय करना पड़ा। यद्यपि उसकी फिर शुरुआत की अभी कोई निश्चित तिथि घोषित नहीं की गई है परन्तु जैसी हालत है उसे देखते हुए उनके सामने और कोई चारा भी नहीं रह गया था। अब विदित हुआ है कि केन्द्रीय गृहमन्त्री गोलमेज सम्मेलन बुलाने की तैयारी कर रहे हैं और उधर पंजाब सरकार भी इस दिशा में कोई रचनात्मक कदम उठाने की सोच रही है। इससे आशा करनी चाहिये कि यह समस्या बिना किसी कटुता के शीघ्र ही उचित ढंग से सुलझ जायगी और आर्य समाज को पुनः अपना आंदोलन शुरू करने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

(हिन्दुस्तान १३-७-५८)

हिन्दी आन्दोलन के मुकाबला की तैयारी

समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ है कि पंजाब सरकार आने वाले हिंदी मोर्चा की तैयारी कर रही है और उसने अपनी पुलिस को आदेश दिया है कि वह उन समस्त व्यक्तियों की सूची तैयार करे जिन्होंने पिछले मोर्चा में भाग लिया था।

अगर यह खबर ठीक है तो मैं इसका स्वागत करता हूँ। इसके कुछ अर्थ हैं तो यह कि अब सर

कार के होश ठिकाने आ गए हैं और वह समझ गई है कि यह आन्दोलन कैरों की फूंकों से उड़ाया नहीं जा सकता, इस लिए अब वह बहकी २ बातें न करेगी। जिस प्रकार हिंदी प्रेमियों को मोर्चा लगाने का अधिकार है, उसी प्रकार सरकार को भी इसके मुकाबला के लिए तैयार होने का अधिकार है। उसे सुथरे हथियारों से लड़ना चाहिये। पिछली बार वह इस स्तर से बहुत गिर गई थी। उसने हलाकू और चंगेज खा के तरीकों से आंदोलन को दबाना चाहा और यदि पंडित नेहरू भी हिंदी आन्दोलन के मामलों में पक्षपात से काम न लेते तो वह सरदार कैरों को चलता कर देते। कांग्रेस को जितना इस व्यक्ति ने बदनाम किया है-शायद ही किसी और ने किया होगा। इसकी बदौलत पंडित नेहरू की भी बदनामी हुई है। उन पर अनुचित पक्षपात का आरोप लगा है जिसका कोई उत्तर नहीं। इससे बढ़ कर यह कि वह हिंदी आंदोलन को दबाने के लिए अमानुषिक ढंगों के विरुद्ध नहीं।

हिन्दी रक्षा समिति का उत्तर

हिंदी रक्षा समिति को इसका उत्तर देने के लिए तैयार होना चाहिए। यदि यह समाचार सत्य है कि सरकार पहले ही दिन हिंदी आन्दोलन के नेताओं को जेल में डाल देगी तो समिति को भी सोच लेना चाहिये कि वह इस हथियार को कैसे कुन्द बना देगी। मेरा सुझाव यह है कि उसे एक उपसमिति नियुक्त करनी चाहिए। पहले मोर्चा के गुण दोष के विवेचन के उपरान्त बताये कि उनमें क्या २ त्रुटियां थीं जिन्हें इस बार दूर कर देना चाहिए और आंदोलन को सजीव और शक्तिशाली बनाने के लिए किन २ साधनों का प्रयोग किया जाना चाहिए। साराश यह है कि अगला मोर्चा लगाने से पहले उसे कील-कांटे से लैस हो जाना चाहिए। अगर तैयारी में ज्यादा वक्त लग जाय तो कोई हर्ज नहीं। काम इस समय हो जाना चाहिये था, लेकिन सत्याग्रह क्या बन्द हुआ, आन्दोलन ही बन्द हो गया और उसके नेताओं ने समझ लिया कि उनका काम समाप्त हो गया है।

रचनात्मक सुझाव

भारत सरकार के शिक्षा मन्त्री डा० श्रीमाली ने ११ जुलाई को हिंदी शिक्षा समिति के अध्यक्ष पद से भाषण किया, वह कई पहलुओं से उत्साहवर्धक है। उन्होंने कहा कि हिंदी के प्रचार के लिए कई साधन बरते गये हैं। उनमें एक यह है कि आगरा में एक भारतीय हिंदी महा विद्यालय स्थापित किया गया है जहा हिंदी पढ़ाने वाले शिक्षक तैयार किये जायेंगे और हिंदी की शिक्षा देने के लिए बेहतर तरीकों की खोज की जायगी। उन्होंने यह भी कहा कि गत वर्षों मे हिंदी निरन्तर उन्नति कर रही है यद्यपि तीव्र गति से नहीं। उन राज्यों मे जहा हिंदी नहीं बोली जाती तमाम सेकेण्डरी और प्राइमरी स्कूलों में हिंदी अनिवार्य अथवा वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। मैट्रिक के बाद से पोस्ट ग्रेजुएट क्लास तक समस्त अंग्रेजी किताबें हिंदी में की जा रही हैं। सरकार ने १९५९ तक वैज्ञानिक और प्राविधिक पारिभाषिक शब्दों की सूची तैयार करने का निश्चय किया है। इस समय तक ११६००० पारिभाषिक शब्द तैयार हो चुके हैं जिनमें से ५० हजार छप चुके हैं। डा० श्रीमाली ने हिंदी के समर्थकों से कहा कि वे आन्दोलन का विचार त्याग कर रचनात्मक सुझाव प्रस्तुत करें।

यदि डा० साहब का संकेत हिंदी रक्षा समिति की ओर है और सम्भवत है तो मै उनसे कहूंगा कि अंग्रेजी मुहावरे में बूट दूसरे पाव पर है। उन्हें यह उपदेश अपनी सरकार को देना चाहिये जिसने हिन्दी के समर्थकों की उपेक्षा करके चुपके २ अकालियों से समझौता करके हिंदी को उस क्षेत्र में, जिसमें उनको पंजाबी भाषा-भाषी क्षेत्र का नाम दे दिया है, पंजाबी से दूसरे दर्जे पर रख

दिया है यद्यपि उसकी १५ प्रतिशत जनसख्या की यह माग है कि हिंदी को राज्य की दूसरी प्रादेशिक भाषा बनाया जाय। इस क्षेत्र की राजभाषा गुरमुखी अक्षरों में पजाबी होगी और जिला के स्तर तक अदालती और प्रशासनिक सारा कार्य इसमे होगा। हा, शैक्षिक क्षेत्र मे इतनी सुविधा दी गई है कि यदि किमी प्रायमरी कक्षा के दस विद्यार्थी हिंदी को शिक्षा का माध्यम बनाना चाहे तो इसकी व्यवस्था करनी पडेगी। परन्तु यह सुविधा न्यायोचित नहीं। हिंदी रक्षा समिति ने सरकार से निवेदन किया कि पजाबी का स्तर न गिराया जाए, लेकिन हिंदी का बढाकर उसके स्तर पर लाया लाए। लेकिन उसकी कोई सुनवाई न हुई और जब उसने देखा कि लात के भूत बातों से नहीं मानते तो उस ने मोर्चा लगाया। अब मोर्चा को स्थगित हुए छ मास हो गये हैं लेकिन सरकार टससेमस नहींहुई। उसने भाषा की समस्या के समाधान के लिए कोई पग नहीं उठाया। रुष्ट और निराश होकर हिंदी रक्षा समिति ने पुन आदोलन आरम्भ करने का निश्चय किया है और अगर उसे मोर्चा लगाना पड़ा तो डा० श्रीमाली बताए कि यह उसका दोष है या सरकार का जो यह समझती है कि अकाली कृपाण ही उसके लिए सिर दर्द बन सकती है और उसके भय से वह हिंदी से न्याय करने को तैयार नही हो रही। —कृष्ण

(वीर अर्जुन १३ ७ ५८)

❀

श्री रघुवीरसिंह शास्त्री का प्रेस वक्तव्य

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति दिल्ली के मत्री श्री प० रघुवीरसिंह जी शास्त्री ने निम्न आशय का प्रेस वक्तव्य प्रसारित किया है —

कतिपय समाचार पत्रों मे प्रकाशित उक्त सवाद की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट हुआ है जिसमें कि पजाब हिन्दी रक्षा समिति के भूतपूर्व प्रधान श्री स्वामी आत्मानन्द जी तथा सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के प्रधान श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त के बारे में चर्चा थी। देश का कोई भी समझदार व्यक्ति इन दोनों सम्माननीय नेताओं की सद्भावना और ईमानदारी पर सन्देह नहीं कर सकता। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ स्वार्थी व्यक्ति अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए इस प्रकार के न्यायपूर्ण आदोलन को बदनाम करने के लिए जान-बूझ कर यत्न कर रहे हैं। अन्यथा श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज के गिरते हुए स्वास्थ्य के बारे में कौन अनभिज्ञ होगा। जनता का प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि श्री स्वामी जी ने रुग्णावस्था के ही कारण डाक्टरों के परामर्शानुसार आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब तथा पजाब हिंदी रक्षा समिति के प्रधान पद से त्याग पत्र दिया। इस समय श्री स्वामी जी ने अपने समस्त मित्रों तथा सहयोगियों को कह दिया था कि वे हिन्दी के हित की रक्षा के लिए और धार्मिक और सास्कृतिक आधार पर बहुसख्यक हिंदुओं पर होने वाले भाषाई अन्याय के निवारण के लिए किसी भी अवस्था में अपना सर्वस्व न्यौछावर करने में किसी से पीछे नहीं रहेंगे। श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति के प्रधान पूर्व की तरह अब भी हैं। श्री गुप्त जी ने सुलह समझौते के द्वारा समस्या का समाधान करने के विषय में सरकार के कठोर और निरपेक्ष रुख को देख कर ही सघर्ष समिति की नियुक्ति की है। यहा यह भी उल्लेख कर देना उचित है कि यदि राज्य ने आर्य समाज को भावी सघर्ष के लिए विवश किया तो श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त जैसा कि उन्होंने पूर्व घोषणा कर दी है सघर्ष में प्रथम सत्याग्रही के रूप में भाग लेंगे।

पंजाब के मुख्यमन्त्री का जनता की आंखों में धूल झोंकने का यत्न

[श्री नारायण दास ग्रोवर, मन्त्री-पंजाब हिन्दी रक्षा समिति का प्रेस वक्तव्य]

२८ जून के ट्रिब्यून में प्रकाशित मुख्यमन्त्री श्री प्रतापसिंह कैरों के अम्बाला नगर के समारोह में किए हुए भाषण की रिपोर्ट बड़े ध्यान से पढी।

यह बड़े खेद की बात है कि मुख्यमन्त्री महोदय उन लोगों को शरारतियों की संज्ञा देते हैं जिनका भाषा के विषय पर उनका सच्चा और ईमानदारी से परिपूर्ण मतभेद है। मैं कैरों महोदय को यह विश्वास दिला सकता हूं कि इस सीमा वर्तीय प्रदेश में शान्ति और सुव्यवस्था बनाए रखने के लिए हिन्दी प्रेमी जन किसी से कम चिन्तित नहीं हैं। हिन्दी प्रेमियों के लिए चाहे उनके राजनैतिक विचार कुछ क्यों न हों, हिन्दी का विषय निष्ठा का विषय है नारेबाजी का विषय नहीं है। यहीकारण है कि उन्होंने आत्मसात करने के स्थान में प्रसन्नता पूर्वक प्रत्येक प्रकार का कष्ट सहन किया और बलिदान किया। मैं मुख्य मन्त्री महोदय को यह भी विश्वास दिला सकता हू कि वे अन्तिम दम तक ऐसा ही करते रहेंगे। मै यह भी स्पष्ट किए देता हू कि हिन्दी प्रेमीजन मुख्य मन्त्री महोदय अथवा उनकी राज्य सरकार को आतंकित भी करना नहीं चाहते। उन्होंने हिन्दी के समर्थकों को यह चेतावनी दी है कि उनके आन्दोलन से न केवल पजाब राज्य को अपरिमित हानि ही होगी अपितु देश भर में विनाशक प्रवृत्तिया व्याप्त हो जायगी। यह मुख्यमन्त्री महोदय की कपोल कल्पना मात्र है। यदि राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी के अपनाए जाने से सर्वत्र सौहार्द और एकता स्थापित हो सकती है तो पजाब में हिंदी प्रेमियों के सघर्ष से जिसका लक्ष्य पंजाब के स्कूलों तथा सरकारी दफ्तरों में राष्ट्र भाषा के प्रयोग पर लगे हुए प्रतिबध को हटाकर उसे उचित स्थान प्राप्त कराना है, भारत की एकता क्योंकर भंग हो सकती है यह समझ में आनेवाली बात नहीं है।

मुख्यमंत्री ने यह भी कहा है कि 'मैं उन लोगों से बात न करूंगा जो अब भी इस बात पर बल देते हैं कि पंजाब में हिन्दी की अवहेलना हो रही है। यह सरासर झूठ है।' नीचे दिए हुए तथ्यों के प्रकाश में मुख्य मंत्री के इस कथन से अधिक निराधार और भ्रामक और कोई कथन नहीं हो सकता।

१—जलंधर डिवीजन के प्राय प्रत्येक प्राम्य स्कूल में हिंदी के अध्यापन की कोई सुविधा नहीं है। मैं मुख्य मंत्री महोदय से प्रार्थना करूंगा कि वे हिन्दी अध्यापकों की ठीक २ संख्याएं प्रकाशित करें। वे छात्रों की सख्याएं बताएं जिन्हें हिंदी के अध्ययन की सुविधाएं दी गई हैं तथा जिन्हे नहीं दी गई है। इन आकड़ों के प्रकाशित होजाने पर जनता आश्चर्य में डूब जायगी।

२—पटियाला डिवीजन में किसी भी मातापिता को इस बात की अनुमति नहीं है कि वह अपने बच्चे को प्राइमरी वर्ग में हिन्दी पढ़ा सके यद्यपि उस क्षेत्र के बहु-संख्यक लोगों की मातृभाषा हिंदी है। क्या किसी भी शासन ने कभी राष्ट्रभाषा के पठन-पाठन पर प्रतिबंध लगाया है? क्या यह राष्ट्रभाषा का अपमान नहीं है? यदि मुख्य मंत्री यह कहें कि जालंधर और पटियाला डिवीजन की मातृभाषा पंजाबी है तो इसके पढ़ने की स्वतन्त्रता क्यों नहीं दी जाती? क्या भाले की नोक पर ही बच्चों को मातृभाषा पढ़ाई जाती है।

३—तथाकथित पंजाबी क्षेत्र में हिंदी में लिखित प्रार्थना पत्रों पर ध्यान नहीं दिया जाता है।

४—पंजाबी क्षेत्र के राज्य कर्मचारियों को राज काज में हिंदी के प्रयोग की अनुमति नहीं है।

पजाब के मुख्यमंत्री तथा उनके शासन का यह कहना है कि हिंदी आन्दोलन को निकम्मा बनाने के लिए राज्य का ५० लाख रुपया खर्च हुआ। मुझे विश्वास है कि वे वास्तविक तथ्यों के प्रकाश में कुछ राशि और व्यय करेंगे जिससे जनता का भय और भ्रम दूर हो जाय।

अन्त में मैं मुख्यमंत्री महोदय को विश्वास दिलाता हूं कि हमारी लड़ाई न तो किसी जाति के विरुद्ध है और न किसी भाषा के ही विरुद्ध है। इस युद्ध का लक्ष्य लेशमात्र भी राजनैतिक स्वार्थ नहीं है।

स्वदेश प्रचार

करनाटक प्रचार

वैसे तो कनाडी भाषा के कारण इस देश का नाम करनाटक है पर मैं इस देश का नाम करुणा-+टक करुणया+टक (तक) करुणा से देख रक्खूं तो अत्युक्ति न होगी। अर्थात्—इस देश को करुणा से देखो।

१—१३ ५ ५८ को जब मैं रात्रि को आर्य-समाजमें उतरा तब आर्यबन्धु प्रेमालाप करने आए। एक से शिष्टाचार के रूप मे मैने पूछा, भाई परिवार की कुशल कहो मीठे शब्दों में उत्तर दिया, अस्सी रुपये मासिक वेतन मिलता है नौ बालक हैं दो हम, इसी में निर्वाह करना पड़ता है। मैंने पूछा, क्या बहुतों की स्थिति ऐसी ही है, उत्तर मिला ६६ प्रतिशत की यही परिस्थिति है।

२—१४-५-५८ को दिन के १२ बजे मैं जनता की अवस्था जानने को नगर में घूमने को गया। देखा, सिर पर बोझ उठाये शरीर पर एक आधा जीर्ण-शीर्ण वस्त्र पहने नंगे पैर पुरुष स्त्रिया बालक विना हिचक चले जा रहे हैं।

३—उसी दिन नगर में घोषणा हो गई कि आर्य समाज मन्दिर में धर्मार्थ औषधालय संस्कृत हिंदी पाठशाला व योगाश्रम खुल गया है। १५ प्रेमी संस्कृत पढ़ने वाले बन गये और ७ योगासन सीखने वाले परन्तु १५ में से किसी दिन पांच आते हैं किसी दिन सात ऐसे ही योगासन सीखने वाले भी। पहले तो मैं समझा कि बस धर्म्म पिपासा शांत हुई, परन्तु जो दो दिन नहीं आए थे वे फिर आगए जो आज आए थे वे कल रह गये पूछने पर कारण ऐसे बताए जो अनिवार्य थे। रात्रि पाठशाला और उसमें भी ऐसी विवशता असाध्य रोगी भी ठीक समय पर नहीं आ सकते कभी २ रात्रि को १२ बजे तक जागना पड़ता है।

४—इतनी आय कम होते हुए भी मूर्ति पूजा तथा भ्रमजाल का यह हाल है कि पुरुषों के घर से जाने के पीछे स्त्रियां घर के पदार्थ मन्दिरों में जाकर समर्पित करती हैं। १ मुसलमान पीर कादरी शाह वली अजमेर शरीफ से आए हैं। वह भूत उतारता है। मुसलमान कोई भूत नहीं उतरवाते परन्तु हिन्दु ठठ्ठ के ठठ्ठ वहा जाकर तावीज लेते हैं। मोरछल द्वारा झाड़ करते और नीबू आयत पढ़वा के लेते हैं। पीर जी मुरशद प्राय १०) १५) प्रति दिनले लेते हैं आर्यसमाज मन्दिर से १ फर्लांग दूर इमाम शाहवली का मजार है, वहा हिन्दु आकर मुजावर से फातिहा पढवा रहे हैं और मन्नते मान रहे हैं जो बातें उत्तर भारत में कुछ कम है वे यहा वृद्धि पर हैं।

५—३० ५-५८ शृंगा पट्टम में व्याख्यान था बस से उतर बड़ी मस्जिद देखी, मन्दिर के ऊपर मस्जिद बनी है नीचे का ढांचा सब वैष्णव मन्दिर का है, पूछने पर पता लगा कि मैसूर प्रांत पहले भी महाराजा मैसूर का था, हैदरअली उनका सेनापति बन गया और महाराजा को गद्दी से उतार कर आप सुलतान बन बैठा था उसके पुत्र टीपू को मार अंग्रेजों ने फिर महाराजा को राज्य दिया था। इस पर भी यहा के हिंदु कबरें पूजते हैं, मुरादें मांगते हैं तावीज लेते हैं।

कृपाराम वैद्य
आर्यसमाज मैसूर

वैदिक धर्म प्रसार
और सूचनायें

—श्री देवदत्त जी के ज्येष्ठ पुत्र चन्द्रकात का यज्ञोपवीत संस्कार तथा कनिष्ठ पुत्र का नामकरण संस्कार १५ जून १९५८ को अम्बाला नगर में समारोह पूर्वक हुआ। श्री आचार्य विश्वश्रवा जी के आचार्यत्व मेसंस्कार हुआ। २१) आर्यसस्थाओं को दान दिए गए। उपस्थिति १००० के लगभग थी। सस्कार बड़ा प्रभावशाली रहा।

—आर्य प्रतिनिधिसभा मध्यभारतके कमठ उप मन्त्री श्री रामकृष्ण बर्म्मा एम० ए० का ३०-६ ५८ को शरीरात हुआ।

—भारतीय हिंदू शुद्धि सभा का वार्षिक निर्वाचन (१-६-५८) को हुआ। प्रधान श्री स्वामी अभेदानंद जी महाराज तथा प्रधानमंत्री श्री नारायणदास जी कपूर निर्वाचित हुए।

—आर्यसमाज दीवानहालका वार्षिक निर्वाचन हुआ प्रधान श्री ला० रामगोपाल जी तथा मंत्री श्री राजसिंह जी बी० ए० एल० एल० बी० निर्वाचित हुए।

—आष्टा (भूपाल) में १४-७-५८ को आर्यसमाज की स्थापना बड़े समारोह के साथ हुई। सिहोर के श्री बिहारीलाल पटेल, श्री विष्णुदत्त मिश्र, श्री नन्दलाल आर्य आदि २ लगभग २५ व्यक्तियों ने इस कार्य क्रम में भाग लिया।

❀

स्वाध्याय योग्य साहित्य

आवश्यक सूचना

महर्षि दयानन्द की जीवनी पर लिखे निबन्धों पर पुरस्कार

श्रीमती रमाबाई धर्म्मार्थ ट्रस्ट, ४ जैन मन्दिर रोड, नई दिल्ली की ओर से २५—२५) के ४ पुरस्कारों की घोषणा की गई है। जो महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन के भिन्न २ पहलुओं पर लिखित मौलिक निबन्धों में से ४ सर्वोत्तम निबन्धों पर (आगामी दीपावली पर) दिए जायेंगे। निबन्ध २००० शब्दों का होना चाहिये।

विवरण के लिए ट्रस्ट से पत्र-व्यवहार करना चाहिये।

प्रचारार्थ सस्ते ट्रैक्ट

१. आर्य समाज के मन्तव्य

लेखक—श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी शास्त्रार्थ महारथी — मूल्य -) प्रति ५) सैकड़ा

२. शंका समाधान ,, ,, — मूल्य)॥ प्रति ३) ,,

३. आर्य समाज लेखक—श्री ला० रामगोपाल जी — ,,)॥ ,, २॥) ,,

४. पूजा किस की ? ,, ,, — ,,)॥ ,, २॥) ,,

५. भारत का एक ऋषि लेखक—रोमां रोल्या — ,, -) ,, ५) ,,

६. गोरक्षा गान — ,,)॥ ,, २॥) ,,

७. स्वतन्त्रता खतरे में लेखक – श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी — ,,)॥ ,, २॥) ,,

८. दश नियम व्याख्या -)॥ ७॥) सै०

९. आर्य शब्द का महत्व -)॥ ,, ,,

१०. तीर्थ और मोक्ष -)॥ ,, ,,

११. ग्रहण और दान -)॥ ,, ,,

१२. मांसाहार घोर पाप -) ५) सै०

१३. स्वर्ग में हड़ताल ।=)

१४. भारत में जाति भेद ।=)

हजारों की सख्या में मंगाकर साधारण जनता में वितरित कर प्रचार में योग दें।

प्राप्ति स्थान – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली ६

सार्वदेशिक में विज्ञापन देकर लाभ उठावें

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
१. पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा ,,	१०)	२५)	४०)	
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

२ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें प बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

Regd No D 51

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार के

पठनीय ग्रन्थ

संग्रह योग्य ग्रन्थ

वेदो के प्रसिद्ध विद्वान

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी कृत

१—यमपितृ परिचय	मूल्य	२)
२—वैदिक ज्योति शास्त्र	,,	१॥)
३—वैदिक राष्ट्रीयता	,,	।)
४—वैदिक ईश वन्दना	,,	।≈)॥
५—वैदिक योगामृत	,,	॥≈)
६—दयानन्द दिग्दर्शन	,,	॥।)
७—वेदों मे दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तिया		॥।)
८—वैदिक वन्दन	,,	५॥)

अन्य पढ़ने यो य ग्रन्थ

१—आर्य समाज के महाधन (श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी)	२॥)
२—दयानन्द सिद्धान्त भास्कर (श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी)	१॥)
३—स्वराज्य दर्शन (श्री प० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित)	१)
४—राज धर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती)	॥)
५—एशिया का वैनिस (श्री स्वामी सदानन्द जी)	॥)
नैतिक जीवन (रघुनाथ प्रसाद पाठक)	२॥)
वीरदल सैनिक शिक्षा ... पुरुषार्थी)	॥)
८—भारत मे मूर्त्ति पूजा (श्री प० राजेन्द्र)	१≈)
९—Mahatma Buddha an Arya Reformer, प० धर्मदेव जी विद्यामार्त्तण्ड	१॥)

भजन भास्कर मू० १॥।)

संग्रहकर्त्ता श्री प० हरिशंकर जी शर्मा

यह संग्रह मथुरा शताब्दी के अवसर पर सभा द्वारा तैयार करके प्रकाशित कराया गया था। इसमे प्राय प्रत्येक अवसर पर गाये जाने योग्य उत्तम सात्त्विक भजनों का समह किया गया है।

स्त्रियो का वेदाध्ययन का अधिकार मू० १।)

लेखक —श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति

इस ग्रन्थ में उन आपत्तियों का वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों के आधार पर खण्डन किया गया है जो स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार के विरुद्ध उठाई जाती हैं।

आर्य पर्व पद्धति मू० १।)

(पंचम संस्करण)

लेखक —श्री प० भवानी प्रसाद जी

इसमें आर्य समाज के क्षेत्र में मनाये जाने वाले स्वीकृत पर्वों की विधि और प्रत्येक पर्व के परिचय रूप में निबन्ध दिये गए हैं।

नित्य कर्म विधि मू० ॥)

(सम्पादक, ईश्वरी प्रसाद प्रेम, M A)

मिलने का पता —

...निनिधि सभा, श्रद्धानन्द बलिदान भवन दिल्ली—७

...प्रेस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

सार्वदेशिक

सार्वदेशिक सभा का नई दिल्ली स्थित नवीन भव्य भवन

सम्पादक—सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक | मूल्य स्वदेश ८) विदेश १० शिलिंग | अक्तूबर १९५८

विषय सूची

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३३ } अक्तूबर १९५८ आश्विन २०१५ वि, दयानन्दाब्द १३४ { अङ्क ८

वैदिक प्रार्थना

यो विश्वस्य जगतः प्राणतस्पतिर्यो ब्रह्मणे प्रथमो गा अविन्दत् ।
इन्द्रो यो दस्यूँ रधरां अवातिरन् मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे ॥

ऋ० १ । ७ । १२ । ५ ॥

व्याख्यान—हे मनुष्यो ! जो सब जगत् (स्थावर) जड़ अप्राणी का और "प्राणत" चेतना वाले जगत् का "पति" अधिष्ठाता और पालक है, तथा जो सब जगत् के प्रथम सदा से है और "ब्रह्मणे, गा, अविन्दत्" जिसने यही नियम किया है कि ब्रह्म अर्थात् विद्वान् के ही लिये पृथिवी का लाभ और उसका राज्य है। और जो "इन्द्र" परमैश्वर्यवान् परमात्मा डाकुओं को "अधरान्" नीचे गिराता है, तथा उनको मार ही डालता है, "मरुत्वन्तं, सख्याय, हवामहे" आओ मित्रो भाई लोगो ! अपने सब सम्प्रीति से मिलके मरुत्वान् अर्थात् परमानन्द बल वाले इन्द्र परमात्मा को सखा होने के लिये अत्यन्त प्रार्थना से गद्‌गद् हो के बुलावें। वह शीघ्र ही कृपा करके अपने से सखित्व (परम मित्रता) करेगा। इस में कुछ सन्देह नहीं ॥

हमारे जन-तंत्र का मार्ग कैसे प्रशस्त हो !

आर्य समाज का सगठन जनतन्त्रीय है। आर्य समाज का सदस्य बनने के लिए प्रवेशार्थी को आर्य समाज के उद्देश्यों को स्वीकार करके उसके मन्तव्यों पर आचरण करने की प्रतिज्ञा करनी होती है। १ वर्ष तक सदाचार पूर्वक सदस्य बने रहने पर उसे मताधिकार प्राप्त हो जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि मताधिकार के सम्यक उपयोग तथा जनतन्त्रीय व्यवस्था के सम्यक सचालन के लिए सदस्य का ज्ञानवान् और सदाचारी होना आवश्यक है। सबको समान मताधिकार प्राप्त होने से सब पर आर्य समाज की उन्नति और उसके यश की रक्षा की जिम्मेवारी आ जाती है। इस समानाधिकार पर भी प्रतिबन्ध लगा हुआ है और वह यह कि सामाजिक हित के कार्यों में सभी परतन्त्र होते हैं। सदस्यों के समान मताधिकार ज्ञान, सदाचार और परहित कार्यों में परतन्त्रता में आर्य समाज के आदर्श और श्रेष्ठ काय सचालन की क्षमताए विद्यमान् हैं।

आर्य समाज की प्रबन्ध व्यवस्था में जब हम स्थान २ पर धड़े बन्दियों, विवाद, कलह अधिकार एव पदों की प्राप्ति के लिए दौड धूप तथा मानव स्वभाव की दुर्बलताओं को ताण्डव नृत्य करते हुए देखते हैं तो सहसा ही मन में यह भावना उठती है कि हम उस स्तर से बहुत नीचे बर हैं जो जनतत्र व्यवस्था को देन बनाने के लिए आवश्यक है। हमारी नैतिक भावना सगठन और नियमों का साथ नहीं देती। हममें सुधार की इच्छा और भावना कम स्वार्थ और बिगाड की भावना अधिक है। हममें सदाचार एव आर्य समाज के यश तथा विधान के प्रतिनिष्ठा नाम मात्र को है। झगडे प्राय पदों के लिए होते है। अत वह समय आ गया है जबकि हम पदो को उडा देवें अथवा उनके नाम इस प्रकार बदल देवें कि जिससे उनके लिए सघर्ष और दौड धूप की गु जाइश न रहे। यदि पद यथा पूव रहें तब भी उन पर उन्हीं व्यक्तियों को आसीन किया जाय जिनमे पद विशेष की योग्यता एव अनुभव के साथ २ चारित्रिक विशेषताए हों। योग्यता का माप दण्ड धन के बन जाने तथा बने रहने पर आय समाज के सगठन को बडा धक्का लगा है। अब इस प्रथा का भी अन्त होना ही चाहिए इसके लिए भलेही हमे अनावश्यक सस्थाओं को बन्द ही क्यों न कर देना पड।

हमारा ध्यान एक ऐसे समाज की काय विधि की ओर आकृष्ट किया गया है जहा कोई भी पदाधिकारी नही है। सब आर्य सभासद परस्पर मे मिलकर जो निश्चय करते है उन्हें सभासद् आपस में बाटकर क्रियान्वित कर लेते हैं। इस प्रकार उनका कार्य सुचारु रूप में चल रहा है। परन्तु यह एक परीक्षण है। देखना है यह कहां तक सफल होता है?

आर्य समाज के सदस्यो तथा अधिकारियों का सबसे बड़ा दायित्व यह है कि आर्य समाज की शिक्षाओं और गतिविधि का जन साधारणविशेषत देश के बुद्धि जीवी वर्ग पर प्रभाव रहे। यह प्रभाव तभी कायम रह सकता है जबकि आर्यसमाज के सदस्य अपने वैयक्तिक और सामाजिक व्यवहार में उनका क्रियात्मक परिचय दें। अपने सस्कारों मे, अपने रहन सहन आदि मे आर्यत्व का परिचय दें तथा रूढियों का शिकार न बनें। उदाहरण के लिए विवाह सस्कार को ले लें। यदि आर्य समाज का सदस्य विवाह की अन्यान्य रूढियों को तोडते हुए दहेज लेता है तो वह समाज के समक्ष अच्छा उदाहरण प्रस्तुत नहीं करता। यदि वह जन्मना जात पात के चक में ग्रसित रहता है तब भी उसमें और जन्म की जाति के पृष्ठ पोषकों में कोई भेद नहीं रहता इत्यादि २। इन सब बातों को लक्ष्य में रखते

हुए यदि आर्य समासद् के लिए व्यावहारिक योग्यता नियत करदी जाय और कम से कम ३ वर्ष पर्यन्त परीक्षण करके उसे मताधिकार दिया जाय तो यह परीक्षण बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

आर्यसमाज के निर्णय बहुपक्षानुसार होते हैं। परन्तु यदि यह बहुपक्ष आर्यसमाज की प्रतिष्ठा और सगठन के लिए घातक रूप धारण करले जैसा कि प्राय होता है तो प्रदेशीय वा सार्वदेशिक सभा को उस बहुपक्ष से बने हुए सगठन को भग करके समाज का प्रबध भार अपने ऊपर ले लेना चाहिए। यह स्मरण रखना चाहिए कि बहुपक्ष की आवाज न्याय का प्रमाण नही होता। यदि बहुपक्ष पागल पन का परिचय देतो उसे हस्पताल भेजना होता है। एक व्यक्ति वा थोड व्यक्ति ही जिनके साथ ईश्वर और धर्म होता है बहुपक्ष बनाया करते हैं जिनके लिए वोटों की गणना नहीं अपितु परिमाण बहुपक्ष होता है। महर्षि दयानन्द इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं। उनके पैर सत्य और न्याय पर, तप और त्याग पर, पवित्रता और सदाचार पर खडे थे। उन्होंने परिणाम का परवाह न करके डटकर युद्ध किया। वे मैदान छोडकर नहीं भागे। ईश्वर और सत्य उनकी ओर था। उन्होंने अकेले होते हुए भी हजारों लाखों व्यक्तियों के बोझ को हटाकर उन्हें अपने पक्ष मे कर दिखाया क्योंकि उनमे उद्देश्य की पवित्रता और चरित्र तथा आत्म-बल था।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

सत्यार्थप्रकाश जयन्ती

अब से ७५ वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द सरस्वती ने उदयपुर में बैठकर अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश की रचना की थी। सार्वदेशिक सभा की अन्तरग सभा ने अपने २४-८-५८ के अधिवेशन में इस वर्ष 'सत्यार्थप्रकाश जयन्ती' मनाने का निश्चय किया है और इस कार्य के सचालनार्थ एक उपसमिति नियुक्त कर दी है। समिति यथा समय पुरोगम निर्धारित करके प्रचारित करेगी। विचार यह है कि मुख्य महोत्सव उदयपुर में मनाया जाय और उससे पूर्व १ सप्ताह 'सत्यार्थप्रकाश सप्ताह' के नाम से मनाया जाय। आशा है यह उत्सव उत्साह और समारोह के साथ मनाया जायगा।

महर्षि का हीरक निर्वाणोत्सव

'आर्य जगत्' (जालन्धर) के ३१-८-५८ के अङ्क मे श्री माणकचन्द जी बजाज का एक लेख 'ऋषि दयानन्द हीरक निर्वाणोत्सव' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है जिसमें सुझाव दिया गया है कि आगामी दीपावली के अवसर पर आर्य महासम्मेलन किया जाय और उसी में महर्षि दयानन्द का हीरक निर्वाणोत्सव मनाया जाय क्योंकि श्री स्वामी जी महाराज के निर्वाण को १९५८ की दीपावली के दिन पूरे ७५ वर्ष हो जायेगे। इस सुझाव पर परोपकारिणी सभा को विशेष रूप से विचार करना चाहिये। दयानन्द अर्द्ध-निर्वाण शताब्दि भी अजमेर मे उसी के तत्वावधान में मनाई गई थी। हमें भय है कि इतने महान् आयोजन की तैयारी के लिये समय बहुत अपर्याप्त है। यदि यह आयोजन इस समय सम्भव न हो सके तो सत्यार्थ-प्रकाश का एक सस्करण तो ऐसा प्रकाशित हो ही जाना चाहिये जिसमे छापे और पाठ-भेद की भूल न रहे। यह कार्य एक बहुत बडा कार्य होगा। इसके साथ ही महर्षि का एक ऐसा जीवन चरित्र भी तैयार होना चाहिये जिसे पढ कर पाठक पर घटनाओं की प्रामाणिकता के विषय में सन्देह न रहे।

श्री बजाज जी लिखते हैं कि 'मथुरा जन्म शताब्दि का विचार मैने और लाहौर के अपने प्रसिद्ध विद्वान् मित्र प० रामगोपाल जी वैद्य शास्त्री

ने शताब्दि से ३ वर्ष पूर्व १९२२ मे जनता के समक्ष उपस्थित किया था।

१९२५ मे मथुरा मे स्व० श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी व महात्मा हसराज जी के पुरुषार्थ से सम्पन्न हुए दयानन्द-जन्म शताब्दि उत्सव से भारत तथा भारत के बाहर के करोडों प्रवासी आर्य हिन्दुओं को भारी स्फूर्ति प्राप्त हुई थी आदि २।

जहा तक हमारी जानकारी है मथुरा शताब्दि महोत्सव का विचार सर्वप्रथम स्व० श्री मदनमोहन जी सेठ ने आर्य मित्र के ऋष्यक मे प्रकाशित लेख मे १९१८ मे दिया था।

मथुरा शताब्दि की सफलता का श्रेय श्री स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज तथा महात्मा हसराज जी को प्राप्त है परन्तु इस प्रसग में श्री स्वर्गीय महात्मा नारायण स्वामी जी की सेवाओं को भुला देना कृतघ्नता है। शताब्दि महोत्सव की सफलता का मुख्यतम श्रेय श्री महात्मा नारायण स्वामी जी को ही प्राप्त था।

आर्य समाज की वर्तमान सन्तति के समक्ष घटनाओं का सही स्वरूप आये इसी बात को लक्ष्य में रख कर यह स्पष्टीकरण करना आवश्यक समझा गया है।

मान्य गाडगिल का स्वागत

१२ सितम्बर को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के नये भवन (दयानन्द भवन रामलीला ग्राउण्ड) में पजाब के राज्यपाल श्रीयुत नरहरि विष्णु गाडगिल का सभा की ओर से स्वागत किया गया। इस अवसर पर आर्य समाज के प्रमुख २ महानुभाव तथा नगर के गण्यमान्य हिन्दू उपस्थित थे जिनमें श्रीयुत अलगूराय जी शास्त्री एम० पी०, श्रीयुत प० विनायकराव जी विद्यालकार एम० पी० भूतपूर्व मन्त्री हैदराबाद राज्य, श्रीयुत रामानन्द जी शास्त्री एम० पी०, श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री एम० पी०, श्री डा० गोकलचन्दजी नारग, श्री नकुलसेन सच्चर, श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालकार, श्री के० नरेन्द्र सम्पादक वीर अर्जुन, श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री, श्री जगदेवसिह जी सिद्धान्ती, श्री ला० चरणदास जी पुरी, श्रीयुत नारायणदास जी कपूर, श्री ओ३म् प्रकाश जी त्यागी आदि २ के नाम उल्लेखनीय हैं। सभा के उपप्रधान श्री अलगूराय जी शास्त्री ने मान्य अतिथि का परिचय देते हुए सभा तथा आर्य समाज की ओर से उनका अभिनन्दन किया। सभा के कोषाध्यक्ष श्रीयुत ला० बालमुकन्द जी आहूजा ने उन्हे आर्यसमाज का विशिष्ट साहित्य भेंट किया। श्री प्रकाशवीरजी शास्त्रीने उपस्थित सज्जनोंका परिचय कराया। श्रीयुत गाडगिल महोदय ने आर्य समाज और उसके कार्य की प्रशसा करते हुए पजाब मे हिन्दी और पजाबी की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए अपने पूर्ण सहयोग और योग दान का आश्वासन दिया। जल पान के पश्चात् आयोजन समाप्त हुआ। वर्तमान वर्षों मे यह पहला अवसर है जब कि सार्वदेशिक सभा मे देश के एक मान्य नेता का अपने नये भवन में अभिनन्दन करने का सुयोग प्राप्त हुआ। इस प्रकार के आयोजनों की उपयोगिता के विषय में दो मत नहीं हो सकते। सभा राजदूतावासों, ससद् सदस्यों तथा देश विदेश से आने वाले विशिष्ट महानुभावों के साथ सम्पर्क स्थापित करने वा रखने का नियमित आयोजन कर रही है। यह आयोजन उसी शृखला की एक कडी थी। इस प्रकार के आयोजनों की सुविधा की दृष्टि से निश्चय ही सभा का नया भवन एक देन सिद्ध होगा।

आर्य विद्वान् सम्मानित

श्रीयुत प० सत्यव्रत जी विद्यालकार को हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग का उनकी कृति 'समाजवाद के मूल तत्त्व' पर (२००) का मगला प्रसाद पारितोषिक प्राप्त हुआ है इसके लिये श्री प० जी बधाई के पात्र हैं।

आर्य समाज को यह गौरव और श्रेय प्राप्त है कि इस समय तक इस पारितोषिक को प्राप्त करने वाले विद्वानों मे आर्य विद्वानों की संख्या सर्वोपरि है। स्व० श्रीयुत प० पद्मसिंहजी शर्मा, श्री स्व०प्रा० सुधाकर जी, श्रीयुत प० जयचन्द्र जी विद्यालंकार श्रीयुत प० सत्यकेतु जी विद्यालंकार, श्रीयुत प गंगाप्रसाद जी उपाध्याय, श्रीमती चन्द्रावती जी लखनपाल आदि २ इससे पूर्व इस पारितोषिक से सम्मानित हो चुके है। वस्तुत इस सम्मान मे आर्य समाज का ही सम्मान है।

श्रीयुत जवाहरलाल नेहरू और ईश्वर की मान्यता

हमारे समक्ष भारत सरकार के सूचना कार्यालय से १६ सितम्बर को प्रचारित हुआ एक परिपत्र है जिसमें मेक्सिको के राष्ट्रीय दिवस के अवसर पर राष्ट्रपति श्री डा० राजेन्द्र प्रसाद जी तथा प्रधान मंत्री श्री प० जवाहरलाल जी नेहरू द्वारा भेजे हुए सदेश अंकित हैं जो इस प्रकार है —

राष्ट्रपति का सदेश

"आपके राष्ट्रीय दिवस के शुभ अवसर पर मै अपनी भारत सरकार तथा भारतीयों की ओर से आपको अपनी सरकार और मेक्सिको की जनता को बधाई देता हू। हम आपकी तथा देश की समृद्धि की हार्दिक कामना करते है।'

प्रधान मन्त्री का सदेश

"आपके देश के राष्ट्रीय दिवस की वर्ष गांठ के उपलक्ष मे मैं अपनी और अपने सहयोगियों की ओर से आपको, आपकी सरकार और मैक्सिको निवासियों को हार्दिक बधाई देता हू। हम ईश्वर से आपकी खुशहाली तथा उन्नति की कामना करते हैं"

राष्ट्रपति महोदय आस्तिक हैं परन्तु उनके सदेश में 'ईश्वर" शब्द का उल्लेख नहीं है प्रधान मन्त्री जी "अनीश्वरवादी" समझे जाते हैं और वे 'शपथ इत्यादि के समय ईश्वर का उल्लेख भी नहीं करते। इस प्रकार राष्ट्रपति जी के सदेश मे 'ईश्वर' शब्द का उल्लेख न होना जितना आश्चर्यजनक है श्री प्रधान मन्त्री जी के सन्देश मे उसका उल्लेख होना उससे भी अधिक आश्चर्य जनक है। पता नहीं प्रधान मन्त्री की मनोभावना मे इस परिवर्तन का कारण उनकी वृद्धावस्था है या श्री मोरार जी देसाई की आलोचना। कारण भी कोई न हो यह परिवर्तन स्वस्थ और अभिनन्दनीय है। उप राष्ट्रपति श्री राधा कृष्णन जी न देसाई जी के वक्तव्यों पर हुए प्रश्नोत्तर के समय राज्य सभा मे माननीय सदस्यों को बताया था कि इस विश्व के पीछे कोई ज्ञानवान् महान चेतन सत्ता कार्य करती है और प्रधानमन्त्री इस सत्ता को ईश्वर स्वीकार करते हैं। परन्तु प्रधान मन्त्री महोदय ने राज्य सभा में इसकी सम्पुष्टि न की थी। अब उनके उपर्युक्त परिपत्र से पुष्टि हो गई है।

श्रीयुत डा० भगवानदास जी

श्रीयुत डा० भगवानदास जी के निधन से देश अपने एक विद्वान् महानुभाव से वचित हो गया है। श्री डाक्टर जी पुरानी पीढी के महापुरुषों की माला के एक मूल्यवान रत्न थे।

वे सस्कृत, फारसी, और अग्रेजी के विद्वान एव साहित्यकार, प्रौढ दार्शनिक और समाज-विज्ञान वेत्ता थे। उनकी ख्याति देश मे ही नहीं विदेश तक व्याप्त हो गई थी। उन जैसे विद्वान से देश का गौरव था। उनकी साइन्स आव इमोशन (भावना विज्ञान) साइस आव पीस (शान्त विज्ञान) साइन्स आव सोशल औरगैनिजेशन (समाज सगठन विज्ञान) साइन्स आव दी सैकरेड वर्ल्ड (पवित्र जगत का विज्ञान) आदि २ पुस्तकें शिक्षित एव विद्वत जगत् मे बडे चाव के साथ पढी जाती हैं। उनकी रुचि पठन पाठन और साहित्य सृजन की ओर प्रेरित थी। वे सुप्रसिद्ध साहित्यकार और

शिक्षा शास्त्री थे। १६२६ में बनारस विश्वविद्यालय ने और १६३७ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने उन्हें साहित्य के डाक्टर की उपाधि प्रदान की। वे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय तथा काशी विद्या पीठ के सस्थापक सदस्यों में से थे। १६५५ मे उन्हे भारत रत्न की उपाधि से विभूषित किया गया था।

देश की परतन्त्रता की जजीरो को तोडन में भी उन्होंने अपना उल्लेखनीय योग दिया। वे १६२१ से १६२६ तक कारावास मे रहे। कारावास से मुक्त होने पर बनारस नगरपालिका के अध्यक्ष बने और फिर १६३५ से १६३८ तक केन्द्रीय विधान सभा के सदस्य भी रहे। इतना होने पर भी वे दल गत राजनीति की गन्दगी से दूर रहे क्योंकि राजनीति का यह स्वरूप उनकी रुचि के सर्वथा प्रतिकूल था।

डाक्टर महोदय थिओसोफिस्ट थे, तथापि उनके धार्मिक विचार उदार थे। वे आर्य समाज तथा प्राचीन श्रेष्ठ ज्ञान और सस्कृति के प्रशसक थे। उनकी कृतियों से आर्य समाज के अनेक सिद्धान्तो मुख्यतया वर्ण व्यवस्था की पुष्टि हुई और प्रचार हुआ।

श्री डा० महोदय बडे प्रतिभावान् थे। १८ वर्ष की आयु में ही उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से दर्शन शास्त्र में एम० ए० कर लिया था। उसके बाद सरकारी नौकरी करली परन्तु ८ वर्ष बाद शिक्षा तथा समाजसेवामें लगनेके उद्देश्यसे डिपुटीकलक्टरी से त्याग पत्र दे दिया।

उन्होंने अपना निजी विशाल पुस्तकालय बनारस विश्वविद्यालय, सस्कृत विश्वविद्यालय बनारस तथा मेडीकल एसोसियेशन को दान कर दिया।

१८ सितम्बर १६५८ को ६० वर्ष की आयु में उनका बनारस में देहान्त हुआ। वे अपने पीछे २ सुयोग्य पुत्र, २ पुत्रिया, विधवा पत्नी तथा असख्य मित्र एव प्रशसक छोड गए है। बम्बई के राज्यपाल श्री प्रकाश जी उनके ज्येष्ठ पुत्र हैं। उनका गार्हस्थ जीवन बडा सुखी रहा। वे पिछले कई वर्षसे हृदय रोग से अत्यन्त पीडित थे।

देश का दुर्भाग्य है कि वह द्रुतगति से अपने सपूतों से विहीन होता जा रहा है। डाक्टर महोदय के निधन से देश तथा विद्वत् जगत् की महान क्षति हुई है। इन शब्दों के साथ हम श्रद्धेय डाक्टर जी के प्रति अपनी श्रद्धाजलि प्रस्तुत करते हैं।

केरल में क्या त्रुटि है ?

७ सितम्बर के ईसाई पत्र हेरल्ड (कलकत्ता) मे एक लेख छपा है जिसका शीर्षक है "केरल मे क्या त्रुटि है ?" इस लेख मे लेखक ने एक प्रश्न किया है आर वह यह कि राजस्थान मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और गुजरात मे जहा बड २ धन पति मारवाडी और वैश्य रहते हैं और लाखों करोडों व्यक्ति निर्धन हों वहा साम्यवाद प्रगति क्यों नहीं कर सका ? इसका उत्तर देते हुए वह लिखता है "इन प्रदेशों के अधिकाश व्यक्ति हिन्दू हैं जिनकी जात पात और कर्म सिद्धान्त में पूर्ण निष्ठा है। मनुष्य पूर्व जन्म के कर्मानुसार ही धनी या निर्धन घर मे जन्म लेता और अपने प्रारब्ध के अनुसार ही अच्छे या बुरे भोग भोगता है। कर्म लेखको कोई नहींमेट सकता। इसविश्वास से मनुष्य अपनी स्थिति से सन्तुष्ट रहता है।' केरल में इन दिनों कम्यूनिस्टों का शासन है जिसके मन्त्री मण्डल में कतिपय प्रमुख ईसाई सज्जन सम्मिलित हैं। वहा ईसाइयत न केवल कम्यूनिज्म के प्रवाह को ही न रोक सकी अपितु वह स्वय भी उसके भवर में फस गई इस दृष्टि से ईसाइयत केरल के लिए अभिशाप बनकर आई। यदि ईसाइयत के धार्मिक सिद्धान्त अकाटय होते और वह अकाटयता लोगों के हृदयों में घर किए हुए होती तो कम्यूनिज्म के प्रसार को उपजाऊ भूमि उपलब्ध न होती। यही बात रूस आदि देशों की जनता पर चरितार्थ होती

है। कम्यूनिस्ट बनने से पूर्व वह भी ईसाईमतावलम्बी ही थी। जो लोग कम्यूनिज्म की बाढको ईसाइयत के प्रचार और प्रसार के द्वारा रोकने की सोचते और आपत्ति जनक एव घृणित साधनों से भोली भाली जनता को ईसाई बनाने का यत्न करते है जैसा कि भारत के हिन्दुओं को ईसाई बनाने की दिशा में हो रहा है, उन्हें अपनी भूल को अनुभव करके यह अनुचित व्यापार एक दम बन्द कर देना चाहिए। इसी मे ईसाइयत तथा हिन्दुओं का हित है। यदि ईसाई दृष्टिकोण के अनुसार हिन्दू हिन्दू रहते कम्यूनिस्ट नहीं बन सकता तो उसेईसाई बनाकर कम्यूनिस्ट बनने देना कहा की बुद्धिमत्ता है। प्रसन्नता है विचारशील ईसाई अपनी भूल अनुभव करने लगे है। ईसाइयतके प्रचारकोंको यह बात हृदयगम करनी चाहिए कि कम्यूनिज्म का निराकरण ईसाइयत के सिद्धान्तों वा उसे गाहत राजनीति का प्रच्छन्न बनाकर उसका दुरुपयोग करने से सम्भव नही हो सकता, और ना ही एक ओर लोगों का आर्थिक दोहन करते हुए और दूसरी ओर दान बखेरते हुए ही सम्भव हो सकता है।

दक्षिण मे हिन्दी

राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध मे अभी हाल मे जो विचार व्यक्त किये गये है वे वस्तु स्थिति के द्योतक हैं। पिछले कुछ महीनो मे राष्ट्र भाषा विषय पर जो विवाद होता रहा है उसमें वस्तु स्थिति की घोर उपेक्षा की गई थी। महत्व की बात यह है कि ये प्रवक्ता अहिन्दी भाषा भाषी प्रदेशों के है और उन्होंने राज्य भाषा के रूप मे हिन्दी का महत्व प्रतिपादित किया है। हैदराबाद मे हुए कन्नाडगारा सम्मेलन मे श्रीयुत बी० एन० दातार और कृष्ण मूर्ति राव ने अपने भाषणों मे हिन्दी का समर्थन किया और उसके विकास के विषय मे उत्तम सुझाव दिये। श्री दातार महोदय ने कहा "मुझे पता है कि दक्षिणी राज्यों के अधिकाश जन सविधान के अनुसार हिन्दी को देश की राज्यभाषा बनाये जाने के पक्ष मे हैं। श्रीयुत सेठ गोविन्द दास जी का भी यही मन्तव्य है जिन्होने दक्षिण का भ्रमण करने के बाद यह घोषणा की है कि आन्ध्र केरल और मैसूर मे हिन्दी का कोई विरोध नही है निस्सन्देह मद्रास और पश्चिमी बगाल के कुछ लोग यह आपत्ति करने की चेष्टा कर रहे हैं कि हिन्दी अग्राह्यनीय है और अग्रेजी जो राज्य भाषा बनी रहे वे यह अवश्य मानते है कि हिंदी भाषा भाषी प्रदेशो मे यह राज्य भाषा के रूप मे प्रयुक्त हो सकती है। इन्हीं लोगों ने भाषा का विवाद खडा किया था परन्तु उन्हे अब यह विदित हो गया होगा कि बहुसख्यक प्रजा उन लोगो की समर्थक है जो कि इस बात के लिये उत्सुक हैं कि अग्रेजी का स्थान हिन्दी ले ले। परन्तु हिन्दी के समर्थकों के उद्देश्य की पूर्ति के लिए नितान्त आवश्यक है कि वे चुपचाप हिन्दी को समृद्ध बनाने के काय मे जुट जाए और इस विषय को विवाद का विषय न बनने देवे। हिन्दी के लेखकों के एक सगठन का सुझाव भी प्रशसनीय है। अब रचनात्मक कार्य पर विशेष ध्यान देने से ही काम चलेगा।

हिन्दी कृत्रिम भाषा नही है

श्रीयुत जे० एन० शर्मा ने हिन्दुस्तान टाइम्स के २१ ६ ५८ के अक मे एक लेख लिखा जिसमें उन्होंने यह सिद्ध करने की चेष्टा की कि हिन्दी कृत्रिम है और वह उर्दू से बनी है। इसका खडन करते हुए श्री वी० डी० चतुर्वेदी ३० ६ ५८ के हिन्दुस्तान टाइम्स मे लिखते हैं —

"वस्तुत हिन्दी और उर्दू दोनों स्वतन्त्र भाषाए है। यद्यपि दोनो का स्वरूप मिलता जुलता है तथापि दोनो का सार भिन्न २ है। दोनो की शाखाए खडी बोली से प्रमाणित हुई हैं जो देहली के आस पास की बोली थी।

सन् १२०० ई० मे उर्दू का प्रादुर्भाव हुआ। बाहर से आने वाले मुसलमानों और राजधानी के

मूल निवासियों में पारस्परिक आदान प्रदान के माध्यम के रूप मे उर्दू भाषा बनाई गई। उर्दू धीरे २ फारसी की गोद मे पलती हुई परिष्कृत होती गई। इसका विकास मुख्यतया फारस और अरब तथा इस्लाम की शिक्षाओ के प्रसार के साधन के रूप मे हुआ। जब भारत मे अंग्रेजी शासन हुआ तो उत्तर भारत मे अदालतों तथा सरकारी कार्यालयों की भाषा उर्दू बनी और स्वतन्त्रता प्राप्ति तक बनी रही।

हिन्दी के विकास की प्रक्रिया सर्वथा भिन्न थी हिन्दी 'हिन्दवी' का रूप है। खड़ी बोली का 'हिन्दवी' नाम फारसीदा मुसलमानो का रखा हुआ है। अमीर खुसरो तथा कबीर की रचनाओ मे इसकी अनेक साक्षियां मिलती हैं। समस्त मध्य युग मे संस्कृत शब्दों से परिपूर्ण हिन्दी ही जन साधारण की बोल चाल तथा लिखने पढने की भाषा रही। उर्दू का क्षेत्र अदालतो तथा सेनाओ तक सीमित रहा।

मुद्रण कला के सूत्रपात के साथ हिन्दी और उर्दू दोनों द्रुतगति से विकसित हुई। इस प्रक्रिया में हिन्दी अधिकाधिक संस्कृत की ओर और उर्दू फारसी की ओर प्रेरित रही। अलीगढ आन्दोलन से उर्दू को बहुत प्रेरणा मिली जब कि आर्य समाज ने हिन्दी को बहुत लोकप्रिय बनाया।

योग्य नेतृत्व

श्री डा० राधाकृष्णन ने इण्डियन बैंक की करौल बाग की शाखा का २९-९-५८ को उद्घाटन करते हुए एक बात बड मार्के की कही और वह यह कि नेतृत्व के अच्छा या बुरा होने पर ही राज्य का अच्छा या बुरा होना निर्भर करता है। उनके अपने शब्द इस प्रकार है —

"उचित और योग्य नेतृत्व से देश का चरित्र तथा रूप ही बदल जाता है। यदि बिगुल काम करने में चूक जाय तो इसमे जनता का कोई दोष नहीं है। इस समय समस्त विश्व मे अशान्ति और अव्यवस्था छाई हुई है। भारत मे भी अशान्ति के चिन्ह विद्यमान है। अत राजनीति और व्यापार दोनों क्षेत्रों में जनता की ईमानदारी के साथ सेवा की जानी चाहिए। हममे अनुशासन की भावना विकसित होनी चाहिये। जब कभी अन्याय, अपराध वा दुष्टाचरणकी कोई घटना हमारे सामने आए तो हमे कार्यवाही करने के लिए उद्यत रहना चाहिये।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

सार्वदेशिक सभा का कार्यालय नए भवन मे

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली का कार्यालय अपने नए भवन 'दयानन्द भवन' (रामलीला मैदान) नई दिल्ली १ में पहुँच गया है। भविष्य मे सभा के साथ पत्र व्यवहार इसी पते पर होना चाहिए। यह भवन रामलीला मैदान के सामने वर्म्मा शैल के निकट है। इसके पीछे पुराने शहर की सड़क है। सामने रामलीला मैदान मे भारत का कच्चा माडल बना हुआ है।

'पश्येम' और 'जीवेम' का सम्बन्ध

(लेखक—श्री प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०, प्रयाग)

एकदा व्याख्यान देते हुए मुझसे यह प्रश्न किया गया कि सन्ध्या के मन्त्रों में पहले कहा 'पश्येम शरद शतम्' फिर कहा 'जीवेम शरद शतम्'। प्रार्थना का यह क्रम ठीक नहीं हैं। जीना' पहले होता है और 'देखना' पीछे। जब जीयेंगे ही नहीं तो देखेंगे कैसे? जीवन पहले है आर आखें पीछे। मैने इसका क्या समाधान किया उसी को यहा लिख रहा हू।

'जीवेम' का यहा अर्थ साधारण जीवन नहीं है। प्रार्थना करने वाला जीवित तो है ही, तभी तो प्रार्थना कर रहा है। साधारण जीवन सौ वर्ष का हो या एक वर्ष का। उससे केवल काल की सूचना मिलती है जीवन के स्वरूप की नही। केवल मनुष्य ही नहीं जीता। सभी प्राणी जीते है।

'आहारनिद्राभयमैथुन च सामान्यमेतत् पशुभि र्नराणाम्।' 'शरद शतम्' काल वाचक पद अवश्य है। परन्तु काल तो सामान्य वस्तु है। इसीलिए साख्य दर्शन मे आरम्भ मे ही कह दिया कि—

'न कालयोगतो व्यापिनो नित्यस्य सर्व सम्ब न्धात्' अर्थात् धर्म, अधर्म, पुण्य, पाप, सुख दु ख, आदि का सम्बन्ध मुख्यत काल से नहीं है। कलियुग या सतयुग, शरद् या ग्रीष्म, २५ वर्ष या ३० वर्ष इस प्रकार के काल सूचक शब्द जहा कहीं मिलते हैं, वे मुख्य नहीं गौण है। वे किसी अन्य गुण या योग्यता की अपेक्षा रखते हैं। जहा कहा कि २५ वर्ष की आयु में विवाह करे, वहा 'यौवन' का गुण मुख्य है। २५ बार पृथिवी का सूर्य के चारों ओर घूम जाना गौण। ५० वर्ष के पश्चात् वनी हो, यहा भी ५० वर्ष की सख्या गौण है, मुख्य है आत्मोन्नति के स्तर का स्वरूप। अर्थात् इतना वैराग्य हो जाना कि गृहस्थोत्तर विधि का पालन कर सके। हमारे कार्य, हमारी मर्यादायें, हमारे जीवन के विधान यह सब हमारे आत्म अवस्था से सम्बन्ध रखते हैं, पृथिवी की चाल या घडी की सुइयों से नहीं। छठे मास अन्नप्राशन करे। यहा १८० दिन गौण है? मुख्य नहीं यदि बच्चा इतना रोगी है कि १८० दिन के पश्चात् अन्न नही पचा सकता तो अन्नप्राशन के लिए प्रतीक्षा करनी चाहिये। पृथिवी की परिक्रमा या घडी की सुई हमारे विकास की प्रतीक्षा नहीं करती। हम उसके साथ अनुकूलता करें या न करे।

अत पहली बात तो यह है कि 'शरद शतम्' आदि काल सूचक शब्द गौण है, मुख्य नहीं। मुख्य तो विधि वाक्य है 'जीवेम' (विधि लिङ्)। विधि सदैव कर्तव्यता बताती है। आचार्य जैमिनी महाराज लिखते हैं—

तद्भूताना क्रियार्थेन समाम्नायोऽर्थस्य तन्नि मित्तत्वात्। (पूर्वमीमासा १। १। २५)।

अर्थात् हम किस प्रकार जीवें? जीवन एक यज्ञ है। हम यजमान हैं। हम जीवन के अधि कारी हैं। अधिकारी के लिए योग्यता की आव श्यकता है हर यज्ञ के अपने २ धर्म हैं, जिनके द्वारा यज्ञ की पूर्ति होती है। जीवन यज्ञ के भी धर्म हैं। 'जीवन' का अर्थ केवल सास लेना या खाना पीना नहीं है। जीवन की एक विधि है। जो विधिवत् जीवन नहीं, वह मानवजीवन नहीं। उसके लिए प्रार्थना की आवश्यकता नहीं। यदि जीवन विधिवत् बनाना है तो विधि के ज्ञान की आवश्यकता होगी। इसलिए जीवन की विधि की स्कीम या प्लान बनाने से पूर्व ज्ञान की आवश्यकता

वैदिक सृष्टि-विद्या के आलोक में पशु-विज्ञान

(लेखक—श्रीयुत डा० वासुदेवशरण अग्रवाल)

पुरुषमेध, अश्वमेध, गोमेध—ये तीन ही मेध्य पशुओं के यज्ञ हैं। यद्यपि पशु अनेक हैं, फिर ये तीन ही मेध्य क्यों हुए ? यह मौलिक प्रश्न बात की तह तक पहुँचाता है। वस्तुत मेध तत्व हिंसा नहीं है। यह तो प्रकृति की सृष्टि विद्या का विज्ञान है। 'मेध्' सगमने धातु से मेध शब्द बनता है। जिसका मेध किया जाए वह मेध्य' कहलाता है। सगमन का अर्थ है इकट्ठा करना फैली हुई वस्तु को समेट कर एक केन्द्र के अधीन लाना। जैसे राष्ट्र की जो शक्ति बिखरी हुई हो, उसे यदि एक केन्द्र मे घनीभूत कर दिया जाये तभी वह शासन के योग्य बनती है। जन २ में फैली हुई शक्ति का

होगी। पशु जीवन ज्ञान के बिना सम्भव है परन्तु मनुष्य जीवन नहीं। यदि आप स्वास्थ्य को नियमित बनाना चाहते हैं तो आपको आयुर्वेद का सामान्य ज्ञान आवश्यक होगा। यदि आप धार्मिक बनना चाहते हैं तो धर्मशास्त्र को पढ़ना होगा। जीवन का कोई विभाग जिस पर मनुष्य का अधिकार है, बिना ज्ञान के सम्भव नहीं। अत 'पश्येम' का अर्थ केवल देखना नहीं अपितु सभी प्रकार का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना है। 'प्रत्यक्ष' प्रमाण में आख, कान, नाक आदि सभी शामिल हैं, अत 'पश्येम' में भी ऐसा ही समझना चाहिये। इस लिए 'जीवेम' का अर्थ होगा 'धर्मपूवक जीना'।

'आत्मा' का साधारण लक्षण यह किया है—जिसमें 'कर्तुम्' 'अकर्तुम्' 'अन्यथाकर्तुम्' की शक्ति हो। कर भी सके, न भी कर सके और उल्टा भी कर सके। इसलिए निर्वचन करना होगा। क्या करू, क्या न करू, इसके लिए ज्ञान की आवश्यकता होगी अर्थात आखें खोल कर जियो। आखें बन्द करके नहीं। धारा पर बहो नहीं, धारा पर तैरो। तैरने के लिए प्रयत्न करना होगा।

एक बात और कही है। मन्त्र के पहले भाग की 'पश्येम' आदि वाक्यों के साथ एकवाक्यता है, पहले वाक्य में 'शुक्र' का उल्लेख है। क्या 'शुक्र' चक्षु का विशेषण है ? यदि ऐसा मानोगे तो एक वाक्यता स्पष्ट न होगी। शुक्र का अर्थ है बीज शक्ति (Potentiality)जो जन्म के साथ ईश्वर हर प्राणी में देता है। उस बीजशक्ति का विकास करना मनुष्य का कर्तव्य है। आख का विकास करके मनुष्य अच्छा द्रष्टा होता है। हर एक आख वाला देख नहीं सकता। वेद ने कहा पश्यन् न ददर्श'। देखता हुआ नहीं देखता। 'शृण्वन् न शृणोति।' (सुनता हुआ नहीं सुनता)। अत हम को अपनी शक्तियों का पहले विकाश करना पडेगा। फिर उन विकसित शक्तियों का हम जीवन निर्माण में उपयोग कर सकेंगे।

साराश यह है कि इस प्रार्थना में जीवन विकास के मूल तत्त्वों की ओर सकेत है। पाच बातें बताई 'पश्येम, जीवेम, शृणुयाम, प्रब्रवाम और अदीना स्याम।' शृणुयाम का अर्थ है वेद पढे, प्रब्रवाम का अर्थ है सुने हुए वेद का दूसरों को उपदेश करे। यदि चार बातें पूरी हो गई तो अदीनत्व का फल तो मिला रखा है। अदीनता ही स्वातन्त्र्य है। अदीनता ही मोक्ष है। अदीनता ही परम धाम है। वही परम पुरुषार्थ है। उस पद की प्राप्ति के सब साधन हैं और सब से पहला साधन है 'पश्येम'।

सगमन या मेध न हो तो राज्य या शासन की व्यवस्था हो ही नहीं सकती। ऐसे ही सृष्टि विज्ञान मे सूर्य की शक्ति है।

सूर्य के निर्माण से पहले वह विद्युत् शक्ति विशाल आकाश मे बिखरी हुई थी। उस समय वह साम्यावस्था मे थी। विद्युत् की तरगो के सतत कम्पन से वह शक्ति एक केन्द्र में सचित हुई। उस केन्द्र की सज्ञा सूर्य हुई, जहा से ताप और प्रकाश के रूप में वह शक्ति फैल रही है। सूर्य की रश्मिया उसके अश्व है। उन्हें ही गौए भी कहते हैं। सूर्य के शरीर में जो शक्ति है, उसका निरन्तर वितरण या आलम्भन हो रहा है। सूर्य रूपी अश्व का यज्ञ अश्वमेध है, जो सौर जगत् की बहुविध गति का कारण है। सूर्य रूपी गौ के गो मेध से ही उसकी रश्मिया चारों ओर फैल कर सब पदार्थों की रचना कर रही है। सृष्टि विज्ञान की दृष्टि से केवल तीन ही तत्व या मौलिक पदार्थ है—भूत (मैटर), शक्ति (एनर्जी) और मन (माइड)। प्रत्येक जीवधारी मे ये ही तीन तत्व है। इनमें मन या प्रज्ञान का भाग प्रज्ञामात्रा, शक्ति का भाग प्राण मात्रा और भूतों का भाग भूत मात्रा कहलाता है। इन तीनों के स्रोत तीन है—पहला अव्यय पुरुष है, जिससे मन या प्रज्ञा मात्रा का निर्माण होता है। दूसरा अक्षर पुरुष है, जिससे प्राण शक्ति की धारा प्राप्त होती है। तीसरा क्षर पुरुष है, जिससे पाँच भूत बनते हैं। कहा भी है—क्षर सर्वाणि भूतानि। यों विराट प्रकृति मे जो अव्यय अक्षर क्षर है, उनके मेध या यज्ञीय वितरण से ही प्रत्येक व्यक्ति मे मन प्राण भूत के भाग आ रहे हैं।

मूल शक्ति एक होते हुए भी उसकी अभिव्यक्ति तीन रूपों में हो रही है, और फिर वे तीनों शक्तिया एक साथ मिलकर शरीर को चलाती हैं। यदि प्रज्ञा मात्रा (मन), प्राण मात्रा (क्रिया) और भूत मात्रा (भौतिक अर्थ या देह या स्थूल शरीर-पिंड) इन तीन शक्तियों का मेध अर्थात् एकत्र समूहन न हो तो कोई सृष्टि या रचना सम्भव नहीं बन सकती। पिण्ड और ब्रह्माण्ड के सचालन के लिए मेध अर्थात् शक्ति के केन्द्रीय सगमन, आलम्भन या समूहन की अनिवार्य आवश्यकता है।

ससार मे पशु तो अनेक हैं, किन्तु तीन ही मेध्य या यज्ञीय पशुओ का समालम्भन किया जाता है। वस्तुत स्थूल दृश्य भूत रूप को पशु कहा जाता है। पुरुष भी पशु है। 'यदपश्यत तस्मात्पशु।' मूलभूत प्रजापति का नाम अग्नि है। ब्रह्माण्ड व्यापी यच्च यावत् शक्ति की सज्ञा अग्नि है। अग्नि सर्वादेवता, अर्थात् कहने को देवता अनेक है, पर अकेला अग्नि तत्व ही सब देवताओं का स्वरूप है। अग्नि तत्व ही गति तत्व की सज्ञा है। गति तत्व ही सौर मण्डल या सवत्सर के सचालन की एक मात्र कुजी है। जहा अग्नि है वहीं ताप और प्रकाश या गति है।

विश्व का मूल उद्भव गति तत्व है। काल ही गति तत्व है। वही सौर सवत्सर के रूप में अभिव्यक्त हो रहा है। इस सौर जगत् मे सूर्य ही वह अश्व है, जिसका निरन्तर मेध हो रहा है। सौर मडल विराट अश्वमेध है। इस अश्वमेध में सूर्य की रश्मियों का चतुर्दिक वितान हो रहा है। यह रश्मियों की श्वेत चादर ही सूर्य रूपी अश्व की वपा है। इसी के अग्निहोत्र से सूर्य या सौर मडल का जीवन सम्भव बन रहा है। सृष्टि विज्ञान की दृष्टि से न कहीं कोई अश्व है, न उसकी हिंसा है और कोई अन्य वपाहोम है। सभी कुछ आधिदैविक विज्ञान के प्रतीक हैं। प्रतीकों की जब कभी कल्पना की जाएगी, वह स्थूल ही होगी। स्थूल भूतों की शब्दावली ही विज्ञान के प्रतीक या साकेतिक अर्थों का विधान करती है।

पुरुष, गौ और अश्व इन तीन पशुओं के स्वरूप को और भी स्पष्टता से समझा जा सकता है। यदि हम गणित के वृत्त की कल्पना करें तो उसका सम्पूर्ण अस्तित्व केन्द्र, व्यास और परिधि

के रूप मे आ जाता है। केन्द्र में सब गतियों की समष्टि है अर्थात् केन्द्र में गति का नितान्त अभाव है। केन्द्र सर्वथा अविचाली तत्व है। केन्द्र स्थिति का प्रतीक है। केन्द्र से परिधि की ओर जो गति है, वही वास्तविक गति है। परिधि से केन्द्र की ओर जो गति आती है वही आगति कहलाती है। स्थिति गति आगति ये तीन भेद एक ही मूलभूत गतित्व के हैं। बस यही नियम सारे विश्व मे भी हैं। इनमें से स्थिति या प्रतिष्ठा को ब्रह्मा, गति को इन्द्र और आगति को विष्णु कहा जाता है। ये भी वैज्ञानिक परिभाषाए ही हैं। इन्हीं को नामान्तर से पुरुष, अश्व और गौ के प्रतीकों द्वारा प्रकट किया जाता है।

ब्रह्मा या प्रतिष्ठ तत्व पुरुष है। केन्द्र से बाहर की ओर गति अश्व है। इसी लिए इन्द्र का सम्बन्ध अश्व पशु से। इन्द्र अपने अश्व वाहन पर सवार होकर ही गति कर सकता है। बाहर से या परिधि से केन्द्र की ओर आगति की सज्ञा गौ है। वही विष्णु है। विष्णु का घनिष्ठ सम्बन्ध गो से है। यह त्रैधा विभाग प्रत्येक परमाणु में और विराट् ब्रह्माण्ड में सर्वत्र सतत क्रियाशील है। पुरुष, अश्व और गौ तोनों ही अग्नि रूपी प्रजापति के रूप हैं। मूलभूत पशु तो अग्नि ही है (अग्निर्ह्येष यत्पशव, शतपथ ब्राह्मण ६। २। १। १२)। देव तत्व प्राण या अग्नि तत्व का नाम है। विराट विश्व में दो ही तत्व हैं, एक प्राण या गति तत्व (एनर्जी) और दूसरा भूत तत्व (मैटर)। प्राण को देव और भूत को पशु कहते हैं। जो स्थूल या दृश्य है, वही पशु है। सृष्टि का नियम है कि प्रत्येक केन्द्र में देव या प्राण पशु रूप में, और पशु प्राण या देव रूप में परिणमित हो रहा है। अन्न भूत या पशु है। उसकी प्राण में आहुति होकर वह शक्ति स्वरूप बन जाता है और पुन उस शक्ति से शरीर के स्थूल मासादि या पशु भाग का निर्माण होता है। प्राण या देव से पशु का निर्माण एव भूत या पशु से देव या शक्ति का निर्माण होना है। इसे ही यज्ञ कहते हैं। विश्व में स्वत प्रकृति अनेक प्रकार के यज्ञों का विधान कर रही है। उन्हीं की प्रतिकृति वैध यज्ञ है। वहा हिसा का कुछ भी प्रयोजन नहीं है। वह सृष्टि विद्या की प्रतीकमयी भाषा है। किसी भी शरीर मे पशव्या चिति वही है, जो स्थूल रस, असृक, मांस मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र की धातु चिति है इसी पशव्या चिति के आधार पर देव या प्राण की चिति होती है। भूत की सहायता से ही या भूत के आधार पर ही प्राण या देव की अभिव्यक्ति होती है।

पशु विज्ञान को वैदिक सृष्टि विद्या के धरातल पर समझना आवश्यक है अन्यथा अनेक विप्रतिपत्तियों का समाधान सम्भव न होगा। ससार में पशु तो असख्य है, पर यज्ञीय पशु पाच ही है— पुरुष, अश्व, गौ, अवि और अज। ऐसा क्यों है? इस प्रश्न का समाधान साधारण युक्ति या हेतु से नहीं हो सकता। इसके लिए वैज्ञानिक रीति से सृष्टि विद्या की व्याख्या ही एक मात्र समाधान का कारण हो सकती है। किसी को जिह्वा-लोलुपता से मास भक्षण करना ही हो तो पेचीदा विधि विधान से भरे हुए याज्ञिक कर्मकाड के पचडे मे पड़ने की क्या आवश्यकता है? वह तो बहुव्यय साध्य टेढा माग है। अतएव 'उषा वै अश्वस्य शिर' अर्थात् उषा मेध्य अश्व का मस्तक है, इस प्रकार के वाक्यों का अर्थ स्वारस्य हिंसापरक सम्भव ही नहीं है।

सवत्सर यज्ञ विराट अश्वमेध है। सूर्य रूपी अश्व के आलम्भन और वपा होम से सौर मण्डल का यह यज्ञ सम्भव बन रहा है। सौर यज्ञ के वितान में सूर्य ही अश्व है। यदि सूर्य की शक्ति का वितरण न हो तो सौर रचना नहीं हो सकती। सौर रश्मियों के सगमन, समूहन, आलम्भन या मेध से ही सौर यज्ञ निष्पन्न होता है। जो जिस यज्ञ का वितान करता है, वह स्वय ही उसका मेध्य

पशु बनता है, यही सृष्टि का विधान है। प्रजापति ने इस सृष्टि यज्ञ का वितान किया तो उन्हें स्वय इसके लिए पुरुषमेध करना पडा, अर्थात् प्रजापति रूपी पुरुष पशु बन कर इस विराट सृष्टि यज्ञ के यूप में बन्ध गया। यही पुरुष सूक्त में कहा है—

देवा यद यज्ञ तन्वाना अबघ्नन् पुरुष पशुम्।

प्रत्येक रचना एक यज्ञ है। जो जिसकी रचना करता है वह अपनी उस रचना मे स्वय अपनी सर्वहुतबलि देता है। पिता जब पुत्र की सृष्टि करता है तब वह अपनी रेत सृष्टि से सवहुत यज्ञ करता है। प्रत्येक बीज अपने मेध या आलम्भन से अगली वृक्ष सृष्टि और बीज सृष्टि को सम्भव बनाता है। तत्सृष्ट्वादेवानुप्राविशत्—यही विश्व सृष्टि का नियम है।

सूर्य महाकाल का सापेक्ष प्रतीक है। सूर्य ही काल या सवत्सर का रूप है। महाकाल एक रस, अनादि, अनन्त, अव्यक्त, काल तत्व है। वह ब्रह्म तत्व के समान अमूर्त और निष्कल या अखण्ड है। उसमे कल्प, सवत्सर, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, अहोरात्र आदि के खण्ड नहीं है। काल के एक सीमित भाग को कला कहते हैं 'कल सख्याने' धातु से कला और काल शब्द बनते हैं। 'काल कलयतामहम्' के अनुसार काल तत्व ही सृष्टि में सब का कलन करने वाला है। काल ही असीम को मित बनाता है। काल के छन्द मे जो पड जाता है वह सृष्टि यज्ञ के भीतर आ जाता है। सवत्सर उस काल की एक कला है। महाकाल का न आदि है, न अन्त। किन्तु सवत्सर का आरम्भ प्रत्येक उषा है। सृष्टि का जब कोई आरम्भ हुआ होगा, उस पहली उषा को काल के अश्वमेध का एक छोर या सिर कहना चाहिये। वही सिरा काल-रूपी अश्वमेध का मस्तक है। 'उषा वै अश्वस्य मेध्यस्य शिर', प्रत्येक उषा के लिए यह कथन समीचीन है। महाकाल की दृष्टि से उषा एक है। जो पहले दिन थी वही आज है—एकै वोषा सर्व-मिद विभाति (ऋ० ८।५८।२)। किन्तु सापेक्ष काल या सूर्य रूपी सावत्सरिक काल की दृष्टि से प्रत्येक उषा नई है। ऋषि ने उषा को 'पुराणी देवी युवति' कहा है, वह पुरानी होते हुए भी नित्य यौवनवती है। उषा महाकाल का एक अमृत प्रतीक है। वह प्रकाशित होकर तिरोहित हो जाती है, पर काल असमाप्त नित्य तत्व है। स्वय महा काल इस सृष्टि यज्ञ का मेध्य पशु है। महाकाल की रश्मियों या गतिधाराओं का एक बिन्दु या एक केन्द्र के चतुर्दिक् समूहन ही सापेक्ष काल को जन्म देता है। प्राची दिशा के जिस बिन्दु पर सूर्य उदित होता है वह बिन्दु किसी मध्यवर्ती केन्द्र की परिक्रमा करता हुआ अर्थात् बिन्दु २ पर केन्द्र की ओर झुकता हुआ एक वृत्त बनाता है। उसी के चार बिन्दुओं को प्राची प्रतीची-दक्षिणा-उदीची दिशाओं का दिक स्वस्तिक कहते हैं। स्पष्ट है कि वह काल तत्व ही सीमित या नियन्त्रित गतिभाव में आकर दिक रूप मे परिणमित हो जाता है। काल गति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। अश्व और गति दोनो पर्याय हैं। काल रूपी अश्व की गति ही सृष्टि का स्पन्दन या प्राण है। अमूर्त महाकाल का मूर्त रूप ग्रहण करना ही काल का अश्वमेध है।
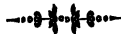
वेद का पढ़ना पढ़ाना, सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

भाषा-समस्या का हल

(श्री के० एम० पणिक्कर)

भारत के लिए एक सामान्य भाषा की समस्या ऐसी बात है जिसने कि हमारे वरिष्ठ राष्ट्रनायकों को एक अविवेकपूर्ण रुख ग्रहण करने को उत्तजित सा किया है। वे अंग्रेजी के गुणो का ऐसे शब्दों में बखान करते हैं कि जिनसे मैकाले की आत्मा को प्रसन्नता होगी।

इस प्रकार की भावना के प्रदर्शन के कई कारण हो सकते हैं। हिन्दी के प्रवक्ताओ जो कि अपनी भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप मे स्वीकृत देखना चाहते हैं, की आक्रामक प्रवृत्ति, (यह कथन युक्ति युक्त नहीं है—सम्पादक) लोगों का अपनी अपनी भाषाओं के प्रति भावुकतापूर्ण अनुराग, यह भय कि सरकारी नियुक्तियों तथा देश के राजनीतिक जीवन में अहिन्दी क्षेत्रों के लोगों के साथ भेदभाव बरता जायेगा तथा यह अस्पष्ट आशका कि अन्तत दक्षिण भारत पर उत्तर भारत का प्रभुत्व हो जायगा। साथ ही यह भावना भी है—और वह उचित ही है—कि यदि अभी उच्च शिक्षा के किसी क्षेत्र में हिन्दी या और किसी भारतीय भाषा पर अनावश्यक जोर दिया गया तो यह प्राय निश्चित है कि भारत वैज्ञानिक कार्य तथा उच्च टैकनोलोजी के क्षेत्र मे पश्चिम के साथ कदम न रख सकेगा।

इसमे सन्देह नहीं कि ये भय एकदम निराधार नहीं लेकिन यदि हम समस्या पर ध्यान से विचार करें तो हमें ज्ञात हो जायेगा कि समस्या का एक युक्तिसगत हल सम्भव ही नहीं बल्कि एक राष्ट्र के रूप में हमारी प्रगति के लिए आवश्यक भी है।

सामान्य भाषा

पहले तो हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि सब इस बात को स्वीकार करते है कि हमें सामान्य कार्यों के लिए एक राजभाषा चाहिये न कि कोई अकेली 'राष्ट्रभाषा'। भारत की सब तेरह भाषाए राष्ट्रभाषाए हैं और इनमे से किसी एक के लिए प्रधानता का दावा दूसरी द्वारा स्वीकार न किया जायेगा। इनमे से प्रत्येक की अपने क्षत्र मे असन्दिग्ध प्रधानता है। अतएव प्रश्न यह है कि तेरह भाषाओं मे से राजभाषा बनने का सबसे बढिया दावा किसका है। सविधान सभा ने पर्याप्त विचार के बाद हिन्दी के पक्ष मे निर्णय किया। वास्तव में और कोई विकल्प सम्भव न था।

एक सामान्य भाषा का क्या कार्य होगा? मुख्यत यह ऐसी भाषा का काम करेगी जो कि सारे भारत मे समझी व बोली जा सके। यह स्पष्ट है कि अग्रजी इस उद्देश्य की पूर्ति नही कर सकती। १३० वष तक की शिक्षा के बाद भी उन लोगों की सख्या जो कि मामूली कार्यों के लिए अंग्रेजी बोल सकते हैं, ५० लाख से अधिक नहीं आकी जा सकती। अवश्य ही, यह उन लोगों की सख्या से बहुत कम है जो कि अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी बोल सकते है। इसके अतिरिक्त अग्रजी बोलने की सामान्य योग्यता प्राप्त करने के लिए वर्षों का अध्ययन आवश्यक है किन्तु दक्षिण मे भी हिन्दी का अध्ययन अपेक्षाकृत सुगम सिद्ध हुआ है। अतएव इस पहलू पर किसी विवाद की गु जाइश नहीं।

न्याय तथा कानून

दूसरा उद्देश्य भारत के लिए ऐसी राजभाषा की व्यवस्था करना है जिसमे कि कानून बनाये जा सकें, जिसका प्रयोग बड़े न्यायालयों में हो तथा जो केन्द्र में सरकारी कार्य के लिए प्रयुक्त की जा सके। यह एक आवश्यक कार्य है लेकिन यह धीरे २ सम्पन्न होगा। कुछ समय तक अंग्रेजी में विधेयक

तथा अधिनियम बनने चाहिए और उनका हिन्दी में सरकार द्वारा स्वीकृत उपयुक्त अनुवाद होना चाहिए। कुछ वर्षों बाद जब नई पीढी बडी हो जाएगी तो मूल हिन्दी मे हो सकता है और उसके अनुवाद दूसरी भाषाओं मे किये जा सकते है। राज्यों की अदालतों मे अदालती काम आवश्यक रूप से प्रादेशिक भाषा में होगा और हिन्दीका प्रश्न केवल उच्चतम न्यायालय के काय मे उठता है।

यहा भी समय का ध्यान रखना होगा। इस बात का हठ कि उच्चतम न्यायालय मे दश वर्षो के भीतर केवल हिन्दी मे कार्य प्रारम्भ हो जाना चाहिए, बगाल, बम्बई तथा दक्षिण के वकीलों को उनकी वकालत से वचित कर देगा। केवल अंग्रेजी मे ही न्यायकार्य होने की स्थिति ५० वर्षो बाद पैदा हो सकी। स्मरण रहे कि १९वीं शताब्दी के अन्त तक अधिकाश उच्चतम न्यायालयों मे अंग्रेज बैरिस्टर ही मुख्यत पैरवी करते थे। जब तक मौजूदा स्कूलों मे हिन्दी पढने वाले लडके हिन्दी मे इतने पारगत नहीं हो जाते कि न्यायालयों मे नेतृत्व ग्रहण कर सकें, तब तक अंग्रेजी को हिन्दी से स्थानान्तरित करना अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के वकीलों को उच्चतम न्यायालय के कार्य से प्राय वंचित कर देगा।

उच्च शिक्षा

उच्च शिक्षा का प्रश्न और भी पेचीदा है। यह स्पष्ट है कि राष्ट्रीय भाषाओं द्वारा उच्च शिक्षा विस्तृत क्षेत्र में पहुँच सकती है। माध्यमिक शिक्षा का माध्यम तो अभी प्रादेशिक भाषाएं हैं ही अतएव धीरे २ विश्वविद्यालयों की शिक्षा भी मातृभाषा द्वारा देनी होगी। लेकिन वैज्ञानिक तथा प्राविधिक शिक्षा का प्रश्न भिन्न है। भारतीय भाषाओं में, चाहे साहित्यिक दृष्टि से वे कितनी ही विकसित क्यों न हों, वैज्ञानिक ज्ञान नहीं—बल्कि आधुनिक वैज्ञानिक विषय सिखाने के लिए आवश्यक पाठ्य पुस्तकें भी नहीं। अतएव यदि लोगों को आधुनिक वैज्ञानिक युग के लिए तैयार करना है तो अवश्य ही कुछ समय तक कि[illegible] बड़ी यूरोपीय भाषा द्वारा शिक्षा देनी होगी।

यह ठीक है कि दो सौ वर्ष पूर्व तक जर्मन तथा रूसी भाषाओं के सम्बन्ध में भी ऐसी समस्याएं मौजूद थीं १९वीं शताब्दी तक भी रूसी भाषा वैज्ञानिक कार्य के लिए एक पिछडी भाषा समझी जाती थी। लेकिन आज स्थिति भिन्न है। जापान ने अपनी भाषा को ऐसा बना लिया कि उसमे आधुनिक विषयों की उच्च शिक्षा दी जा सकती है। इसमे सन्देह नहीं कि हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को भी इसी प्रकार उन्नत किया जा सकता है। लेकिन आज ससार मे जिस तेजी से उन्नति हो रही है उसे देखते हुए हम अपनी वैज्ञानिक प्रगति के लिए बहुत समय तक नहीं रुक सकते। अतएव आधुनिक विज्ञान की शिक्षा अंग्रेजी मे देनी होगी। उच्च औद्योगिक शिक्षा भी उसी मे होगी।

हल

यदि विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषाओं द्वारा शिक्षा दी जाय तो क्या यह सम्भव है? कोई कारण नहीं कि ऐसा न हो बशर्ते माध्यमिक कक्षाओं के अन्तिम वर्षों में अनिवार्य रूप से अंग्रेजी पढाई जाये, विश्वविद्यालयों से पूर्व की कक्षाओ मे उसका पर्याप्त ज्ञान कराया जाये और विश्वविद्यालयों मे उच्च वैज्ञानिक अध्ययन के लिए अंग्रेजी को माध्यम रखा जाये।

जहाँ तक केन्द्रीय सरकार के कार्य और विभिन्न राज्य सरकारों के साथ पत्र व्यवहार का प्रश्न है हिन्दी ही निश्चित रूप से सामान्य भाषा होनी चाहिए। इसमें कोई बडीकठिनाई न होनीचाहिए। प्रादेशिक भाषाएं राज्यों की शासनकार्य की भाषाएं रहनी चाहिये और विश्वविद्यालय के स्तर तक शिक्षा का माध्यम रहनी चाहिये। लेकिन हिंदी एक अतिरिक्त भाषा के रूप मे पहले से ही पढाई जानी चाहिए। माध्यमिक शिक्षा क्रम में आगे चल कर अंग्रेजी भी एक विषय रखा जाये और उच्च वैज्ञानिक शिक्षा अंग्रेजी में दी जाये। इसप्रकार के कार्यक्रमसे हमारी भाषासमस्या हल होजानीचाहिये।

दौलत की मार

[ले०—श्री बा० पूर्णचन्द जी एडवोकेट, आगरा]

एतो न्विन्द्रं स्तवाम ईशान वस्वः स्वराजम् ।
न राधसा मर्धिषन्नः ॥ ऋ० ८ । ८१ । ४ ॥

शब्दार्थ

हे मनुष्यो । एत उ । आओ, हम । नु । अब वस्व ईशान । ऐश्वर्यों के ईश्वर । स्वराज । स्वय राजमान, स्वराट् । इन्द्र परमेश्वर की । स्तवाम । स्तुति करें, भजन करें जिससे वह । न । हमे राधसा । धन द्वारा, सिद्धियों के ऐश्वर्य द्वारा । न । मर्धिषन्त न मार देवे, न मिटा देवे ।

भूखे मरने की बात प्रसिद्ध है । नगों के दु ख पाने की बात को भी सब जानते हैं बेघर और बार के सडकों पर पडे हुए व्यक्तियों को चिन्ता होती है । परन्तु आश्चर्य यह है कि हम इस पर विचार नहीं करते कि दौलत को मार भूखे रहने की मार से अधिक दुख दायी है । दौलत और धन जीवन दाता हैं जीवन के रक्षक हैं । जीवन को उन्नत बनाने वाले हैं परन्तु यह उसी समय तक है जबतक धन और दौलत साधन के रूप मे हमारे सन्मुख हों । यदि साधन के रूप में न रह कर धन और दौलत लक्ष्य बन जाता है, ध्येय बन जाता है तो जीवनका कारण होने के स्थान में मृत्यु का कारण बन जाता है । ऊपर के लिखे हुए वेद मन्त्र में ईश्वर से प्रार्थना की गई है कि हम दौलत की मार से न मरे और इस के उपाय भी बताये गयेहैं । धनवान होना कोई अपराध नहीं धनवानों से देश और जातिका गौरव है । आवश्यकता के समय धनवान ही सहायता कर सकते हैं, दैविक आपत्तियों से बचने के लिये बड़े बडे मकान ही काम में आ सकते हैं किसी के पास कम और किसी के पास ज्यादा दौलत होना भी कोई विशेष आपत्ति की बात नहीं । धन दौलत मजदूरी के रूप मे है या भाग्य से सम्बन्धित है । भाग्य भी अपने ही पुरुषार्थ का रूप है । दूसरे शब्दों मे जैसा हमारा पुरुषार्थ वैसा ही हमारा पुरस्कार होगा । पुरुषार्थ की सामर्थ्य भिन्न भिन्न रूप में हैं । शारीरिक बल, मानसिक बल मे अन्तर है । सुविधायें किस प्रकार की प्राप्त हैं इस मे भी अन्तर है । यदि योग्यता में भेद है तो मजदूरी मे भी भेद होना स्वाभाविक है यदि योग्यता और सामर्थ्य को लक्ष्य मे न रक्खा गया और सब धान २२ पसेरी का ही भाव रहा तो अन्धेर नगरी चौपट राजा वाली बात चरितार्थ होगी और टके सेर भाजी और टके सेर खाजा वाली कहावत भी सत्य हो जावेगी । इसलिए दौलत से व धन से ग्लानि घृणा करने की आवश्यकता नहीं, न धन कमाने में उदासीनता की आवश्यकता है । यदि कोई धन कमाने में लगा हो तो उसको निरुत्साह भी नहीं होना चाहिये वह एक जीवनके आवश्यककार्यमे लगा हुआ है अभाव का निराकरण कर रहा है । किसी दूसरे के पास अधिक से अधिक धन देखकर ईर्षा करने की भी भावना नही रखनी चाहिये । प्रत्येक व्यक्ति को दिन के समाप्त होने पर अपनी मजदूरी को अपने सामर्थ से मिलाकर देखना चाहिये । यदि मजदूरी कम है तो उसे अपने पुरुषार्थ को बढाने का यत्न करना चाहिये । दूसरे को कम धनवान या निर्धन बनानेकी चेष्टा नहीं करनी चाहिये । अब हम धनवान बनने की चेष्टा करें तो हमें दूसरों

का अहित नहीं करना चाहिये। अपना हित साधते हुए दूसरों के हितों पर भी आघात न आने दें और इस परिस्थिति में दौलत एक रोग या मृत्यु के रूप में हमारे सामने उपस्थित न हो इससे बचे रहने का स्वभाव बनाना चाहिये। अभाव को भावके रूपमें लाने के लिये अपने स्वभाव को लक्ष्य में रखना चाहिये और स्वभाव की मर्यादा सबसे आवश्यक है। जिसका स्वभाव मर्यादित है वह कभी भाव मे अभिमानी और अभाव में कभी व्याकुल नही होगा। उसे अपने को अलग और अपने धन और दौलत को अलग देखने की आदत डालनी होगी। ऊपर के वेद मन्त्र मे यह उपदेश है कि हम ईश्वर व इन्द्र की स्तुति प्रार्थना नित्य करते रहें। यह बात ध्यान में रक्खें कि संसार के सब ऐश्वर्य उसके ही आधीन हैं और इस लिये उस का नाम ईश्वर है। यह बात भी नहीं भूलनी चाहिये कि ईश्वर स्वय संचालक और हमारे भाग्यों का निर्माता हैं, न्याय कारी है और यदि हम धन दौलत ऐश्वर्य मकान जमीन पशु, अनाज, एकत्रित करेंगे, प्राप्त करेगे और यदि हम यह बात ध्यान में रक्खेंगे कि इन्द्र रूप परमात्मा की ही कृपा से यह सब मिले है यह सब उसकी ही दी हुई दौलत है और हम तो केवल उसके प्रतिनिधि के रूप में इस का प्रयोग कर रहे है तो हम धन के प्रयोग के समय ईश्वर से विमुख न होवे और धन का दुरुपयोग न करेंगे और धन के दुरुपयोग न करने से न रोग का कष्ट होगा और न मृत्यु का भय। आज यह देखने में आता है कि मनुष्य जितना पदवी में बड़ा और धन की मात्रा मे बड़ा होता जाता है उतना ही ईश्वर को भूलता जाता है। उसे दुनिया के इतने काम लगे रहते हैं कि उसके पास ईश्वर का नाम लेने और ईश्वर का ध्यान करने की फुरसत नहीं रहती। वह ईश्वर का ध्यान नहीं करता केवल धन की ओर ध्यान करता है। अपने पद के नशे में मस्त रहता है और परिणाम स्वरूप सब कुछ होते हुए भी दुखित चिन्तित रहता है। पेट भरने का सामान रहता है परन्तु भूख के लिये तड़फता है। कपड़ों के ढेर हैं परन्तु अपने को नगा अनुभव करता है। ७ मजिल हवेली में रहता हुआ भी दूसरे की ८ मजिल देखकर यह अनुभव करता है कि उसके रहने के लिये मकान ही नहीं है। यदि प्राचीन वैदिक शिक्षाके आधार पर धन कमाते समय, धन जमा करते समय और धन को व्यय करते समय ईश्वर, इन्द्र, परमात्मा का ध्यान रक्खे तो धन साधन रूप होकर हमारे जीवन को पवित्र बना देगा। इस निर्माण के युग में जहा अनेक प्रकार की योजनायें बन रही हैं, खाद्य पदार्थ अधिक उपजाओं, पेड़ अधिक लगाओ, पानी जमा करो, बिजली की शक्ति को बढ़ाओ, यह सब उत्तम लाभदायक योजनायें हैं परन्तु सबसे अधिक आवश्यक है मानव-निर्माण। यदि मानव का भी निर्माण होता गया, उसकी शारीरिक और मानसिक शक्ति के विकास के साथर उसकी आध्यात्मिक शक्ति पर भी ध्यान दिया गया तो उसकी आत्मा बलयुक्त होगी और आत्मिक बलके सहारे वह अपने शारीरिक बल और मानसिक बल का न केवल विकास करेगा अपितु उसका सदुपयोग करेगा। हमारी राष्ट्रीय सरकार अधिक कर लगाकर विदेश से सहायता लेकर, विदेश से ऋण लेकर, देश में ऋण की योजनायें बनाकर, आय के बढ़ाने के उपायों पर बल दे रही है और इस आय बढाने की चिन्ता में कोई उपाय छोड़ा नहीं गया है। मैं राष्ट्र सरकार के विधाताओं से अपने समान प्रजा वर्ग से और सब से यही अनुरोध करुंगा कि वह आय और व्यय को एक साथ अपने सामने रक्खे, प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन का बजट बनाना है। ईश्वर की ओर से जो अवसर उसे प्राप्त है उस से पूरा लाभ उठाना है और यदि प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी आय को बढ़ाते हुए अपने व्यय को भी मर्यादित करता जाये तो कभी दिवाला निकालने का अवसर नहीं आयेगा और नित्य

(शेष ४०८ पृष्ठ पर)

मर्यादा पुरुषोत्तम राम

[लेखक—श्री डा० रामानन्द जी शास्त्री एम० ए०, डी० फिल्]

मर्यादा पुरुषोत्तम राम का जीवन मनुष्य का एक उज्ज्वल आदर्श है। अपने चरित्र की अद्भुत विभूतियों के कारण ही राम 'मर्यादा पुरुषोत्तम' कहलाये। साहित्य के आलोचकों के अनुसार उनके चरित्र में शक्ति, शील और सौन्दर्य तीनों की पराकाष्ठा मिलती है। शक्ति कर्तव्य की क्षमता है शील चरित्र का नैतिक सस्कार है। सौन्दर्य आत्मा की आन्तरिक श्री की रूप और व्यवहार में अभिव्यक्ति है। ये तीनों ही जीवन की मुख्य विभूतिया हैं। इनकी व्यापक कल्पना में अन्य अनेक गुणों का समाहार हो जाता है। इस प्रकार राम के व्यक्तित्व में मनुष्य जीवन की पूर्णता साकार और सजीव हुई है।

भक्ति का आश्रय बनने के कारण राम के जीवन और चरित्र का लौकिक महत्व विस्मृत हो गया। 'वाल्मीकि रामायण' में तो आदि कवि ने राम का चरित्र एक इतिहास के रूप में ही अङ्कित किया। उसमे राम के मानवीय चरित्र का गौरव पूर्णत प्रस्फुटित हुआ है। 'महावीर चरित' और 'उत्तर रामचरित' मे भवभूति ने भी रामके शील तथा पराक्रम की उत्कृष्टता का चित्रण किया है। राम की करुणा, कर्तव्य निष्ठा एव उनके पराक्रम में भवभूति ने 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि' के लोकोत्तर चरित को प्रस्तुत किया। आधुनिक कवि जयशङ्कर प्रसाद ने भी अपने 'स्कन्दगुप्त' नाटक में सैनिकों के गीत मे सेतुबन्ध का सङ्केत करते हुए 'एक निर्वासित का उत्साह' कहकर राम के अपार पराक्रम का निर्देश किया है।

किन्तु पौराणिक युग की भक्ति-धारा के प्रवाह में उत्कृष्ट मानवीय चरित्र की महिमा तिरोहित हो गयी। हिन्दी-साहित्य के मध्यकाल में पराजय और पराधीनता के कारण सास्कृतिक उत्कर्ष के मुख्य मार्ग अवरुद्ध हो गये और एक ईश्वर का ही आश्रय रह गया। जीवन के श्रेय का भक्ति के अनेक रूपों में उद्घाटन हुआ। आत्मिक श्रेय के आधार लौकिक अभ्युदय और सामाजिक श्रेय को लोग पराजय की विवशता में भूल गये। भगवान् की अनन्य उपासना और तन्मय आराधना ही जीवन की साधना का सर्वस्व बन गयी। अपने उद्योग और पुरुषार्थ से निराश होकर पराजित भारतीय समस्त लौकिक कल्याणों का भार भगवान् की अलौकिक शक्ति और अज्ञेय इच्छा पर छोड़कर भक्ति में निमग्न होगये। भगवान् के प्रेम के रूप में भक्ति मनुष्य की एक उत्तम आध्यात्मिक साधना है। किन्तु अपने लौकिक और सामाजिक उद्योग से उदासीन होना भक्तों की भ्रान्ति है। 'गीता' में भगवान् ने स्वय अपने जीवन का उदाहरण देकर कर्म योग का उपदेश दिया है।

'गीता' का यह स्पष्ट उद्देश्य है कि भगवान् का आदर्श केवल आराध्य ही नहीं वरन् मनुष्य के लिए अनुकरणीय भी है। भक्ति का अभिप्राय मनुष्य की प्राकृतिक वृत्तियों का उदयन है। सामाजिक कर्त्तव्य और लौकिक उद्योग को भूल जाना भक्ति की भ्रान्ति है।

शक्ति, शील और सौन्दर्य की पराकाष्ठा होने के कारण मर्यादा-पुरुषोत्तम राम का चरित्र मनुष्य के लिए एक उत्तम आदर्श है। मानवीय सम्बन्धों और कर्त्तव्यों के अनेक पक्ष अत्यन्त उत्कृष्ट रूप मे राम के चरित्र मे अभिव्यक्त हुए हैं। वे आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श मित्र और आदर्श राजा हैं। बाल्यकाल से ही जहा उनके रूप

का सौन्दर्य सब को मुग्ध करता है और उनके चरित्र का शील सब को प्रसन्न करता है वहा उनकी शक्ति का पराक्रम भी किशोरों और युवकों के लिए एक ओजस्वी आदर्श उपस्थित करता है। राम का समस्त चरित्र ऐश्वर्य और शक्ति का ही उज्ज्वल इतिहास है।

सौन्दर्योपासना की प्रधानता ने भगवान् के चरित्र की अनुकरणीयता को भुला दिया। इसी भ्रान्त भक्ति की निश्चेष्टता के कारण मध्ययुग में आततायियों के अनर्गल अत्याचार होते रहे है। यदि राम की उपासना के स्थान पर उनके शक्ति और शीलमय चरित्र का अनुकरण किया गया होता तो आज हमारे देश का इतिहास ही भिन्न होता।

अस्तु, मर्यादा पुरुषोत्तम राम का चरित्र सस्कृति का एक सनातन आदर्श है। उनके जीवन के विविध पक्षों और पराक्रमों में जीवन का एक पूर्ण और ओजस्वी आदर्श मूर्त्त हुआ है। विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा से ही उनके पराक्रमों का इतिहास आरम्भ हो जाता है। ताडका और सुबाहु के वध में किशोर राम का पराक्रम प्रथम बार प्रमाणित हुआ। उसके बाद शीघ्र ही धनुष-यज्ञ में अनेक महाबली राजाओं का मान भङ्ग कर राम ने सीता का वरण किया। ऐश्वर्य के धनी राम के शील में त्याग और साहस भी अपार था। राज्य के परित्याग और वनप्रयाण मे ये ही चरितार्थ हुए हैं।

ताड़का वध से लेकर रावण-वध पर्यन्त राम के चरित्र के विषय मे सब से अधिक ध्यान देने योग्य दो बातें हैं। एक तो यह कि यह सम्पूर्ण चरित्र किशोर और युवा राम का जीवन वृत्त है। दूसरे यह कि यह समस्त जीवन वृत्त एक शक्तिशाली, साहसी और उत्साही युवक के पराक्रमों का इतिहास है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र मे ये दो ही महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं। वस्तत राम के चरित्र का गौरव युवकों के लिए एक ओजस्वी और अनुकरणीय आदर्श बनने में है। भक्ति और उपासना की चकाचौंध में राम के यौवन और पराक्रम का महत्त्वपूर्ण तथ्य तिरोहित हो गया। हमारी सस्कृति की यही भूल हमारे पतन और पराजय का कारण बनी।

युवा राम के इस पराक्रमशील चरित्र की दो दिशाए हैं। एक तो स्त्री और सुजनों की रक्षा और दूसरे इन पर अत्याचार करने वाले दुष्टों का दलन। वस्तुत ये दोनों एक ही सास्कृतिक धर्म के दो पक्ष है। शक्ति के अनेक रूप हैं। मूलत यह सामर्थ्य, साहस और पराक्रम की आत्मगत आस्था है। इसी लिय शक्ति का मूलरूप आध्यात्मिक माना जाता है। शारीरिक बल और अस्त्र शस्त्र का कौशल इस आन्तरिक शक्ति के बाह्य उपकरण और साधन हैं। बौद्धिक शक्ति नीति का प्रकाश बन कर सामाजिक सगठन मे साकार होती है। निर्वासित राम का वन्य जातियों के सगठन से एक सशक्त सेना का निर्माण उनकी इसी प्रतिभा का प्रमाण है। 'सघे शक्ति' कलियुग का ही नहीं, सामाजिक जीवन का एक सनातन धर्म है। शक्ति के इसी व्यापक रूप की भूमिका में युवा राम के पराक्रमशील जीवन का अनुशीलन मानवीय सस्कृति के कल्याण का सिद्ध माग है।

राम के जीवन में शील और सौन्दर्य की भूमिका में शक्ति के पराक्रम का वैभव ही सब से अधिक महत्त्वपूर्ण है। ताडका और सुबाहु के वध मे आरम्भ से ही किशोर राम के पराक्रम का चमत्कार दिखाई देता है। उसके बाद धनुर्यज्ञ में बड़े २ पराक्रमी राजाओं के सामने वे अपने पराक्रम का परिचय देते हैं। राम के वन-प्रयाण में जहा एक ओर उनके महान् त्याग का परिचय मिलता है, वहा साथ ही साथ अपनी युवती और सुन्दर पत्नी को 'निशिचर निकर नारि नर चोरा' से आक्रान्त वन में साथ ले जाने में उनके अपार

साहस का प्रमाण भी मिलता है। अपने पराक्रमी बन्धु लक्ष्मण के सहयोग से वे आरण्यक आतता-यियों से सीता के शील की रक्षा कितनी सतर्कता से करते रहे यह इससे ही स्पष्ट है कि वनवास के प्रथम बारह वर्षों में कोई दुर्घटना नहीं हुई। तेरहवें वर्ष के अन्त में नारी की दुर्बलता और रावण के द्वेष के संयोग से जो सीता हरण की आपत्ति उनके ऊपर आई, उसका सामना भी उन्होंने जिस कुश लता और पराक्रम के साथ किया, वह रामचरित का सब से उज्ज्वल अध्याय है। जहा एक ओर राम ने सीता के वियोग में करुण विलाप किया है, वहा दूसरी ओर उन्होंने बड़ी सचेतनता और कुश लता के साथ दैवसम्पादित दोष के प्रतिशोध के लिए प्रयत्न भी किया है।

सुग्रीव से मित्रता करके ऋक्ष-वानरों की सेना का आयोजन कर रावण की लङ्कापुरी पर अभियान करना नीति-कौशल और पराक्रम दोनों का ही प्रमाण है। छलपूर्वक बालि के वध की घटना राम के शील और पराक्रम दोनों पर एक कलङ्क माना जाता है। इसीलिए 'महावीर चरित' में भवभूति ने साक्षात् युद्ध में बालि का वध कराया है। एक ही बाण से सात ताड़ों को वेध कर राम ने बालि के वध के योग्य शक्ति और पराक्रम का परिचय तो दिया था। किन्तु उन्होंने इस शक्ति का साक्षात् परिचय देना क्यों उचित नहीं समझा यह रामकथा का एक कूट प्रश्न है। बालि-वध में राम की जो कुछ भी नीति रही हो, किन्तु लङ्का के युद्ध में उनका पराक्रम पूर्णत प्रमाणित हुआ है सम्भव है सुग्रीव को उसकी शक्ति की सीमा स्पष्ट करने के लिए, अपने सौहार्द का परिचय देने के लिए तथा बालि के बल के सम्बन्ध में सन्दिग्ध रहने के कारण उन्होंने इस नीति का अवलम्बन किया हो। सुग्रीव और उसके नायकों की श्रद्धा और उनके विश्वास का पात्र बन कर राम ने अपनी नीतिज्ञता के साथ २ नेतृत्व का भी परिचय दिया। लङ्का के युद्ध के पूर्व अङ्गद के द्वारा सन्धि-प्रस्ताव भेज कर तथा विभीषण को अपनी ओर मिला कर उन्होंने उदार नीति और कूटनीति दोनों का ही प्रदर्शन किया। कुम्भकर्ण, रावण आदि के वधपूर्वक लङ्का की विजय राम के पराक्रम का अन्तिम और पूर्ण प्रमाण है।

राम के पराक्रमपूर्ण जीवन-चरित में शक्ति और वीरता के साथ २ उनका उद्देश्य भी अवलोकनीय है। शक्ति और पराक्रम जीवन के साध्य नहीं, साधन हैं। उनका महत्व उन लक्ष्यों पर निर्भर करता है, जिनकी रक्षा और साधना के लिए इनका उपयोग होता है। राम के पौरुष और पराक्रम का उद्देश्य आरम्भ से ही स्त्रियों के शील और सज्जनों की शान्ति की रक्षा करना था। विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा में किशोरवय में ही उन्होंने इसका परि-चय दिया था शबरी का सत्कार स्वीकृत करके भी राम ने नारी के प्रति अपनी उदार भावना का परिचय दिया। बालि का वध करके तारा का उद्धार करने में भी उनकी यही भावना प्रकट होती है। सीता के उद्धार में तो यह भावना उनके जीवन का ध्येय ही बन गई।

सीता-वियोग की करुणा, सुग्रीव के साथ सौहार्द, निषादराज का सत्कार, शबरी का सम्मान, जटायु के साथ समवेदना, लक्ष्मण की मूर्छा पर विलाप आदि में राम के शील की उदार, स्निग्ध और गम्भीर मानवता का परिचय मिलता है। यह मानवीय भावना राम के पराक्रम का मुकुट है। इसी की रक्षा और साधना उनके वीरत्व का लक्ष्य रही। भरत के भ्रातृभाव, लक्ष्मण की सेवा, सीता के पातिव्रत, सुग्रीव और विभीषण की मित्रता, सुग्रीव के सैनिकों का सहयोग, अन्य समस्त वन-वासियों की प्रीति आदि में राम की यह विशाल मानवीय भावना प्रतिफलित हुई। राम के महान् चरित्र में यही मानवीयता और इसकी रक्षा तथा

(शेष पृष्ठ ४०८ पर)

हिन्दीमय जीवन

(लेखक—श्री ला० धर्मपालजी बी०ए०, म्युनिसिपल कमिश्नर, उपप्रधान केन्द्रीय आर्यसभा, अमृतसर)

किसी भी सदुद्देश्य की सिद्धि के लिए आन्दोलन अनिवार्य है। प्रत्येक आन्दोलन के दो रूप होते हैं एक सघर्षात्मक, दूसरा रचनात्मक। दोनों एक दूसरे के पूरक होते हैं, एक के अभाव में दूसरा कितना भी महत्वशाली क्यों न हो उससे इष्ट की पूर्णांश मे सिद्धि सदा शकित ही रहती है। आन्दोलन के दोनो रूपो के समन्वय मे ही सफलता का रहस्य है।

गत वर्ष आर्य समाज ने पजाब मे मातृभाषा एव राष्ट्रभाषा हिन्दी के सरक्षणार्थ एक सघर्षात्मक आन्दोलन चलाया। सात मास से अधिक यह आन्दोलन अपने उग्र रूप मे चलता रहा। इस सत्याग्रह ने गान्धी जी के नेतृत्व मे चल चुके सत्याग्रहों की याद ताजा करा दी, अपितु कई बातों मे यह सत्याग्रह पहले के सभी सत्याग्रह आदोलनों से अधिक विशेषता रखता था। हजारों की सख्या में आर्य नर नारियों ने अपने आपको बलिदानार्थ अर्पित किया, जेलें ठसाठस भर गईं, लाठीचार्ज हुए, फिरोजपुर जेल का काड हुआ बहु अकबरपुर में निरीह जनता पर अत्याचार की पराकाष्ठा कर दी गई, ग्रीष्म की दाहक धूप मे साधु महात्माओं ने चण्डीगढ मे सैक्रेटरियेट के सामने खुले मैदान में बैठ कर तप किया। महात्मा आनन्दभिक्षु जी तथा दूसरे आदरणीय वीरों ने अनशन व्रत की यातनाओं को सहर्ष सहा और भी वह सब कुछ हुआ जो सघर्षात्मक आन्दोलनों मे प्राय होता है। बलिदान की पृष्ठभूमि में सात मास तक चलता हुआ यह आन्दोलन अन्ततोगत्वा स्थगित हुआ। इसमे आर्यसमाज को सफलता हुई या विफलता, इस विवादमे न पड़तेहुए भी मै यह तो नि सकोच कहूगा कि सघर्षात्मक आन्दोलन की समाप्ति के पश्चात् आर्य नेताओं ने रचनात्मक कार्यक्रम की ओर किंचिन्मात्र भी ध्यान नहीं दिया। हिन्दी प्रसार के लिये रचनात्मक कार्यक्रम का एक विशाल श्रेय है जिसकी ओर ध्यान दिये बिना हम सघर्षात्मक आन्दोलन का सफल सचालन करके भी इष्ट प्राप्ति से वचित ही रहेंगे

सत्याग्रह को स्थगित हुए ६ महीने हो गये हैं। जनता मे निराशा और क्षोभ की अत्यधिक मात्रा बढ गई है कि शासन सत्ता ने हमारे नेताओं को दिलाये गये विश्वासों और आश्वासनो को पूर्ण नहीं किया और अब फिर से सत्याग्रह सचालन की योजना चर्चा का विषय बन रही है। सरकार की ओर से प्रतिज्ञा भग का पाप तो हुआ, यह नि सन्देह सत्य है, परन्तु आज मै दूसरों की शिथिलताओं और बुराइयोंकी चर्चा न कर अपनी गलतियों और दुर्बलताओं की ओर अपने नेताओं का ध्यान आकर्षित करना आवश्यक समझता हूँ। ज्यू ही सत्याग्रह स्थगित हुआ, हम लोगों ने भ्रान्त धारणा ले ली कि अपना आन्दोलन समाप्त हो गया। समझा तो यह जाना चाहिये था कि आन्दोलन नहीं आन्दोलन का सघर्षात्मक रूप मात्र स्थगित हुआ है और हमे तत्काल आन्दोलन के रचनात्मक रूप की ओर क्रियाशील हो जाना चाहिये था, मगर ऐसा हुआ नहीं। यदि इन ६ महीनों मे हमने रचनात्मक कार्यक्रम को अपनाया होता तो पहले तो शासन-सत्ता ही इस प्रकार की उपेक्षा वृत्ति से काम लेने का साहस न कर पाती और यदि ऐसा दुस्साहस करती भी तो हमारा रचनात्मक कार्यक्रम ऐसी नई स्थिति अवश्य पैदा कर देता कि शासक दल अपने दृष्टिकोण को परिवर्तित करने पर विवश हो जाता।

यह रचनात्मक कार्यक्रम क्या था ?—अपने जीवन को हिन्दीमय बना लेना। सच्ची बात तो यह है कि हम हिन्दी के समर्थकों ने हिन्दी के महत्व को तो समझा—अपने सास्कृतिक जीवन के विकास के लिए इसकी अनिवार्यता को भी अनुभव किया और इसके लिए कर्णप्रिय नारे भी लगाये वस्तुत अपने व्यवहारिक जीवन को हिन्दीमय नहीं बनाया और हमारी इसी दुर्बलता ने भाषा सम्बन्धी अनेकों राजनैतिक भ्रान्तियों को जन्म दिया और हमारे पक्ष को शिथिल किया। सात महीनो के हमारे सघर्षात्मक आन्दोलन ने एक बडा अनुकूल वातावरण उत्पन्न कर दिया था—हमारा कर्तव्य था कि इस अनुकूल वातावरण मे, सरकार की ओर से क्या होता है और क्या नहीं होता, इसकी अधिक चिन्ता न करते हुए हम एक नया घोष (Slogan) लेकर जनता के सामने आ जाते कि "अपना जीवन हिन्दीमय बनाओ।" हमारे इस कार्यक्रम से प्रान्त का कायाकल्प ही हो जाता। पजाब में एक हजार से ऊपर आर्य समाजें हैं, आर्य समाज के सरक्षण में चलने वाले सैंकडों स्कूल, कालिज, गुरुकुल, अनाथालय और दूसरी विविध सस्थाए हैं—सनातन धर्म सभाए हैं, महावीर दल, आर्यवीर दल, छात्र सघ, विद्यार्थी परिषद्, जैन सभा, वैद्य सभा, ब्राह्मण सभा—इनके अतिरिक्त स्वय सेवक सघ, भारतीय जनसघ, हिन्दू महासभा और रामराज्य परिषद् की स्थान २ पर शाखाए हैं। रचनात्मक कार्यक्रम का प्रारम्भ इन सस्थाओं से होता जो प्रस्ताव पास करके घोषणा करतीं कि आगे से हमारा सारा पत्र व्यवहार देवनागरी लिपि में होगा। यदि इतना भी हो जाता तो कम से कम २० हजार पत्र प्रतिदिन देवनागरी में लिखे हुए पता वाले पोस्ट आफिसों मे पहुँचने शुरू हो जाते। इनसे आगे हम व्यापारिक सस्थाओं और व्यापारिक वर्ग के पास प्रेरक पत्र भेजते और स्थान २ पर प्रभावशाली व्यक्ति उनसे सम्पर्क स्थापित करते कि वह भी अपना पत्र व्यवहार और बहीखाता देवनागरी में करें तो पर्याप्त अश मे हमे सफलता मिलती। बहीखाता को देव नागरी मे रखने के सम्बन्ध मे मेरा निजी अनुभव है कि इसमे कोई भी व्यावहारिक कठिनाई नहीं। मै पिछले ११ वर्षों से अपना सारा बहीखाता देव नागरी मे रख रहा हूँ और मुझे कभी कोई कठिनाई अनुभव नहीं हुई। स्थान २ मे जन सभाए की जातीं जिनमे समृद्ध और प्रसिद्ध व्यापारी देवनागरी को अपनाने की अपनी प्रतिज्ञाए घोषित करते तो इसका प्रभाव छोटे २ व्यापारियो पर भी होता। आर्य समाजों, सनातन धर्म सभाओं और अन्य सस्थाओं के सदस्य सार्वजनिक सभाओं मे प्रतिज्ञा लेते कि हम अपने जीवन में हिन्दी का व्रत लेते है और अपने व्यक्तिगत व्यवहार में यथा सम्भव देवनागरी का ही प्रयोग करेंगे तो यह सब आयोजन प्रान्त के नागरिक जीवन को हिन्दीमय बना देता और जनता के दैनिक व्यवहार का सबल प्राप्त कर लेने पर हिन्दी की अवहेलना कर सकने की सामर्थ्य न कैरों मे होती और न नेहरू मे।

स्पष्टवादिता के लिये पहले ही क्षमा याचना कर लेने के पश्चात् मैं प्रार्थना करता हू कि आज जो स्थिति है उस पर थोड़ा सा गम्भीरता पूर्वक विचार कीजिये। आर्य समाजों का अधिकतर कार्य अभी तक उर्दू लिपि मे ही हो रहा है—हमारी शिक्षा सस्थाओं, स्कूलों और कालिजों मे अभी तक अग्रेजी का ही प्रभुत्व है। सर्वसाधारण की बात छोड़िये हमारे नेताओं और ख्याति प्राप्त पुरुषों के दैनिक व्यवहार में देवनागरी का प्राय बहिष्कार पाया जाता है। हमारे दैनिक और साप्ताहिक समाचार पत्रों में भी अधिकतर उर्दू और अग्रेजी का बोलबाला है। शासन की ओर से तार घरों में हिन्दी में तार दिये जाने की व्यवस्था हो जाने पर भी आज कितनी तारें हिन्दी में दी जाती हैं ? अग्रेजी में और हिन्दी में

प्रकाशित होने वाले रेलवे टाइमटेबलों की सख्या का मिलान कर देखिये कि कितने लोग हिन्दी के टाइमटेबलों को व्यवहार मे लाते है ? सार्वजनिक सभाओं के सूचनार्थ जो विज्ञापन शहरों की दीवारों पर लगेमिलतेहैं उनमें कितने प्रतिशतमे देवनागरी का प्रयोग है ? ऐसी और भी कितनी ही बातें है जो गम्भीर चिन्तन की अपेक्षा रखती हैं ।

गत वर्ष के आन्दोलन मे हमने देखा कि पर्याप्त प्रचार और प्रकाशन के पश्चात् भी पजाब के बाहर के हमारे भाई पजाब मे हिन्दी की समस्या और हमारे आन्दोलन के यथार्थ रूप को भली प्रकार समझ नहीं पाते थे। इसका कारण था हमारे घोषो और आचरणमे अन्तर का होना। इस वैषम्य को अपने रचनात्मक कायक्रम से सर्वथा समाप्त कर देना हमारा सर्वोच्च कर्तव्य था, मगर इस ओर हमारा ध्यान नहीं गया। पजाबी से हमारा कोई विरोध या द्वेष न था न है । पजाबी हिन्दी का ही एक प्रान्तीय रूप होने से हिन्दी ही है। जिस प्रकार अवधी, बुन्देलखन्डी, मागधी, व्रजभाषा और अन्य बोलियें अपनी स्थानीय भिन्नता से सयुक्त होते हुए भी हिन्दी ही का प्रातीय अथवा स्थानीय रूप समझी जाती है, उसी प्रकार पजाबी बोली भी अपनी स्थानीय भिन्नता को साथ रखते हुए भी हिन्दी का ही एक अग है। ऐसी स्थिति मे पजाबी से हमारे विरोध का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। विरोध की बात तो केवल इतनी थी कि हिन्दी के ही इस प्रान्तीय रूप (पजाबी) के लिए देवनागरी का प्रयोग निषिद्ध कर दिया गया, जिस स्थिति को आर्य समाज कदापि स्वीकार नहीं कर सकता था क्योंकि देवनागरी पर लगाये गये इस प्रतिबन्ध का कोई शैक्षणिक अथवा भाषा विषयक आधार न था—इस प्रतिबन्ध का कारण एक उस साम्प्रदायिक दल की तुष्टिमात्र था जिसकी मनो वृत्ति में देश की अखण्डता कोई महत्व नहीं रखती और जो जिन्ना के पदचिन्हों पर चल कर देश के पुनर्विभाजन के षडयन्त्र रचता रहा है। इस प्रतिबन्ध को स्वीकार करना सास्कृतिक, सामाजिक एव राष्ट्रीय सभी दृष्टिकोणों से घातक था। बस देवनागरी पर लगाये गये इस अराष्ट्रीय एव अनैतिक प्रतिबन्ध के विरोध मे हमारा आन्दोलन था तथा इसी के प्रतिकार के लिए हमने गत वर्ष सघर्ष किया और रचनात्मक काय के रूप मे भी उसी देवनागरी को अपने व्यवहारिक जीवन मे लाकर हम आन्दोलन को सच्चे अर्थो मे सफल बना सकते थे। सत्याग्रह के स्थगित होने पर जो अनुकूल वातावरण था वह इस रचनात्मक कार्य के लिए बहुत ही उपयुक्त अवसर था मगर हम उससे लाभ उठा नहीं सके।

कहने और लिखने को और भी बहुत सी बातें हैं परन्तु अधिक विस्तार मे जाकर इस लेख के कलेवर को बढाना नही चाहता। अब भी समय है कि हम अपनी भूल को समझें और नये सघर्ष की रूपरेखा जब तक परिपक्व नहीं होती, तब तक रचनात्मक क्षेत्र की ओर हम अपनी शक्तियों को केन्द्रित कर दें। सार्वदेशिक सभा, पजाब प्रतिनिधि सभा तथा प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों से मै विनय पूर्वक निवेदन करता हू कि वह गम्भीरता से इस आदर्श की ओर अग्रसर हों और जल्दी से जल्दी जनता के सामने यह प्रोग्राम लेकर पहुचे कि—

"आओ हम अपना जीवन हिन्दीमय बनायें"
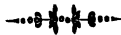
रूस में संस्कृत

[लेखिका—श्रीमती कमला रत्नम्]

रूस में सस्कृत जानने वाले भारतीयों के लिए बड़े आनन्द और विस्मयके अवसर प्रस्तुत होते हैं। हवाई जहाज से उतरते ही मास्को एयरपोर्ट पर उन के स्वागत के लिए—उनके विशेष कार्यस्तर से सम्बन्ध रखने वाले कई स्त्री पुरुष प्रतीक्षा करते रहते हैं। इनमें से अनेक विभिन्न भाषा भाषी दुभाषिये अथवा 'पेरिवोचिक'—सस्कृत मे परिवाचक होते हैं। इनमें से कई स्त्रियों के नाम सुनिये माया, लीला, वीरा मीरा, इरा, इरिना। फिर इनका एक दूसरे से परिचय कराया जाता है उत्तर मिलता है।

'म्ये ओचिन् प्रियानो वास वीदित्"
[वयमत्यन्तप्रीता वो दृष्ट्वा]

आगन्तुक के कान खड़े हो जाते हैं—क्या वह वास्तव में आधुनिक रूसी भाषा सुन रहा है अथवा सस्कृत के रूसी स्वरूप को! उदाहरण के लिए और सुनिये —

मया मात् (मम माता), 'मोइ स्ताषिइ ब्रात्' (मम स्थविरो भ्राता), चितेरे प्तीत्सी (चत्वारि पतत्रिण), त्रे तीया दोच [तृतीया दुहिता] द्व रिकी [रेचकी] [द्वे रेखे], ओन् इदृयोत व स्वोयी दोम (अय गच्छति स्वीय धाम),

---

(पृष्ठ ४०१ का शेष)

प्रति आनन्द के रूप में दिवाली ही रहेगी। इस उद्देश्य की पूर्ति केलिये प्रत्येक व्यक्ति को अपने सम्बन्ध में सायकाल और प्रात काल विचार करना होगा। यदि वह शीशा देखे तो अपनी सुन्दरता परखने के लिये नहीं परन्तु यह विचार करे कि मै कौन हू, क्या हू, मैं मुह दिखाने काबिल हू या नहीं। मेरे मुह पर कोई ऐसा दाग या धब्बा तो नहीं है जिसको देखकर जनता मेरी निन्दा करे और मेरे अपमान का कारण बने।

❀

(पृष्ठ ४०४ का शेष)

साधना में प्रयुक्त होने वाला उनका पराक्रम ही युवकों के लिए अनुकरणीय आदर्श है। खेद की बात है कि पौराणिक धर्म की अलौकिकताओं के आडम्बर और चकाचौंध में राम के आदर्श का यह महत्त्वपूर्ण तत्त्व लुप्त हो गया। यह कहना असगत न होगा कि इस तत्त्व के लुप्त हो जाने से ही हमारे देश का भाग्य भी सुप्त हो गया। मध्यकाल में भारत के पराजय और उसके पतन का कारण यही है कि वह स्त्रियों के शील और सज्जनों की शान्ति के रक्षक तथा आततायी दुष्टों का दलन करने वाले महापुरुषों के आदर्श का अनुशीलन करने के स्थान पर उनकी उपासना मे तन्मय होकर अपने लौकिक और सामाजिक उत्तरदायित्वों को भूल गये। जिन राम ने वनवासियों की सेना का सगठन करके लङ्का विजय की, उन्हीं के उपासक फूट के कारण विशृङ्खल होकर पराजित हुए। आज भी स्वतन्त्र भारत के जागरण और नवनिर्माण का मार्ग राम के मानवीयता तथा पराक्रम से पूर्ण आदर्श का अनुकरण ही है। आडम्बर पूर्ण भक्ति के प्रचार की अपेक्षा युवकों में युवा राम के आदर्श की प्रेरणा देश का अधिक कल्याण कर सकती है। पुरुषोत्तम राम का जन्म युवकों के लिए शक्ति साधना का ही मङ्गल मन्त्र है। इसी मन्त्र की साधना में युवकों का गौरव, समाज की प्रतिष्ठा और राष्ट्र का कल्याण निहित है।

❀

गरयाचिइ आगोन् (ग्रीष्म अग्नि)
वीरा तापति पेचकु (नीरा तापयति पाचकम्),
रुस्किइ नरोद् ओचिन् गास्ति प्रियेम्निइ—
(रूसिन्रा अत्यन्तमतिथिप्रिया)

ति ज्नाइश_ मयु मिया तिलनील्सु ? (जानासि त्व मम प्रियतमाम् ?) येइस्त मसिस्तोव (षट् मासा)।

जार=ज्वर। विस्नो=वसन्त। परानात=पराजय। न्येबो=नभ। ब्येदा=, वेधा, वेदना। म्योद्=मधु। म्यासो=माम। सिइन्=सूनु। वोदा वोद्का उद्क

क्रिया पदों की अद्भुत समानता —एतो व्यगयत=एष वगयति।

एता गेव्यूष्का माया ज्नावयत=एना देवी माया ज्नावयति।

गृ ति जीव्योष ? कुत्र त्व जीवसि ? या जीवु व मस्क्वे=अह जीवामि मास्कोनगरे। कुदा ति इद्योष ? कुत्र त्व यासि ?

मीरा ज्नायेन कुदामी इद्योम=मीरा जानाति कुत्र वय गच्छाम।

अब इनकी एकाध लोकोक्तिया पढिए —
'ज्नानिये स्वियत् अ न्ये ज्नानिये त्मा"
(ज्ञान ज्योति अज्ञान तम)

"नियत दिम ब्येज अग्न्या" (नास्ति धूम अग्निना विना' अथवा ग्दे ग्दे दिम ता ता अगोन" ('यत्र यत्र धूम तत्र तत्र अग्नि।")

नवागन्तुक भारतीयों की यात्रा जब मोजियत सघ मे समाप्त हो जाती है तो इनके रूसी मित्र इन्हें विदा देते समय पुष्पस्तवको के साथ साथ ये चिरपरिचित शब्द दोहराते हैं "श्यास्लीव व पूती। शुभस्ते पन्था।"

सस्कृत और रूसी भाषा में केवल ऊपरी ध्वनि साम्य ही नहीं है, परन्तु महत्वपूर्ण विशेष साम्य व्याकरण की दृष्टि से भी है। दोनों मे सज्ञा सर्व-नाम, धातु शब्दों के रूप चलते हैं। उपसर्ग, प्रत्यय आदि में भी बहुत साम्य है। प्र वि स सह ता आदि प्रचुरता से रूसी मे पाये जाते हैं। कारक, विभक्ति लिग और काल आदि व्याकरण के निगूढ नियमों मे भी साम्य है। व्याकरणके कुछ उदाहरण सुनिये—

मीरा खादीला ...	मीरा गता
मीरा विखादीला	मीरा विगता
एतो मोइ द्यदुष्का	एष मम पितामह
एतो मोइ प्रद्येदुष्का	एष मम प्रपितामह

भाववाचक सज्ञा बनाने के लिए ता प्रत्यय का उपयोग होता है—

तिम्नो	तिम्नता	तम	तमस्ता
क्रास्नोये	क्रास्नोता	रक्त	रक्तता
ओस्त्रोये	ओस्त्रोता	तीक्ष्ण	तीक्ष्णता

मैने रूसी भाषा का अध्ययन केवल तीन महीने हुए प्रारम्भ किया है, उसका निष्कर्ष आप के सामने प्रस्तुत है। आप स्वय कल्पना कर सकते है कि जीवन काल के रूसी और सस्कृत के तुलनात्मक अध्ययन से हमे क्या क्या रत्न नहीं प्राप्त हो सकते।

ऊपर के उदाहरणों से यह सिद्ध है कि किसी पूर्व, चिरपूर्व काल मे हमारे पूर्वज और रूसी भाषा भाषी जनसमूह के पूर्वज एक ही भूमि पर निवास करत होंगे, एक ही मातृभाषा बोलते होंगे, तथा रहन सहनऔर चाल चलनमे भी बहुत साम्यहोगा। लगभग १५० वर्ष पहले तक रूस के उक्राइन प्रदेशमें सामन्त और योद्धा सिर पर उसी प्रकार लम्बी शिखा धारण करते थे जैसी हमारे भारतवर्ष की द्विज जातिया अभी तक करती हैं। बहुत से भारतवासी उक्राइन की राजधानी कीव जाकर अपनी आखों वहा के सामन्तों के पुराने चित्रों और नाटकों मे यह देख आए हैं। यह हमारे भारतीय पाठकों के लिए दिग्दर्शनमात्र है। यहां सास्कृतिक अक्षय भण्डार बन्द पड़ा है, जिसकी कुजी न तो अकेले रूसियों के पास है और न अकेले भारतीयो के पास ही। रूसी भारतीय मित्रता की उभयमुखी कुजी से इस भाण्डार को खोलने का आजकल उपयुक्त अवसर है। भाग्यवश भारतवर्ष

स्वतन्त्र है और भारत रूस के सांस्कृतिक सहयोग के सुवर्ण में हमारे प्रधान मन्त्री की प्रतिभा के कारण राजनीतिक मित्रता की सुगन्ध भी वर्तमान है।

संस्कृत भाषा का विधिपूर्वक अध्ययन रूस में पिछले २०० वर्षों से आरम्भ हुआ। १८ वीं शताब्दी के दूसरे भाग में रूस मे येकतरीना द्वितीया के शासनकाल में "भाषाओं का तुलना त्मक शब्दकोष" प्रकाशित हुआ इसमें लगभग १०२ संस्कृत भाषा के शब्द सम्मिलित किये गये थे। इससे ज्ञात होता है कि लगभग १७६८ में जब सर विलियम जोन्स ने शकुन्तला का अंग्रेजी में अनुवाद कर यूरोप की साहित्यिक जनता में खलबली मचा दी थी और यूरोप के प्रत्येक सभ्य नगर में संस्कृत भाषा के आविष्कार की चर्चा चल पड़ी थी, उस समय रूस का ध्यान भी प्राचीन भाषा की ओर आकर्षित हो चुका था। १८४४ में पीटर्सबर्ग की 'विज्ञान अकादमी' के सदस्य पावेल याकोवलेविच पेत्रोव ने 'नलोपाख्यान' के प्रथम सर्ग का अनुवाद मूल संस्कृत से रूसी भाषा में किया। इसके पश्चात् मास्को, कीव, त्बिलिसी, कज़ान और खारकोव के विश्वविद्यालयों में संस्कृत भाषा साहित्य, भाषा शास्त्र और प्राचीन इतिहास की दृष्टि से पढ़ी जाने लगी। सब से अधिक काम पीटर्सबर्ग अथवा आधुनिक लेनिनग्राड में हुआ, क्योंकि यहा ज़ारों के समय में रूस की राजधानी थी और यह रूस का सांस्कृतिक केन्द्र था।

संस्कृत के अनेक रूसी विद्यार्थियों और अध्यापकों में प्रोफेसर मिनायेव का नाम उल्लेखनीय है, जिन्होंने दो बार भारत की यात्रा की और रूस में भारतीय अध्ययन की नींव डाली। तुलसी कृत रामायण के रूसी अनुवादकर्ता प्रो० बराभिकाफ ने इनकी जीवनी लिखी है। मिनायेव के अनेक ग्रन्थों में "पाली व्याकरण" प्रसिद्ध है, जिसका यूरोप की कई भाषाओं में अनुवाद हुआ और जिसका उपयोग सीलोन और बर्मा में ही पाली अध्ययन के लिए होता रहा है।

मिनायेव के अनेक शिष्यों में सब से प्रसिद्ध श्वेरबात्स्की हुए जिनके शिष्य व्लादीमीर इवानोविच कल्याणोव आज कल अपने गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए लेनिनग्राड विश्वविद्यालय और विज्ञान अकादमी में संस्कृत का अध्यापन कर रहे हैं। ये ही महाभारत के आदि पर्व के प्रसिद्ध अनुवादक हैं।

कल्याणोव—अथवा श्री कल्याणमित्र से ४ घंटे लगातार मेरी बातचीत हुई। इस बीच में इन्होंने बताया कि जब इन्होंने अपने गुरू से मेघदूत काव्य पढ़कर समाप्त किया तब आचार्य श्वेरबात्स्की ने इन्हे बुलाकर हृदय से लगा लिया और कहा 'पोजद्रा-लायु दूषिन्का, [अपने जीवन में मै तुम्हारा अभिनन्दन करता हू।

इस प्रकार इन विद्यार्थियों के सतत प्रयत्न और महान् परिश्रम से बौद्ध साहित्य के एक बड़े अंश का तथा गृह्यसूत्र, अर्थशास्त्र, बेताल पचविंशति का, शुक सप्तति, पञ्चतन्त्र, जातकमाला, मृच्छकटिक आदि ग्रन्थों का मूल से रूसी भाषा में अनुवाद हो चुका है। इनमें से कुछ प्रकाशित हो चुके हैं और कुछ प्रेस में हैं। व्लादी मोर कल्याणोव आज कल महाभारत के सभा पर्व पर काम कर रहे हैं और साथ २ भारतीय दर्शन तथा संस्कृति सम्बन्धी दूसरे ग्रन्थों के अनुवाद में सहायता दे रहे हैं। इनका एक प्रिय शिष्य एरमान आज कल मुद्रा राक्षस के अनुवाद में लगा हुआ है। मास्को विश्वविद्यालय में दो रूसी स्त्रिया कोचेर मीना और त्सिरकिना संस्कृत विभाग में काम कर रही हैं। २७ अगस्त १९५४ में कल्याणोव अखिल संसार पूर्व विद्या परिषद् (वर्ल्ड ओरियण्टल कान्फ्रन्स) में सोवियत प्रतिनिधि होकर गये थे। वहा पान प्रस्तावना करते समय इन्होंने निम्नलिखित आर्या छन्द में कहा था —

"मैत्राय भारतवर्षं सोऽयेद् भूम्योरनल्पाय
पात्रमुत्थापयाम्यह शान्त्यर्थं सर्वभूतये ॥"

लाजा होम की परिक्रमा

(ले०—श्रीयुत स्वामी मुनीश्वरानन्द सरस्वती आर्यसमाज, हापुड़)

मास ज्येष्ठ स० २०१५ वि० के सार्वदेशिक पत्र में प्रकाशित मेरे एक लेख पर श्री रामावतार सिंह जी, आर्य समाज मगरहा (मिर्ज़ापुर) ने आपत्ति करते हुए लिखा है कि "मेरी राय में लाजा होम की परिक्रमाओं में वधू आगे और वर पीछे रहना चाहिये।" आपने प्रमाण में संस्कार चन्द्रिका और प० बुद्धदेव जी मीरपुरी कृत संस्कार विधि भाष्य प्रस्तुत किये हैं और लिखा है कि मेरी राय में ये दोनों ग्रन्थ माननीय हैं और बहुत दिन भी हो चुके है। आपका यह लेख सार्वदेशिक पत्र के मास भाद्रपद स० २०१५ वि० के अक में प्रकाशित हुआ है। मै श्री रामावतारसिंह जी की उक्त आपत्ति के निवारणार्थ ही ये पंक्तियां सार्वदेशिक पत्र के पाठकों की सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ।

श्रीमन्! संस्कार चन्द्रिका और प० बुद्धदेव जी मीरपुरी कृत संस्कार विधि भाष्य आर्य समाज के सिद्धान्त ग्रन्थ नहीं हैं। आप भले ही प्रमाण मानें। पर उक्त दोनों ग्रन्थ आर्य समाज के सिद्धान्त ग्रन्थों के रूप में हमें मान्य नहीं हैं। आर्य समाज की सैद्धान्तिक प्रामाणिकता के लिए जिन २ ग्रन्थों को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा अपनी धर्मार्य सभा के विद्वानों से निर्णय करा कर मान्य घोषित कर देती है, उन २ ग्रन्थों को ही हम प्रमाण मानते हैं, अन्यों को नहीं चाहे वे किसी के लिखे और कितने ही पुराने क्यों न हों। दूसरे जो टीका ग्रन्थ मूल के विरुद्ध हो वह कभी प्रमाण नहीं हो सकता। तीसरे किसी ग्रन्थ को छपे बहुत दिन होने से उसे प्रमाण नहीं माना जा सकता। आपके इस न्याय से तो न जाने कितने और किस २ प्रकार के ग्रन्थ प्रमाण कोटि में आ जायेंगे। इस लिए ऐसे समस्त ग्रन्थों का प्रमाण वहीं तक मान्य है जहा तक उनका ऋषि कृत ग्रन्थों और आर्य समाज के साथ सैद्धान्तिक विरोध न हो। इसके विपरीत नहीं। इस परिक्रमा वाले स्थल पर दोनों ही ग्रन्थों का संस्कार विधि के मूल लेख के साथ विरोध होने से इनका लेख प्रमाण नहीं हो सकता।

एक बात आपने भी संस्कार चन्द्रिका के देखा-देख बड़ी अद्भुत लिख दी है कि "जब वर आगे रहेगा तब (वधू) की रक्षा नहीं कर सकता।" बन्धुवर! रक्षा आगे होकर ही की जाती है पीछे रह कर नहीं। लोक में प्रतिदिन देखने में भी यही आता है कि रक्षक आगे और रक्ष्य पीछे रहता है। यही समीचीन और बुद्धिसगत भी है। इसलिए संस्कार विधि मूल के आधार पर परिक्रमा करते समय वर आगे वधू उसके पीछे और कलशवाहक तथा दण्ड पुरुष वधू के पीछे चलें यही युक्तियुक्त और शास्त्रानुकूल है। आप संस्कार विधि के शिलारोहण और लाजा होम परिक्रमा के अवसर पर वर वधू की स्थिति विषयक लेख को ध्यानपूर्वक कई बार पढ़िए और विचारिए आपका यह भ्रम स्वयमेव निवृत्त हो जायेगा।

प्रमाण भाग पर विचार

चारों वेदों मे कहीं पर भी ऐसा लेख नहीं है कि "लाजा होम की परिक्रमाओं मे वधू आगे और वर पीछे रहे।" हां "वर वधू के आगे और वधू वर के पीछे चले" ऐसा वर्णन तो अनेक मन्त्रों में आता है, यथा —

भगो राजा पुर एतु प्रजानन्।

अथर्व० १४। १। ५६॥

भगस्त्वेतो नयतु हस्त गृह्य।

अथर्व० १४। १। २०॥

अग्निरासीत् पुरोगवः।

ऋग्वेद १०। ८५। ८॥

अर्थ—(राजा) विद्यादि गुणों से शोभायमान (भग) ऐश्वर्यवान् वर (पुर) वधू के आगे (एतु) चले। हे वधू! (त्वा) तुझे (भग) भजनीय सेवनीय वर (इत) यहा से (हस्त गृह्य) हाथ पकड़ कर (नयतु) ले जावे। (अग्नि)

विद्यादि गुणों से प्रसिद्ध वर सदा से (पुरोगव आसीत) वधू के आगे चलता आया है।

ये मन्त्र अथर्व और ऋक् के विवाह प्रकरणों के हैं। इन मन्त्रों मे भग तथा अग्नि शब्द वर के लिए आये हैं। पुर एतु, नयतु, हस्त गृह्य और पुरोगव ये प्रयोग निश्चित ही वर का वधू के आगे चलने का विधान करते हैं। अथर्ववेद के चौदहवें काण्ड का प्रथम सूक्त विवाह विषयक है। इस सूक्त के मन्त्र ४२ मे वधू को वर के पीछे चलने का उपदेश दिया गया है कि 'पत्युरनुव्रताभूत्वा सन्नह्यामृतायकम्' हे वधू ! पति के पीछे चलकर अर्थात् अनुवर्तिनी होकर अमृत को प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध हो जा। इस प्रकार वेद मे वर का वधू के आगे चलने और वधू का वर के पीछे चलने का स्पष्ट विधान है।

बहुत से सज्जन ऋग्वेद १०। ८५। ३८ तथा अथर्ववेद १४। २। १ 'ओ३म् तुभ्यमग्रे पर्यवहन्" इस मन्त्र का ऐसा अर्थ लेते हैं कि "वधू आगे और वर पीछे रहे"। उक्त मन्त्र मे जो अग्रे शब्द है, उसे ठीक न समझ कर ही प्राय लोग उपरोक्त भाव निकालते है। अथर्ववेद का० १४ सू० २ मन्त्र ३२ "देवा अग्रे न्यपद्यन्त" इस मन्त्र के भाष्य में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज 'अग्रे' शब्द का अर्थ 'प्रथम' करते हैं। ओ३म् तुभ्यमग्रे० इस मन्त्र पर प्राचीन और नवीन अनेक विद्वानों का भाष्य मिलता है। वे लिखते हैं — (१) गन्धर्वा हे अग्ने तुभ्यमग्रे पर्यवहन् प्रायच्छन्नित्यर्थ । सायणाचार्य । (२) अग्रे पूर्व जन्मदिनादारभ्य। जयराम । (३) अग्रे पूर्व जन्मदिनादारभ्य। गदाधर । (४) हे यज्ञाग्नि ! पहिले कन्या को विद्वान् याज्ञिक तेरी परिक्रमा कराते हैं। जयदेव शर्मा विद्यालंकार । (५) हे ज्ञानवान् परमेश्वर और आचार्य तेरे समक्ष हम युवक लोग । अथर्व वेदीय मन्त्र का जयदेव भाष्य।

महर्षि दयानन्दादि उपरोक्त पाचों विद्वानों ने 'अग्रे' शब्द का अर्थ प्रथम, पहिले, जन्म दिन से लेकर, तथा समक्ष किया है। अत अग्रे शब्द का अर्थ "कन्या आगे चले" यह सर्वथा अशुद्ध और अग्राह्य है।

अब रहे गोभिलादि गृह्यसूत्रों के वचन। सो जिन सूत्रों को आपने वधू के आगे चलने के पक्ष मे सामश्रमी भाष्य के आधार पर प्रस्तुत किया है, वास्तव मे वे सूत्र तो वधू को पीछे और वर को वधू के आगे चलने का विधान करते है। यथा — हुत्वोपोत्तिष्ठत । २। २। १। अनुपृष्ठ पति परिक्रम्य दक्षिणत उदङ्मुखोऽवतिष्ठते वध्वञ्जलि गृहीत्वा। २। २। २। हुते पतिर्यथेत परिक्रम्य प्रदक्षिणमग्नि परिणयति। २। २। ८॥

अर्थात् विवाह का प्रधान होम करके वर वधू खड हो जावें। पश्चात् (गोभिल गृह्यसूत्रानुसार लाजा होम के लिए) वर वधू के पीछे से घूम कर दक्षिण भाग मे आ वधू की हस्ताञ्जलि पकड कर उत्तराभिमुख खडा रहे। (इसी अवस्था मे) लाजा होम की समाप्ति पर वर जिस प्रकार वधू के पृष्ठदेश से दक्षिण भाग मे आया था, पुन उसी प्रकार पीछे से वधू के उत्तर भाग मे जाकर, वधू को अपने पीछे चलाता हुआ अग्नि की प्रदक्षिणा करे। यह तो हुआ गोभिलीय सूत्रों का भावार्थ। अब जरा सूत्र २, २, ८। पर सत्यव्रत सामश्रमी से प्राचीन चन्द्रकान्त भाष्य भी देखिये —हुते पति परिव्रज्य पुनरागत्य। कथ पुनरागन्तव्यम्। यथेत यथा येन प्रकारेण पत्नी पृष्ठ देशेन इत गत गमन कृत पत्नी दक्षिणस्यां, तथैव पत्नी पृष्ठदेशेन पुनरागन्तव्यमित्यर्थ तदेवमागत्य प्रदक्षिण यथा भवति तथा पत्नीं परिणयति परि सर्वता भावेन नयति— अग्ने प्रादक्षिण्येन भ्रामयेदित्येतत्।

संस्कृत भाष्य का अर्थ वही है जो हमने ऊपर हिन्दी मे सूत्रार्थ लिखा है। खादिर गृह्य सूत्र मे भी परिक्रमाओं का ठीक ऐसा ही विधान है। अत लाजा होम की परिक्रमाओं मे वर का आगे और वधू का पीछे चलना संस्कार विधि के अनुकूल तथा सर्व शास्त्र सम्मत है।

राजनीति और सदाचार

भारतीय राजनीति शास्त्रो ने राज्य का कर्तव्य धर्म के मार्ग को प्रशस्त करना माना है। राज्य धर्म में सशोधन तथा नियन्त्रण करे इस प्रकार की व्यवस्था कहीं मान्य नहीं रही। पश्चिम मे यूनानी राज्य दर्शन से प्रारम्भ होकर मध्ययुग तक राजनीति और सदाचार का जो सम्बन्ध चल रहा था, उसके प्रति सर्व प्रथम मैकेवली ने विरोध व्यक्त किया। उसके सामने सशक्त राज्यकी स्थापनाका लक्ष्य था। उसने धर्म और सदाचार को राज्य का पृथक बनाया। वीसो ने उसके इस अश की व्याख्या इस प्रकार की—कोई भी परम्परा सदाचार एव नैतिक नियम राज्य के विपरीत नहीं रह सकते। मैकेवली के वैज्ञानिक व्याख्याकार हॉब्स ने तो सदाचार और धर्म को केवल राज्य के अन्तर्गत ही नहीं बतलाया, अपितु उसने कहा कि कोई भी नियम और विधान तब तक केवल शब्दमात्र है, जब तक उनके पीछे तलवार न हो। उसने धर्म तथा सदाचार को राज्य से उत्पन्न माना। रूसो ने जिस सामान्य इच्छा का रूप प्रस्तुत किया, वह भी मनुष्य के रीति रिवाज, व्रत, उत्सव, धर्म इत्यादि का स्रोत बना। हीगेल ने राज्य का आचारिक चित्र अवश्य खींचा, किन्तु उसका राज्य 'विश्वात्मा' का प्रतिबिम्ब था। काराट की भी दार्शनिक व्याख्या इसी प्रकार की थी। राज्य की उपयोगितावादी व्याख्या उतने अश मे ही स्वीकार की, जितने अश मे वह मनुष्य की भौतिक 'उपयोगिता' पूर्ण करे। इस प्रकार राजनीतिक विचारों के विकास मे राज्य का वह सर्वाधिकारवादी रूप सामने आया जो धर्म और सदाचार की व्यवस्था ही नही उनको उत्पन्न भी करता है। वह अपने लक्ष्य की पूर्ति मे धर्म की व्याख्या करता है, उसमे उलट फेर करता है। साथ ही उसकी उपेक्षा भी करता है।

राज्य और व्यक्ति के नैतिक सम्बन्धों में सबंध क्या है, इसमे एक बात यहा पर ध्यान देने की है। आधुनिक राजनीति शास्त्र व्यक्ति की ईमानदारी नैतिकता का बडा घोष करता है। जनवाणी, देववाणी, जनता जनार्दन के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। किन्तु मैकेवली से लेकर मार्क्स तक किसी ने भी मनुष्य पर विश्वास नहीं किया। सभी विचारकों ने मनुष्य को अपनी योजना को स्वीकार करने के लिए बाध्य किया है। सर्वहारा के अधिनायकत्व में सर्वहारा को अधिनायक की आज्ञा का इसलिए पालन करना चाहिये कि सर्वहारा मूर्ख है, वह अपने हितों को नहीं समझता है।

आज भारत का सत्ताप्राप्त और सत्ता पाने के लिये इच्छुक दोनों वर्ग इसी राजनीतिक विकास के परिणाम हैं। राज्य को धर्म निरपेक्ष घोषित किया गया है, किन्तु धर्म एव सदाचार के नियमों को राज्य उतने ही अश में मान्यता देने को तैयार है, जितने अश में वह उन्हें स्वीकार करता है। विवाह, उत्तराधिकार, उपासना, पारस्परिक सम्मिलन और रीति रीवाज के नियम सब न्याय निर्माण राज्य के द्वारा सम्पन्न किया जा रहा है। एक ओर राज्य के सर्वाधिकारवादी रूप को शीघ्रता पूर्वक बढावा दिया जा रहा है और दूसरी ओर यह भी स्वीकार किया जा रहा है कि राज्य परिवर्तनशील है और समाज शाश्वत। इस स्थिति

में परिवर्तनशील का शाश्वत पर जो नियन्त्रण हो रहा है उससे वही गतिरोध और संघर्ष उत्पन्न होगा जो पश्चिम में हुआ है।

आज राज्य को एक नया रूप दिया गया है। वह है उसका जनकल्याणकारी रूप। यद् यद् भाव्य नीति' (लैसेज फेवर पालिसी) का दूसरा संस्करण है। हिन्दू कोड बिल के विचार के समय जनता का विरोध करते हुए स्वर्गीय अम्बेडकर ने कहा था कि जनता मूर्ख है वह अपना कल्याण क्या समझे? नेहरू जी जनता जनार्दन की सेवा अपना धर्म समझते हैं किन्तु यदि उनकी योजना का जनता ने विरोध किया तो नेहरू जी के अनुसार जनता का नैतिक स्तर गिर जाता है। उसी नैतिकता को शुद्ध करना कल्याणकारी राज्य का लक्ष्य है। नापित यदि बाल बनाने मे असावधानी कर दे तो राज्य का यह कर्तव्य है कि उन्हें समाप्त करके जन कल्याण के नाम पर सरकारी नापितों की दुकान स्थापित कर दे। पुजारी यदि यात्रियों का उचित स्वागत न करे तो सरकारी पुजारी की तुरन्त नियुक्ति कर दी जाय अर्थात राज्य जनता के सारे व्यवहारों को अपने हाथों में लेकर उनकी व्यवस्था करे यही राज्य का कर्तव्य है। धर्म सदाचार का अस्तित्व उतने ही अश मे है, जितने में राज्य स्वीकृति दे और उनको उत्पन्न करे।

भारतवर्ष मे सदाचार या धर्म चर्च जैसी कोई सस्था न थी, न तो होगी किन्तु सदाचार और राज्य का सघर्ष अनिवार्य है। श्री गाधी जी ने राजनीति पर सदाचार का प्रतिबन्ध स्थापित करना चाहा था किन्तु उनकी इस योजना को नेहरूजीने उलट दिया। लेकिन इस सघर्ष की समाप्ति यहीं पर नहीं होती। अब भी धर्मसापेक्ष राज्य की स्थापना के लिए प्रयत्न चल रहा है। देश में राज नीति के निरकुश रूप को समाप्त करके उसे सदा चार पर प्रतिष्ठित करने की इच्छा रखने वाले लोगों का कर्तव्य है कि वे इस समस्या पर विचार करें।

(सिद्धान्त वैशाख शुक्ल ८ अक ३ वर्ष १४)

देवनागरी ही क्यों?

यह मान कर दुःख होता है कि मन्मथनाथ गुप्त जैसे हिन्दी के विद्वान् लेखक भी रोमन लिपि की वकालत करते हैं। १९३८ में देश भक्त सुभाष चन्द्र बोस ने भी भारतीय भाषाओं के लिए रोमन लिपि के व्यवहार के पक्ष में विचार व्यक्त किये थे जिनका पर्याप्त विरोध हुआ था।

यूरोपीय अथवा अन्य पाश्चात्य भाषाओं के लिये रोमन लिपि भले ही एक पूर्ण लिपि मानी जा सके किन्तु भारतीय भाषाओं के लिए वह नितान्त अपूर्ण, अनुपयोगी और अव्यवहार्य है। हम जैसा बोलें वैसा ही उसमें लिखा जा सके, यह क्षमता उसमें नहीं है।

वही लिपि पूर्ण और वैज्ञानिक हो सकती है जिसमें एक व्यक्ति जैसा बोले दूसरा व्यक्ति उसे वैसा ही लिख सके और तीसरा व्यक्ति उसे उसी रूप में पढ सके। देवनागरी लिपि में 'राम' शब्द लिखते हैं तो पढने वाले इस शब्द को 'राम' पढ़ेंगे किन्तु रोमन लिपि में Rama लिखने पर कोई उसे 'राम' कोई 'रामा' और कोई 'रमा' पढ सकता है। स्पष्ट है कि रोमन लिपि में भारतीय भाषाओं को यथार्थ रूप में लिख सकने की क्षमता नहीं है। 'तवर्ग' तो उसमे है नहीं (केवल 'न' है) सन् १९३७ में मैंने लिपि के सम्बन्ध में किसी पत्र में एक लेख पढा था। उसमें देवनागरी के पक्ष में महर्षि दयानन्द सरस्वती का यह अकाट्य तर्क दिया गया था —

"देवनागरी लिपि के अतिरिक्त किसी भी अन्य लिपि मे ङ, ञ, ण और न इस प्रकार नहीं लिखे जा सकते कि उनका कठ, तालु आदि स्थानानुरूपों का सही उच्चारण तीसरा पढने वाला व्यक्ति कर सके। रोमन लिपि में उक्त चारों वर्णों के लिए केवल 'एन' ही लिखा जाता है जिसमें न' का ही बोध होता है।"

देवनागरी लिपि का समर्थन हम भावावेश या मोहवश नहीं कर रहे हैं। वस्तुत उसमें विश्वलिपि

होने की क्षमता है। काच के कड़े के मोह में यदि कोई जान बूझ कर रत्न को ठुकराता है तो इसका उपाय ही क्या है ?

(हिन्दुस्तान साप्ताहिक ७-९ ५८
नटवरलाल स्नेही नागदा का पत्र)

अ गूठी

ईसाइयत में विवाह के अवसर पर अगूठी का प्रयोग बहुत प्राचीन काल से होता आ रहा है। विवाह सस्कार में इसी को साक्षी करके प्रतिज्ञाए की जाती हैं। इसके अतिरिक्त अ गूठी सासारिक सम्पदा की भी द्योतक होती है जो वर वधू को प्रदान करता है। यह सुवर्ण की बनी होती है क्योंकि सुवर्ण सत्य और स्थिरता का प्रतीक माना जाता है। अ गूठी बाए हाथ की तीसरी अ गुली में पहनाई जाती है क्योंकि यह माना जाता है कि इस अ गुली की एक नस का सीधा सम्बन्ध हृदय के साथ होता है जो प्रेम और निष्ठा का भण्डार होता है।

(ऐन साइक्लो पीडिया आव रिलीजन पृष्ठ ३२४)

रविवार

ईसाई लोग सप्ताह के इस प्रथम दिवस को 'ईसा का दिन' मानते हैं। उनके मन्तव्यानुसार ईसा इस दिन मर कर जीवित हुआ था। (यह कपोल कल्पना है—सम्पादक)

यह दिवस प्रार्थना उपासना का दिन नियत किया गया। इस दिन लोग शताब्दियों से गिरजा घरों में एकत्र होकर प्रार्थना करते चले आ रहे हैं। इस दिन अन्य बहुसख्यक कार्य स्थगित रखे जाते हैं। प्रोटैस्टेन्ट लोग इस दिवस की पवित्रता पर विशेष ध्यान और बल देते रहे हैं। १७वीं शती में इ गलैंड में इस दिन सब प्रकार के आमोद-प्रमोद और मनोरजन बन्द रखे जाते थे। १०० वर्ष तक यह क्रम चलता रहा। प्रोफेसर हक्सले और डीन स्टेनली प्रभृति सज्जनों ने बडी कठिनाई से अद्भुतालयों और चित्रशालाओं को रविवार के दिन खुला रखने की व्यवस्था कराई। १८[illegible] यहा 'नेशनल सण्डे लीग' नामक एक सस्था स्था पित हुई जिसने रविवार के दिन नृत्य गाय तथा रेल की छोटी सस्ती यात्राओं की व्यवस्था कराने का यत्न किया। वर्तमान में रविवार को केवल वे ही रगशालाए खुल सकती हैं जो ईसाई चर्च के सदस्यो को प्रवेश टिकट देती है। स्थानीय अधि कारियों की स्वीकृति से सब सिनेमागृह खुल सकते हैं। अब भी कानून की पुस्तकों पर कानून विद्यमान हैं जो मनोरजनों आदि को निषिद्ध करार दे सकते हैं

(ऐन साइक्लो पीडिया आव रिलीजन पृष्ठ ३६३)

वैदिक वर्ण व्यवस्था

"पश्चिमी मस्तिष्क वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था का पोषक है। (क) डा० रौबैक ने एक जगह स्प्रेंजर के हवाले से लिखा है कि मनुष्य जीवन के चार भाग हैं —

(१) गृहस्थ (The Economic) (२) ब्रह्मचर्याश्रम (Tne Theoritical) (३) वानप्रस्थ (Thc Artistic) तथा (४) सन्यासी (The Religious)

The Psychology of Charactor by
Dr A A.Roback p 323)

(ख) Ruskin रस्किन ने भी अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ Unto the last में लिखा है —

The five great intellectual profe ssions relating to daily necessities of life have hither to existed in every civilized nation

(1) The soldiers to deferd it.
(2) The Pestors to teach it
(3) The Physicians to keep it in health
(4) The lawyers to enforce justice in it
(5) The merchants to provide for it.

महर्षि जीवन

यह वेदना औषधोपचार से शमन होने वाली नहीं है

एक रात का वर्णन है कि महाराज आधी रात के समय जाग पडे और उठ कर इधर उधर चक्कर लगाने लगे। उनके पाव की आहट सुन कर एक कर्मचारी की भी आख खुल गई। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि स्वामी जी किसी बडी व्याकुलता और घबराहट में घूम रहे हैं। उसने विनय की 'भगवन्! यदि कोई वेदना हो तो आज्ञा कीजिये। सेवक औषधोपचार करने के लिये समुपस्थित है। यदि आदेश हो तो वैद्य को भी बुला लाऊ।

उस समय स्वामी जी ने दीर्घ सास लेकर कहा, 'भाई! यह बडे वे। से बढती हुई वेदना, आपके आषधोपचार से शमन होने वाली नही है। यह वेदना भारत मे परिश्रमी लोगो की दुर्दशा के चिन्तन से चित्त मे अभी उत्पन्न हुई है। ईसाई लोग कोल भील आदि भारत वासियो को ईसाई बनाने के लिए अपनी कल्पनाओं के ताने बाने तन रहे हैं। रुपया भी पानी की तरह बहाने को कटिबद्ध है, परन्तु इधर आर्य जाति के भी पुरोहित हैं जो कुम्भकर्ण की नींद सोये पड़े है। उनके कान पर जू तक नहीं रेंगती। मे अब यह चाहता हू

अर्थात् जान रस्किन की सम्मति में जीवन की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रत्येक सभ्य जाति में पाच बौद्धिक व्यवसाय प्रचलित हैं —

(१) क्षत्रिय, राष्ट्र रक्षा के लिये।
(२) ब्राह्मण, राष्ट्र को शिक्षा देने के लिये।
(३) वैद्य, राष्ट्र को स्वस्थ रखने के लिये।
(४) वकील, न्याय करने के लिये।
(५) वैश्य, जीवन सामग्री जुटाने के लिये।

इनमें से २, ३, ४ ब्राह्मण वर्ण के अन्तर्गत ही माने जाते हैं। इस प्रकार वैदिक व्यवसाय ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्णों से सम्बन्धित ३ ही हैं चौथा शूद्र वर्ण श्रम से सम्बद्ध है। रस्किन ने उपर्युक्त बौद्धिक व्यवसायों का इस प्रकार विवरण देते हुए एक बडे महत्व की बात अन्त मे लिखी है कि उपर्युक्त व्यवसाय वालों के लिये मरने का आवश्यक अवसर (Due Occasion of Death) क्या है? यदि सिपाही युद्ध से भाग जाय, ब्राह्मण झूठ सिखाने लगे, वैद्य प्लेग से डर कर भाग जाय, यदि वकील न्याय मे विघ्न डाले यदि व्यापारी अपने व्यवसाय में झूठा हो तो उन्हे मर जाना चाहिये। रस्किन ने अपने इस लेख के इस प्रकरण को इस प्रसिद्ध उक्ति के साथ समाप्त किया है कि 'जिस व्यक्ति को मरना नहीं आता उसे जीना भी नहीं आ सकता।'

(The man who does not know how to die, does not know how to live P 37 38)

(वर्ण व्यवस्था का वैदिक रूप पुस्तक की श्री स्व० महात्मा नारायण स्वामी जी कृत भूमिका पृ० च, छ)

❀

कि राजों महाराजों को सन्मार्ग पर लाकर सुधार करूं। आर्य जाति को एक उद्देश्य रूपी सुदृढ सूत्र में आबद्ध करू।"

सुधार के बिना मिलाप असम्भव है

काशी में एक दिन भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी श्री सेवा में उपस्थित हुए। उस समय स्वामी जी अल्काट महाशय से अपना जीवन चरित्र लिखवा रहे थे। वार्त्तालाप मे श्री हरिश्चन्द्र जी ने निवेदन किया 'महाराज! आपके खण्डन करने से लोगों में वैर विरोध बहुत बढ़ता है।'

महाराज ने अपने हाथो को मिला कर कहा— "मेरा उद्देश्य इस प्रकार लोगो को आपस मे मिलाना है। सब समुदायों को एकता मे लाना है। मैं चाहता हू कि कोल भील से लेकर ब्राह्मण-पर्यन्त सब मे एक ही जातीय जीवन की जागृति हो। चारों वर्ण के लोग एक दूसरे को अग अगी समझें। परन्तु क्या करें, सुधार के बिना मिलाप असम्भव है। मेरा खण्डन हित और सुधार से भिन्न और कुछ भी नहीं है।"

पहले मनुष्यों को प्रेम से अपनाओ

श्री रामाधार और सरयूदयाल आदि सज्जनों ने महाराज को लखनऊ में नदी के किनारे मोती महल में ठहराया। एक दिन उस स्थान की मनो हारिणी शोभा देख कर श्री रामाधार जी ने कहा, "यदि ऐसा रमणीय आर्यसमाज मन्दिर हो तब आनन्द आवे।" इस पर महाराज ने कहा, "ऐसा विशाल धर्म मन्दिर मिलना कोई दुलभ बात नहीं है। यह कोठी राजा दिग्विजयसिंह जी की है। यदि आप उन्हें पक्का आर्य बना लें तो यही धर्म-मन्दिर बन सकता है। रामाधार जी, पहले मनुष्यों को प्रेम से अपनाओ, आर्य बनाओ फिर उनके सुन्दर स्थान आप ही के हो जायेंगे।"

शोभा सब को साथ लेकर आगे बढ़ने में है

एक दिन रामाधार जी ने लम्बी सांस लेकर कहा "भगवन्! आप इतना पुरुषार्थ करते हैं परन्तु लोग पौराणिक लीलाएं छोड़ते ही नहीं। उन्हीं लोगों में रहकर सुधार कैसे होगा? ये कहीं हमें भी न ले डूबें?"

स्वामी जी ने ढाढस बंधाते हुए कहा "ब्रह्म समाजियों और ईसाइयों की भांति पृथक् होकर, सामूहिक जातीय जीवन की मात्रा को घटा देना हमारा उद्देश्य नहीं है। इन्हीं लोगों में रहते अपने कर्तव्य कर्म करने जाओ। वैदिक धर्म का प्रचार करो यदि ये लोग आपका विकट विरोध करें और आपसे घोर घृणा करें तब भी इनको अपनाने का प्रयत्न करो, परन्तु अपनी धर्म-धारणा से एक अगुली भर भी इधर उधर न झुकना चाहिये। अन्त में य सब आपका रूप बन जायेंगे। उतावली से कुछ मनुष्य आगे निकल सकते हैं परन्तु शोभा सब को साथ लेकर आगे बढ़ने मे है?"

कभी भारत सुवर्णमय बन रहा था

एक दिन महाराज व्याख्यान देकर अपने आसन को आ रहे थे। उनके साथ सरयूदयाल आदि कई सज्जन थे। मार्ग में जरा जीर्ण कलेवर वाली एक अति दुर्बल बुढ़िया मिली। उसके शरीर के सारे वस्त्र जर्जरित थे। महाराज को आते देख कर वह कातर स्वर में कहने लगी 'बाबा' मैं कई दिनों की भूखी अनाथा हूँ। मेरा पालन पोषण करने वाला कोई भी नहीं है। भगवान् तेरा भला करेगा। आज का अन्न तो दिलादे।"

उस वृद्धा के आर्त्तनाद को सुनकर स्वामी जी के पाव रुक गये। उसका दारुण दुःख देख कर उनका हृदय पसीज गया। वे आखोंसे टप-टप आसू बरसाते हुए अपने प्रेमियों से कहने लगे "कभी वह काल था जब भारतवर्ष सुवर्णमय बन रहा था। यहा खाद्य पदार्थों की इतनी अधिकता थी कि भूखा, अनाथ देखने को नहीं मिलता था। परन्तु आज यह समय है कि भूख के कष्ट ने इस बुढ़िया को इतना व्याकुल बना दिया है कि इसे यह भी विवेक नहीं रहा कि जिससे मैं मांग रही हूँ वह तो आप ही माग कर निर्वाह करता है।" महाराज ने उस बुढ़िया को काफी अन्न दिला दिया।

आर्य समाज का परिचय

[लेखक—रघुनाथ प्रसाद पाठक]

अध्याय ६

वर्तमान हिन्दू धर्म

पुराण

आज कल के हिन्दू वस्तुत पुराण पन्थी हैं जो १८ उपपुराणों के अतिरिक्त संख्या में १८ हैं। परन्तु स्वामी दयानन्द पुराणों को अवैदिक सिद्ध करते हैं। वेद की परिभाषा में पुराण ब्राह्मण ग्रन्थों को कहते हैं।

आजकल के हिन्दू समाज में मूर्ति पूजा, जात-पात की कट्टरता तथा अन्यान्य जिन विविध बुराइयों ने घर किया हुआ है इनका वेदों में समर्थन प्राप्त नहीं होता। अत पुराण जो इन बुराइयों के मूल हैं निश्चित रूप से वैदिक धर्म के विरुद्ध एव त्याज्य हैं।

पुराण महर्षि वेद व्यास की रचनाएं बताई जाती हैं जिन्होंने महाभारत और वेदान्त लिखा था परन्तु यह बात गलत है। पुराणों की रचना भिन्न २ व्यक्तियों के द्वारा भिन्न २ कालों में बौद्ध और मुस्लिम काल में हुई प्रतीत होती है। स्वामी दयानन्द की इस स्थापना का समर्थन युरोपीय विद्वानों और रमेशचन्द्र दत्त जैसे प्रसिद्ध हिन्दू लेखकों के द्वारा होता रहा है। पुराणों के खण्डन का मुख्य कारण यह है कि इनमें वैदिक शिक्षाओं के विरुद्ध बहुत सी बातें भरी हुई हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं :—

१—देवी के नाम पर पशु वध, (देवी के प्रसिद्ध मन्दिर कलकत्ता में, विन्ध्येश्वरी का मन्दिर उत्तर प्रदेश में, ज्वाला देवी का पंजाब में है जहा असंख्य पशुओं का निर्दयता पूर्वक वध होता है।

२—भैरव भगवान को शराब की भेंट चढाना और उसे पी जाना।

३—भगवान के व्यभिचार कम में विश्वास रखना।

४—ब्रह्मा का अपनी पुत्री के साथ जारकर्म (देखें श्रीमद्‌भागवत तथा अन्य कई पुराण)

५—विष्णु का जलन्धर की पत्नी के साथ दुष्कर्म करना। (देखें शिव पुराण)

६—ऋषि पत्नियों के साथ शिव की काम क्रीड़ाएं। (शिव पुराण)

७—इन्द्र का गौतम की पत्नी के साथ दुराचार करना। (श्रीमद्‌भागवत)

८—देवी का अपने पुत्रों के साथ मैथुन करना। (देवी भागवत पुराण)

९—चन्द्रमा का अपनी गुरुपत्नी बृहस्पति के साथ व्यभिचार करना जिससे बुद्ध की उत्पत्ति हुई (श्रीमद् भागवत)

१०—योगीराज महात्मा कृष्ण पर राधिका और कुब्जा आदि के साथ दुराचार करने का लाञ्छन लगाना।

११—असम्भव बातों पर विश्वास करना।

१२—हनुमान द्वारा चन्द्रमा को ग्रस लेना।

१३—रावण के दस सिरों का होना।

१४—मानधाता का अपने पिता के पेट से उत्पन्न होना।

१५—व्यास की माता का मछली के गर्भ से जन्म लेना।

१६—देवी अहिल्या का पत्थर बन जाना।

१७—बौद्ध और मुस्लिम काल की अनेक घटनाओं की चर्चा होना।

यह कहा जाता है कि पुराणों में बहुत से रूपक हैं। उदाहरणार्थ रावण के दश सिरों को ले लीजिये। इसका अर्थ है कि उसके दश सिर न थे परन्तु वह इतना विद्वान् था कि उसके समय के दश विद्वान् भी विद्वत्ता मे उसकी बराबरी न कर पाते थे या वह चारा वेदों और छहों दर्शनों का पडित था। इसी प्रकार के अनेक रूपक हैं। फिर भी उनमे विष अधिक और अमृत बहुत कम है अत उनसे पृथक् रहने मे ही कल्याण है।

अवतार

आज कल के हिन्दू राम, कृष्ण, बुद्ध आदि को भगवान् विष्णु का अवतार मानते हैं परन्तु स्वामी दयानन्द कहते हैं कि यह मान्यता नितान्त वेद विरुद्ध है।

परमात्मा का कोई आकार नहीं होता और वह सब जगह विद्यमान है। तब फिर वह एक शरीर मे क्यो कर बद्ध हो सकता है? इसके अतिरिक्त वह पापों से रहित है और पापी हो जन्म मरण के चक्कर में फसता है।

राम ने सीता के लिए विलाप किया। यदि वह ईश्वर का अवतार होते तो इन्हें दुःख और चिन्ता क्यों होती? दयानन्द राम और कृष्ण को परमात्मा के विनम्र भक्त तथा आदर्श चरित्र के महापुरुष मानते है जिनका ससार को अनुसरण करना चाहिये। इन महापुरुषों का स्वाग रचना मूर्खता है।

मूर्ति पूजा

आज कल के हिन्दू पक्के मूर्ति पूजक माने जाते हैं। परन्तु मूर्ति पूजा नई चीज है जिसका आविष्कार महान् बुद्ध के पश्चात् हुआ। वेद में और प्राचीन साहित्य में इसके समर्थन मे एक शब्द भी नहीं पाया जाता।

परमात्मा निराकार है अत उसकी मूर्ति असम्भव है। उसकी बनाई हुई सृष्टि और सृष्टि के अद्‌भुत पदार्थ यथा सूर्य चन्द्र आदि २ उसकी साकार मूर्तियां हैं।

उसकी पूजा करने का एक मात्र उपाय है उसके गुणों पर विचार करके उन्हें अपने जीवन में धारण करना।

परमात्मा की पूजा का ठीक ढग जानने के लिये पतजलि के योग शास्त्र को पढो।

भगवद्‌गीता भी (अध्याय ६, १२ १) यह शिक्षा देती है कि बाहरी मूर्तियों पर ध्यान मत दो। परन्तु मन को एकाग्र करने के लिए आखों और कानों को बन्द करो और 'ओ३म्' का जप करो।

अब हमारे पौराणिक भाई भी यह मानने लग गये हैं कि वे मूर्ति को भगवान नहीं मानते हैं परन्तु मूर्ति पूजा भगवद् भजन का एक ढंग है जो निश्चय ही गलत हानिकारक और पतनकारी है। युरुप के सस्कृत के विद्वान महर्षि दयानन्द की इस स्थापना से सहमत हो गये हैं कि प्राचीन आर्य मूर्ति पूजक न थे।

तीर्थ यात्रा

जब परमात्मा के अवतार और मूर्ति पूजा का कोई चिन्ह नहीं है तब तथा कथित तीर्थों का उल्लेख क्यों कर हो सकता है? (तीर्थस्थल काशी प्रयाग आदि २ का) किसी मन्दिर या नगर की परिक्रमा करने वा किसी नदी में स्नान करने से पाप धुल जाते हैं और स्वर्ग या मोक्ष प्राप्त हो जाते हैं इस मान्यता का वैदिक साहित्य में समर्थन प्राप्त नहीं होता और न बुद्धि ही इसे ग्रहण करती है।

आर्य समाज इस बात को स्वीकार करता है कि कुछ तीर्थों में साधु सन्त रहते थे या वे विद्या के केन्द्र थे अत वे राष्ट्रीय गौरव की वस्तु थे। प्रयाग उन्हीं विद्या केन्द्रों में से था जहा महर्षि भारद्वाज १० हजार विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान किया करते थे।

धर्म के नाम पर

एक साधु के विरुद्ध ठगी का मामला दर्ज

कश्मीरी गेट दिल्ली के एस० जोजफ ने पुलिस में रिपोर्ट दर्ज कराई है कि एक साधु तथा दो अन्य व्यक्तियों ने उससे सोने की जंजीर समेत हाथ की घड़ी व दस रुपए ठग लिए।

बताया जाता है कि जोजफ नावल्टी सिनेमा पर चित्र देख रहा था कि साधु व एक युवक बात चीत करते हुए उसे तीसहजारी ले गए। वहा पर एक और युवक आया जिसने साधु को दण्डवत प्रणाम किया। साधु ने जोजफ का हाथ देखकर कहा कि थोड़े दिनों मे तुम्हें एक भारी धन की राशि मिलने वाली है। कोई चीज दीजिए मैं उस पर आपको मन्त्र पढकर दूगा, जिससे तुम्हें काफी धन प्राप्त होगा। उसने अपनी घड़ी उतार कर दे दी साधु ने एक कागज में पत्थर व कुछ लौंग रखकर उस पर मन्त्र पढ़ा और कहा कि तीन दिन बाद इसे खोलना। जोजफ जब घर पहुँचा तो उसे कुछ सन्देह हुआ। उसने कागज खोला तब ठगी का रहस्य खुला। पुलिस ने मामला ४२० में दर्ज कर लिया है।

साधु के वेष में ३ व्यक्ति गिरफ्तार

गुड़गावा (डाक से) बल्लभगढ़ पुलिस ने ३ व्यक्तियों को जो साधुओं के भेष में यमुना के किनारे पर रहते थे, गिरफ्तार किया है। ये दिन में गरीब जमींदारों को लूटते थे और रात को चोरिया करते थे। पुलिस ने उनके कब्जे से ८६६ रु० का चोरी का माल भी बरामद कर लिया है।

ज्योतिषियों पर प्रतिबन्ध

पेकिंग के नगर शासन ने ज्योतिषियों और सामुद्रिक शास्त्र वेत्ताओं पर रोक लगा दी है और उन्हें दूसरा काम ढूढने का आदेश दिया है।

सरकार ने कहा है कि वह उन लोगों के जीवन निर्वाह की व्यवस्था करेगी जो काम धधा प्राप्त नहीं कर सकेंगे या जिन्हें सम्बन्धियों के यहा शरण

माता पिता गुरु-जनों, विद्वानों, सत्पुरुषों आदि २ की सेवा करना और उनका आदर सत्कार करना ही सच्चा तीर्थ है। सत्यविद्या, यम, नियम, योगाभ्यास, पुरुषार्थ तथा सत्याचरण आदि अच्छे कर्मों को भी तीर्थ कहते हैं। जिससे दु खसागर से पार हुआ जाय वही सच्चा तीर्थ है।

पितृ श्राद्ध

आजकल के हिन्दू लोग यह मानते और सम झते हैं कि किसी व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसके बेटे या रिश्तेदार जो दान पुण्य करते हैं वह मृत व्यक्ति को पहुँच जायगा परन्तु स्वामी दयानन्द कहते हैं कि यह नितान्त असम्भव है।

वैदिक कर्म सिद्धान्त बताता है कि आदमी अपने सत्कर्मों और दुष्कर्मों का फल पाता है। मृत व्यक्ति की आत्मा का जीवित प्राणियों के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होता और मृत आत्मा अपने कर्मों के अनुसार दूसरा शरीर धारण कर लेता है अत उसे कोई भेंट न की जानी चाहिये।

दान दाता के लिये लाभदायक हो सकता है अन्य किसी को नहीं।

आर्य समाज की शिक्षा है कि हमें अपने जीवित माता पिता और गुरु जनों की सेवा शुश्रूषा करनी चाहिये और यही वास्तविक पितृ श्राद्ध है।

स्वामी दयानन्द कहते हैं कि उत्तम विधि से शव का दाह करने और फूल बीनने के बाद मृत व्यक्ति के प्रति और कुछ करना शेष नहीं रहता।

❀

नहीं मिलेगी। अधिकांश ज्योतिषी ६० साल से अधिक आयु के हैं।

भगवान् के घर चोरी

चोरों ने अम्मू शहर के मध्य में बने लक्ष्मीनारायण मन्दिर के मुख्य भवन मे सेंध लगाई और भगवान् की मूर्ति का शृंगार करने वाले बहुमूल्य जवाहारात तथा सोने के आभूषण उड़ा लिए

उड़ाए हुए माल की कीमत २,०० रु० से अधिक बताई जाती है।

पुलिस चोरों की खोज मे है।

ईश्वर प्राप्ति के लिए आत्महत्या

कपूरथला (डाक से) अमृतसर के एक व्यक्ति सरदार प्यारासिंह ने वीरीका रेलवे स्टेशन के पास चलती गाडी के आगे लेटकर आत्महत्या कर ली। मृतक की जेब से एक पत्र मिला जिसमे लिखा हुआ था कि मैंने अपने जीवन में ईश्वर प्राप्ति के लिए बहुत यत्न किया, परन्तु कोई सफलता न मिली। अब मे उससे मिलने उसके पास ही जा रहा हू।

दुर्गा को जिव्हा भेंट

जबलपुर (डाक से) एक ढीमर ने अपनी निर्दोषिता साबित करने के लिए और अपने ऊपर चोरी के कलक का टीका मिटाने के लिए एक मन्दिर मे दुर्गा की मूर्ति के सामने अपने हाथ से जिव्हा काट कर अर्पित कर दी। उसे विश्वास है कि यदि वह निर्दोष होगा तो उसकी कटी हुई जबान पुन जुड जाएगी। यह घटना जबलपुर से ५६ मील दूर कटनी में घटित हुई।

महन्त-चेला गोलीकाड में चेली का बयान

कस्बा लौनी की गद्दी के महन्त सन्तोखदास को अपने चेले शीलदास को गोली मारकर हत्या करने के आरोप में गाजियाबाद के प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट श्री मूलचन्द सिंह की अदालत में पेश किया गया। महन्त सन्तोखदास पर अभियोग है कि उसने अपने चेले शीलदास की रात को गोली मारकर हत्या कर दी, गोली शीलदास के सीने मे लगी और वह तुरन्त मर गया।

महन्त सन्तोखदास की एक चेली ने अदालत में बताया कि महन्त शीलदास महन्त सन्तोखदास का चेला था। एक रोज शीलदास ने मुझसे छेड छाड की और बुरी नियत से मेरी बाह पकडी।

मैंने इसकी शिकायत महन्तजीसे की महन्तजी को यह हरकत बडी अनुचित जची। एक रोज रात को महत जी ने शीलदास को और मुझे अपने पास सुलाया और रात को मैंने गोली चलने की आवाज सुनी। मैंने देखा कि महन्त जी के हाथ मे बन्दूक थी और कुछ देर बाद ही उन्होंने शीलदास पर गोली चलाई और शीलदास मर गया। महन्त ने कुछ वर्ष पूर्व ही शीलदास को अपना चेला बनाया था और उसकी गद्दी का वारिस था। इस घटना के कुछ समय बाद महन्त सन्तोखदास ने अपनी बन्दूक के साथ अपने को पुलिस के सुपुर्द कर दिया था।

अभियुक्त महन्त सन्तोखदास के वकील श्री सुखदेव शर्मा ने अदालत से प्रार्थना की कि महन्त जी दिमागी बीमारी से पीडित हैं अत उन्हे कुछ मास डाक्टरी देखभाल में रखा जाए। परन्तु अदालत ने अभियुक्त के वकील की यह दलील अस्वीकार करदी। महन्तजी जेल मे हैं। उनके विरुद्ध धारा ३०२ के अन्तर्गत मुकदमा दर्ज किया गया है।

• जिला मेरठ में लौनी कस्बे की गद्दी एक विख्यात गद्दी है। जहा महन्त जी की एक चेली भी है, जिसका अदालत में बयान हुआ है।

★

मै खून नहीं पी सकता

रामचन्द् भाई बम्बई मे जवाहारात का व्यापार करते थे। उन्होंने एक व्यापारी से सौदा किया यह निश्चित हो गया कि अमुक तिथि तक अमुक भाव मे इतना जवाहारात वह व्यापारी देगा। व्यापारी ने रामचन्द् भाई को लिखा–पढी कर दी।

सयोग की बात जवाहारात के मूल्य बढने लगे और इतने अधिक बढ गए कि यदि रामचन्द् भाई को उनके जवाहारात वह व्यापारी दे तो उसे इतना घाटा लगे कि उसको अपना घर तक नीलाम करना पडे।

श्री रामचन्द् भाई को जवाहारात के वर्तमान बाजार भाव का पता लगा तो वे उस व्यापारी की दूकान पर पहुँचे। उन्हें देखते ही व्यापारी चिन्तित हो गया। उसने कहा— मैं आपके सौदे के लिए स्वय चिन्तित हूँ, चाहे जो हो वतमान भाव के अनुसार जवाहरात के घाटे के रुपए अवश्य आपको दे दू गा। आप चिन्ता न करें।'

रामचन्द् भाई बोले—"मैं चिन्ता क्यों न करू तुमको जब चिन्ता लग गई है तो मुझे भी चिन्ता होनी ही चाहिए। हम दोनों की चिन्ता का कारण यह लिखा-पढी है। इसे समाप्त कर दिया जाय तो दोनों की चिन्ता समाप्त हो जाय।"

व्यापारी बोला—'ऐसा नहीं। आप मुझे दो दिन का समय दें, मैं रुपया चुका दू गा।'

रामचन्द् भाई ने लिखा पढी के कागज को टुकडे २ करते हुए कहा—"इस लिखा पढी से तुम बध गए थे। बाजार भाव बढने से मेरा चालीस पचास हजार रुपया तुम पर लेना हो गया। किन्तु मैं तुम्हारी परिस्थिति जानता हू। ये रुपया मैं तुम से लू तो तुम्हारी क्या दशा होगी? रामचन्द् दूध पी सकता है। खून नही पी सकता।"

वह व्यापारी रामचन्द् भाई के पैरों पर गिर पडा और कहा—'आप मनुष्य नहीं देवता है।"

महात्मा गाँधी ने तभी तो कहा था कि "मैंने गुरु नहीं बनाया, किन्तु मुझे कोई गुरु मिले है तो वे हैं रामचन्द् भाई।"

यह धन मेरा नही तुम्हारा है!

सम्राट अशोक से पहले की बात है। एक अत्यन्त दयालु और न्यायी राजा था। उसके राज्य में बाघ बकरी एक घाट पानी पीते थे और कोई किसी को कभी सताता न था उसके राज्य में लोगों में भोग लिप्सा न थी। दूसरों की वस्तु की ओर कोई ताकता ही न था।

बहुत दिनों के बाद दो पुरुष एक झगडे का न्याय कराने न्यायालय में आए। दोना ही किसान थे। पहले ने कहा—'न्यायमूर्ति! मैंने इनसे थोडी जमीन खरीदी थी। मैं उसमें खेती करता था। एक दिन मेरा हल जाकर किसी बर्तन से टकराया। मिट्टी हटाकर देखा तो उसमें मुहरें भरी थीं। मैंने तो भूमि खरीदी थी। धन का खजाना तो खरीदा ही न था। मुझे पहले कुछ पता भी न था। मैंने इनसे कहा कि अपना खजाना हटालो पर ये मेरी एक भी नहीं सुनते। मेरे खेत का काम रुक गया है।

दूसरे ने कहा-"न्यायाध्यक्ष! यह बात बिल्कुल सत्य है। पर मैं भला अपने को इस धन कामालिक

(शेष पृष्ठ ४२६ पर)

सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी अमर हुतात्मा रामप्रसाद बिस्मिल

सत्यार्थप्रकाश ने काया पलट कर दी (आत्म कथा से) *

"देव मन्दिर मे स्तुति पूजा करने की प्रवृत्ति देखकर श्रीयुत मुन्शी इन्द्रजीत (शाहजहापुर) जी ने मुझे सन्ध्या करने का उपदेश किया। आप उसी मन्दिर में रहने वाले किसी महाशय के पास आया करते थे। व्यायामादि करने के कारण मेरा शरीर बड़ा सुगठित हो गया था और रग निखर आया था। मैंने जानना चाहा कि सन्ध्या क्या वस्तु है? मुन्शी जी ने आर्य समाज सम्बधी कुछ उपदेश दिए **इसके बाद मैने सत्यार्थप्रकाश पढ़ा। इससे तख्ता ही पलट गया। सत्यार्थप्रकाश के अध्ययन ने मेरे जीवन के इतिहास में एक नवीन पृष्ठ खोल दिया।**

मैं थोड़े दिनों मे ही कट्टर आर्य समाजी हो गया। आर्य समाज के अधिवेशन में आता जाता। सन्यासी महात्माओं के उपदेशों को बड़ी श्रद्धा से सुनता। जब कोई सन्यासी आर्य समाज मे आता तो उसकी हर प्रकार सेवा करता। जब मैं अग्रेजी के ७वें दर्जे में था तब सनातन धर्मी पडित जगत प्रसाद जी शाहजहापुर पधारे। उन्होंने आर्य समाज का खडन करना आरम्भ किया। आर्य समाजियों ने भी उनका विरोध किया और पडित अखिलानन्द जी को बुलाकर शास्त्रार्थ कराया। शास्त्रार्थ सस्कृत में हुआ। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। मेरे कामों को देखकर मुहल्ले वालों ने पिता जी से मेरी शिकायत की। पिता जी ने मुझसे कहा कि आर्य समाजी हार गए, अब तुम आर्य समाज से अपना नाम कटादो। मैंने पिता जी से कहा कि आर्य समाज के सिद्धान्त सार्वभौम हैं। उन्हें कौन हरा सकता है? अनेक वाद विवाद के पश्चात् पिता जी जिद्द पकड़ गए कि आर्य समाज से त्याग पत्र न दोगे तो मैं तुम्हें रात मे सोते समय मार दूगा या तो आर्य समाज से त्याग पत्र दे दो या घर छोड़ दो मैने भी विचारा कि पिता जी का क्रोध यदि अधिक बढ गया और उन्होंने मुझे कोई वस्तु ऐसी दे पटकी कि जिससे बुरा परिणाम हुआ तो अच्छा न होगा अत घर त्याग देना ही उचित है। मै केवल एक कमीज पहने खड़ा था और पाजामा उतारकर धोती पहन रहा था। पाजामे के नीचे लगोट बधा था। पिता जी ने हाथ से धोती छीन ली और कहा घर से निकल। मुझे भी क्रोध आ गया। मैं पिता जी के पैर छू कर गृह त्याग कर चला गया। कहा जाऊ कुछ समझ में नहीं आया। शहर में किसी से जान पहचान भी नहीं, जहा छिप रहता। मै जगल की ओर चला गया। एक रात तथा एक दिन बाग में पेड़ पर बैठा रहा भूख लगने पर खेतों में से हरे चने तोड़ कर खाये नदी मे स्नान किया और जल पान किया। दूसरे दिन सन्ध्या समय प० अखिलानन्द जी का व्याख्यान आर्य समाज मन्दिर में था। मै आर्य समाज मन्दिर मे गया। एक पेड़ के नीचे एकान्त में खड़ा व्याख्यान सुन रहा था कि पिताजी दो मनुष्यों को लिए आ पहुँचे और मैं पकड़ लिया गया। वह उसी समय पकड़ कर स्कूल के हैडमास्टर के पास ले गये। हेडमास्टर साहब ईसाई थे। मैंने उन्हें सब वृतान्त कह सुनाया। उन्होंने पिता जी ही को समझाया कि समझदार लड़के को मारनापीटना ठीक नहीं मुझे भी बहुत कुछ उपदेश दिया। उस दिन से पिता जी ने कभी भी मुझ पर हाथ नही

---

* फांसी के तख्ते पर चढ़ने से ३ दिन पूर्व लिखित श्री प० बनारसी दास जी चतुर्वेदी द्वारा सपादित तथा आत्मा राम ऐड सन्स कश्मीरीगेट दिल्ली द्वारा प्रकाशित मूल्य २।।)

उठाया। जब मै आठवें दर्जे में था, उसी समय स्वामी सोमदेव जी सरस्वती आर्य समाज शाहजहांपुर पधारे उनके व्याख्यानों का जनता पर बड़ा अच्छा प्रभाव हुआ। कुछ सज्जनों के अनुरोध से स्वामीजी कुछ दिनो के लिए शाहजहापुर आयसमाज मन्दिर में ठहर गये। आपकी तबियत भो कुछ खराब थी, इस कारण शाहजहापुर का जलवायु लाभदायक देखकर आप वहाँ ठहरे थे। मै आपके पास आया जाया करता था। मैने प्राणपण से स्वामी जी महाराज की सवा की और इसी सेवा के फलस्वरूप मेरे जीवन मे नवीन परिवर्तन हो गया। मैं रात को दो तीन बजे तक और दिन भर आपकी सेवा शुश्रूषा में उपस्थित रहता। अनेकों प्रकार की औषधियों का प्रयोग किया। कतिपय सज्जनों ने बड़ी सहानुभूति दिखाई, किन्तु रोग का शमन न हो सका। आप मुझे अनेकों प्रकार के उपदेश दिया करते थे। उन उपदेशों को मैं श्रवण कर कार्य रूप में परिणत करने का पूरा यत्न करता। वास्तव में आप मेरे गुरुदेव तथा पथ-प्रदर्शक थे। आपकी शिक्षाओं ने ही मेरे जीवन मे आत्मिक बल का सचार किया जिनके सम्बध में पृथक् वणन करूंगा।

कुछ नवयुवकों ने मिलकर आर्य समाज मन्दिर में आर्य कुमार सभा खोली जिसके साप्ताहिक अधिवेशन प्रत्येक शुक्रवार को हुआ करते थे। वहीं पर धार्मिक पुस्तकों का पठन, विशेष विषय पर निबंध लेखन तथा वाद-विवाद होता था। कुमार सभा से ही मैंने जनताके सम्मुख बोलनेका अभ्यास किया। कुमार सभा ने अपने शहर में तो नाम पाया ही था, जब लखनऊ में कांग्रेस हुई तो भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् का भी वार्षिक अधिवेशन वहा हुआ। उस अवसर पर सबसे अधिक पारितोषिक लाहौर और शाहजहापुर की कुमार सभाओं ने पाये थे। जिनकी प्रशसा समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई थी।

लगभग अठारह वर्ष की उम्र तक मै वेदी पर न चढ़ा था। मै इतना दृढ़ सत्य वक्ता हो गया था कि एक समय रेल पर चढकर तीसरे दर्जे का टिकट खरीदा था। पर इन्टर क्लास में बैठकर दूसरों के साथ चला गया। इस बात से मुझे बड़ा खेद हुआ मैंने अपने साथियों से अनुरोध किया कि यह तो एक प्रकार की चोरी है। सबको मिलकर इन्टर क्लास का भाडा स्टेशन मास्टर को देना चाहिये। इस समय मेरे पिता जी दीवानी में किसी पर दावा करके वकील से कह गये थे कि जो काम हो वह मुझसे करा लें। कुछ आवश्यकता पड़ने पर वकील साहब ने मुझे बुला भेजा और कहा कि मै पिताजी के हस्ताक्षर वकालतनामे पर कर दूं। मैंने तुरन्त उत्तर दिया कि यह तो धर्म के विरुद्ध होगा। इस प्रकार का पाप मैं कदापि नहीं कर सकता। वकील साहब ने बहुत कुछ समझाया कि मुकदमा खारिज हो जायेगा। किंतु मुझ पर कुछ भी प्रभाव न पड़ा। अपने जीवन में सर्व प्रकार के सत्य का आचरण करता था।

मेरी माता मेरे धर्म-कार्यों में तथा शिक्षा आदि में बड़ी सहायता करती थीं। वे प्रात काल चार बजे ही मुझे जगा दिया करती थीं। मैं नित्यप्रति नियम पूर्वक हवन भी किया करता था। मेरी छोटी बहन का विवाह करने के लिए माता जी तथा पिता जी ग्वालियर गये। मै और दादी जी शाहजहापुर मे ही रह गये क्योंकि मेरी वार्षिक परीक्षा थी। परीक्षा समाप्त करके मैं भी बहन के विवाह में सम्मिलित होने के लिये गया। बारात आ चुकी थी। मुझे ग्राम के बाहर ही मालूम हो गया कि बारत में वेश्या आई है। मैं घर न गया और न विवाह में सम्मिलित हुआ।

(शेष अगले अंक में)

आर्य महानुभावों के संस्मरण

(स्व० राय मूलराज एम० ए० के सम्बन्ध में मेरे कुछ सस्मरण)

[लेखक—श्रीयुत प० गगाप्रसाद जी एम० ए० रि० चीफ जज]

(१) स्व०राय मूलराज एम०ए०से मेरा व्यक्तिगत कोई परिचय नहीं था। वे परोपकारिणी सभा के उपप्रधान थे। मैं सभा का एक पुराना सदस्य हू, इसी नाते से जो जानकारी हुई उनके सस्मरण लिखता हूँ।

(२) श्री राय मूलराज जी बाल्य काल से ही तीव्र बुद्धि थे। पजाब यूनिवसिटी की एम० ए० परीक्षा मे प्रथम स्थान लिया। फिर कलकत्ता यूनिवर्सिटी की रायचन्द् प्रेमचन्द् परीक्षा में शामिल हुए। इस परीक्षा में भारत वर्ष की सब यूनिवसिटियों के एम० ए० पास विद्यार्थी शरीक हो सकते हैं। उन सब मे जो प्रथम आवे उसको पुष्कल पुरस्कार मिलता है। वह भारतवर्ष के डिगरी प्राप्त विद्वानों मे सर्व श्रेष्ठ गिना जाता है। भारत के विद्वानों के लिये यह एक प्रकार से छोटा सा Nobel Prize (नोबिल प्राइज) रूप का पुरस्कार था। आर्य समाज के लिये यह गौरव की बात थी कि उसके सदस्य ने यह पुरस्कार पाया।

(३) सन् १८७५ई०मे ऋषि दयानन्द ने बम्बई में आर्य समाज स्थापित की। यह भारतवर्ष में पहला आर्यसमाज था। सन् १८७७ मे ऋषि ने लाहौर में आर्य समाज स्थापित किया श्री मूलराज एम० ए० भी सदस्य हुए। उपरोक्त पुरस्कार पाये थोड़ा ही समय बीता था इससे उनका पजाब में बहुत मान था। समाज के अधिकारी चुने गये, ऋषि दयानन्द ने मूलराज को प्रधान पद के लिये सुझाव रखा। अन्य सदस्यों को आश्चर्य हुआ। सबकी दृष्टि स्व० श्री लाला साईं दास जी पर थी। वे योग्य और प्रौढ थे, कुछ वर्ष पीछे वे भी लाहौर समाज के प्रधान चुने गये और कई वर्ष तक उस पद पर रहे। लाला लाजपत राय जी कहते थे कि श्री साईं दास जी योग्य नेता थे, उनका युवको पर बडा प्रभाव था, यह भी कहते थे कि उनकी ही प्रेरणा से वह और श्री हसराज एक साथ लाहौर समाज के सदस्य बने थे, पर ऋषि दयानन्द के सुझाव का कौन विरोध कर सकता था ? इसलिये युवक मूलराज ही लाहौर समाज के प्रधान चुन लिये गये।

(४)आर्यसमाज बम्बईके जो २०या २५ नियम थे वे कुछ आकर्षक वा उत्तम न थे। लाहौर मे आर्य समाज के नवीन १० नियम जो अब प्रचलित हैं रखे गये। वे वास्तव में बहुत उत्तम और महत्व के हैं। मुझसे पजाब समाजों के किसी योग्य सज्जन ने (जिसका नाम अब याद नहीं है) कहा था कि इन १० नियमों का ड्राफ्ट श्री मूलराज ने तैयार किया था जिसको ऋषि ने पसन्द किया। सम्भव है कि उनको समाज के प्रधान पद के लिये चुनने मे इस बात का भी प्रभाव ऋषि के मन पर पड़ा हो।

(५) यूनिवर्सिटी डिगरी पानेके बाद श्रीमूलराज को पजाब सरकार ने Provincial Civil Serv c में Extra Asst Commissioner ऐक्सटरा असिस्टेन्ट कमिश्नर नियत कर दिये। ऋषि के निर्वाण समय पर वे रावलपिण्डी में नियुक्त थे। ,अन्त तक Judicial (जूडिशियल) विभाग में ही काम करते रहे। जज के पद से पेंशन पर गये, हाईकोर्ट के जज नहीं हो सके।

(६) सन् १८७७ में मेरठ में आर्यसमाज

स्थापित हुआ। उसके मन्त्री श्री ला० रामसरनदास थे जो ऋषि के बडे भक्त और विश्वास पात्र थे। ऋषि दयानन्द ने मेरठ मे अपना प्रथम वसीयत Will स्वीकार पत्र लिखा। उसमे श्री मूलराज को प्रधान पद के लिये रखा, लाला रामसरनदास को मन्त्री। श्री महाराणा उदयपुर म० सज्जनसिंह जी से तब तक ऋषि दयानन्द का परिचय नहीं हुआ था। पीछे जब उनसे परिचय हो गया तब सन् १८८३ में जो अन्तिम पत्र ऋषि ने बनाया तो उस में महाराणा साहब को प्रधान रक्खा। यह सब प्रकार युक्त ही था, पर ऋषि को यह अनुभव था कि राजे महाराजे ऐसी सस्था के प्रधान जैसे उत्तरदायी पद के लिये पर्याप्त समय नहीं दे सकते। इसलिये उपप्रधान का पद भी रक्खा और उसके लिये श्री मूलराज को ही नियत किया। स्वीकार पत्र मे श्री रा० ब० प० महादेव गोविन्द रानडे जैसे व्यक्ति थे जो उस समय पूना में जज थे। कुछ समय पीछे बम्बई हाईकोर्ट के जज हो गये। सुधार कार्य में भी निपुण थे। पूना प्रार्थना समाज के प्रधान रह चुके। पीछे अ० भा० शोसल कान्फरेन्स के प्रधान रहे, ऐसी दशा मे आपने स्वीकार पत्र में श्री मूलराज को ही उपप्रधान चुना। इससे यह अनुमान दृढ होता है कि आर्यसमाज के वर्तमान १० नियमों के ड्राफ्ट में श्री मूलराज का हाथ रहा हो जैसा मैने सुन रक्खा है। आर्य समाज के १० नियम वास्तव मे बडे महत्व के हैं।

(७) श्री राय मूलराज जी से कुछ आर्यसमाजी विरोध भाव रखते थे उसमें कारण यह था कि वे मास भक्षण प्रचार में अति उग्र थे। पजाब की दूसरी पार्टी के सच्चे नेता महात्मा हसराज ही थे। वे कहा करते थे कि पजाब की दो पार्टियो के भेद का मूल कारण मास भक्षण का प्रश्न नहीं है। यदि ऐसा होता तो वे स्वय मास भक्षण का त्याग करने को तैयार थे। यह ठीक है कि पजाब आर्य समाज की दो पार्टी होने के अन्य ही कारण थे। मेरी समझ मे मुख्य कारण दयानन्द ए० वै० कालिज व गुरुकुल की शिक्षा नीति का भेद था। श्री मूल राज के जीवन काल मे कालिज पार्टी के मुख्य नेता म० हसराज ही माने गये यद्यपि मास के प्रश्न पर कुछ लोग श्री मूलराज को उस पार्टी का नेता सम झते रहे। उनके देहावसान होने पर श्री जस्टिस जयलालजी उस दल क मुख्य नेता माने जाने लगे।

❀

[पृष्ठ ४२२ का शेषाश]

कसे मान लू ? मैने तो जमीन तथा उसके अन्दर जो कुछ था सब इनको बेचकर पूरा मूल्य ले लिया था। अब इसके अन्दर का सभी कुछ इनका है। ये मुझे बिना कारण सता रहे हैं। मेरा इनसे पिण्ड छुडवाइए।"

यों कहकर दोनों वहा परस्पर झगड़ने लगे और समझाने बुझाने पर भी दोनों में कोई भी उस धन राशि को लेनेको राजी न हुआ। बेचारे न्याया-धीश क्या करते ? कुछ देर तक तो वे दोनों के त्याग और निस्स्वार्थ भाव की मन ही मन प्रशसा करते रहे। अन्त में इन्हें एक उपाय सूझा। उन्होंने उनदोनो से पूछा 'तुम्हारे कोई सन्तान है या नहीं' पता लगा कि एक के पुत्र है, दूसरे के कन्या है और उनमें परस्पर सम्बध हो सकता है। न्यायाधीश ने दोनों से प्रार्थना की 'यदि आप लोगों मे से कोई भी इस धन को स्वीकार नहीं करना चाहता तो आप अपने बच्चों का सम्बध करके उनका विवाह कर दीजिए और सारा धन उनको बाट दीजिए।"

दूसरे समय के शासन में तो बिना स्वामित्व का सारा धन सहज ही राज्य की सम्पत्ति होता। पर आज की दृष्टि से यह विचित्र शासन था विचित्र मुकदमा था तथा विचित्र ही न्याय था।

❀

जहां प्रथम अणुबम गिरा था—हिरोशिमा

(श्री ब्रह्मदीन सिंह)

यद्यपि १३ वर्ष की एक लम्बी अवधि समाप्त हो गई है फिर भी ६ अगस्त १९४५ को हुए उस भयावह विस्फोट का स्मरण अब भी ताजा है, क्यों कि आज भी मानव उस आणविक विस्फोट से अनेकों कष्ट झेल रहा है। अणुबम का एक पूर्व-परीक्षण किया गया था और उसका परिणाम ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री श्री विन्सटन चर्चिल को भी सरकारी गुप्त सदेश द्वारा १७ जुलाई १९४५ को भेजा गया था। गुप्त सदेश में लिखा था 'बच्चे सकुशल पैदा हो गए'। परन्तु शायद तब उनके समक्ष 'बच्चे' का वह भयावह रूप नहीं आया था जिसको ६ अगस्त को हिरोशिमा ने देखा।

२६ जुलाई १९४५ ई० को मित्रराष्ट्रों ने जापान को बिना शर्त आत्मसमर्पण करने के लिए अल्टिमेटम दिया, परन्तु जापान ने उस ८ सूत्रीय प्रस्ताव को ठुकरा दिया। ५ अगस्त १९४५ ई० को मित्र राष्ट्रों ने लड़ाई बन्द कर देने के लिए अन्तिम चेतावनी दी। वायुयानों द्वारा चेतावनी की ३० लाख प्रतियां गिराई गई। फिर भी बिना शर्त आत्मसमर्पण की दिशा मे कोई परिवर्तन नहीं हुआ, जापान ने कोई भी उत्तर नही दिया। अगले दिन सप्तवर्षीय विश्व महायुद्ध का प्रवाह पूर्णतया परिवर्तन हो गया क्योंकि ऐन सुबह मित्रराष्ट्रों की ओर से बी० २१ नामक वायुयान के चालक को प्रथम अणुबम गिराने के लिए आदेश दे दिया गया ताकि युद्ध का अन्त हो जाय।

विस्फोट के पहले

६ अगस्त १९४५ का प्रभात बहुत ही आकर्षक था। मौसम साफ था। नीले आकाश में कहीं-कहीं बादल छिटके हुए थे। नीले सागर से घिरे द्वीप पर प्रभात के सूर्य की किरणों की आभा उसका सौन्दर्य और भी बढ़ा रही थी। किनारे की लहरों के गर्जन के अतिरिक्त चारों ओर निस्तब्धता छाई हुई थी।

हिरोशिमा की जनता का दैनिक कार्यक्रम नित्य की भांति शांतिपूर्वक चल रहा था। कर्मचारी एवं श्रमिक अपने २ कामों पर जा रहे थे। छात्र एवं छात्राएं क्रीड़ा स्थलों पर आनन्दपूर्वक खेल का आनन्द ले रही थीं। रोगी, दवा की अपनी अलग खुराक लेकर प्रसन्न थे और स्वास्थ्य सुधार का स्वप्न देख रहे थे। सवेरे के आठ बज गए कहीं कोई अशांति नहीं थी। करीब ८ बजकर १० मिनट पर एक लड़ाकू विमान के इंजन की आवाज कुछ लोगों ने सुनी, फिर भी उस आवाज पर किसी प्रकार का सदेह नहीं हुआ क्योंकि यह युद्ध का समय था और प्रत्येक दिन लड़ाकू विमान समुद्र और स्थलों की ओर उड़ा ही करते थे।

ठीक उसी क्षण जबकि घंटाघर की घड़ी ने ८, १५ बजाए, हिरोशिमा के पूर्ण विनाश का समय आ गया, 'बी० २९' ने प्रथम अणुबम गिरा दिया।

विस्फोट के बाद

हिरोशिमा के शांत वातावरण में खलबली मच गई। एक क्षण भी बीतने न पाया था कि विस्फोट की लहर समुद्र पार तक पहुंच गई और इसके पहले कि निरपराध जनता कोई कारण जान सके, वह या तो जल गई, या मर गई, या विनष्ट हो गई। धुआं अग्नि और मृत्यु ही चारों ओर दिखाई पड़ते थे। शानदार भवन ऊंची अट्टालिकाएं, मनोहर पुल नष्ट कर दिए और हिरोशिमा एक श्मशान के रूप में परिवर्तित हो गया।

इस विस्फोट से २,७०,००० निरपराध वृद्ध और बच्चे, नर और नारी मारे गए और ३,५३,

(शेष पृष्ठ ४३८ पर)

महिला जगत

भारतीय नारी की मौलिक विशेषता

भारतीय नारी की मौलिक विशेषता

अमेरिका के कैलीफोर्निया विश्व विद्यालय की १४ छात्राएं इन दिनों भारत का भ्रमण कर रही हैं। इस भ्रमण का उद्देश्य अमेरिकन तथा भारतीय महिलाओं के मध्य पारस्परिक परिचय तथा सद्भाव में वृद्धि करना बतलाया जाता है। इन छात्राओं में से एक १६ वर्षीया छात्रा कुमारी टेवर ने अपने ऊपर पड़े हुए प्रभावों का वर्णन किया है। उन्होंने कहा कि "भारत आने से पूर्व भारतीय नारी के प्रति मेरी बड़ी रुचि थी। मैंने विश्वविद्यालय के लिए एक निबंध लिखने के उद्देश्य से इस विषय पर पर्याप्त अनुसंधान कार्य किया था। अत मैं इन संस्कारों के साथ यहां आई थी कि भारतीय महिला बहुत अवनत है और यदि उसने कोई उन्नति की भी होगी तो वह पाश्चात्य देशों की उन्नति की तुलना में नगण्य होगी। परन्तु भारतीय छात्राओं को देखकर और उनके साथ रहकर मेरी धारणाएं बदल गई हैं। भारतीय नारी न केवल अवनत ही नहीं है अपितु वह आधुनिक नारी को बहुत कुछ सिखा सकती है। भारतीय नारी इस बात का जीवित प्रमाण है कि वह द्रुतगति से निरन्तर बदलने वाले समाज के अनुकूल अपने को बनाती हुई स्त्रीत्व की अपनी मौलिक विशेषताओं की किस प्रकार रक्षा कर सकती है।

पटना के मेडीकल कालेज में आयोजित एक समारोह के उपरांत मैंने कालेज की कुछ छात्राओं से व्यक्तिश. वार्त्तालाप किया। चतुर्थ वर्ष की एक छात्रा के साथ हुई बातचीत में चिकित्सा के क्षेत्र में स्त्रियां कहां तक सफल हो सकती हैं इस विषय पर हमने पर्याप्त विचार किया। छात्रा ने कहा कि कालेज में पढ़ते समय और बाद में चिकित्सा कार्य करते समय बड़े परिश्रम और सही मस्तिष्क की आवश्यकता होती है। इस पर मैंने कहा 'तब तो तुम्हें सब बातों की अपेक्षा चिकित्सा पर ही सर्वोपरि ध्यान लगाना होगा।' उस छात्रा ने उत्तर दिया 'अब तो ऐसा ही करना पड़ता है परन्तु विवाह हो जाने पर मुझे अपना सर्वोपरि ध्यान अपने पतिदेव पर केन्द्रित करनाहोगा।"

लड़की के इस कथन से मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने सोचा यह भी एक लड़की है जो सुशिक्षिता है। आत्म-निर्भर रहने में समर्थ है और नौकरी करने वा चिकित्सा का धंधा करने में रस लेती है फिर भी अपने को सर्व प्रथम स्त्री और पत्नी ख्याल करती है। मैं सोचने लगी कि क्या यह लड़की नियम है या अपवाद? क्या भारत की सभी लड़कियां इसी प्रकार की धारणाएं रखती हैं? मेरी मान्यता थी कि उनके दिमाग में पढ़ने के सिवा और कोई मूलभूत भावना न होगी परन्तु मैंने जितनी लड़कियों से बातचीत की उन सबकी मनोभावना भारत की समस्त महिलाओं की भावना की द्योतक थी। वे स्वतन्त्र हो सकती हैं, बलिष्ठ मस्तिष्क की पुरुषों के समान अधिकार रखने वाली आधुनिक नारियां हो सकती हैं परन्तु वे निर्भरता और पतिनिष्ठा की छुपी हुई मौलिक विशेषताओं को कभी नहीं छोड़ सकतीं जो अपने पूर्वजों से उन्हें विरासत में प्राप्त होती रहती हैं। उनका पाश्चात्य रंग में रंगा जाना भारतीय विशेषताओं से शून्य नहीं होता।"

☸

स्त्री वा साक्षात देवी

गुरुदासपुर से एक सज्जन एक पत्र में लिखते हैं —

"कुछ दिन पहले मुझे किसी काम से जालन्धर जाने का मौका मिला। अपना काम समाप्त कर जब मैं वापिस गुरुदासपुर आ रहा था तब मैंने देखा कि बस में मुझसे अगली सीट पर एक महिला बैठी हुई है। उसके साथ तीन छोटे बच्चे थे।

सफर के दौरान मैंने देखा कि वह महिला सबसे बड़े बच्चे की ओर सबसे अधिक ध्यान दे रही थी। यह देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। पहले तो मैंने सोचा कि शायद बड़ा बच्चा सबसे पहले पैदा हुआ इसलिए उससे सबसे अधिक प्यार होगा। परन्तु जब मनोविज्ञान की दृष्टि से विचार किया तो यह बात अस्वाभाविक सी लगी। मां को सबसे अधिक प्रेम सदा छोटे बच्चे से होता है, क्योंकि वह औरों की अपेक्षा अधिक अशक्त होता है इसलिए उसे मां की सहायता की अधिक अपेक्षा होती है।

जब मुझे अपने मन में समस्या का कोई समाधान नहीं मिला तब मैंने सामने बैठी महिला से उचित रूप से क्षमा याचना करते हुए पूछा 'आपकी इस बच्चे में और बच्चों से अधिक दिलचस्पी क्यों है?

महिला ने कहा मेरे तीन बेटे हैं, उनमें सबसे बड़ा है यह कुक्कू। कुक्कू इसका प्यार का नाम है। यह मेरा गोद लिया हुआ है।'

'आपको गोद लेने की क्या आवश्यकता पड़ गई थी?'

महिला ने कहा 'भाई साहब, बात यह है कि बचपन में ही इसके माता पिता मर गए। इसका कोई दूर का या पास का रिश्तेदार भी ऐसा नहीं था जो इसकी देखभाल कर सकता। इस बिचारे के प्रति परमात्मा ने भी कैसी निष्ठुरता दिखाई। परन्तु प्रकृति सब घावों को भर देती है। प्रकृति की विस्तृत और उदार ममत्व भरी गोद में सभी के लिए स्थान है। मुझे इस बच्चे पर दया आई हालांकि मेरे पास अपने भी दो बच्चे पहले से मौजूद थे फिर भी दया के वशीभूत होकर मैंने इसे गोद ले लिया। तब से मैं ही इसका पालन कर रही हूं।

'फिलहाल पंजाब के एक सिविल अस्पताल में मैं डाक्टर हूं। मैं और मेरा पति—हम दोनों सिख हैं, परन्तु कुक्कू के माता पिता हिन्दू थे इसके माता पिता के मत का आदर करने के कारण ही इसके बाल छोटे छोटे कटे हुए हैं जबकि मेरे बाकी बेटों के केश सिख होने के नाते नहीं कटे हैं आप जानते ही हैं कि केश सिखों के पञ्चककारों में एक से हैं और हरेक सिख को उन पञ्चककारों का पालन करना आवश्यक होता है। पञ्चककारों में से एक कृपाण ज्ञानी करतारसिंह नहीं रखते, इसलिए उनके विरोधी अकाली उन्हें अकाली सम्प्रदाय में से बहिष्कृत करने तक की चर्चा करते हैं। इतना ही नहीं, मैं कभी उसे मन्दिर में भी ले जाती हूं ताकि उसे अपने पूर्वजों के धर्म के प्रति ज्ञान और अनुराग बना रहे।'

यह कह कर उस महिला ने अपनी बात समाप्त करते हुए कहा कुक्कू का टैकनिकल लाइन के प्रति रुझान है। यदि परमात्मा ने चाहा तो मैं इसे एक दिन इंजिनीयर बना कर ही सन्तोष की सांस लूंगी।'

❀

❀ उत्तिष्ठत जागृत ❀

[ले०—श्री डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालकार, एम ए डी लिट्, अजमेर]

(१)

ऐ भारत वीरो ! जाग उठो, सन्देश "विजय" का आया है।
वैदिक सस्कृति की रक्षाहित, ऋषिवर ने तुम्हे जगाया है॥
अब आर्य वीर दल ने जागृति का अभिनव बिगुल बजाया है।
"उत्तिष्ठत जागृत" हो देखो, क्या स्वर्णिम अवसर आया है॥

(२)

भारत के कोने कोने में क्या गूज रहा घनघोर घोष ?
क्यो भारतीयता भक्तों मे, सचरित हो रहा रक्त रोष ?
क्यो वैदेशिक मिश्नरियों को है देश रहा यह पाल पोष ?
क्या बने रहेगे भारतीय बम भोले बाबा आशुतोष ?

(३)

ईसाई मिशन हिन्दुओ को क्या सब्ज बाग दिखलाता है।
धन साधन रूप प्रसाधन के आकर्षण से बहकाता है॥
अनुचित उपाय कर बहु प्रकार मजहब का जाल बिछाता है।
ऋण का दृढ फदा डाल, ईसु गल्ले मे भेड फसाता है॥

(४)

भोले भाले भाई लाखों प्रति वर्ष जाल में फसते है।
हम खडे देखते टुकुर टुकुर, परदेशी हम पर हसते हैं॥
जो दीन हीन हैं दलित वर्ग, वा बन पर्वत में बसते हैं।
उन ही को "सभ्य' बनाने को, ये मिशन फनी बन डसते है॥

(५)

भारत के धर्म सभ्यता के विपरीत बकें ये अड बड।
कहि साधु वेश मे फिरें बाटते ईसा के तावीज गड॥
कहि "पचमागी" कार्य करें करने को भारत खण्ड खण्ड।
मागते कहीं "नागा प्रदेश" अरु कहीं बनाते "झार खण्ड"॥

(६)

पहले ज्यों "पाकिस्तान' बना, मुस्लिम की माग मनाने को।
फिर माग वही होगी क्रिश्चियन की "ईसुस्तान" बनाने को॥
ए भारत मा के लाल ! जाग, माता के अग बचाने को।
तू देख कौन तैयार खडा, ले राष्ट्र विरोधी बाने को॥

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

(महत्त्वपूर्ण निश्चय)

आर्य समाज का ब्राडकास्टिंग स्टेशन

आर्य समाज प्रचारार्थ अपना ब्राड कास्टिंग स्टेशन लगाए। इस सम्बन्ध मे श्री राय साहब मदनमोहनजी सेठका प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ। निश्चय हुआ कि श्री सेठ जी से प्रार्थना की जाय कि वे एक विस्तृत योजना आनुमानिक व्यय के उल्लेख के साथ सभा की आगामी बैठक मे प्रस्तुत करें।

(अन्तरग ३० ६ १९४६)

आर्य वीर दल

(क) यत अब आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब और सयुक्त प्रान्त ने आर्य वीर दल के कार्य को मुख्य रूप से अपना रखा है अत ये सभाए आर्य वीर दल के उद्देश्य से प्रान्तीय समितिया समझी जावें और ये अपने २ प्रान्तों मे केन्द्रीय आर्य वीर दल समिति के सहयोग से काम करें। अन्य प्रान्तीय सभाओं को भी जो आर्य वीर दल का काम कर रही हो, या करना चाहे प्रान्तीय समिति स्वीकार किया जाय।

(ख) यह सभा प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं द्वारा सचालित आर्य वीर दलों और उनके कार्य कर्ताओ को नियमित स्वीकार करती है।

(अन्तरङ्ग ३० ६-४६)

श्रद्धानन्द बलिदान भवन

श्रद्धानन्द बलिदान भवन मे बाहरी सस्थाओं की मीटिगों की अनुमति दिये जाने के विषय पर विचार होकर निश्चय हुआ कि आर्य समाज के सगठन से सम्बद्ध सस्थाओं की आर्य सामाजिक कार्यो के लिये होने वाली मीटिगों की आज्ञा दी जा सकती है।

(अन्तरग २८-८-१९४९)

हिन्दू कोड बिल

यत भारतीय शासन असाम्प्रदायिक Secular है और विधान की धारा १५ के अनुसार धार्मिक विषयों में हस्ताक्षेप न करने की स्पष्ट घोषणा करती है अत यह सभा इस विषय को धार्मिक समझती है। यत भारतीय विधान की धारा ४ के अनुसार सरकार समस्त भारतीयों के लिए एक समान विधि व्यवहार सहिता (Uniform Civil code) भी बनाना चाहती है। यत प्रस्तावित एकान्तत साम्प्रदायिक हिन्दू कोड बिल केवल हिन्दू नागरिकों के लिये नहीं अत यह सभा वर्तमान हिन्दू कोड बिल का स्वीकार करना अनुचित एव अनावश्यक समझती है। यह सभा घोषणा करती है कि —

१—तलाक विधि।

२—सगोत्र विवाह।

३—सिविल मैरिज।

४—कन्याओं का पुत्रों के समान उत्तराधिकार।

५—वेदादि शास्त्रों के स्थान पर असाम्प्रदायिक सरकार द्वारा निर्मित सर्वथा साम्प्रदायिक हिन्दू कोड बिल की स्वत प्रामाणिकता।

६—उत्तराधिकारी का माता पिता की सेवादि कर्त्तव्य केवल सम्पत्ति प्राप्त करने का आधार।

आर्य समाज की दृष्टि मे अनुचित और वेद शास्त्र विरुद्ध है।

(अन्तरग २२ ४-५०)

ईसाई प्रचार के आंकड़े

भारत के लिये चेतावनी

[लेखक—श्री ओम्प्रकाश त्यागी]

लोक सभा के नवनिर्वाचित सदस्य श्री प्रकाश वीर जी शास्त्री के प्रश्नोत्तर में ३ सितम्बर ५८ को भारत के गृह मन्त्रालय ने बतलाया कि सन् ४७ तक भारत में विदेशी मिशनरियों की संख्या २२७१ थी और अब पहिली जनवरी सन् ५८ में इनकी संख्या ४,८४३ हो गई है। इन मिशनरियों को विदेश से कितनी सहायता अब तक मिली है या मिल रही है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए बतलाया गया कि सन् ५३ से जनवरी सन् ५७ तक लगभग ३॥ वर्षों में इन्हें कुल ३८ करोड ८४ लाख रुपया विदेशों से प्राप्त हुआ जिसमें से २८ करोड २३ लाख केवल अमरीका से इन्हे प्राप्त हुआ।

उपरिलिखित आंकड़े तो रजिस्टर्ड विदेशी मिशनरियों और खुले रूप में प्राप्त धन के हैं इनके अतिरिक्त डाक्टर, अध्यापक, नर्स आदि के रूप में यहां कितने विदेशी प्रचारक आये और कितना धन दूसरे रूप में इन्हें प्राप्त हुआ इसका उल्लेख यहां नहीं किया गया है। साथ ही इस बात का अनुमान लगाना भी कठिन है कि इस धन के आधार पर कितने निर्धन व अपढ पर्वतीय लोगों तथा दलित वर्ग के व्यक्तियों का बलात् धर्म परिवर्तन किया गया है।

यहां दो बात विचारणीय हैं—एक यह कि इतनी विशाल धन राशि पर आधारित योजनाएं किसी भी सामाजिक संस्था की सामर्थ्य से बाहर हैं, फिर राष्ट्रीय स्तर पर बनाई हुई इन योजनाओं के पीछे क्या रहस्य है? दूसरी बात यह है कि अमरीका क्यों इतना धन यहां व्यय कर रहा है? इन प्रश्नों का उत्तर यदि जानना है तो हमें अमरीका के प्रमुख बिशप पादरी तथा अमरीका के विदेश मन्त्री श्री डलेस के परममित्र मि० बिली ग्रैह्म ग्राहम द्वारा सन् ५३ में अमेरिकन ब्राडकास्टिंग कम्पनी के प्रोग्राम 'Hour of Decision' पर दिये गये निम्न वक्तव्य को ध्यान से पढना होगा, और तब अपने कर्तव्य का निर्धारण करना होगा—

"The Hoary Hindu Religion must go" अर्थात् बूढ़ा हिन्दू धर्म समाप्त होना ही चाहिये। ये शब्द थे उस अपील के कि जिसमें उन्होंने अमरीकन जनता से भारत में ईसाई धर्म के प्रचारार्थ भेजी जाने वाली पादरियों की सेना के लिये धन देने के लिये की।

बिली ग्रैह्म ग्राहम की घोषणा के अतिरिक्त अमरीका में एक अन्तर्राष्ट्रीय ईसाई मिशन की स्थापना हुई है जिसका नाम है 'विंग्स आफ हीलिंग" और कार्यालय पोर्टलैंड में है। इस संस्था के अध्यक्ष डा० थोमस वायट और आर० जी० होक्सट्रा ने 'World Invasion' पर अपना वक्तव्य देते हुए कहा कि यदि वे संसार के कम से कम एक अरब व्यक्तियों को ईसाई न बना सके तो सारा संसार कम्युनिस्ट बन जायगा। अतः इन महानुभावों ने पादरियों की 'Invasion teams' आक्रमणात्मक टोलियां संसार के समस्त क्षेत्रों में

और विशेष कर भारत मे भेजने के लिए अमरीकन जनता से जन धन की अपील की

भारत के गृह मन्त्रालय द्वारा प्रकट किये गये विदेशी ईसाई मिशन के आकडों के पीछे क्या भावना छिपी है विदेशों की, इसका कुछ आभास उपरिलिखित वक्तव्यो से मिल जाता है। दुःख के साथ कहना पडता है कि धर्म और सेवा की आड में भारत मे विदेशी सरकारा द्वारा राजनीतिक षड यन्त्र खेला जा रहा है और भारतीय जनता और सरकार खुर्राटे की नींद ले रही है।

यह रहस्योद्घाटन तो अमरीका द्वारा चलाये जा रहे एक षडयन्त्र का है। इसके अतिरिक्त यहा न जाने कितने विदेशी षडयन्त्र चलाये जा रहे होंगे और उन पर भी इसी प्रकार प्रतिवर्ष करोडो रुपया व्यय हो रहा होगा। मे भारतीय जनता, सरकार तथा विशेष रूप से आर्य समाजो से प्रार्थना करता हू कि वह समय रहते इन षडयन्त्रो से राष्ट्र की रक्षा करने का प्रयत्न कर अन्यथा फिर पछताने के अतिरिक्त कुछ हाथ न लगेगा।

ईसाई धर्म प्रचारकों की ज्यादती

हजारी बाग के निकट एक ग्राम पचायत की कार्यवाही

हजारी बाग, यहा से सोलह मील दूर दातो ग्राम कचहरी की आज्ञा से सात ईसाई धर्म प्रचारकों को गिरफ्तार कर हजारी बाग जेल भेज दिया गया है। इन प्रचारकों के नाम तीन बार सम्मन जारी किये गये थे, पर वे कचहरी मे हाजिर नहीं हुए।

कुछ दिन पूर्व दातोंखुर्द ग्राम के दिलजान मिया नामक एक व्यक्ति द्वारा पचायत मे इस आशय का अभियोग दायर किया गया कि ईसाई धर्म प्रचारकों ने उसकी जमीन पर जबर्दस्ती कब्जा कर उसे बेदखल कर दिया है और उसे इस शर्त पर जमीन वापस करने को कहा गया है कि वह ईसाई धर्म कबूल कर ले।

इन धर्म प्रचारको की गिरफ्तारी के दो दिन पूर्व दातो मे आम पास के लगभग ५० गावों के लोगो की एक विशाल सभा हुई थी जिसमे धर्म प्रचारको को हरकता के विरुद्ध एक प्रस्ताव पास कर सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया था।

इसी सभा मे लगभग ५०० आदिवासियों ने ईसाई धर्म छोड कर पुन हिन्दू धर्म स्वीकार करने की अपनी इच्छा व्यक्त की थी। उन्होंने शुद्धि के लिए आर्य समाज के पास आवेदन पत्र भेजे हैं।

❀ शुद्धि समारोह ❀

ग्राम जगेठीमे शुद्धि समारोह १३१ ईसाइयों को शुद्धि (२४-८-५८)

मेरठ के निकट गत वर्ष से ग्राम जगेठी में ईसाइया का एक बहुत बडा अड्डा बन गया था जिसमे उनका चर्च बना हुआ है वहा के सारे हरिजन जाटवो को ईसाई बना लिया गया था। उनमे ईसाइयो ने एसी भावनाए भर दी कि जिससे हिन्दू धर्म तथा देश जाति के प्रति जहर उगलते रहे। एसी स्थिति का अवलोकन करके हमारी सभा के उपदेशक श्री म० धनसिंह जी ने वहा विशेष प्रचार की व्यवस्था बनाई। ग्राममें कई दिन प्रचार के फल स्वरूप वहा के हरिजन चमार जो ईसाई बन गये थे, शुद्ध होने को तैयार हो गये और उन्हाने अपने प्रतिज्ञा पत्र भर दिये। उनके सस्कार का दिन तारीख २४-८-५८ का निश्चय हुआ। २३ अगस्त को सभा के उपदेशक तथा भजनीक और आर्य समाज के प्रख्यात नेता श्री प० शिवदयालु जी पहुच गये। रात्रि को बडे उत्साह पूवक प्रचार हुआ। सवर्ण हिन्दुओ ने विशेष रुचि से भाग लिया। हजारों की सख्या मे एकत्रित होकर वैदिक सिद्धान्तों की बातों को श्रवण किया। २४ ८-५८ को प्रात दिल्ली से भारतीय

हिन्दू शुद्धि सभा के उपप्रधान श्री मेलाराम जी व श्री नारायणदास जी कपूर प्रधान मन्त्री तथा श्री जगन्नाथ व श्री आशानन्द जी मन्त्री, श्री स्वामी दर्शनानन्द जी राजेन्द्रनगर व श्री दीपचन्द जी भजनोपदेशक ने जाकर भाग लिया। मेरठ से श्रीमान् सत्यपाल जी शास्त्री उपदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, श्री बा० दीनानाथ जी मन्त्री जिला उप प्र० नि० सभा, श्री प० हरिप्रसाद जी गाजियाबाद, श्री स्वा० प्रेमगिरि मलियाना, राजा छिवरा मऊ लखनऊ तथा ग्राम के सवर्ण हिन्दुओं ने बडे उत्साह पूर्वक भाग लिया। हवन की कार्यवाही १० बजे आरम्भ होकर ११॥ बजे समाप्त हुई। यज्ञ श्री सत्यपाल जी शास्त्री ने कराया और वैदिक धर्म की दीक्षा दी और १३१ ईसाई भाइयों को शुद्ध किया तथा आर्य समाज बनाने का निश्चय किया। तत्पश्चात् उत्सव की कार्यवाही श्री मेलारामजी के तत्वावधान में प्रारम्भ हुई।

अन्त में शुद्धि सभा के प्रधान मन्त्री जी का भाषण हुआ जिसमें उन्होंने कहा कि यदि कोई ग्राम के हरिजन भाइयों में से हमारी सभा मे उपदेशक का कार्य करना चाहता है तो हम उन्हें हर समय अवसर देने को तैयार हैं और इस ग्राम में हरिजनों को पाठशाला की आवश्यकता है तो सब मिल कर इस सभा के कार्यालय में अपना प्रार्थना पत्र भेज दें। हम अपनी सभा की ओर से यथाशक्ति पाठशाला की व्यवस्था कर देंगे। तत्पश्चात् श्री प्रधान जी ने खडे होकर शुद्ध होने वाले भाइयों तथा सब ग्रामवासियों का व अन्य स्थानों से आये हुए महानुभावों का धन्यवाद किया और उनके उत्साह के लिये बधाई दी।

ग्राम आदमपुर की शुद्धि, ८ नव मुसलमानों की शुद्धि (२४-८-५८)

हमारी सभा के उपदेशक श्री प० गंगालाल जी ने ग्राम आदमपुर जिला एटा मे एक परिवार की शुद्धि की योजना बनाई जिसमे २४-८-५८ को ८ नव मुस्लिम भाइयों को हिन्दू धर्म मे शुद्ध करके प्रविष्ट किया। शुद्धि सस्कार श्री हरिदत्त शर्मा कार्यालयाध्यक्ष भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा देहली ने कराया। सस्कार के समय ग्राम के लगभग १२५ आदमियों ने भाग लिया। सायकाल एक बहुत बडा सहभोज हुआ जिसमे आस पास के ग्रामों के ठाकुरों, ब्राह्मणों तथा सब जाति के महानुभावों ने सम्मिलित होकर भोजन किया। लगभग २ मन आटे की पूरिया बनाई गई थीं। लोगों ने बडी प्रसन्नता से खाया। शुद्ध होने वाले परिवार को राजपूत बिरादरी मे सम्मिलित किया। इस शुद्धि मे भाग लेने वाले स्थानीय प्रमुख नेताओं के नाम उल्लेखनीय हैं —श्री ठाकुर लोकपालसिह, श्री ठा० हेतसिह जी, श्री प० पुत्तूलाल जी, श्री दामोदरस्वरूप जी, श्री बेलासिंह जी, श्री जोधासिह जी श्री सुन्दरसिह जी, श्री प० रघुबरदयाल जी, श्री प० सूरजपाल जी ने भाग लिया और कार्य बडे उत्साह और प्रसन्नतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

नारायणदास कपूर
प्रधान मन्त्री
भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, देहली

विद्यार्य सभा की परीक्षाएं

सर्वसाधारण आर्य जनता को सूचित किया जाता है कि सार्वदेशिक सभान्तर्गत विद्यार्य सभा की परीक्षाओं के विषय में मन्त्री विद्यार्य सभा राय बरेली के पते पर पत्र व्यवहार किया जाय।

मन्त्री —
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली

सार्वदेशिक आर्य वीर दल

दक्षिण अमरीका में आर्य वीर दल का शिविर—ब्र० उषबुध जी की अभूतपूर्व सफलता

ब्रिटिश गायना (दक्षिणी अमरीका) मे माहिकोनी नदी के सुरम्य तट पर मार्टिस ग्राम मे १० अगस्त से १७ अगस्त तक श्री ब्र० उषबुध जी की अध्यक्षता में आर्य वीर दल का एक सांस्कृतिक शिविर लगा। शिविर में ब्रिटिश गायना के भिन्न २ भागो से ५७ आर्य वीरों ने भाग लिया। शिविर मे वैदिक धर्म और वैदिक सस्कृति की विशेषताओ पर श्री ब्रह्मचारी जी के भाषण हुए और नित्य सन्ध्या हवन तथा स्वाध्याय का कार्यक्रम नियम पूर्वक चला।

शिविर में भोजन आदि की व्यवस्था ग्राम निवासियों तथा वहा की देवियों ने बड़े ही सुन्दर ढग से की। भोजन की सभी सामग्री दान के रूप में प्राप्त हुई है।

सत्यार्थप्रकाश की परीक्षायें, सिद्धान्त कुसुमाकर, सिद्धान्त सुधाकर, सिद्धान्त दिवाकर की उपाधिया दी जायंगी

सार्वदेशिक आर्य वीर दल समिति ने निश्चय किया है कि नवयुवको मे धार्मिक रुचि व ज्ञान उत्पन्न करने के निमित्त डाक द्वारा सत्यार्थप्रकाश की परिक्षायें चालू की जाय। सत्यार्थप्रकाश के चौदह समुल्लासों से सम्बन्धित कुल चौदह परीक्षायें होंगी। चार समुल्लासों पर चार परीक्षायें पास कर लेने पर परीक्षार्थी को "सिद्धान्त कुसुमाकर" दस समुल्लासों पर दस परीक्षाओं मे उत्तीर्ण होने पर "सिद्धान्त सुधारक तथा चौदह समुल्लासों पर सम्पूर्ण चौदह परीक्षाओंमें सफलता प्राप्त करने पर परीक्षार्थी को सिद्धात दिवाकर" की उपाधिया दी जायगी।

परीक्षार्थी की प्रार्थना पर प्रश्न पत्र प्रधान कार्यालय, दिल्ली से डाक द्वारा भेज दिए जायगे। परीक्षार्थी अपनी सुविधानुसार सत्यार्थप्रकाश का अध्ययन करके प्रश्न पत्र के उत्तर लिखकर परीक्षा केन्द्र दिल्ली को भेज देगा। परीक्षा मे उत्तीर्ण अनुत्तीर्ण होने की सूचना उसे केन्द्र द्वारा दी जायगी।

परीक्षाओ मे प्रत्येक देश, जाति, वर्ग व समुदाय का व्यक्ति भाग ले सकता है। आर्य वीर दल के अधिकारियो व सदस्यों का कर्तव्य है कि वह स्वय इन परीक्षाओं मे भाग ले और अन्यो को भाग लेने के निमित्त प्रोत्साहित करें। इस सम्बन्ध में पत्र व्यवहार परीक्षा मन्त्री श्री जगदेव जी एम० ए० साहित्य रत्न से, दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नईदिल्ली १ के पते पर करें।

आर्य वीर दल मध्य प्रदेश
विजयदशमी पर्व की अभूतपूर्व तैयारी

आर्य वीर दल मध्य प्रदेश की समिति ने अपने प्रान्तीय दलों को सशक्त बनाने के लिए बड़े ही महत्वपूर्ण निर्णय किए है उनमें सबसे महत्वपूर्ण निर्णय यह है कि विजयदशमी के अवसर पर दल सहायता पर्व को सफल बनाने के निमित्त प्रत्येक प्रान्तीय दल अधिकारी ने वार्षिक आय का १६वा भाग, प्रत्येक मण्डल अधिकारी ने अपनी वार्षिक आय का ३२वा भाग और प्रत्येक नागरिक अधिकारी ने अपनी वार्षिक आय का ४८वा भाग दल सहायता कोष मे देने का निश्चय किया है। सदस्य अपनी सामर्थ्यानुसार सहायता देंगे।

आशा है इस निर्णय से अन्य प्रान्तीय दल भी प्रेरणा प्राप्त करेंगे।

ओम्प्रकाश त्यागी
प्रधान सचालक, सार्वदेशिक आर्य वीर दल

॥ ओ३म् ॥

विजय दशमी पर्व समारोहपूर्वक मनाइए

आर्य वीर दल का प्रमुख पर्व "विजय दशमी" २२ अक्टूबर को है। इस पर्व पर कम से कम तीन दिन का पुरोगम बनना चाहिये जिसमे दो दिन व्यायाम, खेल, भाषण, वाद विवाद, लेख आदि मे अपनी सुविधानुसार प्रतियोगिताएं कराई जाय और अन्तिम दिन २२ अक्टूबर को सामूहिक रूप से समस्त आर्य वीर अपनी प्रतिज्ञा दोहराये और दल को अपनी श्रद्धा एव सामर्थ्यानुसार आर्थिक सहायता दें। इस अवसर पर सामूहिक प्रदर्शन तथा किसी विशेष व्यक्ति का भाषण भी कराया जा सकता है। कार्य-क्रम की रूप रेखा निम्न प्रकार होनी चाहिए —

१—राष्ट्र गान
२—ध्वजारोहण
३—व्यायाम प्रदर्शन
४—कोरस
५—प्रतिज्ञा दोहराना
६—दल सहायता
७—प्रतियोगिताओ मे विजयी आर्य वीरो को पारितोषिक वितरण, अध्यक्ष द्वारा।
८—अध्यक्षीय भाषण
९—ध्वज गान
१०—विकिर

दल सहायता को सफल बनाने के निमित्त अभी से समस्त शाखाओं मे प्रचार होना चाहिए और शाखा नायकों को अपनी शाखा द्वारा अधिक से अधिक धन राशि दल सहायतार्थ उस दिन अर्पित करना चाहिये। दल सहायता द्वारा सग्रहीत धन को चार भागो मे विभाजित कर एक एक भाग स्थानीय, माण्डलिक, प्रान्तीय एव सार्वदेशिक आर्य वीर दल समिति को एक सप्ताह के अन्दर भेज देना चाहिये और उक्त धन की रसीद प्राप्त कर लेना चाहिये।

आशा है समस्त दल की शाखायें इस महत्त्वपूर्ण पर्व को सफल बनाने की अभी से भरसक चेष्टा करेंगी।

नोट —अगर किसी प्रान्त मे प्रान्तीय समिति ने दल सहायता द्वारा प्राप्त धन राशि के विभाजन की कोई विशेष योजना बनाई हो तो उस प्रान्त की शाखाओ को उसी के अनुसार आचरण करना चाहिये।

ओम्प्रकाश त्यागी
प्रधान सचालक, सार्वदेशिक आर्य वीर दल

गुरुकुलीय विश्वविद्यालय संगठन उपसमिति प्रश्नावली

यह किसी से छिपा नहीं है कि अधिकतर गुरुकुलो जैसी सस्थाओं को वर्तमान स्थिति पूर्णतया सतोषजनक नहीं है। न तो वहा की शिक्षा का स्तर जैसा चाहिये वैसा है, न वहा से निकलने वाले स्नातकों को अपनी योग्यता के आधार पर विभिन्न दिशाओं मे उन्नति का समुचित अवसर मिल रहा है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के अनन्तर राष्ट्र की परिवर्तित परिस्थिति मे निस्सन्देह यह खेद जनक है। इस परिस्थिति का एक प्रधान कारण यही कहा जा सकता है कि न तो उक्त सस्थाओं मे किसी प्रकार का परस्पर सगठन है और न उनके सचालन मे एक सूत्रता है। इसलिए स्पष्टत उनकी सबसेपहली आवश्यकता उनका सगठन है।

इसी लक्ष्य को सम्मुख रखकर **सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ने एक 'गुरुकुलीय विश्वविद्यालय संगठन उपसमिति'** की स्थापना की है। उसकी ओर से उसके सिपुर्द किए हुए विचारणीय विषयो के आधार पर निम्न-लिखित प्रश्नावली आपकी सेवा मे भेजी जाती है। इस पर विचार कर दि० ३०-१०५८ तक अपनी सम्मति निम्न पते पर भेजने की कृपा कीजिये। आशा है कि आपके बहुमूल्य विचारों से समिति को अपने निश्चयों तक पहुँचने मे अवश्य सहायता मिलेगी।

१—आर्यसमाज द्वारा सचालित गुरुकुलो जैसी सस्कृत प्रधान सस्थाओ के साथ डी० ए०वी० कालिजों जैसी सस्थाओ का परस्पर सगठन वाञ्छनीय और साथ ही सम्भव है अथवा नहीं ? यदि नहीं, तो क्या केवल गुरुकुल जैसी सस्थाओं का ही संगठन किया जाना चाहिये।

२—उक्त दोनों अवस्थाओ मे क्या यह वाञ्छनीय तथा सम्भव है कि उस सगठन को विधान द्वारा स्वीकृत (चार्टड) विश्वविद्यालय का रूप दिया जावे ?

३—आपकी दृष्टि मे इस सगठित विश्वविद्यालय की अन्य विश्वविद्यालयों की अपेक्षा क्या २ अपनी विशेषताए होनी चाहिये ?

४—आपकी सम्मति मे उक्त विश्वविद्यालय का ऐसा व्यापक आधार अथवा आदर्श क्या होना चाहिये जिससे आर्यसमाज से बाहर की शिक्षा सस्थाए भी उससे सम्बद्ध हो सकें ?

५—यह सगठित विश्वविद्यालय प्रान्तीय विधान के आधार पर बनना चाहिये अथवा केन्द्रीय विधान के आधार पर ?

६—यह वि० वि० कार्यक्षेत्र की दृष्टि से अखिल भारतीय होगा। इस अवस्था मे उसके सगठन मे क्या २ बाधाये हो सकती है और उनका निराकरण कैसे किया जा सकता है ? उक्त सगठन मे तत्तत् प्रान्तीय तथा प्रान्तो के अन्तर्गत सस्थाओं का, प्रबन्ध तथा शासन की दृष्टि से, उसके साथ कैसा सम्बन्ध रहना चाहिये।

७—उक्त विश्वविद्यालय के सगठन में सम्मिलित होने में वर्तमान गुरुकुलों, डी. ए वी कालेजों आदि अन्य सस्थाओं को क्या २ आपत्तियां हो सकती हैं, और उनका समाधान क्या होसकता है ?

८—विश्वविद्यालयीय सगठन के लिए निम्न-लिखित दृष्टियों से अनेक आवश्यकताए होंगी। इस सम्बन्ध मे आपके ज्ञान में आर्य शिक्षासस्थाओं की वर्तमान परिस्थिति क्या है ?

(क) आर्थिक दृष्टि से,

(ख) स्थान (भूमि तथा भवन) की दृष्टि से,

(ग) छात्र सख्या की दृष्टि से,

(घ) शिक्षा के प्राथमिक, माध्यमिक, विश्व विद्यालयीय स्तर की दृष्टि से,

(ङ) पाठ्य विषयों के विभाग की दृष्टि से,

(च) अनुसधान के लिए उपलब्ध सुविधाओं की दृष्टि से, और

(छ) अध्यापकों की योग्यता की दृष्टि से

६—यदि आपके विचारो मे उक्त सगठन को शासन द्वारा स्वीकृत विश्वविद्यालय का रूप दिया जाना वाछनीय अथवा सम्भव नही है तो उस सगठन का क्या रूप होना चाहिए ?

(क) ऐसे सगठन का सचालन किस प्रकार होना चाहिए ?

(ख) ऐसे सगठन मे पाठ्यक्रम की एक रूपता कहा तक और किस प्रकार लाई जा सकती है। क्या उसमें कई विकल्पों का समावेश भी किया जा सकता है ?

(ग) ऐसे सगठन मे उपाधियों की एकरूपता का होना कहा तक आवश्यक है ?

(घ) ऐसे सगठनों मे छात्रों के आकर्षण का आधार क्या होगा ?

कृपया अपने उत्तर नीचे लिखे पते पर भेजिये-

टिप्पणी—उत्तर देते समय कृपया प्रत्येक प्रश्न का सख्या प्रथक २ लिख कर उनका उत्तर स्पष्ट रूप मे शीघ्र प्रषित करें।

निवेदक—

पता १—श्री वीरेन्द्र शास्त्री एम० ए०
मन्त्री सार्वदेशिक विद्यार्य सभा
रायबरली (यू० पी०)

पता २—श्री मगलदेव शास्त्री एम०ए० डी०फिल
अध्यक्ष गुरुकुलीय विश्वविद्यालय
सगठन उपसमिति
सार्वदेशिक विद्यार्य सभा, देहली
निजी पता—वैदिक स्वाध्याय मन्दिर
इग्लिशिया लाइन, बनारस कैन्ट

(पृष्ठ ४२७ का शेष)

९६९ की पूर्ण जनसख्या मे जो शेष बचे वे किसी न किसी रूप मे क्षतिग्रस्त हो गए। बहुत से अज्ञात रोगों से पीडित हो गए। अमरीका की सरकारी रिपोर्ट के अनुसार इस विस्फोट के शिकार कुल १२८६५८ व्यक्ति हुए, जिनमें ७८१५० मर गए, ३७४२५ बुरी तरह से घायल हुए और १३०८३ लापता हो गए जिनकी लाश आज तक प्राप्त न हो सकी।

कोई भी राष्ट्र इतने बडे पैमाने पर जन सहार को सहन नहीं कर सकता। यही कारण था कि जापान ने भी इस विध्वसकारी परिणाम को ध्यान में रखते हुए मित्रराष्ट्रों के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया। मित्रराष्ट्रों ने जापान की इस विवशता से लाभ उठाया और एक नया एव पूर्णतया अनुचित समझौता उसके सामने रक्खा जिसे जापान को विवश होकर मानना ही पडा।

शाति का वास्तविक अर्थ केवल हिरोशिमा की जनता एव विभिन्न अनाथालयो मे पलते अनाथ बच्चे विश्व की जनता को बता सकते है, जिन्होंने उसका मूल्य चुकाया है।

(हिन्दुस्तान ७-८५८)

साहित्य समालोचना

जीवन-यात्रा

(उतार, चढ़ाव, फूल और कांटे)

लेखक—श्रीयुत कविराज हरनामदास बी० ए०
प्रकाशक—सुखदाता प्रकाशन कविराज हरनामदास बी० ए० एण्ड सन्ज, चांदनी चौक, दिल्ली (गौरीशंकर मन्दिर) लालकिले के पास।

$\frac{20 \times 30}{16}$ पृष्ठ २८० मूल्य १॥)

पुस्तक औपन्यासिक ढंग से लिखी गई है जिसका कथानक दो मूर्खो—अमरीकीसिंह और रिझालसिंह—की आपबीती कहानियों पर आश्रित है। दोनो ही अपने को एक दूसरे से अधिक मूर्ख दिखाने की चेष्टामे अपने जीवन की त्रुटियो, मूर्खताओं और दुर्बलताओं को प्रकाशमें लानेमें संकोच नहीं करते उनके जीवन मे अनेक अच्छाइयां और गुण भी पाये जाते है जिनका श्रेय आर्य समाज के सुधार कार्य और शिक्षाओ को भी प्राप्त है। अन्त मे दोनो ही तथा कथित मूर्ख गुणवान और चरित्रवान सिद्ध होते हैं और उनके स्थान मे अमेरिका और रूस महामूर्ख सिद्ध किये जाते हैं जिनकी मूर्खता के कारण विश्वशान्ति को खतरा उपस्थित हो गया है।

पुस्तक की शैली सरल, सरस और मनोरंजक है। अनेक स्थलो पर निर्दोष हास्य और दया एव करुणा का गहरा पुट मिलता है। मूर्खो की कहानियोंमें भाषा-सौष्ठव का निरन्तर बना रहना कठिन है फिर भी विद्वान् लेखक ने उसे बनाये रखने का पूरा सफल यत्न किया है। पुस्तकको अधिकाधिक शिक्षाप्रद और उपयोगी बनाने के सत्प्रयास मे उर्दू और हिन्दी के कवियों, सन्तों और महापुरुषों की उक्तियां भी दी गई हैं।

आर्यवीर

(जालन्धर नगर) वार्षिक चन्दा ६), विदेश से १०)

यह पत्र पहले उर्दू मे निकलता था। इसके संचालक और सम्पादक श्रीयुत पं० मेहरचन्द शर्मा ने हिन्दी सत्याग्रह मे जाते समय प्रतिज्ञा की थी कि वे जेल से लौटने पर इसे हिन्दी में निकालेंगे। उसी प्रतिज्ञा की पूर्त्यर्थ आर्यवीर हिन्दी में प्रकाशित होने लगा है। अब तक इसके ४ अंक निकल चुके है। प्रत्येक अंक पठनीय उत्तम सामग्री से परिपूर्ण है। शर्मा जी ने हिन्दी के प्रचार के निमित्त जो साहस पूर्ण कदम उठाया है वह प्रशंसनीय है। उनकी इस योजना की सफलता के लिये प्रत्येक हिन्दी प्रेमी तथा आर्य को शर्मा जी को सहयोग देना चाहिये।

हम इसकी उन्नति की कामना करते हैं।

कांग्रेस सरकार का सिर दर्द

साम्प्रदायिकता और उसका इलाज

लेखक—श्री ओ३म्प्रकाश त्यागी
प्रकाशक – आर्यवीर प्रकाशन मण्डल, १५, दीवान हाल, दिल्ली।

मूल्य ॥) $\frac{20 \times 30}{16}$ पृष्ठ १२८

प्राप्ति स्थान—(१) सार्वदेशिक प्रेस, दरिया गंज, पाटौदी हाउस, दिल्ली—७

" (२) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन, नई दिल्ली—१

प्रारम्भ में साम्प्रदायिकता के स्वरूप का विश्ले

षण करके निम्नलिखित ६ प्रकारों पर प्रकाश डाला गया है —

१—तथा कथित धार्मिक साम्प्रदायिकता
२—भौगोलिक
३—आर्थिक
४—रंगभेद
५—जन्म पर आधारित ,,
६—राजनैतिक ,,

इन साम्प्रदायिकताओं को उचित रीत्या अज्ञानता, अन्धविश्वास, अन्ध श्रद्धा रूढिवाद और भोगवाद पर आश्रित बताया गया है। साम्प्रदायिकता से किस प्रकार मुक्ति मिल सकती है इसके भी उपाय सुझाये गये हैं। साम्प्रदायिकता के उपद्रवों और वीभत्सता दिखाने के लिये अनेक ऐतिहासिक उदाहरण देकर विषय को उत्तमता से समझाया गया है। कांग्रेस के नेता आये दिन अपने विरोधियों और वर्गों को साम्प्रदायिक कह कर जनता में भ्रम उत्पन्न करते रहते हैं। प्रस्तुत पुस्तक मे इस भ्रम का भली भांति निराकरण हो जाता है इतना ही नहीं वे स्वयं साम्प्रदायिक वा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देने वाले सिद्ध हो जाते हैं। अन्त में साम्प्रदायिकता के निराकरण के अनेक सुझावों का युक्तियुक्त विश्लेषण किया जाकर उन्हें तथा सम्प्रदायवादियों को क्रियान्वित करने की प्रेरणा की गई है। पुस्तक मे रचनात्मक आलोचना पर ही विशेष ध्यान रखा गया है। लेखक ने अपना दृष्टिकोण विश्वास और साहस के साथ प्रस्तुत किया है। पुस्तक पढने और संग्रह करने योग्य है।

❀

वैदिक धर्म प्रसार

और सूचनायें

—आर्य समाज सैक्टर ८ चण्डीगढ़ ने श्री प० आसूराम जी आर्य पुरोहित की सेवाए प्राप्त की हैं जिन्होने प्रचार कार्य आरम्भ कर दिया है। आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग डी० ए० वी० हायर सेकेन्डरी स्कूल सैक्टर ८ में प्रति रविवार को लगते हैं। १७-८-५८ से १०-६-५८ तक श्री मि० भगवानदास जी, श्री कृष्णलाल जी तथा मन्त्री श्री हरीराम जी श्री सी० एल० गोस्वामी तथा श्री मिलखीराम जी के गृहों पर पारिवारिक सत्सग हुए। १७-८-५८ को समाज का चुनाव हुआ। प्रधान श्री प० नानकचन्द जी बैरिस्टर तथा मन्त्री श्री हरीराम जी निर्वाचित हुए।

श्रीयुत प० रामस्वरूप जी शान्त महोपदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की धर्मपत्नी श्रीमती आनन्दी बाई का अपने घर महुआ पो० हस्तपुर (अलीगढ़)मे स्वर्गवास हो गया है। वे अपने पीछे २ पुत्र तथा १ पुत्री छोड़ गई हैं। (इस महान वियोग में श्री पडितजी के प्रति हम अपनी हार्दिक समवेदना का प्रकाश करते है—सम्पादक सार्वदेशिक)।

—१० अगस्त से पटणा मे वैष्णव सम्प्रदाय के लोगों से श्रीयुत् भगवानदेव गुरुकुलीय का 'मूर्ति पूजा' विषय पर लिखित शास्त्रार्थ १० दिन तक चला। जब वैष्णव सम्प्रदाय वाले उत्तर न दे सके तो लिखना बन्द करके गालियों और मार पीट पर उतर आये। श्री पं० जी पर आर्य समाज मन्दिर मे आक्रमण भी किया परन्तु पुलिस के आ जाने पर भाग खड़े हुए। नगर में सर्वत्र वैष्णव सम्प्रदाय वालों की कायरता पूर्ण हेय वृत्ति पर आश्चर्य प्रकट किया जा रहा है और आर्य समाज का गुण गान किया जा रहा है।

—आर्यसमाज उमरी (कानपुर) ने २४-८-५८ को सुमेरसिंह बलिदान दिवस मनाया। २१-६-५८ को श्री स्वामी सन्तोषानन्द जी की अध्यक्षता में बीकानेर (गुड़गावा) में एक विशाल हिन्दी सम्मेलन हुआ। एक प्रस्ताव द्वारा केन्द्रीय सरकार के वचन भग पर रोष प्रकट करके सार्वदेशिक सभा को विश्वास दिलाया कि पजाब में हिन्दी की समस्या के समाधान के लिये सभा जो आदेश देगी उसका पालन किया जायगा।

—आर्य वीर दल दानापुर कैंट का वार्षिक निर्वाचन १२-६-५८ को हुआ। प्रधान श्री रामबली प्रसाद जी तथा मन्त्री डा० राजेन्द्रप्रसाद जी गुप्त निर्वाचित हुए। आर्य कुमार सभा दानापुर कैन्ट का चुनाव भी उसी दिन हुआ। प्रधान श्री रामबली प्रसाद जी तथा मन्त्री श्री सूरजनारायण शाह निर्वाचित हुए।

—आर्य वीर दल की शाखा नियम से प्रात ५ से ६ बजे तक दयानन्द मठ रोहतक में लगती है। २४ अगस्त को सुमेरसिंह दिवस मनाया गया। १०१) स्मारक निधि में दिया।

—श्री जगदीश जी विद्यार्थी बी० ए० संचालक आर्य वीर दल ने एक हरिजन लड़की को ईसाईयों के चंगुल से छुड़ाया जो ७ वर्ष से उनके अधिकार में थी। उसकी पढ़ाई आदि का भी प्रबन्ध कर दिया गया है। इससे पूर्व १० हिन्दू बच्चों को ईसाइयों के बन्धन से मुक्त किया गया। श्रावणी

का पर्व सब समाजों की ओर से आर्य समाज झज्झर रोड रोहतक मे मनाया गया जिसमें आचार्य भगवानदेव जी तथा अन्य विद्वानों के प्रवचन हुए। कृष्ण जन्माष्टमी पर्व भी मनाया गया। प्रात प्रभात फेरी निकाली गई।

—श्री प० आर्य भिक्षु जी शास्त्री आर्य समाज गुरुकुल विभाग फीरोजपुर छावनी मे आचार्य एव पुरोहित पद पर कार्य करने लगे हैं।

—कल्याणी मे गोकुलाष्टमी के पुण्य पर्व पर हिन्दु मुस्लिम समझौते के विरुद्ध गोवध' हुआ जिसके विरोध स्वरूप नगर में हडताल रही। म्युनिसिपल चेयरमैन श्री रामगिरी जागीरदार तथा अध्यक्ष श्री अब्दुल करीम के रवैये पर रोष प्रकट किया जा रहा है।

—आर्यसमाज तालग्राम (फरुखाबाद) में ३१–८–५८ से ६ ९ ५८ तक वेद प्रचार सप्ताह ससमारोह मनाया गया। आर्ष गुरुकुल एटा के श्री प० रामचन्द्र सि० शास्त्री के भजनोपदेश तथा प्रवचन होते रहे। श्रावणी के दिन ३ सज्जनों ने यज्ञोपवीत ग्रहण किया।

—आर्य साधु आश्रम लाडवा (करनाल) ने वेद मन्दिर (सत्सग भवन) के निर्माण का आयोजन किया है जिस पर ५०००) के व्यय का अनुमान है। आश्रम के सस्थापक तथा सचालक श्री स्वामी अभयानन्द जी सरस्वती ने धनीमानी धर्म प्रेमी बन्धुओं से धन की अपील की है।

—आर्य प्रतिनिधि सभा पूर्वीय अफ्रीका के मन्त्री श्री सत्यदेव विद्यालकार सूचित करते हैं कि श्री मदनमोहन जी विद्यासागर २ वष के लिये प्रचारार्थ वहा पहुच गये है।

—आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश का ५९ वा वार्षिक अधिवेशन १८ ५ ५८ को सागर में हुआ। आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार का वार्षिक अधिवेशन ३ ८–५८ को पटना में हुआ जिसमे लगभग २५० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। आगामी वर्ष के लिए श्रीयुत डा० डी० राम० प्रधान तथा श्री रामनारायण जी शास्त्री मन्त्री निर्वाचित हुए।

—आर्य समाज डालटन गज में वेद सप्ताह के अवसर पर वेद कथा का बडा सुन्दर आयोजन किया गया। श्री प० गगाधर जी शास्त्री महोपदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार का आर्य समाज मन्दिर तथा नगर के विभिन्न स्थानों पर बडी प्रभावशालिनी वेद कथा हुई।

—आर्य समाज शाहपुरा के तत्वावधान में श्रीमद्दयानन्द पाठशाला तथा छात्रावास की स्थापना हुई। इस बार पाठशाला में २५ छात्र प्रविष्ट किये गये हैं तथा २५ ही छात्रावास मे लिए जायेंगे। १३ विद्यार्थियों का प्रवेश तो हो चुका है। श्री स्वामी भीष्म जी तथा श्री स्वामी रामानन्द जी के भाषण हुए। श्रावणी उपाकर्म विधिवत् मनाया गया। ६ आर्य महानुभावों ने अपना यज्ञोपवीत सस्कार कराया। समस्त आर्य सदस्यों ने नवीन यज्ञोपवीत धारण किये। छात्रावास प्रबन्ध समिति के सयोजक श्री मदनमोहन जी एम० ए० हैं।

स्वाध्याय योग्य साहित्य

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा २।)
(२) वेद की इयत्ता (श्री स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) १॥)
(३) दयानन्द दिग्दर्शन (श्री स्वा० ब्रह्ममुनिजी) ॥
(४) ईंजील के परस्पर विरोधी वचन (पं० रामचन्द्र जी देहलवी) ।=)
(५) ऋषि कुसुमाञ्जलि (पं० धर्मदेव वि० वा० ॥)
(६) धर्म का आदि स्रोत (पं० गंगाप्रसाद जी एम ए) २)
(७ भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक (श्री राजेन्द्र जी) ॥)
(८) वेदान्त दर्शनम् स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ३)
(९ संस्कार महत्व (पं० मदनमोहन विद्यासागर जी) ।।।)
(१०) जनकल्याण का मूल मन्त्र ।।।)
(११) वेदों की अन्तःसाक्षी का महत्व ॥=)
(१२) आर्य घोष ॥)
(१३) आर्य स्तोत्र ,, ॥)
(१४) स्वाध्याय सन्दोह ५)
(१५) सत्यार्थ प्रकाश १।=)
(१६ महर्षि दयानन्द ।।=)
(१७) सनातनधर्म और आर्य समाज ।=)
(१८) सन्ध्यापद्धति =)
(१९) पंजाब का हिंदी आन्दोलन (माननीय श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त) ।=)
(२०) भोज प्रबन्ध २।)
(२१) डाक्टर वर्नियर की भारत यात्रा ४॥)
(२२) सनातन शुद्धि शास्त्र और आर्यों का चक्रवर्ती राज्य २)

English Publications cf Sarvadeshik Sabha.

1 Agnihotra (Bound) (Dr Satya Prakash D Sc) 2/8/
2. Kenopanishat (Translationby Pt Ganga Prasad ji M A /4/
3 Kathopanishat (Pt Ganga Prasad M A Rtd Chief Judge) 1/4/
4 Aryasamaj & International Aryan League Pt Ganga Prasad ji Upadhyaya M A /1/
5 Voice of Arya Varta (T L Vasvani) /2/
6 Truth & Veds (Rai Sahib) (Thakur Datt Dhawan) /6/
7 Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) /8/
8 Vedic Culture (Pt Ganga Prasad Upadhyaya M A) 3/8/
9 Aryasamaj & Theosophical Society (Shiam Sunber Lal) /3/-
10 Wisdom of the Rishis (Gurudatta M A) 4/ /
11 The Life of the Spirit (Gurudatta M A) 2/ /
12 A Case of Satyarth Prakash in Sind (S Chandra) 1/8/
13 In Defence of Satyarth Prakash (Prof Sudhakar M A) /2
14 Universauty of Satyarth Prakash /1/
15 Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt Dharma Deva ji Vidyavachaspati) /8/
16 Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati) /8/
17 Elementary Teachings of Hindusim /8/ (Ganga Prasad Upadhyaya M.A)
18 Life after Death ,, 1/4/-
19 Philosophy fo Dayanand 10-0-0

Can be had from —SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI 6

नोट--(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत चौथाई धन अग्रिम रूप में भेजें। (२) थोक ग्राहकों को नियमित कमीशन भी दिया जायगा। (३) अपना पूरा [illegible] साफ साफ २ लिखें।

Regd No D 51

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज

जिनकी बलिदान जयन्ती २३ दिसम्बर को मनाई जायगी ।

सम्पादक—सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक

मूल्य स्वदेश ५)
विदेश १० शिलिङ्ग

दिसम्बर १९५८

विषय सूची

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा दिल्ली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३३ | दिसम्बर १९५८ मगसिर २०१५ वि, दयानन्दाब्द १३४ | अङ्क १०

वैदिक प्रार्थना

देवो देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसुर्वसूनामसि चारुरध्वरे।
शर्मन्त्स्याम तव सप्रथस्तमेऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥
ऋ० १ । ६ ३२ । १३ ।

व्याख्यान—हे मनुष्यो! वह परमात्मा कैसा है? कि हम लोग उसकी स्तुति करें। हे अग्ने परमेश्वर! आप "देव, देवानामसि" देवों (परम विद्वानों) के भी देव (परम विद्वान्) हो, तथा उनको परमानन्द देने वाले हो, तथा "अद्भुत" अत्यन्त आश्चर्यरूप मित्र सर्व सुखकारक सब के सखा हो "वसु०" पृथिव्यादि वसुओं के भी वास कराने वाले हो, तथा "अध्वरे" ज्ञानादि यज्ञ में "चारु" अत्यन्त शोभायमान और शोभा के देने वाले हो। हे परमात्मन्! "सप्रथस्तमे सख्ये, शर्मणि तव" आपके अतिविस्तीर्ण, आनन्दस्वरूप सखाओं के कर्म में, हम लोग स्थिर हों, जिससे हम को कभी दुःख न प्राप्त हो और आपके अनुग्रह से हम लोग परस्पर अप्रीतियुक्त कभी न हों॥

श्रद्धाञ्जलि

आगामी २३ दिसम्बर को "श्रद्धानन्द-बलिदान जयन्ती" मनायी जायगी। श्री स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन और उनके सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों का अध्ययन करने के पश्चात् आर्यसमाज की ओर आकृष्ट हुए थे। आर्य समाज की सेवा की उनकी भावना यह थी कि सब से पहले आर्य समाज का रजिस्टर्ड सदस्य होने के साथ २ शब्द के ठीक २ अर्थ में 'आर्य्य' बना जाय, और अपने जीवन को वैदिक आदर्शों में ढाला जाय। इसके पश्चात अपने को आर्य समाज की सेवा में सर्वात्मना लगा दिया जाय। स्वामी जी महाराज ने इस भावना को अपने जीवन में भली भांति चरितार्थ किया। वे प्रारम्भ से लेकर अन्त तक आर्यत्व का परिचय देते रहे। जिस वस्तु को बुराई समझा उसका परित्याग करने में कटिबद्ध रहे। जिसे सत्य समझा उसके परिपालन में निरत रहे। इसके लिए उन्हें बड़े से बड़ा कष्ट, परिश्रम और त्याग भी करना पड़ा। उनकी इस भावना की प्रथम झांकी जीवन की त्रुटियों के परित्याग में देखने को मिलती है। शराब और मांस का परित्याग किया तो सदैव के लिए किया। ईसाईयों के स्कूलों में हिन्दू बच्चों का पढाया जाना धार्मिक विकास की दृष्टि से अवाञ्छनीय माना तो अपनी कन्याओं को वहा से हटाकर कन्या महाविद्यालय जालधर की स्थापना कर दी। वर्तमान शिक्षा-पद्धति मानवीय और चारित्रिक मूल्यों की घोर उपेक्षा करती और शिक्षा की वास्तविक समस्या का समाधान प्रस्तुत नहीं करती है इस सत्य के अंकित हो जाने पर गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना करके ब्रह्मचर्य पर आधारित वैदिक शिक्षा-प्रणाली के उद्धार में सलग्न हो गए। वर्तमान जात-पात अन्यान्य सामाजिक कुरीतियों और रूढ़ियों के तोड़ने का दायित्व प्रत्येक भारतवासी और उनमें भी सबसे पहले आर्य समाज के सदस्यों पर है इस सत्य को अनुभव करके अपने बच्चों का विवाह जात-पात तोड़कर किया। प्रत्येक आर्य के लिए यह आवश्यक है कि वह वर्णाश्रम व्यवस्था के आदर्श को क्रियात्मक रूप देने में अग्रसर रहे। इसी भावना से प्रेरित होकर सन्यास ग्रहण किया। दलितों, पतितों, पीड़ितों, असहायों अनाथों और विधवाओं की सेवा और उद्धार करना मानवीय और सामाजिक कर्त्तव्य है। इस भावना ने उन्हें अछूतोद्धार, शुद्धि अकाल पीडितों की सेवा और गिरे हुओं को ऊंचा उठाने के कार्यों में आजन्म लगाए रखा। देश के उत्थान एव सांस्कृतिक एकीकरण की प्रक्रिया के मार्ग में विदेशी शासन तथा विदेशी आदर्शों को बड़ी भारी बाधा मानकर उनके निवारण मे भरसक योग दिया। विधवा विवाह, शुद्धि एवं अछूतोद्धार के पुरोगम पर जब हिन्दू महासभा और कांग्रेस से तीव्र मतभेद हुआ तो इन दोनों संस्थाओं से पृथक हो गए। आर्य समाज में रहते हुए देशोद्धार का ध्यान रखा तो कांग्रेस आदि में रहते हुए आर्य समाज को और उसके हित को एक क्षण के लिए भी न भुलाया। उनकी मान्यता थी कि शुद्धि एव अछूतोद्धार के कार्य का विशुद्ध जातीय महत्त्व है हिन्दू समाज की रक्षा और दृढीकरण का कार्य है अत इस विषय पर समझौते की गुन्जाइश नहीं है। सहस्रों मलकानों की व्यापक शुद्धि आर्य जाति की सेवा में उनकी अन्तिम महान भेंट थी। हिन्दी को लोक प्रिय बनाने के लिए उन्होंने कम महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं किया। हिन्दी को गुरुकुल की शिक्षा का माध्यम नियत किया। अपनेपत्र 'सद्धर्म प्रचारक' को वर्षों तक उर्दू में निकालने के पश्चात् हिन्दी में निकाला। उर्दू में दिल्ली से 'तेज' और हिन्दी में 'विजय' पत्र निकाले। अमृतसर कांग्रेस के स्वागता-

ध्यक्ष का भाषण उस समय की परम्परा के विपरीत हिन्दी में पढा। अन्त में आर्य जाति की सेवा में निरत रहते हुए धर्म की बलिवेदि पर २३ दिसम्बर १६२६ को बलि हो गए।

स्वामी जी महाराज का जीवन आर्य समाज के एक मिशनरी और अनन्य प्रेमी का त्याग, कष्ट और बलिदान से परिपूर्ण जीवन रहा। जब वे जलन्धर में वकालत करते थे तब अकेले उन्होंने उस जिले मे तथा बाहर प्रचार का जितना कार्य किया उतना बीसियों प्रचारक भी मिल कर न कर पाते। आर्य समाज पर और जाति पर जब २ आपत्ति आई वे सब से पहले उसके निराकरण के लिए मैदान मे आ डटे। पटियाला और धौलपुर के केस आर्य समाज के अस्तित्व को चुनौती लेकर आए। आर्य समाज को राजद्रोही संस्था उद्घोषित किए जाने के षडयन्त्र रचे गए। स्वामी जी महाराज ने इन चुनौतियों को स्वीकार किया और उनका डटकर सामना किया। फलत आर्य समाज उन परीक्षणों की भट्टी मे से गुजर कर खरा कुन्दन सिद्ध हुआ। उनके महान् व्यक्तित्व, गुरुकुल के सफल परीक्षण और 'वैदिक मेगजीन' नामक उनके पत्र ने आर्य समाज की कीर्ति को देश मे ही नहीं अपितु देश से बाहर भी विस्तृत किया।

वैदिक-कर्मकाड को जीवन की अन्तिम घडियों तक अपनाए रहे। सन्यासाश्रम में यज्ञ, हवन अनिवार्य नहीं है फिर भी वे इस नित्य कर्म को अन्त तक करते रहे।

उनका व्यक्तित्व छाया हुआ व्यक्तित्व था। हृदय मे दृढता और उदारता थी। जीवन में तप और त्याग की आभा थी। कर्मठता और निर्भयता की प्रतिमूर्ति थे। अच्छे कार्य के लिए मर मिटने की धुन थी। उनका जीवन और मृत्यु दोनो ही प्रेरणामय रहे। उनका नेतृत्व आर्य समाज के लिए देन थी। उनके बलिदान के समय आर्य जनों ने अनुभव किया था कि उनके ऊपर से एक बडा साया उठ गया है और आर्य समाज एक परखे हुए योग्य नेता से वंचित हो गया है। आर्य समाज आज भी उनके अभाव मे अपने को अकिंचन अनुभव करता है।

इन शब्दों के साथ श्रद्धा के उस महान् पुंज के अज्ञात चरणों में हम अपनी श्रद्धांजलि प्रस्तुत करते है।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

❀

राज्यपाल की श्रद्धांजलि

आर्य समाज चण्डीगढ में आयोजित महर्षि दयानन्द निर्वाणोत्सव' में पंजाबके राज्यपाल श्रीयुत नरहरि विष्णु गाडगिल महोदय ने भाषण देते हुए कहा "किसी ने मुझ से कहा कि जब आपका राज्य विधर्मी है तब कैसे एक विशुद्ध धार्मिक समारोह की अध्यक्षता करने जा रहे हैं। मैने उत्तर दिया कि "राज्य विधर्मी (धर्म निरपेक्ष) तो है परन्तु अधर्मी नहीं है।" महर्षि के प्रति श्रद्धांजलि प्रस्तुत करने के बाद राज्यपाल महोदय ने बताया कि 'मैंने १६३२ में सर्वप्रथम अल्मोडा जेल में सत्यार्थप्रकाश पढा था। यदि हम सत्यार्थप्रकाश मे वर्णित आदर्शों पर चलें तो आज की समस्याए कभी उत्पन्न न हों और उत्पन्न हों तो जन्मते ही काल का ग्रास बनजाय।"

श्री सरदार ज्ञानसिंह राडेवाला ने महर्षि के कार्यों का अभिनन्दन करते हुए महात्मा गांधी के इस कथन को दुहराया कि 'स्वराज्य का मार्ग हमें स्वामी दयानन्द ने दिखाया है।'

दलितोद्धार

मुक्तेश्वर (नैनीताल) में २७ और २८ सित-

म्बर को आयोजित हरिजन सम्मेलन में एक प्रस्ताव इस प्रकार पारित हुआ —

"यह सम्मेलन छूत-छात का मूल कारण जाति-भेद मानता है और जाति-भेद की जननी वर्ण व्यवस्था। अतः अस्पृश्यता का समूल नाश करने के लिये वर्ण-भेद का पूर्णतः विध्वंस किया जाय। यदि चातु-वर्ण व्यवस्था को समूल नहीं मिटाया गया तो शिल्पकार (हरिजन) हिन्दू धर्म को तिला-जलि दे देंगे। वर्ण-व्यवस्था हरिजनो के आत्म सम्मान के विरुद्ध है तथा मानवता के लिए अभिशाप है। जब तक जातिवाद है तब तक हरिजनों को नीची निगाह से देखा जायगा। इसलिए देश की एकता में बाधक और मानवता का अपमान करने वाली इस वर्ण-व्यवस्था और जाति भेद का नामो निशान मिटा दिया जाय।"

दलित समझे जाने वाले भाइयों का जन्म की जात पात के विरुद्ध रोष प्रकट करना उचित एव स्वाभाविक है। फिर भी अत्यन्त प्राचीन होने और समाज में इसकी जडें बहुत गहरी फैली होने के कारण इसका शीघ्र ही अन्त होना सम्भव प्रतीत नहीं होता। यह धीरे २ ही नष्ट हो सकेगी। इसके लिए सवर्णों और हरिजनों दोनों को ही मिलकर प्रयत्न करना होगा। ज्यों २ सवर्णों में यह भावना आने लगेगी कि दलित भाई भी मनुष्य हैं, जन्म से न कोई अच्छा होता है और न बुरा, न उच्च होता है और न नीच, त्यों २ जन्म की जात पात के बन्धन ढीले होते रहेंगे। दलितों में से आत्म हीनता की भावना के निकलने की परमावश्यकता है। परन्तु इस आत्म हीनता के भाव के निकलने का अर्थ यह नहीं है कि वह सवर्णों को चिढाने मनोमालिन्य, सघर्ष एव रक्तपात से कलुषित बनाने वाला हो। सवर्णों को शताब्दियों के अभि शाप के प्रायश्चित्तस्वरूप हरिजनों की सामाजिक कठिनाइयों, अयोग्यताओं और त्रुटियों को प्रेम और सहानुभूति पूर्वक दूर करने और उनके साथ ऊंच नीच, छूतछात का व्यवहार न करने में अग्रसर होना चाहिय। दलित भाइयो को सामाजिक कुरीतियों, मद्य मास आदि अभक्ष्य पदार्थों के सेवन आदि कुटेवों का परित्याग कर शिक्षा और सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिये। इस प्रकार उनका सामाजिक स्तर ऊंचा होगा। हमारी गवन मेंट इसके लिए प्रयत्नशील है। उनकी शिक्षा और आर्थिक योग क्षेम का विशेष ध्यान रखती है।

सरकारी सरंक्षण और सहायता से भी उनका सामाजिक कठिनाइया दूर हो रही है और उनका सामाजिक और आर्थिक स्तर ऊंचा हो रहा है। आर्य समाज ने सर्व प्रथम दलित भाइया के साथ रोटी बेटी का व्यवहार करके मार्ग दर्शन किया है और वह इस दिशा में पूर्णतया प्रयत्नशील है। गुरुकुलों मे पढ़ने वाले दलित छात्र यह भूल जाते हैं कि वे दलित हैं। सवर्णों के छात्र यह भी नहीं जान पाते कि अमुक छात्र दलित वर्ग का है। वे बाहर आकर समाज मे घुल मिल जाते हैं। इसी प्रकार आर्य समाज में आये हुए अन्य जन भी समानता का अनुभव करते हैं। उनमें से कई हरिजनों के लिए अभिप्रेत राजकीय सुविधाओं का हरिजन के नाम पर उपयोग करते हैं। यद्यपि यह प्रशसनीय कार्य नहीं है तथापि ऐसा करते हुए वे अपने को हरिजन अनुभव नहीं करते। दलित भाइयों को कई खतरों से सावधान रहने की आवश्यकता है। उनमे से एक खतरा राजनैतिक शतरंज का मुहरा बनना है। अनेक स्वयभू नेता हरिजन हितैषिता के नाम पर अपना उल्लू सीधा करने के लिए दलित भाइयों का गलत मार्ग प्रदर्शन करते हैं। कभी उन्हें बौद्ध बन जाने की प्रेरणा

करते हैं, कभी ईसाई वा मुसलमान बन जाने की। उनके साथ समानता का व्यवहार नहीं किया जाता। वहा भी उनकी सामाजिक स्थिति हीन ही रहती है। फिर अपने पूर्वजों के हिन्दू धर्म का परित्याग करने से क्या लाभ ?

यह ठीक है कि वर्तमान जाति भेद वर्ण व्यवस्था का विकृत रूप है। परन्तु कोई भी समाज वर्ग शून्य कभी नहीं बन सकता। समाज मे इ जीनियर, शिक्षक, वकील, डाक्टर आदि बुद्धिजीवी रहेंगे। शिल्पी, कृषक, दूकानदार, व्यापारी और सेवक भी रहेंगे। कम्युनिस्टों ने वर्ग हीन समाज के निर्माण का यत्न किया और अब भी कर रहे हैं परन्तु वे उपर्युक्त वृत्ति वाले व्यक्तियों को जो चतुर्वर्णों के अन्तर्गत आते हैं वर्ग हीन न बना सके। उनके पद, और जीवन स्तर मे विभिन्नता है जो स्वाभाविक है। ऐसी अवस्था मे चतुर्वर्ण को मिटाने का जब वहा ही क्रियात्मक प्रयोग सफल न हो सका तो इसे मिटाने की चर्चा वा प्रयास करना व्यर्थ है। चतुर्वर्ण का सम्बन्ध मनुष्य की प्रवृत्तियों के साथ है जो भारत मे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की संज्ञा मे व्यक्त होती है भले ही अन्यत्र इनके नाम भिन्न २ रूप ही क्यों न लिए हो। आर्य समाज ने दलित भाइयों को गुण, कर्मानुसार वर्ण प्रदान करने का सत्प्रयत्न आरम्भ किया था। एक दो व्यक्तियों को वर्ण भी प्रदान किए थे। यह प्रक्रिया अब पुन आरम्भ होनी चाहिये और अधिक नहीं तो कमसेकम राज्य द्वारा उन वर्णों की वैधानिकता स्वीकार कराने का पुरोगम हाथ मे लेना चाहिये। वर्ण प्रदान करना राज्य का काम है। राज्य इस समय वर्ण प्रदान न कर सके तो उसे वर्णों को वैधानिकता देने में आर्य समाज को सहायता देनी चाहिये।

केन्द्रीय रेल मन्त्री का भाषण

केन्द्रीय रेलवे मन्त्री श्री जगजीवनराम जी ने 'आन्ध्र प्रदेश दलित-वर्ग कर्मचारी सम्मेलन" में हैदराबाद नगर मे २८ अक्टूबर को जो भाषण दिया वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रत्येक समाज सुधारक हरिजन नेता और हरिजन प्रजा को उसे पढ कर मनन करना चाहिए। श्री जगजीवनराम जी ने उस भाषण के द्वारा हरिजन कहे जाने वाले भाइयों का सही मार्ग प्रदर्शन किया है जिसके लिए वे धन्यवाद के पात्र है। सम्मेलन तथा उनके भाषण की जो रिपोर्ट समाचार पत्रों मे प्रकाशित हुई है वह इस प्रकार है —

भाषण

"ब्रिटिश काल मे हजारों की सख्या में हरिजनों ने ईसाई धर्म को स्वीकार किया था, परन्तु इन दिनों मध्यप्रदेश और हैदराबाद में ईसाई पादरियों ने लालच और डरा धमका कर सामूहिक धर्म परिवर्तन (ईसाई बनाने) की नीति अपनाली है जो बहुत गम्भीर है। सरकार इस घातक नीति पर गम्भीरता से विचार करेगी।

मै पिछले २५ वर्षों से ऐसे हरिजनो को पुन हिन्दू धर्म में लाने के प्रयत्न में हू जिन्हें लालच देकर अथवा दबाव में डाल कर ईसाई बना लिया गया है। इस समय तक लगभग ७०० हरिजन भाई हिन्दू धर्म में वापस लिए जा चुके हैं जो लोग समझ बूझकर ईसाई बनते हैं उनकी बात मैं नहीं कहता, परन्तु जिन लोगों को अज्ञान के कारण धर्म परिवर्तन करना पडा है उनके साथ अन्याय किया गया है और इसकी जिम्मेदारी ईसाई पादरियों पर है।

बहुत से हरिजन ईसाई बनने पर भी देवी पूजा करते हैं और अन्य हिन्दुओं की तरह पर्व मनाते हैं जो इस बात का जाग्रत सबूत है कि उनके अज्ञान का लाभ पादरियों ने उठाया है और उन्हें लालच देकर ईसाई बनाया गया है। यहा तक नहीं जातियों के आधार पर इन ईसाइयों के लिए अलग अलग गिरजेघर भी हैं।

समाज में हरिजनों के प्रति किसी प्रकार की दुर्भावनाए हैं ऐसा सोचकर धर्म परिवर्तन न करें, क्योंकि शताब्दियों से जो बुराई देश मे आगई है हम उसे दूर करने में लगे हैं और समय आने पर सब ठीक हो जायगा। हरिजनों के सामने हिन्दू रहते हुए कुछ समस्याए हो सकती हैं, परन्तु वैसी अथवा उनसे भी बडी समस्याए ईसाई बनने पर भी हो सकती हैं तब क्या यह उचित है कि वे बुजदिली में आकर धर्म छोडदें।

हिन्दू धर्म में कुछ बुराई आ गई हैं उन्हें दूर करना अन्य लोगों की तरह हरिजनों का भी कर्तव्य हो जाता है।

जो लोग अपनी खुशी से ईसाई धर्म की अच्छाई बुराई को समझ कर धर्म परिवर्तन करते हैं उन्हें कोई नहीं रोक सकता और न ही उन्हें रोकने में किसी प्रकार का तर्क हमारे सामने है। मुझे तो केवल धर्म परिवर्तन के उस तरीके से नफरत है जो भोले भाले लोगों को लालच में डाल कर अथवा दबाव में लाकर किया जाता है।'

रिपोर्ट

इसमे पूर्व सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए श्री ढेबर ने कहा कि हम एक नए राष्ट्र व नए समाज के निर्माण में लगे हुए हैं और यह कार्य तभी पूरा हो सकता है जबकि राष्ट्र के सभी ३६ करोड लोग एक परिवार की तरह रहेंगे और ऊच नीच तथा गरीब अमीर का भेदभाव छोड देंगे।

अन्त में सम्मेलन मे एक प्रस्ताव स्वीकार कर इस बात पर गम्भीर चिन्ता व्यक्त की गई कि हरिजनों का सामूहिक तौर पर धर्म परिवर्तन किया जा रहा है और उन्हें ईसाई बनाया जा रहा है। इसके निराकरण के लिए हरिजनों को चाहिए कि वे उन हरिजन ईसाइयों को पुन अपने धर्म में ले लें।

एक अन्य प्रस्ताव में केन्द्रीय सरकार से प्रार्थना की गई कि वह सविधान मे सशोधन करके हरिजनों और परिगणित जाति के लोगों को विधान सभाओं व ससद् में सुरक्षित स्थान देने की अवधि में वृद्धि करे।

देखना है कि हमारी राष्ट्रीय सरकार ईसाइयों द्वारा हरिजनों के आपत्तिजनक सामूहिक धर्म परिवर्तन को रोकने के लिए क्या पग उठाती है?

लाला जी के निर्वासन की आन्तरिक कहानी

श्रीयुत लाला लाजपतराय जी और भारतमाता सोसाइटी (लाहौर) के क्रान्तिकारी श्री अजितसिंह को राजद्रोह के तथाकथित अपराध मे देश से निर्वासित करके माडले की जेल में भेज दिया गया था। श्री लाला जी उन दिनों आर्य समाज के कार्य मे सलग्न थे और ब्रिटिश अधिकारी आर्य समाज को भ्रम वशात् राजद्रोहात्मक सस्था मानने लगे थे। पजाब मे कोलोनाइजिंग ऐक्ट के प्रचलित और इन दोनों की गिरफ्तारी हो जाने से पजाब की स्थिति विस्फोटक हो गई थी। इससे पूर्व किसानों ने नहर का टैक्स न देने का निश्चय कर लिया था

पजाब के राज्याधिकारी बडे चिन्तित और भयभीत थे। सन् १९०७ की १० मई निकट आई जान पजाब के तत्कालीन ले०—गवर्नर के धैर्य का बाध टूट गया। १० मई को १८५७ की क्रान्ति के पूरे ५० वर्ष पूरे हो रहे थे अत उन्होंने तत्काल कठोर कार्यवाही किए जाने की आवश्यकता अनुभव की और १८१८ के रेगुलेशन के अधीन श्री लाला लाजपतराय और सरदार अजितसिंह के निर्वासन की भारत सरकार को सिफारिश की। फलत ६ मई को ही दोनों देशभक्त गिरफ्तार कर लिए गए।

श्री लाला जी की इस गिरफ्तारी और ६ मास बाद ही मुक्ति की आन्तरिक कहानी जो भारत

सरकार के गुप्त रिकार्ड से विदित हुई है ध्यान देने योग्य है (देखें कल्चरल इंडिया ३१ १० ५८) इस कहानी से सरकारी विचार धारा की बहुरूपता सुस्पष्ट होती है। पंजाब के गवर्नर ने आरोप लगाया 'लाजपतराय देशी सिपाहियों में विद्रोह फैलाने के लिए कृत सकल्प हैं। वायसराय की कौंसिल के दो सदस्यों (श्री ऐल०ई०रिचार्ड और ई०एन०बेकर) ने श्री लाला लाजपतराय जी के विषय में लिखा "उनके भाषण अधिक सयत होते हैं और वे नरम दल के एक सदस्य है जिनकी नीति वैधानिक ढग से आगे बढने की है उनकी गिरफ्तारी से अधिक उत्तेजना फैलेगी और गोखले तथा उनके अनुयायी बहुत बुरा मनायेंगे हो सकता है जो राजनैतिक दल हमारे पक्ष मे हैं वह हमारे विरुद्ध हो जाय। लाला लाजपतराय के विरुद्ध केस सन्देहात्मक है।" गिरफ्तारी से ४ दिन पूर्व की गई इस सिफारिश को वायसराय लार्ड मिन्टो एव अन्य सदस्यों ने ठुकरा दिया परन्तु कुछ दिन के पश्चात् ही वायसराय को यह स्वीकार करना पडा —

"मैं यह कहने के लिए विवश हू कि जिस सूचना के आधार पर पजाब गवर्नमेन्ट ने तात्का लिक कार्यवाही किए जाने की हमे प्रेरणा की थी वह तथ्यहीन थी जिसका ठीक परिज्ञान मुझे अब हुआ है।"

भारत मन्त्री लार्ड मोर्ले इस निर्वासन पर दुखी थे। उन्होंने इसे नितान्त असाधारण और इग्लैंड की गवर्नमेन्ट के आदर्श एव इग्लैंड की प्रजा की राजनैतिक विचार धारा के सर्वथा विरुद्ध कार्यवाही बता कर भारत सरकार को फटकार लगाई कि 'कैदी के प्रति इस कठोर वा प्रतिबन्धात्मक कार्यवाही के किए जाने' की बात उनसे क्योंकर छुपाई गई। ३० अगस्त १९०७ को मोर्ले ने लन्दन में रिस्ले से कहा —

"जब तक वह व्यक्ति (लाला जी) कैद में बन्द रहेंगे, तब तक पार्लियामेन्ट में जाने का मुझे साहस न होगा।'

३० अक्टूबर को मोर्ले ने वायसराय को निम्न लिखित तार दिया —

"(प्राइवेट) लाला लाजपतराय को छोड दो। मीटिंगों का ऐक्ट पारित किए जाने के अवसर को मुक्त करने का सुअवसर समझो।"

१ ११ १९०७ को पजाब के ले०-गवर्नर ने वायसराय को तार भेजा।

"मैं तात्कालिक मुक्ति का घोर विरोध करता हूँ।"

फिर भी १९०७ के नवम्बर मास में लाला लाजपतराय मुक्त कर दिए गए और जिस दिन वे छूटकर लाहौर पहुचे उस दिन तमाम नगर में रोशनी की गई।

फैशन की दासता

अभी कुछ दिन हुए छात्राओं के माता पिताओ एव अभिभावकों के एक शिष्ट मण्डल ने पजाब की उपशिक्षा मन्त्री से भेंट की और उनके समक्ष अपनी शिकायतें प्रस्तुत की। शिष्ट मन्डल की पहली शिकायत यह थी कि अध्यापिकाएं अपनी छात्राओं में फैशन का रोग फैला रही हैं क्योंकि वे स्वय बडी बन ठन कर स्कूल मे आती है। छात्राओं में अपनी अध्यापिकाओं में नकल करने की इच्छा का होना स्वाभाविक है अत वे भी फैशनेबिल हो जाती हैं तथा अपने माता पिताओं को नये २ कपडों पर अधिक पैसा खर्च करने को विवश कर देती है।

शिष्ट मण्डल की दूसरी शिकायत इससे भी अधिक गम्भीर थी। उसने कहा कि फैशन की बीमारी अथवा उसके फलस्वरूप बढने वाले व्यय से माता पिता इतने चिन्तित न होते यदि अध्या पिकाओं के इस आचरण के फल स्वरूप देश के युवक युवतियों में उन महान् दायित्वों के प्रति जो उनके कन्धों पर है गम्भीरता की भावना का लोप न होता जाता। फैशन का नतीजा यह होता है कि

उनका ध्यान अध्ययन अध्यापन से हट जाता है।

शिष्ट मण्डल ने यह आरोप लगाया कि इस प्रवृत्ति के लिए वे महिलाएं जिम्मेवार हैं जो इस भावना से अध्यापन कार्य अपनाती है कि जब तक शादी नहीं होती चलो यही धन्धा कर लो। कदाचित इससे विवाह के बाजार में उनकी 'मार्केट वैल्यू' बढ जाय। अध्यापन कार्य के प्रति उनकी कोई स्वाभाविक रुचि नहीं रहती। आप देख सकते हैं कि पढाईके घंटोंमें भी वे स्वेटर बुनती रहती है।

फैशन परस्ती के लिए एक मात्र अध्यापिकाएं ही उत्तरदाता नहीं हैं। यहा तो छात्राओं के माता पिता, भाई, बहिन, अभिभावक और समाज के अन्य प्राय सभी जन उत्तरदाता है। अध्यापिकाएं इस लोक से भिन्न अन्य किसी लोक से अवतरित नहीं होतीं। क्या अध्यापिकाओं से कम माताए और बहनें फैशन परस्त होती हैं? छात्राओं पर स्कूलों से बाहर घर और समाज का भी तो प्रभाव पडता ही है। *भारत के सभी प्रान्त फैशन परस्ती की बीमारी से पीड़ित हैं परन्तु पजाब मे यह रोग* सक्रामक बना हुआ है जिस पर देश के विचारशील जन खेद प्रकट करते आ रहे हैं। अध्यापिकाओं की फैशन परस्ती से छात्राओं को बचाने का उपाय यह है कि शिक्षा विभाग उनकी ड्रैस नियत कर दे। उनकी ही नहीं अपितु उनके उच्चाधिकारियों की भी। इसके साथ ही छात्राओं की भी। समूचे देश की वेष भूषा में आमूल चूल परिवर्तन की आवश्यकता सब से अधिक इसी समय अनुभव की जा रही है। जब तक यह सुधार नहीं होता तब तक रोग का शमन सम्भव नहीं है। फिर भी अध्यापिकाओं को अपनी छात्राओं के समक्ष अपने को आदर्श रूप मे ही प्रस्तुत रखना चाहिए।

मुख्यतया विधवाओं के लिए डाक्टरी और अध्यापन ये दो कार्य ही उपयुक्त समझे जाते रहे हैं। परन्तु सामाजिक परिस्थितियों ने अविवाहित लड़कियों को इस व्यवसाय को अपनाने के लिए विवश कर दिया है जिसका परिणाम सुखद नहीं है। फिर भी उपर्युक्त दोनों व्यवसायों में प्राथमिकता विधवाओं और असहाय देवियों को प्राप्त रहनी चाहिये।

वेष-भूषा का सम्बन्ध प्रधानत जल वायु के साथ है। जब ये प्रदर्शन और दिखावे का विषय बन जाते है तभी खराबी उत्पन्न होती है। साफ-सुथरा रहना बुरा नहीं है परन्तु बुरा है दिखावे का भाव। फैशन के पुजारियों के लिए सुखी रहना इतना महत्वपूर्ण नहीं होता जितना अपने को फैशनेबिल दिखाना होता है। वे अपने सुख और मानसिक आनन्द को भी फैशन पर न्यौछावर कर देते हैं। परन्तु फैशनपरस्तों को यह स्मरण रखना चाहिए कि विचारों की गम्भीरता, पवित्रता और जीवनोद्देश्य की महत्ता के बिना कृत्रिम जीवन व्यतीत करना अच्छा नहीं है क्योंकि इस प्रकार के जीवन से मनुष्य जहा अपनी हानि करता है वहा समाज में भी हास्यास्पद बना रहता है। फैशन का प्रभाव वह अन्तिम प्रभाव होता है जिसके वशीभूत होना आत्म सम्मान और जीवन के महान उद्देश्य को सामने रखने वाला व्यक्ति पसन्द नहीं करता।

सेवा कार्य

पिछले दिनों समाचार पत्रों में यह चर्चा चली थी कि ग्रामों में हमारी जो बहिनें राजकीय जन-कल्याण कार्य क लिए जाती हैं वे ग्रामीण महिलाओं को प्रभावित नहीं कर पातीं क्योंकि उनकी वेष-भूषा, रहन-सहन और बात-चीत का प्रकार उन महिलाओं से नितान्त विभिन्न होता है जिससे अहम्भाव की गन्ध आती रहती है। लिपस्टिक, पाउडर आदि कृत्रिम सौन्दर्य प्रसाधनों से मंडित महिलाएं ग्रामीण महिलाओं के मध्य प्रेरणा का स्रोत होने के स्थान में उनके हास्य का ही पात्र बन सकती है। जो भाई ग्रामों में जन-कल्याण

(शेष पृष्ठ ५४१ पर)

वैदिक उपासना ही सर्वश्रेष्ठ है !

[लेखक—श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज]

विचारशील पाठक वृन्द यह तो सर्वथा निश्चित ही है कि अन्य सिद्धान्तों के समान ईश्वर उपासना भी आर्य समाज की प्राचीन है क्योंकि लगभग ५५० वर्षों से पूर्व सिक्खों के गुरु और उनका बनाया ग्रन्थ भी न था। तब उनके गुरुद्वारे और उपासना का प्रचार भी कैसे होता। अत यह प्रश्न होता है कि गुरुओं के पूर्वज ईश्वर की भक्ति किस प्रकार करते थे? इसी प्रकार १४०० वर्षों से पूर्व हजरत मुहम्मद साहिब भी न थे और उनका कुरान तथा मस्जिदें भी न थीं तो नमाज रोजा आदि भी न थे। पुन मुस्लिम पैगम्बर के पितामह आदि किस प्रकार ईश्वर की भक्ति करते थे तथा २००० वर्ष से पूर्व ईसामसीह भी न थे तथा ईसाई भी न थे और न गिरजाघर ही थे तब ईसाईयों का भक्ति करने का प्रकार भी कैसे होता। लगभग ३००० वर्ष से पूर्व जैनों के तीर्थङ्कर भी न थे तो उनके मन्दिर और मूर्ति भी कैसे बनते। उस समय तीर्थङ्करों के पूर्वज ईश्वर की पूजा कहां और कैसे करते थे तथा ५००० वर्ष से पूर्व कृष्ण जी भी न थे, तो उनकी मूर्ति और कृष्ण मन्दिर भी कैसे बनते अत प्रश्न होता है कि श्रीकृष्ण जी के पूर्वज ईश्वर की उपासना किस प्रकार करते थे एवं जब राम न थे तो उनके पूर्वज तथा महादेव जी के पूर्वज किस प्रकार ईश्वर की भक्ति करते थे? क्योंकि राम एवं महादेव के मन्दिर तथा मूर्ति तो पश्चात् ही बनने सम्भव हैं इत्यादि—सभी प्रश्नों का एक ही उत्तर है कि जब ये मत और मतों के संचालक न थे तब एक ही निराकार ईश्वर की उपासना करते थे जैसे कि आज भी वैदिकधर्मी करते हैं। इससे यह स्पष्ट सिद्ध है कि ईश्वर प्राप्ति का सर्वोत्तम एवं सर्व प्राचीन प्रकार वैदिक धर्म में ही है।

वैदिक ईश्वर उपासना का प्रकार

जो मनुष्य ईश्वर की उपासना करना चाहे वह यम और नियमों का पालन अवश्य करे। जैसे विद्यार्थी परीक्षा पास करने के लिये अपने पाठ्यक्रम (कोर्स) की पुस्तकें याद करके ही उत्तीर्ण होते हैं वैसे ही एक उपासक भी यम नियम आदि ८ अंगों का पालन करके ही ईश्वर के जानने योग्य होते हैं और ईश्वर उनको ही स्वीकार करते हैं। क्योंकि ईश्वर शुद्ध तथा न्यायकारी है। अत अशुद्ध एवं अन्यायकारी से उसका मेल कहां? लोक में भी जिनके गुण कर्म स्वभाव मिलते हैं उनकी ही मित्रता होती है। अत ईश्वर भक्त होने के लिये ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव के सदृश ही अपने गुण कर्म स्वभाव बनाता हुआ शुद्ध एकान्त देश में जाकर आसन लगा इन्द्रियों को विषयों से रोककर अर्थात् उपासना के समय ५ कर्मेन्द्रिय तथा ज्ञानेन्द्रियों को अपने वश करके नवीन ज्ञान न करे तथा पूर्व अनुभव किये हुए ज्ञान का चिन्तन भी न करे और निद्रा भी न आ जाये इस प्रकार सावधान होकर जैसे भूखे प्राणी को भोजन के अतिरिक्त कुछ भी अच्छा नहीं लगता वैसे परमेश्वर से मिलने की इच्छा होनी चाहिये। और जैसे अत्यन्त प्यारे को किसी अभीष्ट कार्य के लिये सतत् चिन्तन किया जाता है, वैसे प्रेम से ओ३म् का जप करता हुआ प्राणायाम करे।

प्राणायाम की विधि और उसके भेद

यों तो प्राणायाम अनेक प्रकार का होता है इसके चार भेद प्रधान हैं —

(१) बाह्य वृत्ति=अर्थात् श्वास को बाहर निकाल कर बाहर ही रोक दे जब घबराहट होने लगे तब

छोड़ दे। जब रोके तब बाहर ही रोक।

(२) आभ्यन्तर वृत्ति=अर्थात श्वास को अन्दर भर अपनी शक्ति के अनुसार अन्दर ही रोक दे। जब रोके अन्दर ही रोके।

(३) स्तम्भ वृत्ति=श्वास को जहा का तहा रोक दे न बाहर निकाले न अन्दर ले अपितु जैसे मनुष्य चकित (अचम्भे) मे हो जाता है वैसे करता जाये।

(४) बाह्याभ्यन्तर वृत्ति=अर्थात् श्वास को बाहर निकाल कर बाहर रोक दे और जब बाहर न रुके तो अन्दर लेकर अन्दर रोक दे पुन इसी प्रकार बाहर और अन्दर रोकता जाये। परन्तु जितनी अपनी शक्ति हो उसी के अनुसार प्राणायाम करने चाहियें।

प्राणायाम का फल

तत क्षीयते प्रकाशा वरणम्। यो० पा० २ सू० ५२

अर्थात् प्राणायाम से विवेक और वैराग्य का आवरण, अज्ञान, मोह, ममता, आदि क्षीण हो जाते हैं। तथा ज्ञान विज्ञान बढते हैं।

धारणासु च योग्यता मनस । यो० पा० २ सू० ५३

अर्थात् मन में धारणा एकाग्रता की शक्ति आ जाती है और मनु जी के कथनानुसार तो प्राणायाम करने से इन्द्रियों के सब दोष छूटकर निर्मल हो जाती हैं। जैसे कि अग्नि में तपाने से स्वर्ण आदि धातुओं के मल दूर हो जाते हैं।

महर्षि की सम्मति

जब मनुष्य प्राणायाम करता है तब प्रतिक्षण उत्तर उत्तर काल मे अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश हो जाता है जब तक मुक्ति न हो, तब तक उसकी आत्मा का ज्ञान बढता ही जाता है।

ऐसे एक दूसरे के विरुद्ध क्रिया करे तो दोनों की गति रुक कर प्राण अपने वश में होने से मन और इन्द्रियें भी स्वाधीन होते हैं। बल पुरुषार्थ बढकर बुद्धि तीव्र और सूक्ष्म रूप हो जाती है जो कि बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय को भी शीघ्र ग्रहण करती है। इससे मनुष्य शरीर में वीर्य वृद्धि को प्राप्त होकर स्थिर बल, पराक्रम, जितेन्द्रियता, सब शास्त्रों को थोडे ही काल मे समझकर उपस्थित कर लेगा। स्त्री भी इसी प्रकार योगाभ्यास करे।

लेखक का अनुभव

प्राणायाम करने से सब प्रकार के छोटे एव बड़े रोग उत्पन्न ही नहीं होते जो कदाचित् हो भी जावें तो प्राणायाम से शीघ्रही नष्ट होजाते हैं। यह अनुभूत है कि दमा, खांसी, नजला, जुकाम, अजीर्णता, कोष्ठ बद्धता हैजा और नमुनिया आदि भयकर रोग भी नष्ट होजाते हैं तथा आत्मिक ज्ञान तो ऐसे होता है जैसे हाथ पर रखी हुई वस्तु का हो जाता है और प्राण के स्ववश होने पर परमात्मा तथा सूर्यादि लोक लोकान्तरों का भी यथार्थ ज्ञान हो जाता है। अतएव योगदर्शन में योग के ८ अंगों में प्राणायाम को चतुर्थ श्रेणी मे माना है। इसीलिये वैदिक सध्या में ५ वा प्राणायाम मन्त्र है। जो केवल मन्त्रोच्चारण करते हैं और प्राणायाम नहीं करते वे सध्या भी पूर्ण नहीं करते। क्योंकि प्राणायाम सन्ध्या का ५ वा अग है। अगों से मिलकर ही अङ्गी बनता है। यदि अग नहीं रहें तो अङ्गी कैसा। अतएव अनेक नर नारी अनेक वर्षों से सन्ध्या करते हैं किन्तु उनको स्थिरता नहीं मिली अत जो उपासक सध्या को सागोपाग करेंगे उनको ईश्वर आदि तत्वों का यथार्थभान होगा और अपने आपको सफल तथा कृत्य कृत्य मानेंगे।

राजधर्म और उसका पालन

[लेखक—श्री सुरेशचन्द्र शर्मा, एम० ए०]

'राजा राष्ट्रराम पेश' ऋग्वेद ५ । ३ ॥

"राजा हि क भुवनानाममश्रीः"

(तैत्तिरीय संहिता कृष्णयजुर्वेद १।५ ११)

आदि द्वारा प्राचीन भारत मे राजा के महत्व का पता चलता है। राजा के इस महत्व का यही कारण परिज्ञात होता है कि राजा के विना राज्य का कार्य चलना कोई युक्तियुक्त बात नहीं थी। फिर 'राज्य' शब्द ही राजामूलक है, जहां राजा नहीं, वहा राज्य नहीं, वह स्थिति अराजक है और अराजक राज्य की महाभारत' आदि में बडी ही निन्दा की गई है। यथा—

अराजकेषु राष्ट्रेषु धर्मो न व्यवतिष्ठते।
परस्पर च खादन्ति सर्वथा धिगराजकम् ॥
न धरार्थो न दारार्थस्तेषा येषामराजकम् ।
प्रोच्यते हि हरन्याय परवित्तमराजके ॥
यदाऽस्य उद्धरन्त्यन्ये राजानमभिगच्छति ।
पापा अपि तदा क्षेत्र न लभन्ते कदाचन ॥
एकस्य च द्वौ हरतो द्वयोश्च बहवोऽपरे ।
अदासःक्रियते दासो ह्रियन्ते च बलात्स्त्रियः ।
एतस्मात्कारणाद्देवाः प्राजापालान् प्रचक्रिरे ॥
राजाचेन्न भवेल्लोके पृथिव्या दण्डधारकः
जले मत्स्यमिवाभक्ष्यन् दुर्बलं बलवत्तराः ॥

(शा० प० ६७ । ११-१६) आदि । स्पष्ट है कि भारत में अन्य शासनतन्त्र प्रचलित होते हुए भी राजतन्त्र का ही अधिक प्रचलन था। इसी कारण यहां राज्य और राजा के धर्म आदि में अन्तर न करके राजधर्म के स्थान पर प्राय राजा के धम का ही वर्णन किया गया है। परन्तु फिर भी ये नियम, धर्म कर्त्तव्यादि सत्य, शाश्वत एव सर्वदा पालनीय हैं, चाहे शासनतन्त्र का कोई भी प्रकार क्यों न हो। निम्न मे राजा शब्द से भावार्थ राज्य का ही लेना चाहिये ।

'महाभारत' की उपर्युक्त अराजक राज्य की निन्दा से यह स्पष्ट है कि उक्त प्रकार के विद्रोह पूर्ण मारकाट, चोरीजारी आदि रूपी मात्स्यन्यायादि को रोकने तथा जनता को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूप चारों पुरुषार्थों (चतुवर्ग) की प्राप्ति कराने के लिए ही राजा की आवश्यकता थी। 'महाभारत' (शा० प० ५८) मे राजा की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए कहा भी गया है कि मात्स्यन्याय का अन्त कर धर्म सस्थापनार्थ ही राजा की उत्पत्ति हुई। राजा का धर्म—कार्यक्षेत्र भी इसी से स्पष्ट हो जाता है। राजा धर्मसंस्थापनार्थ होता था, अपनी विषय कामवासना पूर्ति के लिए नहीं। इसी के आधार पर इन्द्र (शा० प० ९०) मान्धाता से कहते हैं —

धर्माय राजा भवति न कामकरणाय तु ।
मान्धातरिति जानीहि राजा लोकस्य रक्षिता ॥
राजा चरति चेद्धर्मं देवत्वायैव कल्पते ।
स चेदधर्मं कुरुते नरकायैव गच्छति ।
यस्मिन् धर्मो विराजते त राजान प्रचक्षते ॥

आदि कह कर राजा को प्रजा का रक्षक तो बतलाया ही गया है, साथ ही यह भी कहा गया है कि जो राजा धर्म पूर्वक राज्य करता है, वह देवता माना जाता है तथा जो इसके विपरीत

अधर्माचरण करता है, वह नरक का भागी होता है। जिसमे धर्म रहता है, उसी को राजा कहते हैं। परन्तु वह धर्म क्या है ?

'महाभारत' (शा० प० ५६ । ४१ ४६) में राजा के धम को प्रजाहित की सज्ञा दी गई है (शा० प० ५७ । ११, १२, १३, १४)

लोकरञ्जनमेवात्र राज्ञां धर्मः सनातनः ।

आदि द्वारा प्रजारञ्जन, सत्यरक्षण और नीरक्षीरन्याय को राजा का सनातन धर्म कहा गया है। दूसरों का धन स्वय हरण न करना, साथ ही आवश्यकता होने पर सहायतार्थ देना, शासनकर्त्ता को पराक्रमी होना, क्षमावान् और सत्यवादी होना, सत्यपक्ष से विचलित न होना, चित्त और क्रोध को वश में रखना, शास्त्र का मर्म जानना, धर्म अर्थ कामादि चतुर्वर्ग को प्राप्ति तथा वेदाध्ययन में नित्य यत्नशील होना, मन्त्रणा सदैव गुप्त रखना, विचार पूर्वक चातुर्वर्ण्य एव धर्म की सेवा करना, वर्णसङ्करता से प्रजा की रक्षा करना आदि राजा के शाश्वत नित्य धर्म हैं। साथ ही (शा० अ० ६१ । ६) उसके कार्यों के द्वारा राजा को ही प्राणियों का रक्षक एव विनाशक दोनों कहा गया है। यथा—

राजैव कर्ता भूताना राजैवाथ विनाशकः ।
धर्मात्मा यः स कर्ता स्यादधर्मात्मा विनाशकः॥
विज्ञेयः ।।लिनो धर्मः शिष्टाना परिपालनम्
दण्डश्च पापवृत्तीनां गौणोऽन्य परिकीर्तितः
षाड्गुण्यचिन्तनं कर्म राज्यं वत्सं प्रकथ्यते ।
न केवल विलासाना तेन वाधं कथञ्चन ॥

आदि द्वारा राजा को धर्म, शिष्टों के परिपालन करने, दुष्टों को दण्डित करने तथा मध्यम वर्ग के साथ उदासीनता से व्यवहार करने का आदेश दिया गया है और साथ ही विलासिता से दूर रहकर षाड्गुण्य की चिन्ता करना उसका मुख्य काम कहा है (शा० प० ६३ । २४, १४२ । २७, २८)। दुर्ग, नगरादि की रक्षा, शत्रु से युद्ध, धर्मानुसार शासन, मन्त्र चिन्ता तथा प्रजा का सुख वर्द्धन करना राजा का धर्म है और साथ ही उसकी पूर्ति करने पर उसके अधिकारों का भी विस्तार हो जाता है। वधयोग्य का वध न करना तथा जो वध योग्य न हो, उसका वध करना समान दोष बतला कर कार्य मर्यादा निश्चित कर दी गई है। ऐसा करके मनुष्यों को स्वधर्म पालन के लिए अग्रसर करना शासनकर्त्ता का प्रथम कर्त्तव्य कहा गया कारण कि तभी धर्म की स्थापना रह सकती थी अन्यथा पुन अराजक स्थिति आने का भय था जिसका नियम होता मात्स्य-न्याय।

ऐसा करके जब राजा प्रजा को प्रसन्न रखता है, तभी प्रजा सम्पन्न होती है, तभी राजभक्ति का प्रजा के हृदय में उदय होता है तथा तभी प्रजा स्वधर्माचरण की ओर प्रवृत्त होती है। तभी राज्य स्थायित्व के गुणों से युक्त होता है।

कामन्दक ने अपने 'नीतिसार' में धर्म, अर्थ एव काम रूपी त्रिवर्ग की वृद्धि के लिए प्रजा को पाँच प्रकार के भय बतलाये हैं, यथा—राजकर्मचारियों, चोरों, शत्रुओं, राजा के प्रियजनों तथा राजा के लोभ का, उन सब को दूर करने का राजा को स्वधर्मपूर्ति हेतु उपदेश किया है। आगामी कष्टों से राजा को अवगत कराते हुए उन धनी अधिकारियों का धन पके फोड़े की तरह निचोड़ लेने तथा प्रजा के धर्म, अर्थ, काम का सवर्धन भली प्रकार करने के लिये कुशल अधिकारी के अधिकार में राज्यकोष का द्वार खोल देने की प्ररणा करते हैं।

राज्याङ्गानां तु सर्वेषां राष्ट्राद्भवति सम्भव ।

आदि द्वारा कहा है कि अर्थ की वृद्धि धर्म सरक्षणार्थ करनी चाहिये तथा प्रजा के इस मार्ग में जो कोई भी बाधक हों, राजा उन सभी को दण्ड दे। धर्म के विषय में उनका स्पष्ट मत है कि

वेद शास्त्रज्ञ आर्य पुरुष जिस कार्य की निन्दा करें, वह अधर्म तथा जिसकी वे अपेक्षा करें वही धर्म है। उन्हीं के वचनानुसार धर्माधर्म जान कर राजा सज्जन प्रजा वर्ग से प्रीति एव प्रजासरक्षण करे एव शत्रु को समाप्त करने का प्रयत्न करे।

सभ्याधिकारिप्रकृतिसभासत्सु मते स्थित'।

आदि द्वारा 'शुक्रनीति सार' ने भी राजा के धर्माधर्म का निर्णय करने के उद्देश्य से ही सभ्य अधिकारी, प्रकृति, सभासद आदि के मतों को मान्यता देकर राजा को कभी भी अपने मनोनुकूल आचरण न करने की शिक्षा दी है।

न कर्षयेत् प्रजां कार्यमिषतश्च नृप सदा।

आदि द्वारा राजा की अर्थ नीति के लिए मार्ग प्रशस्त करते हुए राजा को किसी बहाने भी प्रजा का धन अपहरण न करने की आज्ञा दी गई है। इसी प्रकार अपने जातीय लक्ष्य काम सवर्धन की पूर्ति के हेतु प्रजा के परम्परानुगत उत्सवादि जारी रख कर प्रजा के सुख मे सुख तथा दु ख मे दु ख मानने की प्रेरणा की गई है। इन सभी कार्यों की पूर्ति के लिए 'शुक्रनीतिसार' ने राजा को अपने अधीनस्थ प्रदेशों का समय २ पर निरीक्षण करने का आदेश दिया है। इससे शासन की दक्षता, प्रजा के हिताहित तथा सुख दुख आदि का भी पता चल जायगा।

अनिष्टनिग्रहो नित्यं शिष्टस्य परिपालनम्।
एवं शुक्रोऽब्रवीद्धीमानापत्सु भरतर्षभः ॥

के द्वारा 'महाभारत' मे असुराचार्य शुक्र के मुख से सक्षेप मे स्पष्टत कहला दिया गया है कि राजधर्म का मूलसूत्र साधु (सत्पुरुष) की सेवा रक्षा तथा दुष्ट का दलन करना है, चाहे वह किसी प्रकार भी राजा एव राज्य को सङ्कट में डालकर भी क्यों न हो (शा० प० ८७ ८८)। राजा को राष्ट्र का रात दिन का सब से बड़ा चाकर बतला कर, राष्ट्रहित चिन्तन करना उसका हर समय का काम बतलाया गया है।

स्वभागभृत्यदास्यत्वे प्रजाना च नृपः कृत ।
ब्रह्मणा स्वामिरूपमत्सु पालनार्थं हि सर्वदा ॥

आदि द्वारा स्पष्ट है कि सदैव प्रजापालन करने के लिए ही ईश्वर ने उसे बनाया है।

यद्यपि आज नृपतन्त्र, जिसे लक्ष्य करके यह सभी बातें अपने महान् त्रिकाल द्रष्टा राजनीतिक विज्ञान वेत्ताओं द्वारा कही गई हैं, नहीं हैं। कहने को प्रजातन्त्र है, परन्तु सभी बातें शाश्वत सत्य हैं। कोई भी विचारशील व्यक्ति या शासनकर्त्ता इस बात से मना नहीं कर सकता कि यदि इन उपर्युक्त नियमों को मानकर शासन सचालन किया जाय तो राज्य सर्वाधिक कल्याणकारी होगा और इनके विरुद्ध जाने पर कुछ भी कल्याण न होकर केवल प्रजा और अन्तत शासन का भी नाश ही होगा।

दुर्भाग्यवश आज यह सब कुछ नहीं हो रहा है। प्रजाहित चिन्तन एव जन कल्याण की बातें हर समय की जाती हैं, परन्तु वस्तुत क्या जन कल्याण हो रहा है यह स्पष्ट है। "राजा प्रकृति रञ्जनात्" के आधार पर बातें तो आज भी की जाती हैं, परन्तु जन जन के चातुर्वर्ग (चार पुरुषार्थों) की सिद्धि के लिए वस्तुत राज्य के कार्यक्रम में कोई भी स्थान प्राप्त नहीं है। धर्म की बात तो जाने दीजिये, सरकार धर्म निरपेक्ष हो गई है, साथ ही राज्य भी धम निरपेक्ष ही है। उसका कोई धम नहीं, कोई दीन नहीं, कोई ईमान नहीं और कोई नैतिकता भी नहीं। साथ ही धर्म निरपेक्ष शासन होते हुए भी एक ऐसे मृतधर्म को प्रश्रय दिया जा रहा है, जिसे आज से शताब्दियों पूर्व इसी भारतभू का एक लाल भारत से खदेड़ चुका है। दूसरी ओर इसी धर्म निरपेक्ष राज्य में हमारे धर्म कर्मादि सभी को भ्रष्ट करने के लिए भीषण कुचक्र रचे जा रहे हैं, किन्हीं अपने ही छोटे भाइयों के नाम पर और उससे उनका कितना

कल्याण होगा, यह किसी से छिपा नहीं, देवरानों की मर्यादा बलात् हिंसात्मक तरीके अपना कर भी भ्रष्ट करने के प्रयत्न आज भी सर्वत्र हो रहे हैं। कहने को वेश्यावृत्ति समाप्त की जा रही है और घर घर की स्त्रियों को, हमारी ही बहू बेटियों को, सीता, सावित्री, पद्मिनी की सन्तानों को, वेश्या बनाने के कुचक्र रचे जा रहे हैं। हिन्दू विवाह विच्छेद विधेयक' तथा 'हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक' आदि काले, जनता को अप्रिय लगने वाले कानून भी बलात् जनता पर लाद कर और वह भी इस नाम पर कि 'हम स्त्रियों का मान बढाना चाहते है' उस नारी का, जिसने सदैव इस देश में सर्वोत्तम मान प्राप्त किया है, उसे बराबर उसके पुत्रों के समान स्तर पर लाकर फिर और गढे मे गिराने के लिए जन जन की माग पर भी गोहत्या जैसा भीषण जघन्य अपराध एव पाप बन्द नहीं किया जा रहा है, कुछ मुस्लिम भाइयों के नाम पर, जो स्वय गोवध नहीं चाहते, जिनके प्रतिनिधि स्वय गोहत्या विरोधी सत्याग्रहात्मक आन्दोलन मे अपने आपको अर्पित कर रहे हैं, जिनमें से दीनदार, ईमानदार बादशाहों ने—बाबर से लेकर बहादुरशाह तक के काल में – गोवध को विधिवत् बन्द रखा और गो हत्यारे को प्राणदण्ड दिया।

अर्थ सवर्धन या अर्थ रक्षण के नाम पर वस्तुत आज हो रहा है अर्थ भक्षण! समाजवाद, साम्य-वाद, 'सबै भूमि गोपाल की' 'वसुधैव कुटुम्बकम्' आदि के नारे लगा कर येन केन प्रजा का अर्थ सवर्धन करने के बजाय अर्थ हरण किया जा रहा है, प्रजा को कङ्काल बनाने के लिए ये सभी कुचक्र रचे जा रहे हैं। राजाओं के राज्य, जागीरदारों की जागीरदारी तथा जमींदारों की जमींदारिया छीनी गई किसानों के कल्याण के नाम पर और किसान बेचारा आज भी दु खी है—वह आज भी इस समाजवादी लक्ष्य वाली सरकार के विरुद्ध वाणी उद्घोषित करने के लिए विवश है। वाहन-परिवहन, व्यापार रेल, वायुयान आदिकों का सरकारीकरण तो हो ही चुका है, मोटर आदि पर धीरे २ नम्बर है। सुप्रबन्ध एव मजदूरों को खुश हाली के नाम पर—जीवन बीमा कम्पनी, विभिन्न प्रकार की खान, कारखाने आदि का सरकारीकरण हुआ सुप्रबन्ध एव श्रमिकों के हित के नाम पर परन्तु फिर भी आज बेचारा श्रमिक इस सरकार के विरुद्ध बोलने के लिए सगठित हो रहा है। क्यों? वह आज भी प्रसन्न नहीं है। जो व्यवसाय आदि उस सरकारीकरण के शिकजे से बच गये या जिन व्यक्तियों के पास किसी प्रकार भी अर्जित की गई सम्पत्ति आदि है, उन सभी को भी विविध प्रकार के कर लगाकर हडपने की आज साजिशें की जा रही हैं।

काम सवर्धन में ललित कलाओं का विकास करने के नाम पर, भारतीय सस्कृति के नाम पर, सास्कृतिक कार्यक्रमों का नाम देकर हमारी ही बहू बेटियों को, जो परपुरुष को अपना चरण नख प्रदर्शन करने से पूर्व ही जौहर कर लेना कहीं अधिक अच्छा समझती थीं, आज विदेशी, मदिरापान करन वाले, गोमास भक्षक कूटनीतिज्ञों के समक्ष नचाया जाता है तथा सास्कृतिक शिष्ट मण्डलों के नाम पर उन्हें विदेशों में नाचने गाने के लिए भेजा जाता है।

मोक्ष की बात तो जाने ही दीजिये, यहा तो वर्णसङ्करता को, जिससे राष्ट्र को बचाने के लिये, जिसके अनिष्टकारी परिणामों से भयभीत हो महावीर अर्जुन ने कुरुक्षेत्र के सग्राम में हथियार डाल दिये थे, उसे ही प्रोत्साहन दिया जा रहा है, जातीय एकता तथा सर्व कल्याण के नाम पर। कितनी जातीय एकता तथा कल्याण हो रहा है यह सामने है और जो भयङ्कर दुष्परिणाम और आगे होंगे, इन्हें भुगतने के लिए राष्ट्र को विवश किया जा रहा है।

प्रजा के जीवन में किन्हीं लक्ष्यों को पूर्ण करने का न कोई प्रयत्न है, न साधकों के पालन, रक्षण

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः

(श्रीयुत दीवानचन्द जी एडवोकेट, नई दिल्ली)

जो लोग धर्म का पालन करते हैं धर्म उनकी रक्षा करता है और जो धर्म को त्यागते हैं वे नष्ट हो जाते हैं। बहुत शोक की बात है कि स्वराज्य मिलने के बाद भारत के नर नारियों में पश्चिमी सभ्यता और फैशन की गुलामी दिनों दिन बढ रही है। घरों में नवयुवतिया अग्रेजी मे वार्तालाप करती हैं। घरों में लोग बच्चों के नाम कुक्कू और बेबी कह कर पुकारते है। घर से बाहर निकल कर हमारी युवतिया ऐसे वस्त्र पहनती हैं जिनसे अक्सर लोगों को उन्हें देख कर शर्म आती है। यह नग्न वस्त्रों का फैशन सिनेमा या एग्लो इण्डियन (Anglo Indian) लडकियों से लिया गया है। इस नग्न वस्त्र शैली से भारत के नवयुवक बिगड रहे हैं। महात्मा गाधी और स्वामी दयानन्द ने सादा जीवन और सत्य पर जोर दिया है। स्वराज्य को दृढ करने के लिए सच्चरित्र की अत्यावश्यकता है। हमारे समाज में देवियों को इस नग्न वस्त्र प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन करना चाहिए। घरोंमें जा जाकर प्रचार करना चाहिए कि जब देविया घर से बाहर निकलें तो कम से कम ऊपर का दुपट्टा और लम्बी कमीज मोटे कपडे की और सादा रग की या सफेद हों। देवियों मे फैशन की गुलामी से लोगों का चरित्र बिगड रहा है। पजाबी और सिन्धी भाइयों ने औरतों को अपने काबू से बाहर कर दिया है। जहा २ लडके लडकिया इकट्ठे पढते हैं, या लडकिया दफ्तर में कार्य करती हैं इससे लोगों का आचार बिगडता है। पता नहीं, अग्रेज चले गये मगर उनके चले जाने के बाद भारत की शिक्षित जनता क्यों अपनी सस्कृति और सभ्यता को भूल कर दूसरों के फैशन की दास बन रही है। यहा तक कि बडे २ लीडरों के बच्चे भी अग्रेजी पब्लिक स्कूलों में शिक्षा पा रहे है। इसलिए देवियों को इस उल्टी प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन करना चाहिए। हमारी हार्दिक कामना है कि यह आन्दोलन आर्य देवियां अपने हाथों मे लें। यदि स्त्री महिला आर्य समाजें इस ओर ध्यान दें तो सफलता प्राप्त होगी।

❀

अथवा दुष्टों के दलन की कोई चिन्ता। हमारे कानून और उसके चलाने वाले सभी प्रकार से साधुओं के दलन तथा दुष्टों के रक्षण के लिए अग्रसर हैं। सभी बातों मे एकमात्र कमी है नैतिकता की। वेदशास्त्रोक्त धर्म के प्रचार की आज भारत में सर्वप्रथम आवश्यकता है। तभी धर्म के अन्तर्गत राजनीति आयेगी तथा धर्म एव नीति के पति-पत्नी,सम्बन्ध से धर्म, अर्थ, काम, मोक्षरूपी चारों पुरुषार्थों की सृष्टि तथा समृद्धि होगी। विनय के द्वारा राजा पजा का वास्तविक रञ्जन कर सकेगा। आज हम सभी के प्रयत्न इसी ओर हों, यही परम पिता से एक मात्र प्रार्थना कामना है।

क्या वेद ऋषियों की देन है ?

[लेखक—श्री मक्खनलाल जी]

मुनि श्री नागराज जी ने 'भारतीय संस्कृति मे ऋषि मुनियों का योग' शीर्षक (हिन्दुस्तान ता० २६ दिसम्बर में प्रकाशित) लेख में वेदों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कुछ भ्रमपूर्ण तथ्य प्रस्तुत किये हैं, जिनका निराकरण होना अत्यन्त आवश्यक है। वह अपने लेख में लिखते हैं "वेदों" के लिए यह मानना नितात अवास्तविक है कि वे ऋषियों की देन नहीं है। वैदिक परम्परा में वेदों को अपौरुषेय माना गया है, पर यह मन्तव्य श्रद्धायुग की सीमा में ही है। मैक्समूलर, डाक्टर हर्मन जेकोबी, लोकमान्य तिलक प्रभृति अधिकाश विद्वानों ने वेद रचना का प्राचीनतम समय एक हजार ईस्वी पूर्व से पाच हजार ईस्वी पूर्व तक ही आका है। निरुक्त, मनुस्मृति प्रभृति ग्रन्थों मे भी वेदों के ऋषि प्रतिपादित होने का सकेत मिलता है।" पर इस युग के महर्षि श्री दयानन्द सरस्वती ने अपने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका तथा सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थों में अकाट्य तर्क द्वारा सिद्ध कर दिया है कि ईश्वर से ही वेद उत्पन्न हुए हैं, किसी मनुष्य से नहीं।

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के वेदोत्पत्ति विषय में महर्षि दयानन्द लिखते हैं —

प्रश्न—जो सूक्त और मन्त्रों के ऋषि लिखे आते हैं, उन्होंने ही वेद रचे हैं, ऐसा क्यों नहीं माना जाए ?

उत्तर—ऐसा मत कहो, क्योंकि ब्रह्मादि ने भी वेदों को पढा है। सो, श्वेताश्वतर आदि उपनिषदों में यह वचन है कि 'जिसने ब्रह्मा को उत्पन्न किया और ब्रह्मादि को सृष्टि के आदि में अग्नि आदि के द्वारा वेदों का भी उपदेश किया है उसी परमेश्वर की शरण को हम लोग प्राप्त होते हैं।' इसी प्रकार ऋषियों ने भी वेदों को पढा है, क्योंकि जब मरीच्यादि ऋषि और व्यासादि मुनियों का जन्म भी नहीं हुआ था उस समय में भी ब्रह्मादि के समीप वेदों का वर्तमान था। इसमें मनु के श्लोकों की भी साची है —

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रय ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्धयर्थमृग् यजु सामलक्षणम्॥

(मनु० १–२३)

अर्थात् अग्नि वायु रवि और अङ्गिरा से ब्रह्मा जी ने वेदों को पढा था। जब ब्रह्मा जी ने वेदों को पढा था तो व्यासादि और हम लोगों की तो क्या ही कहनी है ?

वेदों के प्रादुर्भाव का समय मनुष्योत्पत्ति के समय का है। महर्षि दयानन्द अपनी भूमिका में पृष्ठ २५ पर लिखते हैं —

प्रश्न—वेदों की उत्पत्ति में कितने वर्ष हो गए है —

उत्तर—एक वृन्द, छानवे करोड, आठ लाख, बावन हजार नव सौ छहत्तर (अर्थात् १, ६६ ८, ५८, ९७६ वर्ष) वेदों की और जगत की उत्पत्ति में हो गए हैं और यह सवत् सतहत्तरवा (७७) वर्ष रहा है।

अपने इस निष्कर्ष पर पहुचने के लिये उन्होंने जो तर्क दिए हैं उन सब को यहा प्रस्तुत करने मे लेख अधिक लम्बा हो जाएगा। इनका ठीक २ प्रमाण देखने के लिए उपर्युक्त पुस्तक देखी जा सकती है।

'अक्षर-विज्ञान' और खोजपूर्ण और तर्काधारित पुस्तक 'वैदिक सम्पत्ति' के लेखक श्री रघुनन्दन शर्मा ने भी बडे विस्तार से और युक्तियुक्त प्रमाणों

से सिद्ध किया है कि वेद अपौरुषेय हैं—वह अपनी पुस्तक के पृष्ठ ३८८ पर वैदिक ज्ञान की अपौरुषेयता पर लिखते हैं —

"वेद का ऐतिहासिक काल अत्यन्त भूत में विलीन हैं। वे मनुष्य के साथ ही उत्पन्न हुए सिद्ध होते हैं। साथ ही यह भी सिद्ध हो रहा है कि वेदों का ज्ञान आर्यो ने किसी और से नहीं सीखा प्रत्युत उन्होने दूसरों को सिखलाया है। उपयुक्त कोटि क्रमों से सिद्ध है कि आर्यो के विश्वासानुसार वेद मनुष्य की रचना नहीं प्रत्युत वे अपौरुषेय है। प्रो० मैक्समूलर कहते हैं कि वेदों को हम इसलिए आदि सृष्टि से कह सकते हैं कि उनसे पूर्व का कोई अन्य लिखित चिन्ह नही मिलता। परन्तु वेद के भीतर जो भाषा, वर्ण माला धर्म और अध्यात्मविद्या का ज्ञान हमें मिलता है वह हमारे सामने इतनी प्राचीनता का दृश्य दिखलाता है कि कोई भी मनुष्य उस प्राचीनता को वर्षो की संख्या मे नहीं ला सकता।"

अन्य प्रमाण

इसके अतिरिक्त भाषा सम्बन्धी विवेचन से यह प्रमाणित हो गया है कि परमात्मा ने ही मनुष्य के मुख स्थित अवयवों, स्थानों और प्रयत्नों को वैदिक वर्णमाला के उच्चारण योग्य बनाकर अन्तः स्फुरण से वैदिक भाषा का ज्ञान प्रदान किया है। कोई भाषा बिना अर्थ के नहीं होती, इससे आपही आप प्रमाणित हो रहा है कि परमात्मा ने मुखस्थित स्थानो से निकलने वाले वर्ण शब्द और वाक्यों को मनुष्यों के मनोभावों को प्रकाशित करने के लिए ही उस प्रकार के बनाकर दिए हैं। अतएव निर्विवाद है कि ईश्वर प्रेरणा द्वारा मनुष्य के मुख से निकलने वाले आदिमवैदिक मन्त्र वाक्य, शब्द और वर्ण सार्थक हैं। वर्णार्थ, धात्वर्थ और सन्धि विज्ञान से यह बात और भी अधिक पुष्ट हो रही है कि वर्णार्थ का सम्बन्ध धातुओं से धातुओं का शब्दों से, और शब्दों का वाक्यो तथा मन्त्रों से अविच्छिन्न धारावाहिक रूप निरन्तर एक दूसरे मे बह रहा है। ऐसी दशा में यह बात अनायास ही कही जा सकती है कि वैदिकभाषा और उस भाषा मे भरा हुआ वैदिक ज्ञान, कारण कार्यभाव से युक्त, परस्पर आधाराधेय सम्बन्ध रखता है। अतएव जहा वैदिक भाषा है वहीं वैदिक ज्ञान है, वही आदिम कालीन ईश्वरप्रदत्त अपौरुषेय आदेश है। भाषा और ज्ञान सदैव एक साथ रहते हैं और दोनों आदिम ईश्वरीय प्रेरणा से ही प्राप्त होते है।

वेदों के पढने वाले जानते है कि वेदों में लोक और परलोक की विशद शिक्षा है। परलोक शिक्षा को और उस लोक शिक्षा का जिससे परलोक मे सुख प्राप्त हो धर्म कहते है। धर्म परलोक से सम्बन्ध रखता है, इसलिए, उसकी शिक्षा मनुष्य की कल्पना से आरम्भ नहीं हुई, वह ईश्वर प्रदत्त ही है। हम देखते है कि ससार के समस्त धर्मो का उद्गम स्थान वेद ही है। इसलिए वेदों के अपौरुषेय होने का यह दूसरा प्रमाण भी कम महत्व का नहीं है।

जिस प्रकार वेदों ने ससार को धर्म की शिक्षा दी है उसी प्रकार ज्योतिष, गणित, वैद्यक राजनीति और अन्य सगीत आदि विद्याओं की शिक्षा भी ससार को वैदिक ऋषियों ने ही दी है। ऋषियों ने उक्त विद्याओ को किसी अन्य देशवासियो से नहीं सीखा। वे कहते है कि हमने समस्त ज्ञान वेदो से ही प्राप्त किया है, मनुष्य विद्याओं का ज्ञान कल्पना से प्राप्त नहीं कर सकता। वे भी अपौरुषेय ज्ञान द्वारा ही प्राप्त होती है। वेद ही उन विद्याओं के प्रचारक है इसलिए वेदों के अपौरुषेय होने का यह तीसरा प्रमाण भी सब के सामने है।

इसी तरह वेदों ने ही समस्त ससार को सदाचार, सभ्यता, न्याय और दया की शिक्षा दी है। (मनुस्मृति २।२०।) अतएव यह उनकी

मूर्तिपूजा पर दृष्टिगत !

(श्री जवाहर लाल गुप्त, भरथना)

वर्तमान युग मे मूर्ति पूजा एक बडा विवादग्रस्त प्रश्न है। कोई कहता है कि मूर्ति पूजा वेद विहित है और कोई वेद-विरुद्ध बताता है, कुछ सज्जन कहते है कि ध्यान जमाने का एक साधन मात्र है तो कुछ कहते है कि पाखण्ड है। निम्न प्रमाणों पर ध्यान दीजिये —

१—न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यश ।
(यजु० ३२ । ३)

अर्थ—जिसका (परमात्मा का) महान् यश है उसकी कोई प्रतिमा नहीं ।

२—तीर्थेषु पशुयज्ञेषु काष्ठ पाषाण मृन्मये ।
प्रतिमायौ मनोयेषा ते नरा मूढ चेतस ॥महाभारत

अर्थ—तीर्थ, पशु-यज्ञ, लकडी, पत्थर और मिट्टी की मूर्तियों मे जिनके मन लगे हैं वे मनुष्य मूढ और अज्ञानी हैं ।

३—यस्यात्म बुद्धि कुणपेत्रिधातुके,
स्वधी कलत्रादिषु भौम इज्यधी
यत्तीर्थ बुद्धि सलिलेन कर्हिचित्
जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखर ॥
(श्रीमद्भागवत स्क० १० अ० ८४)

अर्थ—वात, पित्त, कफ तीन मलो से बने हुए शरीर मे जो आत्म बुद्धि, स्त्री आदि मे स्वबुद्धि, पृथ्वी आदि से बनी हुई मूर्ति मे पूज्य बुद्धि और

अपौरुषेयता का चौथा प्रमाण है ।

इन समस्त प्रमाणों से सिद्ध है कि वैदिक ज्ञान अपौरुषेय है ।

वेद अपौरुषेय हैं

संसार भर को ज्ञान की शिक्षा देनेवाले ऋषि वेदों की अपौरुषेयता पर कहते हैं कि ज्ञान का प्रादुर्भाव परमेश्वर से ही हुआ है, इसी लिए उसे वेदान्त शास्त्र में 'शास्त्रयोनि' और योगशास्त्र में पूर्वेषामपिगुरु' अर्थात् वेदों का प्रकाशक और पूर्वजों का भी गुरु कहा गया है। निरुक्तकार ने भी ऋषियों को 'साक्षात्कृतधर्मा' अर्थात् ज्ञान को ईश्वर द्वारा साक्षात् करने वाला कहा है। अब हम ऋषियों के सम्मुख बद्धाजलि होकर प्रश्न करते है कि भगवन, आप ही से ससार ने धर्म, विद्या और सभ्यता सीखी है, इसलिए अब आप ही बतलावें कि आपने यह समस्त ज्ञान कहा से प्राप्त किया है? ससार भर को समस्त ज्ञान की शिक्षा देने" वाले आदिम ऋषि बृहदारण्यक उपनिषद् मे कहते हैं कि —

अरे अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्
यऋग्वेदो यजुर्वेद सामवेदो थर्वांगिरस ।

अर्थात्—अरे मनुष्य ! ये ऋग्वेद यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद परमात्मा के ही निश्वास है।

इसी बात को वेद स्वय कहते हैं कि —

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋच सामानि जज्ञिरे
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्माद् जायत ।
यजुर्वेद ३१-७

अर्थात्—ऋग्, यजु साम और अथर्व उस परम पूज्य परमात्मा से ही उत्पन्न हुए है।

इन प्रबल साक्षियों और अब तक की वैज्ञानिक खोजों से सिद्ध है कि वेद ईश्वर प्रदत्त हैं—अपौरुषेय हैं।

पानी मे तीर्थ देखता है, वह मनुष्य गोखर—गौओं का चारा ढोने वाला गधा है।

४—तीर्थानि तो यपूर्णानि देवानपाषाण मृन्ययान्।
योगिनो न प्रपद्यन्ते स्वात्मप्रत्यय कारणात्॥

अर्थ—जल से पूर्ण तीर्थ को, पत्थर तथा मिट्टी के देवताओ को योगी जन अपने आत्म विश्वास से नहीं मानते।

५—मूर्त्ति काठिन्य काययो।
(अमरकोष तृ०का०नानार्थम् वर्ग ३ श्लो० ६६)

अर्थ—मूर्ति कठिन चीज एवम् शरीर का नाम है अर्थात् ईश्वर का नहीं।

६—प० जवाहरलाल नेहरू डिस्कवरी आफ इण्डिया के पृष्ठ १७२ पर लिखते हैं —

It is an interesting thought that image worship came to India from Greece The Vedic religion was opposed to all forms of idol and image worship There were not even any temple for the Gods (In India)'

अर्थ—यह एक मनोरजक विचार है कि भारत में मूर्ति पूजा ग्रीक से आई। वैदिक धर्म तो हर प्रकार की मूर्ति पूजा का विरोधी रहा। हमारे देश में देवी देवताओ के लिए कोई मन्दिर ही नहीं थे।

७—राजा राममोहन राय 'वर्क्स आफ राजा राम मोहन राय" के प्रथम भाग के पृष्ठ ७० पर कहते हैं —

अनुवाद—बहुत से विद्वान् ब्राह्मण मूर्ति पूजा के थोथेपन से भली भांति परिचित होने पर भी उसी के गीत गाते हैं। क्योंकि मूर्ति पूजा सम्बन्धी कार्य एवम् उत्सव ब्राह्मणों को प्रत्येक सुविधा एव धन देते हैं और उनके भक्त भी आख मींच कर विश्वास कर लेते हैं।

८—महात्मा गाधी ('प्रताप' समाचार पत्र लाहौर १० अप्रैल सन् १९२८ के अक मे उद्धृत) कहते हैं—

'हम राम के गुण गाते हैं, वह वाल्मीकि के राम नहीं। तुलसी रामायण के भी राम नहीं असह्य दुःख से दुःखी मनुष्य से मैं कहता हू कि राम नाम लो लेकिन यह राम दशरथ के पुत्र सीता के पति नहीं, और यह मूर्ति वाले राम भी नहीं हो सकते।

९—एक बार उन्होंने फिर कहा —

जिसने मन्दिर बनवाया, उसने पैसे बरबाद किये हैं, गाव के भोले लोगों को गलत रास्ता दिखाया फोटो रखने को मैं अब तक बर्दाश्त करता आया हू लेकिन उसकी वजह से मैं प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष किसी भी मूर्ति पूजा को बढावा नहीं दे सकता।

१०—चीनी यात्री फाहियान (४०० ई०) तथा ह्वेनसाग (६४०ई०) के भारत भ्रमण के उपरान्त के लेखों से भी मूर्ति पूजा का जन्म महात्मा बुद्ध के देहावसान के बाद ही साबित होता है।

उक्त प्रमाणों के आधार पर हम कहसकते हैं कि मूर्ति पूजा अवैदिक है और थोडे दिनों सेही प्रचलित हुईहै क्योंकि वैदिककाल सेलेकर आज पर्यन्त कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलते है। उपनिषद भी कहते है कि "न तस्य कश्चित् पतिरस्ति लोके, न चेशिता नैव च तस्य लिंगम्" न उसका कोई लोक है न पति है न चिन्ह है।

*

स्वामी दयानन्द सरस्वती

[श्रीयुत नरदेव जी स्नातक ससद सदस्य ५५ नार्थएवेन्यू नई दिल्ली]

भारतवर्ष महापुरुषों को पैदा करने की खान रहा है। जब २ धम की हानि एव विनाश के चिन्ह दृष्टिगोचर हुए भारत में कोई न कोई महापुरुष जन्म लेता रहा है और देश एव धम को नष्ट होने से बचाता रहा है। भगवान् राम कृष्ण एव महात्मा बुद्ध जैसे लोकोत्तर महापुरुषों को भारतवर्ष ने जन्म देकर देश जाति एव धम की महान् रक्षा की है, स्वामी दयानन्द सरस्वती इसी कोटि के महापुरुष हैं। उनके जन्म से पूर्व देश की स्थिति बडी ही शोचनीय थी। उस समय देश अराजकता की ओर अग्रसर हो रहा था, राष्ट्रीय शक्ति छिन्न भिन्न हो रही थी मुगल साम्राज्य अपनी अन्तिम घडिया गिन रहा था, राजस्थान के राजे महाराजे आपस के राग द्वेष में बुरी तरह से फसे हुए थे, सिन्धिया पजाब के महाराजा रणजीतसिंह विषम परिस्थितियों में अग्रेजो से टक्कर ले रहे थे। लाड एम्हस्ट मजबूती के साथ अग्रेजों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। उस समय की धार्मिक एव सामाजिक अवस्था देखी नहीं जाती थी। धर्म कर्म को लोग भूल चुके थे। कुरीतियों ने घर कर रखा था, शिक्षा का पूर्ण अभाव था। जातीयता का बोल बाला था। ऐसे सकट के समय मे मोरवी राज्य के अन्तर्गत टकारा ग्राम में श्री कर्षन जी के यहा सम्वत् १८८१ में मूल जी (दयानन्द के रूप में) उत्पन्न हुए।

स्वामी दयानन्द जी का मुख्य काय धर्म प्रचार कर राष्ट्रके चरित्र को समुन्नत करना था पर वे राजनैतिक स्वतन्त्रता को भी अनिवार्य समझते थे। उन्होंने सम्पूर्ण देश का भ्रमण किया और वे जहा जहा गये धर्म प्रचार के कार्य को करते हुये देश की पराधीनता कैसे दूर हो उस दिशा मे भी सदा जनता की सुप्त भावनाओं को जगाते रहे। समय २ पर अपने उपदेशों में भी उन्होंने कहा कि 'विदेशी शासन कितना भी सुखदायी क्यो न हो स्वदेशी शासन से हेय है" वे आत्म ज्ञान के लिए वेदो को सर्वोपरि मानते थे। वेदों पर उनका अटूट विश्वास था। उन्होंने जितने भी ग्रन्थ लिखे वे सब वेद के आधार पर है। वेदो के साथ ईश्वर पर भी उनका पूर्ण विश्वास था। यही एक कारण था कि वे निडर होकर सब मत मतान्तरों की समालोचना किया करते थे और उनकी इस निर्भयता पर लोगों को आश्चर्य होता था। उनसे द्वेष करने वाले लोगों ने उनको डराया, धमकाया, खड्ग उठाया और विष तक दिया परन्तु अनीश्वरवादी लोगों से समझौता नहीं किया और आततायियो के सामने निडर गरजते रहे।

स्वामी जी महाराज अपने समय के सबसे बड समाज सुधारक थे। उनकी पैनी दृष्टि ने अच्छी तरह भाप लिया था कि देश कुरीतियों के महा भयकर जगल मे भटक रहा है अपने आपको भूल गया है देश रसातल की ओर जा रहा है। समाज की बडी दयनीय अवस्था है, स्वामीजी आख बन्दकर बैठने वाले व्यक्ति नहीं थे। उन्होंने वैसा ही कार्य किया जैसा सफल चिकित्सक फोडा फुन्सियों से भरे हुए शरीर को चीर और फाड कर स्वस्थ कर देता है। धर्म के ठेकेदारों तथा समाजके कर्णधारो ने बडी हाय तौबा मचाई परन्तु मृत्युन्जय दयानन्द तर्क के तेज औजार से रोगी के चीख पुकार पर ध्यान न देते हुए रोगी को निरोग करने में लगे रहे। उनको भली भाति ज्ञात था कि "सत्यमेव जयते नानृतम" सर्वदा सत्य ही की जय होती है,

(अखिल भारतीय आकाशवाणी नई दिल्ली के सौजन्य से)

झूठ की नहीं। समाजरूपी रथ को चलाने मे उन्होंने अपने प्यारे प्राणों तक की बाजी लगा दी। समाज सुधार के इस महत्वपूर्ण कार्य को करते हुए उनके सामने अनेकों विघ्न बाधाए उपस्थित हुई परन्तु वे हिमालय के समान अडिग बने रहे।

स्वामीजी आजन्म ब्रह्मचारी रहे। वेदिक आश्रम व्यवस्था के अनुसार उन्होंने समाज को चार आश्रमों में बाट कर मानव जीवन सौ वर्ष का बताया। ब्रह्मचर्य गृहस्थ, वानप्रस्थ एव सन्यास। ये २५ २५ वर्ष के चार आश्रम हैं। मनुष्य जीवन की पूर्णता के लिए पच्चीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य पालन करना परम् हितकारी है। श्री स्वामी जी महाराज वर्णाश्रम धर्म को मानने वाले थे। गुण कर्मानुसार ही मनुष्य की जाति बनती है न कि जन्म लेने से। श्री स्वामी जी महाराज ने शूद्रों को समाज का आधार स्तम्भ माना है बिना इनके सहयोग के समाज की स्थिति दृढ नहीं हो सकती है। मनुष्य मनुष्य से घृणा करे यह उनको सह्य नहीं था। स्वामी जी देश के प्रथम सुधारक थे कि जिन्होंने अछूतोद्धार के कार्य को अपने कार्यक्रम में प्रमुख स्थान दिया।

स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी जी के विचार बहुत उदार थे। पुरुषों के समान ही स्त्रियों को अधिकार दिये जाने के प्रबल समर्थक थे। उनके सामने प्राचीन भारत की विदुषी स्त्रियों का इतिहास था। गार्गी मैत्रयी, भारती जैसी सती साध्वी देवियों के कारण भारतमाता का मस्तक सदा ऊचा बना रहा। मनु महाराज ने एक स्थान पर लिखा है "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" जिस देश या समाज में स्त्रियों की पूजा होती है वहा देवता वास करते हैं। समाजरूपी गाडी को ठीक रास्ते पर चलाने के लिए पुरुष-स्त्री रूपी दो समानान्तर पहियों की आवश्यकता होती है। छोटी २ कन्याओं का विवाह करना, उनको विद्या न पढाना आदि अनेकों बुरी प्रथायें देश में प्रचलित थीं, जिनके विरुद्ध स्वामी जी ने अपनी जोरदार आवाज उठाई और उसका परिणाम यह है कि सम्प्रति देश में स्त्री शिक्षा की लहर दौड गई। शिक्षा के सम्बन्ध में उनके विचार सर्व विदित है। उनका कहना है कि देश मे रहने वाले सभी बच्चो को शिक्षा अनिवार्य मिलनी चाहिए और वह भी नि शुल्क। देश की दुर्दशा का मुख्य कारण शिक्षा का अभाव, दु ख दारिद्र का प्रबल बाहुल्य और सामाजिक चेतना का ह्रास है। स्वामी जी ने अ ग्रे जी शासन को बुरा बताते हुए उनके द्वारा सचालित परिपोषित एव परिवर्धित शिक्षा सारिणी को बुरा कहा है। उनका कहना था कि वर्तमान् शिक्षा पद्धति देशको गुलामी की ओर ले जाने वाली सिद्ध हुई है। अपने देश का भला अपनी ही शिक्षा दीक्षा से सम्भव होगा। अत स्वामी जी ने प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को पुन चालू करने पर बल दिया। सम्प्रति आर्य समाज द्वारा सचालित कतिपय गुरुकुल देश में समाज सुधार एव शिक्षा सुधार का कार्य सफलता पूर्वक कर रहे हैं।

देश के दु ख दारिद्र्य एव असहाय अवस्था को देखकर उनका अन्त करण बडा दु खी था। वे भली भाति समझते थे कि देश की गिरावट का एक मात्र कारण विदेशी शासन के कारण विदेशी वस्तुओं का व्यवहार ही है। अपने देश मे कला कौशल का कोई केन्द्र नहीं। विदेशी वस्तुओं की भरमार से यहा लाखों परिश्रमी निकम्मे हो रहे हैं। एक समय ऐसा भी था जब राजा से लेकर रक तक यहा के बने वस्त्रों को धारण करते थे। शृ गारादि की सारी वस्तुए यहा ही बनती थीं। फू स की कुटिया से लेकर गगनचुम्बी विशाल अट्टालिकाए यहा के कारीगरों एव इन्जीनियरों के द्वारा ही बनती थी परन्तु अब इसके विपरीत हो रहा है। किसी ने ठीक ही कहा है कि "पराधीन सपनेहु सुख नाहीं" स्वामीजी सदा ही स्वदेशी वस्तुओं का

व्यवहार करते थे। शाहपुरा महाराजा के यहा आज भी स्वामी जी के रोज के व्यवहार के खद्दर के कपड़ सुरक्षित रखे हैं। इस बात से प्रकट होता है कि श्री स्वामी जी हाथ के कते बुने वस्त्रों का ही उपयोग करते थे।

गुजरात प्रान्त में उत्पन्न होने के कारण उनकी मातृभाषा गुजराती थी परन्तु उन्होंने गुजराती मे न लिखकर हिन्दी तथा सस्कृत में ही अपनी समस्त पुस्तकें लिखी हैं। वे भली भाति जानते थे कि आधे से भी अधिक देश वासियों की बोलचाल की भाषा हिन्दी ही है और भविष्य मे हिन्दी ही राज्य भाषा एव राष्ट्र भाषा होगी। वे सस्कृत के प्रकाड पडित थे उनकी लिखी लगभग २७ पुस्तकों मे से सत्यार्थप्रकाश, सस्कारविधि, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका तथा वेद भाष्य, धार्मिक ग्रन्थों में अपना प्रमुख स्थान रखते हैं आर्यसमाजियों के लिए सत्यार्थप्रकाश पाचवा वेद है। समाज किस धर्म के सारभूत तत्वों को अपनाये उनका पूरी तरह से समावेश इस अमर ग्रन्थ मे किया गया है। स्वामी जी की प्रतिभा, विद्वत्ता एव अकाट्य युक्तियों को कहीं एक स्थानपर देखना हो तो इसी सत्यार्थप्रकाश में देखने को मिलेगी।

स्वामी जी के जीवन की प्रमुख घटना व उनका महान् उपकार आर्य समाज की स्थापना है। सन् १८७५ में सबसे प्रथम बम्बई नगर में आर्यसमाज की स्थापना हुई और तब से निरन्तर इस ओर आर्यसमाजियों का ध्यान लगा रहा। सम्प्रति समस्त भूमडल मे ३ हजार के लगभग आर्यसमाज मन्दिर हैं। स्वामी जी के बताये हुए धर्म प्रचार एव शिक्षा सुधार के कार्य को करने का आर्य समाज ने अपना परम कर्तव्य बना लिया है। आज भी आर्य समाज की सारी शक्ति शिक्षा सुधार पर लगी हुई है। राजस्थान के राजाओं को एक स्थान पर एकत्रित करने के प्रयत्न मे अपने अमूल्य जीवन को भी गवा दिया। जोधपुर जाते हुए उन्होंने अपने अनुयाइयों से कहा था कि यदि धर्म प्रचार करते हुए मेरे हाथों की उगलियों की बत्ती बनाकर जला दिया जाय तो भी मै अपने धर्म प्रचार के कार्य को छोडूगा नही, पर खेद है कि ऐसे देश भक्त तथा महान् सुधारक ऋषि को विरोधियो ने विष देकर मार डाला गुजरात न दयानन्द और गाधी दो महान् सन्त उत्पन्न किये पर देश का दुर्भाग्य है कि आज इन दोनों मे से एक भी हमारे बीच मे नहीं है एक जमन ज्योतिषी ने स्वामी जी के सम्बन्ध मे कहा था "भारत का यह ब्रह्मचारी यदि विष देकर नहीं मारा जाता तो तीन सौ वर्ष तक जीवित रहता"।

जो भी हो, विश्वास ऐसा है कि एक दिन समस्त विश्व वेदों की ओर लौटेगा और दयानन्द के सपने पूरे होंगे।

ब्रह्मचर्य्य का महत्त्व

ससार के सभी मनुष्य सुख स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन चाहते है। इनकी प्राप्ति ब्रह्मचर्य से ही होती है। यदि स्वास्थ्य को इमारत का रूप दें तो ब्रह्मचर्य को उसकी नीव मानना पड़ेगा। जैसे नींव को पुख्ता किये बिना कोई बडी इमारत खड़ी नहीं रह सकती वैसे ही ब्रह्मचर्य के बिना स्वास्थ्य नहीं रह सकता।

यह तो हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि पढने की उम्र में ब्रह्मचर्य का पालन न होने के कारण ही आज कल के विद्यार्थी दुबले पतले, निर्बल, निस्तेज, उत्साह हीन और भुलक्कड़ अधिक होते जा रहे हैं। जिधर देखो, समाज में, स्त्री पुरुष रोगों का खजाना बने हुए नजर आते हैं। समाज को स्वस्थ सुखी और दीर्घ जीवी बनाने के लिए ब्रह्मचर्य के सिवाय दूसरा उपाय नहीं है।

पूर्व और पश्चिम का समन्वय

[१ अगस्त १९१८ को भारत के प्रधान मन्त्री श्री प० जवाहरलाल नेहरू जी का गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय में विज्ञान भवन के उद्घाटन के अवसर पर दिया गया भाषण]

आचार्य जी, अध्यापक गण और
गुरुकुल के विद्यार्थियो !

अभी जो अभिनन्दन पत्र पढा गया है उसमे मेरे विषय मे शिकायत थी कि मेने अपने गुरुकुल आने के वायदे को पूरा करने मे बहुत समय लगा दिया। यह सच है और मै इसके लिए लज्जित हू, पर उसका कारण देश विदेश की परिस्थिति थी। आपके काम और उसके विस्तार को देखकर, मुझे बडी प्रसन्नता हुई है। आपने विज्ञान भवन के उद्घाटन के बहाने मुझे बुलाया यह उचित ही था। हमारे देश के सामने बडे २ प्रश्न है। नये विज्ञान को प्राचीन सस्कृति के साथ कैसे जोडें यह समस्या है। प्राचीन सस्कृति बुनियादी, स्फूर्ति दायक, शुद्ध और बहुत अच्छी है और मुझे इसका अभिमान है, पर उसके साथ विज्ञान की उन्नति भी आवश्यक है। जिन २ देशों ने विज्ञान से लाभ उठाया वे पैसे के लिहाज से बडे उन्नत व खुशहाल हुए हैं। जिन्होंने ऐसा नहीं किया वे दरिद्र व गरीब हैं। खाली विज्ञान हो और कुछ चीज न हो तो भी लाभ नहीं हो सकता। हमारे देश की सस्कृति की जडें तो बहुत गहरी है इसलिए उसको विज्ञान के साथ मिलाना आवश्यक है। यह बडा कठिन काम है। पहले राजनैतिक क्रान्ति का प्रश्न था, फिर आर्थिक क्रान्ति का प्रश्न उठा। वह प्रश्न अभी चल रहा है। पञ्चवर्षीय योजना आदि सब इसी लिये हैं। स्कूल, कालेज, विद्यालय महाविद्यालय इसी लिये बनाये जाते हैं कि लोग वहाँ विद्या सीख कर देश को उठा सकें। हम चाहते है कि देश मे कोई अनपढ न रहे। विधान मे भी ऐसी बात लिखी है। यह इस लिये कि आदमी का चरित्र अच्छा हो और वह देश का कुछ काम कर सके। उत्साह की आवश्यकता है किन्तु केवल उत्साह से काम नहीं चल सकता। पुल बनाना हो तो केवल नारे लगाने से काम नहीं चलेगा। लोहार, दर्जी का काम, इजीनीयरिंग आदि सब के लिये सीखना पडता है पर देश सेवा के लिए यह समझा जाता है कि उसके लिये सीखने की आवश्यकता नही। यह गलत बात है। विद्यालय आपको ढालते है, आपके मन को, आपके चरित्र को बनाते है। सीखना तो सारी उम्र भर होता है। स्कूल, कालेज मे तो खाली सीखने की नींव डाली जाती है। सीख कर हम अपने देश के, ससार के कामों मे अपने को लगावें। इसके लिये आवश्यक है कि हम दो चीजों को याद रक्खें। प्राचीन सस्कृति और नवीन विज्ञान। प्राचीन हरेक चीज अच्छी नहीं, नई चीज भी हरेक अच्छी नहीं। कोई चीज जमी नहीं रहती, गङ्गा की तरह चलती जाती है। समाज का जीवन भी बदलता रहता है। वह एक सा नहीं रहता। हम बच्चे को कितनी भी सुन्दर पौशाक पहनाए पर जब वह बदलता है तो उसे दूसरा वस्त्र देना होता है नहीं वह उस कपडे को फाड डालता है। इसी तरह समाज की अवस्था है। जब समाज वस्त्र को फाड कर बदलता है इसी को क्रान्ति कहते है। इसलिये हमे समझना चाहिये कि पुराना सिलसिला भी रहे और उसका बदलना भी रहे तभी ठीक २ रहता है। जल्दी २ बदलना भी ठीक नहीं होता। कोई समय आता है जब बदलने की आवश्यकता होती है। मै मूल सिद्धान्तों की बात नहीं कह रहा, साधारण समाज की बात कहता

हू। महात्मा बुद्ध के समय या अशोक के समय भी सन्देश भेजने के लिए तेज घोड़ों द्वारा काम चलाया जाता था। अकबर और मुगल साम्राज्य के समय भी घोड़ों द्वारा ही यात्रा होती थी। यात्रा इन दो हजार वर्षों मे इससे तेज न थी। फिर एक नई बात हुई। वास्तव मे शक्ति नई न थी। भाप को सब कोई देखते थे। स्टीवन्सन की आखे खुल गई। उसने भाप की शक्ति से रेलगाडी बनाई फिर हवाई जहाज बनने लग गये। बिजली को लोग जानने लगे, तार का प्रयोग सन्देश पहुचाने के लिए होने लगा। रेडियो आया फिर रेडार आया जिसको अभी कम लोग जानते हैं। उसके द्वारा सन्देश दूर २ तक पहुचाने मे बहुत ही कम समय लगता है। इन सब का जीवन पर असर होता है। बडे २ कारखाने बनने लगे। पहले लोगों में बाहु बल था। फिर मनुष्यों ने हल्के २ औजार बनाये। यहा के सग्रहालय मे कुछ ऐसे औजार रखे है। बेंजमिन फ्रैंकलिन ने कहा था कि Man is a Tool making animal अर्थात् मनुष्य एक औजार बनाने वाला जानवर है। सब से बडी शक्ति अणुशक्ति वा Atomic energy है। यह सब कोई नई चीज नहीं किन्तु मनुष्य ने उसकी शक्ति को अब पहचाना। बदलती दुनिया मे हमे भी प्रकृति की शक्तियों का विज्ञान के द्वारा पता लगाना चाहिये। इन शक्तियों का दुरुपयोग हो सकता है और अच्छा उपयोग भी। चाकू से भाजी काट सकते हैं और गला भी काट सकते हैं। यहा चरित्र का प्रश्न आ जाता है। इन शक्तियों से सारे ससार का नाश भी हो सकता है पर कोई कुछ नहीं कह सकता कि आगे क्या होगा? यदि विश्व युद्ध छिड जाए तो आधी से अधिक दुनिया नष्ट हो जाए और बाकी लूली लगडी रह जाये। शक्तियों का अच्छा उपयोग करने से हम अपनी आर्थिक स्थिति को शीघ्र अच्छा कर सकते हैं। आपने विज्ञान भवन के उद्घाटन के लिए मुझे बुलाया। यह मुझे बहुत अच्छा लगा। इस गुरु कुल का उद्देश्य प्राचीन सस्कृति का उद्धार करना था वह इसने किया। यदि प्राचीन सस्कृति का सिलसिला टूट जाये तो भारत भारत न रहे। विदेशी राज्य मे कुछ पढे लिखे लोगों का यह विचार बना था कि हम हरेक बात मे यूरोप की नकल करें तभी हमारी उन्नति होगी। यह अशुद्ध विचार था।

मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि आपके यहा तथा और जगहों पर भी सस्कृत की शिक्षा की उन्नति हो रही है। हमारी पुरानी सस्कृति सस्कृत के साथ बधी हुई है और यह सब से पुरानी भाषा है। पर साथ ही विज्ञान की उन्नति भी आवश्यक है। किसी जाति की शक्ति तब तक नहीं बढ सकती जब तक विज्ञान की उन्नति न हो। इसके बिना आर्थिक उन्नति भी नहीं हो सकती। हमारे देश में किसान इतना परिश्रम करते है किन्तु जो वे पैदा करते है वह और देशों के मुकाबले बहुत कम है। मेरा मतलब बडी २ मशीनों या ट्रैक्टरो से नहीं किन्तु जिन साधनों से पैदावार बढा सकते हैं उनको अपनाना चाहिए। लगभग दो सप्ताह पूर्व इलाहाबाद में एक कूर्मी किसान ने मुझे बताया कि उसने एक एकड जमीन में ४९ मन १५ सेर के लगभग गेहू पैदा किया। जाच कराने पर उसकी यह बात सच्ची सिद्ध हुई। हमे विदेशों से गल्ला मगाना पडता है यह कितनी लज्जा की बात है। मेरा विचार है कि जो कुछ हम अब पैदा करते है उससे कम से कम तीन गुना पैदा हो सकता है। कृषि की शिक्षा की भी इस समय बहुत आवश्यकता है। यहा के कृषि विद्यालय को देखकर मुझे प्रसन्नता हुई। विद्यार्थियों को और अन्यों को भी खेतों में जाकर काम करना चाहिए। किसानोंको नये तरीकोंका इस्तेमाल बतानाचाहिये। पिछले तीन वर्षों से फसल खराब हो रही है। किसानों के साथ मिल कर सब को काम करना चाहिए।

मीमांसा दर्शन का स्वाध्याय

[ले०—प० भवानीलाल भारतीय एम० ए० सि० वाचस्पति सदस्य, सार्वदेशिक धर्मार्य सभा]

मीमांसा दर्शन का प्रारम्भ धर्म की जिज्ञासा से होता है। प्रथम सूत्र इस प्रकार है —

अथातो धर्म जिज्ञासा १।१।१

वेदाध्ययन के अनन्तर धर्म की जिज्ञासा करनी चाहिये। वेदान्त दर्शन का प्रारम्भ भी इसी प्रकार ब्रह्म की जिज्ञासा से होता है। वैशेषिक दर्शन का प्रथम सूत्र धर्म की व्याख्या करने की प्रतिज्ञा का उल्लेख करता है। धर्म की परिभाषा वैशेषिक और मीमासा दोनोंमें प्रथक२ मिलती है। जिससे अभ्युदय और निश्रेयस की सिद्धि हो उसे वैशेषिक ने धर्म माना है। मीमासा वेद की आज्ञाओं और तदनुकूल आचरण को ही धर्म स्वीकार करता है-

चोदना लक्षणोऽर्थो धर्मः १।१।२

इस दर्शन के प्रथम अध्याय के प्रथम पाद में प्रमाणों का विचार किया गया है और धर्म मीमासा के लिये प्रत्यक्ष और अनुमान को पर्याप्त न मानकर शब्द प्रमाण को ही धर्म का मूल आधार स्वीकार किया गया है—औत्पत्तिकस्तु शब्दार्थेन आदि। इसी प्रसग में शब्द और अर्थ का स्वाभाविक और नित्य सम्बन्ध घोषित करते हुए शब्द की नित्यता घोषित की गई है। शब्द को अनित्य मानने वालों के तर्कों का खण्डन सूत्रकार ने बड़ी योग्यता से किया है।

इस पाद के अन्तिम भाग में वेदों को अनित्य मानने वालों के इस आक्षेप का समाधान किया गया है कि वेद मे अनित्य इतिहास पाये जाने से

हम भारत को प्रथम श्रेणी का अगुआ देश बनाना चाहते हैं। यह कौन नहीं चाहता? पर केवल चाहने से यह नहीं हो सकता। आप माफ करें भारत के लोग परिश्रमी नहीं। कभी २ मेहनत कर लेते हैं प २सदा परिश्रम करने की लोगों को आदत नहीं। स्कूलों, कालेजों में प्राय छुट्टिया ही छुट्टिया होती हैं और किसी देश मे इतनी छुट्टिया नहीं होतीं जितनी हमारे देश में। वर्ष में १५० दिन के लगभग स्कूलों में छुट्टिया होती हैं।

इस देश के बढने के लिए गान्धी जी ने कुछ मूल बातें हमारे सामने रखी थीं।

१—सब में एकता होनी चाहिए। हमारे देश की बीमारी आपस में लड़ने की है। इसी से हमारा नाश हुआ। हमारे देश में बड़े २ आदमी आये किन्तु एकता न होने से काफी उन्नति न हुई। एकता से ही हम स्वराज्य ले सके

२—हिन्दुओं में जो जातिभेद है वह हानिकारक चीज है। हरिजनों से घृणा करना, उन्हें नीच समझना यह चीज प्रजातन्त्र में चल नहीं सकती। सब को उन्नति का मौका मिलना चाहिये।

आगे तो अपनी शक्ति और योग्यता पर निर्भर है। कई बार लोग ठोकर खाकर गिरते भी हैं। इसकी परवाह नहीं। जो गिरने से डरते हैं वे नहीं उठ सकते। ये कुछ बातें मैंने आपके सामने रखी हैं। बातें तो और भी बहुत हैं। विद्यार्थियों ने देश का बोझा उठाना है। मुझे इस बात का विश्वास है कि गुरुकुल के विद्यार्थी इस बोझ को उठाने के लिए तैयार और समर्थ होंगे।

अन्त में मैं फिर आपको इस अभिनन्दन पत्र और स्वागत के लिए धन्यवाद देता हूँ। जय हिन्द

वह पौरूषेय और अनित्य हैं। वेद में किसी व्यक्ति विशेष के नाम, चरित्र आदि का उल्लेख नहीं है। कौथुम, काठक आदि जो शाखायें ऋषियों के नाम से प्रसिद्ध हो गई हैं उसका कारण यह है कि शाखाओं के प्रवचनकर्ता और मत्र द्रष्टा ऋषियों के नाम उन २ शाखाओं और मन्त्रों के साथ जोड़ दिये गये हैं, अन्यथा अपने मूल रूप में वेद मत्र अपौरूषेय और नित्य ही हैं। इसी प्रसग मे दर्शन कार ने 'आख्या प्रवचनात्' १।१।३० और 'परन्तु श्रुति सामान्य मात्रम्' १।१।३१ आदि सूत्रों को पढ़ते हुये यह स्पष्ट कर दिया है कि वेद मन्त्रों में प्रत्यक्षत दिखाई देने वाले अनित्य नाम वास्तव में सामान्य सज्ञायें हैं उन्हें किसी व्यक्ति विशेष का इतिहास नहीं समझ बैठना चाहिये।

प्रथम अध्याय के द्वितीय पाठ में वेदों पर होने वाले आक्षेपों का निराकरण किया गया है और यह सिद्ध किया गया है कि अपौरूषेय होने के कारण वेद स्वत प्रमाण हैं और उनमें समग्र रूप से मानवीय कर्तव्यों का विधान पाया जाता है। मीमासा दर्शन वेदोक्त कर्म को ही मनुष्य के लिये एक मात्र आचरणीय मानता है और वेद को अलौकिक ज्ञान का स्रोत स्वीकार करता है। वेदों के प्रति जहा कोटि २ जनता के हृदय में आदर का भाव रहा है वहा अतीतकाल में इस दिव्य ज्ञान राशि के प्रति अनास्था व्यक्त करने वालों की भी कमी नहीं है। यास्कीय निरुक्त में भी हमें कौत्स नामक एक आचार्य के वेद विषयक मत का उल्लेख मिलता है जिसमें वेदों पर अनेक आक्षेप किये गये हैं। यह कौत्स नामक आचार्य वेदों में पुनरुक्ति अतिशयोक्ति, अस्पष्टता, दुरूहता, अश्लीलता, परस्पर विरुद्ध कथन असभ्यता आदि के दोष देखता है और महर्षि यास्क कौत्स के मत का प्रमाण पुरस्सर खण्डन भी करते हैं। इस द्वितीय पाद में महर्षि जैमिनी ने भी यास्क के तुल्य ही वेद विरोधियों की शकाओं का निराकरण किया है।

तृतीय पाठ में वेदानुकूल अन्यान्य ब्राह्मण ग्रन्थों की प्रामाणिकता के विषय में सिद्धान्त स्थापित किया गया है—

विरोधन्त्वनपेक्ष्यं स्यात् असति ह्यनुमानम् १।३।३

अर्थात् वेदों और ब्राह्मणों का परस्पर विरोध होने पर ब्राह्मण प्रमाण नहीं माने जा सकते परन्तु वेदों के अनुकूल होने पर उनकी प्रामाणिकता स्वीकार की जा सकती है। इसी प्रकार कल्प सूत्रों स्मृतियों आदि ग्रन्थों की प्रमाणिकता भी उनके वेदों के अनुकूल होने पर ही निर्भर है यह मीमासा का दृढ़ सिद्धान्त है। मन्त्र और ब्राह्मण का भेद द्वितीय अध्याय के प्रथम पाठ में भी बतलाया गया है जहा मत्रों के लिये कहा गया है—

तच्चोदकेषु मन्त्राख्या २।१।३२

अर्थात् कर्म के प्रेरक वाक्यों की मत्र सज्ञा है और ब्राह्मणों के लिये कहा गया है -

शेषे ब्राह्मण शब्दः २।१।३३

इसी पाद में वेदों का ऋग्, यजु और साम० के अन्तर्गत वर्गीकरण भी किया गया है। वेदत्रयी के रूप में चारों वेदों का विभाजन मत्रों की शैली की विविधता के आधार पर किया गया है। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि वेद तीन ही हैं और अथर्व की गणना वेदों में नहीं हो सकती। ऋग्वेद के लिये कहा गया है—तेषा ऋग्यत्रार्थवशेन पाद-व्यवस्था २।१।३५ अर्थात् छन्द शास्त्र के नियमों की व्यवस्था के अनुसार जिन मत्रों की रचना हुई है वे ऋचायें कहलाती हैं। इसी प्रकार 'गीतिषु सामाख्या' २।१।३६ गाये जाने योग्य मन्त्रों की सज्ञा साम है और 'शेषेयजु शब्द' २।१।३६ शेष बचे हुए मन्त्रों की यजु सज्ञा है। इसी पाद में 'निगद' के नाम से अथर्ववेद का भी उल्लेख किया गया है।

मीमासा दर्शन का उद्देश्य ब्राह्मण ग्रन्थों में उल्लिखित कर्मकाड विधायक जटिल वाक्यों और

आपातत विरोधी प्रतीत होने वाली विधियों का समन्वय करना और उनकी व्याख्या करना है। अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये दर्शनकार को अपनी समस्त प्रतिभा और शक्ति का व्यय करना पड़ा है। इसी प्रयोजन के लिये जैमिनी ने सहस्रों सूत्रों, अधिकरणों पादों औरअ ध्यायों से युक्त इस महान् दर्शन ग्रन्थ की रचना की है जिसके निर्माण कौशल और कृतित्व को देखकर आज के अत्यन्त मेधावी पण्डितों की बुद्धि भी कुण्ठित हो जाती है।

इस दर्शन ग्रन्थ के समग्र कलेवर में ज्योतिष्टोमे दर्श पूर्णमास, राजसूय, वाजपेय, अश्वमेध, अग्नि होम आदि जिन शतश यज्ञों यज्ञपात्रों, यज्ञ विधियों, पुरोडाशों, ऋत्विजों यजमानों आदि का वर्णन किया गया है वह दर्शनकार की कर्मकाड विषयक निर्बाधगति का सूचक तो है ही साथ ही इससे यह भी जाना जा सकता है कि वह युग वेद मूलक कर्मकाड के आचरण का युग था, जबकि देश के साधन सम्पन्न लोग अपने अभ्युदय और मोक्ष की सिद्धि के लिये यज्ञ सस्था के विकास और उन्नयन में सलग्न थे। सप्ताहों, मासों और कभी २ सम्वत्सर पर्यन्त यज्ञ वेदियों से सुगन्धित हुत द्रव्यों की गध उठती रहती थी और देश का सारा वाता वरण ही वेद मत्रों की गूज, सामगान और स्वाहा शब्द से परिपूरित रहता था।

मीमासा के सभी विषयों का यदि सूत्ररूप मे भी उल्लेख किया जाय तो वह एक पुस्तक के कले वर में ही समा सकेगा अत हम अन्यान्य अध्यायों में प्रतिपादित विषयों को छोड़कर छठे अध्याय में उल्लिखित यज्ञाधिकार के प्रश्न का विवेचन पाठकों के सम्मुख उपस्थित करना चाहते हैं। वेदान्त दर्शन में भी ब्रह्म ज्ञान के अधिकार का विवेचन करने वाला 'अपशूद्राधिकरण' विख्यात है जिसकी टीका मे शकर, रामनुज आदि साम्प्रदायिक भाष्यकारों ने शूद्रों और स्त्रियों को ब्रह्मविद्या का अनधिकारी घोषित कर उनके वेद श्रवण, मनन और अध्ययन के प्रायश्चित रूप में पाशविक दड दिये जाने की व्यवस्था की है। मध्यकालीन आचार्यों की सकीर्ण हृदयता और उनकी अनुदारता का यह ज्वलन्त उदाहरण है। यद्यपि मूल वेदान्त शास्त्र में शूद्र के लिये किसी दड की व्यवस्था नहीं है।

इस दृष्टि से मीमासा दर्शन अधिक सौभाग्य शाली है। षष्ठाध्याय के प्रथम पाद में पति की सहधर्मिणी होने के कारण पत्नी को तो यज्ञाधिकार दिया ही है साथ ही योग्यता की दृष्टि से सभी वर्णों का यज्ञ मे अधिकार प्रतिपादित किया है। 'चातुर्वर्ण्य अविशेषात्' जैसे सूत्र तो स्पष्ट रूप से चारों वर्णों को यज्ञ का अधिकार मानते हैं, यद्यपि इस सूत्र को पूर्व पक्ष मे रख कर इसका अन्यथा अर्थ भी किया जा सकता है। इसी पाद के ४३वें सूत्र में रथकार को और ५१वें सूत्र में निषाद को यज्ञ का अधिकारी माना गया है। इस व्यवस्था में यह स्पष्ट है कि मीमासा के अनुसार शूद्रवर्ण भी यज्ञ का अधिकारी है क्योंकि प्रचलित पौराणिक विश्वास के अनुसार रथकार, मल्लाह आदि जातिया शूद्रों के अन्तर्गत ही आती हैं। वस्तुत महर्षि जैमिनी वर्ण व्यवस्था गुण कर्मानुसार ही मानते हैं जिसमें योग्यता की दृष्टिसे सभी द्विजों और शूद्रोंको यज्ञाधिकार प्रदान किया गया है। जैमिनी के इन उदार विचारों की प्रशसा हिंदी में मीमासा दर्शन पर प्रथम आलोचनात्मक ग्रन्थ प्रस्तुत करने वाले पौराणिक पण्डित मदन मिश्र शास्त्री ने भी मुक्त कठ से की है और उन्होंने महर्षि जैमिनी को शूद्रों के अधिकारों का रक्षक एव महान समाजवादी विचारक के रूप में गौरवान्वित किया है।

सच्चे गुरु के सच्चे शिष्य

[लेखक—मास्टर पोकरमल जी]

स्वर्गीय श्री पं० बस्तीराम जी का जन्म आश्विन कृष्णा ४ सम्वत १८६८ वार गुरुवार प्रात काल ग्राम खेड़ी सुल्तान जिला रोहतक तहसील झज्जर डाकघर पाठोदा में हुआ। इस प्रकार उनकी आयु लगभग ११६ वर्ष की होती है। सम्वत् १६३४ में आपको भयंकर माता (चेचक) निकली तथा १६३६ में आप प्रज्ञा चक्षु हो गये। आपने अपना सारा ही जीवन अपने गुरुदेव भगवान् दयानन्द जी का ऋण चुकाने तथा वैदिक धर्म का प्रचार करने में लगाया। इस कार्य में आपको बड़े २ कष्ट उठाने पड़े। परन्तु आपने पग पीछे नहीं हटाया तथा उसी प्रकार वैदिक सिद्धान्तों का प्रबल रूप से मण्डन तथा वेद विरुद्ध सिद्धान्तों का खण्डन करते रहे। आप न केवल हरयाना प्रांत में अपितु सारे भारत में विख्यात थे। आपने पौराणिकों तथा मुसलमानों से बहुत से शास्त्रार्थ किये, जिनमें आपको पूर्ण विजय प्राप्त हुई। इनमें एक शास्त्रार्थ विशेष उल्लेखनीय है। भाद्रपद सम्वत् १६७७ में ग्राम डाबोदा जिला रोहतक में पौराणिकों से हुआ। जिसका वृत्तान्त इस प्रकार है।

मैंने एक मास का अवकाश लेकर श्री पं० बस्तीराम जी को साथ लेकर आसपास के ग्रामों में वैदिक धर्म का प्रचार कराया। पण्डित जी की मेरे ऊपर बड़ी कृपा दृष्टि थी। उन्होंने मेरी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया। एक मास में लगभग एक हजार लोगों को यज्ञोपवीत दिये। सारे प्रांत में वैदिक धर्म की धूम मच गई। पौराणिक क्षेत्र में बड़ी खलबली मची, परिणाम स्वरूप ग्राम डाबोदा कलां में जिस समय श्री पं० जी मृतक श्राद्ध का खण्डन कर रहे थे तो वहां के एक ब्राह्मण पं० तुलीचन्दजी ने सभा में खड़े होकर कहा कि बस्तीराम गलत कह रहे हैं। मृतक श्राद्ध में मास का कहीं जिक्र नहीं लिखा है। मैं शास्त्रार्थ के लिये चैलेंज देता हूँ। इस पर श्री पं० बस्तीरामजी ने मनुस्मृति के अध्याय २-३ व ५ के श्लोकों का प्रमाण देते हुए मृतकश्राद्ध में मास को सिद्ध किया। इस पर भी पौराणिकों को सन्तोष नहीं हुआ और कहा कि यदि साहस है तो कोई दिन निश्चित करलो। शास्त्रार्थ नियम पूर्वक होगा। श्री प० बस्तीराम जी ने कहा कि शास्त्रार्थ का चैलेंज सहर्ष स्वीकार है। परन्तु मुझे तुम पर दया आती है शर्त के रुपये तुम न दे सकोगे। १०००) रुपये से हटकर ५००) रुपये पर आ गये। श्री बस्तीरामजी ने कहा कि मुझे तुम्हारा विश्वास नहीं है। मैं तो जमानत लूंगा। इस पर पौराणिकों ने कहा हम भी तुम्हारी जमानत लेंगे। अन्त में पौराणिकों की तरफ से श्री चौ० रूपरामजी तथा आर्य समाज की तरफ से मैं जमानती हुए। पण्डित जी ने कहा कि मै तुमको एक सप्ताह का समय देता हूँ। तुम काशी आदि से बड़े से बड़ा पण्डित ले आओ। इसके बाद मैं पण्डित जी को अपने ग्राम में प्रचार के लिये ले आया। क्योंकि उन्हीं दिनों मेरा युवक भतीजा कुन्दनलाल जिसकी आयु २५ वर्ष की थी, उसी वर्ष उसका विवाह हुआ था, स्वर्गवास हो गया था। परिवार के सभी आदमियों को बड़ा दुःख हो रहा था। मैंने इस विचार से कि इस दुःख के समय प्रचार कराके परिवार वालों को शान्ति दिलाई जावे। इस पर मेरे परिवार वाले मेरे से भी नाराज हो गये। मुझे बुरा भला कहने लगे फिर भी ग्राम में प्रचार खूब हुआ अन्तिम दिन ५० आदमियों ने यज्ञोपवीत लिये। उनमें मेरे भाई भतीजे भी सम्मिलित थे। इस बीच के दिनों में ग्राम डाबोदा के पौराणिक अपने

पण्डित के लिये बहुत फिरे परन्तु उन्हें कोई नहीं मिला। एक पण्डित मुन्शीराम ग्राम मुरथल (रोहतक) जो कि गाली देने में बड़ा माहिर था उसको लाये पण्डित जी से वह भी बहुत डरता था। पौराणिकों से वह अपनी भेंट पूजा लेकर दो तीन दिन के बाद भाग गया। इस पर पौराणिकों को निश्चय हो गया कि पण्डित बस्तीराम सच कहते हैं। उस ग्राम की पचायत शर्त का रुपया लेकर मेरे ग्राम में पूज्य पण्डितजी के पासगई। पहलेतो धमकी दी कि यदि शास्त्रार्थ करने आओगे तो भयकर लडाई होगी। जब बस्तीराम इस प्रकार डरने वाले नहीं थे तो उन्होंने रुपया देते हुए कहा कि महाराज आप जीते हम हारे। इस पर पण्डित जी ने थोड़ी देर सोच कर कहा कि हम गाव में आकर ही रुपया लेंगे। क्योंकि उस दिन बडी दूरदूर के पौराणिक और आर्य समाजी बडी सख्या में आयगे। तुम्हारे आदमी यह भी कहेंगे कि आर्य समाजी डर कर नहीं आये। इस पर आर्य भाईयों को लज्जित होना पडेगा। इस पर वह लोग निराश वापस चले गये। शास्त्रार्थ वाले दिन से पहली रात्रि को प्रचार समाप्त करके पण्डित जी ने ढोल बजाने वाले को बुलाया और कहा कि ढोल बजाते हुए इसी समय डाबोदा कला चलना है बोलो क्या लोगे ? ढोल वाले ने कहा ।।=) लू गा। इस पर पण्डित जी ने कहा १) दू गा। परन्तु रास्ते में ढोल बजाना बन्द न होने पावे। प्रात काल ही डाबोदा गाव में पहुचे वहां सहस्रों आदमी घोड़ों, गाडियों, ऊटों आदि सहित आये हुये थे। जब वहा पहुचे तो वैदिक धर्म की जय जयकारों से आकाश गूज उठा। शास्त्रार्थ के स्थान पर सब आदमी जलूस के रूप मे पहुँचे तो ग्राम की पचायत ने शर्त के रुपये करबद्ध लौटा दिये तथा पण्डित जी ने सहर्ष स्वीकार कर लिये। इस पर फिर वैदिक धर्म की जय महर्षि दयानन्द की जय से आकाश गूज उठा। इस प्रकार श्री पण्डित जी ने मुसलमान मौलवियों से भी कई शास्त्रार्थ किये और विजय प्राप्त की। मैं समझता हू कि एक शास्त्रार्थ १०० व्याख्यानों के बराबर लाभ पहुँचाता है। वास्तव में यह सत्य भी है। पूज्य पण्डित ने कई भजनों की पुस्तकें पाखण्डखण्डिनी, बस्तीराम विनोद ऋषि जीवनादि बड़ी उपयोगी लिखी हैं। बस्तीराम जी अपने गुरु का ऋण उतारते हुए तथा वैदिक धर्म प्रचार करते हुए २६ ८ ५८ को स्वर्ग सिधार गये। आपके श्रद्धालु शिष्यों ने आपका दाह कर्म सस्कार बड़े सम्मान के साथ दयानन्द मठ रोहतक में किया। आपके शव का जलूस शहर में निकाला गया। हजारों नरनारी साथ थे। लगभग ५॥ मन घृत, सामग्री, गोले, चन्दन की लकड़ी भी पर्याप्त मात्रा मे थी। उनके जीवन का सबसे बड़ा गुण यह था कि वह केवल आर्य सिद्धांतों का ही प्रचार करते थे। उन्होंने अपने जीवन में हजारों ही आर्य समाजी बनाये। सैकड़ों ही आर्य समाजें स्थापित कीं जो भली प्रकार चल रही हैं। केवल एक जिले रोहतक में आवे दर्जन गुरुकुल भी आपके ही पुरुषार्थ का फल है।

मद्य मांसाहारी राज्याधिकारियों से दुःख की वृद्धि

देखो ! जब आर्यों का राज्य था तब ये महोपकारक गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे तभी आर्यावर्त वा अन्य भूगोल देशों में बड़े आनन्द मे मनुष्य आदि प्राणी वर्त्तते थे, क्योंकि दूध, घी, बैल आदि पशुओं की बहुताई होने से अन्न रस पुष्कल प्राप्त होते थे, जब से विदेशी मांसाहारी इस देश में आके गौ आदि पशुओं के मारने वाले मद्यपायी राज्याधिकारी हुए हैं तब से क्रमशः आर्यों के दुःख की बढ़ती होती जाती है।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

संस्था-परिचय

गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर

अधिष्ठान तथा कर्ता, करण च पृथग्विधम्।
विविधाश्च पृथक् चेष्टा, दैव चैवात्र पचमम्॥
तत्रैव सति कर्तारमात्मान केवल तु य।
पश्यत्यकृत बुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मति॥ (गीता)

यह महावृक्ष स्वय बोल रहा है

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (हरिद्वार) के जन्म से लेकर अब तक के तथा गत ५२ वर्ष के कार्य का कोई साक्षी है तो वह आश्रम में स्थित महा आम्रवृक्ष है जिसकी आयु इस समय होगी सौ वर्ष की—खड़ा था बेचारा जगल में नहर के पास किसी को इसकी परवाह नहीं थी, कोई इसकी ओर देखता भी नहीं था—हा ज्वालापुर, सीतापुर के किसान जब खेत में हल चलाने के हेतु इधर निकल आते थे और जब कभी धूप पड़ती थी तब इसकी छाया मे आकर विश्राम पा सुख पाते थे। वर्षा ऋतु में भी कृषकगण वर्षा से बचने के लिए इसका आश्रय लेते थे। किसी को क्या पता था कि इसी महावृक्ष की छाया में एक महाविद्यालय खुलने वाला है जो उत्तर भारत की एक नामी सस्था होगी—जिसमें ब्रह्मचारीगण विद्याध्ययन करेंगे, इसी महावृक्ष के पास एक यज्ञशाला बनेगी जिसमें साय प्रात यज्ञ-हवन, वेदध्वनि हुआ करेगी।

हे महावृक्ष! तू स्वय क्यों नहीं बोलता—सुनो महाविद्यालय की रामकहानी इस वृद्ध महावृक्ष की, जबानी—

"मैं जगल में ही पचास वर्ष अकेला तप तपता रहा – किस किसान के हाथ से कब यहा गुठली पड़ गई मैं नहीं जानता, इसीसे मेरा अकुर फूटा—ईश्वर का ही आश्रय था, यहा मेरी परवाह करने वाला कौन था, जब मैं बड़ा हुआ और फल लगने लगे तब किसानों के बालक लाठी के तथा पत्थरों के प्रहारों से फलों को गिराकर आनन्दित हो उठते इन बालकों को क्या पता था कि उनके लाठीकाष्ठ तथा पाषाण प्रहारों से मेरी क्या गति बनती थी, वृक्ष का जन्म इसीलिए है कि इस प्रहार सहन करना और प्रहार करने वाले तथा आतपपीडित आश्रयार्थियो को छाया और फल देकर सन्तुष्ट करते रहना—कितना कठिन कार्य है हमारा"—

"सब दिन एक से नहीं रहते—हरिद्वार को रेल आनी थी उसके लिए रेलवे इजीनियर का दफ्तर मेरे पड़ोस में ही खुला—पहिले रेल महाविद्यालय तक ही आई फिर जब लोहे का पुल बना तब पार ज्वालापुर का स्टेशन बना और हरिद्वार रेल आने लगी"—

"जब हरिद्वार रेल आने लगी तब वह रेलवे इजीनियर का दफ्तर यहा से उठ गया और रेलवे वालों ने जाते जाते वह बगला और वह तीन बीघे बाग, ज्वालापुर के दरोगा बा० सीताराम के हाथ बेचा—यह बात है १६०५ की।"

"यह स्थान बाबू सीताराम के साय प्रात सैर सपाटे का स्थान बना—कभी कभी बा० सीताराम स्वय यहा रहते थे। इनको बाग लगाने का शौक

था, इन्होंने बगले के चारों ओर सुन्दर पुष्प वाटिका लगाई।"

"कर्म-धर्म-संयोग से बा० सीताराम जी को हरिद्वार स्टेशन पर स्व० स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती के दर्शन हो गये। गगा जी ने आना था भागीरथ ने यश लेना था। स्वामी जी नि शुल्क गुरुकुल खोलना चाहते थे पर स्थान नहीं मिल रहा था। बा० सीताराम जी के पास भूमि थी पर थे नि सतान। स्थान का करते क्या? बाबू जी ने गुरुकुल खोलने के लिये स्वामी जी को यह स्थान समर्पण कर दिया"—

"वहा क्या देर थी, थे तो स्वामी जी औलिया, भट महाविद्यालय खुल गया और गणेशकूप के पास आम के ७-८ वृक्ष थे, वहीं प्रारम्भिक उत्सव मनाया गया—उपस्थिति हो गई कोई सौ नर नारियों —उस उत्सव के साक्षी अब एकमात्र स्वामी आनन्द बोध तीर्थ हैं जिनकी आयु इस समय ९० के लगभग है और जो वर्षों से रुग्ण हैं—उस समय के अन्य साक्षी सब के सब दिवंगत हैं—"

"कोई शुभकार्य हो उसमें प्रारम्भ में, मध्य में विघ्न आते रहते हैं—इस बात पर घोर विरोध खड़ा हो गया कि इतने समीप दो गुरुकुल नहीं होने चाहिये—स्वामी जी ने इस विरोध की तनिक परवाह नहीं की और एक छोटी सी कमेटी बना डाली महाविद्यालय की"—

"सबसे पहिले स्व० पं० दिलीपदत्त उपाध्याय महाविद्यालय के मुख्याध्यापक बने, फिर इनके गुरु श्री प० भीमसेन शर्मा आगरा निवासी और कुछ काल के पश्चात् आचार्य श्री पं० गंगादत्त शास्त्री पधारे। अमृतसर निवासी चौधरी जयकृष्ण जी, मैरोवाल (हुशियारपुर) के बा० प्रतापसिंह जी आहलूवालिया पधारे और महाविद्यालय की गाड़ी चल निकली, यह है १९०७ की बात, महाविद्यालय सभा की रजिस्ट्री भी इसी वर्ष हुई"—

"बड़ा विरोध रहा, पर विरोधियों की कुछ न चली और इसका बड़ा शानदार प्रथम महोत्सव १९०८ की होलियों की छुट्टियों में हुआ—जो भी पार कागड़ी का उत्सव देखकर आता था, वह यहां से होकर जाता था—पहिला—पहिला उत्सव, कोई उपस्थिति होगी ४-५-सहस्र की, दान भी पांच सहस्र आया, स्व० मास्टर आत्माराम राज्यरत्न (बड़ोदा), श्री पं० गणपति शर्मा चुरू, श्री प० अखिलानन्द शर्मा कविरत्न आदि के व्याख्यान तथा पं० वासुदेव शर्मा आदि के भजनों ने जनता को मुग्ध कर डाला"—

"सबसे पहिले मन्त्री थे एक चित्रकार (नागपुर के) फिर मन्त्री बने पं० परमानन्द, फिर मन्त्री बने श्री प० भीमसेन शर्मा आगरा निवासी। प्रधान थे चौ० महाराजसिंह मानकपुर, झबरेड़ा—अब तो उन पुराने कार्यकर्त्ताओं में से कोई शेष नहीं।"

"इस प्रथम उत्सव के पश्चात् यथानियम चुनाव हुआ—जिसके अनुसार पं० गंगादत्त शास्त्री—आचार्य, श्री पं० भीमसेन शर्मा, मुख्याध्यापक, श्री पं० पद्मसिंह शर्मा, मन्त्री, श्री प० नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ (रावजी), मुख्याधिष्ठाता आदि चुने गये। महाविद्यालय का एक मुख पत्र भी निकाला गया जिसका नाम था भारतोदय। पं० पद्मसिंह शर्मा ही उसके सम्पादक रहे थे। १९०८ में महाविद्यालय की जो गाड़ी जोर से चल निकली वह १९१५ तक बेरोक-टोक चलती रही।"

१९१५ में बड़ी क्रान्ति हुई और यह सस्था बा० ज्योति स्वरूप जी वकील देहरादून, पं० बलदेव सहाय (गुजराती), श्री डा० शिवदत्त भिषगाचार्यजी आदि के हाथों में गई—३-४ वर्ष इनका जोर रहा फिर यह संस्था पुराने लोगों के हाथों में आई और पं० रविशकर शर्मा मुख्याधिष्ठाता और चौ० रघुराजसिंह प्रधान रहे।

"इस प्रकार यह गाड़ी चलती रही, विरोध खोता ही गया और संस्था बढ़ती ही गई और १९२१

में तो इसमें १५० ब्रह्मचारी हो गये थे।"

१९२४-२५ में फिर एक जोर की क्रांति हुई और तब से बराबर महाविद्यालय की गाड़ी को महाविद्यालय के स्नातक ही चला रहे हैं—इस संस्था द्वारा सहस्रों निर्धन एवं होनहार छात्रों का उद्धार हो चुका है। इस महाविद्यालय से सैकड़ों विद्याभास्कर, विद्यारत्न, आयुर्वेदभास्कर, शास्त्री, आचार्य, तीर्थ निकल चुके हैं—कुछ दिवंगत हो गये, कुछ कालेजों, विश्वविद्यालयों में महोपाध्याय हैं, कुछ देश और धर्मसेवा में संलग्न हैं—कुछ गुरुकुल महाविद्यालय का कार्यभार सम्भाले हैं।

"महाविद्यालय का मुख्य दोष यह रहा कि इसके पास स्थायी फण्ड (कोष) कभी नहीं रहा—महाविद्यालय का यही एक बड़ा गुण रहा कि इसके पास स्थायी फण्ड न होते हुए भी पचास वर्ष से चल ही रहा है"—

दिवंगत कार्यकर्ता तथा विद्वानों में निम्नलिखित महानुभावों का नाम उल्लेख योग्य है—

१—स्वामी शुद्धबोध तीर्थ आचार्य कुलपति

२—पं० भीमसेन शर्मा साहित्याचार्य मुख्याध्यापक

३—साहित्याचार्य पं० पद्मसिंह शर्मा (नायकनगला)

४—चौ० महाराजसिंह ५—चौ० अमीरसिंह (गढ़मीरपुर) ६—ला० केवलकृष्ण (इमली खेड़ा) ७—चौ० महाराजसिंह (शामली) ८—चौ० जयकृष्ण जी अमृतसर निवासी ९—डा० शिवदत्त भिषगाचार्य, १०—रायसाहब मथुरादास रुड़की।

अब क्या हाल है ?

अब स्वराज्यकाल में महाविद्यालय एक विचित्र परिस्थिति में से गुजर रहा है। जब भारत का मानचित्र ही बदल गया तब भारतवर्ष की दशा के साथ भारतीय संस्थाओं की दशा भी बदल गई—सरकार नई प्रजातन्त्र की पोषक और पालक बन गई—नया संविधान बना, 'नई ईंटें और नया मकान' वाली कहावत हो गई—इसकी शिक्षा पद्धति वही है जो ब्रिटिश-काल में थी—स्वराज्य होने की भावना के कारण आर्यसमाज की संस्थाओं, सचालकों, स्वामिनी सभाओं, गुरुओं, शिष्यों का ध्यान ही बट गया—धर्म का प्रश्न गौण होकर पेट का प्रश्न समुख आया और उग्ररूप में आया—जमींदारी प्रथा नष्ट होने के कारण जमींदार और किसानों ने हाथ खेंच लिया नहीं तो मुख्यतया महाविद्यालय अपनी स्थिति के लिए जमींदार किसानों पर ही निर्भर रहा १९४७ तक। फिर दशा पलट गई—दान कम आने लगा—अब तो सरकार दानकर भी लगा रही है। इत्यादि कारणों से यह उपकारी सस्था चल रही है पर जिस वेग और जिस ढंग से चलनी चाहिए नहीं चल पाती—महाविद्यालय के प्रेमी, प्राचीन संस्कृत विद्या के हितैषी तथा महाविद्यालय के सचालकों के समुख यही जटिल प्रश्न है—दान में कमी होने के कारण सभा को विवश होकर ब्रह्मचारियों से भोजन शुल्क लेना पड़ रहा है जो कि नहीं के बराबर है।

"महाविद्यालय के कार्य को आगे कैसे चलाया जाय इसका निर्णय तो महाविद्यालय के हितैषियों को ही करना है—अब तक महाविद्यालय का अपना अनोखा शिक्षाक्रम था पर स्वराज्यकाल में वह क्रम ढीला पड़ गया है, ढीला पड़ता जा रहा है—संस्कृत परीक्षा-क्रम चल पड़ा है और ब्रह्मचारी उसी रुचि के हो रहे हैं। उनको अर्थकरी विद्या चाहिए।"

"महाविद्यालय की सीमित शक्ति, सीमित साधन आदि के कारण इस उपयोगी संस्था का मार्ग रुक सा गया है—संचालक तथा गुरुगण थक गए हैं—कोई यथार्थ मार्ग सूझ नहीं रहा है।"

"इधर यह दशा और उधर सुवर्ण जयन्ती सिर पर चढ़ी आ रही है—यह जयन्ती गतवर्ष ही हो सकती थी, हो जाती पर पंजाब के हिन्दी सत्याग्रह के कारण आर्य-जगत् का ध्यान उसी ओर खिंच

आर्य समाज का परिचय

(लेखक—रघुनाथप्रसाद पाठक)

अध्याय ८

राष्ट्रीयता

आर्य राष्ट्र

हमारा जातीय नाम 'आर्य' है। हमारा वर्तमान नाम 'हिन्दू' फारसी का शब्द है संस्कृत का नहीं।

यूरोप के इतिहासकार कहते हैं कि आर्य राष्ट्र का अस्तित्व मानव-इतिहास के प्रारम्भ मे ही था।

वे यह भी मानते हैं कि आर्य लोग भारत के मूल निवासी न थे अपितु मध्य एशिया से आये थे। स्वामी दयानन्द का कथन है कि भारत के मूल निवासी आर्य ही थे।

भारत की सर्वोपरिता

हमारा देश भारत सब देशों का शिर मौर है

गया था, इसीलिए निर्णय करना पड़ा कि १९५९ में जयन्ती मनायी जाय महासभा के निर्देशानुसार स्वागत समिति बन गई और उसने अपना काम प्रारम्भ कर दिया है—इसी वर्ष आर्य जगत् मे अन्य कई महासम्मेलन और जयन्तियों की सभावना है—यही चिन्ता है कि महाविद्यालय की सुवर्ण जयन्ती किस प्रकार सफल हो सकेगी। जैसी भी परिस्थिति हो जयन्ती मनानी ही चाहिए, मनानी ही पड़ेगी। यदि महाविद्यालय के हितैषी प्रेमी पूर्ण उद्योग करें तो महाविद्यालय की आयु १०-१५ वर्ष और बढ सकती है। जिस करुणानिधान भगवान के करुणारस से महाविद्यालय अनेक विकट सकट परम्परा से निकल कर इस वर्तमान स्थिति में पहुच सका है उसी करुणानिधान भगवान् की कृपा रहेगी तो यह पुण्य पवित्र सस्था आगे भी पवित्र प्राचीन सस्कृत शिक्षा दीक्षा का कार्य चलाने में समर्थ होगी"—

ऐसा ही दृढ़ विश्वास रखकर

महाविद्यालय की महासभा, महाविद्यालय के सचालक, कार्य कर्तृगण, स्नातक मण्डल, महा विद्यालय के सदस्य, हितैषी, प्रेमी भूतपूर्व ब्रह्मचारियों के सरक्षक तथा वर्तमान सरक्षक जयन्ती को सफल बनाने में दत्तचित्त होंगे ऐसी सदाशा के साथ महाविद्यालय के महावृक्ष की यह कथा समाप्त की जाती है—आगे ईश्वर सहाय—

सेवितव्यो महावृक्ष। छायापुष्प समन्वित ॥
यदि दैवात्फल नास्ति। छाया केन निवार्यते॥

इस महावृक्ष की छाया भी विपुल है और इसने बहुत से फल भी दिये हैं, प्रतिवर्ष देता भी रहता है। ऐसे परोपकारी छाया पत्र पुष्प फल समन्वित महावृक्ष की हम सेवा करें यथाशक्ति, यथामति, सुमति सद्भाव द्वारा—हम अपना कर्तव्य पालन करें आगे सामुदायिक अदृष्ट के अनुसार फलदाता भगवान् है।

सत्य सकल्पों का देने वाला और उनकी पूर्ति करने वाला भी भगवान् है। फिर हमे क्या चिन्ता। हम कौन वृथा घमड करने वाले कि हम चला रहे हैं। वही चला रहा है। वही चलायेगा। यदि यह सस्था उपयोगी नहीं तो वह स्वय मिटा देगा—शम्।

नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ

कुलपति— गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर

स्वामी दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश के नवम समुल्लास में लिखते है —

"यह देश जिसे आर्यवर्त्त कहते थे प्राचीन काल में इतना महान् था कि अन्य कोई देश इसकी बराबरी न कर पाता था। युधिष्ठिर के समय तक जब उन्होने राजसूय यज्ञ किया था भूमण्डल में आर्यों का चक्रवर्ती राज्य था। हम महाभारत में पढ़ते हैं कि चीन का राजा भगदत्त, अमरीका का राजा बभ्रुवाहन, यूरोप का बिडालाक्ष, फ्रास का राजा शल्य, तथा यूनान आदि विदेशस्थ राजाओं ने राजसूय यज्ञ में भाग लिया था और वे महाभारत समाम में सम्मिलित हुए थे।"

अपने देश से प्रेम करो

भारत हमारे पूर्वजों की भूमि है अत हमें इससे प्रेम करना चाहिए। स्वामीजी सत्यार्थप्रकाश के ११वें समुल्लास मे लिखते हैं —

"तुम्हें और हमें उचित है कि हम आपस में एक होकर देश को उन्नत करें।"

यूरोपियनों से शिक्षा

स्वामी दयानन्द युरोपियनों से पाठ ग्रहण करने का निम्न लिखित शब्दों मे परामर्श देते हैं —

"देखो! कुछ सौ वर्ष से ऊपर इस देश मे आये युरोपियनों को हुए (हैं) और आज तक ये लोग मोटे कपड़े पहिरते हैं जैसा कि (वे) स्वदेश मे पहिरते थे परन्तु उन्होंने अपने देश का चाल चलन नहीं छोड़ा और तुम मे से बहुत से लोगों ने उनका अनुकरण कर लिया। इसी से तुम निर्बुद्धि और वे बुद्धिमान ठहरते हैं। अनुकरण करना किसी बुद्धिमान का काम नहीं।"

स्वामी जी हमें सावधान करते हैं कि हमें यूरोपियनों के सद्गुणों का अनुकरण करना चाहिए न कि दुर्गुणों का परन्तु हम इसके विरुद्ध आचरण करते हैं।

युरोपियन अपने देश से प्रेम करते हैं और अपने राष्ट्रीय उद्योग धन्धों और व्यापार को उन्नत करने के लिए अपने देश की वस्तुओं का उपयोग करते हैं। हमे भी अपने देश की बनी हुई वस्तुओं का उपयोग करना चाहिए।

हमारे कांग्रेस के नेताओं ने स्वदेशी आन्दोलन को अपनाया जिसका ५० पूर्व स्वामी दयानन्द ने सकेत कर दिया था।

शासन

पक्षपातपूर्ण अंग्रेजों ने हम पर यह आरोप लगाया और कहा कि भारत के लोग स्वशासन के अयोग्य हैं। परन्तु स्वामी दयानन्द ने यह सिद्ध किया कि हमारे पूर्वजों ने युरोपियनों के विधि विधान से श्रेष्ठ विधि विधान बनाया और व्यवहृत किया था।

मनु महाराज कहते हैं —

"राजा को २, ३, ५ और १०० ग्रामों के मध्य प्रशासकीय कार्यालय रखना चाहिये जिसमें शासन के कार्य को चलाने के लिये अपेक्षित सख्या में राजकर्मचारी नियुक्त रहें। उसे एक ग्राम के लिए एक प्रशासक, दूसरा १० ग्रामों के लिए, तीसरा २० ग्रामों के लिए, चौथा सौ ग्रामों के लिए और पाचवां १००० ग्रामों के लिए नियत करना चाहिए। एक ग्राम का प्रशासक दस ग्रामों के प्रशासक को अपने इलाके के समस्त अपराधों की रिपोट प्रतिदिन देता रहे और दस ग्रामों का प्रशासक २० ग्रामों के प्रशासक को और इसी प्रकार आगे के प्रशासकों को वह रिपोर्ट प्राप्त होती रहे।

(मनुस्मृति अध्याय ७, २६, ५)

पार्लियामेंट

स्वामी दयानन्द ने स्पष्ट किया है कि प्राचीन भारत में किसी एक राजा का एकच्छत्र निर

कुश शासन न था अपितु ससदीय शासन था। वे लिखते हैं —

"एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए किन्तु राजा जो सभापति होता है तदाधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा राज सभा के अधीन रहे।"

(देखें अथर्ववेद १६, ७, ५, ६)

राजकार्य तीन प्रकार की सभाओं के अधीन होना चाहिए—विद्यार्य सभा, धर्मार्य सभा और राजार्य सभा।

महा विद्वानों को विद्या सभा अधिकारी, धार्मिक विद्वानों को धर्म सभा अधिकारी और प्रशसनीय धार्मिक पुरुषों को राज सभा के सभासद और जो उन सब में सर्वोत्तम गुण, कर्म, स्वभाव युक्त महान् पुरुष हो उसको राजसभा पति रूप मान के सब प्रकार से उन्नति करे।

तीनों सभाओं की सम्मति से राजनीति के उत्तम नियम और नियमों के अधीन सब लोग वर्ते, सब के हितकारक कामों में सम्मति करें, सर्वहित करने के लिए परतन्त्र और धर्म युक्त कार्यों में अर्थात् जो २ निज के काम है उन २ मे स्वतन्त्र रहें।

(सत्यार्थप्रकाश स० ६)

बहु पक्ष

आज कल विद्वानों और अज्ञानियों दोनों के ही लिए वोटों का बहुपक्ष स्वीकार किया जाता है। परन्तु स्वामी दयानन्द मनुस्मृति का उद्धरण देकर इस प्रथा को हानिकर बताते है। (सत्यार्थप्रकाश समु० ६) एक सन्यासी (महाविद्वान्) के निर्णय को प्रमाण मानना चाहिये। १०० अज्ञानियों का निर्णय प्रमाण नहीं हो सकता।

निस्सन्देह साधारण और अज्ञानी जनों में से निर्वाचित व्यक्तियों का बहु पक्ष भयावह है जैसा कि आज कल भारतीय कौंसिलों एवं नगरपालिकाओं आदि २ में अनुभव किया जाता है।

राज्य कब नष्ट होता है ?

जब तक मनुष्य धार्मिक रहते हैं तभी तक राज्य बढता रहता है और जब दुष्टाचारी होते हैं तब राज्य नष्ट भ्रष्ट हो जाता है।

(स० प्र० स० ६)

इस परमात्मा की सृष्टि में अभिमानी अन्यायकारी अविद्वान लोगों का राज्य बहुत दिन नहीं चलता और यह ससार की स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि जब बहुत साधन असख्य प्रयोजन से अधिक होता है तब आलस्य पुरुषार्थ रहितता, ईर्ष्या, द्वेष विषयासक्ति और प्रमाद बढता है। इससे देश में सुशिक्षा नष्ट होकर दुर्गुण और दुर्व्यसन बढ जाते हैं जैसे कि मद्य, मास सेवन, बाल्यावस्था मे विवाह और स्वेच्छाचारादि दोष बढ जाते है और जब युद्ध विभाग में युद्ध विद्या कौशल और सेना इतनी बढे कि जिसका सामना करने वाला भूगोल में दूसरा न हो तब उन लोगों को पक्षपात अभिमान बढ कर अन्याय बढ जाता है। जब यह दोष हो जाते है तब परस्पर मे विरोध होकर अथवा उनसे अधिक दूसरे छोटे कुलों में से कोई ऐसा समर्थ पुरुष खडा होता है कि उनका पराजय करने में समर्थ होवे।"

(सत्यार्थप्रकाश समु० ११)

क्या यह दिव्य वाणी आज के समृद्ध एवं संघर्ष रत राष्ट्रों पर चरितार्थ नहीं हो रही है ?

भगवान हिन्दी को 'हिन्दी भक्तों' से बचायें

(लेखक—श्री किशोरीदास वाजपेयी)

हिन्दी अपनी शक्ति से आगे बढी है, अपनी सरलता और व्यापकता के कारण राष्ट्रभाषा बनी है। किसी ने इस पर दया करके इसे इतने ऊंचे पर नहीं बैठा दिया। बगाली लोग अपनी मातृभाषा के कितने भक्त होते हैं, सब जानते हैं। उन्हीं बग-सपूतों के सिरताज राजा राममोहन राय, बकिमचन्द्र तथा (जस्टिस) शारदाचरण आदि ने विगतशताब्दी मे ही भविष्यवाणी की थी कि हिंदी सम्पूर्ण देश की सामान्य भाषा (राष्ट्रभाषा) बनेगी, क्योंकि उस में वह शक्ति है। उन्होंने इसके लिए उद्योग भी किया था। स्वामी दयानन्द सरस्वती और महात्मा गाधी गुजराती थे, परन्तु देश की एक 'सामान्य भाषा' हिंदी हो, इसके लिए उन्होंने जन्म भर यत्न किया। 'सविधान-सभा' में बगाली, मराठे, गुजराती, मदरासी आदि सभी प्रदेशों के राष्ट्रवादी थे, और सब ने हिंदी को ही राष्ट्रभाषा के रूप मे ग्रहण किया। यह सब इसलिये कि हिंदी अपनी सरलता के कारण सर्वत्र पहले ही पहुँच चुकी थी।

परन्तु सविधान द्वारा हिंदी स्वीकृत हो जाने के बाद तरह २ के विचार 'विचारक' लोग प्रकट करने लगे, और इससे तरह २ के भ्रम संदेह पैदा हुए, हो रहे हैं। इन भ्रम-सदेहों को दूर करने के लिये फिर यत्न होता है। खींच-तान मे गाड़ी आगे बढ़ नहीं पाती।

अभी भोपाल में काका कालेलकर जी ने हिंदी के स्वरूप के सम्बन्ध में विचित्र विचार प्रकट किए हैं। उन्होंने कहा है —

१–हिन्दी में अधिक सस्कृत शब्द भर कर उसे क्लिष्ट न बनाना चाहिए।

२–सस्कृत शब्दों की जगह प्रादेशिक भाषाओं के शब्द देने चाहिए, और,

३–उर्दू अच्छी भाषा है, पर उसमें अरबी फारसी के शब्दों की भरमार कर देने से वह दुरूह हो गई है।

काका कालेलकर को मैं कैसे समझाऊ कि उर्दू से यदि (अनावश्यक) अरबी फारसी के शब्द हटा दिए जायें, तो वह 'हिंदी भाषा' ही है, और कुछ नहीं।

'राम को अचरज (या 'आश्चर्य') हुआ'— हिन्दी।

"राम को तअज्जुब हुआ—उर्दू यदि "तअज्जुब" हटा कर 'अचरज' अचम्भा' या आश्चर्य कर दें, तो वह 'उर्दू-वाक्य हिन्दी' बन जाता है।

स्पष्ट हुआ कि काका साहब अरबी-फारसी के शब्दों की भरमार पसन्द नहीं करते और यदि उर्दू वाले उनका बात मान लें, तो (सारा झगड़ा तो नहीं) भाषा झगडा हिंदी उर्दू का समाप्त हो जाता है। यदि काका साहब खुलकर इतना और कह देते कि—

उर्दू की लिपि भी दोष-पूर्ण है और अराष्ट्रीय (विदेशी, है, इसलिये उसे छोड़कर इसी देश की (नागरी, गुजराती बगला आदि से कोई एक लिपि ग्रहण करनी चाहिए तो पूरी तरह एक राष्ट्रवादी के विचार हो जाते। परन्तु ये ऐसे विचारक अपने मन की बात घोंट जाते है—'आत्महत्या' करते हैं जो बहुत बड़ा पाप है'

हिंदी में एक भी अनावश्यक सस्कृत शब्द नही लिया जाता। हिंदी में जहा 'अपने' अव्यय 'जब 'वहा' आदि हैं, वहा सस्कृत के 'यदा' 'तत्र' आदि चल ही नहीं सकते। 'जब वहा वे आए' को 'यदा तत्र वे आए' कोई पागल भी 'हिंदी वाला' न लिखे-बोलेगा। परन्तु 'सर्वत्र' 'अन्यत्र' सस्कृत शब्द यहा चलते हैं, चलेंगे, क्योंकि हिन्दी ने इनकी जगह 'अपने' स्वतत्र अव्यय नहीं बनाए हैं। उर्दू में 'सर्वत्र' 'अन्यत्र' नहीं चलते। तो, क्या काका साहब यह कहते हैं कि हिंदी में 'सर्वत्र' 'अन्यत्र'

वेद और टालस्टाय

टालस्टाय महोदय की प्राचीन भारतीय साहित्य मे बड़ी रुचि थी। सर्व प्रथम वे वेदों की ओर आकृष्ट हुए थे। उन्होंने वेदों का परिचय न केवल रूसी तथा पश्चिमी युरोपीय अनुवादों से ही, अपितु गुरुकुल कागडी से प्रकाशित 'वैदिक मेग-जीन' से प्राप्त किया था जो यास्नोय पोलियाना को नियम से प्रति मास भेजी जाती थी। मैगज़ीन के प्रकाशक और सम्पादक आचार्य रामदेव जी टालस्टाय के परम मित्रों मे थे और उनके साथ उनका पत्र-व्यवहार भी होता रहता था।

यद्यपि टालस्टाय वेदों के प्रचुर ज्ञान के

न चले? यदि ऐसा है, तो उनकी सलाह उन्हें मुबारक! हम 'हिंदी वाले उनकी सलाह मानने को तैयार नहीं!

परन्तु वह वही सलाह बगला, गुजराती और मराठी आदि के लिये क्यों नहीं देते? बगला आदि मे सस्कृत शब्दों का जो अनुपात है, हिन्दी मे उससे आधा भी कठिनाई से मिलेगा। आवश्यक शब्द ही हिंदी लती है। 'शब्द' की जगह कौन सा शब्द हम दें? 'लफ्ज' त काका साहब पसन्द नहीं करते! बगला, मराठी, गुजराती आदि मे भी 'शब्द' चलता है। आशा है काका साहब अपने विचारों के अनुसार कोई आदर्श हिंदी देंगे, जिसका अनुगमन हम सब लोग करें।

बहुत दिन हुए, आचार्य पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी के स्वरूप पर विचार प्रकट करते हुए लिखा था कि—'ऐसे प्रादेशिक शब्द न देने चाहिए, जो अन्यत्र न समझे जा सके। उनकी आज्ञा हम लोगों ने शिरोधार्य की और 'अपने' (उ० प्र०) बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश आदि के 'प्रादेशिक' शब्द हिंदी में देना हमने बन्द कर दिया। इससे हिन्दी ने व्यापकता ग्रहण की।

परन्तु अब काका साहब कहते हैं कि सस्कृत शब्दों की जगह प्रादेशिक भाषाओं के शब्द दो। ठीक है। हम 'हिन्दी वालों' के लिए कोई प्रतिबन्ध तो नहीं है कि कोई ऐसा न करे, परन्तु वह काम तो काका कालेलकर जैसे विद्वान ही कर सकते है। उनका मतलब 'प्रादेशिक' से गुजराती, मराठी आदि के शब्दों से है। सो, गुजराती और महाराष्ट्र बन्धु ही ऐसे 'प्रादेशिक' शब्दों का प्रयोग हिन्दी में कर सकते है-उन्हें करना चाहिए। जो लोग बगला के लिए ही हिन्दी में कुछ लिखेंगे, वे यदि बगला शब्दों का प्रयोग करेंगे तो ठीक होगा, परन्तु केवल बंगालियों के लिए हिन्दी मे कोई कुछ लिखेगा क्यों? हिन्दी में लिखने का मतलब तो यही है कि सम्पूर्ण देश में बात फैले और इस प्रयोजन से लिखी जाने वाली हिन्दी से बंगला आदि के 'प्रादेशिक' शब्द होंगे, तो अन्यत्र उन्हें कौन समझेगा? यदि सस्कृत शब्द होंगे, तो सर्वत्र सब लोग समझ लेगे। परन्तु काका साहब तो ऐसे (सस्कृत) शब्दों के जानने वाले 'मुट्ठी भर' ही बताते हैं। क्या यह मतिभ्रम है? हमारा निवेदन है कि काका कालेलकर जैसे विचारक हिन्दी के सम्बन्ध में स्पष्ट विचार रखें और उदाहरण के रूप में (नमूने की) हिन्दी दें। (नवभारत टाइम्स)

प्रशंसक थे तथापि वेदों के उन अध्यायों पर उनका ध्यान विशेष रूप से केन्द्रित रहता था जिनमें आचार विषयक समस्याओं पर विचार किया गया है। टालस्टाय ने मानव प्रेम की भावना को प्रोत्साहित किया है और यही भावना वेदों में ओत प्रोत है। इतना ही नहीं वेद शान्तिपूर्ण उच्च कमण्यता की शिक्षाओं से भी भरे हुए हैं। वेदों के अध्ययन से उनकी यह भावना दृढ हो गई थी कि आत्मा में स्वाभाविक दिव्यता भी होती है।

टालस्टाय स्वय कलाकार थे, वे वेदों के कलात्मक वैभव और पद्यात्मक सौष्ठव पर मुग्ध थे। वे वेदों और उपनिषदों को जो वेदों की व्याख्याए हैं, ससार की उत्कृष्टतम कला मानते थे जिनकी प्रेरणाए समस्त युगों और समस्त देशों को प्रभावित करती रही हैं और आगे भी प्रभावित करती रहेगी। इसी लिये वेद सच्ची कला के उत्कृष्टतम नमूने हैं। टालस्टाय ने अपनी पुस्तक 'व्हाट इज आर्ट ? (कला क्या है ?) में लिखा है 'वेद के मन्त्र और शाक्य मुनि का इतिहास उच्च भावनाए उत्पन्न करते हैं और वेद सभी लोगों को अपील करने वाले हैं।

टालस्टाय ने वेदों की शिक्षाओं का रूस में प्रचार भी किया। उन्होंने रेंज आव रीडिंग (पढने के क्रम) तथा थाट आव वाइज मैन (बुद्धिमानों की उक्तियां) नामक अपने ग्रन्थों में वेदों और उपनिषदों की शिक्षाए सग्रहित की थीं। कुछ शिक्षाए इस प्रकार हैं —

'ऐसा धन एकत्र करो जिसे न तो चोर चुरा सके और न अत्याचारी राजा ही छीन सके।

(विद्या)

'दिन में प्रत्येक कार्य इस ढग से करो जिससे रात को शांति की नींद सोओ '

'जो निकम्मा रहता है वह बुराई की ओर प्रेरित रहता है।'

'वही व्यक्ति बलवान होता है जो अपने ऊपर अधिकार रखता है।'

'बुद्धिमान व्यक्ति जानने के लिये पढ़ता है और निकम्मा व्यक्ति प्रसिद्धि प्राप्त करने के लिए पढ़ता है।'

टालस्टाय महोदय रामायण और महाभारत के भी प्रेमी थे। १८५४ में फ्रेंच भाषा में अनूदित रामायण के पाठ से उन्हें उसकी महिमा ज्ञात हुई थी।

वे गीता के भी प्रेमी थे। कर्तव्य के लिए कर्म का अनुष्ठान उन्हें बहुत भाता था। उनकी डायरियां महाभारत और रामायण की शिक्षाओं से भरी हुई हैं।

टालस्टाय की इच्छा थी कि प्राचीन भारतीय साहित्य अपने स्वाभाविक उच्चतम एव कलात्मक स्वरूप में ही रूस के पाठकों के हृदय तक पहुचे। उन्होंने उस साहित्य का रूसी भाषा में जो अनुवाद किया था उसमें वे इस दृष्टि से बड़े सफल हुए थे। रूस में भारतीय ज्ञान विज्ञान, और साहित्य को लोकप्रिय बनाने में टालस्टाय ने चिरस्मरणीय सेवाए की हैं। उनके ग्रन्थों ने रूस की प्रजा को भारतीय प्रजा के बहुत सन्निकट लाकर खड़ा कर दिया था।

(कल्चरल इण्डिया ३१-१०-५८ पृ० ३,४ एलेक्जेन्डर शिपमैन के लेख के आधार पर)

गिरती हुई नेत्र ज्योति

यह आश्चर्य की बात है कि वर्तमान पीढी की आंखों की ज्योति गिरती जा रही है। इससे भी अधिक आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि इसका कारण स्पष्ट करने वाला कोई वैज्ञानिक सिद्धांत विद्यमान नहीं है। यद्यपि इसका कारण वंशपरम्परा, पौष्टिक पदार्थों की कमी, जीवन का आधुनिक सभ्य ढग, स्वास्थ्य की दुर्बलता बताए जाते हैं फिर भी वास्तविक कारण अभी भी कल्पना का विषय बना हुआ है।

पशु पक्षियों के जीवन के सूक्ष्म अध्ययन और इस तथ्य के आधार पर कि पुरानी पीढ़ी के लोगों में नेत्र विकार व्यापक रूप धारण किए हुए न था मैं यह सुझाव देना चाहूँगा कि नेत्र विकार का एक कारण यह है कि जन्म के होते ही बच्चे को तेज, कृत्रिम और स्वाभाविक रोशनी के दर्शन करा दिये जाते हैं। पशु पक्षी का कोई बच्चा उस दिन आखें नहीं खोलता जिस दिन वह पैदा होता है। परन्तु मानवीय बच्चों को जन्म ग्रहण करते समय ही न केवल सूर्य की अपितु कृत्रिम तेज रोशनी दिखा दी जाती है।

पुरानी पीढ़ी की माताएं प्रसव के बाद के सप्ताह में अधेरे कमरों में रहती थीं। इस प्रथा से बहुत सम्भवत शिशु के नेत्र विकारों से मुक्त रहते थे। वैज्ञानिक दृष्टि से भी नवजात बच्चों को अत्यधिक प्राणप्रद वायु में रखने से उनमे नेत्र विकार का होना सिद्ध हो चुका है।

नवयुवकों के नेत्र विकार का एक कारण जैसा कि ऊपर कहा गया है उनका जन्म के समय अत्य धिक प्रकाश में रखा जाना हो सकता है।

निश्चय ही मेरा यह सुझाव नहीं है कि अधेरे और दम घोटने वाले कमरों मे प्रसव किया हो, मेरा सुझाव यह है कि नव जात बच्चे को एक सप्ताह तक तेज स्वाभाविक वा अस्वाभाविक प्रकाश से बचाया जाय। ऐसा करने से सम्भव है कि हम उसकी आखों को क्षति पहुचने से बचा सकें।

बी० बी० गुप्त

(हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली, १८-१०-५८ पृ० ७)

हृदय रोग का मुख्य कारण

सेन फ्रासिस्को का २८ अक्टूबर का समाचार है कि हृदय के रोगों का मुख्य कारण हृदय की अव्यवस्था है ऐसा चिकित्सा अनुसधान के एक वर्ग का मत है। अन्वेषकों ने अमेरिका की एक हृदय सम्बन्धी रोगों की परिषद् को बताया है कि बड़े २ व्यापारियों और समाचार पत्रों के सम्पा दकों को हृदय रोग बहुत होता है। अन्वेषकों ने ८३ पत्र सम्पादकों, टेली विजन के अधिकारियों, विज्ञापन देने लेने का कार्य करनेवाले कार्यकर्ताओं, इजीनियरिंग फर्मों के प्रतिनिधियों एव व्यापार परिषदों के मुख्य अफसरों की जाच की। इस जांच के फल स्वरूप विदित हुआ कि इन आराम का जीवन व्यतीत करने तथा नित्य रुटीन के कार्यों मे व्यस्त रहने वालों को अन्यों की अपेक्षा ६ गुने हृदय रोग होते हैं।

(रूटर) (हिन्दुस्तान टाइम्स २६—१०—५८)

गर्भवती स्त्रियों पर तम्बाकू पीने का दुष्प्रभाव

रूटर के लन्दन से प्रसारित २८ अक्टूबर के समाचार के अनुसार गर्भावस्था में तम्बाकू पीने वाली स्त्रियों के बच्चों का वजन कम हो जाता है, बरमिंघम विश्वविद्यालय के सामाजिक चिकित्सा विभाग के डाक्टरों ने १३०० माताओं से पूछताछ करके यह मान्यता स्थिर की है। इन १३०० माताओं मे से ७१२ तम्बाकू न पीने वाली, १८५ ने गर्भावस्था मे सिगरेट पीना छोड दिया था और ४०१ माताए प्रसव से कुछ दिन पूर्व तक प्रति दिन सिगरेट पीती रही थीं। बच्चों के वजन का जो चार्ट तयार किया गया वह इस प्रकार है —

१—सिगरेट न पीने वाली माताओं के बच्चों का औसत भार ७·३ पौं
२—गर्भावस्था में सिगरेट पीना छोड देनेवाली माताओंके बच्चोंका भार ७२ ,,
३—प्रतिदिन १० सिगरेट पीने वाली माताओं के बच्चों का भार ७० ,,
४—प्रतिदिन १० से अधिक सिगरेट पीने वाली माताओं के बच्चों का भार ६८ ,,

डाक्टरों का यह भी मत है कि सिगरेट पीने

से गर्भस्थ बच्चे को मिलने वाले भोजन की मात्रा कम हो जाती है।

एक तथ्य यह भी स्पष्ट हुआ है कि सिगरेट वा तम्बाकू पीने वाली माताओं के बच्चों का जन्म प्राय समय से पूर्व हो जाता है।

सृष्टि विषयक वैदिक और सेमेटिक सिद्धात

सृष्टि की उत्पत्ति का सिद्धान्त जितना पूर्ण और बुद्धि सगत वेदों में देख पड़ता है उतना ससार के अन्य किसी मत मे नहीं देख पड़ता। (ऋग्वेद में १ सू० १६४ मन्त्र २०, तैत्तिरीय उपनिषद् की ब्रह्मानन्द वल्ली अनुवाक १ तथा गीता के अ० १ श्लोक १६ को देखें) पारसियों का सृष्टि विषयक सिद्धात यद्यपि पूर्ण नहीं है तथापि वह वेदों से से लिया हुआ सिद्ध होता है। पारसी मत के अनुसार पहले आकाश की, उसके बाद पृथ्वी की, औषधियों की, पशुओं और मनुष्यों की उत्पत्ति हुई। यहूदियों के सृष्टिक्रम का विवरण भी पारसी सिद्धात की नकल है। परन्तु बाइबिल के लेखको ने इस बात पर विचार करने का कष्ट ही नहीं किया कि वर्तमान सृष्टि से पहले कोई सृष्टि थी या नहीं और वर्तमान सृष्टिके बाद कोई और सृष्टि होगी या नहीं ? न वे अपने से यह प्रश्न ही करते देख पड हैं कि यह जगत् अभाव से बना है या वह पूर्व से विद्यमान सामग्री से निर्मित हुआ है ? सेमेटिक मतों का यह प्रसिद्ध सिद्धात है कि यह सृष्टि अभाव मे अस्तित्व में आई और यही प्रथम एव अन्तिम सृष्टि है। बाइबिल के इस सिद्धात पर स्पष्ट रूप से विचार नहीं किया गया है। जेनेसिस के प्रथम पद्य में 'बारा' शब्द आता है जिसका अनुवाद 'रचा गया' किया गया है। इसका यह अभिप्राय स्पष्ट होता है कि जेनेसिस के रचयिता की मान्यता 'प्रकृति' के पूर्व अस्तित्व में थी परन्तु बाद में जब मूल वैदिक शिक्षा भुला दी गई तो तीनों सेमेटिक मतों की वह धारणा बनगई जिसका ऊपर उल्लेख किया गया है।

सृष्टि विषयक बौद्ध मत की थ्यूरी (सिद्धात) भी वैदिक सिद्धात से सम्बद्ध हैं। यह सिद्धान्त जहा तक सृष्टि के अनन्त प्रवाह की पुष्टि करता है वहा तक तो ठीक है परन्तु जहा तक यह सिद्धात वर्तमान जगत् के आदि और अन्त को नहीं मानता वहा तक गलत है। सेमेटिक सिद्धात बिल कुल इसका उल्टा है। इस सिद्धात के अनुसार इस जगत् का आदि और अन्त है वहा तक तो यह ठीक है परन्तु यह सिद्धात यह स्वीकार नहीं करता कि इस जगत्से पहले कोई सृष्टि थी और बाद मे प्रलय के बाद दूसरी भी होगी। इस दृष्टि से यह भी गलत है। दूसरे शब्दों में बौद्ध और सेमेटिक सिद्धात वहा तक ठीक है जहा तक वे सृष्टि के सम्बन्ध में कुछ स्वीकार करते हैं और वहा तक अशुद्ध हैं जहा तक इन्कार करते हैं। एकमात्र वैदिक सिद्धात ही ठीक है। **वैदिक सिद्धान्तानुसार सृष्टि प्रवाह से अनादि है। परमात्मा सृष्टि का रचयिता, पालनकर्ता और सहार कर्त्ता है। प्रकृति से ही सृष्टि का निर्माण होता है।**

(फाउन्टेन हैड आव रिलीजन छठा सस्करण पृ० ११५, ११६)

आर्य सस्कृति का आधिभौतिक उन्नति का चित्र

इस दृष्टि को आधार बनाकर जिस सभ्यता का उदय हुआ उसका स्वरूप क्या था ? आर्य सस्कृति में सब प्रकार की भौतिक समृद्धि की कामना की जाती थी, सुख ऐश्वर्य के लिए, ससार के प्राकृतिक वैभव के लिए, दिल खोल कर प्रयत्न होता था। तभी तो राष्ट्र के उत्थान के लिए यजुर्वेद में जो प्रार्थना की गई थी उसमें कहा गया था —

**"आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्,
आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी
महारथो जायताम्।**

दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुःसप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम् ।
निकामे निकामे नः पर्जन्यो मिवर्षतु फलवत्यो नः औषधयः पच्यन्ताम् ।
योगक्षेमो नः कल्पताम् ।"

राष्ट्र में तेजस्वी ब्राह्मण हों, शूरवीर क्षत्रिय हों, भर भरकर दूध देने वाली गौएं हों, भारी २ भार ढोने वाले बैल हों, सरपट दौड़ने वाले घोड़ हों, गाव तथा नगर में अपनी बुद्धि के लिए मानी जाने वाली देवियां हों, यजमान के युवा, वीर पुत्र हों, जो जहां जाय विजय का डंका बजाते जाय, रथों पर सवारी करें, सभाओं में भाषण दें, जिस जगह हम चाहें वहां बादल बरसें, बनस्पतियों मे पके हुए फल लदे हों, हम सब का योग क्षेम हा, कल्याण हो, हम सब की सब तरह की समृद्धि हो।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की चतुः-सूत्री

भौतिक समृद्धि का इस तरह का उनका सपना था। परन्तु भौतिक दृष्टि से समृद्धि के मार्ग पर पग बढ़ाते हुए उनके जीवन का सूत्र था। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार शब्दों में आर्य संस्कृति की जीवन के प्रति दृष्टि समा जाती थी। इन चारों में मुख्य स्थान धर्म का था। धर्म पर दो दृष्टियों से विचार किया जा सकता है। विचारात्मक तथा क्रियात्मक। विचारात्मक दृष्टि से विचारकों ने नाना विचार रखे हैं। इन विचारों का सम्बन्ध आत्मा परमात्मा प्रकृति से है, कोई कुछ मानता है, कोई कुछ। क्रियात्मक दृष्टि से धर्म का अभिप्राय उन व्यवहारिक बातों से है जो जीवन को प्रेरणा देती है। 'चोदना लक्षणोर्थ धर्मः' यह जैमिनी ने मीमांसा दर्शन में कहा है। इसका अर्थ भी यही है, जो प्रेरणा दे वह धर्म है। जीवन को प्रेरणा देने वाली बातें कौन सी हैं? अहिंसा, सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह – इन्हीं से तो व्यक्तियों का समाज का और राष्ट्र का जीवन प्रभावित होता रहता है। शान्ति से बर्तें या लड़ाई झगड़ा करें, [illegible] बोलें, दूसरे की चीज पर हाथ डालें या न डालें, ब्रह्मचर्य से जीवन बितायें या लम्पटता को भी जीवन में स्थान दें, संसार को भोगते ही रहें या किसी समय इसे छोड़ भी दें—ये बातें जीवन को प्रेरणा देने वाली हैं, क्रियात्मक हैं, व्यावहारिक हैं, इन्हीं को आर्य संस्कृति मे क्रियात्मक धर्म कहा गया है। आर्य संस्कृति का कहना था कि अहिंसा सत्य, अस्तेय आदि सार्वत्रिक हैं, और सार्वभौम हैं। योगदर्शन मे इन्हें 'सार्वभौमा महाव्रतम्' कहा गया है। ये व्रत नहीं महाव्रत हैं। अधर्म और कुछ नहीं। किसी देश काल में इन महाव्रतों में से किसी महाव्रत का उल्लंघन करना ही अधर्म है। इस दृष्टि से हिंसा, असत्य, स्तेय, अब्रह्मचर्य, परिग्रह ये सब अधर्म हैं। इसी दृष्टि से आर्य संस्कृति की राजनीति में उच्च आदर्शों को पाने के लिए नीच उपायों का अवलम्बन करना वर्जित है। साध्य की सिद्धि हो गई, तो साधन उचित हो या अनुचित हो, कोई परवाह नहीं—जिसे अंग्रेजी मे 'एण्ड जस्टीफाईस दी मीन्स' कहा जाता है—यह बात आर्य संस्कृति नहीं मानती। आर्य संस्कृति तो कार्यकारण के अटल नियम को आधार बना कर चलती है। अगर साधन बुरे हैं तो उनका बुरा फल मिलना ही चाहिये, वर्तमान उद्देश्य की सिद्धि बुरे साधनों से हो गई सो हो गई, परन्तु बुरे साधन स्वयं एक कर्म हैं, और जैसे प्रत्येक कर्म कार्य कारण के नियम से बंधा हुआ है, वैसे ये कर्म—ये बुरे साधन – अपना बुरा कर्म फल लावेंगे और लावेंगे, फिर कैसे कहा जाय कि साध्य की सिद्धि हो गई तो साधन का उचित अनुचित होना कोई अर्थ नहीं रखता? जो विचार धारा अहिंसा सत्य आदि को सार्वभौम महाव्रत मानती है, कार्य कारण के नियम को अटल मानती है, वह अनुचित साधनों से उद्देश्य की सिद्धि करने के लिए तैयार नहीं हो सकती। अनुचित साधनों से उद्देश्य की सिद्धि के लिये वही तैयार हो सकता है जो इन साधनों को स्वतन्त्र कर्म न मानता हो, कर्म फल को न मानता हो,

महर्षि जीवन

परमेश्वर प्रदत्त एक ही धर्म है

स्वामी जी महाराज ने दानापुर में जोन्स महोदय की शंका का निवारण करते हुए कहा 'परमात्मा के रचे हुए पदार्थ सब के लिए एक से हैं। सूर्य और चन्द्रमा सबको समान प्रकाश प्रदान करते हैं वायु और जलादि पदार्थ सब को एक से दिए हैं। जैसे ये पदार्थ ईश्वर की देन है, सब प्राणियों के लिए एक से हैं ऐसे ही परमेश्वर प्रदत्त धर्म भी मनुष्यों के लिए एक और एक सा होना चाहिए।

उस एक सम्मिलित धर्म को ढूंढने के लिए यदि कोई जिज्ञासु सारे मतवादियों में भटकता रहे और पन्थाइयों के कथनो पर विश्वास करके धर्म्म को जानना चाहे तो उसे सच्चे धर्म का ज्ञान कदापि न हो सकेगा। हाँ, यदि वह सबमें से सार को निकाले तो उसे प्रतीत होगा कि थोड़ा बहुत सत्य सब मतों में पाया जाता है, जैसे सत्य को सब मतावलम्बी स्वीकार करते हैं। सभी कहते हैं कि परोपकार पुण्य कर्म हैं। भूत—दया का भाव बहुत अच्छा है, विपत्ति-व्याधिग्रस्त मनुष्यों को सहायता देना और दान-पुण्य करना शुभ कर्म हैं। सारांश यह कि सदाचार और धर्म के जिन अंगों में सब मत एक मत है वही धर्म ईश्वर की देन है। वही सच्चा और सनातन है। शेष यह सब अपनी २ खींचा तानी है कि ईसा, मुहम्मद और कृष्ण के बिना मुक्ति नहीं मिल सकती।

हिन्दू मूर्ति पूजा क्यों करते हैं

जोन्स महोदय ने पूछा 'हिन्दुओं में मूर्ति पूजा क्यों है?' स्वामी जी ने उत्तर दिया 'आर्यों के धर्म में और धर्म ग्रन्थों में मूर्ति पूजा की आज्ञा नहीं है इसके चलने का कारण यह प्रतीत होता है कि पहले लोग अपने मृत महापुरुषों की मूर्तियां बनवा कर घरों में रखते थे। उन्हें अपने पूज्य पुरुषों का स्मारक चिन्ह समझते थे। कालान्तर में उन्हीं मूर्तियों को वे प्रेम से पूजने लगे। आपके मत में भी लोग ईसा और मरियम की मूर्त्तियां रखते हैं इनका पूजन भी करते हैं। अविद्या की वे बातें दोनों मतों में समान है।"

दान

एक दिन एक जिज्ञासु ने शाहजहांपुर में 'दान का माहात्म्य' ज्ञात किया। महाराज ने कहा 'अन्न जल का दान कोई भी भूखा प्यासा मिले उसे दे देना चाहिए। ऐसा दान पहले अपने दीन दुःखी पड़ोसी को देना चाहिए। पास के रहने वाले का दरिद्र दूर करने मे सच्ची अनुकम्पा और उदारता का प्रकाश होता है। इससे वाह २ नहीं मिलती इसलिए अभिमान को भी अवकाश नहीं मिलता।

पास वाले को दुःखी और पीड़ित देखकर ही दया और सहानुभूति आदि हार्दिक भाव प्रकट होते हैं। जो अपने पास वाले दीन-दुखियों पर तो दयादि भाव प्रकट नहीं करता किन्तु दूरस्थ मनुष्यों के लिए उनका प्रकाश करता है उसे दयावान, अनुकम्पाकर्त्ता और सहानुभूति प्रकाशक नहीं कह सकते। ऐसे मनुष्य का दान बाहर का दिखावा और ऊपर का आडम्बर है, दान आदि वृत्तियों का विकास दीपक की ज्योति की भांति समीप से दूर तक फैलना उचित है।

जो निर्धन जन अन्नादिक दान नहीं कर सकते वे अपने पड़ोसी आदि को कष्ट और क्लेश में

शीतला

सम्पूर्ण बालकों को एक रोग होता है जिसके कारण सब शरीर पर छोटी २ फुंसिया या फफोले निकल आते हैं जिसको विस्फोटक, माता, शीतला, मसूरिका और मुसलमान लोग चेचक तथा अंग्रेज स्माल पाक्स वा बंग देशवासी वसन्त कहते हैं। यह एक ऐसा दुष्ट रोग है कि जो इसमें फसता है वह मानो मृत्यु से संग्राम करता है। यदि इससे बच गया तब भी प्राय ऐसे चिन्ह छोड़ जाता है जो जीवन भर नहीं जाते। बहुधा अंग भंग होकर अन्धे, लंगड़े बहरे, लूले हो जाते हैं जिनके कारण उनका जीवन व्यर्थ हो जाता है।

यह रोग गर्भाधान से बालक के शरीर में रहता है क्योंकि जब स्त्री रजस्वला नहीं होती और गर्भ रक्त बन्द हो जाता है तब उस रक्त की गर्मी बालक के पेट में रहती है। जब वह पृथ्वी पर आता है तब समय पाकर अर्थात् विषाक्त वायु के होने पर अपना प्रकाश करता है। जिस प्रकार ऋतु के बदलने पर ज्वर आदि रोग फैलते हैं उसी प्रकार इस रोग का भी स्वभाव जानो। जहां एक को हुआ उसके संसर्ग से अन्य बालकों को भी हो जाता है।

इसे दूर करने के लिए पथ्य ही मुख्य औषधि है। पथ्य के अतिरिक्त टीका लगवाना इस रोग के भय से मुक्त होना है। परन्तु अज्ञानी लोग अपने बालकों को इसको लगवाने से छुपाते हैं।

जिस स्थान पर रोगी को रखा जाय वह हवादार तथा स्वच्छ हो। चारपाई पर सफेद बिछौना बिछा हो। जो मैला होने पर तुरन्त निकाल कर फेंक देना चाहिए। बालक तथा माता को सफेद या हरे वस्त्र पहनने चाहिए। वहां कोई मनुष्य लाल वस्त्र धारण कर या बांध कर वा कोई लाल वस्तु लेकर न जाय। न उसके समक्ष ऐसी वस्तुओं को रखा जाय क्योंकि इन सब की चमक नेत्रों को हानिप्रद होती है। जो बालक माता का दूध पीता हो तो माता का पथ्य से रहना योग्य है।

सहायता दें। निर्बल का पक्ष करें। विपत्ति और आधि व्याधि ग्रस्तजनों की सेवा करें। पर पीड़ितों और व्याकुल मनुष्यों से प्रेम करें। उन्हें मीठे वचनों से शान्ति दें। ये सब दान हैं और आत्मा से सम्बन्ध रखने वाले दान हैं। ऐसे दान नित्य प्रति निर्धन जन भी कर सकते हैं।

क्षमा और प्रायश्चित

पौराणिकों ने महाराज से २५ प्रश्न किए एक प्रश्न यह था, यदि आपके मत में क्षमा नहीं मानी जाती तो मनुस्मृति के प्रायश्चितों का क्या फल है ईश्वर की दयालुता का क्या प्रयोजन है ? यदि मनुष्य स्वतन्त्रता से आगन्तुक पापों से बचा रहे तो ईश्वर की क्षमाशीलता किस काम आएगी ?

महाराज ने कहा 'हमारा मत वेदोक्त है, कोई कपोल कल्पित नहीं है। वेदों में कहीं भी पापों की क्षमा नहीं लिखी। पापों की क्षमा मानना युक्तिसंगत भी नहीं है। क्षमा और प्रायश्चित का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। प्रायश्चित कोई सुख भोग का नाम नहीं है। जैसे कारावास में अपराधी व्यक्ति चोरी आदि कर्मों का फल भोग लेता है, ऐसे ही प्रायश्चित में पाप फल भोगा जाता है। अनेक नास्तिक जन ईश्वर का खण्डन करते हैं। दुःखों में और दुर्भिक्षादि में मनुष्य परमात्मा को गालियां तक देने लग जाते हैं। वह सब सहन कर लेता और अपनी कृपा का परित्याग नहीं करता। यही उसकी क्षमा और दया है। न्यायकारी यदि किए कर्मों को क्षमा करदे तो वह अन्यायकारी हो जाता है। परमेश्वर अपने स्वाभाविक गुण के विरुद्ध कभी कुछ नहीं करता। जैसे न्यायाधीश पापियों को विद्या और शिक्षा द्वारा पाप पृथक कर प्रतिष्ठा और दण्ड से शुद्ध और सुखी कर देता है ऐसे ही ईश्वर का न्याय समझना चाहिए।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

(महत्त्वपूर्ण निश्चय)

गोरक्षा

'महर्षि दयानन्द ने गोरक्षा को धार्मिक तथा आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बताया है और आर्यसमाज की सदा यह नीति रही है कि गोहत्या को सभी वैधानिक रीतियों से रोका जाय। आर्य समाज को खेद है कि स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर भी अभी गोहत्या को रोकने में कोई कार्य नहीं हुआ अत सर्वदेशिकआर्यप्रतिनिधि सभा आर्यसमाजों से साग्रह अनुरोध करती है कि सर्व साधारण में प्रचार द्वारा यह प्रयत्न करें कि कानून तथा अमली तौर से गोवध को बद कराने में प्रयत्नशील हों।

(अन्तरग सभा ५-५ ५१)

महा यज्ञ

महायज्ञों की प्रचलित परिपाटी को नियमित करने के विषय में निश्चय हुआ कि सार्वजनिक व्यय पर होनेवाले स्थानीय, प्रदेशीय तथा सार्व देशिक महायज्ञ क्रमश स्थानीय आर्यसमाज, प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा तथा सार्वदेशिक सभा की अनुमति से होने चाहिए। यदि विना स्वीकृति प्राप्त किए किसी महायज्ञ के लिए धन संग्रह किया जाय तो ऐसे यज्ञों को रोकने के लिए क्रमश आर्य-समाज, प्रदेशीय सभा और सार्वदेशिक सभा यथोचित कार्यवाही करें।

(३ २-५२)

साप्ताहिक सत्संगों की उपस्थिति

साप्ताहिक सत्संगों में २५ प्रतिशत उपस्थिति के बन्धन से समाज की अन्तरग सभा विशेष अवस्थाओं में किसी सभासद् को मुक्त कर सकती है। विशेष अवस्थाओं और सख्या का निर्णय करना समाज की अन्तरग का काम है। सदस्य का नगर या ग्राम से बाहर होना, रुग्ण होना या किसी ऐसी ववशता मे ग्रस्त होना जिसके विषय में अन्तरग सभा को पूर्ण सन्तोष हो, विशेष अवस्थाए समझी जा सकती हैं। प्रमुखतया ऐसी छूट के अधिकारी वे ही महानुभाव है जिनके जीवन मे क्रियात्मक रूप से धर्मावलम्बन पाया जाता हो तथा कम से कम पिछले वर्ष उनके जीवन का कुछ भाग आर्यसमाज और वैदिक सस्कृति के प्रचार में व्यय हुआ हो।

(अन्तरग २२-२-५३)

गोरक्षा

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा अनुभव करती है कि यत भारतवर्ष जिसके ८५ प्रतिशत निवासियों का आधार कृषि एव तत्सम्बधी कार्य है। यत कृष्यादि कार्यों की समृद्धि पर ही राष्ट्र का स्वास्थ्य और समुन्नति निर्भर है यत भारतवर्ष में विदेशीय शासन का अवसान होकर विशुद्ध स्वदेशीय जन कल्याण साधक शासनतन्त्र प्रचलित हो चुका है अत सार्वजनिक कल्याण के निमित्त गवादि उपयोगी पशु सम्पत्ति की समृद्धि साधक योजनाओं को प्रोत्साहन एवं उसके ह्रास और सहार का राजकीय प्रशासन द्वारा अवरोध अत्यन्त आवश्यक है।

सर्व साधारण राष्ट्रीय नागरिक भारतीय तथा प्रदेशीय शासन तन्त्रों का समन्वित प्रयास निम्न प्रकार से होना आवश्यक है—

(१) पशु समृद्धि के विकासार्थ भारतीय एव प्रदेशीय विधान सभाए आवश्यक विधियों को

❀ हिन्दी आन्दोलन ❀

पंजाब हिंदी रक्षा-समिति ने हिंदी आन्दोलन को पुन आरम्भ करने का जो निश्चय किया है वह दुर्भाग्य का विषय तथा सरकार के लिये अत्यत अप्रिय बात हो सकती है, परन्तु उसे परिस्थितियों के परिणाम से भिन्न कोई सज्ञा नहीं दी जासकती। गत दिसम्बर में जब उक्त आन्दोलन पहली बार समाप्त हुआ था तब से आन्दोलन के सूत्रधार यह आशा करते रहे हैं कि इस दिशा में कुछ होगा और वे हिन्दी सत्याग्रहियों को यह विश्वास दिला सकेंगे कि सत्याग्रह का स्थगन हिंदी के हित की ही दृष्टि से था, किन्तु इस सम्बन्ध में सरकार की ओर से जो उपेक्षा और निष्क्रियता दृष्टिगोचर हुई उसे भग करने के लिये समिति के पास इसके सिवा अन्य विकल्प ही क्या था कि वह उक्त निश्चय करती।

पजाब में हिन्दी आंदोलन गत वर्ष जून में आरम्भ हुआ था और उसमें सत्याग्रहियों कोपुलिस के जिन अत्याचारों का सामना करना पड़ा था और लगभग दस हजार व्यक्तियों ने एक पवित्र उद्देश्य की सिद्धि के लिए जिस प्रकार कष्ट उठाये थे उस की दृष्टि से सत्याग्रह के सूत्रधारों का यह नैतिक कर्तव्य हो जाता है कि सरकार द्वारा इस दिशा में कोई ठोस एव प्रभावशाली कदम न उठाने की अवस्था में वे उद्देश्य सिद्धि के उस यत्न को पुन आरम्भ करें जो आज से दस मास पूर्व स्थगित कर दिया गया था।

यह तो स्पष्ट है कि पजाब में हिंदी की समस्या को सुलझाने के लिए अभी तक कोई ठोस कदम सरकार ने नहीं उठाया है। उसने इस प्रसग में एक जोधसिंह जयचन्द सद्भावना-समिति अवश्य स्थापित की है, परन्तु उभय पक्षों से वार्ता के बाद भी उसे कोई सफलता प्राप्त नहीं हुई है, और जैसा रुख पंजाब के अकालियों का है उसे दृष्टि में रखते हुए भविष्य में किसी सफलता की आशा भी नहीं की जा सकती। ऐसी परिस्थिति में गत आदोलन के सूत्रधार स्वामी आत्मानन्द को क्षेत्रीय फार्मूला रद्द करने की माग करनी पड़े अथवा समिति को आंदोलन पुन आरम्भ करने का निश्चय करना पड़े तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

इसमे कोई सन्देह नहीं कि एक ओर जब पड़ौसी पाक में सैनिक तानाशाही भारत के लिये खतरा बन रही हो और दूसरी ओर मास्टर तारासिंह पृथक पजाबी सूबे का नारा बुलन्द कर रहे हों, यह आदोलन अत्यन्त अवाछनीय है, पर उसके न होने देने की जिम्मेदारी तो सरकार पर है। यदि वह अब भी इस दिशा में सक्रिय कदम उठायें तोसीमा राज्य में आदोलन का यह सकट टल सकता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि वह इस सम्बन्ध में जरा दृढता और निर्भयता से काम लें।

समिति के अनुसार पहला हिंदी सत्याग्रह कुछ सरकारी अधिकारियों द्वारा प्रदत्त आश्वासनों के आधार पर स्थगित किया गया था। सरकारी अधिकारियों की सम्भवत यह मान्यता है कि उन्होंने कोई निश्चित आश्वासन नहीं दिया। इनमें से कौन सच्चा है यह तो वे जानें, किन्तु सत्य, न्याय और परिस्थति का यह तकाजा है कि जो वास्तविकता है उसका सामना किया जाय। यदि यह मान भी लिया जाय कि सरकार ने कोई निश्चित आश्वा

पारित कर गवादि पशु-वध बन्द करने की व्यवस्था करे।

(२) सर्व साधारण नागरिक ऋषि दयानन्द कृत गो करुणानिधि के आधार पर 'गो कृष्यादि रक्षिणी सभाओं की स्थापना ग्राम २ उपनगर २ और नगर २ में करें।

(३) यह सभा आवश्यक आन्दोलन को सुसगठित रूप से चलाने के लिए देश की अन्य सस्थाओं और प्रमुख २ व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त करे।

(अन्तरंग २२-२-५३)

❀ सत्यमेव जयते ❀

(नियोगी कमेटी की रिपोर्ट पर)

[लेखक—डा० सूर्यदेव शर्मा विद्यावाचस्पति, एम. ए. एल टी., डी लिट, अजमेर]

पाठकों को स्मरण होगा कि मध्यप्रदेश सरकार ने १४ अप्रैल १९५४ को अपने एक प्रस्ताव द्वारा एक कमेटी नियुक्त की थी जो मध्यप्रदेश में ईसाई मिशनरियों के धर्म परिवर्तन के लिए अपनाये गये अनुचित साधनों की जाच करेगी और इस सम्बन्ध में प्राप्त हुई शिकायतों पर अपनी रिपोर्ट देगी। कमेटी के प्रधान डा. भवानीशंकर नियोगी, रिटायर्ड चीफ जस्टिस, नागपुर हाईकोर्ट थे तथा अन्य ६ सदस्यों में श्री घनश्यामसिंह गुप्त, स्पीकर मध्यप्रदेश विधान सभा, सेठ गोविन्ददास M P., श्री कीर्तिमन्त राव आदि सज्जनथे। उनमें एक ईसाई प्रतिनिधि, वर्धा कामर्स कालेज के प्रोफेसर श्री S. K जार्ज भी थे। इस कमेटी ने लगभग दो वर्ष तक मध्यप्रदेश के विभिन्न भागों, ग्रामों, नगरों और जंगली प्रदेशों का दौरा करके, सैकड़ों लोगों से साक्षिया संग्रह करके और अनेक तथ्यों को इकट्ठा करके अपनी एक बृहत् रिपोर्ट तैयार की जिससे मध्यप्रदेश सरकार की ही नहीं, हमारे केन्द्रीय शासकों की भी तथा भारतीय जनता की आंखें खुल गईं कि किस प्रकार छल से, बल से, प्रलोभन से, दबाव से ईसाई मिशनरी अपने विभिन्न हथकंडों से भारत की भोली भाली जनता को अपने जाल में फंसाते हैं। यह रिपोर्ट इतनी स्पष्ट एव तथ्यपूर्ण थी कि उसके लिये किसी व्याख्या अथवा प्रमाण की आवश्यकता ही न थी फिर भी भारतीय जनता के बार बार आग्रह करने पर भी सरकार ने अभी तक इस रिपोर्ट पर कोई कदम नहीं उठाया। अभी कांग्रेस कमेटी की मीटिंग के अवसर पर हैदराबाद में जो दलित वर्ग का बृहत् सम्मेलन हुआ उसके सभापति पद से बोलते हुये माननीय

सन नहीं दिया था तो भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि बिना ही किसी आश्वासन के आन्दोलन स्थगित नहीं किया जा सकता था। वह आश्वासन गोलमेज सम्मेलन बुलाने विषयक हो अथवा शान्तिपूर्ण वातावरण में प्रश्न को सुलझाने सूचक—कोई चीज अवश्य ऐसी थी जिसने सत्याग्रह के स्थगन की प्रेरणा दी। यदि विशुद्ध रूप से सद्भावना के वातावरण के लिये भी सत्याग्रह स्थगित किया गया हो तो भी वह एक अप्रत्यक्ष आश्वासन को ध्वनि ही देता है।

ऐसी स्थिति में इस भावी आंदोलन की जिम्मेदारी किस पर है यह भलीभांति स्पष्ट हो जाता है। समिति उसकी सूत्रधार अवश्य है, परन्तु वह सूत्र पकड़ने के लिए सरकार ने ही उसे विवश कर दिया है। वह चाहे तो यह विवशता क्षणमात्र में समाप्त हो सकती है और संकट की वर्तमान परिस्थितियों में उसके सम्मुख इससे भिन्न और कोई कर्तव्य भी नहीं है। सत्याग्रहियों से हम केवल इतना कहेंगे कि वे जरा संयम और धैर्य से काम लें। (नवभारत टाइम्स)

जगजीवनराम जी ने भी गहरी चिन्ता प्रकट की थी कि दलित वर्ग में से सहस्रों लोग ईसाई बनते चले जाते हैं। जब से भारत स्वतंत्र हुआ है, ईसाई विदेशी मिशनरियों की संख्या पहले से लगभग दुगुनी हो गई है और करोड़ों रुपया विदेशों से (विशेषत अमेरिका से) भारत में ईसाई प्रचार के लिये प्रतिवर्ष आता है।

सरकार ने तो नियोगी कमेटी की रिपोर्ट पर कुछ ध्यान नहीं दिया और हिन्दू जनता भी रो पीट कर चुप हो गई लेकिन ईसाई मिशन का काम पहले से और बढ गया और उन्होने नियोगी कमेटी की रिपोर्ट के प्रत्युत्तर में लगभग ३०० पृष्ठ की एक बड़ी पुस्तक अंग्रेजी में बम्बई से अभी हाल में प्रकाशित की है जिसका नाम वही रखा है जो मेरे इस लेख का शीर्षक है, अर्थात् "Truth shall Prevail" (सत्यमेव जयते)। इस पुस्तक के लिखने वाले ८ बड़े २ पादरी हैं जैसे "गोआ ट्रिब्यून" के सम्पादक ए. सोरेस, "Enquiry" के सम्पादक श्री फ्रासिस, अनामलय विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति रत्नस्वामी, मद्रास विश्वविद्यालय के आरोकिया स्वामी, इत्यादि। इस पुस्तक में उन्होंने यह सिद्ध करने का विफल प्रयत्न किया है कि नियोगी कमेटी की रिपोर्ट में वर्णित तथ्य आधार रहित और गलत हैं तथा यह रिपोर्ट ईसाई मिशनों के विरुद्ध हिन्दू पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण से लिखी गई है। पुस्तक की भूमिका के पृष्ठ ७ पर लिखा है कि डा० नियोगी पहले से ही ईसाई मिशनरियों के घोर विरोधी हैं ("A man deeply prejudiod against foreign missionaries") इसी प्रकार श्री घनश्यामसिंह गुप्त जी के लिये लिखा है• "A leading member of the Committee was Shri G S Gupta, an Arya Samaj Leader, and, as every one knows, the Arya Samaj came into existence with the definite objective of Combating Christian Mission activity in India."

अर्थात् श्री घनश्यामसिंह गुप्त जो कमेटी के एक प्रमुख सदस्य हैं, आर्य समाज के नेता हैं और जैसा कि प्रत्येक जानता है, आर्य समाज, भारत में ईसाई मिशन की कार्यवाही के विरुद्ध युद्ध करने के निश्चित उद्देश्य से ही अस्तित्व में आया है। इसी प्रकार कमेटी के ईसाई सदस्य श्री जार्ज के विरुद्ध भी पक्षपात का दोष लगाया है और कहा है कि हम उन्हें ईसाइयों का प्रतिनिधि ही नहीं मानते। इस प्रकार कमेटी के सब सदस्य इन पादरियों की दृष्टि में पक्षपात पूर्ण थे (सेठ गोविन्द दास जी ने कमेटी से त्यागपत्र दे दिया था)।

इस कमेटी के सदस्यों को बदलने के लिये और उनकी जगह मुसलमान, ईसाई या पारसी सदस्य रखवाने के लिये श्री फ्रासिस ने जो इस ग्रन्थ के सम्पादक हैं और मध्यप्रदेश मिशनों के अध्यक्ष भी थे, ता० १२ मई १९५४ को प्रधान मन्त्री पं० नेहरू से भेंट की लेकिन पं० नेहरू ने राज्य सरकार के कार्य में टाग अड़ाने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हुये इलाहाबाद की एक घटना का उदाहरण दिया जहा एक ईसाई पादरी किसी एक आर्य समाजी विद्वान् द्वारा लिखित पुस्तक में से उद्धरण देकर हिन्दू देवताओं की मजाक उड़ा रहे थे तब इलाहाबाद की हिन्दू जनता उन पादरी साहब पर टूट पड़ी और उन्होंने पुलिस की शरण ली (पृष्ठ १३७)। इस प्रकार पं० नेहरू जी ने भी सिद्ध किया कि कई ईसाई पादरी बिना देश काल के विचार के ही दूसरों का दिल दुखाने का प्रयत्न करते रहते हैं। पंडित जी ने आगे कहा कि कमेटी में हिन्दू सदस्यों का बाहुल्य कोई चिन्ता का कारण नहीं होना चाहिए, वे जांच ही तो करेंगे, आप प्रमाण दीजियेगा। श्री फ्रासिस के चलते समय नेहरू ने कहा "Good bye, Mr

Francis, Don't be upset. Things will settle down to their proper proportions after some time " चिन्ता न करो, कुछ समय बाद सब ठीक हो जायगा। इस प्रकार श्री फ्रांसिस निराश होकर ही श्री नेहरू के पास से लौटे।

नियोगी कमेटी की रिपोर्ट की जिन बातों का उत्तर देने की इस पुस्तक में चेष्टा की गई है उनमें से कुछ निम्न लिखित हैं —

(१) रिपोर्ट में कहा गया था कि ईसाई मिशनों ने (विशेषत पुर्तगीज मिशनों ने गोवा में) अत्याचार और असहिष्णुता से काम लिया और लोगों को बलात् ईसाई बनाया। उत्तर में कहा गया है कि "ईसाई मिशनों ने अत्याचार कहीं नहीं किया" फिर भी जादू वह जो सिर चढ कर बोले, पुस्तक के पृष्ठ ३१ पर मानना पडा है कि गोवा में दो अवसरों पर ईसाई मिशनरियों ने मछलिहारों के के केस में तथा हिन्दू मन्दिरों को तुड़वाने में पुर्तगीज़ पादरियों ने असहिष्णुता दिखलाई थी और अत्याचार किये थे।

(२) रिपोर्ट में कहा गया था कि हिन्दू जनता की अज्ञानता और दीनता से लाभ उठाकर मिशन वाले उनको ईसाई बनाते हैं। उत्तर में कहा गया है कि "हिन्दू धर्म तो वैयक्तिक धर्म है, हम पतितों का उद्धार करने के लिये उन्हें समाज में ऊंचा उठाते हैं" (पृष्ठ ३५)। पर ये लेखक महात्मा गांधी के उस वक्तव्य को भूल गये कि 'समाज सेवा' तथा 'धर्म परिवर्तन' इन दोनों में महान् अन्तर है। सेवा का अर्थ ईसाई बनाना तो नहीं है।

(३) रिपोर्ट में अनेक उदाहरण थे कि मिशन स्कूलों और अस्पतालों में बहुत से छात्रों और रोगियों को फुसलाकर और बाइबिल का पढ़ना अनिवार्य करके ईसाई बनाया जाता है। इसका उत्तर दिया गया कि मिशन स्कूलों में केवल ईसाई छात्रों को बाइबिल पढ़ाई जाती है, जो गलत है।

(४) रिपोर्ट के चतुर्थ भाग में कहा गया था कि हिन्दू धर्म पर अनुचित आक्षेप करके मिशनरी प्रचारक दूसरों का चित्त दुखाते हैं जिससे अशान्ति और दंगे की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसका उत्तर तो नकारात्मक दिया गया लेकिन श्री फ्रांसिस को उत्तर देते हुये प० नेहरू ने ही इलाहाबाद की घटना का उदाहरण दिया था (जो ऊपर दिया जा चुका है) फिर किस मुंह से मिशन इस आक्षेप का नकारात्मक उत्तर दे सकता है ?

(५) रिपोर्ट में कहा गया था कि विदेशी साम्राज्यवादी शक्तियां करोड़ों रुपया भारतीयों को ईसाई बनाने को क्यों देती है ? क्या इस प्रकार ईसाई बने लोगों के हृदयों से भारतीय राष्ट्रीयता की जड़े खोखली नहीं की जाती ? क्या झारखंड और नागाप्रदेश की मांग के मूल में विदेशी षड्यन्त्र और मिशन का मोटिव कार्य नहीं कर रहा है ? इसका उत्तर तो सिवाय 'न' कहने के मिशन के पादरी क्या देते ? श्री कृष्ण स्वामी M. P, डा० सुब्बा राइन M P, प्रो० जदुनाथ सरकार, श्री पी एन सप्रू आदि महानुभावों का एक वक्तव्य १९५६ का (पृष्ठ १०५) दे दिया है कि मिशन स्कूलों, अस्पतालों आदि से शिक्षा प्रचार और उपकार होता है।

लेख लम्बा होने के भय से अन्य उदाहरण नहीं दिये जा रहे हैं परन्तु आर्य समाज तथा हिन्दू सभा को सतर्क और सावधान होकर मिशन के हथकंडो से हिन्दू जाति की रक्षा करनी चाहिये।

❀

आर्य कन्वेशन दि० २२-८-५८
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरग द्वारा मार्ग-दर्शन

सार्वदेशिक आय प्रतिनिधि सभा की दि० २४ ८ ५८ की अन्तरग तथा सावदेशिक भाषा स्वात-त्र्य समिति की दि० २५ ८ ५८ की नैठकों मे निश्चय हुआ था कि हि दी आदोलन सम्ब धी भावी पग पर विचार करने के लिए शीघ्र से शीघ्र एक आय क वेशन बुलाय जाय। तदनुसार यह कन्वेंशन दि० २२ ८ ५८ को दयानन्द भवन दिल्ली मे सावदे शक सभा के प्रधान श्रीयुत स्वामी अभेदानन्दजी महाराज की अध्यक्षता में मध्याह्नोत्तर २ बजे से प्रारम्भ होकर सायकाल ७ बजे तक हुआ। सम्मेलन में सार्वदेशिक सभा, सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य सामति तथा हिन्दी रक्षा समिति पजाब के समस्त सदस्य प्रदेशोय आय प्रतिनिधि सभाओं के अधिकारी तथा प्रतिनिधि एव अ य विशिष्ट आय महानुभाव आमत्रित किए गए थे

[पृष्ठ ५० का शेष]

काय के लिए जाते है उनके विषय मे भा प्राय इसी प्रकार की शिकायतें प्राप्त होती रहती है। यह अवस्था ठीक नहीं है इन ग्राम सेवकों की फैशन परस्ती और ग्राम्य जना के मनोविज्ञान की अनाभ ज्ञता के कारण ठोस काय नही हा पाता और लोगो को यह कहने का अवसर मिल जाता है कि हमारा राज्य उन पर जो व्यय करता है वह अपव्य यमात्र है

इस प्रकार के ग्राम सेवका पर यह बात अकित होन चाहिए कि जिन व्यक्तिया की सवा और कल्याण का विशद काय उन्हे सौंपा जाता है जब तक अपने विचारा शरीरों और स्वभाव को उनके अनुकूल बना कर उनमे यह विश्वास उत्पन्न न किया जायगा कि उनमे एकरूपता हो गई है तब तक उनका और उनके काय का महत्व सामने न आयेगा।

दुभाग्य से हमारी वृत्तिया बडी आराम और काव्यमय बन गई है और अपने आदशो का यवहार की वस्तु न बना कर हृदय की वस्तु बनाने क लिए हम बहुत अभ्यस्त हा गय है। सेवा के राज पथ पर चलने के लिए हम बिना सोचे समझे अग्रसर हो जाते है। हम भूल जाते है कि सेवा का माग काटो का माग होता है। सेवा तप और याग चाहती है और चाहती है अनन्य मनस्कता

सेवा का गुरुतर काय बच्चो का खेल क्या समझा जाने लगा है? इसके कारणों पर जब विचार किया जाता है तो इस निष्कर्ष पर पहुचे बिना नहीं रहा जाता कि हमारे हृदयों मे काव्य इतना बैठ गया है कि उसने वहा से करुणा को हटा दिया है हम चाहते तो है सेवा करना परन्तु वास्तव में हम अपने एक शुगल को पूरा करते होते हैं जिससे वाह २ प्राप्त हो जाय और हमारी विविध वासनाए तृप्त हो जाय। जब से बौद्धिक शिक्षा का प्रभुत्व बढा है तब से हमारा जीवन रस भी बौद्धिक बन गया है। **व्यक्ति की सेवा करने की अपेक्षा सस्था की कार्यवाही चलाने में ही हमे अधिक सुभाता मालूम देता है।** इसका यह अभिप्राय कदापि नहीं कि उपयोगी सस्थाओं का सचालन न हो। हमारा अभिप्राय यह है कि सेवा का क्षेत्र एकमात्र सस्था ही न समझी जाय। हम कौटुम्बिक समस्याओं को वैय क्तिक समझते हैं, तुच्छ समझते हैं। सस्थाए परिषद और सभाए ही हमारे मन मे अधिक महत्व की हो गई हे फलत परिवारा और सतानों को समाज के लिए देन बनाने का कार्य पिछड गया है। इसका एक दुष्परिणाम यह भी होता है है कि हम पीडितों असहायों और निधना की जितनी सेवा करना चाहते हैं उतनी हम से होती नहीं प्रयत्न बढान पर भी मानव जाति का दुख दूर नहीं होता। हम अपनी ही दुनिया में विचरते रहते हैं।

रघुनाथ प्रसाद पाठक

पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, मध्य प्रदेश, आन्ध्र आदि प्राय प्रत्येक प्रांत के चोटी के आर्यों ने लगभग २०० की संख्या मे कन्वेंशन मे भाग लिया जिनमे श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त, श्री डा० गोकलचन्द नारग, श्रीयुत प० विनायकराव विद्यालकार (भूतपूर्व मन्त्री हैदराबाद राज्य) श्रीयुत प० नरेन्द्र जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद, श्री डा० महावीरसिंह प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य भारत, श्री मिहिरचन्दजी धीमान प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा बगाल आसाम, श्रीयुत इन्द्रसेन जी उपप्रधान आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब, श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री एम० पी०, श्री नरदेव स्नातक एम० पी०, ला० रामगोपाल प्रधान मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली श्री प्रो० रत्नसिंहजी एम० ए०, श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री मन्त्री भाषा स्वातन्त्र्य समिति, श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी प्रधान हिन्दी रक्षा समिति पंजाब, श्री एन डी ग्रोवर मन्त्री हिन्दी रक्षा समिति पंजाब श्री आचार्य भगवानदेव जी, श्री आचार्य रामदेव जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्री जगदेव सिंह जी सिद्धांती प्रधान मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्री ओम्प्रकाश त्यागी प्रधान सचालक आर्य वीर दल, श्री प्रो शेरसिंह जी एम एल० ए०, श्री प बुद्धदेवजी विद्यालकार श्री बा० पूर्णचन्द जी एडवोकेट कार्य वाहक प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, श्री फूलनसिंह जी प्रधान मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, श्री बा० कालीचरणजी आर्य, श्री बा० जगनन्दनलाल जी ऐडवोकेट, श्री प्रिंसिपल भगवानदास जी, श्री प्रिंसिपल महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री, श्री प्रिंसिपल लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित, श्री भगवतीप्रसाद जी आर्य मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान, श्री उमेशचन्द्रजी स्नातक सपादक आर्य मित्र, श्री वीरेन्द्र जी "प्रताप" जालन्धर, श्री प्रो० रामसिंह जी एम० ए०, श्री नारायणदास कपूर तथा दीवान अलखधारी श्रीमती विमला कोहली, श्रीमती शकुन्तला गोयल आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

कन्वेंशन में सत्याग्रह के स्थगन के समय से लेकर अब तक की स्थिति का सिंहावलोकन और भावी पग के विषय में गम्भीरता पूर्वक विचार किया गया। कन्वेंशन में यह भावना उग्र रूप मे प्रतिलक्षित हुई कि सत्याग्रह को स्थगित हुए १० मास से अधिक समय हो चुका है, आर्यसमाज ने सद्भावनापूर्वक वातावरण को शात बनाने में सरकार का पूरा पूरा योग दिया है फिर भी सरकार ने अपने आश्वासनों को पूरा करने की दिशा मे न केवल कोई पग ही नहीं उठाया अपितु आर्य समाज की कठिनाइया बढादी है। सत्याग्रहियों, सत्याग्रह से सहानुभूति रखने वालों तथा उसके लिए सक्रिय काम करने वालों के साथ प्रति शोधात्मक दुर्व्यवहार हो रहा है। ऐसी अवस्था मे अपनी मांगों की स्वीकृति के लिए आर्य समाज के समक्ष सत्याग्रह को पुन चालू करने के सिवा और कोई मार्ग नही रहा है। कन्वेंशन मे पंजाब के राज्यपाल श्री गाडगिल महोदय के प्रयत्नों की भी चर्चा हुई जो भाषा समस्या के समाधान के लिए सलग्न हैं। उनके प्रेस वक्तव्यो पर भी विचार होता रहा। हिन्दी रक्षा समिति पंजाब द्वारा आयोजित अम्बाला कन्वेंशन का प्रस्ताव भी विचारार्थ प्रस्तुत हुआ जिसमें सत्याग्रह को २ मास के पश्चात पुन जारी करने का निश्चय प्रकट किया गया था। कन्वेंशन में सार्वदेशिक सभा के कार्यालय की ओर से भी एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया जो अन्त में विचार का विषय बना। कन्वेंशन ने भावी पग के निर्देशार्थ अन्तिम निर्णय सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा पर छोड दिया जो २३-११ ५८ को प्रात ८ बजे दयानन्द भवन में हुई। अन्तरंग सभा ने पंजाब के राज्यपाल के प्रयत्नों का मार्ग प्रशस्त बनाने के उद्देश्य से ३ मास तक और प्रतीक्षा करने का निश्चय किया और यदि इन तीन महीनो के बाद भी निराशा की वर्तमान स्थिति बनी रही तो सत्याग्रह का अन्तिम निर्णय करने के लिए दिल्ली

में आर्य महासम्मेलन बुलाया जायगा। म याग्रह के पुनर्जीवित होने का दायित्व राज्य पर होगा।

दि० २३ ११ ५८ को सायकाल ३ बजे सार्व देशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति की बैठक हुई जिसमें मुख्यतया पजाब सरकार द्वारा नियुक्त सद्भावना समिति 'श्री मि० जोधसिंह जी तथा श्री प० जयच द्र जी विद्यालकार" के निमन्त्रण पर मिलने के लिए शिष्टमण्डल के सदस्यों की नियुक्ति हुई। यह शिष्ट मण्डल २४ ११ ५८ को दिल्ली मे श्री घनश्यामसिह जी गुप्त की अध्यक्षता मे मिल रहा है। शिष्ट मण्डल के सदस्य है —

१—श्री प्रो० रामसिंह जी
२—श्री बा० जगनन्दनलाल जी ऐडवोकेट
३—श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री
४—श्री प्रो० शेरसिह जी
५—श्री वीरेन्द्र जी

सार्वदेशिक अन्तरग द्वारा पारित प्रस्ताव

"जिन परिस्थितियों में आर्य समाज का सत्याग्रह स्थगित किया गया था वह साधारण जनता और विशेषत सुविज्ञ आर्य जगत् को ज्ञात ही है। हमारे सत्याग्रहियों की बिना शर्त रिहाई की गई, तब इस सम्बन्ध में यह स्पष्ट कारण मागा गया कि क्या यह शासन की ओर से सद्भावना का द्योतक है? इस पर स्पष्ट रूप से उत्तर मिला कि यह सद्भावना का ही द्योतक है और सब समस्याओं के समाधान के लिए प्रारम्भिक पग है। साथ ही शासन के उत्तरदायी नेताओं ने सार्वजनिक एव व्यक्तिगत रूप से पजाब की भाषा समस्या के समाधान के लिए आश्वासन देते हुए कहा कि सद्भावना के परिणामस्वरूप सारी बातें अनुगत होंगी। आर्य समाज की परम्परा को देखते हुए इसमे सभी सहमत थे कि सद्भावना का उत्तर हमारी ओर से सद्भावना ही होना चाहिए और परिणाम स्वरूप स याग्रह स्थगित किया जाय।

परन्तु इसका अत्यन्त खेद है कि सत्याग्रह स्थगन के अनन्तर सद्भावना के परिणाम स्वरूप शासन के उत्तरदायी महानुभावों द्वारा घोषित जो अनुवर्ती पग उठाये जाने चाहिए थे वे नहीं उठाये गए। अत इसकी स्वाभाविक प्रतिक्रिया यह हुई कि जनता में निराशा एव अविश्वास की भावना दिनों दिन बढती गई और अपनी मांगों की पूर्ति के लिए पुन आदोलन करने की माग तीव्र हो गई। इसी के फलस्वरूप पजाब हिन्दी रक्षा समिति के २ नवम्बर के अम्बाला अधिवेशन का प्रस्ताव समक्ष आया। यह सभा इस प्रस्ताव की भावना का पूर्ण आदर करती है और यह भी अनुभव करती है कि उसमें पजाब की जनता के विचारों का वास्तविक चित्रण है।

यह सभा सब बातों पर विचार करके इस परिणाम पर पहुची है कि यदि आर्य समाज को सत्याग्रह करना पड तो सत्यता और सद्भावना के नाते उसका सिर राष्ट्र के सभी विचारशील तत्वों एव परमात्मा के समक्ष ऊ चा रहेगा और इसके कटु परिणामों का उत्तरदायित्व केवल शासन पर होगा। परन्तु आर्य समाज एक धार्मिक तथा सास्कृतिक सस्था है जो सदा शाति का उपासक रहा है और राष्ट्र की सुरक्षा, अभिवृद्धि तथा उन्नति का पोषक रहा है। अत समय की परिस्थितियों और विशेषत पजाब के राज्यपाल श्री एन० वी० गडगिल के यत्नो एव वक्तव्यों को दृष्टि में रखते हुए इस सभा की राय है कि आगामी पग उठाने से पूर्व उनके प्रयत्नों के परिणाम की प्रतीक्षा की जाय और यदि तीन मास के पश्चात् भी कोई सन्तोषजनक बात न हुई तो अखिल भारतीय आर्य महासम्मेलन बुलाकर सत्याग्रह का अन्तिम निर्णय किया जाय।

रामगोपाल
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली

आवश्यक सूचना

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा केलिए मनी आर्डर और चैक इस प्रकार आने चाहिये ।

मनी आर्डर

१—मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली—६

२—मनी आर्डर सभा मन्त्री के नाम से नहीं आने चाहिये । इससे मनी आर्डर के मिलने मे कुछ विलम्ब हो जाने की आशका रहती है ।

३—मनी आर्डरों की कूपन पर भेजने वाले का नाम पता व राशि अनिवार्यत अकित होने चाहिये ।

चैक व पोस्टल आर्डर

सार्वदेशिक सभा, सार्वदेशिक पत्र तथा वैदिक अनुसन्धान के लिये यदि कोई सभा को चैक या पोस्टल आर्डर भेजे तो वे केवल **सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा** के नाम मे लिखे होने चाहियें । क्रास हों तो अच्छा है

मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली-६

प्रचारार्थ सस्ते ट्रैक्ट

१. आर्य समाज के मन्तव्य
लेखक—श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी शास्त्रार्थ महारथी — मूल्य -) प्रति ५) सैकड़ा

२. शका समाधान ,, ,, — मूल्य)॥ प्रति ३) ,,

३. आर्य समाज लेखक—श्री डा० रामगोपाल जी — ,,)॥ ,, २॥) ,,

४. पूजा किस की ? ,, ,, — ,,)॥ , २॥) ,,

५. भारत का एक ऋषि लेखक—रोमा रोल्या — ,, -) ,, ५) ,,

६. गोरक्षा गान — ,,)॥ ,, २॥) ,,

७. स्वतन्त्रता खतरे में लेखक श्री ओम्प्रकाश जा त्यागी — ,,)५ ,, २॥) ,,

८. दश नियम व्याख्या -)॥ ७॥) सै०

९. आर्य शब्द का महत्व -)॥ ,, ,,

१०. तीर्थ और मोक्ष -)। ,, ,,

११. ग्रहण और दान -)॥ ,, ,,

१२. मांसाहार घोर पाप -) ५) सै०

१३. स्वर्ग में हड़ताल ।=)

१४. भारत में जाति भेद ।=)

हजारों की सख्या में मंगाकर साधारण जनता में वितरित कर प्रचार में योग दे ।

प्राप्ति स्थान **सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली १**

सार्वदेशिक मे विज्ञापन देकर लाभ उठावें

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
१ पूरा पृष्ठ (२०×३०/८)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा ,,	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
[illegible]	[illegible]	१०)	१५)	२०)

[illegible] छापा जाता है ।

[illegible]